बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

जन्म : 14 अप्रैल, 1891 परिनिर्वाण 6 दिसंबर, 1956

बाबासाहेब
डॉ. अम्बेडकर

लेख और भाषण

खंड 38

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के भाषण

भाग 1

1920 से 1936

डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड : 38

डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख तथा वक्तव्य भाग–1 (वर्ष 1920–1935)

पहला संस्करण : 2019 (जून)

ISBN : 978-93-5109-146-2

© सर्वाधिकार सुरक्षित

आवरण परिकल्पना : श्री देबेन्द्र प्रसाद माझी

पुस्तक के आवरण पर उपयोग किया गया मोनोग्राम बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के लेटरहेड से साभार

ISBN (सेट) : **978-93-5109-129-5**

खंड 22–40 सामान्य (पेपरबैक) के 1 सेट का मूल्य :

प्रकाशक :

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

15, जनपथ

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय

भारत सरकार, नई दिल्ली – 110 001

फोन : 011–23320588, 23320571

जनसंपर्क अधिकारी मोबाइल नं. 85880–38789

वेबसाइट : http://drambedkarwritings.gov.in

Email-Id : cwbadaf17@gmail.com

मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स प्रा.लि., W-30 ओखला, फेज–2, नई दिल्ली–110020

परामर्श सहयोग

डॉ. थावरचन्द गेहलोत
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री
भारत सरकार
एवं
अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

श्री रामदास अठावले
सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री कृष्णपाल गुर्जर
सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री रतनलाल कटारिया
सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्रीमती नीलम साहनी
सचिव
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार

श्रीमती रश्मि चौधरी
संयुक्त सचिव
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार
एवं सदस्य सचिव, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

श्री देबेन्द्र प्रसाद माझी
निदेशक
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

डॉ. बृजेश कुमार
संयोजक
बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर संपूर्ण वाङ्मय
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

अंग्रेजी में सकंलन
श्री वसंत मून

अनुवादक
सीताराम खोड़ावाल

पुनरीक्षक
श्री उमराव सिंह

सत्यमेव जयते

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री
भारत सरकार
MINISTER OF SOCIAL JUSTICE & EMPOWERMENT
GOVERNMENT OF INDIA
तथा
अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
CHAIRPERSON, DR. AMBEDKAR FOUNDATION

संदेश

स्वतंत्र भारत के संविधान के निर्माता डॉ. अम्बेडकर, बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे। डॉ. अम्बेडकर एक उत्कृष्ट बुद्धिजीवी, प्रकाण्ड विद्वान, सफल राजनीतिज्ञ, कानूनविद्, अर्थशास्त्री और जनप्रिय नायक थे। वे शोषितों, महिलाओं और गरीबों के मुक्तिदाता थे। डॉ. अम्बेडकर सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष के प्रतीक है। डॉ. अम्बेडकर ने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी क्षेत्रों में लोकतंत्र की वकालत की। एक मजबूत राष्ट्र के निर्माण में डॉ. अम्बेडकर का योगदान अतुलनीय है।

डॉ. अम्बेडकर के लेख एवं भाषण क्रांतिकारी वैचारिकता एवं नैतिकता के दर्शन–सूत्र है। भारतीय समाज के साथ–साथ संपूर्ण विश्व में जहां कहीं भी विषमतावादी भेदभाव या छुआछूत मौजूद है, ऐसे समस्त समाज को दमन, शोषण तथा अन्याय से मुक्त करने के लिए डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण और जीवन–संघर्ष एक उज्ज्वल पथ प्रशस्त करता है। समतामूलक, स्वतंत्रता की गरिमा से पूर्ण, बंधुता वाले एक समाज के निर्माण के लिए डॉ. अम्बेडकर ने देश की जनता का आह्वान किया था।

डॉ. अम्बेडकर ने शोषितों, श्रमिकों, महिलाओं और युवाओं को जो महत्त्वपूर्ण संदेश दिए, वे एक प्रगतिशील राष्ट्र के निर्माण के लिए अनिवार्य दस्तावेज है। तत्कालीन विभिन्न विषयों पर डॉ. अम्बेडकर का चिंतन–मनन और निष्कर्ष जितना उस समय महत्त्वपूर्ण था, उससे कहीं अधिक आज प्रासंगिक हो गया है। बाबासाहेब की महत्तर मेधा के आलोक में हम अपने जीवन, समाज राष्ट्र और विश्व को प्रगति की राह पर आगे बढ़ा सकते हैं। समता, बंधुता और न्याय पर आधारित डॉ. अम्बेडकर के स्वप्न का समाज–"सबका साथ सबका विकास" की अवधारणा को स्वीकार करके ही प्राप्त किया जा सकता है।

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्न्ता हो रही है, कि सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय का स्वायत्तशासी संस्थान, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, "बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर : संपूर्ण वांग्मय" के अन्य अप्रकाशित खण्ड 22 से 40 तक की पुस्तकों को, बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के अनुयायियों और देश के आम जन–मानस की मांग को देखते हुए मुद्रत किया जा रहा है।

विद्वान, पाठकगण इन खंडों के बारे में हमें अपने अमूल्य सुझाव से अवगत कराएंगे तो हिंदी में अनुदित इन खंडों के आगामी संस्करणों को और बेहतर बनाने में सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

(डॉ. थावरचंद गेहलोत)

प्राक्कथन

भारत रत्न बाबासाहेब डॉक्टर भीमराव अम्बेडकर अप्रतिम प्रतिभा के धनी थे। वे सच्चे देशभक्त थे। उन्होंने देश की महान सेवा की। देश को कमजोर बनाने वाली समस्याओं को समझा और उनके कारणों को एक अन्वेशी के रूप में तह तक पहुंचकर जानने का अथक प्रयास किया। समाज में व्याप्त जाति व्यवस्था को वे प्रजातंत्र के लिए घातक मानते थे। वे वर्ण–व्यवस्था को, जाति व्यवस्था की जननी मानते थे। मनुष्य–मनुष्य के साथ अमानवीय व्यवहार करे, उसके साथ छुआछूत बरते, वह मनुष्य सभ्य नहीं कहा जा सकता, वह समाज जो इसकी आज्ञा दे वह समाज सभ्य नहीं कहा जा सकता। आज समाज की कुप्रथा को अवैध करार दे दिया गया है। बाबासाहेब के प्रयासों का ही परिणाम है।

बाबासाहेब डॉक्टर भीमराव अम्बेडकर के अंग्रेजी में प्रकाशित वाङ्मय को हिन्दी के अतिरिक्त देश की अन्य 8 क्षेत्रीय भाषाओं में अनुदित किया जा रहा है।

मैं प्रतिष्ठान की ओर से माननीय, सामाजिक न्याय और अधिकारिता 'मंत्री' एवं सचिव, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार का आभार व्यक्त करती हूँ जिनके सद्परामर्श एवं प्रेरणा से प्रतिष्ठान के कार्यों में अपूर्व प्रगति आई है।

प्रस्तुत हिन्दी खंड–38 में **"डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख तथा वक्तव्य भाग–1 (वर्ष 1920–1935)"** नामक शोधपूर्ण रचना समाहित है। मानविकी के अध्येताओं लिए तो आधारभूत सामग्री है ही, साथ ही यह सामग्री समाज निर्माण के सुधी एवं सजग प्रहरियों के लिए चिंतन का आधार बनेगी। पाठकों के बहुमूल्य सुझावों की प्रतिक्षा बनी रहेगी।

नई दिल्ली

रश्मि चौधरी
सदस्य सचिव,
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

प्रकाशकीय

महाराष्ट्र सरकार द्वारा अंग्रेजी में प्रकाशित डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर, वाड़्मय का हिंदी एवं अन्य 8 क्षेत्रीय भाषाओं में डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा अनुवाद किया गया। इस अनूदित कार्य का सुधी पाठकों ने हृदय से स्वागत किया है।

हमें प्रसन्नता है कि हम अपने पाठकों के समक्ष खंड 38 (अंग्रेजी खंड–13) हिंदी में समर्पित कर रहे है।

प्रस्तुत खंड में **"डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख तथा वक्तव्य भाग–1 (वर्ष 1920–1935)"** में शोधपूर्ण सामग्री समाहित की गई है। बाबासाहेब अम्बेडकर ने भारतीय इतिहास के तथाकथित स्वर्णयुग से छुआछूत के औचित्य पर प्रश्न चिन्ह लगाया है। आज की सभ्यता और आवश्यकता के संदर्भ में सुधी पाठक, इतिहास को नए सिरे से देखना चाहेगा।

अंत में मैं अपने संयोजक, अनुवादकों, पुनरीक्षकों आदि सभी सहयोगियों के प्रति आभार प्रकट करता हूँ जिनकी निष्ठा एवं सतत् प्रयत्न से यह कार्य संपन्न किया जा सका है।

हमें आशा और विश्वास है कि हमारे पाठक पूर्ववत की तरह इस खंड का भी स्वागत करेंगे।

नई दिल्ली

देबेन्द्र प्रसाद माझी
निदेशक,
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

<u>अस्वीकरण</u>

डॉ. अम्बेडकर के लेख एवं भाषण क्रांतिकारी वैचारिकता एवं नैतिकता के दर्शन–सूत्र हैं। भारतीय समाज के साथ–साथ संपूर्ण विश्व में जहां कहीं भी विषमतावादी भेदभाव या छुआछूत मौजूद है, ऐसे समस्त समाज को दमन, शोषण तथा अन्याय से मुक्त करने के लिए डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण और जीवन–संघर्ष एक उज्ज्वल पथ प्रशस्त करता है। समतामूलक, स्वतंत्रता की गरिमा से पूर्ण, बंधुता वाले एक समाज के निर्माण के लिए डॉ. अम्बेडकर ने देश की जनता का आह्वान किया था।

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय का स्वायत्तशासी संस्थान, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, **"बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकरः संपूर्ण बाङ्मय"** के अन्य अप्रकाशित खण्ड 22 से 40 तक की पुस्तकों को, बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के अनुयायियों और देश के आम जन–मानस की मांग को देखते हुए मुद्रण किया जा रहा है।

विद्वान एवं पाठकगण इन खंडों के बारे में तथा व्याकरण एवं मुद्रण सम्बधी सुझाव से डॉ अम्बेडकर प्रतिष्ठान को उसकी वैधानिक ई–मेल आई.डी. **cwbadaf17@gmail.com** पर अवगत कराएं ताकि हिंदी में प्रथमवार अनुदित, इन खंडों के आगामी संस्करणों को और बेहतर बनाने में सहयोग प्राप्त हो सकें।

पाठकों के बहुमूल्य सुझावों की प्रतिक्षा बनी रहेगी।

निदेशक

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर संपूर्ण बाङ्मय
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान,
नई दिल्ली–01

जिस समाज में कुछ वर्गों के लोग जो कुछ चाहें वह सब कुछ कर सकें और बाकी वह सब भी न कर सकें जो उन्हें करना चाहिए, उस समाज के अपने गुण होते होंगे, लेकिन इनमें स्वतंत्रता शामिल नहीं होगी। अगर इंसानों के अनुरूप जीने की सुविधा कुछ लोगों तक ही सीमित है, तब जिस सुविधा को आमतौर पर स्वतंत्रता कहा जाता है, उसे विशेषाधिकार कहना अधिक उचित होगा।

—डॉ. भीमराव अम्बेडकर

विषय सूची

	संदेश	v
	प्राक्कथन	vii
	प्रकाशकीय	viii
	अस्वीकरण	ix
1.	जन्म आधारित श्रेष्ठता और पवित्रता के कारण गुणहीन ब्राह्मणों का भी कल्याण हुआ है	1
2.	उन्नति में बाधक बनने वालों का निषेध	7
3.	सात करोड़ अस्पृश्य हिमालय को जमीनदोस्त कर सकते हैं	11
4.	समाज जीवन में निरपेक्ष कर्तव्य भावना से संघर्ष करना चाहिए	13
5.	घनघोर संग्राम करने पर ही मनुष्यता वापिस मिलेगी	24
6.	मै अपनी अंधी जनता की लाठी हूं	30
7.	जागृति की ज्योत को कभी भी बुझने न दें	32
8.	राज्य का अभिमान न हो तो राज्य टिकता नहीं	48
9.	अपना उद्धार करने के लिए खुद ही कमर कसनी चाहिए	50
10.	हमें निडर और स्वाभिमानी लोग चाहिएं	51
11.	महार जाति पर स्वार्थी होने का आरोप निराधार	53
12.	हमें मिसाल बनानी चाहिए कि हम किसी से कम नहीं	57
13.	बहिष्कृत छात्रों के कर्तव्य निभाने पर ही बहिष्कृत समाज का भवितव्य निर्भर करता है	58
14.	अस्पृश्यता और सत्याग्रह की सफलता	60
15.	अस्पृश्यों की उन्नति की आर्थिक बुनियाद	79
16.	अधिकारों की रक्षा के लिए सज्ज हों	92
17.	महाड सत्याग्रह परिषद	94
18.	अस्पृश्य होते हुए भी अस्पृश्यों के आंदोलन में सहभागी न होना लांछन है	129
19.	अस्पृश्यों की उन्नति और महिलाओं की जिम्मेदारी	132
20.	बदले हालात का खयाल रखें	136
21.	स्पृश्यों को अस्पृश्यों के बजाय स्पृश्यों को उपदेश देना चाहिए	138
22.	अस्पृश्यता जातिभेद की पैदाइश है	140

23.	इसी जन्म में सर्वांगीण उन्नति करनी होगी	144
24.	अपने हक प्रस्थापित करने के लिए हमले की नीति अपनाए बगैर कोई चारा नहीं	145
25.	गुलामी की व्यवस्था को नष्ट कर बुरे रीतिरिवाजों को तिलांजलि दो	150
26.	आत्मनिर्भरता और स्वाभिमान का कोई पर्याय नहीं	154
27.	मुंबई इलाके की प्राथमिक शिक्षा की प्रगति	157
28.	इंसानियत के अधिकार के लिए अत्याचार के खिलाफ विद्रोह करें	163
29.	अस्पृश्यों द्वारा दिया गया धर्म परिवर्तन का नोटिस	165
30.	सभी अस्पृश्यों को हम समान मानते हैं	167
31.	मजदूरों की कोई जाति नहीं होती कहने वाले स्पृश्य नेता इसका जवाब दें	169
32.	सिर्फ शिक्षा पाने से योग्यता हासिल नहीं होती	173
33.	अखंड भारत हमारा ध्येय है	178
34.	देश के स्वराज का मैं समर्थन करता हूं	222
35.	जब तक इस देश में अंग्रेज सरकार है, हमारे हाथ में सत्ता आना संभव नहीं	228
36.	भारत का सुरक्षा विशिष्ट जातियों तक सीमित न होकर सभी जनता के लिए हो	237
37.	मैं (बेढंगे) विचित्र देशभक्तों की तरह नहीं हूँ	239
38.	स्वराज में अस्पृश्य जनता समान अधिकारों के साथ रह सके	244
39.	निश्चय के साथ लड़ी सम्मान की लड़ाई में ही अपने आंदोलन की सफलता है	248
40.	अस्पृश्यों को आपस में भिड़ाने वाले हितशत्रुओं की कारस्तानी पहचानिए	251
41.	कठिन स्थितियों से संघर्ष करके ही समाज की उन्नति की जा सकती है	255
42.	दुनिया में व्याप्त गुलामी की सभी पद्धतियों में अस्पृश्यता भयंकर और भीषण है	256
43.	अस्पृश्य महिलाएं सर्वांगीण सुधार के लिए प्रयत्नशील रहें	258
44.	लडाई अगर कांटे की हो तो भी उसे पार लगाने की जिम्मेदारी अपनेपन की भावना के साथ निभाए	260
45.	अपने लोगों के हितसंबंधों का मैं खुद प्रतिनिधि हूँ	262
46.	देश की एकता के लिए संगठन जरूरी है	266
47.	स्वाभिमान और आजादी का दीप कभी ना बुझने दें	271
48.	स्वावलंबन के लिए अखबारों की जरूरत	275
49.	फूट डालने वाली नीति का मैंने अपने पर असर नहीं होने दिया	276

50. किसी के भी बहकावे में आपस में फूट न पड़ने दें 279
51. अस्पृश्य समाज के हाथों में राजनीतिक सूत्र होना जरूरी है 280
52. अपने पैरों पर खड़े रहने के अलावा युवाओं के सामने कोई रास्ता नहीं है 288
53. भगवान के दर्शन के बिना कोई मरता नहीं 289
54. आज हमारा संघर्ष राजनीतिक सत्ता के लिए है 291
55. अस्पृश्य समाज के लिए शिक्षा के प्रसार की बेहद जरूरत है 295
56. अपने लोगों के न्यायपूर्ण अधिकारों के लिए लड़ते हुए अगर किसी ने रास्ते के लालटेन लगाने के खंभे पर फांसी चढ़ाया तो भी मुझे उसकी परवाह नहीं 298
57. पूना (पुणे) समझौता बंधनकारी मान कर स्पृश्य बंधु कार्य करे 351
58. मंदिर जाने से आपका उद्धार नहीं होगा 354
59. भोलीभाली कल्पनाओं के कारण मृत्युलोक का जीवन कष्टकारक हुआ है 358
60. पढ़े–लिखे लोग छुआछूत को खत्म करें 362
61. परंपरा से चले आ रहे कामों को छोड़, शिक्षा पाने की कोशिश करें 363
62. आपसी भेदभाव को मिटाना ही ठीक है 365
63. एक होकर रहें तो भावी राजनीति अपनी गुलामी को खत्म करेगी 367
64. भाग्य पर भरोसा करके ना बैठिए, जो करना हो वह अपनी भुजाओं के बल पर करिए 369
65. कोकणस्थ, देशस्थ का भेद मुझे मंजूर नहीं 373
66. लोगों की धर्म भीरूता का फायदा उठाने वालों से चौकस रहें 375
67. छात्रावस्था में ही अपनी योग्यता बढ़ाएं 381
68. नकली और स्वघोषित नेताओं से सावधान रहें 383
69. तुम्हें ही अपनी जिम्मेदारियों को पहचानना होगा 386
70. जातिभेद नष्ट किए बगैर उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ना असंभव है 389
71. कूपमंडूक मानसिकता को त्याग कर सार्वजनिक कार्यों के लिए चंदा दें 391
72. अंग्रेज सरकार इस देश में कुछ नहीं करती है 393
73. बुद्धि का उपयोग रोटी, शिक्षा और राज्य की सत्ता पाने के लिए हो (वसई के सोपारे गांव में दिया भाषण)' 398
74. हिंदू समाज अपनी शक्ति का उपयोग ईमानदारी से समाज सुधार के लिए करे 401
75. कितने दिनों तक गुलामी का अपमान सहें? 403
76. गरीब छात्रों की शिक्षा के लिए पैसों का उपयोग करना बेहतर होगा 413

77. अस्पृश्य हिंदू के रूप में पैदा हुआ, लेकिन मैं हिंदू के रूप में नहीं मरूंगा 414
78. जो धर्म इंसान के साथ इंसानों जैसा व्यवहार नहीं करता उसे धर्म कैसे कहा जाए? 418
79. धर्म परिवर्तन से सभी अल्पसंख्यकों का कल्याण होगा 424
80. सभी को दृढ़निश्चय और संगठित होकर आगे बढ़ना है 431
81. आप गुलामों की तरह जीना चाहते हैं या आजाद इंसानों की तरह जीना चाहते हैं? 433
82. आंदोलन का फायदा सभी अस्पृश्यों को हुआ 442
83. वोट बेचना अपराध तो है ही साथ ही वह आत्मघात भी है 444
84. हम सात करोड़ अस्पृश्य एक साथ धर्मांतरण करेंगे 452
85. राजनीतिक सत्ता का उपयोग न्यायपूर्ण और उदार बुद्धि से करना होगा 453
86. सैंकडों साल प्रतीक्षा करने के बाद भी, जो कार्य नहीं हो पाता, वह इन दस सालों में हुआ है 456
87. जिस धर्म में समता, प्रेम और अपनापन नहीं, वह धर्म, धर्म ही नहीं है 458
88. अपने मिट्टी के मोल जीवन को सोने जैसे दिन प्राप्त हों, इसलिए धर्मांतरण की आवश्यकता है 460
89. 'मुक्ति कोन पथे?' 465
90. आज साधुता का केवल ढांचा बचा है 507
91. अपनी पार्टी के लायक उम्मीदवार को ही चुन कर विधिमंडल में भेजें 513
92. धर्म परिवर्तन से अस्पृश्यों को समानता का अधिकार प्राप्त होगा 518
93. बहनों, समाज पर बट्टा लगाने वाले धंधे से मुक्त हो जाओ 529
94. इस बार हमें बडा समंदर पार कर जाना है 533
95. अंधे और स्वार्थी नजरिए से पूरे समाज का नुकसान होगा 536
96. जिस पेड़ की छांव में सुखपूर्वक बसना है, उसकी डालें तोड़ने की क्रूरता ना करे 540

1

जन्म आधारित श्रेष्ठता और पवित्रता के कारण गुणहीन ब्राह्मणों का भी कल्याण हुआ है

दक्षिण भारत के बहिष्कृत वर्ग की परिषद की पहली बैठक 21 और 22 मार्च, 1920 को कागल संस्थान के माणगांव में हुई। पहले दिन चैत्र प्रतिपदा थी फिर भी सभा में लगभग पांच हजार लोग इकठ्ठा थे। इससे भी ज्यादा लोग जमा होते यदि आस–पास के कई गांवों के कुलकर्णी, तलाठी आदि लोगों ने बहिष्कृतों को यह न समझाया होता कि यह सभा धर्मांतरित लोगों की है और उसके अध्यक्ष भी धर्मांतरित ही हैं इसलिए ऐसी सभा में जाना ठीक न होगा। ऐसा भ्रमित प्रचार कर सभा के बारे में लोगों में दुष्प्रचार किया गया। सभा में कोल्हापुर दरबार के वरिष्ठ श्रेणी के और बहिष्कृतों के हितैषी लोग उपस्थित थे। कुछ ब्राह्मण भी मौजूद थे। लेकिन डिप्रेस्ड क्लास मिशन और अन्य बहिष्कृतों के लिए संघर्ष, करने वाली किसी भी संस्था का कोई मच्छर तक उपस्थित नहीं था यह बात ध्यान में रखने लायक है।

पहला दिन

परिषद की कार्रवाई 21 तारीख को 5 बजे शुरू हुई। सबसे पहले स्वागत समिति के अध्यक्ष श्री दादासाहेब राजेसाहेब इनामदार का भाषण हुआ। इसमें उन्होंने त्यौहार और घरेलु समस्याओं को नजरंदाज कर इस छोटे से गांव में सभा के लिए आने के लिए प्रतिनिधियों का आभार प्रकट किया। उन्होंने आज की परिस्थिति का वर्णन कर बताया कि यह परिषद क्यों बुलाई गई है। यह बताते हुए उन्होंने अपना भाषण पूरा किया कि स्वराज्य के युग में यह सोच कर बैठे रहने के बजाय कि बाकी लोग हमारा भला करेंगे, अपने लोगों के कल्याण का महाकार्य स्वयं करना चाहिए। बाद में परंपरा के अनुसार सूचना और अनुमोदन के पश्चात् परिषद के अध्यक्ष श्री भीमराव अम्बेडकर तालियों की गड़गड़ाहट के बीच स्थानापन्न हुए।

अपने भाषण में उन्होंने कहा कि,

यह परिषद् कई कारणों से अभूतपूर्व है। मुंबई क्षेत्र में इस तरह की परिषद् पहली बार हो रही है। हम लोगों में अपनी प्रगति के लिए दिखाई देने वाली तीव्र भावना भी उतनी ही अभूतपूर्व है। उसी तरह बहिष्कृत वर्ग में दिखाई देने वाली वैचारिक क्रांति भी अभूतपूर्व है। आज तक हमारे लोगों को लगता था कि हमारे दुर्भाग्य के कारण हमारी स्थिति दयनीय हुई है और दुर्भाग्य पर काबू पाना हमारे हाथ में न होने के कारण हमें इस विकट स्थिति को चुपचाप सहना चाहिए। लेकिन नई पीढ़ी अपने हालातों को ईश्वर की लीला का परिणाम नहीं मानती। वरन् दूसरों के दुष्कृत्यों का परिणाम मानती है। हम जिस हिंदू धर्म के घटक हैं, व्यवहार में उस हिंदू धर्म

की सामाजिक रचना दो मूलभूत तत्त्वों के अनुसार हुई दिखाई देती है, एक जन्म पर आधारित योग्यता और दूसरी जन्म सिद्ध पवित्रता। इन दो सिद्धांतों के आधार पर हिंदुओं का तीन वर्गों में विभाजन किया जाए तो उनके तीन वर्ग बनते हैं – 1. जन्म से श्रेष्ठ और पवित्र जिसे हम ब्राह्मण वर्ग कहते हैं वह; 2. जिसकी जन्म पर आधारित श्रेष्ठता और पवित्रता ब्राह्मणों से थोड़ी कम है ऐसा गैर ब्राह्मण वर्ग; 3. जो जन्म से छोटे और अपवित्र हैं, ऐसे हम बहिष्कृतों का वर्ग। इस तरह का वर्गीकरण करके धर्म द्वारा तय किए गए श्रेष्ठता और पवित्रता के विषम प्रमाणों का इन तीन वर्गों पर असर हुआ है।

जन्म आधारित श्रेष्ठता और पवित्रता के कारण गुणहीन ब्राह्मणों का भी कल्याण हुआ है। गैर ब्राह्मणों पर जन्म आधारित अयोग्यता की गाज गिरी हुई है। उनके पास विद्या नहीं है इसलिए आज वे पिछड़ गए हैं फिर भी विद्या और धन हासिल करने के रास्ते उनके लिए खुले हैं। ये दोनों ही चीजें आज भले ही उनके पास न हों मगर कल उन्हें मिलने वाली हैं। हमारे बहिष्कृत वर्ग की स्थिति जन्म आधारित अयोग्यता और अपवित्रता के कारण बहुत चिंताजनक हो गई है। लंबे समय से अयोग्य और अपवित्र माने जाने के कारण प्रगति के दो बुनियादी कारण नैतिक आत्मबल और स्वाभिमान बिल्कुल लुप्त हो गए हैं। हिंदू धर्मावलंबियों की तरह उन्हें सामाजिक अधिकार प्राप्त नहीं हैं। वे स्कूलों में जा नहीं पाते, वे सार्वजनिक कुओं से पानी नहीं भर सकते, रास्ते पर चल नहीं सकते, वाहनों का उपयोग नहीं कर सकते आदि. छोटे–मोटे अधिकार भी उन्हें हासिल नहीं हैं। जन्म पर आधारित अयोग्यता और अपवित्रता के कारण उनका आर्थिक नुकसान भी हुआ है। व्यापार, नौकरी और खेती ये धन अर्जन के तीन मार्ग उनके लिए खुले नहीं हैं। अस्पृश्यता के कारण ग्राहक न मिलने से उन्हें व्यापार करने की सुविधा हासिल नहीं है। छुआछूत के कारण उन्हें नौकरी नहीं मिलती। कभी कभी योग्य होने के बावजूद बाकी लोग उनके मातहत काम करने के लिए इसलिए राजी नहीं होते कि वे निचली जाति के हैं। इसलिए उन्हें नौकरी मिलना मुश्किल होता है। इसी भावना की वजह से उनको सेना से बेदखल कर दिया गया है। मरे हुए मवेषी के जमीन के टुकड़े के अलावा खेती किसके पास है? कृषि के क्षेत्र में भी उनकी यही हालत है। इस तरह से सताए हुए समाज की उन्नति हो नहीं सकती। प्रतिभा और अनुकूल परिस्थिति दोनों ही उन्नति के लिए जरूरी हैं। बहिष्कृत समाज में प्रतिभा की कमी नहीं है, यह सभी मानते हैं। लेकिन इसका विकास नहीं हो पाता तो इसकी वजह यह है कि परिस्थितियां अनुकूल नहीं हैं। परिस्थितियों को अनुकूल बनाने के लिए कई उपाय सुझाए जाते हैं लेकिन इसके लिए हमें राजनीतिक शक्ति हासिल करनी चाहिए और जाति पर आधारित प्रतिनिधित्व हासिल किए बिना हमारे हाथों में राजनीतिक शक्ति नहीं आएगी। सत्यमेव जयते का सिद्धांत खोखला

है। सत्य की विजय के लिए जरूरी है कि हम अपना आंदोलन जारी रखें, ऐसा कह कर उन्होंने अपना प्रास्ताविक भाषण पूरा किया। फिर विषय निर्धारक कमिटी बनाई गई और परिषद की पहले दिन की कार्रवाई खत्म हुई।

दूसरा दिन

परिषद की कार्रवाई तीन बजे शुरू हुई। उस अवसर पर कोल्हापुर के छत्रपति शाहू महाराज की उपस्थिति से बहिष्कृत वर्ग कृतज्ञता महसूस की। उन्होंने अपने भाषण में कहा –

आज मेरे प्रिय मित्र अम्बेडकर ने इस सभा का अध्यक्ष पद स्वीकार किया है उनके भाषण का मुझे लाभ मिले इसलिए शिकार से से लौटकर तत्काल यहां आया हूं। मिस्टर अम्बेडकर सभी पिछड़ी जातियों की चिंता करते हैं। इसके लिए मैं उनका हृदय से अभिनंदन करता हूं।

असल में महार, मांग, चमार, ढोर यह सारे वैश्य जाति से सम्बन्धित हैं, विशेष कर महार लोग पहले महारकी सूत निकाल कर उसका व्यापार करते थे। उन्हें अस्पृश्य किसने बनाया कौन जाने। ऐसा वैश्यों का धंदा छोड़ कर दस्यु यानी नौकर और नौकर यानि अतिशूद्र ऐसा धंदा अम्बेडकर ने क्यों अपनाया मैं नहीं जानता। फिर भी मैं यहां इकठ्ठा सभी लोगों से अनुरोध करता हूं कि हम अपने योग्य नेता नहीं चुनते हैं इसलिए हम इस दयनीय स्थिति में पहुंचे हैं। मीठा–मीठा बोल कर नाम कमाने के लिए हममें से कुछ स्वार्थी लोग अयोग्य नेताओं को नियुक्त कर अज्ञानी लोगों को धोखा देते हैं। पशु–पक्षी भी अपनी ही जाति का नेता बनाते हैं। कोई चार पैरों वाला जानवर पक्षियों का नेता नहीं बना। जानवरों में भी कभी कोई पक्षी नेता नहीं बनाया जाता। गाय बैल और भेड़ों का नेता गडरिया होता है। इसी कारण आखिर में उन्हें बूचड़खाने जाना पड़ता है।

आज उन्हें पंडित की उपाधि देने में हर्ज भी क्या है? विद्वानों में वे एक आभूषण हैं। आर्यसमाज, बौद्धसमाज या ईसाई खुशी खुशी उन्हें अपने में शामिल कर लेते लेकिन वे वहां गए नहीं क्योंकि वे आपका उद्धार करना चाहते हैं। इसके लिए आपको उनके प्रति कृतज्ञ होना चाहिए और मैं भी हूं।[1]

मेरे राज्य के बहिष्कृत प्रजाजनों, आपने अपना सच्चा नेता खोज लिया इसके लिए मैं आपका हृदय से अभिनंदन करता हूं। मेरा विश्वास है कि डॉ. अम्बेडकर आपका कल्याण करेंगे इतना ही नहीं तो एक समय ऐसा आएगा कि वे सारे हिंदुस्तान के नेता बनेंगे ऐसी मेरी मनोदेवता मुझसे कहती है।[2]

---

1. मूकनायक, 10 अप्रैल 1920
2. डॉ बाबासाहेब अम्बेडकरः धनंजय कीर, पृष्ठ 46

शाहू महाराज के भाषण के पश्चात् सभा में निम्न प्रस्ताव आम राय से पारित हुए–

1. विश्वयुद्ध में अंग्रेज सरकार और मित्र राष्ट्रों की विजय पर यह परिषद प्रसन्नता प्रगट करती है।

2. श्रीमन महाराज शाहू छत्रपति सरकार इलाका करवीर ने अपने राज्य में बहिष्कृतों को समान अधिकार देकर उनका कल्याण करने का सत्कार्य शुरू किया है इसलिए परिषद् की यह राय है कि हर बहिष्कृत व्यक्ति उनके जन्म–दिन को त्यौहार की तरह मनाए।

3. यह परिषद् उन सभी राजा, महाराजा और संस्थान प्रमुखों का हृदय से आभार मानती है जो बहिष्कृतों की प्रगति के लिए प्रयत्न कर रहे हैं।

4. हर व्यक्ति की प्रगति के लिए अनुकूल सामाजिक परिस्थिति का होना अत्यंत आवश्यक है। भारत की जन्म पर आधारित अयोग्यता और जन्म पर आधारित अपवित्रता के कारण भारत की सामाजिक परिस्थिति बहिष्कृत वर्ग की उन्नति के लिए प्रतिकूल है। इतना ही नहीं तो इसके कारण यह वर्ग सामान्य मानव अधिकारों से वंचित है। बहिष्कृत वर्ग भी हिंदी साम्राज्य का अंग है और उसे भी अन्य हिंदी लोगों की तरह निम्न मानव अधिकार प्राप्त हैं –

   (अ) सार्वजनिक मार्ग, कुएं, तालाब, स्कूल, धर्मशाला, लाइसेंसप्राप्त मनोरंजन स्थल, भोजनालय, वाहन आदि सार्वजनिक सुविधाओं का उपभोग करने का उन्हें अधिकार है।

   (ब) गुणों पर आधारित योग्यता के आधार पर उन्हें व्यापार करने और नौकरी हासिल करने का अधिकार है। परिषद की राय में जब उपरोक्त अधिकारों के अमल में कोई बाधा आए तो उसे दूर करने में सरकार और कानून को मदद करनी चाहिए।

5. प्राथमिक शिक्षा में लड़के और लड़कियों के बीच भेदभाव न किया जाए। जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी इसे अनिवार्य और निःशुल्क बनाया जाना चाहिए।

6. बहिष्कृत वर्ग में शिक्षा का प्रसार होना बहुत जरूरी है। इसके बगैर उनकी उन्नति नहीं होगी।

परिषद् की राय है कि, उनमें शिक्षा का प्रसार करने के लिए स्कूल के मास्टर

डिप्टी असिस्टंट, डिप्टी एज्युकेशनल इन्स्पेक्टर उनका हित चाहने वाले होने चाहिए। चूंकि अन्य वर्गों के लोग बहिष्कृत वर्ग की शिक्षा के प्रति उपेक्षा या अनुदारता दिखाते हैं इसलिए उपरोक्त अधिकारियों में बहिष्कृत वर्ग के लोग होने चाहिए। परिषद् की राय है कि बहिष्कृत वर्ग के शिक्षकों को प्रशिक्षण देने के लिए सरकार विशेष सुविधा देकर उनकी नियुक्ति करे। परिषद् की यह राय है कि बहिष्कृत वर्ग में शिक्षा के प्रसार के लिए हर जिले में कम से कम एक डिप्युटी या असिस्टंट एज्युकेशनल इंस्ट्रक्टर बहिष्कृत वर्ग का हो और इस पद के लिए ट्रेनिंग कॉलेज से थर्ड इयर पास या मैट्रिक पास व्यक्ति को योग्य समझा जाए।

7. यह परिषद विशेष रूप से यह मांग करती है कि जिस तरह अंग्रेजों द्वारा शासित रियासतों में मुसलमानों को और मैसूर राज्य में गैर ब्राह्मण और बहिष्कृत वर्ग के छात्रों को माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा के लिए पर्याप्त छात्रवृत्तियां दी जाती हैं उसी तरह ब्रिटिश शासित रियासतों में बहिष्कृत वर्ग के छात्रों को छात्रवृत्तियां मिलनी चाहिए।

8. इस परिषद का मत है कि सभी जगह स्पृश्य और अस्पृश्यों के विद्यालय एक ही होने चाहिएं।

9. बहुत दुख के साथ कहना पड़ रहा है कि इन दिनों महारों की वतनदारी की स्थिति बहुत खराब है। इस परिषद को ऐसा लगता है कि स्थिति खराब होने के दो कारण हैं –

   (क) महार वतनदारों को मृत पशुओं को ठिकाने लगाने जैसे कई गंदे काम करने पड़ते हैं इसलिए उनकी वतनदारी को निकृष्ट माना जाता है।

   (ख) वतनदारों की वतनी जमीन हर पीढ़ी में बंटती जा रही है। हर पीढ़ी में बंटती जाने के कारण जमीन के टुकडे इतने छोटे हो गए हैं कि हर महार वतनदार को पर्याप्त फसल न हो पाने के कारण उनकी स्थिति कंगाल होती जा रही है इसलिए इस परिषद की दृढ़ राय है कि वतन पद्धति में परिवर्तन करना बहुत जरूरी है।

महार के वतन को सभी महारों में बराबर बांट कर सभी को दरिद्र और कंगाल बनाने से अच्छा है कि उस वतन को थोड़े से लोगों में बांट कर उनकी स्थिति को सुखद सम्मानजनक बनाया जाए। इसलिए महारों के वतन की जमीन को चुनिंदा महारों में बड़े पैमाने पर बांटने से जिन महारों को इस जमीन विभाजन के कारण अपनी वतनी जमीन से हाथ धोना पड़ेगा उन्हें जहां संभव हो वहां जमीन देकर

उनकी व्यवस्था की जाए। मौजूदा वतनी जमीन जिन महार परिवारों को दी जाएगी उन पर यह शर्त लगाई जानी चाहिए कि वे अपने बेटे–बेटियों को साक्षर बनाएं और अपनी योग्यता के अनुसार जीवनयापन करें।

10. इस सभा का यह मानना है कि मरे हुए जानवर का मांस किसी भी जाति के व्यक्ति द्वारा खाया जाना कानूनन अपराध माना जाए।

11 इस सम्मेलन की यह मांग है कि पटवारी के पदों पर बहिष्कृत वर्ग की नियुक्तियां की जाएं।

12. इस सम्मेलन का आग्रहपूर्वक यह कहना है कि बहिष्कृत वर्ग की प्रगति के लिए संघर्ष करने वाली गैर बहिष्कृत संस्थाओं की यह परिषद आभारी है फिर भी सरकार को यह नहीं मानना चाहिए कि इन संस्थाओं द्वारा बहिष्कृत वर्ग के राजनीतिक या सामाजिक हितों की रक्षा के लिए जो उपाय सुझाए जाते हैं वे बहिष्कृता वर्ग को पूरी तरह स्वीकार्य हैं।

13. परिषद अधिकारपूर्वक मांग करती है कि भावी कानून काउंसिल में स्वतंत्र चुनाव क्षेत्रों से बहिष्कृतों के प्रतिनिधियों को उनकी जनसंख्या और जरूरत के अनुसार चुना जाए।

14. इस परिषद के आयोजन के लिए जिन्होंने मेहनत की उनके और खास कर आप्पा दादा गौडा पाटील के प्रति यह परिषद कृतज्ञता प्रगट करती है।

15. यह परिषद उपरोक्त सभी प्रस्ताव अध्यक्ष को यह अधिकार देती है कि वे इन प्रस्तावों को संबंधित अधिकारियों और लोगों के पास भेजें।[1]

1. मूकनायकः 10 अप्रैल, 1920

2
उन्नति में बाधक बनने वालों का निषेध

दिनांक 27 मार्च, 1920 के 'मूकनायक' में समाचार प्रकाशित हुआ था कि आगामी अप्रैल या मई माह में नागपुर में हिंदुस्तान भर के महार, मांग, चमार, पारिया, पंचम, आदि जातियों ने अपने बहिष्कार को खत्म करने और अपनी शैक्षणिक, सामाजिक और राजनीतिक प्रगति करने के लिए एक परिषद् आयोजित करने की घोषणा की है। श्रीमन् महाराज शाहू छत्रपति सरकार करवीर (कोल्हापुर के शासक) इन्होंने इस परिषद की अध्यक्षता करना स्वीकार किया था।

घोषणा के अनुसार 30, 31 मई और 1 जून, 1920 को नागपुर में भारतीय बहिष्कृत परिषद का अधिवेशन हुआ। अस्पृश्य समाज की राजनीतिक अधिकारों की मांगों की पृष्ठभूमि में हो रही बहिष्कृत समाज की पहली अखिल भारतीय परिषद का ऐतिहीसिक महत्व था। इस परिषद के नियोजित अध्यक्ष छत्रपति शाहू महाराज थे। स्वागताध्यक्ष थे गोंदिया के बाबू कालीचरण नंदागवली और सेक्रेटरी थे गणेश आकाजी गवई और किसन फागूजी बनसोडे। इस परिषद में मद्रास, मुंबई, खड़कपुर, मध्यप्रांत और वर्हाड के 500 प्रतिनिधि उपस्थित थे। डॉ. अम्बेडकर, सी.ना. शिवतरकर, शिवबा जानबा कांबले, कदम, गो.गो.काले, ऐदाले, भोसले आदि प्रतिनिधि मुंबई से आए थे। इसी तरह कोल्हापुर से गैर–ब्राह्मण आंदोलन के प्रमुख कार्यकर्त्ता सर्वश्री रणदीवे, बाबूराव हैबतराव यादव, कोठारी, श्रीपतराव शिंदे, काबले, डिप्रेस्ड क्लास मिशन के सुपरिटेंडेंट श्री बर्वे आदि लोग पधारे थे। नागपुर से शिक्षित सुधारकों में से सर्वश्री सर गंगाधरराव चिटनिस और हिन्दू मिशनरी सोसाइटी के अधिकारी डॉ. परांजपे आदि उपस्थित थे।

परिषद् का विशाल मंडप स्टेशन से चार फर्लांग दूर पुराने आर्सेनल ग्राऊंड (कस्तुरचंद पार्क) पर बहुत सजावट के साथ लगाया गया था। बिजली के बल्व जगमगा रहे थे। मंच पर एक सिंहासन सजाया गया था। अस्पृश्य महिलाएं भी कार्यक्रम में उपस्थित थी।[1]

1920 की नागपुर परिषद के आयोजन का उद्देश्य

सन 1917 में भारत मंत्री मातेंग्यू के भारत में आगमन पर सर नारायणराव चंदावरकर और विट्ठल रामजी शिंदे के नेतृत्व में एक प्रतिनिधि मंडल ने उनसे भेंट की थी। डिप्रेस्ड क्लास मिशन के अध्यक्ष नारायणराव चंदावरकर और वि.रा. शिंदे का अस्पृश्य समाज पर प्रभाव होने के कारण समाज के ज्यादातर कार्यकर्त्ता उन्हीं

---

1. विदर्भ के दलित आन्दोलन का इतिहास – लेखकः एच.एल. कोसारे, पृष्ठ सं. 44–49

से सलाह मशविरा कर काम करते थे। श्री गणेश आकाजी गवई और किसन फागू बनसोड़े ने भी डिप्रेस्ड इंडिया एसोसिएशन की ओर से भारतमंत्री को अस्पृश्यों की मांगों के बारे में एक मेमोरंडम दिया था।

इसके बाद साऊथबरो कमेटी भारत आई थी। हिन्दुस्तानी नेताओं ने स्वराज्य (होमरूल) की मांग उनके समक्ष रखी। डिप्रेस्ड क्लास मिशन के वि.रा. शिंदे ने अस्पृश्यों की मांगों के संदर्भ में सब जगह यह कुप्रचार शुरू किया था कि अस्पृश्यों को अलग प्रतिनिधित्व न देकर उनके हितों की रक्षा उच्चवर्णीय हिन्दुओं के हाथों में सौंपी जाए। चंदावरकर और शिंदे के विचारों के खिलाफ डॉ. अम्बेडकर 26 जनवरी के टाईम्स में – ए महार आन होम रूल (A Mahar onHome Rule) लेख लिखकर विचार प्रगट किए थे –ये हिन्दू अपने घर की गंदगी साफ करने के लिए तैयार नहीं हैं तो वे स्वराज्य क्यों मांग रहे हैं। इसलिए अस्पृश्य प्रतिनिधियों के जरिये अस्पृश्यों के विचार साऊथवरो कमेटी के सामने रखने की जरूरत पैदा हुई थी।

डॉ. अम्बेडकर ने कोशिश करके साऊथबरो कमेटी के सामने अस्पृश्यों की राजनीतिक मांगों को प्रस्तुत करने का अवसर प्राप्त कर लिया। कमेटी के सामने डॉ. अम्बेडकर और शिंदे ने अस्पृश्यों की मांगे अलग–अलग नजरियों से प्रस्तुत कीं।

शिंदे ने साऊथबरो समिति के सामने जो मांगे रखीं उन्हें यदि समिति स्वीकार कर लेती तो अस्पृश्य समाज अपने राजनीतिक अधिकारों से वंचित रह जाता। क्योंकि मतदान के लिए शिंदे ने अस्पृश्यों की जो योग्यता सुझाई थी वह अस्पृश्य समाज के मुट्ठीभर लोगों में भी नहीं मिल पाती और यदि मिल भी जाती तो तो ये मुट्ठीभर शिंदे के पिछलग्गू बनकर शिंदे या उनके समर्थकों को चुनकर देंगे और अस्पृश्यों के वास्तविक प्रतिनिधियों का चुनकर आना संभव नहीं हो पाता। इसलिए जिस तरह अस्पृश्यों को स्पृश्यों की सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक गुलामी स्वीकार करनी पड़ रही है उसी तरह अस्पृश्यों को स्पृश्यों की राजनीतिक गुलामी भी स्वीकार करनी पड़ेगी। दूसरे शब्दों में वरिष्ठ हिन्दू लोग अस्पृश्यों पर राष्ट्रीय गुलामी लाद रहे हैं। इस परिस्थिति को पहचानकर डॉ. अम्बेडकर ने यह घोषित करने का निर्णय किया कि डिप्रेस्ड क्लास मिशन की ओर से दी गई कैफियत अस्पृश्यों के हितों में बाधक है। किसी प्रभावशाली व्यक्ति के द्वारा अस्पृश्यों की राजनीतिक आकांक्षाओं की सार्वजनिक अभिव्यक्ति हो इसलिए छत्रपति शाहू महाराज की अध्यक्षता में अस्पृश्यों का एक सम्मेलन बुलाने का फैसला किया गया। इसलिए 1920 में नागपुर में भारतीय बहिष्कृत परिषद का आयोजन किया गया।

डिप्रेस्ड क्लास मिशन विरोधी प्रस्ताव

अण्णासाहब शिंदे को पहले ही यह पता चल गया था कि सम्मेलन में डिप्रेस्ड क्लास मिशन संस्था और उसके संचालकों के विरोध में प्रस्ताव पारित होने वाला है, इसलिए उन्होंने श्री ग. आ. गवई के पास खासतौर पर लोगों को भेजकर कहलवाया कि मैं आपके वर्होड प्रांत के 50 (पचास) बच्चों को मेरे बोर्डिंग में लेता हूं लेकिन आप लोग डॉ. अम्बेडकर और शिवतरकर के द्वारा हमारी संस्था के विरोध में लाए जा रहे प्रस्ताव को नामंजूर कराएं। इस आदेश का पालन करने के लिए श्री गवई और बेलगांव के पापण्णा ने अपनी तरफ से जबरदस्त तैयारी की थी। हमारे नागपुर जाते समय डी.सी मिशन के संचालकों द्वारा अस्पृश्यों के हितों के खिलाफ जो बयान सरकार को भेजा था उसकी खबर टाईम्स में छपी थी। उसकी एक कापी हमने दो रुपये खर्च करके हासिल की थी क्यों कि वह अंक दो साल पुराना था। सम्मेलन की पहले दिन की कार्यवाही खत्म होने के बाद विषय निर्धारक समिति की बैठक हुई। उसमें कुछ प्रस्ताव पारित होने के बाद डॉ. अम्बेडकर ने अध्यक्ष की अनुमति से यह कहा–

"हम सभी यहां बहिष्कृत वर्ग की उन्नति कैसे हो इस मुद्दे पर विचार करने के लिए एकत्रित हुए हैं। यदि कोई हमारी उन्नति में बाधक बन रहा हो वह फिर चाहे बहिष्कृत वर्ग का हो या उच्चवर्णीय हिन्दू या कोई संस्था हो यदि वह हमारे हितों के खिलाफ काम कर रही हो या जिसने पहले खिलाफ काम किया हो उसका विरोध हमें करना चाहिए या नहीं।" यह सुनते ही सभी प्रतिनिधियों ने एक स्वर में कहा – "हमारी प्रगति के रास्ते में आने वाले व्यक्ति या संस्था का विरोध किया जाना चहिए। "क्या यह बात आप सभी को स्वीकार है" यह सवाल डॉ. अम्बेडकर ने प्रतिनिधियों से तीन–तीन बार पूछा। इसके बाद उन्होंने शिवतरकर से टाईम्स अखबार की प्रति मंगवाई और उसमें से डिप्रेस्ड क्लास मिशन संस्था द्वारा सरकार को भेजे गए बयान को पढ़कर सुनाया। उसका ऐसा असर हुआ कि गवई और उनके सहयोगियों के हौसले पस्त हो गए। बाद में आम राय से प्रस्ताव पारित किया गया। वह प्रस्ताव इस प्रकार है–

तीसरा प्रस्ताव– बहिष्कृत वर्ग की उन्नति के लिए स्थापित हुए डिप्रेस्ड क्लास मिशन ने बयान दिया था कि संशोधित काउंसिल में बहिष्कृत वर्ग के जो प्रतिनिधि लिए जाने वाले हैं उन्हें सरकारी नियुक्ति या जाति पर आधारित संस्थाओं से न लिया जाए वरन उन्हें गैर बहिष्कृतों द्वारा काउसिंल के लिए चुने गए प्रतिनिधियों द्वारा नियुक्त किया जाए, इससे सारा अस्पृश्य वर्ग चिंतित है। यदि गैर बहिष्कृत प्रतिनिधियों को बहिष्कृत वर्ग के प्रतिनिधि चुनने का अधिकार दिया गया तो जिस चातुर्वण्य व्यवस्था से बहिष्कृत वर्ग का दुर्भाग्य पैदा हुआ है उस चातुर्वण्य व्यवस्था

को स्वीकार करने वालों को ही हमारा प्रतिनिधि नियुक्त किया जाएगा। इसलिए इस परिषद की पक्की राय है कि डिप्रेस्ड क्लास मिशन ने उन पर निर्भर लोगों के साथ विश्वासघात किया है, इसलिए वह बहिष्कृत वर्ग के विश्वास के योग्य नहीं हैं।

इस प्रस्ताव पर पी. एन. भटकर, द्रविड, कदम वकील के भाषण होने के बाद उनका अनुमोदन करते हुए गवई ने कहा, कि यदि आपको (उग्र उदारवादियों) को नामिनेसन (नामांकन) नहीं चाहिए तो वह हमारे लिए क्यों हो। मिशन अगर सरकार द्वारा प्रतिनिधियों की नियुक्ति की मांग करता तो बेहतर होता। लेकिन उग्र उदारवादियों द्वारा हमारे प्रतिनिधियों की नियुक्ति की मांग क्या हमारे साथ विश्वासघात नहीं है? मिशन ने हमसे पूछे बगैर यह मांग की है जो घातक है। इस कारण डिप्रेस्ड क्लास मिशन से हमारा विश्वास बिल्कुल खत्म हो गया है।

नागपुर यानी इस प्रांत की जनता का सौभाग्य ही कहा जाएगा कि 1920 का भारतीय बहिष्कृत सम्मेलन आयोजित करने का सम्मान यहां के अस्पृश्य कार्यकर्त्ताओं को मिला। यदि यह सम्मेलन आयोजित करने के बारे में ऊपर दी हुई पृष्ठभूमि पर गौर करें तो एक बात स्पष्ट है कि इस सम्मेलन को अस्पृश्यों के राजनीतिक जीवन में आगे तरफ बढ़ाए गए कदम के रूप में अभूतपूर्व स्थान हासिल है।

---

1. 'जनता' का विशेषांक 1933 और "जनता" का 13 अप्रैल, 1940 के अंक में प्रकाशित सी. ना. शिवतरकर जी का लेख "डॉ. अम्बेडकर के सान्निध्य में कुछ संस्मरणीय प्रसंग।"

3
सात करोड़ अस्पृश्य हिमालय को जमीनदोस्त कर सकते हैं

दिनांक 9 मार्च, 1924 को मुंबई के दामोदर हाल में शाम के चार बजे समाज सेवकों की बैठक हुई। डॉ. अम्बेडकर ने सुझाव दिया कि संस्था को –बहिष्कृत हितकारिणी सभा नाम दिया जाए और उसे मंजूर कर लिया गया। उन्होंने तय किया कि – एजुकेट, एजीटेट एंड आर्गनाइज–(पढ़ो, संघर्ष करो और संगठित बनो) यानी लोगों को शिक्षित बनाओ, उनमें अपनी दयनीय स्थिति के प्रति आक्रोश पैदा करो और उनका संगठन बनाओ–यह इस सभा का घोषवाक्य तय किया गया। उसके बाद 20 जुलाई, 1924 को संस्था की स्थापना की घोषणा की गई। बहिष्कृत हितकारिणी सभा के सदस्य बनाने का काम जोरदार ढंग से शुरू हुआ। सदस्यों की संख्या बढ़ने लगी। सभा की सारी जिम्मेदारी शिवतरकर के हाथों में थी। वे संस्था का काम काफी अच्छी तरह चलाते थे। पहले श्री नारायणराव स. काजरोलकर, सखारामबुआ ना. काजरोलकर, बालकृष्ण देवरुखकर, शिरसेकर, चांदोरकर, वनमाली, बालू बाबाजी पालवणकर, बोरघरकर आदि सभी चर्मकार समाज के लोग भी बाबासाहेब के आफिस में आकर बैठते थे। बाबासाहेब उनसे मुंबई के अस्पृश्यों के बीच का भेदभाव खत्म करना, लड़कों और लड़कियों के लिए होस्टल शुरू करना, शादी–ब्याह और अन्य कार्यक्रमों के लिए विशाल हाल का निर्माण करना, प्रेस खरीदकर अखबार शुरू करना आदि कामों की रूपरेखा उनके सामने रखकर उस पर उनसे चर्चा किया करते थे। ये सब बाबासाहेब के कट्टर प्रशंसक थे। उनकी नाराजगी थी शिवतरकर को लेकर और उसकी कई निजी वजहें थी। इसके अलावा शिवतरकर दूसरों से रूढ़ बर्ताव करते थे। इसे लेकर महार समाज के लोगों में असंतोष रहता था। इस बारे में एक बार ऑफिस में चर्चा हुई तो बाबासाहेब ने शिवतरकर के विरोधियों से कहा कि, "शिवतरकर हमेशा मेरे साथ रहते हैं और संस्था का हर जरूरी काम करते हैं। आप लोग उनका विरोध क्यों करते हैं? मैं हमारे समाज की प्रगति के लिए ईमानदारी और जुटकर काम करने वाला हूं। उसके लिए मैंने इतनी पढ़ाई की है। मैं अपनी ज्ञानशक्ति का उपयोग केवल अपने परिवार और जाति के लिए करने वाला नहीं हूं। मैं सारे अस्पृश्य समाज के लिए उसका उपयोग करने वाला हूं। इसके लिए मैंने कई योजनाएं बनाई हैं। यदि वह सफल हुई तो अस्पृश्य और स्पृश्य समाज दोनों का लाभ होगा। अस्पृश्यों की समस्या बहुत विकट है। मैं जानता हूं कि मैं उनको पूरी तरह हल नहीं कर सकता लेकिन मुझे विश्वास है कि उन समस्याओं को दुनिया के सामने लाकर उनकी ओर सारी दुनिया का ध्यान आकर्षित कर सकता हूं। अस्पृश्यता की समस्या विशाल हिमालय है। इस हिमालय से टकराकर मैं अपना सिर फोड़ लेने वाला हूं। एक बात आप ध्यान में रखे इससे

हिमालय नहीं ढहा तो भी मेरे रक्तरंजित सिर को देखकर सात करोड़ अस्पृश्य एक पांव पर उस हिमालय को जमीनदोस्त करने को तैयार हो जाएंगे उसके लिए प्राणों की आहुति देंगे। लेकिन यदि आप लोग आपस में लड़ते–झगड़ते रहे तो मैं ही क्या भगवान भी इस बारे में कुछ नहीं कर पाएगा।

बाबासाहेब के भाषण का लोगों पर असर हुआ। वे लोग तब से शिवतरकर से सहयोग करने लगे।

संदर्भ – "डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर चरित्र, खंड–2, पृष्ठ–118, 119,
लेखक – चांगदेव भवानराव खैरमोड़े

4
समाज जीवन में निरपेक्ष कर्तव्य भावना से संघर्ष करना चाहिए*

सोलापुर जिले के बार्शी में मई 1924 में हुए मुंबई प्रांतीय बहिष्कृत सम्मेलन में बैरिस्टर अम्बेडकर का भाषण हुआ। उन्होंने अपने भाषण में कहा–

"हम धन्यभागी हैं कि अस्पृश्यता ने हमें गुलाम का दर्जा नहीं दिया। अन्यथा परचून की दुकानों की चीजों या जानवरों की तरह हमारी भी खरीद फरोख्त होती। लेकिन इस तरह की गुलामी के हम शिकार नहीं बने इसके लिए संतोष प्रगट करने की जरूरत नहीं है। यदि इस तरह की गुलामी होती तो उससे हम जल्दी ही छूट जाते। प्राचीनकाल में यूनान और रोम में गुलामी की प्रथा थी। कई कारणों से उस देश के लोगों पर गुलाम बनने की नौबत आती थी। और एक बार मनुष्य गुलामों की सूची में शामिल होता था तो उसकी स्थिति किसी जड़ वस्तु की तरह हो जाती थी और वह सारे नागरिक अधिकारों से वंचित हो जाता था। हिन्दुस्तान के अछूत लोग रोमनों की तरह जड़ वस्तुओं की स्थिति में नहीं पहुंचे, इस दृष्टि से कोई कहे कि भारत की अस्पृश्यता रोमन और यूनान की गुलामी की प्रथा से अच्छी है तो वह एक तरह से सही भी होगा। लेकिन एक अन्य दृष्टि से देखें तो अस्पृश्यता गुलामी की प्रथा से भी ज्यादा बुरी स्थिति है। रोम का इतिहास इस बात की गवाही देता है कि गुलाम लोग गुलामी से मुक्त होकर स्वतंत्र नागरिक की स्थिति में जा पहुंचे मगर हिंदुस्तान के इतिहास में अस्पृश्यों से स्पृश्य बनने का एक भी उदाहरण नहीं दिखाई देता। रोमन समाज की गुलामी की प्रथा एक कालविशेष की स्थिति थी उससे छुटकारा पाने के कई रास्ते थे। इसके विपरीत अस्पृश्यता त्रिकालबाधित स्थिति है और उससे मुक्ति का कोई रास्ता नहीं है। जो जन्म से अस्पृश्य है वह मृत्यु तक अस्पृश्य ही रहेगा इस कठोर नियम के कारण सदियां गुजर जाने के बावजूद अस्पृश्य समाज अस्पृश्य ही है। इसके अलावा कई मामलों में भी यह कहना पड़ेगा कि हिंदुस्तान की अस्पृश्यता रोमनों की गुलामी की प्रथा से भी ज्यादा बुरी है। यह कहने में कोई एतराज नहीं है कि रोम में गुलामी की प्रथा गुलामों की प्रगति में जितनी बाधक थी उससे कई गुना ज्यादा हमारी अस्पृश्यता, हमारी प्रगति में बाधक बन रही है। हम पर आरोप लगाए जाते हैं कि ये गंदा व्यवसाय करते हैं, जानवरों को काटते–छीलते हैं। गटर–नालों की सफाई करते हैं, गंदे कपड़े पहनते हैं, अभक्ष भक्षण करते हैं, अनेक प्रकार के वीभत्स देवि–देवताओं की पूजा करते हैं; ऐसे एक दो नहीं बल्कि नौ लाख आरोप हम पर लगाए जाते हैं। आरोप करना बहुत आसान है मगर आरोप करने वाले इस बात का विचार नहीं करते कि इन आरोपों के लिए जिम्मेदार कौन है।

---

*ज्ञानप्रकाश : 24 मई, 1924, और 7 जून, 1924

सच कहा जाए तो आरोप करने वाले ही उसके लिए जिम्मेदार हैं। मनुष्य समाज की एक के बाद एक कई पीढ़ियां खत्म हो जाती हैं मगर अगली पीढ़ी हमारे सभी संप्रदाय अपनी पिछली पीढ़ी से रीति–रिवाज, धर्मभावना आदि सारी संस्कृति सीख लेती है। यही कारण है कि समाज के घटक लुप्त होने पर भी समाज निरंतर चलता रहता है। आज के हिंदु समाज में इस तरह का संगठन बिल्कुल नहीं हो पाता। हमारे इन तथाकथित भूदेवताओं के साथ हमारे नजदीकी संबंध तो कभी बन ही नहीं पाए तो फिर हम उनके रीति–रिवाज कैसे ग्रहण करें? उपनिषदों के सिद्धांत वे हमें बताने को तैयार ही नहीं हैं तो हमारी मरी माता की पूजा के संस्कार जाएंगे कैसे? अगर उनका आदेश है कि हम वेद न सुनें तो हमसे लावणी (नौटंकी) छूटेगी कैसे? यदि उन्होंने तय किया कि हमारा उपनयन संस्कार करके जनेऊ पहनाई जाए तो क्या हम शुचिर्भूत नहीं रहेंगे? सारांश यह है कि हम पर आरोप लगाया जाता है कि हममें बहुत बुराइयां हैं तो हम पूछते हैं कि अच्छाई की सीख हमें कब किसने दी? ब्राह्मणों के बच्चों में ब्राह्मणों के रीति–रिवाज या हममें से ईसाई बने लोगों में ईसाई रीति–रिवाजों का चलन कैसे होता है? और ब्राह्मणों के रीति–रिवाजों का संस्कार हम अस्पृश्यों में क्यों नहीं होता? इस पर बारीकी से विचार करें तो आसानी से समझ में आने जैसी बात है कि इस तरह के संस्कार के लिए दोनों पक्षों में प्रेम, नजदीकी व अन्योन्य संबंध होने चाहिएं। अस्पृश्यता के कारण हिंदु समाज के उच्च वर्णियों के साथ इस तरह का संबंध प्रगाढ़ होना संभव नहीं है। इस कारण हर समाज के अच्छे–बुरे रीति–रिवाज उस समाज के साथ चिपके रहते हैं। रोमन समाज की गुलामी की प्रथा में ऐसी अस्पृश्यता का समावेश न होने के कारण उच्च वर्णियों की जीवनशैली हमेशा उनके आंखों के सामने रहती थी और इतना ही नहीं वे उसका अनुसरण करते थे।

अस्पृश्यता के कारण ऐसा व्यवहार होने से हमारे सभी लोगों का ध्यान इस बात पर केंद्रीत है कि कैसे यह कलंक दूर हो। इसके लिए कई तरह के उपाय सुझाए जाते हैं। कुछ लोगों का कहना है कि अस्पृश्य लोग देशांतर करें। ऐसा सुना जाता है कि जिस दिन निराश्रित सहायकारी मंडल की स्थापना हुई उस दिन एक उच्चवर्णिय व्यक्ति ने विचार प्रकट किए कि ये अस्पृश्य लोग अपनी पीड़ा को लेकर किसी दूसरे देश में क्यों नहीं चले जाते? संतोष की बात यह है कि ऐसे तिरस्कारयुक्त उपदेश देने वाले लोग आज उच्च वर्ग में बहुत ज्यादा नहीं हैं। यह कहने में हर्ज नहीं है कि यदि हम केवल अपने लोगों के हितों के नजरिए से विचार करें तो देशांतर का यह सुझाव काफी हितकारी है। रोटी के चौथाई टुकड़े के लिए सारे गांव के छोटे–बडों की लातें खाने की बजाए फिजी, ईस्ट आफ्रीका, न्यू गिनी आदि देशों में जाकर अपना भाग्य आजमाना कभी भी हितकारी ही होगा। दुर्भाग्य की बात यह है कि भारत के लोग जब विदेशों में जाते हैं तो उन्हें वहां के लोगों के बराबर अधिकार

प्राप्त नहीं होते मगर फिर भी मुझे विश्वास है कि विदेश में हिंदुस्तानी होने की वजह से जो तकलीफ होगी वह अपने देश में हिंदु होने के कारण मिलने वाली तकलीफ से कभी भी ज्यादा नहीं होगी। इसमें भी कोई शंका नहीं है कि हमारे देश में हिंदू धर्म के बंधनों के कारण धनार्जन के जो रास्ते बंद हैं वे पूरी तरह खुल जाएंगे और हम लोगों की आर्थिक स्थिति में सुधार आएगा।

लेकिन सभी लोगों के लिए देशांतर करना संभव नहीं है। थोड़े बहुत लोग ही यह कर सकते हैं। इसलिए इस देश में रह कर भी अस्पृश्यता निर्मूलन के रास्ते खोजने चाहिए। इसी तरह का दूसरा मार्ग है धर्मांतरण। किसी भी धर्म की ओर हमें सैद्धांतिक दृष्टि के अलावा व्यावहारिक दृष्टि से भी देखना चाहिए। मेरी राय है कि हिंदू धर्म किसी भी धर्म से तत्त्व के आधार पर हार खाने वाला नहीं है। सभी में एक ही आत्मा का वास है यह हिंदू धर्म का मूल सिद्धांत है। यदि इस उदात्त सिद्धांत के आधार पर समाज की रचना होती तो जिस तरह दीपक यह भाव नहीं रखता कि केवल घर के लोगों को प्रकाश देता रहेगा, और दूसरों को अंधेरा, या जिस तरह वृक्ष उसे काटने वाले और उसे पानी देने वाले दोनों को ही छाया देता है या जिस तरह से गाय की प्यास बुझाने वाला पानी शेर के लिए विष बन कर उसे मार नहीं डालता उसी तरह अगर हिंदुओं में भी सम बुद्धि होती तो अच्छा होता! लेकिन हिंदू समाज का व्यावहारिक रूप कितना घिनौना हो गया है? आचार और विचार में कहीं तालमेल है क्या? क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है कि जो लोग सभी में एक ही आत्मा के वास होने की बडी बड़ी घोषणाएं करते हैं उन्हीं लोगों ने मनुष्य जैसे दूसरे मनुष्य को अपवित्र और अस्पृश्य माना, लेकिन इससे भी ज्यादा गुस्सा दिलाने वाली बात यह है कि जो लोग हिंदू धर्म में आस्था नहीं रखते उन्हें उच्चवर्णिय हिंदू समदृष्टि से देखते हैं। ईसाई अपवित्र भी नहीं और अस्पृश्य भी नहीं। उच्चवर्णिय हिंदू उनके स्पर्श से प्रदूषित नहीं होते न ही उनके मातहत काम करने में कमतर महसूस करते हैं। इसी तरह यह कहना पड़ेगा कि एक तरह से मुसलमान हिंदू समाज की किसी भी बहुत छोटी जाति से भी ज्यादा अस्पृश्य और अपवित्र हैं क्योंकि कोई भी हिंदू गोहत्या करके उसके मांस से अपनी जीविका नहीं चलाता। मुसलमानों और ईसाइयों में ऐसा करने पर कोई पाबंदी नहीं है। फिर भी महार, मांग और धेड आदि हिंदुओं की तुलना में उन्हें स्पर्श योग्य माना जाता है। उनके और उच्चवर्णीय हिंदुओं में हर तरह का बाह्य व्यवहार होता है। उनके बच्चे एक ही स्कूल, एक ही क्लास में पढ़ते हैं। वे एक ही रास्ते से आते जाते हैं। एक कुएं से पानी भरते हैं और अन्य मामलों में समान वृत्ति से व्यवहार करते हैं। मगर हम हमारे वैदिक धर्म का अनुकरण करने वालों के आचार–विचार का हिंदू लोग हमारा तिरस्कार करते हैं। इतना ही नहीं तो हमें जानवरों से भी बदतर माना जाता है।

यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि जिस धर्म के सिद्धांत इतने ऊंचे मगर जिसका व्यवहार इतना नीचतापूर्ण हो तो क्या उस धर्म में रहने से हमारी उन्नति होगी? लेकिन इस सवाल का जवाब देना कठिन है कि क्या हम लोगों को धर्मांतरण करना चाहिए? मैं इस विवादास्पद सवाल में नहीं जाना चाहता कि धर्म मनुष्य के लिए आवश्यक है या नहीं। मगर इतना सच है कि कुछ लोगों के लिए और विशेषकर हिंदुओं को धर्म प्राणों से प्रिय है लेकिन जिस धर्म में मनुष्यता न हो वह धर्म किस काम का? जो धर्म अपने अनुयायियों के भौतिक और पारलौकिक सुखों के द्वार खोलने के बजाय उन्हें बंद करके लोगों को अधःपतन की ओर ले जाए उस धर्म से चिपके रहने में क्या अर्थ है? मुझे समझ में नहीं आता कि यदि ये लोग धर्मांतरण करने के बाद ही हमें मनुष्य मान कर हमारे साथ समानता का व्यवहार करने लगेंगे तो फिर हमें धर्मांतरण क्यों नहीं करना चाहिए? वायकोम सत्याग्रह का ही उदाहरण लीजिए– जिस रास्ते पर अस्पृश्य वर्ग को जाने की मनाही है उस रास्ते पर ईसाई, मुस्लिम और अन्य गैर हिंदुओं को जाने की खुली छूट है। इस भेदभाव के बारे में पूछने पर छाती ठोंककर कहा जाता है कि चूंकि अस्पृश्य हिंदू हैं, इसलिए उनके रास्ते पर से गुजरने पर पाबंदी है। यदि यही हिंदुओं के नियम हैं तो हम आज ही धर्म का त्याग करके और धर्मांतरण करके अपनी मुक्ति क्यों न कर लें? मेरा विश्वास है कि यदि आज हम धर्मत्याग करें तो हमारे लिए इस्लाम धर्म का स्वीकार करना अच्छा रहेगा। जो हिन्दू हमारा तिरस्कार करते हैं वही हमारा सम्मान करेंगे। हम आज जिस तरह बहिष्कृत हैं, वैसे रहने के बजाय एक बड़े समाज का अंग बनकर हम थोड़े ही समय में अपनी प्रगति कर लेंगे।

देशांतर और धर्मांतर के अलावा नामांतर को अस्पृश्यता निवारण का नया उपाय बताया जाता है। हाल ही में सुझाव आया है कि अस्पृश्य अपने आदिहिंदू कहें। इसमें मतभेद केवल इस बात को लेकर है कि कौन सा नाम ज्यादा अच्छा है। यह बहुत कुछ पसंद, इच्छा, मौज का सवाल है। इसलिए यह निर्णायक रूप से नहीं कहा जा सकता कि इस मसले को वादविवाद से हल किया जा सकता है। ऐसा होने के बावजूद यह नहीं कहा जा सकता कि नामांतर का मुद्दा निरर्थक है। मेरी राय है कि यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि नाम में ही सारा निचोड़ है। इसके कई कारण हैं।

अस्पृश्यों में जातिभेद को लेकर जो मतभेद हैं उसमें यह मान लिया जाता है कि जातिभेद और अस्पृश्यता शाखात्मक है और इसके अनुसार रोटी–बेटी के व्यवहारों का भिन्न शाखात्मक होने के कारण लोग पालन करते हैं। यदि इस तर्क में जरा भी सच्चाई है तो कानून द्वारा रोटी–बेटी के व्यवहार की छूट दी गई तो हमें उस पर अमल की तैयारी दिखानी चाहिए। लेकिन यह निर्विवाद है कि लोग इस तरह कि तैयारी दिखाते नहीं। आपस में बेटी व्यवहार करने का कानून पास होकर तीन

साल गुजर गए लेकिन कहीं सुनाई देता कि इस कानून का लाभ लेने की कोशिश की गई हो। मेरी राय में इसका असली कारण यह है कि जातिभेद और अस्पृश्यता भिन्न शाखात्मक न होकर भावनात्मक हैं। इसलिए हमे यदि उसे खत्म करना है तो शाखाओं पर प्रहार न करते हुए नामों का उन्मूलन करने का अभियान चलाना चाहिए। मैंने कई बार विचार किया कि इस भावना को कैसे खत्म किया जा सकता है। सोच–विचार करने के बाद मेरी पक्की राय बनी कि अस्पृश्यता और जातिभेद यह नाम में ही समाए हुए हैं। उच्चवर्णीय हमारा तिरस्कार करते हैं तो केवल हमारे नाम के कारण। महार कहने पर सुनने वाले के मन में एक तरह से तिरस्कार की भावना पैदा होती है। मराठा कहने पर अलग भावना उत्पन्न होती है, ब्राह्मण कहने पर सुनने वाले के मन में आदर की भावना जागती है। कोई इन बातों को गलत नहीं कह सकता। इस मामले में धेड जाति का उदाहरण दिया जा सकता है। यह बताने की जरूरत नहीं है कि गुजरात के धेड जाति के लोगों को अस्पृश्यता कितनी तीव्रता से झेलनी पडती है फिर भी बंबई आने पर वे दक्षिणी मराठा के पड़ोस में रहते हैं। इतना ही नहीं तो मैंने उनमें रोटी का व्यवहार चलते हुए देखा है।

यही सभी जानते हैं कि दूसरी तरफ अगर महाराष्ट्र का कोई अस्पृश्य गुजरात जाता है तो दक्षिणी कहकर वह ब्राह्मणों के भोजनालय में रह सकता है। हाल ही के दो–तीन वर्षों में पूरा मद्रास पेट भरने के लिए बंबई आ गया है और उसमें मद्रास के बहुत सारे अस्पृश्य लोग भी हैं। लेकिन ये मद्रास के अस्पृश्य मुंबई के हिंदु विश्रांतिगृहों, धर्मशाला में आराम से खाते–पीते हैं। उन पर कोई पाबंदी नहीं है। एक क्षेत्र का अस्पृश्य दूसरे क्षेत्र में जाने पर स्पृश्य बन जाता है। इस अजीब बात की वजह खोजने पर यह दिखाई देता है कि सभी क्षेत्रों में अस्पृश्यता के चिह्न और लक्षण एक जैसे नहीं हैं। एक जगह के लक्षण दूसरे क्षेत्र को पता नहीं हैं। लक्षणों, चिह्नों के अभाव में एक प्रांत का अस्पृश्य दूसरे प्रांत में स्पृश्य माना जाता है। मनुष्य या जाति के तौर पर वह अस्पृश्य नहीं है। समाज में यह एक परंपरा है कि एक खास तरह का नाम धारण करने वाले लोग अस्पृश्य माने जाते हैं। जिनके पास यह नाम नहीं है उन्हें स्पृश्य माना जाता है। वैसे अस्पृश्य आदमी की शारीरिक संरचना, चमड़ी, रूपरंग में स्पृश्य आदमी की तुलना में ऐसा अलग कुछ भी नहीं है कि पहली बार देखने पर जिस तरह सिद्दी लोगों को युरोपियनों से या इन दोनों को चीनी और जापानियों से अलग किया जाता है उसी तरह अस्पृश्यों को स्पृश्यों से अलग किया जा सके। नाम के अलावा अस्पृश्यता की पहचान का और कोई चिह्न नहीं है। इसलिए, मेरी राय में नामांतरण करना उचित है।

यहां तक नामांतरण का समर्थन करने वालों के साथ मेरी राय मिलती है। मगर मेरी समझ में नहीं आता कि मुंबई क्षेत्र के अस्पृश्य वर्ग को आदि–हिंदू कहला कर

क्या हासिल होगा? यदि इसका उद्देश्य अस्पृश्य वर्ग की सभी जातियों का एकीकरण है तो बहिष्कृत नाम में क्या बुराई है? मुझे संदेह है कि इससे अच्छा दूसरा अर्थपूर्ण उपनाम दिया जा सकता है। यदि नई नीति का उद्देश्य यह है कि आदि नाम लगाने से अस्पृश्यता चली जाएगी तो यह केवल भ्रम है। कई बार महार लोग शर्म के कारण किसी के पूछने पर बताते हैं कि मैं चोखा हूं। उसी तरह चमार, मैं रोहिदास हूं, कहते हैं, मगर वे एक नाम के कारण जितने अस्पृश्य हैं उतने ही दूसरे नाम के कारण भी अस्पृश्य हैं। मद्रास में अस्पृश्य वर्ग अपने को आदि द्रविड़ कहता है लेकिन इस कारण उनकी अस्पृश्यता जाने का कोई प्रमाण नहीं है। यह पूरी तरह से सही है कि अस्पृश्यता और जातिभेद नाम में ही समाए हुए हैं और ये नाम खत्म किए बगैर चलेगा नहीं। केवल जातिवाचक नाम हम छोड़ दें तो उससे कुछ नहीं होगा। हमारे साथ सभी जाति के लोगों को अपने जातिवाचक नाम छोड़कर सभी को एक ही सर्वसाधारण नाम को अपनाना चाहिए। मेरी राय में सभी को स्वयं को केवल हिन्दू ही कहना चाहिए और जातिसूचक उपनाम निकाल देने चाहिए। कोई अपने आपको ब्राह्मण, मराठा, चमार, महार, मांग आदि न कहकर केवल हिन्दू कहे। इससे समाज में समता पैदा होने से एकता पैदा होगी। हिन्दू कहने से कोई किसी का तिरस्कार नहीं करेगा। कोई किसी को नीचा और कोई किसी को श्रेष्ठ नहीं मानेगा। इसके अलावा लोगों का एक दूसरे के प्रति सहानुभूति जाति पर आधारित नहीं होगी और समाज से अन्याय, अनेकता, संवेदनहीनता खत्म हो जाएंगी। आज मराठा होने पर ही अन्य मराठे उससे सहानुभूति दिखाते हैं। इसी तरह ब्राह्मण ब्राह्मण के अलावा किसी और के प्रति सहानुभूति दिखाने को तैयार नहीं होता। लेकिन जहां सभी हिन्दू होंगे वहां सहानुभूति में कोई बाधा ही नहीं होगी। मुस्लिम समाज में दिखाई देने वाली एकता की वजह क्या है, यही है। उनमें मुसलमान होना काफी है। वह अपना हो गया। मेरा ऐसा मानना है कि ऐसा हिन्दुओं में भी होने के लिए समान नाम होना चाहिए और वह हिन्दू हो।

जब यह परिवर्तन होगा वह शुभ दिन होगा। लेकिन महत्वपूर्ण सवाल यह है कि परिवर्तन लाने के लिए क्या किया जाए।

कई मामलों में तो सरकारी कानून बनाए बगैर सामाजिक अन्याय का निर्मूलन होना असंभव है। इस कारण सामाजिक और धार्मिक मामलों में जहां कानून बनाकर सुधार करने के बारे में भ्रम की स्थिति है उनके बारे में अंग्रेज सरकार ने माना है कि जाति और रूढ़ियों के बारे में कानून शिकंजा कसा जाना हमें मंजूर नहीं है। मैं मानता हूं इस दृष्टि से बहुत खुशी की बात यह है कि हिन्दुस्तान को स्वराज मिलने का अवसर आया है। क्योंकि ब्रिटिश कानून हुकूमत हमारे लिए हो तो बाधा और न हो तो अराजकता की तरह है। हमारे लोगों को स्वराज से बहुत डर लगता

है। हमें आजादी से डर लगता है, ऐसा लगता है कि स्वराज का रूपांतरण पेशवाई में होगा। लेकिन यह किन विचारों को दर्शाता है? क्योंकि पेशवाई स्वराज और आज के स्वराज में काफी फर्क है। पेशवाई में एक बार स्थापित राजवंश राज करता था। वे जनता की राय से शासन नहीं करते थे। भावी स्वराज में सरकार जनता की राय से चलने वाली होगी और उसमें कोई हमेशा के लिए राजा नहीं हो सकता। इस तरह के स्वराज में यदि जनता के हितों की अनदेखी हुई, उनकी सुरक्षा दूसरे किसी भी प्रकार की राजनीति में नहीं होगी, ऐसा पूरे विष्व का अनुभव है और इसी वजह से लोकसम्मत स्वराज ही सर्वोत्तम प्रषासनिक राज व्यवस्था है। मुझे आश्चर्य होता है कि हम लोग ऐसे स्वराज से क्यों डरते हैं। इसके विपरित उसकी प्राप्ति के लिए हम प्रयत्न करें यह बहुत जरूरी है। आपको इस बात पर गौर करना चाहिए कि मेरा स्वराज से तात्पर्य क्या है।

आज हिन्दुस्तान में स्वराज को लेकर जो मतभेद हैं वे मुख्य रूप से इस बात को लेकर हैं कि अंग्रेजों से सत्ता धीरे–धीरे ली जाए या एकमुश्त। सारा जोर इसी मुद्दे पर है। इस बात पर कोई विचार नहीं कर रहा हमें प्राप्त सत्ता स्वराज किस की राय से चले। सोचिए यदि सत्ता एक ही वर्ग के राय से चलती रही तो क्या अंग्रेजी शासन में जो हालत है उससे भी दस गुना ज्यादा बुरी स्थिति नहीं हो जाएगी?

इसलिए सत्ता के सवाल जितना शायद उससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण मुद्दा राय का है। और जिस तरह हमारे स्वराजवादियों के इस मुद्दे को गौण मानकर उसकी उपेक्षा की है उससे स्पष्ट है कि उन्हें जनता की राय की कितनी परवाह है। लेकिन हमें इस मुद्दे पर जोर देना चाहिए। क्योकि यदि स्वराज आने वाला है तो हमें भी दूसरों के बराबरी के अधिकार मिलने चाहिए। ऐसे अधिकार प्राप्त करने के लिए हमें वोट (मत) देने का राजनीतिक अधिकार हासिल करना चाहिए। मेरा मानना है कि अभी वोट के अधिकार को इतना संकुचित कर दिया गया है कि सारे हिन्दुस्तान में वह केवल दो प्रतिशत लोगों को ही हासिल है। इस तरह हमारा दोहरा लाभ होनेवाला है। एक आज लॉ काउंसिल की तरफ से होने वाली उपेक्षा नहीं होगी। जो लोग हमारे वोट देने के कारण चुनकर आएंगे वे हमारे हितों की उपेक्षा नहीं कर पाएंगे। कारण यह है कि उनकी लगाम हमारे हाथों में होगी। वोट के अधिकार से केवल इतना ही लाभ होगा ऐसा नहीं है। उससे दूसरा महत्वपूर्ण फायदा है वोट के अधिकार से वर्णाश्रम धर्म पर भारी प्रहार होगा। राजनीति में समान आश्रम होने के बाद सामाजिक स्तर पर वर्णाश्रम धर्म का बने रहना संभव नहीं है। राजनीतिक क्षेत्र में एक ब्राह्मण पर यदि भंगी से वोटों की भीख मांगने की नौबत आई तो वर्णाश्रम धर्म कहां रह जाएगा। इस रंक से राजा बनने के राजमार्ग को पहले हमें अपनाना चाहिए। कुछ वर्ष पहले तक ब्रिटेन में भी मजदूरों की हमारे जैसी ही दयनीय स्थिति थी। 1860

तक वे इस उम्मीद पर चुपचाप बैठे थे कि लिबरल उनका उद्धार करेंगे। लेकिन यह समझ में आने पर कि जो दूसरों पर निर्भर रहा वह डूबा जो जिसने जी–जान से मेहनत की वह सफल हुआ, इस तरह से प्रेरित हो उन्होंने अपना उद्धार स्वयं करने का फैसला किया। अपने इस काम के लिए उन्होंने वोट के अधिकार को महत्वपूर्ण स्थान दिया था और उस अधिकार को पाने के लिए अपनी सारी ताकत लगा दी। आखिरकार उनकी जीत हुई और वे सत्तारूढ़ हुए और अपनी सोच के अनुरूप सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सुधार कर रहे हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि वोट का अधिकार बड़े पैमाने पर हासिल हुआ। यदि हमने इस ढंग से कोशिश की तो हम भी प्रगति कर सकते हैं।

लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हम जिस उद्देश्य को सामने रखते हैं उसके बुनियादी सिद्धांतों को अपने विरोधियों के सामने पेश कर देने भर से काम खत्म नहीं हो जाता। जिन लोगों को किन्हीं भीषण हालात से गुजरना पड़ता है वे लोग पहले सिद्धांत पर वादविवाद करने लगते हैं। हर कोई ऐसा सैद्धांतिक विवाद करने लगता है कि, क्या हम मनुष्य नहीं हैं? कुत्ते–बिल्लियां क्या हमसे ज्यादा श्रेष्ठ हैं? असल में इसमें गलत कुछ भी नहीं है, लेकिन कई लोगों को लगता है कि सिद्धांत बघार देने से हमारा काम हो गया और हम जीत गए। लेकिन यह भ्रम है। केवल सिद्धांत बघारने से काम नहीं चलता। क्योंकि सिद्धांतों का प्रतिपादन होते ही उसका अपने आप दुनिया पर असर नहीं होता। यह असर पैदा करना पड़ता है। इसलिए, असर पैदा करने के लिए केवल सिद्धांतों के प्रतिपादन के बजाय उन पर अमल के लिए आवश्यक संगठन तैयार करना उससे भी ज्यादा जरूरी है। जब तक संगठन नहीं बनता तब तक हम जिन सिद्धांतों के लिए संघर्ष कर रहे हैं वे सिद्ध ांत हमारे विरोधियों को स्वीकार भी हो जाएं तो भी उन पर अमल नहीं होगा। और हमारी बातें अरण्यरोदन की तरह शुष्क साबित होंगे। जिस तरह भाग्य की गाड़ी को हांकने के लिए प्रयत्नरूपी सारथी होना चाहिए उसी तरह सिद्धांतों का प्रभाव पैदा करने के लिए संगठन होना जरूरी है।

यह सब देख कर मुझे लगता है कि हममें संघशक्ति पैदा करने के लिए हम सभी अस्पृश्य जातियों की एक विशाल संस्था होना जरूरी है। ऐसी संस्था बननी चाहिए। इस संस्था के जरिए दो तरह के काम होंगे – एक, हमारे सार्वजनिक कार्यों के लिए लगने वाला धन इकठ्ठा करना आसान होगा। एक कहावत है, कि "गरीब की इच्छाएं पैदा होते ही मर जाती हैं।" बहुत से लोगों को इस बारे में संदेह है कि हमारा समाज गरीब होने के कारण उसके द्वारा यह काम कैसे हो पाएगा? लेकिन मेरी राय में यह कहावत केवल व्यक्तियों पर लागू होती है, समाज पर लागू नहीं होती। बूंद–बूंद से समुद्र बनता है यह दूसरी कहावत भी सबने सुनी ही होगी।

हमारा समाज हालांकि गरीब है मगर संख्या की दृष्टि से ताकतवर है। हममें से चौबीस लाख लोगों में से कम से कम दो लाख लोगों ने हर वर्ष आठ आने दिए तो हर वर्ष एक लाख रुपयों का कोष तैयार होगा और इसी तरह हर वर्ष एक लाख रुपए जमा होते रहे तो अपनी उन्नति होने में जरा भी समय नहीं लगेगा। लेकिन इसके लिए एक केंद्रीय संस्था होना जरूरी है। एक जिम्मेदार संस्था के जरिए एक स्थायी फंड इकट्ठा करने का काम होगा। इतना ही नहीं अपनी नीतियां तय करके उन्हें लोगों तक पहुचाना भी आसान हो जाएगा। आज हमारी हालत ऐसी है कि जिसे थोड़ी बहुत जानकारी होती है वह अपने आप को नेता समझने लगता है और उसे लगता है कि उसका नाम चमकना चाहिए। इतना ही नहीं तो कोई संस्था के जरिए काम करने को तैयार नहीं होता। कारण यह है कि संस्था में होने से उनका नाम नहीं चमकता। इस कारण हम असंगठित हैं हर कोई अपना नाम आगे करने के लिए सबूत दिखा रहा है। दूसरी बात यह है हालांकि हम इस देश में रहते हैं हम पर तरह–तरह के अन्याय किए जा रहे हैं। हम अल्पसंख्यक नहीं हैं, तब भी सरकार हमारी तरफ ध्यान नहीं देती या हमारी बातें सुनने को तैयार नहीं है। इसके विपरीत उनकी अगर इच्छा हुई तो वे हम पर दया करेंगे और कोई टुकड़ा डाल देंगे। मांगने से हमें कुछ नहीं मिलेगा, यह हमारा हाल है। मुसलमान लोगों का कितना पुचकारा जा रहा है! इसका कारण है उनकी संगठित शक्ति और संस्थाएं! यदि हमारी कोई संस्था होती तो अपने झूठे नेताओं पर लगाम लगा कर उन्हें एक दिशा देती। इतना ही नहीं, दूसरों के द्वारा हमारी जो उपेक्षा होती है, वह न हो पाती।

इस संस्था को फंड इकठ्ठा करके हमारे अस्पृश्य वर्ग में अंदरूनी सुधार करना शुरू करना चाहिए। केवल अस्पृश्यता के खिलाफ शिकायत करने का कोई लाभ नहीं होगा। हम भूल जाते हैं कि आज हिंदु समाज में जातिभेद के साथ–साथ गुणभेद भी हैं ही। और जातिभेद खत्म भी हो जाए, तो भी गुणभेद तो रहने ही वाला है। आज सभी अस्पृश्य वर्ग के लोगों को यदि ब्राह्मण भी कहा जाए तो भी उनमें से कोई व्यक्ति ना. परांजपे के बराबर बैठेने लायक भी नहीं हो पाए हैं। कारण यह है कि जातिभेद भले ही खत्म हो जाए तो भी गुणभेद बाकी हैं। कभी–कभी मुझे ऐसा लगता है यदि जातियों के बीच जो उतना गुणभेद बढ़ गया है। वह यदि इतना न बढ़ा होता तो यह जातिभेद इतने दिनों तक टिक नहीं पाता। कारण यह है कि सभी जातियों के लोग समान मात्रा में गुणवान होते तो वे एक जाति के वर्चस्व को कबूल नहीं करते. गुणभेद न होता तो जातिभेद कभी का जमींदोस्त हो गया होता। इसलिए मुझे हमेशा यह कहने की इच्छा होती है कि अन्य लोग जिस तरह हमसे जाति में श्रेष्ठ हैं उसी तरह वे व्यावहारिक गुणों में भी श्रेष्ठ हैं। इसलिए हमें अपने लोगों में व्यावहारिक गुणों की अभिव्यक्ति करने की कोशिश करनी चाहिए। और हममें से

कई लोगों को सखेद आश्चर्य होता है कि हम लोग जाति–भेद के कारण आगजनी वगैरा नहीं करते, अपने पर होने वाले अन्याय को खत्म करने के लिए हंगामा नहीं करते। लेकिन इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। हम यह नहीं कर पाते आदि आक्रोश युक्त बातें सुन कर भी हम उत्तेजित नहीं होते तो इसका कारण यह है कि उन्हें इस अन्याय का अहसास नहीं है। यदि कोई मनुष्य किसी पद के लिए योग्य होने पर जाति–भेद के कारण उसे वह पद प्राप्त नहीं होता तो ऐसे आदमी को जाति भेद का दंश महसूस होता है। यह उसे अनुभव होने लगता है और वह आंदोलनों के मार्ग को समझने लगता है और उसका समर्थक बन जाता है। जो उस पद तक जाने के योग्य नहीं होगा, उसे जाति भेद का उग्र स्वरूप कैसे समझ में आएगा? जाति–भेद हो या न हो, वह जहां है वहीं रहेगा। इसलिए हमारे लोगों की योग्यता बढ़ाने की हमें चिंता करनी चाहिए। यदि गुणों में समता आई तो जाति–भेद में समाई हुई अस्पृश्यता बहुत दिनों तक टिक नहीं पाएगी।

हमारे समाज को इस तरह तैयार होना चाहिए फिर हम जिस तरह की सामाजिक या आर्थिक स्थिति चाहते हैं, उस स्थिति को प्राप्त करने में हमें ज्यादा समय नहीं लगेगा। हो सकता है आपको यह विचार बचकाना लगे, लेकिन मुझे इसमें काफी तथ्य नजर आता है।

अभी का समय इस देश की दृष्टि से आपतकाल जैसा है। 1917 में जब स्वराज्य की नींव डालने की शुरुआत हुई तब से इस देश में तीन खेमे बन गए हैं– 1) यूरोपीयन लोगों का; 2) मुस्लिम लोगों का; 3) हिंदुओं का। 1917 से पहले राजनीतिक मामलों में हिंदू और मुसलमानों का 36 का आंकड़ा था, अब वह 63 का हो गया है और दोनों में भयंकर प्रकार का सगापन पैदा हो गया है। दोनों ने एकजुट होकर अंग्रेजों से स्वराज्य की पहली किस्त ली है। लेकिन बंटवारे के समय भाइयों में भी तनाव पैदा हो गए हैं। स्वराज्य मांगने पर किसको बड़ा हिस्सा मिलेगा यह संघर्ष का मुद्दा बन गया है। इस सवाल का जवाब यही है कि जिसकी जनसंख्या ज्यादा होगी उसे ही स्वराज्य का ज्यादा हिस्सा मिलेगा। मुसलमानों को अपनी जनसंख्या ज्यादा हो यह लगना स्वाभाविक है। उसी तरह यह भी स्वाभाविक है कि हिंदू सोचें कि वह कम न हों। दोनों पक्षों की नजर हम पर है। हमारे सिवाय न मुसलमानों को विजय मिल सकती है और न हिंदुओं की नैय्या पार लग सकती है। आज अगर हम हिंदू रहे तो ही आर्य धर्म की संस्कृति इस देश में जीवित रहेगी। इसके विपरीत अगर हम हिंदू से मुसलमान हो गए तो इस देश में यवन संस्कृति का बोलबाला होगा। यह बात आज हिंदू और मुसलमान दोनों ही जानते हैं। यदि ऐसा न होता तो वायकोम में ब्राह्मण वर्ग अस्पृश्य जातियों के लिए सत्याग्रह करने को तैयार न होता। या मुस्लिम लोग करोड़ों रुपए खर्च करके हमें उनके धर्म की दीक्षा देने को उत्सुक

न होते। आज हम सबसे नीचे हैं फिर भी इस हिंदू–मुस्लिम संस्कृति के संग्राम में हमारी संख्या को देखते हुए हमारी रसद् मदद बहुत महत्वपूर्ण है और अगर हमने अपने में संघशक्ति पैदा की तो हम जो मांगेंगे वह हमें मिलेगा। मेरा विश्वास है कि आज की बीसवीं सदी में जिन हिंदुओं को अस्पृश्यता नष्ट करने के लिए कहने पर जवाब देते हैं कि धूल खा रहे पुराणों से पूछते हैं। वही लोग इस संघर्ष के कारण उन पुराणों को जला कर हमें समाविष्ट कर लेंगे। क्योंकि इसका कोई इलाज नहीं है, वक्त ही ऐसा आ गया है।

हमारा समाज हर तरह से पिछड़ा हुआ है। आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है, मानसिक शक्ति में पिछड़ा हुआ है। जिस समाज के लोगों को राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक असमानता और अन्याय से अनगिनता की यातनाएं हो रही हैं। जिससे सारे लोगों को गहन अंधकार ने घेरा हुआ है। जिसे विपत्ति के कारण होने वाली यातनाएं सहनी (झेलनी) पड़ रही हैं। और उसे दूर कैसे करें यह समझ में नहीं आ रहा। इन लोगों के सभी क्षेत्रों में चल रहे जीवनकार्य का आखिर क्या परिणाम होगा, यह कह पाना मुश्किल है। इसके लिए उन लोगों को जिन्होनें स्थिति को साफ–साफ समझ लिया है, और जिनके मन में कर्तव्यबुद्धि और परोपकार की भावना पूरी तरह जागृत हुई है उन्हें अपने समाज के जीवन के संघर्ष में, अपने समाज का अस्तित्व बचाने के लिए निरपेक्ष भावना से दिन–रात प्रयत्न करना चाहिए। इन विचारों को समझने के बाद भी जो चुप बैठे रहेंगे वे अपने भाइयों पर विपन्नावस्था लाने और उनका नाश करने के जिम्मेदार होंगे। इसलिए शिक्षित बंधुओं यदि तुम्हें औरों से और भावी पीढी से श्रेष्ठ कहलवाना हो, अपने आज के हालात को सुधार कर अपने बच्चों का भविष्य भी संवारने की इच्छा हो, अपने नौनिहालों की (नाती–पोतों की) स्थिति बुरी न हो ऐसी अगर आपकी इच्छा हो, तो जिस बुराई और दुराचार के कारण अपने लोगों की बुद्धि का, कीर्ति का और परिस्थिति का विनाश हो रहा है, उसे दूर करना, उसका यथाशक्ति निर्मूलन करना आपका कर्तव्य बनता है। यह कर्तव्य आपको जरूर और जरूर पूरा करना चाहिए इतना कह कर मैं अपना वक्तव्य पूरा करता हूं।

5

घनघोर संग्राम करने पर ही मनुष्यता वापिस मिलेगी*

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने बहिष्कृत हितकारिणी सभा की तरफ से जिले में जनजागृति के लिए सभा करने का कार्यक्रम घोषित किया। बेलगांव जिले के निपाणी गांव में – "मुंबई इलाका प्रांतीय बहिष्कृत परिषद तीसरा अधिवेशन" – इस सभा का आयोजन बाबासाहेब की अध्यक्षता में दिनांक 10 और 11 अप्रैल, 1925 को हुआ। सम्मेलन को संबोधित करते हुए दिनांक 11 अप्रैल, 1925 को डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा–

"इस देश में आजकल जो घटनाएं घट रही हैं उसमें हमारे लिए अत्यंत प्रिय घटना है वैकम (वायकोम) का सत्याग्रह। इस सत्याग्रह को लेकर मुझे जो विचार सूझे उन्हें मैं आपके सामने प्रस्तुत कर रहा हूं–

वैकम में कौन–सा विवाद है यह ज्यादातर लोग जानते हैं। जिस रास्ते पर सभी लोग और जानवर भी जाते हैं उस रास्ते पर हम भी जा सकते हैं ऐसा वैकम के अस्पृश्यों की भी मांग है। इस सत्याग्रह में जो कुछ परिवर्तन हुए उन सबसे हमारा ज्यादा लेना–देना नहीं है। गौरतलब बात यह है कि यह सत्याग्रह सालभर से अधिक समय तक चलने के बाद आखिर असफल रहा। यह सही है कि इस सत्याग्रह से कुछ राजनीतिक नेताओं का नजरिया बदला है। यह अब सिद्ध हो गया है कि पहले राजनीतिक और फिर सामाजिक वाली मीमांसक सोच एकदम नादानी भरी है। क्योंकि इतने दिनों तक राजनीति पकाने के बाद राजनीतिक उद्देश्यों में कोई मसला बाधक बन रहा है तो वह सामाजिक ही है। सामाजिक मुद्दे इतने महत्वपूर्ण हैं कि उनको कितना भी स्थगित करने की, लटकाने की कोशिश की गई तो वह सामने आ खड़े होते हैं। जिन दिग्गज राजनीतिज्ञों ने सामाजिक मुद्दों को दरकिनार कर केवल राजनीति ही की और दूसरों को भी इसके लिए मजबूर किया उन्हें कुछ भी साध्य नहीं हुआ। इतना ही नहीं, तो सामाजिक मुद्दों की उपेक्षा करके उन्होंने अपने राजनीतिक उद्देश्यों की सफलता को मुश्किल बना दिया। आज की परिस्थिति इसकी गवाही दे रही है। यदि उन्होंने सही समय पर सामाजिक समस्याओं को अपने हाथ में लिया होता तो आज हर जगह दिखाई देने वाली मनमुटाव और फूट दिखाई न देती! इस देश में महात्मा गांधी से पहले यह बताने वाला कोई ऐसा नेता नहीं हुआ जिसने कहा हो, इस मनमुटाव और फूट को खत्म करने के लिए हो रहे सामाजिक अन्याय को दूर करना सबसे महत्वपूर्ण काम है और हर भारतीय को इसे अपना पवित्र कर्तव्य मान कर पूरा करना चाहिए। उनकी दृष्टि में सामाजिक और

*डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र – चां, भ. खैरमोडे, खंड 2, पृष्ठ 121–126

राजनीतिक समस्याएं दो नहीं एक ही है इसलिए वे हमेशा कहते हैं कि हिंदू–मुस्लिम एकता और अस्पृश्यता निवारण इन दोनों के बिना स्वराज नहीं मिलेगा। सूक्ष्म दृष्टि से देखें तो कहना पड़ता है कि जिस तरह कस्तूरबा गांधी और लक्ष्मी में सौतेलेपन का भाव है उसी तरह गांधीजी अस्पृश्यता के बारे में सौतेलेपन का व्यवहार करते हैं ऐसा कहना पड़ेगा। क्योंकि जितना जोर वे खादी प्रसार और हिंदू–मुस्लिम एकता के लिए देते हैं उतना अस्पृश्यता निवारण पर नहीं देते। यदि उन्होंने उतना ही बल दिया होता तो जिस तरह कॉंग्रेस में उन्होंने यह ज़िद की है कि सूत के बिना मताधिकार नहीं उसी तरह वे यह भी आग्रह करते कि अस्पृश्यता निवारण के बगैर कॉंग्रेस में प्रवेश नहीं मिलेगा। खैर! जब कोई पास बिठाने को राजनीति महात्मा गांधी द्वारा दिखाई गई सहानुभूति कुछ कम नहीं है। अपनी सहानुभूति के कारण वे वैकम गए थे और उन्होंने वहां के ब्राह्मणों के सामने समझौते के तीन सूत्र रखे। उन्होंने कहा कि,. 1. जनता से राय लें; 2. जिन शास्त्रों में अस्पृश्यता बताई गई है। पंडितों के द्‌ारा यह तय करवा दें कि जिन शास्त्रों में अस्पृश्यता बताई गई है वह सच्ची है या झूठी; 3. त्रावणकोर के दीवान को अध्यक्ष बना कर पंडितों की समिति के द्वारा समस्या का समाधान निकालें। लेकिन खेद और आश्चर्य की बात यह है कि ये तीनों ही रास्ते ब्राह्मणों को स्वीकार्य नहीं थे। वे अस्पृश्यों को रोकने के अपने निश्चय से डिगे नहीं। इतना ही नहीं तो अस्पृश्यता को अन्याय मानने वाले गांधीजी के सामने कोई शास्त्र रख दिया।

मैंने इन हिंदू शास्त्रों को पढ़ा नहीं है और मुझे पता नहीं कि उनके पेट में कौन कौन–सी पहेलियां छिपी हुई हैं। मेरा विश्वास है कि उन शास्त्रों में अस्पृश्यता का उल्लेख है। लेकिन मुझे लगता नहीं था कि हमारे धर्माचार्य छाती ठोंक कर यह कहेंगे कि व्यावहारिक जीवन में अस्पृश्यता का पालन धर्म है। इसका सीधा अर्थ यह है कि हम सारे शास्त्रों को जला कर राख कर दें या शास्त्रों को छान कर अस्पृश्यता के बारे में उनके जो फैसले हैं, उन्हें गलत साबित करते रहें और यदि उन फैसलों को हम गलत साबित नहीं कर सकें तो हमें शुरू से आखिर तक अस्पृश्यता झेलनी पड़ेगी। अगर यही हमारे धार्मिक नेताओं का दुराग्रह है तो हमें एकदम अलग ढंग से इन शास्त्रों को ठिकाने लगाना पड़ेगा। इग्लैंड में बर्कले नाम का बहुत बड़ा दार्शनिक हुआ था वह कई तरह की दार्शनिक पहेलियां रच के लोगों को परेशान करता था और लोग उसकी पहेलियों से बहुत परेशान हो गए थे। ऐसे ही एक दुखी व्यक्ति डॉ जॉन्सन की मदद लेने उनके पास गया और बर्कले की एक पहेली बता कर उसे बूझने की प्रार्थना करने लगा। कुछ समय बाद डॉ जॉनसन ने पास ही पड़े एक पत्थर पर उस कागज को रख कर उसे ठोकर मारी और कहा, ये देखो, इस तरह से मैंने उसकी पहेली को आसानी से हल कर दिया। यही न्याय हमें इन

नीच शास्त्रों के साथ भी करना उचित होगा। सचमुच ही ये शास्त्र सारी जनता का अपमान करने वाले हैं। सरकार को इन्हें पहले जब्त कर लेना चाहिए था। कम से कम उसका जाप करने वालों को सामाजिक समस्या का समाधान करते समय उन्हें बीच में नहीं लाना चाहिए। वरना, स्थिति भयावह होने का खतरा होता है। सभी में बराबरी का रिश्ता बनाकर एक दूसरे की मदद करना और समाज में सद्भाव बना रहे इस तरह व्यवहार करना यही समाज रचना का मुख्य उद्देश्य है। जब यह दिखाई दे कि समाज के कुछ लोग प्रबल होकर दूसरों पर जुल्म करने लगे हैं और समाज रचना का उद्देश्य ही सफल नहीं हो रहा है उस समय वही हाथ पर हाथ धरे चुपचाप बैठे रहने के बजाय बाकी सारे काम छोड़कर ऐसे मदांध लोगों की चोटी पकड़कर उन्हें झुकाना ही समाज के हर व्यक्ति का कर्तव्य होता है। हम यह मांग नहीं कर रहे कि सभी लोगों को हर तरह से बराबर रखने के लिए सभी को संघर्ष करना चाहिए। जिस तरह छोटे दूल्हे और बड़ी दुल्हन की जोड़ी जमने पर दुल्हन के जवान होने पर दूल्हे की फजीहत न हो इसलिए दुल्हन को नमक खिलाना बंद करने का सुझाव दिया जाता है। हम उनकी तरह यह नहीं सुझा रहे है कि हम गरीब हैं इसलिए दूसरों का पैसा छीनकर उन्हें भी गरीब बनाया जाए। हम हमारी मानव जाति को हासिल समान अधिकार मांग रहे हैं लेकिन उनके मिलने में शास्त्र बाधक बन रहे हैं। जहां–जहां इन अधिकारों को छीना गया वहां–वहां बड़े संघर्ष हुए हैं। फ्रांस में उच्च वर्ग के लोगों द्वारा अत्याचार किए जाने के कारण निम्न वर्ग के लोगों ने उनका कत्लेआम किया। अमेरिका में नीग्रो लोगों को गुलामी से मुक्त करने के लिए छह वर्ष तक गृहयुद्ध हुआ। यह सही है कि गृहयुद्ध में बड़ी संख्या में लोग मारे गए मगर उनकी मौत बेकार नहीं गई। उन्होंने जीवित रहे लोगों के जीवन को सुखद बनाया। क्या ऐसा घनघोर युद्ध करने पर ही हमारी छीनी गई मनुष्यता हमें वापस मिलेगी? या किसी सौम्य उपाय से काम चल जाएगा। अभी इस सवाल को छोड़ दे तो भी हमें एक बात ध्यान रखनी चाहिए कि हम पर इतना अन्याय, इतनी उपेक्षा और जबरदस्ती होने के बावजूद हम गूंगे की तरह चुप हैं और गाय की तरह सहनशील हैं। हमें उसका कोई दुख नहीं, आक्रोश नहीं, अहसास नहीं। आश्चर्य केवल इस बात का है। छोटी–सी चींटी पर पांव पड़ने पर वह डसती है। लेकिन हम इतने बड़े प्राणी होने पर भी कोई हमें लातें मारे तो भी हम पलटकर उसे जवाब नहीं देते। खोजने पर इसके दो ही कारण दिखाई देते हैं। एक हमारे पास ज्ञान और बुद्धिमानी नहीं है। यह जिनके पास थी उन्होंने उसके बल पर हमारे लोगों पर जुल्म किए और हमारी सलाह के बगैर यह तय किया कि हमें फलां–फलां नियमों के अनुसार व्यवहार करना है। ऐसा व्यवहार करने के लिए अन्यायपूर्वक जबरदस्ती की गई। यह सब हम अपने कर्तव्य की उपेक्षा करने का फल भोग रहे हैं। और हमने ही अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार ली है। यदि हमारे मनुष्यतारूपी धन का हरण

करने वालों को सही समय पर सजा दी गई होती, तो आज हमारे लोगों में दिखाई देने वाली अत्यंत शोचनीय और दयनीय अवस्था हमें कभी प्राप्त न होती। और इस स्वर्ण भूमि में दाने–दाने के लिए मोहताज होकर शर्मनाक स्थिति में दूसरों की याचना करने की नौबत भी हम पर कभी न आती। लेकिन अन्याय का प्रतिकार करने के बजाय हम पुराने रीति–रिवाजों से चिपके रह कर बहुत कमजोर होते जा रहे हैं। हममें प्राण बचा ही नहीं है। हम निस्तेज हो गए हैं। इसका कारण यह है कि हमने बच्चों के प्रति मां–बाप का क्या कर्तव्य है, इसके प्रति जितना ध्यान देना चाहिए था, उतना ध्यान दिया नहीं। अनावश्यक जिम्मेदारियां अपने सिर पर लेने के कारण और उन्हें मनमुताबिक निभा न पाने से हमारे माता–पिता बच्चों की बरबादी का कारण बनते हैं। अनावश्यक जिम्मेदारियों में से एक है – बाप को बेटे की शादी करनी ही चाहिए। शादी करके गृहस्थी बसती नहीं कि यहां बच्चों की परंपरा शुरू हो जाती है। 4–5 साल में एक दो बच्चे हो ही जाते हैं! वे बड़े भी नहीं होते तब तक उनके नए भाई–बहन उनकी पीठ पर पांव देकर आ जाते हैं! पहले की शादी होती नहीं कि दूसरे की आ धमकती है। फिर बच्चों के बच्चों की चिंता! ऐसा उच्च वर्ण के लोगों में भी होता है मगर उसके अनिष्ट परिणाम हम लोगों को भोगने पड़ते हैं उतने उन्हें नहीं भोगने पड़ते। इसका कारण यह है कि हालांकि वे लोग शादी करने की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेते हैं तब भी वे उसके साथ इस बात का भी ध्यान रखते हैं कि लड़का स्वावलंबी बने और उस पर पड़ी गृहस्थी की और उसके साथ आने वाले बच्चों के पालनपोषण की जोखिम उठाने में वह सक्षम हो इस तरह की शिक्षा उसे दी जाए। हमारे लोग बच्चों की शादी कर देने के अलावा और कुछ नहीं करते। एक तो कर्ज लेकर शादी कर देते हैं। लड़का अशिक्षित होने के कारण और उसमें स्वतंत्र रूप से कमाई करने की योग्यता न होने के कारण वह पहले ही कर्ज के नीचे दब जाता है। और उससे गृहस्थी चलाना जमता नहीं। इस दौरान बच्चे होने पर उस पर एक और बोझ बढ़ जाता है। बच्चों को पढ़ाकर अपने से बेहतर स्थिति में लाने की क्षमता नहीं है। दूसरी तरफ गृहस्थी का विस्तार होने के साथ आय भी बढ़नी चाहिए इसलिए अपने बच्चों को अशिक्षित स्थिति में कहीं काम से लगा दिए जाते हैं और उसकी कमाई से अपनी गृहस्थी चलाते हैं। शादी के झंझट में पड़ने के कारण बाप डूब जाता है मगर वह सयाना नहीं हो पाता। इसके विपरित वह अपने बच्चों को भी दलदल में धकेलकर डुबो देता है!

जिस तरह हमारे समाज में मां–बाप लड़कों का नुकसान करते हैं उसी तरह वे लड़कियों की जिन्दगी में मिट्टी मिलाने का काम भी करते हैं। बच्चों की बचपन में शादी करने से जो नुक्सान होता है उससे ज्यादा लड़कियों को देवदासी बनाने से होता है। हमारे देश में प्राचीनकाल से लड़कियों को हिन्दू देवताओं को समर्पित

करने की जो अजीब परंपरा चल रही है उसका प्रसार कुछ क्षेत्रों में हम लोगों के बीच भी हुआ है। शायद पहले यह प्रथा सद्भावना से प्रेरित रही होगी। लेकिन आज के समय में देवदासी यानी समूचे विश्व की शोषित नारी यही एक सच्चाई है। वह अपना शरीर बेच कर अपने रिश्तेदारों के पेट भरे! मुरली (देवदासी) बनाने की कुरीति जहां जारी है वहां इसकी जड़ें इतने गहरे तक पैठी हैं कि इस प्रथा का शिकार बने लोग कानून की भी परवाह नहीं करते। ये लोग केवल अपनी लड़की के हितों के ही दुश्मन नहीं हैं, वरन् समाज के भी दुश्मन हैं। क्योंकि उनकी इन करतूतों से समाज की आद्य व्यवस्था यानी परिवार व्यवस्था पर ही सीधे आघात होता है। उसमें एक पति और एक पत्नी परिवार का स्वरूप मान्य और स्वीकृत है। कुटुंब का मतलब समाज द्वारा अपने लोगों के संरक्षण और पालनपोषण के लिए स्थापित की गई संस्था है। इस संस्था को चलाने वाले दंपति जितने शुद्ध, सात्विक और स्वाभिमानी होंगे, उतनी ही उनकी संतान शुद्ध, सात्विक और स्वाभिमानी हो सकेगी। एक महिला के बहुत सारे पति हों और एक पुरुष की बहुत सारी पत्नियां हों यह पारिवारिक पद्धति ठीक नहीं है।

हम आज मानसिक दुर्बलता के कारण ही दूसरों के गुलाम बने हैं। इसकी वजह यह है कि भगवान ने जिनके हाथों में हमारा भविष्य दिया है वे अपने महत्वपूर्ण कर्त्तव्य को नहीं जानते–पहचानते। यदि यह परख होती तो हमारी स्थिति इतनी दयनीय नहीं होती। यह दुख की बात है कि हमसे लोग गुलामों जैसा बर्ताव करते हैं। मगर हमारे कर्तव्यशून्य मां–बाप आगे–पीछे का विचार न करके बड़ी संख्या में बच्चे पैदा करके गुलामों का यह बाजार सजाए ही रखते हैं, यह कितने अनर्थ की, दयनीयता की बात है।

सज्जनों, हम कहते हैं कि हमारी हालत बेहद खराब है। लोग हमारे साथ अन्यायपूर्ण व्यवहार करते हैं ये सब बातें सही हैं। मगर यह अन्याय खत्म कैसे होगा? आपको स्वीकार करना होगा कि एक बार जब वर्चस्व मढ़ा जाता है, तो उसके खत्म होने का उपयुक्त मार्ग यही है कि जिन्हें यह सब भुगतना पड़ा है वे सयाने बनें, सामर्थ्य हासिल करें और प्रतिपक्ष का मुकाबला करके और उन पर हावी होकर उनके चंगुल से छूट जाएं। इस तरह का सयानापन, हौसला और सामर्थ्य हमें कब और कैसे मिलेगा? जिन कारणों से हममें सयानापन और सामर्थ्य नहीं है वे सभी कारण ऊंची जातियों के दबाव के कारण पैदा नहीं हुए और शायद वैसा हो भी तो उनमें से कुछ कारणों को खत्म करना हमारे हाथ में नहीं है ऐसा नहीं है। हम लोगों को जितना बेकार भोजन खाना पड़ता है उतना किसी और को खाना नहीं पड़ता! लेकिन इस बारे में हमारे लोगों ने कभी शिकायत की है? इतना ही नहीं, इसके विपरीत, कई लोग गांव से रोटी के टुकड़े मांग कर लाने पर भी कितना अभिमान करते हैं। बाकी

लोग अच्छे वस्त्र पहन कर घूमते हैं तो हम लोगों को एक धोती पंचा, एक कंबल और एक आठ–नौ गज का मोटे कपड़े का साफे के अलावा कुछ नहीं मिलता। लेकिन क्या हमारे लोगों ने इस दरिद्रता के प्रति कोई नाराजगी प्रकट की? इसके विपरीत मरे मुर्दे के कफन के कपड़े लाने के लिए हम हमेशा ही तैयार रहते हैं। सरकार दरबार, कोर्ट–कचहरी में हमें अंदर नहीं लिया जाता मगर हमारे लोगों ने अपने अधिकार छीने जाने के बारे में कभी असंतोष प्रकट किया है? इसके विपरीत ऊंची जातिवालों में से किसी एक ने हमारी मनुष्यता को सम्मान देकर ऊपर बैठने को कहा तो हम उससे यही कहते हैं कि हम इसी लायक हैं। हमारे समाज के माता–पिता ने अपने असली कर्तव्य को पहचान कर कर्ज लेकर बच्चों की शादियां करना या बच्चियों को देवदासी बना कर उनकी कमाई से घर चलाना आदि अक्षम्य बातें छोड़ दीं और उन्हें ज्ञानसंपन्न बनाया तो क्या हमारी हालत ऐसी ही रहेगी? यह सब करना क्या हमारे हाथ में नहीं है? हम अगर उन पर अमल करने लगे तो क्या कोई रुकावट डालेगा?

सज्जनों, हमेशा पुराना ही सोना है कह कर नहीं चलेगा। जो बाप ने किया वही बेटा करे यह परिपाटी ठीक नहीं है। हालात बदलने के साथ–साथ आचार–विचार बदलना भी जरूरी होता है। यदि हमने ऐसा नहीं किया तो हममें परिस्थितियों का सामना करने की शक्ति कभी नहीं आएगी। केवल वक्त के भरोसे बैठे रहने को हितकारी नहीं कहा जा सकता। वक्त की रफ्तार को देख कर अपने हाथों से जितना काम हो सके उतना करना आवश्यक है। अगर हमने ऐसा नहीं किया तो वक्त तो बदलेगा लेकिन हमारी स्थिति में कोई बदलाव नहीं आएगा। हमारा बहुत सारा वक्त कोई रचनात्मक कार्य किए बगैर ही चला गया है। अब और ज्यादा वक्त को जाने देना हमारे लिए हितकारक नहीं होगा। इस प्रांत में हमारे लोगों में शिक्षा का बहुत प्रसार नहीं हुआ है। उसी तरह इस प्रात में तंबाकू का सारा व्यापार हमारे लोगों के हाथों में है और वह इतना है कि हरेक बड़ी टोकरी के हिसाब से अगर आठ आने दे तो हर साल पांच–छह हजार रुपए मिल सकते हैं। अगर ऐसा हो सका तो इस प्रांत में लड़कों के लिए 15–20 बोर्डिंग शुरू कर सकते हैं। बोर्डिंग स्कूल अच्छी तरह से चल सकते हैं। मेरा हमारे स्थानीय नेताओं से आग्रहपूर्ण निवेदन है कि उन्हें इस बात पर ध्यान देना चाहिए। यदि उन्होंने मेरे इस अनुरोध को स्वीकृत किया तो आपके द्वारा किया यह सम्मेलन और मेरा यहां आना सार्थक होगा।

6

मै अपनी अंधी जनता की लाठी हूं

सातारा जिला, महार परिषद का अधिवेशन, 1926 की मई में जिला सातारा के कोरेगांव तहसील के रहिमतपुर में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में हुआ था। डॉ. आंबेडकर मुंबई से रहिमतपुर आए और महारवाड़ा में रहे। मुंबई से शिवतरकर, वलमाली, गायकवाड़, खोलवडीकर, खंडकर, जावले आदि तो पुना से कृष्णराव कदम, मा.सा. गायकवाड़, जनार्दन रणपिसे, धर्माजी सावंत आदि और फलटण से माधवराव अहिवले आदि सातारा जिले के लोग अधिवेशन के लिए आए थे। अधिवेशन दोपहर तीन बजे शुरू हुआ। सातारा जिले की प्रमुख हस्तियां, धनजीभाई कूपर, एजुकेशनल एडमिनिस्ट्रेटिव आफिसर, सीताराम रावजी तावडे, मामलेदार दुदुस्कर, रामचंद्र ग. सोमण, वकील आदि अधिवेशन के लिए उपस्थित थे। बहिष्कृत वर्ग के योग्य व्यक्ति को जे.पी. बनाने का प्रस्ताव पारित हुआ। सोमण ने इस प्रस्ताव का विरोध किया। उनके विरोध भाषण का सारांश यह था कि देश में आजादी की लड़ाई चल रही है और बहिष्कृत वर्ग सरकार से उपाधियां देने की मांग कर गुलामी को समर्थन दे रहा है जो ठीक नहीं है। सोमण का भाषण खत्म होते ही बाबासाहेब उठ खड़े हुए उनका चेहरा गुस्से से लाल हो गया था। उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा—

हिन्दू समाज के सफेदपोश लोग और खासकर ब्राह्मणों ने देशबंधुओं को धर्म के नाम पर अपने पैरों तले दबाकर रखा और यही हिन्दू, मुस्लिम और अंग्रेज शासकों के पांव चाटकर ऐशो—आराम की जिंदगी जीते रहे। इन्हीं लोगों ने अपने धर्मबंधुओं और देशबंधुओं को दूसरों और अपनी गुलामी में बांधकर रखा और उन्होंने ही पांच सौ साल गुलामी को कायम रखा और अब यही लोग राजनीतिक गुलामी के विरूद्ध आवाज उठा रहे हैं। यही लोग अब कांग्रेस के झंडे—तले इकट्ठा होकर राजनीतिक स्वतंत्रता हासिल करने के लिए यातनाएं, देह दंड सहने को, जेल जाने को तैयार हैं। यही लोग अस्पृश्यों को सामाजिक और धार्मिक स्वतंत्रता देने को तैयार नहीं हैं। इन लोगों ने सारे देश और जनता का हर तरह से सत्यानाश किया है। यदि किसी को मेरे इस बयान के बारें में ऐतिहासिक जानकारी चाहिए हो तो मैं देने को तैयार हूं। मेरा कहना झूठ है ऐसा अगर किसी को यहां कहना है तो बताइए। मैं उसका खंडन करने के लिए तैयार हूं। जैसे—जैसे अस्पृश्यों के हाथों में आर्थिक सत्ता और संपत्ति आएगी, वैसे—वैसे उनकी प्रगति होती रहेगी। जे.पी. होना या विधायक होना प्रगति हासिल करने के साधन हैं और हमें उन्हें हासिल करना ही चाहिए। जब सोमण जैसे लोग कहते हैं कि हम उन्हें नहीं लें इसका मतलब कि वे हम लोगों में मतभेद पैदा करके उसी गुलामी को बनाए रखने का खेल खेल रहे हैं। सोमण के

जातिबंधुओं ने पिछले पांच हजार वर्षों में गैर ब्राह्मणों और अस्पृश्यों को कई तरीकों से सुनियोजित ढंग से यातनाएं दीं हैं। उनके ही जातिबंधुओं ने पुराण आदि धर्मशास्त्रों में लिखा कि आपको धार्मिक अधिकार नहीं हैं और आप लोग ब्राह्मणों से नीच हैं और फिर शासकों से उस पर अमल कराया। अब वे कहते हैं कि "देशाभिमान केवल ब्राह्मणों में पाया जाने वाला सद्‌गुण है इसलिए ब्राह्मण देश के लिए जेल यात्रा, यातनाएं और फांसी आदि सजाएं भोगते रहे हैं।" यदि गैर–ब्राह्मण और अस्पृश्य सजा पाने के लिए आगे आने लगे तो यही ब्राह्मण कहने लगेंगे कि तुम्हें राजनीति समझ में नहीं आती। सरकारी नौकरियों के सारे महत्वपूर्ण पद ब्राह्मणों के पास हैं। यदि गैर–ब्राह्मण और अस्पृश्य उन्हें हासिल करने की कोशिश करने लगे तो ब्राह्मण कहेंगे कि तुम इन पदों के योग्य (एफिशिएंट) नहीं हो। कहने का तात्पर्य यह है कि अब तक ब्राह्मण यही सोचकर व्यवहार करते रहे कि राजनीति, धर्म आदि में हम ही श्रेष्ठ हैं और सब कनिष्ठ हैं। इस कारण उनमें मानसिक उद्दण्डता, मुंहजोरी और बौद्धिक व्याभिचारिता आ गई है। गैर–ब्राह्मण समाज और अस्पृश्य समाज ब्राह्मणों की इस मानसिक उद्दण्डता और बौद्धिक व्याभिचारिता से डरकर भयभीत होकर उनके गुलाम के रूप में अब तक चुपचाप जीते रहे। लेकिन इन दोनों समाजों को अपनी गलती समझ में आ गई है। और यदि ये दोनों समाज एकजुट होकर यदि आत्मविकास का आंदोलन शुरू करेंगे तो इन सफेदपोश समाज की गुलामी से जल्दी ही मुक्त हो जाएंगे। लेकिन ऐसा होना बहुत कठिन है क्योंकि मराठा आदि लोग सत्यशोधक विचारों की कितनी भी शेखी क्यों न बघारें लेकिन वे अभी तक मन और बुद्धि से ब्राह्मणी विचारधारा के गुलाम हैं। हमारा अस्पृश्य समाज मराठा आदि लोगों की तरफ देख रहा है। मेरा इस समाज से यही कहना रहा है आप किसी की गुलामी मत मानो। मैं मन और बुद्धि से ब्राह्मणों की गुलामी से मुक्त हो चुका हूं। मैं इस जाति के नामकरण संस्कार का भोजन हजम कर चुका हूं। मैं इस जाति की रग–रग से परिचित हूं। यह जाति सर्वत्र अपना वर्चस्व कायम करने के लिए लोगों को भ्रमित करती रहती है। उनकी बौद्धिक चालाकियों का भंडा फोड़ कर अस्पृश्यों को इन लोगों से दूर रखना, मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं। क्योंकि मैं अपनी अंधी जनता के हाथों की लाठी हूं। यदि मेरी जनता इस लाठी के सहारे प्रगति की राह पर चलने लगी तो सोमण जैसे भोंदू और भ्रमित करने वाले लोगों द्वरा तैयार किए गए गड्ढों में नहीं गिरेगी।*

---

*संदर्भ : डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, चरित्र : लेखक चांगदेव भवानराव खैरमोड़े, खण्ड 2, पृष्ठ सं. 149, 150, 151

7
जागृति की ज्योत को कभी भी बुझने न दें

कोलाबा जिला बहिष्कृत परिषद का सम्मेलन महाड के सि. प्रा. ना. मंडल के नाटकगृह में मार्च 1927 की 19 शनिवार और 20 रविवार को आयोजित किया गया था। सम्मेलन में 3000 से ज्यादा अस्पृश्य लोग एकत्रित हुए थे। अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति परिषद् में उपस्थित थे। उनमें मेसर्स ग. नि. सहस्रबुद्धे, अनंत विनायक चित्रे, सीतारम नामदेव शिवतरकर, बालाराम अम्बेडकर, पांडुरंग नथुराम राजभोज, शांताराम अनाजी उपशाम, मोरे. रामचंद्र शिंदे, धोंडीराम नारायण गायकवाड़, शिवराम गोपाल जाधव आदि बहिष्कृत वर्ग के लोग मौजूद थे। 19 तारीख को पांच बजे के बाद सम्मेलन शुरू हुआ। प्रारंभ में सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष संभाजी तुकाराम गायकवाड़ ने परिषद् में पधारे लोगों का स्वागत करके सम्मेलन के आयोजन का उद्देश्य संक्षेप में बताया। इसके पश्चात् नियमानुसार प्रस्ताव और अनुमोदन होने के बाद सम्मेलन के नियोजित अध्यक्ष डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर, एम.ए., पी.एच–डी. डी.एस.सी, बार–एट–लॉ ने अपना स्थान ग्रहण किया। उन्होंने अपने भाषण में कहा–

सद्गृहस्थ जनो,

आज आपने मेरा सम्मान किया इसके लिए मैं आपका अत्यंत आभारी हूं। जब इस परिषद की अध्यक्षता करने का मुझसे अनुरोध किया गया तो उस समय मैं अपने स्वभाव के अनुसार टालने की सोच रहा था। लेकिन जब लगा कि इसे टाला नहीं जा सकता और टालने पर लोगों में क्षोभ पैदा होगा यह जानकर मैंने कोई ना–नुकुर किए बगैर स्वसंतोष से यह जिम्मेदारी स्वीकार की और उसके अनुसार मैं आपके सामने खड़ा हूं।

सज्जनों, एक तरह से यहां आकर मुझे खुशी ही हो रही है। जिसे–तिसे अपने मूलस्थान के बारे में अभिमान न भी हो मगर प्रेम तो होता ही है। मेरे पिताजी रिटायर होने के बाद स्थायी निवास के उद्देश्य से दापोली आकर रहे। मैंने अपनी पढ़ाई का पहला पाठ दापोली में ही पढ़ा। लेकिन परिस्थितियों के कारण मैं जब पांच–छह बरस का था तब घाटी की तलहटी छोड़नी पड़ी। उसके बाद घाटी के शिखर पर ही मेरा आज तक का जीवन व्यतीत हुआ। आज पच्चीस वर्ष बाद मैं घाटी के नीचे उतर रहा हूं। जिस क्षेत्र को प्रकृति ने अपने सौन्दर्य से सजाया है उस क्षेत्र में आकर किस को खुशी नहीं होगी। जिसे इस प्रदेश से अपनी मातृभूमि होने के कारण प्रेम है उसका आनंद दोगुना हो जाए तो अचरज नहीं होना चाहिए। लेकिन मैं यह कहे बिना नहीं रह सकता कि आज के अवसर पर मुझे जितनी खुशी हो रही है, उतना खेद भी है। एक समय यह प्रदेश अस्पृश्य जाति की दृष्टि से बहुत आगे था। एक

जमाने में यह अस्पृश्य जाति के लोगों से भरा हुआ था। इसी तरह सफेद पेशा लोगों को छोड़कर अन्य वर्गों की तुलना में अस्पृश्य समुदाय की शिक्षा में आगे था।

यह उन्नति जिन कारणों से हुई उनमें सेना की नौकरियां एक बहुत महत्त्वपूर्ण कारण थी। ब्रिटिश राज शुरू होने से पहले अस्पृश्य लोगों के लिए अपना भविष्य संवारने के लिए कितनी गुंजाइश थी इस बारे में आज कुछ भी निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता। लेकिन उन दिनों छुआछूत की भावनाएं इतनी प्रबल थीं कि स्पृश्यों पर उनकी परछाई भूल से भी ना पड़ जाए, इसलिए अस्पृश्यों को चक्कर काट कर जाना पड़ता था। थूक से रास्ता प्रदूषित होगा इसलिए गले में मटका बांधकर घूमना पड़ता था और पहचाना जा सके इसलिए हाथ में काला धागा बांधना पड़ता था। उस समय प्रगति की गुंजाइश होगी लेकिन बहुत थोड़ी ही रही होगी। जब अंग्रेजों ने इस देश में कदम रखा तब इस प्रांत के अस्पृश्य लोगों को सिर ऊपर उठाने का मौका मिला। उस अवसर का लाभ उठाकर उन्होंने यह साबित कर दिखाया कि उनके भीतर कितना शौर्य, कितना तेज, कितने उच्च दर्जे की बुद्धिमत्ता है। यदि इसका सबूत ही चाहिए तो बस पुरानी आर्मी लिस्ट की फाइलें उलट–पलट कर देख लीजिए। यदि मैं विस्तार से बताने लगा कि इस प्रदेष से अस्पृश्य वर्ग के कितने लोग सूबेदार बने, कितने जमादार बने, कितने हवलदार बने, नार्मल स्कूल जैसे स्कूलों में पढ़कर कितने हेडमास्टर के पद तक पहुंचे, कितने लोगों ने एजुटंट क्लर्क और क्वार्टर मास्टर क्लर्क जैसे जिम्मेदारी के पदों पर बखूबी काम किया तो भाषण लंबा हो जाएगा। इतना बताना काफी होगा कि एक समय अस्पृश्य वर्ग केवल सेवक के रूप में ही काम करता था वही वर्ग सेना में नौकरी के कारण अधिकार संपन्न होकर दूसरे वर्गों पर हुकूम चलाने लगा। यह कहने में हर्ज नहीं है कि फौज की नौकरी के कारण हिन्दू समाज की श्रेणीबद्ध रचना में एक क्रांति हुई थी, ऐसा कहने में कोई हर्ज नहीं। जिन महार और चमारों को मराठा और अन्य लोग छूने नहीं देते थे और उनके जोहार और रामराम न करने पर अपमानित महसूस करते थे वही मराठा सिपाही महार और चमार सूबेदार को अदब से सलामी देने लगे और अगर वह –क्यूबे – कह दे तो उनमें आंखे ऊपर करके देखने की हिम्मत नहीं होती थी। यह कहा जा सकता है कि इससे पहले इस देश के किसी भी प्रांत में अस्पृश्य जाति के लोगों को इतना अधिकार नहीं मिला था। इस प्रांत के अस्पृश्य वर्ग के लोगों ने अपना दर्जा ऊंचा किया था और इतना ही नहीं तो शिक्षा के क्षेत्र में काफी प्रगति की थी। उनमें से 90 प्रतिशत लोग साक्षर थे। इतना ही नहीं तो 50 प्रतिशत लोग तो भी ऊंचे दर्जे के शिक्षित थे। खास तौर पर गौर करने की बात यह है कि शिक्षा का प्रसार केवल पुरूषों में ही नहीं तो स्त्रियों में भी था। कुछ स्त्रियां शिक्षा में इतनी प्रवीण थीं कि पुरूषों की सभाओं में पुराणों का अन्वयार्थ बताती थीं। शिक्षा में इस प्रगति का श्रेय सेना का पेशा बहुत हद तक कारण था।

बहुत सारे लोग खेद प्रगट कर कहते हैं कि अंग्रेजों का राज शुरू होकर 150 वर्ष हो गए फिर भी प्राथमिक शिक्षा को निःशुल्क और अनिवार्य नहीं बनाया गया। और कहते हैं कि कम से कम अब तो इसे शुरू किया जाए। उन्हें एक बात पता नहीं है एसा लगता है। शिक्षा प्रेमी लोग हमेशा ईस्ट इंडिया कंपनी पर आरोप लगाते हैं कि कंपनी ने शासन करते हुए केवल अपने फायदे पर ध्यान दिया लोगों की शिक्षा की तरफ ध्यान ही नहीं दिया । यह आरोप पूरी तरह से सही नहीं है। कम से कम कंपनी के मिलिट्री विभाग के बारे में तो यह साफ झूठ है। जिन्होंने पीढ़ी–द– पीढ़ी मिलिट्री में नौकरी की है वे गवाही दे सकते हैं कि कंपनी के राज में शिक्षा मुफ्त और अनिवार्य थी। प्राथमिक शिक्षा लड़कों के साथ ही लड़कियों को भी समान रूप से दी जाती थी। लड़कों के लिए तो प्राथमिक शिक्षा के अलावा माध्यमिक शिक्षा भी अनिवार्य थी। अनिवार्यता इतना आसान मामला भी नहीं था। बच्चा स्कूल न जाए तो अभिभावक जुर्माना भर कर छूट नहीं सकते थे। एक खासतौर पर ध्यान देने की बात यह है कि यह सख्ती केवल बच्चों तक ही सीमित नहीं थी। नए भर्ती हुए वयस्क रिक्रूटों को भी रात के स्कूल में जाना अनिवार्य था। कंपनी का राज खत्म होने के बाद अंग्रेज बादशाह का राज शुरू हुआ और सत्तावन की बगावत को दबाने के बाद जब अंग्रेज सरकार ने भारत की सैन्य संबधी जांच करने के लिए कमीशन गठित किया तो उसमें कई गवाहों ने कहा यदि सेना में शिक्षा का प्रसार हुआ तो अनर्थ हो जाएगा। उससे भयभीत होकर मिलिट्री विभाग में जारी शिक्षा की तरफ पहली बार अनदेखी की गई और फिर उसे बिल्कुल ही खत्म कर दिया गया। खैर जब तक यह शिक्षा जारी थी तब तक अस्पृश्य वर्ग का काफी फायदा हुआ। उन्होंने इस शिक्षा का जितने अच्छे ढंग से उपयोग किया उस पर गर्व होना स्वाभाविक है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि इस शिक्षा प्रसार के कारण अस्पृश्यों के पास जो ग्रंथसंग्रह हुआ वह उनकी संख्या की तुलना में असामान्य था। श्रीधरस्वामी के हस्तलिखित ग्रंथ तो इतने मिल जाएंगे की कई गाड़ियां भर जाएं। लेकिन मुकंदराज, ज्ञानेश्वर, मुक्तेश्वर आदि महाराष्ट्र के पुराने और महान कवियों के ग्रंथों की हस्तलिखित प्रतियां मैंने कई–कई अस्पृश्यों के संग्रह में देखीं हैं। मेरा विश्वास है कि अस्पृश्यों के यहां कई दुर्लभ ग्रंथ मिल सकते हैं। यह बात कम प्रचलित है कि ज्ञानेश्वर महाराज ने पंचीकरण नामक ग्रंथ लिखा था। लेकिन मैंने इस ग्रंथ को मेरे एक दिवंगत मित्र के घर देखा था। कुछ वर्ष पहले श्री पांगारकर ने केसरी में विज्ञापन दिया था किसी के पास राघव चितघन कवि कालिखा –ज्ञानसुधा – पुस्तक हो तो सूचित करे। यदि उन्हें इस पुस्तक की हस्तलिखित प्रति नहीं मिली हो तो उन्हें यह पुस्तक मेरे एक अस्पृश्य मित्र के घर देखने को मिल सकती है। जिन अस्पृश्य जाति के लोगों के लिए जब ज्ञान के सारे दरवाजे बंद थे उस समय उन्हें इस तरह का ग्रंथ संग्रह करने के लिए कितने कष्ट उठाने पड़े होंगे और कितना

पैसा खर्च करना पड़ा होगा इसका विचार किया जाना चाहिए। इस बारे में दो राय नहीं हो सकती कि ज्ञान की यह जिज्ञासा उस समय के समाज के लिए भ्रमण की तरह थी, इसमें कोई दो राय नहीं। यह भी कहा जा सकता है कि उस समय के लोगों ने अपने ज्ञान का उचित ढंग से उपयोग किया। सार्वजनिक क्षेत्र में काम करने वाले लोगों का वर्गीकरण करें तो यह दिखाई देगा कि कुछ लोग – नाम के लिए – तो कुछ लोग – काम के लिए – इस क्षेत्र में आते हैं। इनमें – नाम के लिए – आने वालों की तादाद ही ज्यादा होती है। पूना के लोग कहते है कि अस्पृश्यों में आई जागृति के मूल निर्माता हम ही हैं। मुंबई में भी कई लोकप्रिय लोग हैं जो इसका श्रेय लेते हैं। डिप्रस्ड क्लाकेस मिशन सोसायटी, भारतीय निराश्रित साह्यकारी मंडल वालों का कहना है कि अस्पृश्यों में जागृति हमारे कारण शुरू हुई। जो लोग इस तरह से सम्मान मांगते हैं उनके बारे में यही कहना पड़ेगा कि उन्हें अस्पृश्य आंदोलन का सही इतिहास पता नहीं है। शोध करने पर यह पता चलेगा कि मुंबई क्षेत्र में अस्पृश्य समाज में काम करने के लिए जो संस्थाएं शुरू हुई उनमें – अनार्य दोष परिहारक मंडल–पहली संस्था थी। 1893 में जब सेना में अस्पृश्यों की भर्ती पर पाबंदी लगाई गई तो उस समय इस संस्था ने प.वा. महादेव गोविंद रानडे की सहायता से सरकार को एक अर्जी दी थी। इससे स्पष्ट है कि इस संस्था का संपर्क बड़े–बड़े लोगों से था। 1897 में इस संस्था ने कांग्रेस को एक प्रश्नावली भेजी थी उसमें दलील दी गई थी कि आपको समाज सुधार किए बगैर राजनीतिक सुधारों की मांग करने का क्या अधिकार है। इससे दिखाई देता है कि संस्था में कितना जोश था। 1898 में जब सर हरबर्ट रिसले साहब ने भारतीय लोगों के रीती–रिवाज़ों का संकलन करना शुरू किया था तो उन्होंने एक प्रश्नसूची इस संस्था को भी भेजी थी। इससे स्पष्ट है कि संस्था इतनी महत्वपूर्ण हो गई थी कि सरकार भी उससे सलाह–मशवरा करने लगी थी। यह मैं सबूतों के आधार पर कह रहा हूं।इस संस्था के सारे कागजात अब मेरे पास हैं। इस संस्था की स्थापना रत्नागिरी जिले के दापोली में हुई थी। इससे यह स्पष्ट है कि सबसे पहले अस्पृश्योन्नति का आंदोलन शुरू करने का श्रेय किसी को दिया जा सकता है तो इस संस्था और इस क्षेत्र को देना होगा। इस संस्था के नेताओं ने केवल समस्याएं दूर करने का काम किया ऐसा नहीं है। लेखन के द्वारा जागृति का भी काफी काम किया। सत्यशोधक समाज के प्रणेता जोतिबा फुले के कई सच्चे साथी और उत्साही शिष्यों में से बहुत से इस संस्था के संचालकों में से थे। एक नाम का उल्लेख किए बगैर मुझसे रहा नहीं जा रहा। यह व्यक्ति हैं कै. गोपालबुवा वलंगकर। उन्होंने अपने लेखन के द्वारा जो जागृति की वह असामान्य है। जिन्हें इसके बारे में जानना है उन्हें – दीनबंधु – के पुराने अंक देखने चाहिए तो पता चलेगा।

जिन लोगों की किसी समय इतनी उन्नत स्थिति थी उन लोगों की आज इतनी अवनति क्यों हो गई? विवेकशील दृष्टि से देखें तो इस प्रदेश के अस्पृष्यवर्ग की स्थिति जितनी खराब है कि उनके जितने गरीब, अशिक्षित और मूढ़ लोग अन्य प्रदेश के अस्पृष्यवर्ग में नहीं है ऐसा कहने में कोई भी हर्ज नहीं है। इस प्रदेश के अस्पृश्य वर्ग की स्थिति में इतनी खेदजनक और चिंताजनक बदलाव कैसे हुआ यह एक गंभीर प्रश्न है। इसका हमेशा यह उत्तर दिया जाता है कि ब्रिटिश सरकार द्वारा सेना में अस्पृष्यों की भर्ती बंद किए जाने के कारण यह अनर्थ हुआ है। मुझे इस बारे में संदेह नहीं है कि इन बातों में बहुत सच्चाई है। राजनीतिक नैतिक और आर्थिक दृष्टि से किन्ही भी नागरिकों पर सरकारी नौकरी में भर्ती पर पाबंदी लगाना अन्यायकारक है। ऐसा कहना पड़ेगा कि अस्पृश्य समाज के लोगों की सेना में भर्ती न करना पक्षपात का लक्षण तो है ही साथ ही विश्वासघात और मित्रद्रोह का भी लक्षण है। अस्पृश्यों की मदद के बिना इस देश में अंग्रेज सरकार का प्रवेश संभव नहीं था। अंग्रेजों ने मराठा शासन का उन्मूलन किस तरह किया इस बारे में इतिहासकार अनेक कारण बताते हैं। कोई मराठा राज में व्याप्त जातिभेद को भी एक कारण बताते हैं। कोई मराठा राज्य में आपस में बढ़े फूट और तनाव को वजह मानते हैं लेकिन मेरी छोटी–सी बुद्धि को यह लगता है कि उनमें से एक भी कारण सही नहीं है। यदि जातिभेद और फूट के कारण मराठे दुर्बल हुए थे तो अंग्रेज कहां शक्तिशाली थे? असल में जिन दिनों अंग्रेजों ने इस देश पर कब्जा किया उस समय नेपोलियन ने इंग्लैंड को परेशान कर रखा था। इतना कि उन्हें ईस्ट इंडिया कंपनी की धन–बल और सैन्य बल से मदद कर पाना असंभव था। इसके विपरीत नेपोलियन के चंगुल से छूटने के लिए ईस्ट इंडिया कंपनी से ही धन और सैनिक मदद की मांग की गई थी। हिंदुस्तान में अंग्रेजों की स्थिति इतनी कमजोर होने के बाद भी उन्होंने यह देश कैसे काबीज किया इसका पता मराठों के अंदरूनी तनाव या फूट से नहीं लग पाता। मुझे लगता है कि इसका संतोषजनक उत्तर एक ही है। यदि अंग्रेज इस देश के लोगों की सेना नहीं खड़ी कर पाते तो वे कभी भी इस देश को जीत नहीं सकते थे। इन सब बातों पर गौर कर, मैं दयालु और न्याय प्रेमी अंग्रेज सरकार से यह अनुरोध करता हूं कि वे अपने आप से यह सवाल पूछें कि इस देष के लोगों से बनाई गई सेना में कौन लोग थे? और अगर वे अपने पुराने दस्तावेजों को जांचेंगे तो उन्हें पता चलेगा तो उनकी सेना में अस्पृश्यों के अलावा कोई और नहीं था। इससे यह स्पष्ट है कि यदि अंग्रेजों के पीछे अस्पृश्यों की शक्ति खड़ी नहीं होती तो वे इस देश पर कभी भी विजय प्राप्त नहीं कर पाते। जिन लोगों ने सेना में भर्ती होकर देश पर कब्जा कराया उन्हीं लोगों का सेना से निष्कासन न्याय की अजीबोगरीब मिसाल है। अंग्रेज लोग किस तरह अवसरवादी हैं उसका एक दूसरा

उदाहरण भी हाल ही में घटी एक घटना जिसे आप सब लोग जानते हैं। 1917 में शुरू हुए विश्वयुद्ध में अंग्रेज सरकार को फिर अस्पृष्यों की याद हो आई। हमारे अस्पृष्य वर्ग में सेना में भर्ती होने के लिए हमेशा ही जबरदस्त उत्साह होता है। एक पलटन, रेजीमेन्ट चाहिए थी मगर दो रेजीमेन्ट बनाने लायक लोग स्वखुशी से तैयार थे। सरकार ने एक पलटन बनाई। सभी को इस बात की खुशी हुई कि एक बार लगी पाबंदी खत्म होकर सेना में फिर भर्ती शुरू हुई। ऐसी उम्मीद जगी कि इस प्रदेश के अस्पृश्यों का फिर भाग्योदय शुरू हो गया है। लेकिन युद्ध खत्म होने के बाद फिजूलखर्ची रोकने के नाम पर पलटन को भंग कर दिया गया। यह समझ में नहीं आता कि सरकार के इस मनमाने व्यवहार को क्या कहा जाए?

सज्जनों! मेरी यह राय है कि हम हमेशा सरकार का साथ देते रहे हैं, इसलिए सरकार हमेशा हमारी उपेक्षा करती है। सरकार जो देगी वह स्वीकार कर लेना, जो कहेगी वह सुनना, मानना, जैसे रखेगी वैसे रहना ऐसी जो हमारी दासता की आदत है वही हमारी सरकार के द्वारा उपेक्षा का मुख्य कारण है। हम अपने पर होने वाले अन्याय को चुपचाप सहन करते हैं। कोई दाएं गाल पर थप्पड़ मारे तो हम अपना बायां गाल आगे कर देते हैं मगर मारने वाले का प्रतिकार करने के लिए हमारे हाथ नहीं उठते। आसमान भी टूटे तो भी हम किसी हताश व्यक्ति की तरह उसे अपना भाग्य मान करें हाथ पर हाथ धरे बैठ जाते हैं। इस आत्मघाती प्रवृत्ति का हम जितनी जल्दी त्याग करे उतना ही हमारे लिए लाभदायी है। इसलिए मैं आपसे कहता हूं कि हमें सेना में भर्ती पर लगी पाबंदी पर खत्म कराने के लिए हर संभव प्रयास करना चाहिए।

लेकिन मैं आपके सामने यह सवाल रखना चाहता हूं कि सेना में भर्ती शुरू हो जाने से क्या सब कुछ ठीक हो जाएगा? आप में से बहुत से लोगों को यह लगता है कि एक बार सेना में भर्ती शुरू हो गई यानी सब हो गया बाकी कुछ करने की जरूरत ही नहीं है। मुझे लगता है कि यह बड़ी भूल है। एक बात तो यह है कि सभी लोगों का सेना में भर्ती होना संभव नहीं है। जब किसी भी वर्ग के लोग सेना में भर्ती होने के लिए तैयार नहीं थे तब हमारे लोगों के लिए काफी संभावनाएं थीं। मगर अब ऐसी हालत नहीं है। हमें औरों की तरह जो मिलना है वही मिलेगा। ज्यादा की उम्मीद करना बेकार है। इसलिए हमें इस बात पर विचार करना चाहिए कि सेना में भर्ती के अलावा उन्नति के और कौन से तरीके हो सकते हैं? अस्पृश्य समाज में व्यावसायिक जाति में समाविष्ट लोग बहुत कम हैं। केवल चमार लोग ही पेशेवर हैं। लेकिन अब उन्होंने भी यह धंधा लगभग छोड़ दिया है। इसलिए गैर–पेशेवर लोगों की ही संख्या अधिक है। जहां यह परंपरा है कि फलां धंधा फलां जाति की बपौती है वहां यह कहना कि फलां धंधे में आपके लिए काफी गुंजाइश है यह व्यर्थ का उपदेश है। उन्हें अगर धंधा करना है तो वह व्यवसाय इस प्रकार का होना चाहिए जो करने की

छूट किसी भी जाति के आदमी को हो। इस प्रकार के मुझे दो ही पेशे दिखते हैं – एक सफेदपोश और दूसरा खेती।

यह मैं जानता हूं कि ऊंची जातियों के लोगों को यह बात पसंद नहीं है कि अस्पृश्य वर्ग के लोग सफेदपोश पेशे अपनाएं। उन्हें ऐसा लगता है कि अस्पृश्य वर्ग के लोगों को बढ़ईगीरी, लुहार का काम, बुनाई आदि व्यवसाय करने चाहिए। कुछ भी हो जाए, वे सफेदपोश धंधे न अपनाएं। मैं आपसे साफ–साफ कहना चाहता हूं कि उनका यह उद्देश्य हमारे हित में नहीं है। मेरी यह राय है कि अस्पृश्य वर्ग की स्थिति में सुधार के लिए दो बातें बेहद जरूरी हैं – एक, उनके मन पर पुरानी पोंगापंथी व अनिष्ट विचारों की जो जंग लगी है उसे मांज कर साफ करना चाहिए। जब तक आचार, विचार और उच्चार की शुद्धि नहीं होती तब तक अस्पृश्य समाज में जागृति या प्रगति के बीज कभी भी पनप नहीं पाएंगे। अभी की स्थिति में उनके मन की पथरीली जमीन पर कोई भी अंकुर उग नहीं सकता उनके मन को इस तरह से सुसंस्कारित बनाने के लिए उन्हें सफेदपोश पेशों को अपनाना चाहिए। जब मैं कहता हूं कि अस्पृश्यों को सफेदपोश पेशों को अपनाना चाहिए तो इसकी एक और वजह भी है। सरकार एक बहुत महत्वपूर्ण संस्था है। सरकार जैसे चाहेगी वैसे ही सब कुछ घटित होगा। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि सरकार क्या करेगी यह पूरी तरह से सरकारी कर्मचारियों पर निर्भर होगा क्योंकि सरकार का मन यानी सरकार के कर्मचारियों का मन। इससे एक बात साबित होती है वह यह कि यदि सरकार से हमें अपने हित में कुछ करवाना है तो हमें सरकारी नौकरियों में प्रवेश पाना होगा। नहीं तो हमारी आज जो उपेक्षा हो रही है वह हमेशा होती रहेगी अगर हमारी इच्छा है कि ऐसा न हो तो अस्पृश्य वर्ग के लोगों को इस बात की व्यवस्था करनी चाहिए कि उनका सरकारी नौकरियों में अधिक प्रमाण में प्रवेश हो। इसके बगैर उनकी हालत कभी बेहतर नहीं हो सकती और सरकारी नौकरियों में सम्मिलित होने के लिए सफेदपोश पेशा अपनाने के अलावा और कोई रास्ता नहीं है। मुसलमान और मराठा जातियों ने इन बातों का महत्व समझा है और इस मामले में उनकी काफी कोशिशें चल रही हैं। हमें भी समय पर जाग कर अपनी भागीदारी हासिल कर लेनी चाहिए।

ब्राह्मण लोग इस आंदोलन की निंदा करते हैं और यह कहते फिरते हैं कि सरकारी नौकरियों में कुछ नहीं रखा है। लेकिन उनके इस कहने में न सच्चाई है और न ईमानदारी। यह इसलिए सच नहीं है यदि इस देश के ब्राह्मणों के पास सरकारी नौकरी का अधिकार नहीं होता तो वे अन्य प्रदेश के ब्राह्मणों की तरह भिश्ती (पानी भरने वाले) या रसोइए होते। यहां के ब्राह्मणों की श्रेष्ठता अगर केवल पुराणों पर आधारित होती तो अन्य जगहों की तरह वह पहले ही ढह जाती। मगर उसे सरकारी नौकरियों के अधिकार का संबल होने के कारण वह टिकी रही। इस

तरह यह दलील कि सरकारी नौकरी फिजूल है, न केवल असत्य है, वरन् दिग्भ्रमित करने वाली है। कारण यह है कि ब्राह्मणों ने सरकारी नौकरियों का मोह छोड़ा ही नहीं है। वे पहले की तरह ही उससे चिपके हुए हैं। इसलिए हम उनके इस झूठे और अप्रामाणिक तर्कजाल में न फंसें।

सज्जनों, इस अवसर पर एक खेदजनक बात का स्मरण कराना जरूरी हो रहा है। मैंने पहले कहा है कि इस प्रदेश में सूबेदारों और जमादारों की काफी तादाद थी और उन्होंने कई अच्छे काम किए लेकिन एक काम नहीं किया वह अगर किया होता तो हम सब के काम आता। वह काम यह है कि अपने बच्चों को शिक्षा नहीं दी। सज्जनों ये लोग गरीब नहीं थे। उनके वक्त के हिसाब से उन्हें अच्छी पेंशन मिलती थी। वे यदि चाहते तो अपने बच्चों को बी.ए. या एम.ए. तक पढ़ा सकते थे। इसका क्या नतीजा होता इसकी कल्पना आसानी से की जा सकती है। ये पढ़े हुए लड़के आज मामलातदार, कलेक्टर, मजिस्ट्रेट आदि पदों तक पहुंच गए होते तो आज सारे अस्पृश्य समाज के लिए वे मजबूत सहारा बनते। उनकी छत्रछाया में हमारा विकास होता। लेकिन ऐसा न होने के कारण हम धूप में झुलस रहे हैं। मेरी यह दृढ़ धारणा है कि जब तक हम अपने लिए सुरक्षित छांव (छत) तैयार नहीं करते तब तक हमारी प्रगति नहीं हो सकती। यह छांव सफेदपोश पेशों को अपनाकर सरकारी नैकरियों में भागीदारी हासिल किए बगैर नहीं बन सकती। इसलिए मैं आप सबसे यह अनुरोध कर रहा हूं कि आपको पहले उच्चशिक्षा की तरफ ध्यान देना चाहिए। एक लड़का बीए होने से अस्पृष्य समाज को जैसा सहारा मिलेगा वैसा एक हजार बच्चों के चौथी पास होने से नहीं होगा। मैं नहीं कहता कि प्राथमिक शिक्षा को नजरंदाज किया जाए। मेरा कहना यह है कि अभी की स्थिति इतनी अजीब है कि उच्चशिक्षा प्राप्त करने वाले लड़कों को जितनी जल्दी शिखर तक पहुंचाए उतना ही अच्छा है। इसके लिए इस प्रदेश में अपने लोगों के लिए एक बोर्डिंग की बेहद आवश्यकता है। ठाणे और कोलाबा जिले के छात्रों को सुविधा हो इसलिए मैंने पनवेल में बोर्डिंग स्थापित करने की योजना बनाई है। इसके लिए आप सभी लोग क्षमतानुसार आर्थिक मदद करेंगे ऐसी उम्मीद है।

दूसरा पेशा जो मैंने आपको सुझाया है वह है खेती। यह धंधा सुझाने का उद्देश्य यह है कि अस्पृश्य वर्ग को आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर जीवन बिताने की व्यवस्था करनी चाहिए। यह कहने में हर्ज नहीं कि अस्पृश्य में शामिल महार जाति आज की स्थिति में भिखारियों की जमात है। रोजाना अधिकारपूर्वक घर–घर जाकर डलिया–डलिया भरकर बासी टुकड़े इकट्ठा करके जीवनयापन करना इस जाति की आदत बन गई है। इस कारण गांव में इस जाति का कोई मान–सम्मान नहीं है। इस रिवाज के कारण इस जाति का स्वाभिमान नष्ट हो गया है। कुछ भी कहो, जूतों पर रखो, मगर मुझे टुकड़ा दो। यह इस जाति का स्वभाव बन गया है। इस रिवाज के

कारण यह जाति स्वतंत्ररूप से अपनी उन्नति के रास्ते पर नहीं बढ़ सकती। क्योंकि कल जब मंदिर प्रवेश की बात उठेगी,* सार्वजनिक तालाबों पर पानी भरने और मरे जानवरों को न उठाने की बात उठेगी तो गांव के लोग रोटियां देना बंद कर देंगे तो इनकी तो हालत खराब हो जाएगी। इस तरह बासी और जूठन खाने के लिए अपनी मनुष्यता को बेचना यह बहुत ही शर्म और लज्जा की बात है। जूठे टुकड़े मांगना छोड़कर गांव के अन्य लोगों की तरह खेती नहीं कर सकते हो क्या? हो सकता है खेती खरीदना अस्पृश्यों के लिए थोड़ा कठिन होगा मगर वन विभाग कितनी खाली जमीनें हैं और कोई अस्पृश्य आदमी मांग करे तो वह उन्हें मिल सकती हैं।

लेकिन यह सब कैसे संभव हो? मुझे लगता है जब तक हमें बासी टुकड़े खाने के लिए मिलते रहेंगे तब तक यह स्थिति बनी ही रहेगी। जब तक पुराना रास्ता कायम है तब तक कोई नए रास्ते पर चलने की पहल नहीं करेगा। पुराने रास्ते पर चलकर हम आज मानवीयता से दूर हो गए हैं। आप सभी को इस बात पर विचार करना चाहिए कि आप उस रास्ते को कब तक जारी रखोगे। सज्जनों, हर सुधार के बारे में "बुजुर्गों की रीत" इस प्रदेश के लोगों का महामंत्र होता है। सभी नई योजनाओं के समय फिर वह अच्छी हो या बुरी इस मंत्र का जाप चलता रहता है। इसका मतलब यह है कि बुजुर्गों ने किसी मामले में कोई बिना सोचे समझे कोई रिवाज शुरू किया तो उसके वंशज भी उसे जारी रखना चाहते हैं भले ही वह कितना भी विघातक हो। सभी मामलों में हम पुराना ही अच्छा है इस कहावत को पकड़कर बैठ गए तो नए सुधार कभी होंगे ही नहीं। इसके अलावा क्या हर मां–बाप की यह इच्छा नहीं होनी चाहिए कि उनके बच्चों की हालत उनकी हालत से बेहतर हो। यदि ऐसी इच्छा नहीं हो तो इस मां–बाप की जोड़ी और जानवरों की जोड़ी में क्या अंतर रह जाएगा। सज्जनों आप अपने लिए न सही मगर अपनी संतानों के लिए मेरे कहे पर ध्यान दें। आप यह सवाल कर सकते हैं कि हमें जितना मिल रहा है उतना काफी है। बड़े झंझट हमें नहीं चाहिए। आधी को छोड़कर पूरी के पीछे क्यों भागें। लेकिन मैं आपको आगाह कर रहा हूं कि मैं जो बता रहा हूं उस दिशा में आप लोगों ने कोशिश नहीं की तो तो आज जो चौथाई रोटी मिल रही है वह भी कल नहीं मिलेगी।

ये विचार मैंने केवल आपके ही सामने प्रगट किए है ऐसा नहीं है। मुझे जब भी मौका मिला मैंने यही विचार रखे हैं। आपको खासतौर पर यह बताना चाहता हूं कि आप सभी को जागृति का काम विशेष रूप से करना चाहिए। फौज वाली पीढ़ी के गुजर जाने के बाद इस प्रदेश के लोग मृतवत हो गए हैं। किसी प्रकार की गतिविधि है ही नहीं। घाटक्षेत्र में अनेक सम्मेलन होने के बाद अब यह बड़ी सभा हो रही है।

---

*अब रायगढ़ जिला

आप जागृति की ज्योति को, चिंगारी को बुझने न दें। इस जागृति के काम के लिए आपको कुछ स्थानीय नेताओं की जरूरत है। मार्गदर्शके के बिना चलना असंभव लगता है। हम में से जो पेंशनर लोग हैं उनका कर्तव्य है कि इस तरफ ध्यान दें। मैं इस उम्मीद के साथ अपने भाषण को विराम देता हूं कि वे स्वजनों के उद्धार के इस महत्त्वपूर्ण काम के लिए आगे आएंगे।"[1]

दूसरे दिन 20 मार्च, 1927 को सुबह नौ बजे से परिषद का कामकाज शुरू हुआ और निम्न प्रस्ताव पारित हुए।

पहला समूह

पहला प्रस्ताव– यदि ऊंची जीतियों के लोग चाहते हैं कि बहिष्कृत वर्ग द्वारा अपने कल्याण के लिए शुरू किए आंदोलन से ऊंची जातियों और बहिष्कृत वर्ग में आपसी वैमनस्य पैदा न हो, तो यह परिषद उनसे निम्न अनुरोध करती है–

(अ) जब बहिष्कृत वर्ग के लोग सार्वजनिक स्थानों और तालाबों का उपयोग कर अपने अधिकारों का इस्तेमाल करते हैं, तो ऊंची जातियों के लोग उनके साथ सभी तरह के व्यवहार बंद करके उनके खिलाफ हड़ताल की घोषित करते हैं। ऐसा न करते हुए ऊंची जाति के लोगों को उन्हें सक्रिय मदद करनी चाहिए।

(ब) ऊंची जाति के लोगों को बहिष्कृतों को घरेलू नोकर को तौर पर काम पर रखना चाहिए।

(क) जातिभेद को खत्म करने के लिए मिश्र विवाह पद्धति का रिवाज शुरू करना चाहिए।

(ड) बहिष्कृत वर्ग के छात्रों को घर पर दिन तय करके भोजन को बुलाया या भोजन की व्यवस्था कर उनकी मदद करें।

(इ) मरे हुए जानवरों को खींचकर ले जाने के लिए बहिष्कृत वर्ग के लोगों पर निर्भर न रह कर अपनी व्यवस्था खुद कर लें।

समूह – दो

प्रस्ताव एक – पिछले विधान मंडल में श्री सी.के. बोले ने सार्वजनिक कुंओं और तालाबों के बारे में प्रस्ताव पेश किया है। सरकार उस पर अमल करके उन स्थानों पर सूचनापट्ट लगाए और जरूरी हुआ तो क्रि.प्रो. कोड सेक्शन 144 पर अमल करके स्थानीय नेताओं की जमानत से अस्पृश्यों को अपने अधिकारों का उपभोग करने में मदद करें।

---

1. "बहिष्कृत भारत": 3 अप्रैल, 1927

प्रस्ताव दो – यह सभा सरकार से अनुरोध करती है कि देहातों में कई स्थानों पर अस्पृश्यों को पीने का पानी उपलब्ध नहीं हो पाता। इस समस्या को दूर किया जाना चाहिए।

प्रस्ताव तीसरा – बहिष्कृत लोगों की आर्थिक उन्नति के लिए वन विभाग की जमीनें खेती के लिए दी जाएं।

प्रस्ताव चौथा – अत्यंत पिछड़े बहिष्कृत वर्ग की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए और उनके दुखों को दूर करने के लिए सरकार निम्न बातों पर ध्यान दे।

(अ) अस्पृश्य समाज के अनक्वालिफाइड व्यक्ति को जहां संभव हो वहां सरकारी नौकरी दी जाए।

(ब) अस्पृश्यों की सेना में भर्ती की जानी चाहिए।

(क) अस्पृश्यों को नौसेना में शामिल किया जाए।

(ड) सेकंड इयर ट्रेंड मास्टरों को शिक्षा विभाग में सुपरवाइजर का पद दिया जाए।

(इ) अस्पृश्य वर्ग के साक्षरों को स्थानिक पुलिस बल में स्थान दिया जाए।

(क) अस्पृश्यों की जितनी संख्या में संभव हो पुलिस विभाग में भर्ती किया जाए।

प्रस्ताव पांचवा – सरकारी काम के लिए लोगों की तरफ से अनाज एक हिस्सा दिए जाने के बजाय सी.पी आदि राज्यों की तरह गांव वालों पर सेस लगाया जाए और मजदूरों को मासिक वेतन देने की पद्धति लागू की जाए।

छठा प्रस्ताव – बहिष्कृत वर्ग द्वारा मरे हुए जानवर का मांस खाने की प्रथा पर सरकार कानून के जरिए रोक लगाए क्योंकि इससे स्वास्थ्य के लिए खतरा तो है ही बहिष्कृतों का दर्जा भी हीन बन जाता है।

प्रस्ताव सातवां – शिक्षा और शराबबंदी के बारे में सख्ती बरती जाए।

प्रस्ताव आठवां – श्री एम.के. जाधव को डिप्टी कलेक्टर का पद न दिए जाने पर यह सभा खेद प्रगट करती है।

प्रस्ताव नौंवां – 111वीं बटालियन में पहले बनाए गए फंड महाड तहसील के नौकरी करने वालों के पैसे हैं। उससे इस तहसील के अस्पृश्य वर्ग के बच्चों के लिए छात्रावास बनाया जाए।

प्रस्ताव दसवां – शिक्षा के मामले में पिछड़े हुए बहिष्कृत वर्ग की उन्नति के लिए निम्न बातों पर अमंल किया जाए–

(अ) शिक्षा की प्रगति की जांच करने के लिए एक समिति नियुक्त की जाए।

(ब) जिलों में छात्रावास खोले जाएं।

(क) निजी संस्थाओं द्वारा चलाए जाने वाले छात्रावासों के लिए हर महीने प्रति छात्र

(10) दस रू. की ग्रांट दी जाए।

(ड) जहां तीस बच्चे हो ऐसे गांवों में स्कूल खोले जाएं।

(इ) छात्रवृत्तियां दी जाएं।

समूह–तीन

पहला प्रस्ताव – यह परिषद बहिष्कृत वर्ग के पंचों से अनुरोध करती है कि शादियों के समय निम्न बातों पर अमल करें–

(अ) 20 वर्ष से कम उम्र के लड़के और 15 वर्ष से उम्र की लड़की की शादी करने की प्रथा बंद की जानी चाहिए।

(ब) पंच यह हिदायत दें कि जहां स्कूल हैं वहां लोगों को अपने लड़की और लड़कों को शिक्षा देनी ही चाहिए। इसका उल्लंघन करने पर दोषी माना जाएगा।

(क) पुनर्विवाह करने से पहले वर–वधू के बारे में पूरी जानकारी हासिल किए बगैर पुनर्विवाह न कराएं।

(ड) पुनर्विवाह में सात रु. नेग दिया जाए और साड़ी व्लाऊज, कंगन, नथ और पंचों का खाना। इसके अलावा और कोई लेन–देन की उम्मीद पंचों द्वारा नहीं की जानी चाहिए।

दूसरा प्रस्ताव –

(अ) अस्पृश्य लोगों को महारी का पेशा जैसे छोटे धंधे छोड़कर खेती जैसे स्वतंत्र पेशे अपनाने चाहिएं।

(ब) खेती के लिए आवश्यक होने पर सहकारी समितियां (क्रेडिट सोसायटी) शुरू की जाएं।

यह सभा बहिष्कृत वर्ग से अनुरोध करती है कि अकाल, अतिवृष्टि का सामना करने और साहूकारों के शिकंजे से छूटने के लिए – सहकारी कोष – स्थापित किए जाएं।

चौथा समूह

पहला प्रस्ताव

सभा स्वामी श्रद्धानंद की अमानवीय हत्या पर पर दुःख प्रगट करती है। हिन्दू समाज को उनके विचारों के अनुरूप अस्पृश्यता उन्मूलन करना चाहिए।

अध्यक्ष द्वारा समारोप करने के बाद श्री. शिवराम गोपाल जाधव ने लोगों और अध्यक्ष के प्रति आभार व्यक्त किए। उसका अनुमोदन करने के लिए श्री अनन्त विनायक चित्रे खड़े हुए। उन्होंने आभार के प्रस्ताव को अनुमोदन करने के बाद सुझाया कि मुझे लगता है कि आज जो इतना बड़ा सम्मेलन हुआ है उसे कोई महत्व का कार्य किए बगैर समाप्त नहीं होना चाहिए। इस महाड शहर में अस्पृश्य लोगों के लिए पीने के पानी की भारी तंगी है। यह कमी दूर हो इसलिए यहां की नगरपालिका ने यहां के तालाब सभी जाति के लोगों के लिए खोल दिए हैं लेकिन इस तालाब से पानी भरने की परंपरा अभी भी अस्पृश्य लोगों ने शुरू नहीं की है। यदि इस सम्मेलन ने यह शुरूआत की तो कहा जा सकता है कि इस सम्मेलन ने एक महत्वपूर्ण काम किया। इसलिए हम सब अध्यक्ष के साथ महाड के चवदार तालाब प्रवेश कर पानी भरें। इसके बाद इस सम्मेलन के सभी लोग अध्यक्ष के पीछे–पीछे सम्मेलन स्थल से बाहर निकलें और सबकी एक विशाल पैदल यात्रा निकाली गई। यह कतार महाड़ शहर के बाजारों से शांतिपूर्वक गुजरते हुए तालाब पर पहुंची।"[1]

अम्बेडकर अब चवदार तालाब के किनारे खड़े थे। दुनिया के विद्वानों में से एक महाविद्वान, उदात्त उद्देश्य से प्रेरित एक महान हिन्दू नेता, दलितों के स्वातंत्र्यसूर्य डॉ. अम्बेडकर कर्मक्षेत्र में उतरे। स्वतंत्रता के अधिकार भीख मांगने से नहीं मिलते। उन्हें अपनी ताकत के बल पर हासिल करना पड़ता है। वे दान में नहीं मिलते। डॉ. अम्बेडकर इस महाअनुभव का पाठ दलितों को पढ़ा रहे थे। आत्मोद्धार दूसरे की कृपा से नहीं होता वह स्वयं करना पड़ता है। डॉ. आबेडकर कर्मवीर बनकर अपने अनुयायियों को शुरूआती मार्गदर्शन दे रहे थे। उन्हें सुसंगठित और प्रतिरोध के लिए सक्षम बना रहे थे। कृतिशूरता इतिहास रचने वाले महान पुरुषों का स्वभाव होता है।

उद्देश्य के प्रति अडिग श्रद्धा रखकर डॉ. अम्बेडकर दलितों में निष्ठा निर्माण कर रहे थे। वे जिस ध्येय का उद्घोष कर रहे थे वह अब संघर्ष की अग्निपरीक्षा से गुजर रहा था। अब अम्बेडकर तालाब के किनारे खड़े थे। जिस तालाब का पानी पीकर पशु–पक्षी अपनी प्यास बुझाते थे, उसका पानी पीने के लिए उन पर अपनी ही मातृभमि और पुण्यभूमि में पाबंदी लगी हुई थी। जिसके लिए सार्वजनिक स्थलों और मंदिरों के दरवाजे बंद थे ऐसा वह महापुरुष हिन्दूधर्म के ठेकेदारों और हिन्दूधर्म

1. बहिष्कृत भारत – 3 अप्रैल, 1927

के पाखंड को भारत के सामने उजागर कर रहा था। सभी में ईश्वर है का उद्घोष करने वाले और कुत्ते–बिल्लियों तक को प्यार और दुलार देने वाले, स्वधर्मियों को पशुओं से भी नीच मानने वाले इन पापियों के अघोर पाप को यह क्रांतिपुरुष सारी दुनिया के सामने बेनकाब कर रहा था।

अम्बेडकर चवदार तालाब की सीढ़ियां उतरकर नीचे गए। वे नीचे झुके और तालाब से एक अंजुलिभर पानी पीया। उस विशाल जनसमुदाय ने अपने नेता का अनुकरण किया। उन्होंने अपने नागरिक और मानवीय अधिकारों का प्रयोग किया। तुरंत सम्मेलन स्थल पर मोर्चा शांतिपूर्वक लौटा और विसर्जित हो गया। नेताओं को सही समय पर कृति के लिए कदम उठाने चाहिए। जो काम सैंकड़ों प्रस्तावों से नहीं होता वह एक कृति से हो जाता है। कार्लाइल ने भी कहा है कि कृति ही मानव का वास्तविक उद्देश्य है।

इस तरह महान कार्य कर सम्मेलन समाप्त हुआ। हर कोई घर लौटने की तैयारी में लग गया। भारत के तीन हजार वर्षों के इतिहास का परममंगल दिन, और मानवता और समता का संदेश देने वाला यह सुनहरा दिन था, 20 मार्च, 1927। वह डॉ. अम्बेडकर के जीवन का परम युग प्रवर्तक दिन था। उस दिन डॉ. अम्बेडकर की कीर्ति की लहरें देशभर में फैलने लगीं।[2]

महाड के ऊंचीजातियों के लोगों का अत्याचार

सम्मेलन खत्म होने के बाद अध्यक्ष और मुंबई से आए हुए मेहमान सरकारी बंगले पर गए जहां वे ठहरे थे। और बाकी लोग अपने–अपने गांव जाने से पहले भोजनगृह की ओर गए। लगभग दो बजे के आसपास वीरेश्वर मंदिर का गुरव (पुजारी) गांवभर में झूठी मुनादी करता रहा कि अस्पृश्य लोग वीरेश्वर के मंदिर में प्रवेश करने वाले है, इसलिए दौड़कर मंदिर की रक्षा करनी चाहिए। अस्पृश्यों द्वारा तालाब को दूषित करने का बदला लेने के लिए तैयार बैठे ऊंची जाति के लोगों को यह बहाना मिल गया। मुनादी सुनने के बाद चार–पांच सौ लोग लाठियां लेकर वीरेश्वर के मंदिर में जमा हो गए और शोर मचाने लगे कि अस्पृश्य लोग मंदिर में घुसने वाले हैं। यह देखकर शहर का पुलिस अफसर डाकबंगले पर आकर डॉ. आबेडकर से पूछने लगा – आपके लोग मंदिर में घुसने वाले हैं इसलिए शहर के लोग मंदिर के पास जमा हो गए हैं तो मैं उन्हें क्या बताऊं। डॉ. अम्बेडकर ने उनसे कहा कि – हमारी मंदिर में घुसने की इच्छा नहीं है और जरूरत भी नहीं है, इसलिए आप लोगों को आश्वासन देकर शांत कीजिए। पुलिस अफसर के जाने के बाद अपने लोगों को निर्देश देने के लिए उन्होंने कुछ लोगों

---

2. बाबासाहेब डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः लेखक – धनंजय कीर, पृष्ठ 75–76

को भोजनालय में भेजा। उसके अनुसार अस्पृश्य लोग भोजन करके अपने–अपने गांव जाने के लिए तैयार हो गए। काफी अस्पृश्यों के अपने–अपने गांव चले जाने के बाद मंदिर में जमा गांव के गुंडों ने बाजार से होकर अपने–अपने घरों को जा रहे अस्पृश्यों पर हमला किया और कई लोग घायल हुए। इतना हो जाने के बावजूद महाड़ के मामलेदार ने भीड़ को कम करने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की। आखिर में सवा चार बजे मामलेदार और पुलिस सब–इंस्पैक्टर टाक बंगले पर आए और डॉ. अम्बेडकर से कहने लगे कि आप शांति कायम रखने के लिए हमारे साथ चलिए। अपने लोगों को आप समझाइए और हमारे लोगों को हम समझाएंगे। असल में अस्पृश्य लोगों को समझाने का कोई कारण ही नहीं था क्योंकि अस्पृश्य लोगों को विशाल जनसमुदाय ने शांति कभी भंग ही नहीं की थी। इसके अलावा बहुत से अस्पृश्य शहर से बाहर चले गए थे। फिर भी मामलेदार के कहने पर डॉ. अम्बेडकर और उनके साथ बंगले पर ठहरे अन्य लोग शहर की तरफ जाने को निकले। रास्ते में मंदिर के पास जमा ऊंची जाति के लगों ने उन्हें रोका और उनकी तरफ से डिंगणकर और तुलजाराम सेठ का भाई चुनीलाल कहने लगे के मंदिर के बारे में स्पष्टीकरण दो। इस पर डॉ. अम्बेडकर ने वही जवाब दिया जो उन्होंने पुलिस अफसर को दिया था। लेकिन लोग शांत हों ऐसा वर्ताब करने के बजाय वे ऐसी बातें करने लगे जिनसे लोग क्षुब्ध हो सकते थे। म्युनिसिपालिटी का प्रस्ताव कोई लोगों का प्रस्ताव नहीं है। आप जब तालाब पर गए तो हमें सूचना देकर नहीं गए आदि सवालों की झड़ी लगा दी। इन लोगों से वाद–विवाद करने का कोई मतलब नहीं यह जानकर डॉ. अम्बेडकर और उनके साथ के लोग आगे बढ़ने लगे। रास्ते में कुछ लोग मंदिर में घुस गए रे" का शोर मचाते हुए भागदौड करने लगे। मजिस्ट्रेट ने यह सब देखा मगर उन्हें गिरफ्तार करने की कोई कोशिश नहीं की और बात को हंसकर उड़ा दिया। आखिर में जिन अस्पृश्य लोगों को समझाने के लिए डॉ. अम्बेडकर को ले जाया गया था उनमें से कोई भी अस्पृश्य वहां नहीं था यह देखने के बाद डॉ. अम्बेडकर और उनके साथ के लोग बंगले पर वापस लौट आए। वहां 100 के लगभग अस्पृश्य लोग आकर बैठे थे। उनमें से कुछ घायल थे। यह दृश्य दिखने तक किसी को कल्पना भी नहीं थी कि दंगे की परिणिती खूनखराबे में हुई। दंगा पीड़ितों के हालात समझने के बाद अस्पृश्यों के नेताओं को इस बात का आश्चर्य हुआ कि दंगे के दिन मजिस्ट्रेट शहर में था किंतु दंगे पर काबू पाने का प्रयास नहीं किया जा सका। लेकिन वह विचार करने का समय नहीं था। सारी बातों को दरकिनार करके घायलों को अस्पताल में ले जाने की व्यवस्था की गई। वहां से उन्हें पुलिस चौकी ले जाकर उनकी फरियादें (रपट) लिखाई गईं। सबूत इकट्ठा करने का काम बहुत मुश्किल था। ऊंची जातियों के लोग एक साजिश की तरह काम कर रहे थे, इसलिए कोई सच बोलने को तैयार नहीं था। अस्पृश्य लोग डरे होने के कारण नाम बताने के लिए आगे नहीं आ रहे थे। ऐसी स्थिति में

मुंबई से आए नेताओं ने दो दिन रुककर जितना संभव था, उतने सबूत जुटाने की कोशिश की। स्थानीय पुलिस आरोपियों को सजा दिलाने को लेकर ज्यादा उत्साहित नहीं थी। यह देखने के बाद गवर्नर और कलेक्टर को (Telegram) तार भेजकर हकीकत की जानकारी दी गई और अनुरोध किया गया कि पुलिस को इस मामले में उचित निर्देश दिए जाएं। यह देखा गया कि इस मारपीट की आग महाड़ शहर के बाहर भी फैली है। शहर के अंदर मारपीट खत्म होने के बाद ऊंची जातियों के कुछ दुष्ट लोगों ने आसपास के कुछ गांवों के मराठों को यह संदेश भेजा कि जब महार लोग लौटते समय तुम्हारे गांव से गुजरेंगे तो उनकी पिटाई करो। इसी तरह इन दुष्ट लोगों ने दूर–दूर के गांवों तक यह चेतावनी देने वाली सूचनाएं भेजी कि महाड़ के तालाब को अस्पृश्यों ने दूषित कर दिया है, आप अपने कुएं संभालिए। इसका नतीजा यह हुआ कि आग सभी तरफ फैल गई और हर गांव में अन्य लोगों की तुलना में अस्पृश्य लोग अल्पसंख्यक होने के कारण सभी जगह उन्हें मार खानी पड़ी।

कुछ जगह पर उन्हें गंभीर चोटें आईं। लोगों को बचाने के लिए जिन–जिन गांवों में ऐसे अत्याचार हुए और जिन लोगों ने अत्याचार किए उनकी सूची बनाकर कोलाबा जिले के सुपरिटेंडेंट को भेजी गई। इतनी कार्यावधि करने के बाद मुबई के लोग छुट्टी ने होने के कारण मंगलवार की सुबह मुंबई वापस लौट आए। डॉ. अम्बेडकर और चित्रे वहीं रुके रहे। उन्होंने जिला सुपरिटेंडेंट से फिर मुलाकात करके सारी जानकारी दी और पुलिस को समझाया कि उसे अस्पृश्यों को बचाने के लिए क्या करना चाहिए। मंगलवार की शाम को शहर के गैर–ब्राह्मण नेताओं की बैठक बुलाई गई यह बैठक इसलिए बुलाई गई थी क्योंकि महाड के दंगों में गैर–ब्राह्मण आगे थे। इसलिए उनके नेताओं जरिए उन पर काबू पाया जाए इस मकसद से यह बैठक बुलाई गई थी। लेकिन दुःख की बात यह थी कि एक दो लोगों को छोड़कर बाकी सभी ने ऐसे व्यवहार पर काबू पाने के काम से पल्ला झाड़ लिया। इतनी कोशिशें करने के बाद डॉ. अम्बेडकर और चित्रे बुधवार को मुबई लौटे। इसमें कोई शक नहीं कि यह सम्मेलन हर दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा। उसके नतीजे सही थे या गलत, यह कुछ समय बाद ही तय होगा। लेकिन यह कहने में हर्ज नहीं है कि उसके नतीजे प्रभावी रहे।

सम्मेलन को सफल बनाने में और मारपीट का शिकार बने लोगों की मदद करने में महाड के चंद्रसेनीय कायस्थ जाति की युवा पीढ़ी ने जो मदद की उसके लिए कोलाबा जिले का अस्पृश्य वर्ग उनका हमेशा ऋणी रहेगा।

8
राज्य का अभिमान न हो तो राज्य टिकता नहीं*

तीन मई, 1927 को ठाणे जिले के बदलापुर में शाम छह बजे डा़. बी. आर. अम्बेडकर की अध्यक्षता में त्रिशत सांवत्सरिक शिवाजी उत्सव सफलतापूर्वक मनाया गया।

इस उत्सव का अध्यक्ष किसे बनाया जाए इसे लेकर उत्सव की व्यवस्थापन कमेटी में काफी चर्चा हुई थी। आखिरकार सभी गांव वालों की राय से तय हुआ कि मुंबई के बहिष्कृत वर्ग के नेता डॉ. अम्बेडकर को ही बुलाया जाए। इस प्रस्ताव के अनुसार कमेटी के मुख्य व्यवस्थापक पालये शास्त्री ने मुंबई जाकर 'ब्राह्मण–ब्राह्मणेत्तर' अखबार के संपादक रा. नाईक के जरिए डॉ. अम्बेडकर से भेंट की और उनसे शिवाजी उत्सव का अध्यक्ष पद स्वीकारने का अनुरोध किया। पालये शास्त्री जैसे पौरोहित्य करने वाले ब्राह्मण द्वारा अनुरोध किए जाने पर डॉ. अम्बेडकर ने उनके अनुरोध को खुशी–खुशी स्वीकार किया और वे उत्सव के दिन चार बजे मुंबई से रा. नाईक, रा. सीताराम नामदेव शिवतरकर, रा. गणपत महादू जाधव आदि लोगों के साथ बदलापुर पहुंचे। वे पालये शास्त्री के घर ठहरे। चायपान के बाद डॉ. अम्बेडकर ठीक छह बजे उत्सव स्थल पर पहुंचे।

उत्सव की शुरूआत में ईश वंदना हुई। उसके बाद पालये शास्त्री का प्रास्ताविक भाषण हुआ। इसके बाद नानासाहेब चाफेकर ने गांव वालों की तरफ से अनुरोध किया कि डॉ. अम्बेडकर उत्सव की अध्यक्षता स्वीकार करें। मेसर्स काले, सुले, पाटील और मोकाशी द्वारा अनुमोदन किए जाने के बाद डॉ. अम्बेडकर अध्यक्ष के रुप में विराजमान हुए। उन्होंने अपने भाषण में एक घंटे शिवाजी के विभिन्न गुणों पर बहुत प्रभावी ढंग से प्रकाश डाला। और आखिर में कहा कि जिस शिवाजी ने अपने असाधारण गुणों के द्वारा राज्य स्थापित किया वह राज्य चिरस्थायी क्यों नहीं हो पाया? इसका कारण यह था कि इस राज्य पर सभी को बराबर का अभिमान नहीं था। एक राजा के जाने और दूसरे के आने पर लोगों के रोजमर्रा के जीवन में कोई फर्क नहीं पड़ता था। नेपोलियन द्वारा ब्रिटेन पर हमले के समय ब्रिटेन के अपने देश के लोगों को जो जवाब दिया था वह जवाब यहां भी लागू होता है। यह भाषण होने के बाद रा. नाईक का भी विचारोत्तेजक भाषण हुआ। बाद में रा.भा.रा ओक ने हास्यपूर्ण शैली में लोगों का आभार प्रदर्शन किया। इसके साथ उत्सव का पहला भाग समाप्त हुआ। बाद में वे पालये शास्त्री के घर भोजन के लिए गए। उन्होंने भी किसी भेदभाव के बगैर अपने घर में डॉ. अम्बेडकर और उनके साथ आए अस्पृश्य साथियों के साथ भोजन किया।

बाद में रात को नौ बजे से साढ़े ग्यारह बजे तक कीर्तन हुआ। इस कीर्तन में लोग किसी तरह के भेदभाव के बगैर कीर्तन सुन रहे थे। महार जाति के कुछ लोग तो प्रवचनकार के सामने ही बैठे थे। कीर्तन के बाद डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्व में अंदाजन 15 हजार लोगों ने शिवाजी महाराज की पालखी की शोभायात्रा में शामिल होकर सारे नगर की परिक्रमा की और उसके बाद उत्सव समाप्त हुआ।

संदर्भ : "बहिष्कृत भारत", 20 मई, 1927

9
अपना उद्धार करने के लिए खुद ही कमर कसनी चाहिए*

मुंबई के चीराबाजार में 4 जून, 1927 को रात साढ़े आठ बजे बहिष्कृत वर्ग की सार्वजनिक सभा बहिष्कृत भारत के संपादक डॉ. बी. आर. अम्बेडकर बार–एट–लॉ की अध्यक्षता में संपन्न हुई। बहिष्कृत हितकारिणी सभा के जनरल सेक्रेटी श्री एस. एन. शिवतरकर ने महाड़ सम्मेलन के बाद स्पृश्यों द्वारा की जा रही गुंडागर्दी की विस्तृत जानकारी दी। यह सुनकर लोगों के मनों पर दुखद परिणाम हुआ। बाद में श्री गंगावणे तांबे, गिमोनकर, वीरकर, भेसनकर, भातकुडे के स्फूर्तिदायक भाषण हुए। आखिर में अध्यक्ष ने विचारपूर्ण भाषण किया। उन्होंने बहुत स्पष्ट शब्दों में लोगों को समझाया कि अभी अस्पृश्य वर्ग की स्थिति कितनी दयनीय है। अपना उद्धार करने के लिए हमें खुद की कमर कसनी होगी। यह काम एक – दो लोगों का नहीं है। इसमें अनेक लोगों ने अपनी छाती तानकर अपनी मनुष्यता स्पृश्यों के सामने साबित करनी चाहिए। इस काम में अनेकों की बलि चढ़ेगी। हमारे पुरखों ने रणक्षेत्र में शमशीरों के वारों के जरिए अपनी कलाई बाजुओं के बल को साबित किया है। अब हमें अपने बुद्धिबल के द्वारा आज के सामाजिक युद्ध में अपना श्रेष्ठ स्थान हासिल करना चाहिए। ये उद्गार सुनने के बाद दो–तीन युवा उठे और अपनी अस्तीने चढ़ाकर बोले–बाबासाहेब, हम आपके झंडे तले लड़ने को तैयार हैं। 'महाड़–अत्याचार निवारक फंड' के लिए स्थानीय लोगों ने 20 रुपये और भातकुडे और वीरकर ने अपनी स्कालरशिप से पांच–पांच रुपये अध्यक्ष को अर्पित किए। इसके अलावा भी कुछ फुटकर रकमें मिलीं। इसके बाद तालियों की गड़गड़ाहट के बीच अध्यक्ष को फूलमाला पहनाई गई। बाबासाहेब अम्बेडकर की जय के नारों के बीच सभा विसर्जित हुई।

"बहिष्कृत भारत" 1 जुलाई, 1927

10
हमें निडर और स्वाभिमानी लोग चाहिएं*

रविवार, 5 जुलाई, 1927 को मुबई शहर के सर कावसजी जहांगीर हाल में सभी बहिष्कृत वर्गों की सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया जिसका मकसद महाड़ के अत्याचारों का निषेध और उसके बारे में भावी कार्यक्रम तय करना था। उसकी अध्यक्षता डॉ. अम्बेडकर एम.ए,पी.एच. डी.डी.एस.सी, बार–एट लॉ, एम.एल.सी ने की। सभा में बहिष्कृत वर्ग की विभिन्न जातियों के अलावा 'ब्राह्मण–ब्राह्मणेत्तर' अखबार के संपादक देवराव नाईक, सो.सा. लीग के एक प्रतिबद्ध कार्यकर्त्ता गं.नी. सहस्त्रबुद्धे और मद्रास की तरफ के गीतानंद ब्रह्मचारी आदि लोग उपस्थित थे। सभा में निम्न प्रस्ताव पारित हुए।

प्रस्ताव 1 – अस्पृश्य वर्ग की शिकायतों और उन पर होने वाले अत्याचारों का सरकार की तरफ से उचित ढंग से निवारण हो। सभा की मांग है कि अस्पृश्यों की उन्नति के लिए समय–समय पर पारित हुए प्रस्तावों और भविष्य में पारित होने वाले प्रस्तावों पर कठोरता से अमल के लिए सरकार को मद्रास क्षेत्र की तरह मुंबई क्षेत्र में भी एक अलग अधिकारी नियुक्त करना चाहिए।

प्रस्ताव 2 – बहिष्कृत हितकारिणी सभा ने महाड में सत्याग्रह की योजना बनाई है। यह सभा उसका पूर्ण समर्थन करती है। यह सभा बहिष्कृत वर्ग की सभी जातियों से इस सत्याग्रह में भाग लेने की अपील करती है।

उपरोक्त प्रस्ताव पर मेसर्स वनमाली, मोहिते, मारवाड़ी मास्टर, खोलवडीकर, गोविंदजी माधवदास, गंगावणे, गायकवाड़, जाधव आदि के भाषण होने के बाद अध्यक्ष ने श्रीमान नाईक और गीतानंद ब्रह्मचारी से भाषण करने का अनुरोध किया। इन दोनों ने अपने भाषण में कहा, कि आपको अपने मानवीय अधिकार हासिल करने के लिए हर संभव प्रयास करने चाहिएं। ऊंची जातियों के लोग बड़ी–बड़ी बातें करते हैं। यदि उन्हें सचमुच आपके प्रति सहानुभूति है तो इस सभा का आमंत्रण अखबारों के जरिए सभी को दिए जाने के बाद ऊंची जाति के लोगों में से कोई इस सभा में न आए यह खेदजनक बात है। ऐसी सभाओं में हिंदू महासभा के नेताओं को अवश्य हिस्सा लेना चाहिए। लेकिन यदि वे आपकी सभा में शरीक न हो रहे हैं तो भी आप चुप न बैठें। यदि कोई तुम्हें अस्पृश्य कहे तो जिस तरह बत्तख को पानी में डुबोकर ऊपर नीचे किया जाता है उस तरह आप भी जो कोई आपको अस्पृष्य कहे उसकी बाजुओं को पकडकर पानी में ऊपर नीचे करके डुबोइए। ऐसा तब तक करो कि आदमी फिर कभी आपको अस्पृश्य न कहे। इसके बाद सभा के अध्यक्ष डॉ अम्बेडकर का भाषण हुआ। अपने भाषण में उन्होंने कहा,

"हमने दोनों प्रस्ताव तालियों की गड़गड़ाहट के बीच पारित किए हैं। उसमें से दूसरे प्रस्ताव के बारे में आपको पर्याप्त जानकारी नहीं है, ऐसा लगता है। दूसरा प्रस्ताव सत्याग्रह के बारे में है। सत्याग्रह का मतलब है युद्ध। मगर यह युद्ध तलवार, बंदूक, तोप, बम आदि हथियारों की लड़ाई नहीं है। जिस प्रकार पतुतललाखली और वायकोम आदि स्थानों पर लोगों ने सत्याग्रह किया उसी तरह हमें भी महाड़ में सत्याग्रह करना है। यह सत्याग्रह करते समय शायद सरकार शांति भंग न हो इसलिए किसी धारा में गिरफ्तार कर हमें जेल में भेज सकती है। तो जेल जाने की तैयारी होनी चाहिए। मैं आपसे साफ कह रहा हूं जिन्हें अपने बीवी–बच्चों की चिंता करनी है, ऐसे लोग सत्याग्रह में बिल्कुल भाग न लें। हमें निडर और स्वाभिमानी लोग चाहिएं। ऐसे लोग ही सत्याग्रह के लिए अपने नाम लिखाएं, जिनका पक्का निश्चय है कि अस्पृश्यता हमारे देश पर कलंक है और इसे दूर करके रहूंगा। हमें आशा है कि बहिष्कृत समाज से ऐसे दृढ़ निश्चय वाले लोग आगे आएंगे।" इस भाषण के बाद श्री सीताराम नामदेव शिवतरकर ने सभी का आभार व्यक्त किया। आभार प्रदर्शित करते हुए उन्होंने कहा कि इस सभा में बहिष्कृत वर्ग की सभी जातियों के लोग और गीतानंद ब्रह्मचारी और रा. नाईक और सहस्त्रबुद्धे आए हैं। उनके प्रति हम आभार प्रगट करते हैं। यह महाड़ के बारे में आखिरी सभा है। इसके बाद महाड सत्याग्रह को लेकर सभा नहीं होगी। लेकिन आज की सभा में पारित प्रस्ताव के अनुसार सत्याग्रह की तैयारी करनी है। हम वर्षा ऋतु खत्म होने के बाद सत्याग्रह करने वाले हैं। इसलिए जिन्हें अध्यक्ष के कहे मुताबिक अपना नाम सत्याग्रह के लिए लिखवाना है, वे परेल के दामोदर हाल में स्थित बहिष्कृत हितकारिणी सभा के कार्यालय में अपना नाम लिखवाएं।

संदर्भ : ''बहिष्कृत भारत'' 15 जुलाई, 1927

5 जुलाई की जगह तारीख 3 जुलाई, 1927 हो सकती है–सम्पादक

11
महार जाति पर स्वार्थी होने का आरोप निराधार*

बुधवार, 20 जुलाई, 1927 को शाम साढ़े सात बजे पूना के मांगवाड़ा में पूना के – 'दीनबंधु' समाचार पत्र के संपादक डॉ. नवले की अध्यक्षता में अस्पृश्यों की सार्वजनिक सभा हुई। उस सभा में अस्पृश्य और स्पृश्य वर्ग के लगभग 300 लोग उपस्थित थे। मुंबई विधानमंडल में सरकार द्वारा नियुक्त सदस्य डॉ. अम्बेडकर, बार–एट लॉ और डॉ. सालुंखे, सुभेदार घाडगे, मि. राजभोज, मि. के जाधव, बी.ए, मि. पाताडे, मि. गायकवाड़, मि. सावलेकर, मि. इंगले, लांडगे, मि. सावलेकर, मि. के.के. सकट, मि. घाडगे, मि. वायदंडे। वराड (विदर्भ) के आनंदस्वामी, मि. पंढरीनाथ पाटील, श्री धुंडीराज पंत ठेंगडी, आर्यसेवक रा. ओघले, रा. शंकरराव पोतनीस, रा. देशपांडे आदि लोग सभा में प्रमुख रूप से नजर आ रहे थे। सभा के दौरान बारिश हो रही थी। लेकिन लोग डॉ. अम्बेडकर जैसे अनुभवी नेता का भाषण सुनना चाहते थे, इसलिए बारिश के बावजूद सभा की कार्यवाही जारी रही।

रा.के.एम. जाधव के अनुरोध पर डॉ. नवले ने अध्यक्षता करना स्वीकार किया। बाद में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा–

"आज मैं दिल खोलकर बोलने वाला हूं। मेरे भाषण का कोई गलत अर्थ न निकाले। मि. सकट और मि. वायदांडे ने मेरी बिना वजह आलोचना करना शुरू किया है। मैं जानता हूं कि नेताओं की हमेशा आलोचना होती ही है। आप जानते हैं कि मैं महार जाति का हूं। आलोचकों का कहना है कि महार जाति स्वार्थी है। लेकिन क्या अस्पृश्य जातियों में गैर–महार जाति के लोगों ने महारों के लिए निस्वार्थ भाव से क्या कुछ काम किया है? मेरा उनसे यह प्रतिप्रश्न है।

असल में देखा जाए तो गैर–महार जातियों के लोग शैक्षणिक और संपत्ति की दृष्टि से समृद्ध हैं। मुंबई में तो चमार और ढोर जाति के लोग इतने संपन्न हैं कि वे आयकर देते हैं। ऐसा होने के बावजूद मैंने कभी नहीं सुना कि उन्होंने महार जाति के लोगों की उन्नति के लिए कुछ किया हो। इसके विपरीत हम कई उपयोगी संस्थाएं शुरू कर अस्पृश्यों की सभी जाति के लोगों की काया, वाचा और मन से संघर्ष कर रहे हैं। "बहिष्कृत हितकारिणी सभा" स्थापित करके मैंने अस्पृश्यों की उन्नति का काम हाथों में लिया है। सोलापुर में हमने अस्पृश्यों के लिए छात्रावास बनाया है। चमारों ने उसके लिए मदद नहीं की। फिर भी हमने महार, मांग और चमार आदि सभी जाति के छात्रों को इस छात्रावास में रखा है। मैंने मि. सकट से अनुरोध किया है कि और भी मांग जाति के छात्र छात्रावास में अवश्य भेजें। इसी तरह नाशिक

और जलगांव में छात्रावास बनाकर हम महारों और गैर–महारों के लिए सतत् संघर्ष करते रहे हैं। हमें समझ में नहीं आ रहा कि ऐसे में महार जाति के खिलाफ शोर मचाने से क्या हासिल होगा।

आलोचकों का कहना है कि सरकार की तरफ से मिलने वाली सुविधाएं सब में समान रूप से अस्पृश्य जातियों में वितरित न करके महार जाति स्वार्थी बनकर सारी सुविधाएं हथिया लेती है। मुंबई में निकालजे नामक महार जाति के व्यक्ति को मुंबई कार्पोरेशन में मनोनित किया गया। लेकिन उनके द्वारा आखिल अस्पृश्य वर्ग की जैसी उन्नति होनी चाहिए थी, वैसी नहीं हो पाई। यह बात मेरे ध्यान में आने पर मैंने ही वह पद चमार जाति के सुप्रसिद्ध क्रिकेट खिलाड़ी मि. बालू को दिलवाया। सातारा में महार जाति के लोगों की अच्छी–खासी तादाद होने के बावजूद वहां की म्युनिसिपालटी में सरकार नियुक्त सदस्य चमार जाति का है। इन सब बातों पर गौर करने पर यह स्पष्ट है कि महार जाति पर स्वार्थीपन का आरोप कितना निराधार है।

कुछ अज्ञानी महार लोग व्यापक दृष्टि वाले नहीं होंगे। लेकिन केवल इस कारण सारी महार जाति पर आरोप लगाना ठीक नहीं। मेरा अन्य जातियों के लोगों से अनुरोध है कि पहले यह देखिए कि महार जाति के नेता क्या कर रहे हैं फिर आरोप लगाने के लिए आगे आइए। मैं स्वयं मांग जाति के साथ रोटी–बेटी का व्यवहार करने के लिए तैयार हूं। ऐसे में महार और मांगों के बीच में दरार क्यों हो यह मेरी समझ में नहीं आता। मैंने अपने घर पर एक मांग के बच्चे को अपने बेटे की तरह पाला था। अब भी कोई मुझे मांग लड़का लाकर देगा तो मैं उसका पालन–पोषण करूंगा। मैं केवल बड़ी–बड़ी बाते करने वाला नेता नहीं हूं जो कहता हूं वह करता भी हूं। कांग्रेस के अधिवेशन में भोजन के समय जाति के अनुसार अलग–अलग जगह होती है। लेकिन मेरे नेतृत्व में हुई बहिष्कृत परिषद में सभी जातियों का भोजन एक स्थान पर होता है। इससे स्पष्ट है कि विभिन्न जातियों में एकता निर्माण करने के लिए कितना प्रयत्नशील है।

इसके बावजूद यदि गैर–महार जातियां महारों से अलग रहना चाहती हैं तो वे ऐसा करने के लिए स्वतंत्र हैं।वे यदि अलग रहकर अस्पृश्योद्धार का काम करते हैं तो हमें कोई एतराज नहीं हैं। मेरा उनसे अनुरोध है कि वे खास लोगों के नेतृत्व में न रहें। कुछ ब्राह्मण अस्पृश्योद्धार के लिए संघर्ष करते हैं। यह बात सही होने के बावजूद मुझे ऐसा लगता है कि वे अपनी पार्टी को मजबूत बनाने के लिए ही अस्पृश्यों को साथ लेते हैं। हमें ऐसे ब्राह्मण और मराठा चाहिए हमारे उद्धार (आजादी) के लिए निस्वार्थ भाव से काम करें। हमारी दूसरों के हाथों का हथियार (मशाल) बनने की इच्छा नहीं है।

स्वार्थ से प्रेरित लोगों के द्वारा अस्पृश्यता निवारण का काम हो, तो भी मैं चिंतित

नहीं होऊंगा। क्योंकि मुझे लगता है कि अस्पृश्य होने के कारण मिलने वाली सुविधाओं के जरिए हमें अपनी उन्नति कर लेना आसान होगा। मुझे लगता है कि रा. माटे का असली उद्देश्य अस्पृश्यता निवारण नहीं है। वे अस्पृश्यों को साथ लेकर गैर–ब्राह्मणों को चुनौती देने की कोशिश कर रहे हैं, ऐसी मेरी राय है। यदि श्री म. माटे सप्रमाण यह साबित कर दें कि मेरी राय गलत है तो मैं उनसे जरूर सहयोग करूंगा।

मुझे ऐसा लगता है कि मुस्लमानों से सुरक्षा हो सके इसके लिए हिन्दूसभा अस्पृश्यता निवारण का खेल–खेल रही है। ऐसी स्थति में मेरी गैर–महार भाइयों से अनुरोध है कि वे किसी के पिछलग्गू नहीं बनें। मि. सकट "दे दान छूटे ग्रहण", ऐसा चिल्ला–चिल्ला कर भीख मांगे तो भी मुझे बुरा नहीं लगेगा। लेकिन वे यदि माटे के चक्कर में पड़ गए तो मुझे दुःख होगा। मेरा इतना ही कहना है कि चाहे तो बेषक अलग रहो मगर किसी के बगलबच्चे मत बनो।

हम पर आरोप है कि महार जाति के लोग ही काउंसिल के स्थन हथिया लेते हैं। क्या अस्पृश्यों के हितों की रक्षा के लिए काउंसिल में योग्य व्यक्ति का जाना उपयुक्त नहीं है? गैर–महारों में मेरे जैसा व्यक्ति पैदा नहीं हुआ, यह उनका दुर्भाग्य है। लेकिन मुझे काउंसिल की सीट की अभिलाषा नहीं है। यदि गैर–महारों में कोई ज्यादा योग्य हो तो वह मेरा स्थान ले। अभी यहां से ही इस्तीफा भेजने को तैयार हूं। जब भी आपको शक हो कि मैं काउंसिल में केवल महार जाति के हितों के लिए ही लड़ रहा हूं तो आप मुझे पत्र के द्वारा अपनी शंकाएं अवश्य बताएं मैं सभी की शंकाओं का तत्काल निवारण करूंगा।

स्पृश्य समाज के लोग हमसे कहते हैं कि सुशिक्षित बनो तो अस्पृश्यता अपने आप खत्म हो जाएगी। लेकिन यह मानना पूरी तरह से गलत होगा कि शिक्षित होने भर से अस्पृश्ता का निवारण हो जाएगा। मैं एक उदाहरण देता हूं, जिससे बात आपके समझ में आ जाएगी। जब तक मेरे चेंबर के पास वाले भोजनालय वाले ब्राह्मण को यह पता नहीं था कि मैं अस्पृश्य हूं तब तक वह अपने कप और प्लेट में मुझे चाय और पकौड़ी देता था। लेकिन परसों एक गुजराती अखबार में छपे फोटो से उसे पता चला कि मैं अस्पृश्य हूं, तब से वह कांच के गिलास में चाय देने लगा। उसे ऐसा करने की भड़काऊ सलाह एक स्पृश्य वर्ग के क्लर्क ने दी थी। जहां ऐसी स्थिति है वहां यह सोचना गलत होगा कि केवल शिक्षित होने भर से अस्पृश्यता खत्म हो जाएगी।

अगर हमने आक्रामक रुख नहीं अपनाया तो हमारा टिके रह पाना मुश्किल है। हमारा दमन–शोषण हो रहा है तो इसकी वजह यह है कि हमें गुस्सा नहीं आता। हमारे पूर्वजों ने अन्याय का प्रतिकार नहीं किया। यह उनकी बहुत बड़ी गलती थी।

अब हमें संगठित होकर लोगों को यह दिखा देना चाहिए कि हमारा अपमान खत्म करने के दिन अब खत्म हो गए।

इसके बाद जो अस्पृश्यों के सम्मेलन होंगे। उसका समापन मंदिर प्रवेश, सार्वजनिक तालाब का पानी पीने आदि कार्यक्रमों में होना चाहिए, ऐसी मेरी राय है। इस बार हम आलंदी में अस्पृश्यों की सभा का आयोजन करेंगे। उस समय कुछ भी हो मगर हम मंदिर में प्रवेश करेंगे, ऐसा करने पर ही हमारा कार्यक्रम पूरा होगा।"

डॉ. अम्बेडकर के इस आशय के भाषण के बाद डॉ. सालुंके[1] ने अपने भाषण में कहा कि गुजरात के अस्पृश्यों का महाराष्ट्र के अस्पृश्यों के आंदोलन को पूर्ण समर्थन है। बाद में वर्हाड (विदर्भ) के रा. पंढरीनाथ पाटील के भाषण के दौरान मांगबसी के एक बीमार व्यक्ति की मृत्यु हो जाने के कारण सभा स्थगित कर दी गई।

1. डॉ. सालुंके नाम मूल मराठी पाठ में दर्ज है। किन्तु उनका नाम डॉ. सोलंकी लगता है। डॉ. सालुंके खलिस मराठी नाम है। किन्तु इसमें वक्ता ने गुजरात की अस्पृश्य जनता की ओर से महाराष्ट्र के अस्पृश्यों के आन्दोलन का समर्थन किया है। यह कार्य गुजराती भाषी नेता ही कर सकता है।

12
हमें मिसाल बनानी चाहिए कि हम किसी से कम नहीं*

शनिवार, 17 सितंबर, 1927 को रात 9 बजे एल्फिन्स्टन रोड की डेविड मिल चाल के कंपाउंड में महाड में 25 दिसंबर से होने वाले सत्याग्रह के बारे में पहली सार्वजनिक सभा डॉ. भीमराव अम्बेडकर की अध्यक्षता में हुई। सभा में अस्पृश्य वर्ग के लोगों की भारी भीड थी। सभा में मेसर्स गणपतराव जाधव, धोंडीराम गायकवाड़, सालुंके बुवा तथा शिवतरकर जी के सत्याग्रह के बारे में भाषण हुए। बाद में अध्यक्ष डॉ. अम्बेडकर ने बहुत सरल भाषा में लोगों से कहा कि,

"सज्जनों,

मुझसे पहले के वक्ताओं ने आपको बताया है कि हमें सत्याग्रह क्यों करना चाहिए। अस्पृश्यता हमारा कलंक नहीं है तो हमारी मां–बहनों पर कलंक है। कारण यह है कि जो लोग खुद को स्पृश्य समझते हैं उन्हें ऐसा लगता है कि मेरी मां अस्पृश्य को जन्म देने वाली मां से बेहतर है। लेकिन हकीकत यह है कि हर मां नौ महीनों में ही प्रसूत होती है। इसलिए कोई भी स्त्री दूसरी स्त्री से श्रेष्ठ नहीं है। इसलिए जो दूसरे को अपने से कमतर समझता है उसे हमें उचित सबक सिखाना चाहिए कि हम किसी से कम नहीं। जो मनुष्य है उसे धर्म की दृष्टि से समान अधिकार हैं। इसलिए हमें सत्याग्रह करके अपने अधिकारों को हासिल करना चाहिए। जो लोग इस सत्याग्रह में भाग लेना चाहते हैं, वे अवश्य भाग लें। लेकिन जो अपने काम–धंधे के कारण भाग नहीं ले सकें उन्हें फूल नहीं तो फूल की पंखुड़ी ही सही इस न्याय से आर्थिक रूप से मदद करनी चाहिए, ऐसी मेरी आपसे विनती है।" बाद में अध्यक्ष और अतिथियों के प्रति आभार प्रकट करने के बाद सभा समाप्त हुई।

---

* "बहिष्कृत भारत", 30 सितम्बर, 1927

13
बहिष्कृत छात्रों के कर्तव्य निभाने पर ही बहिष्कृत समाज का भवितव्य निर्भर करता है

बहिष्कृत वर्ग के सुप्रसिद्ध नेता डॉ. भीमराव अम्बेडकर बार–एट–लॉ की अध्यक्षता में रविवार, दिनांक 2 अक्तूबर, 1927 को पुणे में बहिष्कृत छात्रों का चौथा वार्षिक सामाजिक सम्मेलन संपन्न हुआ। कार्यक्रम के लिए डीसी मिशन के अहिल्याश्रम हॉल को सजाया गया था। सम्मेलन का कार्यक्रम शनिवार और रविवार इन दो दिनों का था। शनिवार को छात्रों के भाषण और खेलों की प्रतियोगिताएं हुईं। यह बताने में खुशी होती है कि इन कार्यक्रमों में महार, चमार और मांग जाति के छात्रों ने हिस्सा लिया। भाषण और खेलों में पुरस्कार प्राप्त करने वाले छात्रों को पुरस्कार देने का कार्यक्रम रविवार को शाम पांच बजे होने वाला था। इसके लिए नियोजित अध्यक्ष और बहिष्कृत वर्ग के नेता डॉ. भीमराव अम्बेडकर बार–एट लॉ डॉ. सोलंकी, कदम आदि लोगों के साथ पांच बजे पहुंच गए। अध्यक्ष के स्वागत के लिए गवर्नमेंट डी.सी. होस्टल और डी.सी. मिशन संस्थाओं के बालवीरों की टुकड़ियां दरवाजे के पास सज्ज थीं। अध्यक्ष के द्वार के पास पहुंचने पर सुभेदार घाटगे के नेतृत्व में बालवीरों की टोली ने सलामी दी। उस समय डॉ. अम्बेडकर की जयजयकार से माहौल गूंज उठा और उस जय–जयकार के बीच ही मेहमान आश्रम में प्रविष्ट हुए। फिर अध्यक्ष, छात्रों और अतिथियों का ग्रुप फोटो लिया गया। और फिर छह बजे पुरस्कार समारोह संपन्न हुआ।

अतिथियों में डॉ. सोलंकी, प्रि. तावड़े, रा. श्रीधरपंत तिलक, रा. संगमनेरकर, कदम, ऐदाले, बाराथ, भंडारे, राजभोज, लांडगे, वायदंडे, डी.सी. मिशन के रा. पाताडे, सुभेदार, घाटगे बंधु, गायकवाड़ और सेवासदन की प्रौढ छात्राएं ट्रेनिंग कालेज के प्रौढ़ छात्र आदि ही प्रमुख रूप से नजर आ रहे थे। बाद में जॉ सेक्रेटरी रा. रणपिसे जी ने विभिन्न प्रतियोगिताओं का मार्मिक विवेचन किया और अध्यक्ष ने अपने हाथों से विजेताओं को पुरस्कार दिए। इसके पष्चात् अध्यक्ष का भाषण हुआ। भाषण में उन्होंने बहिष्कृत वर्ग की मौजूदा भयानक और चिंताजनक परिस्थितियों का वर्णन करके कहा कि इस विषम परिस्थिति में बहिष्कृत वर्ग के छात्र कैसे अपने कर्तव्य को निभाते हैं, इस पर ही बहिष्कृत वर्ग का भविष्य निर्भर है। इसके साथ ही उन्होंने बहिष्कृत वर्ग की शिक्षित महिलाओं से अपील की कि वे अपने शील और कर्त्तव्य को निभाते हुए समाज की प्रगति में योगदान दें। जब उन्होंने उदाहरण देकर बताया कि शिक्षित होने पर भी अस्पृश्य माने जाने

पर किस तरह आदमी को मुश्किल होती है तो पूरे सभागार में गंभीरता छा गई। डॉक्टर साहब दिल से बोल रहे थे। उनके हर शब्द में उनके हृदय की उत्कट इच्छा प्रतिबिंबित हो रही थी। कुल मिला कर भाषण प्रभावी और चित्ताकर्षक था। बाद में आभार प्रदर्शन के बाद अध्यक्ष को पुष्प हार पहनाया गया। इस तरह यह स्मरणीय कार्यक्रम संपन्न हुआ।*

---

* "बहिष्कृत भारत" 4 नवम्बर, 1927

14
अस्पृश्यता और सत्याग्रह की सफलता*

अमरावती के इंद्रभुवन थियेटर में वर्हाड प्रदेश अस्पृश्य परिषद् का दूसरा अधिवेशन दिनांक 13 और 14 नवंबर, 1927 को आयोजित किया गया था।

दिनांक 13 नवंबर, 1927 को सभा के नियोजित अध्यक्ष डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का बडनेरा में गवई एम.एल. सीत्र द्वारा स्वागत करने के बाद अध्यक्ष और अन्य लोग दोपहर डेढ बजे अमरावती पहुंचे। स्टेशन पर स्पृश्य और अस्पृश्यों की भारी भीड़ जमा थी। ठीक साढ़े तीन बजे सभा के कामकाज की शुरूआत हुई। पहले अस्पृश्य समाज के कुछ बच्चों ने अपनी मधुर आवाज में स्वागत गीत गाए। डॉ. पंजाबराव देशमुख ने जल्दी होने वाले श्री अंबादेवी मंदिर सत्याग्रह की दृष्टि से आज के सभा का महत्त्व प्रतिनिधियों को समझाया। बाद में डॉ. अम्बेडकर का परिचय कराकर, उन्हें अध्यक्ष पद स्वीकार करने का अनुरोध किया। मोर्शी के सुप्रसिद्ध गैर–ब्राह्मण नेता नानासाहब अमृतकर, सत्याग्रह समिति के सचिव श्री नाईक और अध्यक्ष गवई एम.एल.सी. ने उसका अनुमोदन किया। उसके बाद डॉ. अम्बेडकर ने तालियों की गड़गड़ाहट के बीच अपना स्थान ग्रहण किया। प्रारंभ में आज की सभा का अध्यक्ष बनाने के लिए स्वागत मंडल और प्रतिनिधियों के आभार प्रगट कर उन्होंने अपना भाषण दिया।

उन्होंने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा,

न जानपदिकं दुखमेक; शोजितुमर्हति।
अशोचन्प्रति कुर्वीत यदि पश्येदुपक्रमम्।।

जो दु:ख सार्वजनिक है उसका शोक करते रहना उचित नहीं है। उसके लिए रोते बैठने के बजाय ज्ञानी पुरूषों को उसके प्रतिकार के लिए जो समाधान सूझे वह करना चाहिए।

अपहाय निजं कर्म कृष्ण कृष्णेति वादिनः। .
ते हरेद्वेषिणः पापाः धर्मार्थ जन्म युद्धरेः।।

अपने कर्म त्यागकर केवल हरि–हरि करते रहने वाले लोग हरि के विरोधी और पापी हैं क्योंकि हरि का जन्म तो धर्मरक्षा के लिए हुआ है। अस्पृश्य और स्पृश्य एक ही धर्म के लोग हैं, यह बात दोनों पक्ष मानते हैं। स्पृश्य लोग अस्पृश्य लोगों से यह कभी नहीं कहते कि वे हिन्दू नहीं हैं। इसके विपरित 1910 की जनगणना में कुछ

*संदर्भ : ''बहिष्कृत भारत'', 25 नवम्बर, 1927

मुसलमान लोगों की कार्रवाई में यह बात निकली कि अस्पृश्यों की गणना हिन्दुओं में न हो। तब स्पृश्य समुदाय के केवल सुधारवादियों ने ही नहीं तो सनातनियों ने भी जोर देकर कहा कि अस्पृश्य हिन्दू हैं। इसी तरह अस्पृश्यों ने भी स्वीकार किया कि उन्हें गैर–हिन्दूओं में न गिनते हुए हिन्दुओं में ही गिना जाए। यह सही है कि हम एकधर्मीय है यह भावना पुरातन काल से चली आ रही है मगर आज अस्पृश्यों के नजरिए में काफी बदलाव आया है। यदि हम हिन्दू हैं तो अन्य हिन्दुओं को जो अधिकार हैं वे हमें क्यों न हासिल हों? जिस तालाब से वे पानी भरते हैं वहां से हम क्यों नहीं भर सकते? जिस मंदिर में वे जाकर पूजा करते हैं वहां हमें क्यों नहीं प्रवेश मिलता? इस तरह के समता के सवाल वे उठा रहे हैं और इन सवालों के मुताबिक जो अधिकार उन्हें प्राप्त होने चाहिएं, उसे हासिल करने करने के लिए वे प्रयत्न कर रहे हैं। जब कोई व्यक्ति पुराने को छोड़कर नए के पीछे जाने लगता है तो उसके मन में यह संदेह पैदा होता ही है कि वह जो कार्य कर रहा है वह उचित है कि अनुचित। पुरानी परंपरा से पवित्र हुआ रहता है और इसलिए सभी को उसकी सत्यता का विश्वास होता है। नए की परंपरा नहीं होती और इसलिए वह दिखने में कितना ही सुंदर हो तो भी लोग उसका अनुकरण करने में झिझकते हैं। समान अधिकार का आग्रह करने वाले अस्पृश्यों की भी इस नई नीति के बारे में इसी तरह की मनस्थिति होना स्वाभाविक है कि इसके पहले हम कभी मंदिर में नहीं गए! कभी तालाब पर नहीं गए! वैसा करने के लिए अब लोग आग्रह कर रहे हैं। परंतु क्या हमारा यह आग्रह सत्याग्रह होगा? यदि ऐसी शंका अस्पृश्यों के मन में उठती है तो वह मनुष्य स्वभाव के अनुरूप ही है। किसी काम में सफलता मिलेगी या नहीं वह जितना साधनों पर अवलंबित है उतना ही वह कार्य के नैतिक स्वरूप पर भी निर्भर होता है। कार्य के मूल में अगर सत्य है तो उसकी सफलता के लिए विशेष चिंता करने की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि आखिर में हमेशा सत्य की ही विजय होती है। यदि कार्य के मूल में असत्य हो तो उसकी सफलता कठिन होती है। इसलिए हरेक अस्पृश्य को हमारे कार्य के नैतिक स्वरूप के बारे में अच्छी तरह जान लेना चाहिए। यह जानने के लिए ही हमें इस बात पर विचार करना जरूरी है कि मंदिर प्रवेश का अस्पृश्यों का आग्रह सत्याग्रह है या दुराग्रह है।

सत्याग्रह के बारे में पहली बात यह है कि यह तय किया जाए कि सत्य क्या है और असत्य क्या है। क्योंकि अगर सत्य क्या है यह निश्चित रूप से तय नहीं किया गया तो सत्याग्रह की इमारत डांवाडोल ही रहेगी। यदि सत्याग्रही के मन में यह विश्वास नहीं हो कि उसका आग्रह सत्याग्रह है तो वह सत्याग्रह करेगा कैसे? क्योंकि, सत्याग्रह की सफलता हमेशा सत्याग्रही व्यक्ति के आत्मबल पर निर्भर होती है। यह आत्मबल उसमें प्रकट होने के लिए यह जरूरी है कि उसमें यह भावना हो कि वह

जो कर रहा है वह सत्य है। इस भावना के प्रति अगर संशय रहा तो उसमें सत्याग्रह के लिए आवश्यक आत्मबल प्रकट नहीं होगा। इसलिए सत्याग्रही व्यक्ति को इस बात का विश्वास होना चाहिए कि सत्य क्या है। अगर संक्षेप में कहूं तो मेरी राय में जिस कार्य से लोकसंग्रह होता है वह सत्कार्य है और उसके लिए किए जाने वाले आग्रह को सत्याग्रह कहना चाहिए। अब लोकसंग्रह के बारे में मतभेद होना संभव है। एक को जो कार्य लोकसंग्रह का लगता है वही दूसरे को लोकविग्रह का लगेगा। फिर भी एक बात माननी पड़ेगी कि यदि करने वाले की बुद्धि शुद्ध न हो यानी यदि वह स्वार्थपूर्ण उद्देश्य से काम करने के लिए प्रवृत्त हुआ है तो ही उसका झुकाव लोकविग्रह के कामों की तरफ होगा। वहीं अगर करने वाले के मन में समभाव जागृत है तो उसके हाथों से लोकविग्रह का काम कभी होगा ही नहीं। क्योंकि स्वार्थ न होने के कारण उसकी इच्छा लोकसंग्रह ही की होगी इसलिए इन दो सिद्धांतों के आधार पर हमारी सत्याग्रह की परिभाषा यह है कि जहां समभाव है वहां लोकसंग्रह है और जहां लोकसंग्रह है वहां सत्कार्य है और ऐसे कार्य के लिए जो आग्रह होता है वह सत्याग्रह है।

यह सोच हमारी नहीं है। इसे हमने गीता से लिया है। कुछ लोगों को इस बात का आश्चर्य लगेगा कि हम सत्याग्रह के लिए गीता को आधार बना रहे हैं। सामान्य तौर पर लोगों का यह मानना है कि सत्याग्रह गीता का विषय नहीं है, लेकिन हमारी दृष्टि से यह समझ गलत है। सत्याग्रह ही गीता का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है। यदि हम गीता के उपदेशों को ठीक से समझें तो हमारे कहने की सत्यता सहज रूप से समझ में आ जाएगी। गीता में अर्जुन ने कौन–सा सवाल किया और उस पर श्रीकृष्ण ने क्या जवाब दिया इस तरफ अगर कोई ध्यान देगा तो उसे दिखाई देगा कि अर्जुन जब रथ के नीचे बैठ गया तब भगवान श्रीकृष्ण ने उससे कहा, बैठो मत! तुम्हारे राज्य अधिकार को जिन्होंने छीना है उनसे युद्ध करो! तब अर्जुन ने उनसे सवाल किया कि बताओ, कि आप जो आग्रह कर रहे हैं क्या वह सत्याग्रह है? उसके इसी एक सवाल के जवाब में भगवान ने गीता कही है। इसलिए गीता ग्रंथ का सत्याग्रह के अलावा कोई दूसरा मुख्य प्रतिपाद्य विषय हो ही नहीं सकता। अस्पृश्य लोग स्पृश्यों के बराबर अधिकार का जो आग्रह रखते हैं वह सत्याग्रह है या नहीं यह साबित करने के लिए हमने जो गीता का आधार लिया है वह इसलिए क्योंकि गीता सत्याग्रह की एक मीमांसा है। लेकिन इस कार्य के लिए गीता का हवाला देने की एक और वजह है। वह यह कि स्पृश्य और अस्पृश्य दोनों ही इसे धर्मग्रंथ मानते हैं। हम अगर किसी और ग्रंथ का हवाला देते तो स्पृश्य लोग यह कहने से नहीं चूकते कि हमें यह स्वीकार्य नहीं है। यदि अस्पृष्य लोगों द्वारा शुरू किया गया सत्याग्रह गीता की कसौटी पर खरा उतरता है तो स्पृश्यों के लिए उसका विरोध कर पाना संभव नहीं होगा क्योंकि ऐसा करना एक तरह से गीता को ही अस्वीकार करने जैसा होगा।

अब हम देखते हैं कि अस्पृश्यों का सत्याग्रह क्या गीता की कसौटी पर खरा उतरता है या नहीं। पहले हम जानें कि हमारा शुरू किया हुआ कार्य क्या लोकसंग्रह का कार्य है? कुछ लोग ऐसा सोचते हैं कि अस्पृश्यता को खत्म कर हम स्पृश्य बनें इतना ही इस आंदोलन का उद्देश्य है लेकिन ऐसा मानना गलत है। अस्पृश्यता से केवल अस्पृश्यों का ही नुकसान हुआ हो ऐसा नहीं है उससे स्पृश्यों का भी और इस देश का भी बेहद नुकसान हुआ है। अस्पृश्यता के कलंक से केवल अस्पृश्य ही कलंकित नहीं हुए हैं तो स्पृश्य भी कलंकित हुए हैं। जिसे छोटा माना जाता है उससे उसका अपमान तो होता है मगर जो छोटा मानते हैं उनकी भी नीतिमत्ता कम होती है। यदि अस्पृश्य लोग अस्पृश्यता के दलदल से निकल कर आत्मस्वातंत्र्य प्राप्त करते हैं तो वे अपनी उन्नति तो करेंगे ही साथ ही अपने पराक्रम, बुद्धि और कर्तृत्व से देश की प्रगति के भी कारक होंगे। इस दृष्टि से देखें तो अस्पृश्यता उन्मूलन का आंदोलन केवल पतितोद्धार का आंदोलन न होकर सही मायने में लोकसंग्रह का आंदोलन है। यदि अस्पृश्य केवल अपने स्वार्थ को ध्यान में रख कर केवल अपना ही उद्धार करना चाहते हैं तो उन्हें सत्याग्रह जैसे कठिन असिधाराव्रत को अपनाने की कोई जरूरत नहीं है। क्योंकि, जिस मनुष्यता के लिए, जिस समता के व्यवहार के लिए वे प्रयत्नशील हैं तो उस मनुष्यता को प्राप्त करने के लिए उन्होंने अगर धर्मांतर किया तो वे अपने उद्देश्य में सहज रूप से सफल हो जाएंगे। और अस्पृश्यता उन्मूलन के लिए उन्हें जो शक्ति खर्च करनी पड़ रही है उसे वे अपने शैक्षणिक और आर्थिक हितों के लिए उपयोग में ला सकेंगे। हिंदू धर्मावलंबियों में एक बड़ी अजीब बात है, वह यह कि जब तक कोई व्यक्ति हिंदू समाज का घटक होता है तब तक ही उस पर हिंदू धर्म द्वारा निर्दिष्ट श्रेय और निश्रेय, पाप और पुण्य, और छुआछूत के यम–नियम लागू होते हैं। लेकिन वही आदमी यदि हिंदू धर्म से संबंध तोड़ कर अलग धर्म और समाज का अंग बन जाता है तो हिंदू धर्म द्वारा निर्दिष्ट श्रेय और निश्रेय, पाप और पुण्य, और छुआछूत के यम–नियम उस पर लागू नहीं होते उसके साथ मानव धर्म द्वारा निर्दिष्ट श्रेय और निश्रेय, पाप और पुण्य, और छुआछूत के यम–नियमों के अनुसार व्यवहार किया जाता है। यह इस बात से ही स्पष्ट है कि स्पृश्य लोग अस्पृश्यों को जिस तरह से दूषित मानते हैं उस तरह वे कुत्ते–बिल्लियों या मुसलमानों को दूषित नहीं मानते। क्योंकि कुत्ते–बिल्लियों या मुसलमानों का हिंदू धर्म से संबंध नहीं है इसलिए उनके साथ मानव धर्म के नियमों के अनुसार बर्ताव किया जाता है। ऐसा नहीं है कि अस्पृश्य इस खूबी को नहीं जानते। उन्हें पूरी तरह से पता है कि कोई अस्पृश्य हिंदू धर्म में रहता है तो उसे स्पृश्य हिंदुओं द्वारा कमतर समझा जाता है लेकिन वही अगर ईसाई या मुसलमान हो गया तो वही हिंदू लोग उसके साथ अपनी बराबरी का व्यवहार करते हैं। फिर भी अस्पृश्यता निवारण का यह आसान रास्ता न अपनाकर और दूसरे धर्म में जाकर हिंदू धर्म को कमजोर करने के बजाय उसी में ही रह कर अपने पास जितनी

शक्ति है, उसे लगा कर अपनी मनुष्यता हासिल करने का उन्होंने जो निश्चय किया है उससे यह स्पष्ट है कि उन्होंने जो कार्य शुरू किया है वह केवल अपने कल्याण तक ही सीमित नहीं है अपितु वह हिंदू धर्म के कल्याण के लिए भी है। इसी तरह कोई यह भी नहीं कह सकता कि जो अस्पृश्य यह आंदोलन कर रहे हैं उनमें समभाव नहीं हैं। क्योंकि अस्पृश्यों की मांग विशेषाधिकार की नहीं समान अधिकार की है। अस्पृश्य यह मांग नहीं कर रहे कि हिंदुओं को जो अधिकार हैं वे केवल उन्हीं को प्राप्त हों, औरों को नहीं। उनकी मांग समता की मांग है कि स्पृश्यों को जो अधिकार हैं, वैसे ही अधिकार उन्हें भी प्राप्त हों। इसलिए भी गीता की बताई कसौटी पर भी अगर कसा जाए तो अस्पृश्यों के आग्रह को सत्याग्रह ही कहना पड़ेगा।

बहुत से समाजविरोधी लोग ऐसा कहते हैं कि अस्पृश्यों का कार्य राष्ट्र कार्य है यह हम स्वीकार करते हैं, मगर अस्पृश्यों को मंदिर में प्रवेश का अधिकार ही नहीं है। इनमें से कुछ लोगों की दलीलें काफी मनमोहक लगती हैं। उन्हें पढ़कर यह लगता है कि हमारे तर्क, हमारा पक्ष कमजोर हैं। इन विरोधी लोगों का कहना है कि अगर अस्पृश्य लोग यह सोचते हैं कि स्पृश्यों के मंदिर में जाने से ही उपासना होती है तो यह सही नहीं है, इसलिए अस्पृश्य समाज का मंदिर प्रवेश का प्रयास गलत है। क्योंकि जिस तरह नमाज पढ़ना मुसलमानों में धर्मपालन का ही एक चिह्न हैं उस तरह स्पृश्यों के मंदिरों में देवताओं के दर्शन करना ही हिंदू धर्म का लक्षण (पहचान) नहीं है। हिंदू धर्म में साकार की प्रत्यक्ष पूजा, निराकार का ध्यान और ईश्वर का केवल नामोच्चार उपासना के विविध मार्ग बताए गए हैं। इन उपासनाओं में से कोई भी उपासना अस्पृश्य ना करें। ऐसा हमने कभी नहीं कहा है। हिंदू धर्म के हिसाब से किसी भी एक उपासना को करना पर्याप्त है। जब तक उपासना के और उपास्य की नाना विधियां हिंदू समाज में हैं तब तक अस्पृश्यों के यह कहने में कोई तुक नहीं है कि स्पृश्यों के मंदिर में जाने से ही उपासना घटित होती है। इन विरोधियों को हमारा जवाब है कि हिंदू समाज में उपासना के कई प्रकार हैं और उनमें से किसी एक प्रकार की उपासना करें तो भी हिंदू धर्म का पालन होता है, इसे हम मान्य करते हैं तो भी अगर कोई साकार की प्रत्यक्ष पूजा करना चाहता है तो उसे उसकी छूट क्यों नहीं होनी चाहिए? उपासना का यह मार्ग एक के लिए खुला तो दूसरे के लिए बंद क्यों है? और जिन अस्पृश्यों के लिए वह बंद है उन्होंने अगर उसे खोलने का आग्रह किया तो क्या वह सही नहीं होगा? जहां उपासना के कई प्रकार हैं वहां किसी व्यक्ति को अपने लिए उचित उपासना निर्धारित करने का अधिकार होना ही चाहिए। अस्पृश्य लोग इस अधिकार के लिए संघर्ष कर रहे हैं। उनका पक्ष कमजोर है कहना उनके साथ शुद्ध छल है।

इन विरोधियों की दूसरी दलील यह है कि स्पृश्य लोग अस्पृश्यों को अपने मंदिरों में देवताओं के दर्शन के लिए नहीं जाने देते हैं तो भी हरेक को अपने देवता की

स्थापना की स्वतंत्रता है। जिन अस्पृश्यों को साकार के प्रत्यक्ष पूजन की उपासना पद्धति पसंद हो वह अलग मूर्ति की स्थापना करे स्पृश्य हिंदू समाज ने उन्हें यह स्वतंत्रता दी है केवल उपासना के लिए अस्पृष्यों को स्पृश्यों के देवताओं पर अधिकार जताने की कोई जरूरत नहीं है। जो पढ़े–लिखे मूर्ख यह दलील देते हैं उनसे हमारा सवाल है कि रेलवे अधिकारी अगर रेल में गोरे लोगों के लिए अलग, काले लोगों के लिए अलग डिब्बों का आरक्षण करते हैं तो यह व्यवस्था आप लोगों को स्वीकार नहीं होती। और फिर आप उसके खिलाफ शिकायत क्यों करते हैं? रेलवे अधिकारियों ने यदि गोरे लोगों के लिए अलग डिब्बा आरक्षित किया हो तो भी आपको अन्य डिब्बों में यात्रा करने की स्वतंत्रता है। आपको यात्रा करनी है और अलग डिब्बों में बैठ कर जाने की आपको आजादी है। फिर गोरे लोगों के लिए आरक्षित डिब्बों पर आप अपना हक क्यों जताते हैं? इसका एक ही उत्तर है। वह यह कि यह सवाल केवल यात्रा तक सीमित नहीं है, समानता का है। उपरोक्त दलील को अस्पृश्य भी इसी तरह का जवाब देते हैं। अस्पृश्य लोग मंदिर प्रवेश पर जो जोर दे रहे हैं वह केवल साकार के प्रत्यक्ष पूजन के लिए नहीं है। अस्पृश्य लोगों को मंदिर में प्रवेश करके यह सिद्ध करना है कि उनके प्रवेश से मंदिर दूषित नहीं होते। या उनके द्वारा मंदिर की मूर्ति को स्पर्श करने से मंदिर की मूर्ति की पवित्रता कम नहीं होती। यह सिद्ध करने के लिए अलग देवता की स्थापना से बात नहीं बनती। इसी कारण जिस देवता को पवित्र मान कर स्पृश्य लोग उसकी उपासना करते हैं उस देवता की उपासना करने का आग्रह अस्पृश्य लोग कर रहे हैं, उसके बगैर अस्पृश्यों का उद्देश्य पूरा नहीं होता। अस्पृश्यों का कहना है केवल पापियों के स्पर्ष से देवताओं की पवित्रता कम हो सकती है, हमारे छूने से वह कम नहीं होगी, क्योंकि हम पापी नहीं हैं। इससे यह स्पष्ट है कि उनके आंदोलन का मुख्य सिद्धांत यह है कि भगवान के भक्तों में कोई पवित्र और कोई अपवित्र ऐसा भेदभाव नहीं है। और इसीलिए वे स्पृश्यों द्वारा स्थापित मूर्ति की उपासना करने का आग्रह कर रहे हैं। यह आग्रह सत्याग्रह नहीं है ऐसा कौन कहेगा?

अस्पृश्यों के सत्याग्रह के खिलाफ उपरोक्त आपत्तियां प्रकट करके ही वे लोग चुप नहीं बैठे। उन्होंने कुछ व्यावहारिक आपत्तियां भी गढ़ डाली हैं। इस मुद्दे पर उनका कहना यह है कि संगठन वाले जब कहते हैं कि स्पृश्यों के मंदिर अस्पृश्यों के लिए खुलने चाहिए तो बात अलग है। और जब अस्पृश्य स्पृश्यों से कहते हैं कि आप अपने मंदिर हमारे लिए खोल दीजिए नहीं तो सत्याग्रह करके उन पर अधिकार कर लेंगे तो यह कहना अलग है। क्योंकि स्पृश्य–अस्पृश्य का भेदभाव भले ही गलत हो वह अनंतकाल से चल रहा है या वह उचित न्याय पर आधारित हो, लेकिन यह भेदभाव पैदा होने के बाद हम स्पृश्यों ने मंदिर बनाए हैं, चलाए हैं या उनकी देखरेख की है तो अस्पृश्य उस पर अपना अधिकार कैसे जता सकते हैं? अगर वे यह

अधिकार जताने लगे तो क्या उसे न्यायोचित कहा जा सकता है? अस्पृश्यों के सत्याग्रह का मसला स्पृश्य और अस्पृष्य का केवल मसला नहीं है वरन् न्याय और अन्याय का मसला भी है इस सोच पर इन विरोधियों का सारा दारोमदार है। उनकी नजर में अमरावती के अंबादेवी मंदिर के पंचों ने अस्पृश्यों की अर्जी कूड़ेदान में फेंक दी हो तो भी रीति–रिवाज, परंपराएं और कानून हमेशा उनके पक्ष में हैं क्योंकि सारे समाज में अन्य मामलों में अस्पृश्यता खत्म हो गई हो तो भी एक भी पंच कहे कि यह परंपरा नहीं है तो कायदे के अनुसार और न्याय के अनुरूप वह अस्पृश्यों पर पाबंदी लगा सकता है। यह ऐतराज भी एकदम नादानी भरा है। अस्पृश्यों को यह मानना पड़ेगा कि स्पृश्यों ने मंदिर बनाए, उनकी देखभाल की लेकिन कोई इस बात को स्वीकार नहीं कर सकता कि केवल इस वजह से अस्पृश्यों को यह कहने का अधिकार नहीं है कि स्पृश्यों ने अपने मंदिर उनके लिए खोलने चाहिएं। क्योंकि यह मंदिर भले ही स्पृश्यों ने बनाए हों मगर वे हिंदू धर्म के हैं और हिंदू धर्मावलंबियों के लिए बनाए गए हैं यह कार्य भले ही किसी एक ने किया हो मगर वह सभी हिंदुओं के उपयोग के लिए किया है इसलिए जो भी हिंदू है उन सभी को इस मंदिर में जाकर पूजा करने का अधिकार है इतना ही नहीं हिंदुत्व जितना स्पृश्यों का है उतना ही अस्पृश्यों का भी है। इस हिंदुत्व की प्राणप्रतिष्ठा जितनी वशिष्ठ जैसे ब्राह्मण, कृष्ण जैसे क्षत्रिय, हर्ष जैसे वैश्य और तुकाराम जैसे शूद्र ने की उतनी ही वाल्मिकी, चोखामेला, और रोहिदास जैसे अस्पृश्यों ने भी की। इस हिंदुत्व की रक्षा के लिए हजारों अस्पृश्यों ने अपनी मनुष्यता दांव पर लगाई है व्याध गीता के अस्पृश्य द्रष्टा से लेकर खर्डा की लड़ाई के सिदनाक महार तक जिन भी अस्पृश्यों ने हिंदुत्व की रक्षा के लिए अपनी जान लड़ा दी ऐसे लोगों की संख्या कुछ कम नहीं है। स्पृश्य और अस्पृश्य दोनों ने योगदान देकर हिंदुत्व की इमारत बनाई है उस पर हमला होने पर जान की परवाह किए बगैर उसकी रक्षा की है उस हिंदुत्व के नाम पर बनाए गए मंदिर जितने स्पृश्यों के हैं उतने ही अस्पृश्यों के भी हैं वह जितनी स्पृश्यों की विरासत है उतनी ही अस्पृश्यों की। यह कभी नहीं कहा जा सकता कि एक उस विरासत का अधिकारी है और दूसरा नहीं। अस्पृश्य लोग अलग नहीं हैं। वे हिंदू हैं। हिंदू धर्म उनका है और वे हिंदू धर्म के हैं। इसी आधार पर सभी को यह स्वीकार करना पड़ेगा कि हिंदुओं के मंदिर अस्पृश्यों की विरासत हैं। यदि इस विरासत को स्वीकार कर लिया गया तो पुराने रीति–रिवाजों का सवाल शेष ही नहीं रह जाता। कारण यह है कि कानून की दृष्टि से देखा जाए तो सार्वजनिक मामलों में व्यक्तिगत अधिकार किसी से पंजीकृत करके नहीं पाए जा सकते वे हर एक को पैदाइशी प्राप्त हैं। अगर उन्होंने उसका इस्तेमाल नहीं भी किया हो या उनके इस्तेमाल में अंतराल रहा हो तो इतने भर से वह खत्म नहीं हो जाता। यह कहना जितना मूर्खतापूर्ण है कि कोई व्यक्ति अगर किसी राह पर नहीं चला तो भविष्य में भी उस रास्ते पर वह फिर कभी नहीं जा सकता। उतना ही मूर्खतापूर्ण

यह कहना भी है कि जो कभी सार्वजनिक तालाब या मंदिरों में पहले कभी नहीं गया वह अब भी नहीं जा सकता। इसलिए न्याय की तराजू का यह पलड़ा हमारी तरफ झुक रहा है और हमारा आग्रह सत्याग्रह है इस बारे में किसी अस्पृश्य के मन में किसी तरह की शंका नहीं होनी चाहिए। वह यह भी मान सकते हैं कि हिंदू धर्म की उन्नत अवस्था में ले जाकर वह सारे मानवों का धर्म बने वह मानव धर्म का पर्याय बन जाए हम इसके लिए अवतरित देवदूत हैं।

अब तक हमने जो चर्चा की कि अस्पृश्यों को समान अधिकार हासिल कराने का जो आग्रह है, वह सत्याग्रह है, या नहीं। अब हम विचार करते हैं कि अस्पृश्य लोग कैसे इस सत्याग्रह को करें? पहले सत्याग्रह का तरीका निश्चित होना चाहिए। महात्मा गांधी आधुनिक युग में सत्याग्रह के आंदोलन के पुरस्कर्ता हैं। सभी यह मानते हैं कि महात्मा गांधी ने सत्याग्रह की जो राह बताई उसके अलावा कोई दूसरी राह हो ही नहीं सकती। महात्मा गांधी ने सत्याग्रह का जो रास्ता चुना उसमें हिंसा के लिए कोई गुंजाइश नहीं है। उनकी सोच के मुताबिक जहां हिंसा है वहां सत्याग्रह है ही नहीं। हमें लगता है कि महात्मा गांधी का यह कहना तर्कपूर्ण है, इस बारे में एक राय होना, आम सहमति होना संभव नहीं है। किसी व्यक्ति का आग्रह सत्याग्रह है या दुराग्रह है, यह आग्रह की सफलता के लिए अपनाए गए साधनों पर निर्भर नहीं होता वह पूरी तरह उस कार्य के नैतिक स्वरूप पर निर्भर होता है। अगर यह कार्य सत्कार्य है तो उसके लिए किए गए आग्रह को सत्याग्रह कहना चाहिए और अगर वह कार्य असत्य होगा तो उसके लिए किए गए आग्रह को दुराग्रह कहना पड़ेगा। हिंसा और अहिंसा तो केवल उस आग्रह की सफलता के लिए अपनाए गए साधन हैं जिस तरह कर्म और कर्ता के अनुसार क्रियाएं बदलती हैं, उस तरह साधनों के कारण आग्रह का नैतिक स्वरूप नहीं बदलता। अगर कोई दुराग्रही अपने आग्रह को सफल बनाने के लिए अहिंसा का मार्ग अपनाए तो उसके दुराग्रह को सत्याग्रह नहीं कहा जा सकता। या अगर किसी सत्याग्रही ने सत्याग्रह की सफलता के लिए हिंसा की तो केवल इस आधार पर उसके सत्याग्रह को दुराग्रह नहीं कहा जा सकता। अगर ऐसा होता तो भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को सत्याग्रह की सफलता के लिए हिंसा का रास्ता अपनाने के लिए मजबूर किया उसे क्या कहा जाए? क्या वह पापात्मा था? ऐसा लगता नहीं कि कोई भी हिंदू ऐसा कहने के लिए तैयार होगा। और अगर कोई ऐसा कहने के लिए तैयार हो भी गया तो उसकी बात सभी को रास आएगी ऐसा नहीं कहा जा सकता। कारण यह है कि भले ही अहिंसा परमो धर्मः कहा जाता हो। मगर हर जगह अहिंसा धर्म का पालन करना संभव नहीं होता। हमें आंखों से भले ही दिखाई न दे मगर तर्क से यह समझा जा सकता है कि इस दुनिया में इतने सूक्ष्म जंतु व्याप्त हैं कि हमारी आंखों की पलकें झपकने भर से भी इन जंतुओं के

हाथ–पांव टूट जाते हैं। हवा, पानी, फल आदि सभी स्थानों पर जो सैंकड़ों सूक्ष्म जंतु हैं उनकी हत्या कैसे रोकी जा सकती है? डॉ. जगदीशचंद्र बोस ने जो वैज्ञानिक शोधकार्य, आविष्कार किया है, उससे साबित होता है कि पेड़–पौधों में भी जीव है। फिर इन पेड–पौधों को नष्ट करने वाले ब्राह्मण और नाक में कपड़ा बांध कर घूमने वाले जैन तीर्थंकर अहिंसक होने का दावा कैसे कर सकते हैं? इसी तरह यह कहना तर्कसंगत नहीं होगा कि हर जगह अहिंसा से काम चल सकता है। मान लीजिए, कि कोई आपकी जान ले ले या आपकी पत्नी या बेटी का बलात्कार करने या आपके घर में आग लगाने या आपकी सारी दौलत हड़पने के लिए कोई दुष्ट व्यक्ति हाथ में शस्त्र–हथियार लेकर आता है और आपके पास और कोई रास्ता नहीं है, तो आप क्या करेंगे? हम ऐसे दुष्ट आदमी की अंहिंसा परमो धर्मा का जाप करते हुए उपेक्षा करें। या भलमनसाहत से न समझने पर उसे सबक सिखाए। कोई भी इन दोनों में से दूसरे मार्ग को अपनाए बगैर नहीं रह सकता और कोई नहीं कह सकता कि उसकी करनी शास्त्रों के विरुद्ध है क्योंकि ऐसे समय हत्या का पाप हत्यारे को नहीं लगता। शास्त्रकार कहते हैं कि जो दुष्ट मरता है वह अपने अधर्म से मारा जाता है। केवल प्राचीन विधिवेत्ताओं ने ही नहीं तो आधुनिक फौजदारी कानून में भी आत्मसंरक्षण के लिए हिंसा करने के अधिकार को स्वीकार किया है। हिंसा करना भले ही गलत हो मगर यदि उसके बगैर आत्मरक्षा संभव नहीं है तो हिंसा को उचित समझा जाता है। भ्रूण हत्या को बहुत गलत माना गया है मगर वही बच्चा अगर मां की जान के लिए खतरा बन जाए तो उसे काट कर निकालने पर भी कोई ऐतराज नहीं करता। यही दलील सत्याग्रह की सफलता पर भी लागू करना जरूरी है। और यदि सत्याग्रही आदमी को हिंसा करनी पड़े तो वह यह कहते हुए क्षम्य मानी जाएगी कि उसके सामने और कोई चारा ही नहीं था। इस दृष्टि से गांधी का सत्याग्रह का मार्ग अव्यावहारिक सिद्ध होता है। मगर यह कहना भी भ्रामक है कि वह अहिंसक है। अगर हिंसा का केवल यही सीमित अर्थ किया जाए कि हिंसा यानी हत्या। तभी हिंसा और अहिंसा में कोई फर्क किया जा सकता है। लेकिन हिंसा का अर्थ केवल दूसरों की जान लेना ही नहीं तो दूसरे प्राणियों के शरीर और मन को चोट पहुंचाना भी इसमें शामिल है। अहिंसा याने किसी भी सचेतन प्राणि को दुख न दिया जाए। यदि अहिंसा के इस व्यापक अर्थ को अपनाया जाए तो महात्मा गांधी की अहिंसा एक तरह की हिंसा ही है, ऐसा कहना पड़ेगा। इसमें कोई संदेह नहीं है कि उनकी सत्याग्रह की पद्धति से दूसरे प्राणियों के शरीर पर भले ही आघात न होता हो मगर उनकी आत्मा को या मन को दुख पहुंचता है। गांधीजी का सत्याग्रही आदमी मानव हत्या भले ही न करे तो भी अपने आग्रह के कारण विरोधियों के मन की शांति को भंग करता ही है। इसलिए यह कहना पड़ता है कि महात्मा गांधी का यह कहना अपूर्ण है कि उनके सत्याग्रह से बिल्कुल हिंसा नहीं होती। इसलिए सत्याग्रही को उसकी सफलता के

लिए यह नीति अपनानी चाहिए कि जब तक संभव हो अहिंसा और जरूरत पड़ने पर ही हिंसा यह नैतिकता की दृष्टि से भी योग्य है। गांधी जी ने अहिंसा पर जो इतना जोर दिया है वह केवल इसलिए नहीं कि गांधीजी अहिंसावादी हैं। जोर देने के पीछे उनके कारण एकदम अलग हैं। महात्मा गांधी अपनी सत्याग्रह की मीमांसा में कहते हैं कि सत्य क्या है और उसे कैसे तय किया जा सकता है, इस बारे में कोई निश्चित कसौटी नहीं बनाई जा सकती। उन्हें लगता है कि जिसे वह सत्याग्रह कहते हैं उसे ही दूसरे लोग दुराग्रह कह सकते हैं उन्होंने अपने यह विचार हंटर कमेटी के सामने पेश किए गए लिखित प्रतिवेदन में व्यक्त किए हैं। उनकी राय है कि जहां सत्य को लेकर वास्तविक मतभेद हो सकते हैं वहां हिंसा करना उचित नहीं होगा। और इस कारण ही उन्होंने अपने सत्याग्रह में हिंसा को स्थान नहीं दिया। इससे स्पष्ट है कि कार्य की सत्यता के बारे में दुविधा न हो तो उसके लिए शुरू किए गए सत्याग्रह की सफलता के लिए हिंसा करनी पड़े तो गांधीजी उस पर ऐतराज नहीं करेंगे। यह विवेचन सिर्फ इसलिए किया गया है कि हिंसा, सत्याग्रह के नैतिक स्वरूप में बाधक नहीं है इस मुद्दे की इससे ज्यादा चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है। यदि सत्याग्रह को सफल बनाने के लिए हिंसा करने पर कोई सैद्धांतिक ऐतराज न हो तो भी आज की स्थिति में ऐसा करने के लिए किसी के पास फुर्सत नहीं है। इस देश की सारी जनता निःशस्त्र होने के कारण सत्याग्रह की सफलता के लिए अहिंसा का एकमात्र रास्ता ही खुला है। और सत्याग्रह करने वाले अस्पृश्यों के लिए इस एक ही रास्ते के भरोसे चलना मजबूरी है। और इसके अलावा अनुभवों के आधार पर यह कहा जा सके कि अस्पृश्यों की समस्याओं को हल करने में यह रास्ता अपर्याप्त है क्योंकि अस्पृश्यता निवारण का सत्याग्रह अभियान हाल ही में शुरू हो रहा है। इसलिए जो सत्याग्रह करना है वह अहिंसात्मक ही होगा इसके अलावा और कुछ नहीं यह हम सभी को अच्छी तरह ध्यान में रखना चाहिए।

यह सत्याग्रह किसके खिलाफ करना है इसके बारे में चर्चा करने की जरूरत है। अस्पृश्य लोग जिन समान अधिकारों की मांग कर रहे हैं वह स्पृश्य लोगों से कर रहे हैं क्योंकि अगर उनके न्यायपूर्ण अधिकारों का कोई विरोध करेगा तो वे स्पृश्य लोग ही होंगे। अर्थात्, अस्पृश्य लोगों को ऐसा लगना संभव है कि सत्याग्रह स्पृश्य लोगों के खिलाफ करना है मगर यह सोच पूरी तरह से सही नहीं है। जरा सोचिए, कल अस्पृश्य लोग किसी सार्वजनिक तालाब या किसी सार्वजनिक मंदिर में अपना अधिकार हासिल करने के आग्रह के साथ गए और स्पृश्य लोग उनका प्रतिकार करने के लिए आगे आएं तो क्या होगा इस सवाल पर विचार किए बगैर इस बात को पूरी तरह नहीं समझा जा सकता कि सत्याग्रह किसके खिलाफ करना है। अस्पृश्य लोग सत्याग्रह करने के लिए तैयार हों और अपेक्षा के अनुरूप स्पृश्य लोग विरोध

करें और उनके विरोध के कारण शांति भंग होने के आसार नजर आने लगें तो सरकार को शांति स्थापित करने के लिए हस्तक्षेप करना पड़ेगा क्योंकि शांति बनाए रखना सरकार का मुख्य कर्त्तव्य है और सरकार हस्तक्षेप करेगी तो कौन सी नीति अपनाएगी, यह जाने बगैर यह तय नहीं किया जा सकता कि सत्याग्रह किसके खिलाफ करना है। सरकार ने अगर अस्पृश्य लोगों का साथ दिया और सरकार न्यायपूर्ण अधिकारों पर अमल करने वाले लोगों को सरकार द्वारा मदद किया जाना न्यायपूर्ण है, और यदि सरकार ने न्यायपूर्ण ढंग से व्यवहार किया तो यह सवाल चुटकी से हल हो जाएगा। लेकिन यदि सरकार ने ऐसा नहीं किया और पलटी मार ली और वे सत्याग्रही अस्पृश्यों से यह कहने लगे कि आप नए–नए तरीकों से अजीबोगरीब काम करने लगे हैं और इससे शांति भंग हो रही है, और इसलिए हम आपको मना कर रहे हैं। सरकार ने अगर ऐसा आदेश निकाला तो आगे क्या होगा? अर्थात्, यह स्पष्ट है कि अस्पृश्यों को जो सत्याग्रह करना पड़ेगा वह दिखने में भले ही स्पृश्यों के खिलाफ हो मगर अंततः वह सरकार के खिलाफ होगा। इसलिए अस्पृश्यों को यह समझ लेना चाहिए कि इस सत्याग्रह में क्या जिम्मेदारी है। संक्षेप में इस सत्याग्रह में हमें मंदिर या तालाब पर जाने के आग्रह को मंजिल तक पहुंचाने के लिए अस्पृश्य लोगों के सामने सरकारी आदेश को भंग करने के अलावा कोई रास्ता नहीं होगा और सरकार सत्याग्रह करने वाले अस्पृष्य लोगों को कानून तोड़ने के जुर्म में जेल में डाले बगैर नहीं रहेगी। इसलिए सत्याग्रह करने वाले अस्पृश्य लोगों को यह जानकर भी सत्याग्रह के लिए अपनी तैयारी करनी चाहिए कि इस काम में आवश्यकता पड़ने पर जेल भी जाना पड़ सकता है। असल में अस्पृश्यता इतनी अपमानजनक बात है कि उसके उन्मूलन के लिए कुछ लोगों को जान भी गंवानी पड़े तो उसके लिए तैयार रहना चाहिए। स्पृश्य लोग ऐसा मानते हैं कि हमारे स्पर्श से अपवित्र हुई वस्तु गोमूत्र छिड़कने से पवित्र हो जाती है। स्वधर्म के व्यक्ति के स्पर्श से जो दूषित होता है वह पशु के मूत्र को छिड़कने से शुद्ध होता है, यह कहना कठिन है कि मानवीय स्पर्श से दूषित होने की घृणित कल्पना ज्यादा निंदनीय है या उसे पशु के मूत्र से शुद्ध करने की भावना ज्यादा निंदनीय है। लेकिन स्पृश्यों की नजर में एक बात तो स्पष्ट है कि पशु के मलमूत्र में जितनी पवित्रता है उतनी अस्पृश्य लोगों में नहीं है। किसी भी स्वाभिमानी व्यक्ति को ऐसा नहीं लगेगा कि यह स्थिति जीवन जीने के योग्य है। केवल जिंदा रहना ही इस दुनिया का एकमात्र पुरुषार्थ नहीं है। जीने के हजार तरीके हैं। काकबलि खाकर कौवे भी बहुत साल जीते हैं। लेकिन कोई इसके जीने को पुरुषार्थ नहीं कहता। आज नहीं तो कल या सौ साल बाद मृत्यु सभी को आने वाली है। तो फिर उससे डरना या उसे लेकर रोना क्यों? यह शरीर आखिरकार नाशवान है। आत्मा के कल्याण के लिए इस दुनिया में जो कुछ भी करना है, उसे करने के लिए यह नाशवान मनुष्य देह ही एक साधन (माध्यम) होने के कारण कहा

गया है कि “आत्मनाम सततं रक्षेत दारैरपि धनैरपि” यह सही है कि शास्त्रों में कहा गया है कि पत्नी, बच्चों या संपत्ति इन सबसे पहले हमें अपनी रक्षा करनी चाहिए। तथापि इस दुर्लभ मगर नाशवान मनुष्य देह की बलि चढा कर इससे भी ज्यादा शाश्वत किसी वस्तु को प्राप्त करने के लिए उदाहरणार्थ – देश, सत्य, उद्देश्य, व्रत, यश, सम्मान या भूतमात्र के लिए अनेक महापुरुषों ने अनेक प्रसंगों पर कर्तव्य की अग्नि में अपने प्राणों की आहुति दी है। हमें लगता है कि जिस तरह महाभारत में वीरपत्नि विदुला ने अपने पुत्र से कहा था कि बिस्तर में पडे रह कर या सौ वर्ष निरर्थक जीवन गंवाने से बेहतर है कि पल भर के लिए पराक्रम की ज्योति जला कर मर जाए। अब ऐसा समय आ गया है जब हर अस्पृश्य माता को अपने पुत्रों से यह कहना चाहिए। लेकिन अस्पृश्यों को इतना बड़ा असिधाराव्रत पालन करने के लिए कोई नहीं कह रहा। केवल जेल जाने के लिए तैयार रहो, इसके अलावा दूसरे किसी स्वार्थत्याग की मांग नहीं है और इतना ही न हो रहा हो तो यह कहना पडेगा कि अस्पृश्य लोग पुरुष नहीं हिजड़े हैं। इस कारण महाभारत में कहा गया है –

एतावानेव पुरुषो यदमर्षी यदक्षमी।
क्षमावान्निरमर्षश्च नैव स्त्री न पुनःपुमान्।।

जिन पुरुषों को अन्याय पर गुस्सा आता है और जो अपमान सहन नहीं करते उन्हीं को पुरुष कहा जाना चाहिए। जिस पुरुष को गुस्सा नहीं आता वह और नपुंसक एक जैसे हैं। लेकिन हमें उम्मीद है कि अस्पृश्यता निवारण के लिए जान निछावर करने का निश्चय हालांकि थोड़े से अस्पृश्यों का ही है मगर अस्पृश्यता निवारण के लिए जेल जाने का निश्चय बहुत सारे अस्पृश्यों ने किया है और अगर यह सच है तो इस काम में सफलता मिलकर रहेगी। क्योंकि यदि सरकार अन्याय करके अस्पृश्य सत्याग्रहियों को जेल में डाले तो भी वह कितने दिन जेल में रखेगी? और कितने लोगों को जेल भेजेगी? और स्पृश्य लोग भी कितने दिनों तक सरकार का आधार लेते रहेंगे! आखिर में हार होने पर सरकार को भी इस बात पर विचार करना पड़ेगा क्योंकि सरकार हुई तो क्या हुआ, उसे भी लोकलाज है और सरकार को कुछ समय तक लोकलाज न भी हो तो उसे ऐसा अनुभव कराना भी अस्पृश्यों के हाथ में है। शांति भंग हो रही है इसलिए अगर सरकार हमारे न्यायपूर्ण अधिकारों के पाने में बाधक बनेगी तो हम विकसित राष्ट्रों के न्याय कोर्ट राष्ट्र संघ में फरियाद करके सरकार को उसके अन्याय के लिए शर्मसार कर सकते हैं। वैसे ही जिन स्पृश्य लोगों की हेकड़ी के लिए, अधिकारों के लिए नहीं सरकार अस्पृश्यों को दंडित कर रही है, उन स्पृश्य लोगों को भी इस पर विचार करना पड़ेगा। स्पृश्य लोगों में अस्पृश्यों के प्रति प्रेम न भी हो तो भी उन्हें अपनी सुरक्षा की चिंता है ही और इस चिंता के कारण वे झुलस न भी रहे हों तो उन्हें झुलसने के लिए मजबूर करना हमारे हाथों

में है। और वह हम सत्याग्रह के द्वारा कर सकते हैं। यदि स्पृश्य लोगों ने निश्चय किया कि अस्पृश्यों की परीक्षा लेंगे तो ज्यादा से ज्यादा सत्याग्रह असफल होगा। मगर इससे किसका नुकसान होनेवाला है? स्पृश्यों का सत्याग्रह करने के बाद भी यदि अस्पृश्य लोगों को, अगर यह अनुभव हुआ कि हिंदू धर्म उन्हें महत्व नहीं दे रहा तो जो अस्पृश्य लोग आज धकेलने, दुत्कारने पर भी हिंदू धर्म से बाहर नहीं जाते, उन्हें यह विश्वास हो जाएगा कि हिंदू धर्म पत्थरों का धर्म है। उससे हम अपना सर फोड़ लें तो भी कुछ नहीं होने वाला। तब वे यह कहते हुए दूसरे धर्मों में जाने के लिए तैयार हो जाएंगे कि स्पृश्यों लोगों! लो अपना धर्म! लेकिन इस बात की संभावना नहीं है कि स्पृश्य लोग इस मसले को इस हद तक जाने देंगे लेकिन हमें अपना सत्याग्रह इतने बड़े पैमाने पर करना चाहिए कि सरकार के जेलें भर जाएं और सत्याग्रही कैदियों के लिए जगह न बचे और स्पृश्य लोगों को यह बच्चों का खेल न लगे वरन् उससे उन्हें झटका लगना चाहिए।

सत्याग्रह की सफलता का विचार करते समय यह जानना जितना जरूरी है कि सत्याग्रह किसके खिलाफ करना है। उतना ही इस बात के बारे में विचार करना भी जरूरी है कि सत्याग्रह किसे करना चाहिए। सत्याग्रह अपने मानवी हकों को प्राप्त करने का उपाय तो है ही। उस उपाय को फलदायी बनाने के लिए अस्पृश्य समाज के जितने भी स्त्री–पुरुष भाग लें उतना ही उसकी सफलता के लिए आवश्यक है। लेकिन हमारी नजर में सत्याग्रह केवल एक व्यावहारिक उपाय ही नहीं है तो वह एक तरह से आत्मशुद्धि करने के लिए शुरू किया गया यज्ञ है। इस यज्ञ में हर अस्पृश्य ने छलांग लगा कर अपने आप को शुद्ध कर लेना चाहिए। यह बात सही है कि स्पृश्य लोग अस्पृश्य लोगों को अशुद्ध और अपवित्र मानते हैं, लेकिन यह भी बात उतनी ही सही है कि अस्पृश्य लोग अपने आप को अशुद्ध और अपवित्र मान कर व्यवहार करते हैं। अब तक स्पृश्य लोगों का वर्चस्व होने के कारण अस्पृश्य लोगों को यह आदत पड़ गई है कि स्पृश्य जो बताएं वह करना और जिस तरह का बर्ताव करने के लिए कहें वैसा बर्ताव करना। अस्पृश्यों के मन में यह भावना भर गई है कि स्पृश्य लोग श्रेष्ठ हैं और हम छोटे हैं। वे हमारे नायक हैं और हम उनके नौकर हैं। इस कारण ही अस्पृश्यता टिकी रही है। इस भावना को जलाए बगैर आत्मसम्मान की भावना अस्पृश्य लोगों में जागृत नहीं होगी और वह जागृत हुए बिना अस्पृश्यता निवारण नहीं होगा। इस आत्मशुद्धि के लिए हर अस्पृश्य के लिए इस सत्याग्रह में भाग लेना जरूरी होने के बावजूद यह संदेह होना बिल्कुल स्वाभाविक है कि सांसारिक कामों में फंसे अस्पृश्य लोग इस सत्याग्रह में क्या प्रत्यक्ष रूप से भाग ले पाएंगे या नहीं। और अगर ऐसा हुआ, अगर बहुत कम लोगों ने इसमें भाग लिया और पर्याप्त लोगों ने सत्याग्रह में भाग नहीं लिया तो उससे खास फायदा नहीं होगा। कारण यह है

कि सत्याग्रह दुराग्रही लोगों को सत्य का अवलंबन करने के लिए बाध्य करने का मार्ग है। ऐसे दुराग्रही व्यक्ति को त्राहि–त्राहि करने के लिए अगर इतने बड़े पैमाने पर सत्याग्रह नहीं हुआ तो वह अपना दुराग्रह छोड़ेगा नहीं। इसलिए हमारा अनुरोध है कि हमें सांसारिक कामों से मुक्त हो चुके या सांसारिक कामों में न पड़े हुए पांच हजार अस्पृश्य युवकों का एक सत्याग्रह दल तैयार करना चाहिए और इस दल के जरिए जहां–जहां सत्याग्रह करने की जरूरत पड़े वहां–वहां सत्याग्रह किया जाए इस योजना पर अगर अमल किया गया तो सत्याग्रह की योजना में कोई कमी नहीं रहेगी। और पांच हजार लोगों के इतने बडे सत्याग्रही दल को हम भेज सकें तो सत्याग्रह की सफलता के बारे में कोई संदेह नहीं रहेगा। इस तरह के दल को तैयार करने के लिए आर्थिक मदद चाहिए। और इसके लिए कुछ समय भी लगेगा। यह होने तक अस्पृश्य लोग जिस थोड़ी बहुत संख्या में सत्याग्रह कर सकते हैं, उतनी संख्या के साथ सत्याग्रह शुरू करें।

हम जानते हैं कि कई स्पृश्य लोग अस्पृश्यों के सत्याग्रह के मार्ग में बाधक बन रहे हैं। इन स्पृश्य लोगों की दलील है कि अस्पृश्य लोगों के समान अधिकारों का मुद्दा अस्पृश्यों के सत्याग्रह से हल नहीं होगा। इस समस्या को स्पृश्यों के बीच आंदोलन कराकर हल करना चाहिए। और जिस दिन स्पृश्य लोग अपनी मर्जी से मंदिरों पर यह सूचनापट्ट लगाएं कि अस्पृश्य भी पूजा के लिए, भगवान के दर्शन के लिए आएं। उस दिन अस्पृश्यों को मंदिर में प्रवेश करना चाहिए, तब तक वे कोई जल्दी न मचाएं! लेकिन क्या स्पृश्य लोग अपनी मर्जी से इस समस्या को हल करेंगे? हमें उसकी बिल्कुल उम्मीद नहीं है। क्योंकि उन लोगों का कहना है कि यह बहुमत, दया, ममता, नैतिकता या समान अधिकार का सवाल नहीं है। यह केवल धर्म के सिद्धांतों का सवाल है। अस्पृश्य इस सवर्ण रूपी विराट पुरुष का कोई भी अंग नहीं बन सकते क्योंकि ब्राह्मणमुख, क्षत्रियबाहु, वैश्य जांघों और शूद्र पांव बनने के बाद अस्पृश्य लोगों के लिए इस विराट पुरुष में कोई स्थान बचता ही नहीं। अस्पृश्य लोग इस हिंदू विराट पुरुष के पैरों की जूती हैं। जूता कभी शरीर का हिस्सा हो ही नहीं सकता। उसी तरह अस्पृश्य कभी भी हिंदू धर्म के साथ एकरस नहीं हो सकते। उनकी ऐसी इच्छा मूर्खतापूर्ण और गलत सोच है। अस्पृश्य वर्ग मुसलमान वर्ग की तरह ही परिधि के बाहर का वर्ग है। वह स्वधर्म रूपी विराट पुरुष के पांवों के परे का और शरीर से सीधे तौर पर संबंध न रखने वाला हिस्सा है। जिन लोगों के विचार इस तरह के हैं उन लोगों की नीयत पर और सदभाव पर अस्पृश्य लोग विश्वास करके चुपचाप बैठे रहें इस तरह का उपदेश छलपूर्ण न हों तो भी मूर्खतापूर्ण तो अवश्य है ही।

कुछ स्पृश्य लोग कहते हैं कि यदि अस्पृश्य लोगों ने सत्याग्रह शुरू किया तो वह सफल होना संभव नहीं है। क्योंकि उन्होंने अगर सत्याग्रह के शस्त्र का स्पृश्य लोगों

के खिलाफ उपयोग किया तो कुछ स्पृश्य लोगों की सहानुभूति अस्पृश्यता निवारण कार्यक्रम के साथ जो है वह भी वे गंवा बैठेंगे। क्योंकि यह आघात सारे स्पृश्य समाज पर होगा। और सुधारवादी और सनातनी स्पृश्य इस हमले का मुकाबला करने के लिए एकजुट हुए बिना नहीं रहेंगे। लेकिन हम इन लोगों से पूछते हैं कि हमें यह बताने की जरूरत नहीं है कि स्पृश्य लोगों में से एक हिस्सा हमारे साथ है। हम यह अच्छी तरह से जानते हैं कि आपको अगर सचमुच हमसे सहानुभूति है तो हमें, कुछ स्पृश्य लोग हमारे साथ हैं की वजह बताकर हमें सत्याग्रह से रोकें नहीं। यदि आप सचमुच हमारे साथ हैं और हमारे साथ हो रहे अन्याय को लेकर आपको गुस्सा या चिढ़ है तो आप भी हमारे सत्याग्रह में शामिल होइए। इसी में आपकी सहानुभूति की असली परीक्षा है। नहीं तो आपकी दोस्ती हो या द्वेष हमारे लिए दोनों बराबर हैं।

"अमर्षशून्येन जनस्य जन्तुना न जातहार्देन न विद्विषादराः!!"

अमेरिका में जब गुलामी की प्रथा का उन्मूलन करने की मुहिम शुरू हुई तब अमेरिका के गोरे लोगों में दो गुट, दो खेमे थे। दक्षिण के गोरे लोग इस मुहिम के खिलाफ थे तो उत्तर के गोरे लोग इस मुहिम के पक्ष में थे। फिर भी उत्तर के राज्यों के गोरे लोगों ने गुलामी की जंजीरों में जकड़े हुए अश्वेत लोगों को यह ब्राह्मणी उपदेश नहीं किया कि दक्षिण के कुछ गोरे लोग तुम्हारे खिलाफ हैं, इसलिए तुम गुलामी के खिलाफ आंदोलन मत करो। इसके विपरीत अश्वेत लोगों से गठजोड़ करके उन्होंने उनके साथ सहयोग करके उनकी स्वतंत्रता का विरोध करने वाले अपने जातिबंधुओं को स्वर्ग की राह दिखाई और किसी भी तरह की कोताही नहीं की। इसी तरह स्पृश्य वर्ग के जो लोग आपकी मांग को उचित समझते हैं उन्हें अश्वेत लोगों के प्रति गोरे लोगों ने सहानुभूति दिखाते हुए जैसा व्यवहार किया वैसा अगर आप भी करके दिखाएंगे तो ही हम आप पर विश्वास रखेंगे, ऐसा बिल्कुल साफ–साफ बताया जाना चाहिए। नहीं तो ये लोग सहानुभूति के नाम पर जो अन्याय एक भी दिन बर्दाश्त नहीं करना चाहिए उस अन्याय को आगे भी स्वखुशी से बर्दाश्त करने के लिए प्रवृत्त (बाध्य) करेंगे। तीसरी श्रेणी के स्पृश्य लोग कहते हैं कि स्पृश्य और अस्पृश्य लोग एक ही समाज के अंग हैं। सत्याग्रह अपने लोगों के खिलाफ नहीं दूसरों के खिलाफ करना होता है। ऐसा न भी हो तो भी ऐसे समय जब हिंदू समाज पर बाहर से हमले हो रहे हैं अस्पृश्यों को उसके निवारण में मदद करने के बजाय आपस में वैमनस्य (विवाद) पैदा करना सही नहीं है। यह उपदेश बहुत अच्छा है! लेकिन इसे अस्पृष्य ही केवल क्यों मानें? जिस धर्म में उनके लिए कोई जगह ही नहीं है, जहां उन्हें पांव की जूती समझ कर व्यवहार किया जाता है, उस धर्म की रक्षा के लिए हम क्यों अपनी जान दें? यह जिम्मेदारी स्पृश्य लोगों की है क्योंकि हिंदू धर्म के अधिकारों पर उनका एकाधिकार है। "खानेकू हम और लडनेकू तुम" का उपदेश पागलपन है। अस्पृश्य लोग

इतने मूर्ख नहीं हैं कि उसे चुपचाप मान लें। उन्हें अब यह लगने लगा है कि अब तक हिंदू धर्म की रक्षा करके उन्होंने बहुत बड़ी गलती की। ऐसी मानसिकता वाले अस्पृश्य लोगों को उपरोक्त उपदेश करने का अधिकार स्पृश्य लोगों को है, ऐसा हमें नहीं लगता। विरोधी पक्ष की मजबूरी का फायदा उठा कर अपना काम निकाल लेना यह व्यावहारिक है। अपने सामाजिक अधिकारों को हासिल करने के लिए अस्पृश्य लोगों ने स्पृश्य लोगों के प्रति यही नीति अपनाई है। यह नैतिकता की दृष्टि से उचित ही नहीं होगा। मगर राजनीतिक अधिकार हासिल करने के लिए युद्ध के समय सरकार के रास्ते में रोडे अटकाने वाले स्पृश्य लोगों को हमारी आलोचना करने का अधिकार कैसे हासिल हो सकता है? जो लोग यह कहते हैं कि आपस में झगड़ा न करें, उन्हें हमारा सुझाव है कि तुम्हारी गीता क्या कहती है यह देखो। गीता में भगवान ने अर्जुन को जो उपदेश दिया है उसमें इससे अलग क्या कहा है? कौरव –पांडवों की सेनाएं जब लड़ाई के लिए तैयार होकर कुरुक्षेत्र में खड़ी थीं, तब अर्जुन ने युद्ध करने से पहले अपना रथ बीच में ले जाकर खड़ा कर दिया और दोनों सेनाओं की तरफ नजर दौड़ाई और देखा कि कौरवों की सेना में भी अपने ही स्नेही, नजदीकी और गुरु हैं। तो उसे दिखाई दिया कि युद्ध का स्वरूप क्या है? तो उसने युद्ध करने से इनकार कर दिया और अपने हाथों में लिए धनुष–बाण को नीचे रख कर वह बैठ गया। ऐसा नहीं कि श्रीकृष्ण नहीं जानते थे कि कौरव और पांडव एक दूसरे के रिश्तेदार हैं। हालांकि कौरव, पांडवों का हक देने के लिए तैयार नहीं थे, तो भी भीष्म, द्रोण, विदुर आदि लोग उनके अनुकूल थे। और श्रीकृष्ण जानते थे कि कुछ समय बाद उनके विचारों का परिणाम कौरवों पर हो सकता था। आपस में झगड़े न करें यह सिद्धांत अगर सत्य होता तो अर्जुन के व्यवहार को देख कर भगवान कृष्ण ने यह क्यों नहीं कहा कि तुम जो कह रहे हो वही सही है, तुम्हें जो अनुभूति हुई उसे देख कर मुझे खुशी हो रही है? इसके विपरीत उन्होंने अर्जुन से कहा कि तुम्हें यह दुर्बुद्धि कैसे हुई? यह कायरता तुम्हें शोभा नहीं देती। इस दुर्बलता को छोड़कर युद्ध के लिए उठ कर खड़े हो जाओ। इतना ही नहीं, यह देखकर भी कि इस युद्ध में अनगिनत लोग मारे जाएंगे, उन्होंने इस बात को कौड़ी का भी महत्व नहीं दिया। और यह सब इसलिए हुआ, कौरवों द्वारा पांडवों के छीने गए राज्य को पाने के लिए! जिस उद्देश्य के लिए अर्जुन सत्याग्रह कर रहा था, वह उद्देश्य और जिस उद्देश्य के लिए अस्पृश्य सत्याग्रह करने वाले हैं उस उद्देश्य की तुलना एकदम महत्त्वहीन है। पांडव राज्य के लिए लड़ रहे थे, अस्पृष्य लोग मानवीयता के लिए लड़ रहे हैं। मानवीयता जाने पर इन्सान का सब कुछ चला जाता है, लेकिन राज्य के जाने से मानवीयता तो बाकी रहती है। राज्य के बगैर पांडव कोई मर नहीं जाते, लेकिन मानवीयता के बगैर अस्पृश्य लोग जीते जी मरे (मुर्दे) की तरह हैं। यदि राज्य जैसे शूद्र उद्देश्य के लिए श्रीकृष्ण अर्जुन को गुरुहत्या, बंधुहत्या और कुलक्षय जैसे घृणित कर्म करने के लिए प्रेरित करें, तो मानवीयता की रक्षा

के अति उत्तम या श्रेष्ठ उद्देश्य के लिए अस्पृश्य सामान्य सा हठयोग भी न करें ऐसा स्पृश्यों का जो कहना है यह फिजूल है।

असल में इन स्पृश्यों की बातें सुनने की कोई जरूरत नहीं है क्योंकि वे हमारे कितने भी हितचिंतक हों वे हमें इस बारे में उपदेश करने के लिए अपात्र हैं क्योंकि यह सवाल अधिकारों का, जाति का, स्वार्थ का व मानसिकता का है, विद्या, ज्ञान और बुद्धि का नहीं है। इसलिए उनके स्वार्थपूर्ण उपदेश को न सुन कर उनसे साफ कहना चाहिए कि आप हमें उपदेश देने के चक्कर में न पड़ें। कोई भी किसी भी युद्ध से पहले राजनयिक बातचीत होती है, उसका कोई उपयोग न होने पर फिर युद्ध की नौबत आती है। मुझे लगता है कि अस्पृश्यता उन्मूलन के काम पर काफी समय तक बातचीत हो चुकी है। जबसे अस्पृश्यता ने हिंदू धर्म में प्रवेश किया तबसे अनेक महात्माओं ने उसके खिलाफ कोशिश की, लेकिन इस बारे में स्पृश्य लोगों का दुराग्रह इतना भयंकर है कि अपरिहार्य प्रसंगों को छोड़ दें तो उन्होंने इस मामले में सुई की नोक पर जितनी मिट्टी आती है उतनी मिट्टी भी पांडवों को नहीं देंगे, ऐसा कहने वाले पाषाणहृदयी और अधर्मी दुर्योधन से कुछ ज्यादा उदारता दिखाई है ऐसा कोई नहीं मानेगा। और ऐसा लगता भी नहीं कि आगे उनकी प्रवृत्ति में आत्मप्रेरणा से अस्पृश्यों के लिए कोई अनुकूल परिवर्तन होगा। असल में देखा जाए तो हमने इस अन्याय को स्वीकार किया इसलिए वह आज तक चलता रहा। हमने अगर उसे ठुकराने का मनःपूर्वक निश्चय किया तो कोई भी उसे हम पर लाद नहीं सकता। जिस ब्राह्मण धर्म ने हमें हीन बना दिया, उस ब्राह्मणी धर्म ने कायस्थों की जाति पर भी हीनता की मुहर लगाने की कई बार कोशिश की, लेकिन उस जाति के लोगों ने समय पर ही प्रयत्न करके अपना दर्जा बरकरार रखा। काल का चक्का जब उलटा घूम रहा था तब भी हमारे पूर्वज गहरी नींदे में सोते रहे। अन्य लोगों की तरह हमारे लोगों ने भी आंखें खुली रख कर अन्याय का प्रतिकार किया होता तो आज अस्पृश्य यह केवल इतिहास का शब्द भर रह जाता। पिछड़ी पीढ़ी में ऐसा करने का निश्चय नहीं किया, यह अत्यंत निंदनीय लेकिन पिछली पीढ़ी में ज्ञान का प्रसार न होने के कारण उनके बेपरवाही के बर्ताव को क्षम्य कहा जा सकता है। मगर इस पीढ़ी की बात अलग है। इस पीढ़ी को वह ज्ञान प्राप्त हुआ है जो अस्पृश्यों को कभी प्राप्त नहीं हुआ और इसलिए पिछली पीढ़ी के हाथ से जो काम नहीं हुए, वे काम करना इस पीढ़ी का कर्त्तव्य है। अगर इस पीढ़ी ने इस कर्त्तव्य को पूरा नहीं किया तो यही कहना पड़ेगा कि वह कुलदीपक नहीं कुलंगार है।"

अध्यक्ष के भाषण के बाद विषय निर्धारण समिति के चुनाव हुए और सभा का काम दूसरे दिन के आठ बजे तक के लिए स्थगित किया गया।

इस सम्मेलन में निम्न सज्जन मुख्य रूप से दिखाई दिए – अमरावती के डॉ. पंजाबराव देशमुख, बैरिस्टर तिडके, श्री चौबल वकील, श्री गवई एमएलसी, श्री के. बी. देशमुख, डॉ. भोजराजा, डॉ. पटवर्धन, श्री उत्तमराव कदम आदि लोगों के अलावा इस सम्मेलन के लिए बाहर से आए श्री नानासाहब अमृतसर, मोरशी, श्री दे. वी. नाईक, संपादक "ब्राह्मण–ब्राह्मणेतर" श्री दत्तात्रय विठ्ठल प्रधान दादर, श्री रा. दा. कवली और श्री द. रा. राराविकर आदि उपस्थित थे।

उस दिन रात में विषय निर्धारक की बैठक हुई जिसमें दूसरे दिन सम्मेलन में रखे जाने वाले प्रस्तावों पर चर्चा हुई।

14 नवंबर, 1927 को सुबह 7 बजे अमरावती के अस्पृश्य छात्रों की तरफ से डॉ. अम्बेडकर को मानपत्र देने और पान–सुपारी का कार्यक्रम हुआ। डॉ. अम्बेडकर और अन्य मेहमानों का सभी विद्यार्थियों के साथ फोटो खींचा गया। छात्रों के मानपत्र का जवाब देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने संक्षेप में बताया कि छात्र किस तरह शीलवान बनें और वे अपने कुल को लगे अस्पृश्यता के कलंक को धोने में किस तरह मदद कर सकते हैं। बाद में सभी लोग सुबह आठ बजे सम्मेलन स्थल पर उपस्थित हुए और सम्मेलन शुरू हुआ। शुरुआत में ही बंबई से आए तार से श्री बालाराम अम्बेडकर के निधन का समाचार आया।

इस दुखकारक समाचार को सुन कर सभी को बुरा लगा। लेकिन इस परिस्थिति में भी डॉ. अम्बेडकर ने भी बहुत धैर्य से सम्मेलन के काम को जारी रख कर अपने लोकनायकत्व को प्रकट किया। सम्मेलन की कार्रवाई 1 बजे तक चलती रही ।

पहला प्रस्ताव :

इस सभा के सम्माननीय अध्यक्ष डॉ. अम्बेडकर के बड़े भाई श्री बालारामजी के अचानक निधन के दुःखद समाचार से यह सभा अत्यंत दुखी है। और स्वर्गीय बालारामजी अम्बेडकर के इस दुःखद निधन पर इस सभा का कामकाज दस मिनटों के लिए बंद रखा जाता है।

दूसरा प्रस्ताव :

(अ) यहां के सम्माननीय नेता नामदार श्री गणेश श्रीकृष्ण खापर्डे, काउंसिल ऑफ स्टेट के सदस्य और श्री अंबादेवी देवस्थान के अध्यक्ष का पत्र सत्याग्रह समिति के अध्यक्ष श्री गवई एम.एल.सी. ने सभा के सामने रखा। उस पर विचार करने के बाद यह सभा सत्याग्रह समिति को यह निर्देश देती है कि नामदार खापर्डे ने समझौते की जो इच्छा दिखाई है और उसकी सफलता के लिए पत्र में कुछ समय देने की मांग की है। इस

पत्र पर विचार करने के बाद और यह विश्वास करके कि नामदार खापर्डे इस बारे में कोशिश करने वाले हैं इस काम के लिए उन्हें समय देने के लिए 15 तारीख को होने वाले सत्याग्रह की तारीख को आगे बढ़ाने में कोई हर्ज नहीं है।

(ब) फिर भी सत्याग्रह की तारीख किसी भी कारण से 15 नवंबर से 3 महीने से ज्यादा टाली न जाए।

(क) इस सभा का सत्याग्रह समिति से कहना है कि समझौते की बातचीत में ऐसी किसी शर्त को न माना जाए, जिसमें अस्पृश्यों के मंदिर में अंतिम सीमा तक जाने के पूरे अधिकार में किसी तरह की बाधा आए।

(ड) इस समिति का सत्याग्रह कमेटी से यह कहना है कि भविष्य में जो सत्याग्रह किया जाना है, वह जहां तक संभव हो सामुदायिक ढंग से, पद्ध ति से किया जाए।

उपरोक्त सभी प्रस्तावों पर कई वक्ताओं के पक्ष और विपक्ष में भाषण के बाद सभी प्रस्ताव भारी बहुमत से पास किए गए। अंत में, श्री गवई, नाईक, और अमृतकर ने उचित शब्दों में अध्यक्ष और मेहमान लोगों के प्रति आभार प्रकट किए और शाहू छत्रपति के जयकारे के बीच सभा के कामकाज का समापन हुआ।

दोपहर में "महाराष्ट्र केसरी" के संपादक श्री चव्हाण व श्री के. बी. देशमुख के यहां डॉ. अम्बेडकर व मेहमान लोगों को टी–पार्टी दी गई।

जब डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर अमरावती के सम्मेलन में थे उन्हें उनके बड़े भाई बालाराम का रविवार, 1 नवंबर, 1927 को दोपहर 12 बजे अचानक हृदयगति रुक जाने से निधन होने का समाचार मिला इस कारण वे अंतिमयात्रा में शामिल नहीं हो सके। उनकी अनुपस्थिति में जो अस्पृश्य बंधु शवयात्रा में उपस्थित थे, उनके प्रति आभार प्रदर्शित करते हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने "बहिष्कृत भारत" के 25 नवंबर, 1927 के अंक में कहा कि,

"मेरे बड़े भाई के निधन के समय मैं बंबई में नहीं था। अंबादेवी के सत्याग्रह के लिए अमरावती में 13 नवंबर, 1927 को मेरी अध्यक्षता में जो सम्मेलन होने का तय हुआ था, उस सम्मेलन में मैं गया था। मेरी अनुपस्थिति में जिन तीन–चार हजार अस्पृश्य भाइयों ने शवयात्रा में उपस्थित रह कर अपनी पूर्ण सहानुभूति दिखाई, उन सबका मैं अत्यंत ऋणी हू।" – बाबासाहेब अम्बेडकर

15
अस्पृश्यों की उन्नति की आर्थिक बुनियाद

पूर्व सूचना के अनुरूप 26 और 27 नवंबर, 1927 शनिवार–रविवार को सोलापुर जिला वतनदार महार परिषद का दूसरा अधिवेशन सोलापुर में डॉ. भीमराव अम्बेडकर की अध्यक्षता में आयोजित हुआ। इसमें सोलापुर जिले के हर गांव के प्रतिनिधि आए थे। शनिवार 26 तारीख के पांच बजे से ही लोगों की अपार भीड़ जुटनी शुरू हो गई थी। सबकी नजरें डॉ. अम्बेडकर के आने के रास्ते पर लगी हुई थीं। ठीक सात बजे डॉ. अम्बेडकर साहब अपने परिवार के लोगों के साथ सभामंडप में प्रविष्ट हुए। उनके आने के साथ सभी लोगों ने खड़े होकर तालियों की गड़गड़ाहट के साथ उनका स्वागत किया। फिर बच्चों द्वारा ईश स्तुति पर गीत गाए जाने के बाद परिषद के स्वागत अध्यक्ष जिवप्पा ऐदाले ने परिषद के कामकाज की शुरूआत करते हुए स्वागत भाषण दिया।

इसके बाद डॉ. अम्बेडकर का विचारोत्तेजक भाषण हुआ। डॉ. अम्बेडकर के भाषण के दौरान सभी लोग शांत ध्यानमग्न होकर चित्र के समान तटस्थ होकर भाषण सुन रहे थे। उनका भाषण सरल मगर मर्मभेदी और प्रभावकारी था। उन्होंने कहा –

सज्जनों,

इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि पिछले महीने, 19 और 20 मार्च को महाड़ में अस्पृश्य वर्ग का जो सम्मेलन हुआ था, उस सम्मेलन में अपने सार्वजनिक अधिकारों के निर्वहन के लिए महाड के चवदार तालाब पर जाकर पानी भरने का जो उपक्रम हुआ उसके कारण वह सम्मेलन अस्पृश्योन्नति के इतिहास में चिर स्मरणीय हो गया है। वहां के स्पृश्य लोगों ने प्रतिकार करके यह दुराग्रह किया कि चवदार तालाब जैसे सार्वजनिक तालाब से अस्पृश्यों को पानी नहीं भरने देंगे। उसी समय सम्मेलन के संचालकों ने घोषणा की कि महाड़ को वे पानीपत का युद्ध समझते हैं और उसे जीते बगैर वे आराम से नहीं बैठेंगे। इतना ही नहीं तो जरूरत पड़ने पर सत्याग्रह करके अपनी कही बातों को सही साबित करने की प्रतिज्ञा की।

यह खबर प्रकाशित होने के बाद स्पृश्य लोग अस्पृश्यों को उपदेश देने लगे। महाड़ की घटना होने के बाद जिन्हें भले कुछ भी न समझ में आता हो मगर जिन्हें दंभ है कि उन्हें, "हिन्दुस्तान की आबो हवा के बारे में पता है", ऐसे चित्राव शास्त्री ने बहुत गंभीर शब्दों में कहा कि "ऐसे आंदोलन करते समय स्पृश्य और अस्पृश्यों

---

*संदर्भ : "बहिष्कृत भारत", 23 दिसम्बर, 1927

की आबादी के फर्क को ध्यान में रखा जाना चाहिए। हमारे मराठी इलाके में तीन चौथाई स्पृश्य और एक चौथाई अस्पृश्य हैं। स्पृश्यों में कितने ही आपसी मतभेद और अंतर्विरोध क्यों न हों लेकिन अस्पृश्यता के बारे में सभी के विचार समान हैं। इसकी प्रतीति महाड आदि स्थानों में रोजाना होती है और अस्पृश्यों की रोजी–रोटी पूरी तरह से ऐसी मनोवृत्ति वाले स्पृश्यों के हाथ में है। इसमें संदेह नहीं कि जिस दिन अस्पृश्यों की रोजी–रोटी स्वतंत्र हो जाएगी और जिस दिन वे अपने मानवीय अधिकारों के लिए अपनी जान भी कुर्बान करने को तैयार हो जाएंगे, वह दिन केवल अस्पृश्य ही नहीं हिन्दू और हिन्दुस्तान की दृष्टि से कुछ अलग ही होगा।" एक हाथ से हिन्दू संगठन का कार्य करने वाले और दूसरे हाथ से अपनी जातीय श्रेष्ठता के लिए संघर्ष करने वाले मुंबई के एक साप्ताहिक के पत्रकार ने भी ऐसा ही बेसुरा राग अलापा। ये संपादक महाशय कहते हैं कि, "सत्याग्रह शब्द कानों को बहुत मीठा लगता है। लेकिन यह भी सही है कि सत्याग्रह एक दुधारी तलवार है। सत्याग्रह के बल पर कल डॉ. अम्बेडकर अपने अनुयायियों के साथ महाड़ के तालाब का पानी पी लेंगे, लेकिन उनकी इस क्रिया की प्रतिक्रिया जब गांव–गांव में होने लगेगी, तब बेचारे अस्पृश्यों की खाई से निकलकर कुंए में गिरने की स्थिति होगी तो उसके लिए कौन जिम्मेदार होगा ? क्या डाक्टर अम्बेडकर यह मानते हैं कि दो स्थानों पर सत्याग्रह सफल हो जाने से सारे भारत में अस्पृश्यता नष्ट हो जाएगी ? हमारा तो स्पष्ट मत है कि डॉ. अम्बेडकर के सत्याग्रह की परिणिति भयंकर सामाजिक कलह और शायद रक्तपात में होगी।"

जिस तरह इस प्रांत के लोग महाड़ के सत्याग्रह के बारे में अस्पृश्य लोगों को धोखे की सूचना दे रहे हैं उसी तरह वर्हाड प्रांत के लोगों को अमरावती के अंबादेवी के मंदिर में जाने के लिए सत्याग्रह करने के लिए तैयार अस्पृश्यों को भी चेतावनी दी जा रही है। ऐसा पुणे से प्रकाशित होने वाले "स्वराज्य" अखबार से पता चलता है। अमरावती के श्री हनुमान व्यायाम शाला के मैदान में स्पृश्य लोगों की एक आम सभा अक्तूबर में हुई थी। उसमें अस्पृश्य लोगों को स्पृश्यों द्वारा धमकी दी गई कि तुम गरीब और परजीवी हो, यदि तुमने स्पृश्य हिन्दुओं का मन दुखाया और धमकियां देकर समस्या को हल करने की कोशिश की तो स्पृश्य लोग तुम्हें भूखों मार कर तुम्हारा दिमाग ठीक कर देंगे।

संपत्ति ही राष्ट्र की समृद्धी के लिए सबसे महत्वपूर्ण कारण है। इस दृष्टि से उसका संग्रह बेहद जरूरी है। संपत्ति का उपयोग गरीब जनता को जकड़ कर रखने या उसकी प्रगति को कुंठित करने और अपना वर्चस्व कायम करने के लिए जब अमीर लोग उसका उपयोग करते हैं, तो शास्त्रकारों ने ऐसी संपत्ति को आसुरी संपत्ति कहा है और उसका धिक्कार किया है। धर्मशास्त्र की यह सीख उन लोगों

को भी स्वीकार्य है जो हमें उपदेश दे रहे हैं। अगर ऐसा नहीं होता तो ये लोग जब मुंबई जैसे शहर में मालिक और मजदूरों की लड़ाई उग्ररूप ले लेती है, तब हड़ताल करने वाले मजदूरों को यह उपदेश देते कि सावधान रहो, मालिक तुम्हारा बहिष्कार करेंगे, तुम्हारे रोजगार के साधन उनके हाथों में हैं। इसका हमें कुछ भी बुरा नहीं लगता वरना हम उनका अभिनंदन ही करते हैं। लेकिन हम उनसे एक सवाल पूछना चाहते हैं वो यह कि यदि आर्थिक स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करने वाले लोगों के खिलाफ संपत्ति का दुरुपयोग करना अधर्म है तो सामाजिक समानता के लिए संघर्ष करनेवाले अस्पृष्य लोगों के खिलाफ संपत्ति का दुरुपयोग करना क्या धर्म है? और यदि वह अधर्म है तो जिन लोगों ने सत्याग्रह के बारे में उपदेश करना शुरू किया है, उन्होंने हमारे विरोधियों से यह क्यों नहीं कहा कि संपत्ति के बल पर हमारा बायकाट करना और प्रगति को अवरुद्ध करना पाप है। यदि उन्होंने ऐसा किया होता तो हमें उनके मन की निर्मलता का विश्वास होता। उनके ऐसा न करने के कारण हमें इस बात पर यकीन नहीं होता कि उन्होंने उपदेश केवल अस्पृश्यों को सावधान करने के लिए किया है। हम ऐसा मानते हैं कि उसमें धमकी का जहर भरा हुआ है। कारण यह है कि कई लोगों को खुला विरोध करने में शर्म महसूस होती है, तो वे उपदेश की आड़ लेकर विरोध करने की इच्छा को पूरा कर लेते हैं, यह वैसी ही बात है। हमें लगता है कि यह केवल उपदेश नहीं है उससे आगे बढ़कर जिन स्पृश्य लोगों के खिलाफ यह सत्याग्रह किया जा रहा है, उन लोगों को यह याद दिलाने की कोशिश है कि अति उत्साही अस्पृश्यों का दिमाग ठिकाने लाने के लिए उनके पास कौन–सा हथियार है? क्योंकि जिन लोगों की इस मुद्दे के साथ सच्ची सहानुभूति है और जिन्हें अच्छी तरह पता है कि स्पृश्य लोग आश्रय देना बंद करके अस्पृश्यों को सत्याग्रह से परावृत्त करेंगे। उन्होंने जिस तरह अस्पृश्यों को संकेत दिया कि स्पृश्यों के हाथों में कौन सा हथियार है, उसी तरह उन्हें स्पृश्यों को भी यह चेतावनी देनी चाहिए थी कि सत्याग्रह जैसे सत्कार्य को नाकाम करने के लिए अपने हथियार का दुरुपयोग नहीं करना चाहिए। लेकिन यह उन्हें नहीं सूझा। दरअसल सत्याग्रह के जवाब में बहिष्कार किया जाएगा, यह अस्पृश्यों को बताने की कोई जरूरत नहीं है। जिन अस्पृश्यों ने सत्याग्रह का आंदोलन शुरू किया उन्हें पहले से ही भविष्य की कल्पना थी। लेकिन इस बहिष्कार से कौन डरने वाला है ? जिसके सामने लक्ष्य नहीं होगा वही डरेगा। जिनकी आंखों के सामने स्पष्ट लक्ष्य है, वह कदापि नहीं डरेगा। ध्योयवादी आदमी यह जानता है कि कोई ध्येय कितना भी आसान क्यों न हो, उसे हासिल करने के लिए कठिन तपस्या करनी पड़ती है। जो लक्ष्य जितना ऊंचा होता है, उसे पाने के लिए उतनी ही दृढ़ मेहनत चाहिए होती है। इतिहास में मेहनत के बगैर किसी के द्वारा अपने उद्देश्य को प्राप्त करने का कोई प्रमाण नहीं है। केवल सुख और स्वास्थ्य हासिल करना मनुष्य का उद्देश्य नहीं है। अगर ऐसा होता

तो मनुष्यता को गौरवान्वित करने वाले काम दुनिया में होते ही नहीं। पशु सामान्य स्वास्थ्य पाकर संतुष्ट हो सकता है। लेकिन मनुष्य और पशु में आहार, निद्रा, भय और शारीरिक धर्म भले ही समान हों, लेकिन भगवान ने बुद्धि रूपी उपहार मनुष्य को विशेषरूप से दिया है। बुद्धि जब जागृत नहीं होती, तब मनुष्य पशु ही होता है। वह केवल स्वस्थ होकर संतुष्ट हो सकता है। लेकिन जिसकी बुद्धि जागृत होने के कारण जिसे जीवंतता का अनुभव हो चुका है, ऐसे व्यक्ति को यह स्मशान शांति रास आना संभव नहीं है। उसे फैसला करना पड़ता है कि उसे केवल सस्वास्थ्य चाहिए या बुद्धि द्वारा तय किया हुआ ध्येय चाहिए। अस्पृश्य वर्ग अब जागृत हो गया है। उस पर मात्र स्वास्थ्य या समता में से किसी एक के पक्ष में फैसला करने की नौबत आने वाली ही थी और आज वह आ गई है और उसने समता को प्राप्त करने का निश्चय कर लिया है। हमें विश्वास है कि जागरूक बन चुकी अस्पृश्य जनता अपनी प्रगति, अपने आगे बढ़ते कदमों को रोकने वाली सारी बाधाओं को दूर करने के लिए आवश्यक त्याग करेगी और इतना ही नहीं तो अपने प्राणों की कुर्बानी देने को तैयार होगी। इस स्थिति तक गई जनता बहिष्कार से क्या डरेगी? और जिन्होंने सोच–समझ कर इस घोर तपस्या का मार्ग चुना है उन्हें चेतावनी देने से क्या होगा? इन विघ्नसंतोषी लोगों के सत्याग्रह के खिलाफ बहिष्कार के डराने वाले घंटानाद परेशान होने की, घबराने की कोई वजह नहीं है। कारण यह है कि बहिष्कार जैसे आत्मघाती हथियार को कोई लंबे समय तक हाथ में नहीं पकड़ सकता और पकड़ ही लिया तो बहुत दिनों तक वह कारगर नहीं होता। जिस तरह अस्पृश्य लोग कहते हैं कि हम स्वीकार नहीं करेंगे कि हम अस्पृश्य हैं उसी तरह अंग्रेज लोग भी स्पृश्य लोगों से कहते हैं हम नहीं मानेंगे कि तुम स्वराज्य के योग्य हैं। जिस तरह अस्पृश्य लोगों के दिमागों को ठीक करने के लिए बहिष्कार की चेतावनी दी जा रही है, उसी तरह अंग्रेज सरकार को झुकाने के लिए स्वदेशी उर्फ विलायती चीजों के बहिष्कार की मुहिम शुरू की गई थी और वह कई सालों तक जारी थी। लेकिन सभी जानते हैं कि उससे अंग्रेज सरकार का बाल भी बांका नहीं हुआ। इसका कारण स्पष्ट है। जहां आपसी आर्थिक संबंध दाता और याचक के होते हैं वहां बहिष्कार की दवा लागू होती है, क्योंकि यदि दाता याचक का बहिष्कार करे तो दाता का कोई नुक्सान नहीं होता। लेकिन जहां संबंध दान का नहीं विनिमय का होता है वहां बहिष्कार कारगर नहीं होता। ऐसी स्थिति में बहिष्कार करने का नतीजा होता है विनिमय से होने वाले स्वार्थ, स्वहितों को डुबोना। हरेक की नजर स्वार्थ पर होने के कारण आपस में बहिष्कार करके स्वहित को डुबाने के लिए कोई तैयार नहीं होता। यदि ऐसा न होता तो मिल मालिक रोटी कमाने वाले मजदूरों का हमेशा ही बहिष्कार करते और अंग्रेज व्यापारियों का स्वदेशी के कालखंड में किया गया बहिष्कार सफल हुआ होता। ऐसा नहीं होता तो इसकी वजह यह है कि यदि बहिष्कार से केवल शत्रु को ही नुक्सान

होता तो दूसरों का दिमाग ठीक करने का कोई बेहतर हथियार नहीं होता। लेकिन यह ऐसा विचित्र दुधारी शस्त्र है कि जिसके कारण दुश्मन के साथ–साथ खुद पर भी वार होता है। जो लोग बहिष्कार की धमकी देते हैं, वे नहीं जानते कि बहिष्कार शस्त्र एकतरफा नहीं दोहरा है या उन्हें गलत समझ हो गई है कि अस्पृश्य समाज परजीवी है और स्पृश्य समाज उसका पोषण कर रहा है। अन्य समाजों की रचना भी विनिमय पर ही आधारित है। ऐसी स्थिति में किसी को बिल्कुल भी यह नहीं मानना चाहिए कि कोई किसी पर उपकार कर रहा है। मालिक नौकर को नौकरी पर रखता है तो मालिक बहुत अहंकार से कहता है कि तुम मुझ पर कोई उपकार नहीं कर रहे। मगर नौकर भी दृढ़तापूर्वक यह कह सकता है कि मैं उपकार नहीं कर रहा यह सही है मगर तुम भी मुझ पर उपकार नहीं कर रहे। जो काम आदमी खुद कर सकता है वह काम वह आमतौर पर और किसी से नहीं कराता। अपने से काम न हो पाने के कारण ही दूसरे की जरूरत पड़ती है। मालिक ने संबंध तोड़े तो नौकर परेशान हो जाएंगे लेकिन नौकर ने संबंध तोड़े तो पास में पैसा होकर भी मालिक को परेशानी उठानी पड़ेगी। कुल मिलाकर बात यह है कि एक आदमी को दूसरे आदमी की जरूरत महसूस होती है, इसलिए ही आपस में संबंध बनाते हैं और स्वार्थ के आधार पर बने इन संबंधों को कोई आसानी से तोड़ नहीं पाता क्योंकि उससे दोनों पक्षों का नुकसान होता है। यही बात स्पृश्य और अस्पृश्यों के रिश्तों पर भी लागू होती है। अस्पृश्य लोग स्पृश्यों की नौकरी करते हैं तो यह नहीं कहते कि स्पृश्यों पर उपकार कर रहे हैं। उसी तरह स्पृश्यों को भी यह घमंड नहीं करना चाहिए कि वो अस्पृश्यों को पालपोस रहे हैं। दोनों के संबंध शुद्ध स्वार्थ के हैं। दोनों का एक दूसरे के बगैर चलता नहीं। इसलिए दोनों बेकाबू नहीं होते। इस तरह की व्यवस्था के द्वारा जुड़े हुए लोग एक दूसरे का बहिष्कार नहीं कर सकते और यदि किया भी तो वह ज्यादा समय तक टिक नहीं सकता।

स्पृश्य और अस्पृश्यों के आर्थिक संबंध भले ही आपसी स्वार्थ की भावना पर आधारित हों फिर भी इन दोनों वर्गों की धारण–पोषण शक्ति में थोड़ा बहुत फर्क है, यह मानना जरूरी है। इस कारण एक दूसरे के लिए जितना मारक हो सकता है, उतना पहला दूसरे के लिए मारक नहीं हो सकता। जिनकी धारण–पोषण शक्ति कम दर्जे की है उन्हें अगर ज्यादा धारण–पोषण शक्ति वाले लोगों के साथ संघर्ष करना पड़ा तो उस संघर्ष को आखरी परिणती तक ले जाना मुश्किल होता है। क्योंकि जिनकी धारण–पोषण शक्ति कम है उनके सामने सवाल होता है कि 'बलवान से संघर्ष मोल लेकर कैसे निभेगी', यह सवाल उठने पर श्रेष्ठ धारण–पोषण शक्तिवालों का विरोध करके जो श्वाशत हित प्राप्त करना होता है उसे भी छोड़ देना पड़ता है। इसका उत्कृष्ट उदाहरण महाभारत में देखने को मिलता है। कौरवों और पांडवों

की सेनाएं कुरूक्षेत्र में युद्ध के लिए सज्ज होने पर युद्ध की शुरूआत होने से पहले युधिष्ठिर को लगा कि भीष्म, द्रोण और शला जैसे महापुरुषों की चरण वंदना करके उनके आशीर्वाद लिए जाएं और समरांगन में वह अपना कवच उतारकर विनम्रता पूर्वक उनके पास गया। शिष्टाचार का पूरी तरह से पालन करने वाले युधिष्ठिर को उन्हें आशीर्वाद तो देना ही था, मगर आशीर्वाद देते हुए उन्हें अपनी स्थिति का एहसास हुआ और उन्हें लगा कि युधिष्ठिर शायद सवाल करें कि आप मानते हैं कि हमारा पक्ष सत्य का है और कौरवों का पक्ष असत्य का है। फिर आप सत्य के पक्ष की तरफ से क्यों नहीं लड़ते? इस विचार से मन ही मन में वे शर्मिंदा हुए और इस सवाल के पूछे जाने से पहले ही उन्होंने युधिष्ठिर से कहा –

"अर्थस्य पुरुषों दासोदाससत्वर्थो न कस्यचित्।

इति सत्य महाराज बद्धो स्म्यर्थेन कौरवेः।।"

"मनुष्य अर्थ का दास है, अर्थ किसी का दास नहीं है। यह वास्तविकता होने के कारण हे महाराज युधिष्ठिर, कौरवों ने हमें अर्थ से बांध डाला है।" हमने ऊपर बताया है कि ऐसा कहने की नौबत अस्पृश्यों पर नहीं आएगी। लेकिन यदि आई तो इस बात का विचार करना उपयुक्त होगा कि उसकी धारण–पोषण शक्ति टिकी कैसे रहेगी और वे स्वावलंबी कैसे बनेंगे? इसलिए हमने आज इस विषय पर विचार प्रकट करना तय किया है।

पहले अस्पृश्य जातियों में जिन अनेक जातियों का समावेश हुआ है उन जातियों में से किन–किन जातियों को बहिष्कार से विशेष कष्ट पहुंचने वाला है, इस बात पर हमें ध्यान देना होगा। चमार और ढोर व्यवसायिक जातियां हैं सो जाहिर है कि उन पर बहिष्कार के शस्त्र का कोई खास वार नहीं होगा। उल्टे, अगर उन्होंने स्पृश्यों पर बहिष्कार डाला तो, नए जूते बनाना या पुरानों को ठीक करना छोड़ दिया तो उनका कैसे चलेगा? उसी तरह मांग लोग भी व्यवसायी हैं। उन्होंने सुतली, रस्सियां या झाडू बनाना बंद किया तो उनके कारण सभी स्पृश्य लोगों की हेकड़ी निकल जाएगी। क्योंकि किसानों की महत्वपूर्ण जरूरतों में से दो जरूरतें हैं – बैल की लगाम और मोट या चरसे का नाड़ा। ये चीजें सिर्फ मांग जाति के लोग ही बनाते हैं सो उन्हें बहिष्कृत करना स्पृश्य लोगों के हित में नहीं होगा। उल्टे अगर इन लोगों ने स्पृश्यों को बहिष्कृत किया तो स्पृश्य लोगों को उनके सामने झुकना ही पडेगा। भंगी लोग तो स्पृश्यों को पल भर में झुका सकते हैं। उनका धंदा भले नीच माना जाता हो, लेकिन उसकी उपयोगिता इतनी जबरदस्त है कि वे अगर चाहें तो पूरे शहर में रोग फैला कर सारी बस्ती को ही नामशेष कर सकते हैं। अब देखते हैं महारों की स्थिति क्या है? महारों की जाति का कोई विशेष व्यवसाय नहीं है। भले आखिरी पायदान

के क्यों न हों, लेकिन हैं वे राजपुरुष ही। क्योंकि, उनकी उपजीविका केवल सरकारी नौकरी से ही चलती है। सरकारी नौकर का न किसी के साथ लेना न देना। उसे भी बहिष्कार से कोई डर नहीं। महार भी ऐसा कह तो सकते ही हैं। लेकिन वे ऐसा तभी कह सकते हैं जब सरकारी नौकरी भली और हम भले, ऐसी स्थितियां हों तब। हालांकि, उनके दुर्भाग्य के कारण आज के हालात में वे ऐसा नहीं कह सकते हैं। इसकी प्रमुख वजह है महारों का वतन – ऐसी जागीर जिसका लगान माफ है। इसी वतन के कारण महार लोग स्पृश्यों के अधीन हुए हैं। नौकरी में जिनके तहत महारों को काम करना होता है, वे सारे स्पृश्य लोग ही होते हैं। ऐसा नहीं है कि महारों से नौकरी का काम करवाने तक ही ये लोग अपने अधिकार का प्रयोग करते हैं। वे इस बात का भी विशेष खयाल रखते हैं कि महार लोग अपनी औकात में रहते हैं या नहीं और अगर नहीं रहते हैं तो उन्हें तुरंत वे उनकी जगह बता देते हैं। इसके लिए अपने अधिकार का प्रयोग करते हैं। समय पर सरकारी काम न किए जाने की सजा मिलने वाला एक उदाहरण मिलेगा, तो उसके साथ कुछ और उदाहरण ये भी होते हैं जिनमें पाटील, मुखिया के घर की लकड़ियां न तोड़ना, मामलतदार के घोडे को घास न खिलाना, कुलकर्णियों की जमीन पर हल न चलाना, गांव की जनता को जोहार (झुक कर सलाम करना) नहीं करना, गांव में रोटी मांगना बंद किया, मरे हुए जानवर का मांस खाना छोड़ दिया, अच्छे कपड़े पहने इसलिए आदि। इन बातों का और सरकारी नौकरी का कोई ताल्लुक नहीं। कोई मुसलमान अगर मुखिया होता या कोई पारसी अगर कुलकर्णी होता तो वतन महारों के लिए सुख की छाया बनता। वे अगर सजा देते तो सरकारी नौकरी में हुई गलती के कारण ही सजा देते। महार ने अच्छे कपड़े पहने इसलिए, रोटी मांगना छोड़ दिया इसलिए, मरे हुए जानवर का मांस खाने से इनकार किया इसलिए उन्हें सजा नहीं दी जाती। महार अगर अपना गंदा रहन–सहन बदल कर अच्छे रहें तब उनकी अवमानना न होती और न उन्हें लगता कि महार घमंडी हो गया है। लेकिन कुलकर्णी पहले मुखिया होने के कारण उस पाटील और कुलकर्णी के जोड़े को इन बातों से लगता है कि महार अपनी औकात में नहीं रह रहा और उसे घमंड हो गया है। उन्हें गुस्सा आने लगता है। इसी गुस्से के कारण वतन से प्राप्त अधिकार का गलत इस्तेमाल करते हुए वे गलत शिकायत मामलतदार के यहां भेजते हैं कि महार सरकारी काम करते नहीं है। मामलतदार उनकी हां में हां मिला कर उस शिकायत को प्रांत के पास भेजता है और प्रांत द्वारा आदेश दिया जाता है कि महार को सस्पेंड कर दें। इस तरह, अधिकारी स्पृश्य जाति के होने के कारण झूठे धर्माभिमान के शिकार होते हैं और महारों पर वतन की मार पड़ती है। और महारों को स्पृश्यों के अधीन होकर रहने के अलावा कोई चारा नहीं बचता। वतन के कारण महारों को स्पृश्यों का आश्रित होना पड़ता है, उसकी एक और वजह है। महार वतनदार कामगार की हैसियत से

सरकारी नौकर हैं, लेकिन उन्हें इस काम की तनख्वाह उन्हें सरकारी खजाने से नहीं मिलती। उनकी तनख्वाह है बलुते (गांव की कुछ निम्न जातियों को गांव के लोगों द्वारा उनके काम के बदले खेती में होने वाली उपज का कुछ अंश और मांगलिक पर्वों पर जो वस्तु के रूप में वेतन दिया जाता है उसे बलुते कहते हैं। जैसे उत्तर भारत में जजमानी। और इसके लिए वे स्पृश्य लोगों पर निर्भर रहते हैं। वतन की इस व्यवस्था के कारण महार जाति स्पृश्यों पर निर्भर हो गई है। काम भले सरकार का किया हो, लेकिन उस काम की तनख्वाह दी जाए अथवा नहीं इसका निर्णय गांव के लोग करेंगे। लोग भी धर्माभिमानी होने के कारण महार लोग अपनी औकात में रहते हैं अथवा नहीं इसका खयाल रखते हुए ही उन्हें बलुते अदा करते हैं। इस प्रकार अधिकारी वर्ग और लोगों की कैंची के बीच में फंसी महार प्रजा को वेतन व्यवस्था के कारण स्पृश्यों की गुलामी स्वीकारनी पड़ती है। इस गुलामी से अगर महारों को अपने आप को मुक्त करना हो तो उन्हें आर्थिक आजादी हासिल करनी होगी। इसीलिए हम कहते हैं कि पहले महार वतन व्यवस्था में सुधार कीजिए। उनमें से पहला सुधार यह किया जाना चाहिए कि अगर अपने पास की जमीन पर लगान देकर वे जमीन रख सकें तो वतनी नौकरियां वे छोड़ दें। इससे एक साथ स्पृश्यों के अधीन और स्पृश्यावलंबी बनी महार प्रजा आर्थिक स्तर पर आजाद होगी। इतना अगर कर भी नहीं सके तब भी वे प्रजा (जनता) से बलुते लेने के बदले सरकार से तनख्वाह मांगें। इससे वह भले स्पृश्याधीन रहें लेकिन स्पृश्यावलंबी नहीं रहेगी। यह सुधार अगर हो जाए तो महारों को इस बात की चिंता नहीं करनी पड़ेगी कि बहिष्कार से उन्हें कोई दिक्कत होगी।

महार लोगों से यदि कहा जाए कि वतन छोड़ कर आप लोग आजाद हो जाएं तो वे उल्टा सवाल यह करते हैं कि वतन अगर छोड़ दिया जाए तो हमारी आमदनी कैसे होगी? असल में महार लोगों को इस सवाल से परेशान नहीं होना चाहिए। पैदा होते समय हर इंसान अपने लिए पेट भरने का साधन साथ लेकर नहीं आता। पैदा होने के बाद अपनी योग्यता के अनुसार वह कोई न कोई व्यवसाय अपना कर अपना पेट पालता ही है। फिर महार लोग ही अपना पेट नहीं पाल सकेंगे, ऐसा कैसे हो सकता है? आर्थिक आजादी के लिए हम उन्हें एकाध–दो सूचनाएं और दे रहे हैं। महार लोगों को हमारी पहली सूचना यह है कि आप अपनी अलग बस्तियां बसाएं। महार लोगों को गांव के बारे में बड़ा अभिमान है। पिता का गांव छोड़ कर जाना चाहिए या नहीं इस सवाल का वे पार पाने में कठिनाई महसूस करते हैं। जहां अपने पिता गुजरे वहीं खुद भी गुजर जाने की उनकी इच्छा होती है। यह उन्हें अपना कर्त्तव्य है ऐसा लगता है। गांव अगर उनके साथ आदर से पेश आता तो उनका इस तरह महसूस करना सही भी माना जा सकता है। लेकिन महारों को जहां गांव के लोग

तुच्छ, हीन मानते हैं, छोटे–छोटे कारणों से उन पर गांव बंदी लागू करते हैं, गांव के लोग जहां उनके साथ बिना गाली दिए बात नहीं करते, उसी गांव में रहने का आग्रह महार रखें यह बडे शर्म की बात है। इस प्रकार के जुल्म की कहानी गांव का हर महार जानता है। सोलापूर जिले में मासणूर, रातंजन, रालेरास, पानगांव, सुरडी, मालवंडी, चिखरडे, कासेगाव, शिरबाबी आदि गांवों में महार लोगों पर गांववासियों पर कैसे जुल्म हो रहे हैं, यह "बहिष्कृत भारत" के पाठक जानते ही हैं। इन गांवों में से कई गांवों ने महारों को भगा देने का निश्चय किया है और वे उस पर अमल करने की तैयारी में लगे हैं। ऐसे हालात का सामना करना महार लोगों के लिए मुश्किल होता है। क्योंकि दो–ढाई सौ घरों वाले गांव में महारों के कुल दस–पांच ही घर होते हैं। इतनी कम संख्या में होने वाले लोगों के लिए बहुसंख्यक जाति के गुंडों से सामना करना मुश्किल पड़ता है। इसलिए हर गांव में पांच–पांच या दस–दस घरों की बस्ती में रह कर इस तरह के जुल्मों का शिकार सहते हुए घुटते रहने के बजाय अलग–अलग गांवों में छोटी–छोटी बस्तियां हटा कर महारों की बडी बस्ती बसाई जाए, तो इससे उन्हें काफी लाभ मिलेगा। फॉरेस्ट (जंगलों) की जमीनों पर अगर इस तरह की बस्तियां बसाई जाएं तो वतन के जाने से होने वाला नुकसान वे खेती करके हजारों गुना पूरा कर सकते हैं। किसी की गुलामी न करते हुए आजाद तरीके से यह किया जा सकता है। ऐसी बस्तियों से न सिर्फ उदर निर्वाह होगा, बल्कि उनसे अन्य कई फायदे हो सकते हैं। गांव में रहने की वजह से महार कोई भी अन्य व्यवसाय नहीं अपना सकते। लेकिन महार अगर अपनी बस्ती अलग बसाते हैं तो उनके सामने सारी राहें खुली हो जाएंगी। महार पाटील बन सकता है, महार किराने की दुकान खोल सकता है, महार दर्जी की दुकान खोल सकता है। आज गांव में रहने के कारण जो व्यवसाय वे नहीं कर पाते, वे सब व्यवसाय अलग बस्ती में वे कर पाएंगे। अलग बस्ती बसाने का फायदा सिर्फ इतना ही नहीं है। इसके अलावा एक और महत्वपूर्ण फायदा भी है। पैदा होते ही महार बच्चे के मन में छुआछूत का डर समा जाता है। इसे मत छूना, उसे मत छूना आदि शब्द बार–बार उसके कानों से टकराने के कारण बच्चा अपने आपको अपवित्र व हीन मानने लगता है और आखिर तक ऐसे ही मानता रहता है। एक बार मन पर यह दबाव बनता है तो वह हमेशा के लिए बन जाता है। मन ही कमजोर होने के कारण आगे उससे कोई पुरुषार्थ भरा काम होता ही नहीं। ऐसी नई बस्ती में बढ़ने वाले महारों के बच्चे निर्भय बनेंगे। छुआछूत की भाषा उनके कानों तक पहुंचने का कोई डर नहीं रहेगा। हम औरों से कम हैं या और लोग हमसे श्रेष्ठ हैं, यह भाव उनके मन में पैदा नहीं होगा। वे मन से कमजोर नहीं होंगे। यह बहुत बड़ा लाभ होगा। साथ ही अगर खेती के जैसे अलग उपजीविका कमाने का साधन अगर हाथ में आ रहा हो तो महार लोग उसका फायदा जरूर लें। इस तरह की नई बस्तियां बसाने

में दो तरह की मदद की जरूरत है – (1) सरकार की सहायता चाहिए; (2) महार लोग गांव छोड़ने के लिए तैयार हों। इनमें से सरकार की सहायता पाना मुश्किल नहीं है। मैसूर संस्थान में अस्पृश्य लोगों के लिए हर परिवार को सात (7) एकड़ जमीन देकर उनकी अलग बस्ती बसाई जाएगी। हमारे इलाके में भी बेरड लोगों की ऐसी ही बस्ती बनाने का अंग्रेज सरकार ने निर्णय लिया है। वही योजना महारों के लिए भी लागू करने के लिए सरकार मना करेगी ऐसा नहीं लगता। सवाल यह है कि क्या महार लोग अपना गांव छोड़ कर अलग बस्ती बसाने के लिए तैयार हैं?

सभी लोगों को खेती से पेट पालने जितनी जमीन मिलना असंभव है। इसीलिए खेती के साथ–साथ अन्य कोई व्यवसाय महार लोग करें यह बहुत जरूरी है। महार जाति व्यवसाय करने वाली जाति नहीं है। जो व्यवसाय वह कर सके वह करने के लिए वह आजाद है। एक बात मानना जरूरी है कि पैसे और अनुभव के अभाव में श्रेष्ठ किस्म का किफायती व्यवसाय इस जाति के लोग नहीं कर पाएंगे। संभव हुआ तो कोई छोटा व्यवसाय वे अपना सकते हैं। हालांकि ब्राह्मणों की भूतबाधा से प्रभावित महार लोग किसी हीन धंधे को अपनाने के लिए तैयार होंगे इसकी संभावना बहुत कम लगती है। जिस व्यवसाय में कोई गंदगी नहीं, या कोई व्यवसाय किसी जाति विशेष का न हुआ हो ऐसा कोई व्यवसाय हो, तो महार लोग वह करने के लिए तैयार होंगे। मेरी राय में ऐसा केवल एक ही व्यवसाय है और वह है खादी बुनना। महार लोगों से मेरी सिफारिश है कि आप खादी बुनें।

उन्हें शायद अब ऐसा लगे कि हम खादी बुनेंगे तो खरीदेगा कौन? अगर कोई खरीदे ही नहीं तो खादी बुनने का फायदा ही क्या? लेकिन इस सवाल को हल करना कठिन नहीं है। महार लोगों को अपने इस्तेमाल के लिए कपड़ा तो खरीदना ही पड़ता है। ऐसे में अगर सभी महार लोगों ने अपने लिए खादी का इस्तेमाल करने और महारों की बुनी हुई खादी के अलावा कोई और खादी न खरीदने की कसम खाई तो बुनकर महारों के लिए अपनी ही जाति के इतने ग्राहक मिलेंगे कि उनके लिए काफी होगा। इन दो बातों पर अमल करने के लिए धन की जरूरत पड़ेगी। हालांकि आर्थिक सहायता पाना ज्यादा मुश्किल नहीं होगा। बस, महार लोगों को अपना निर्णय लेना होगा।

महारों को अगर इंसानों सी इज्जत पानी हो तो उन्हें गांव की रयतों की गुलामी से खुद को मुक्त करना होगा। और अगर वे मुक्ति चाहते हैं तो उन्हें इन सभी बातों को निश्चयपूर्वक अमल में लाना होगा। उसके अलावा उनकी राह आसान नहीं बनने वाली है, यह उन्हें ध्यान में रखना होगा।

पहले दिन का काम संपन्न हुआ। उसके बाद उसी मंडप में दूसरी सभा शुरू

हुई। महार वतन में सुधार लाने के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने जो बिल मुंबई कौंसिल में पेश किया था, उसे समर्थन देने के लिए शेठ माणेकचंद शहा की अध्यक्षता में यह सभा आयोजित की गई थी। उस सभा में आगे दिया गया प्रस्ताव रखा गया – डॉ. अम्बेडकर ने महार वतन में सुधार के लिए जो बिल रखा है, उसका यह वतनदार महार परिषद अपना पूरा समर्थन देती है।

यह प्रस्ताव श्री हरिभाऊ तोरणे ने रखा, उसे गो. गो. कांबले द्वारा समर्थन और भिमा तात्या वेसकर और निवृत्ति बंदसोडे द्वारा पुष्टि किए जाने के बाद शेठ माणेकचंद ने महार वतन में लाए जाने वाले सुधारों के बिल को स्पष्ट करने के लिए डॉ. अम्बेडकर साहब से विनति की। उन्होंने फिर बहुत ही सरल और आसान शब्दों में इस बिल में अपने द्वारा सुझाए गए परिवर्तनों के बारे में लोगों को बताया। लोगों को वह तुरंत ठीक लगा। सभा में ही लोग आपस में बातचीत करने लगे कि डॉ अम्बेडकर साहब ने जो सुधार सुझाए हैं उनके लागू होने से वतन रूपी रौरव नरक में कुलबुला रहे हम कीड़ों का उद्धार होगा। लोगों ने डॉ. अम्बेडकर का जयकार किया। वे कहने लगे कि जो लोग कहते हैं कि यह बिल महार लोगों के लिए एक बड़ा संकट है, यह कहने वाले लोग या तो मूर्ख ही होंगे या फिर पाजी होंगे। सभा के अध्यक्ष श्री माणेकचंद ने भी बिल के पक्ष में भाषण दिया। उन्होंने लोगों से कहा कि वे अगर इस बिल के पक्ष में या विरोध में अगर कुछ पूछना चाहें तो जरूर पूछ सकते हैं। हालांकि किसी ने कोई सवाल नहीं किया। बाद में प्रस्ताव पर मतदान कराया गया तब तालियों की गड़गड़ाहट में वह पारित हुआ। बाद में सभा का काम दूसरे दिन तक स्थगित किया गया।

दिनांक 27 नवम्बर, 1927 को सुबह विषय का चुनाव करने वाली कमेटी की बैठक बुलाई गई। इस बैठक में आगे दिए जा रहे प्रस्ताव परिषद के सामने रखना सर्वानुमति से तय किया गया। परिषद के काम की रविवार 11.30 बजे डॉ. अम्बेडकर की अध्यक्षता में शुरुआत हुई।

परिषद में आगे दिए जा रहे प्रस्ताव पारित हुए –

(1) परिषद की पक्की राय है कि, गीता में बताए गए गुणकर्म विभागशः सिद्धांत को रौंदकर उसकी जगह जन्मजाति विभागशः सिद्धांत के आधार पर समाज की रचना किए जाने से हिंदू समाज का बहुत बड़ा नुकसान हुआ है। इस वजह से यह परिषद हिंदू धर्माधिकारियों को सुझाव देती है कि वे प्रचलित चातुर्वर्ण्य की कल्पना को छोड़ कर हिंदू समाज का ही एक वर्ण बनेगी इस प्रकार का नया संविधान तुरंत तैयार करने के कार्य की शुरुआत करें। इस बारे में देर या नजरंदाजी हो तो चातुर्वर्ण्य की चक्की में पिस रहे अस्पृश्य वर्ग को अपनी मुक्ति के लिए धर्मांतरण के

बारे में सोचना पड़ेगा।

(2) इस परिषद की राय में श्रीक्षेत्र पंढरपुर के विठोबा मंदिर में प्रवेश हो सके ऐसी व्यवस्था अस्पृश्य वर्ग करे और जरूरत पड़ने पर वहां सत्याग्रह भी किया जाए।

(3) यह परिषद तय करती है कि हर जिले में वतनदार महारों की शिकायतें दूर करने के लिए प्रयासरत एक महार वतनदार संघ की स्थापना हो। इसके अनुसार यह परिषद सोलापुर जिले में एक संघ की स्थापना करने की तथा हर सदस्य गांव से सालाना 5 रुपयों का चंदा लेने की मंजूरी देती है। इस संघ को आगे बताए गए लोग चलाएंगे –

सोलापुर तहसील – विश्वनाथ मेघाजी बंदसोडे

पंढरपुर तहसील – बापू ऐलूनी सर्वगोड

करमाले तहसील – गोविंद गोपाल कांबले

मालशिरस तहसील – तात्याबा पांडुरंग सावंत

सांगोले तहसील – चोखा शिंदू काटे

मांढे तहसील –पिराजी मरीबा सरवदे

बार्शी तहसील – सखाराम महादू बोकेफोडे

सोलापुर शहर – जिवाप्पा सुभानराव ऐदाले

सचिव – हरिभाऊ तोरणे

उपरोक्त चुने गए सदस्यों को यह सभा संघ के नियम तैयार करने के अधिकार दे रही है। और उनके बनाए नियम आगे दिए जा रहे। वतनदार जिला सभा में उसे मंजूर किए जाएं और यह सभा कम से कम दो सालों के अंदर–अंदर ली जाए।

(4) सोलापुर, पंढरपुर आदि म्युनिसिपालिटी के गांवों में और जिलों में रातंजन, कारी, देगाव आदि गांवों में महारों के मालिकियत की जमीनें गांव की जमीनों में शामिल की गई हैं, इससे महारों का बहुत नुकसान हुआ है। सो, जिले के कलक्टर से इस बारे में फिर से पूछताछ पुनरसमीक्षा करने की विनती यह सभा करती है।

(5) इस जिले में जिन गांवों में वतनी इनाम जमीनें नहीं हैं ऐसे गांवों के महार लोगों को उन्हीं के गांवों की परती अगर फॉरेस्ट की जमीन हो तो वतन के रूप में ईनाम के तौर पर दी जाएं।

(6) बेलापूर, मासणूर, रालेरास, पानगाव, चिखरडे, कोसगाव, चाकुरे, शिखावी, मेडद, दहिगाव, भांबुर्डी, रातंजन, सुरडी, गुरसाले, तहसील मालशिरस, लोणंद गांव

में पाटील–कुलकर्णी के उकसाने/भड़काने पर लोगों ने षड्यंत्र कर महारों को गांव से भगा देने की योजना बनाई है। इसलिए, इस गांव में हो रहे जुलूम के बारे में पूछताछ कर सरकार महारों की सुरक्षा का इंतजाम करे।

(7) सोलापुर जिले के वतनदार महार परिषद की राय में हर जिले के महार लोगों की आर्थिक गुलामी नष्ट करने के लिए तथा उनका पारिवारिक जीवन अधिक सुखमय हो इसके लिए हर जिले में वतनदार महार संघ सहकारी मंडल की स्थापना की जाए। सूत बनाना, कपड़ा बुनना इन कामों का प्रसार करने की तथा सहकारिता किसानवर्ग विस्थापन कालोनी स्थापन करने की जितनी जल्दी संभव हो व्यवस्था की जाए।

(8) इस सभा का सरकार से यह अनुरोध है कि, जंगल की जमीनें अन्य वर्ग के लोगों को देने से पहले अस्पृश्यों की अर्जियों पर विचार किया जाए। जिन शर्तों पर जंगल की जमीनें देना तया हुआ हो, वे शर्तें अस्पृश्य वर्ग के इंसान को अगर मंजूर हों तो खेती योग्य भूमि अन्य जातियों के अर्जदारों को बिना दिए अस्पृश्य वर्ग के अर्जदार को ही दी जाएं।

उपरोक्त प्रस्तावों पर मेसर्स सीताराम नामदेव शिवतरकर, धोंडीराम गायकवाड़, बोरकर, माने, कांबले, बंदसोडे, गोविंद कांबले, वेसकर, शिवणकर, बोकेफोडे, साबले, तोरणे आदि वक्ताओं के समयानुरूप भाषण हुए।

इस प्रकार आम सहमति से प्रस्ताव पारित होने के बाद अध्यक्ष तथा उपस्थितों के प्रति धन्यवाद ज्ञापन किया गया। फूलमालाएं और गुलदस्ते देने के बाद डॉ. अम्बेडकर के जयकार की घोषणाओं के साथ समापन कर परिषद का काम पूरा हुआ।

16
अधिकारों की रक्षा के लिए सज्ज हों*

बारा पाखाडी, पाली, दांडा रोड, बांद्रा के लोगों की उपस्थिति में बांद्रा में 11 दिसम्बर 1927 को शाम को चार बजे डॉ. भीमराव अम्बेडकर की अध्यक्षता में महाड़ सत्याग्रह की मदद के लिए सार्वजनिक सभा हुई। सभा के लिए सुशोभित मंडप खड़ा किया गया था। बांद्रा और आसपास के गांवों के एक हजार लोग इकट्ठा हुए थे। मुंबई से डॉ. अम्बेडकर के साथ मेसर्स शिवतरकर, प्रधान, गुप्ते, जाधव, गंगावणे, गायकवाड़, खोलवडीकर आदि लोग उपस्थित थे। इसके अलावा बहिष्कृत हितकारिणी सभा द्वारा हाल ही में बनाए गए 'अम्बेडकर पथक' को खासतौर पर सभा के संचालन के लिए आयोजकों द्वारा बुलाया गया था। मुंबई के लोगों के स्टेशन पर उतरने के बाद बांद्रा वालों द्वारा उनके लिए विशेष तौरपर बुलाई मोटर से सभास्थल पर ले जाया गया। वहां पहुंचने के तुरंत बाद सभा का कामकाज शुरू किया गया। सभा के समक्ष निम्न प्रस्ताव पेश किया गया कि "हम बांद्रा के बारा पाखाडी में रहने वाले लोग 25 दिसंबर से डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्व में महाड़ में शुरू होने वाले सत्याग्रह को 175 रुपया चंदा दे रहे हैं। इसके अलावा यहां उपस्थित लोगों से अपील कर रहे हैं कि वे सत्याग्रह को ज्यादा से ज्यादा मदद करें।" इस प्रस्ताव पर स्थानीय लोगों में से मेसर्स जयगुरू देवगांवकर, सखाराम भीखू, काशीराम हवालदार, गोविंद तुलसकर के भाषण होने के बाद स्थानीय नेता सोनू सजन संदीरकर ने भाषण करने के बाद 175 रुपए सहयाग राशि डॉ. अम्बेडकर को भेंट की। डॉ. अम्बेडकर ने साभार राशि स्वीकर करने के बाद भाषण दिया। उन्होंने कहा–

सज्जनों

आपके द्वारा दी गई सहयोग राशि के लिए मैं आपका आभारी हूं। आज यहां एकत्रित लोगों ने अपने पूर्वजों के पराक्रम का सिंहावलोकन किया तो हमारी गर्दन नीचे करनी होगी। कोंकण के पहले दापोली में सुभेदार, जमेदार, हवालदार आदि की बड़ी–बड़ी इमारतें, हवेलियां थीं। लेकिन मुसलमानों ने आज उन कोठी/हवेलियों को जमीनदोज कर दिया है। उन इमारतों का आपको नामोनिशान भी नहीं मिलेगा। हमारी यह दशा क्यों हुई, इस पर विचार करें। ईस्ट इंडिया कंपनी यहां आई और उस कंपनी को राज्य स्थापित करने में हमारे लोगों ने मदद की और जब तक हमारे लोग सेना में थे तब तक हम समृद्ध थे। सेना के दरवाजे बंद होते ही हमारी

*संदर्भ : "बहिष्कृत भारत", 23 दिसम्बर, 1927

हालत बिगड़ने लगी। आज हमारे लोगों को पुलिस में भर्ती नहीं किया जाता और जगहों पर भी नौकरियों के लाले पड़े हैं। पुणे में हमारे वर्ग का एक ग्रेजुएट लड़का है, मगर उसे नौकरी दिलाने के लिए दो साल से सरकार के साथ संघर्ष कर रहा हूं। मैं जानता हूं कि इस सरकार के ही कुछ अफसर इस काम में बाधक बन रहे हैं। महाड़ में हम जो सत्याग्रह करने वाले हैं और उस कार्य के लिए आप लोगों ने हमें जो आर्थिक सहायता की है, उसके बारे में यह मत समझना कि हम आपकी गाड़ी के घोड़े हैं और उसके लिए आपने हमें यह चने (छोले) दिए। यह सबका काम है। महाड़ में चवदार तालाब पर जो सत्याग्रह हम करने जा रहे हैं वह इसलिए हो रहा है, क्योंकि स्पृश्य हिन्दू हमें अपवित्र मानते हैं। ऐसा नहीं है महाड़ में अस्पृश्यों के लिए पानी का अकाल पड़ गया है, बल्कि इसलिए कि स्पृश्य हिन्दू और हम समान हैं। यह हमारा अधिकार है और इस अधिकार के प्रतिपादन के लिए सभी को तैयार हो जाना चाहिए, दृढ़ संकल्प करना चाहिए। मेरा विश्वास है कि वहां कोई भी अप्रिय घटना नहीं होगी। इसलिए मेरा अनुरोध है कि आप निशंक होकर सत्याग्रह में भाग लें।

17
महाड सत्याग्रह परिषद*

महाड सत्याग्रह संग्राम की तैयारी के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने एक पत्रक प्रकाशित किया था। उसमें कहा गया था कि सत्याग्रह के लिए अस्पृष्य पूरी तरह से तैयार रहें। यह संदेश देने वाला पत्र इस प्रकार था –

बहिष्कृत हितकारिणी सभा की ओर से महाड में 25 दिसंबर, 1927 से सत्याग्रह शुरू होगा।

महाड़ के इस सत्याग्रह की मदद कीजिए।

"जिन्हें कुलवंत हैं, वे त्वरित (तुरंत) हाजिर हों।

उपस्थित न हों तो, आगे कष्ट भुगतने होंगे।।1।।"

सभी अस्पृश्यों को बताया जाता है कि दिनांक 25 दिसंबर, 1927 को महाड में एक सभा का आयोजन करना तय हुआ है। हो सकता है कि कुछ लोग यह पूछेंगे कि पिछले मार्च महीने की 19 तारीख को महाड में सभा ली गई थी। सो एक बार फिर उसी जगह सभा लेने में क्या तुक है? इसका जवाब है कि, चवदार तालाब का पानी पीने का उपक्रम हमारे कुछ जाति बंधुओं ने किया था, तब उनका विरोध करने वाले लोगों ने उन्हें ऐसा करने से मना करने के उद्देश्य से उनके साथ मारपीट की थी। मारपीट करने वाले स्पृश्य गुंडों को 4–4 महीनों की जेल के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई थी। दोनों पक्षों के नजरिए से यह न्यायालय का निर्णय महत्वपूर्ण है।

स्पृश्य लोगों के मन में भावना थी कि अस्पृश्य लोगों को चवदार तालाब पर पानी पीने न देना उनका अधिकार है। अब इस भावना का कोई आधार नहीं रहा। अब अगर फिर हमारी राह रोकेंगे तो उन्हें हवालात की सैर करनी पड़ेगी, इसमें कोई दो राय (संदेह) नहीं। इसी प्रकार अस्पृश्यों के मन में जो भावना थी कि उन्हें चवदार तालाब पर पानी लेने जाने का अधिकार नहीं है। वह अब दूर हो गई है। वे जान गए हैं कि चवदार तालाब पर अब हमारा अधिकार प्रस्थापित हो चुका है। अगर ऐसा नहीं होता तो जिन्होंने हमें तालाब पर जाने से रोका, उन्हें सजा नहीं होती बल्कि तालाब पर जाने वालों को यानी हम लोगों को सज़ा होती। कानूनन अब हमारा अधिकार स्थापित हो चुका है। उसे हर रोज़ की दिनचर्या का हिस्सा बनाना अभी बाकी है। 25 दिसंबर के दिन जो सभा बुलाई गई है, वह इस प्रकार की दिनचर्या बनाने की आदत डालने के उद्देश्य से ही बुलाई गई है।

इस सभा में उपस्थित रहने से किसी को डरना नहीं चाहिए। साथ ही किसी भी सनातनधर्मी आदमी का स्वार्थ से उपजा उपदेश सुनने की भी जरूरत नहीं। यह मसला इंसानियत का है। स्पृश्य लोगों द्वारा हम पर जो पैदाइशी अपवित्र होने का आरोप लगाया गया है, उसे हमें धो डालना है।

ऐसा नहीं कि यह कलंक केवल हम पर ही है। जिन सुशील माता–पिता के घर हम पैदा हुए हैं, उन पर भी यह कलंक लगाया गया है। उसे हटाना, दूर करना हर सुपुत्र का कर्त्तव्य है। इसी कर्त्तव्य को निभाने के लिए मेरी विनती है कि आप सब लोग इस परिषद में उपस्थित रहें।

इस काम के लिए धन की जरूरत है। जो लोग धन या अनाज देकर सहायता कर सकते हैं वे अवश्य ही सहायता करें। जिस काम के लिए हमारे हस्ताक्षर वाले खत और रसीदें लेकर स्वयंसेवक घूम रहे हैं। जो मदद देनी हो उन्हें दें, वे उसे हम तक पहुंचाएंगे। मदद के तौर पर आप जो भी देना चाहें वह उन्हें दें और रसीद लें। या आप अपनी मदद, सचिव, बहिष्कृत हितकारिणी सभा, दामोदर हाल, परेल, मुंबई, इस पते पर भेज दें, ऐसी नम्र विनती है।

आपका विनम्र,

डॉ. भीमराव अम्बेडकर

एम.ए. पी.एच.डी., बार एट लॉ, एम.एस.सी. अध्यक्ष

सदस्य–

राजमान्य राजेश्री, शिवराम गोपाल जाधव

रा. रा. संभाजी तुकाराम पौंडकर

रा. रा. बालाराम रामजी अम्बेडकर*

रा. रा. निर्मल लिंबाजी गंगावणे

रा. रा. राघो नारायण वनमाली

रा. रा. गणपत महादेव जाधव

रा. रा. गोविंद रामजी आडरेकर

रा. रा. पांडुरंग महादेव ववूरकर

रा. रा. लक्ष्मण गप्पू पुसईनकर

रा. रा. सखाराम रत्नाजी नागावकर

---

*इनकी मृत्यु 12 नवंबर, 1927 को हुई। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने प्रस्तुत पत्रक इस घटना से पहले छपवाया होगा। –संपादक)

रा. रा. अर्जुन रामजी नागावकर

रा. रा. चांगदेव रामायण मोहिते

रा. रा. पांडुरंग बाबाजी मांडलेकर

रा. रा. भागुराम रामजी शिरगावकर

रा. रा. सोनू सजन संदीरकर

रा. रा. विठ्ठल लक्ष्मण तिडकर

रा. रा. भाऊ बालू जाधव

रा. रा. भाविकनाथ रत्नू सालवे

रा. रा. पंढरीनाथ रामचंद्र आसुडकर

रा. रा. सीताराम नामदेव शिवतरकर

सचिव, सत्याग्रह कमेटी*

यह तीन दिनों तक चलने वाली महाड़ परिषद 25, 26 और 27 दिसंबर, 1927 को हुई थी। सभा की तैयारी का जिम्मा रा. अनंत विनायक चित्रे को सौंपा गया था। महाड़ सत्याग्रह में चित्रे जी ने बेहद सक्रिय भूमिका निभाई। उनकी सेहत को देखते हुए किसी के भी मन में यह आशंका उठ सकती थी कि क्या वे इतनी बडी जिम्मेदारी को निभा पाएंगे? लेकिन जिस सत्याग्रह कमेटी ने रा. चित्रे को यह जिम्मा सौंपा वे जानते थे कि उनमें कितनी चेतना भरी हुई है। परिषद के लिए रा. चित्रे ने जो काम किया, उसे देखने वालों को भी उनकी काबिलियत पर भरोसा हुआ। परिषद की सफलता का सारा श्रेय रा. चित्रे को ही जाता है। रा. चित्रे पंद्रह दिन पहले ही महाड पहुंचे। कुछ युवा लोगों के अलावा उन्होंने महाड़ के सभी स्पृश्य लोगों को सत्याग्रह के खिलाफ पाया। परिषद के कार्य में बाधा खड़ी करना और गांव में परिषद को किसी तरह का कोई सामान न मिले, इस बारे में गांव वालों के षड्यंत्र का उन्हें पता चला। तब उन्होंने अपने कायस्थ जाति के युवाओं को साथ लेकर अपना काम पूरा करने की ठानी। शांताराम पोतनीस, केशवराव देशपांडे, रा. वामनराव पत्की, कमलाकर टिपणीस आदि लोगों ने उनकी खूब सहायता की। इनमें विशेष रूप से रा. पत्की ने बहुत मदद की। उनकी मदद के बगैर परिषद के लिए जरूरी सामग्री मिल ही नहीं पाती। कई चीजें परिषद उधार भी ले सकती थी, लेकिन गांव के लोगों का विरोध होने के कारण हर चीज खरीद कर लानी पड़ी। इस कारण परिषद का खर्चा बढ़ा। हालांकि सोना देकर भी जहां चीजें खरीदी नहीं जा सकती

*डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र : चां. भ. खैरमोड़े, खंड 3, पृष्ठ 141–142

थीं, वहां इतना बढ़िया इंतजाम कैसे किया गया यही बड़े आश्चर्य की बात है। इतने बढ़िया इंतजाम के लिए रा. पत्की को जितना भी धन्यवाद दें, कम है। उनका साथ देने के लिए पुणे से श्री घाडगे, रा. थोरात और भानगर से रा. भानगरकर जमेदार दिनांक 24 को महाड़ आए थे। वहां इकट्ठा हुए प्रतिनिधियों को अनुशासन सिखाना, सबके खाने का इंतजाम करना आदि कठिन काम उनके जिम्मे सौंपे गए थे। उन्होंने अपनी जिम्मेदारी इतने बढ़िया ढंग से निभाई कि सब लोग देखते रह गए। इस सभा का महत्व भांप कर 19 तारीख से ही कलक्टर, जिला पुलिस सुपरिंटेंडेंट आदि अधिकारी लोग महाड आकर रुके थे। 23 तारीख से प्रतिनिधियों का आना शुरू हुआ और 25 तारीख को इस समुदाय में लोगों की संख्या 10,000 से अधिक हो गई थी। इस दौरान 25 तारीख को अस्पृश्यों को तालाब पर जाने से मना करने वाला आदेश कलक्टर से नहीं मिलने वाला है, यह जानने के बाद स्पृश्य लोगों ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और अन्य चार अस्पृश्यों पर महाड के दीवानी न्यायालय में फरियाद दाखिल की थी और न्ययालय में अर्जी दाखिल कर 25 तारीख को अस्पृष्य लोग चवदार तालाब पर इकट्ठा न हों इस आशय का मनाही आदेश न्यायालय से प्राप्त कर लिया था। इस कार्रवाई के कारण कलक्टर नाराज हो गया था लेकिन दीवानी अदालत की अवमानना न हो, इसलिए उन्हें अपनी पुरानी नीति में कुछ बदलाव करना पड़ा। हालांकि, क्रिमिनल प्रोसीजर कोड की धारा 144 के तहत वे अपने अधिकार के तहत मनाही का आदेश निकाल सकते थे लेकिन उन्होंने ऐसा कुछ नहीं किया। आखिर तक साम, दाम मार्गों का अवलंब किया गया। यह विशेष रूप से ध्यान में रखने की बात है। हालांकि 23 तारीख से परिषद के कैंप में सुबह शाम उपस्थित रहकर कलक्टर ने लोगों को उपदेश देकर सत्याग्रह से पीछे हटाने की कोशिश की। लेकिन उपदेश करने के बाद जब–जब वे पूछते कि आप जिले के कलक्टर की बात मानेंगे या डॉ. अम्बेडकर की तो हर बार उन्हें यही जवाब मिलता कि हम डॉ. अम्बेडकर की बात मानेंगे।

डॉ. अम्बेडकर का महाड़ में आगमन

डॉ. अम्बेडकर और अन्य दो–ढाई सौ लोग मुम्बई से 24 दिसम्बर, 1927 की सुबह 'पद्मावती' नाव में सवार होकर निकले। मुंबई के रा. शिवतरकर, धोंडी नारायण गायकवाड़, कांबले, गंगावणे, वनमाली, पुणे के राजभोज, नासिक के भाऊराव गायकवाड़ आदि अस्पृश्य नेता उपस्थित थे। उनके साथ स्पृश्य लोगों में से सोशल सर्विस लीग के कार्यकर्ता सहस्त्रबुद्धे और समता संघ के प्रधान बंधु भी शामिल हुए। "ब्राह्मण ब्राह्मणेतर" के संपादक, रा. देवराव नाइक बीमारी के कारण उपस्थित नहीं हो पाए। सत्याग्रही लोग बंदरगाह पहुंचने के पूर्व ही बंदरगाह पर उनके स्वागत और अभिनंदन के लिए वहां कई लोग इकट्ठा हुए थे। उन्होंने नेताओं का स्वागत

फूलों के हार पहना कर और गुलदस्ते देकर किया। महाड़ सत्याग्रह के जयघोष से किनारा गूंज उठा। 9 बजे पद्मावती नाव मुंबई से निकली थी जो शाम साढ़े पांच बजे हरेश्वर बंदरगाह में पहुंची। रात में जितने भी बंदरगाह मिले हर जगह सत्याग्रह की जय के नारे लगते रहे।

कोल मांडला में स्वागत

धरमतर से महाड जाना बहुत आसान था। लेकिन मोटर वाले लोगों ने अगर हड़ताल की तो मुंबई के लोगों के लिए 50–55 मील तक चल कर महाड पहुंचना असंभव होगा। इसलिए धरमतर के रास्ते से न जाते हुए दासगाव की राह से जाना मुम्बई के सत्याग्रहियों द्वारा तय हुआ। कोल मांडला के लोग यह बात जानते थे। उन्होंने एक स्वागत कमेटी बनाई। और मुंबई से आने वाले सत्याग्रहियों का स्वागत करने की सारी तैयारी कर ली। इस स्वागत कमेटी के अध्यक्ष श्री पांडुरंग बाबाजी मांडलेकर थे। कोल मांडला जैसे गांव में उन्होंने जैसा इंतजाम किया था, वह इतना बढ़िया था कि वैसा इंतजाम मुंबई जैसे शहर में भी शायद नहीं होता। यहां लोगों ने सुखपूर्वक रात बिताई। सुबह नाश्ता करने के बाद आठ बजे लोग दासगाव जाने के लिए अंबा नामक जहाज में चढ़े और निकले। दोनों तरफ बड़े–बड़े पहाड़ और बीच में से खाड़ी और आस–पास हरे–भरे पेड़ इस तरह का बेहद सुंदर नजारा सूरज की रोशनी में मन को मोह रहा था। साढ़े बारह बजे अंबा दासगाव पहुंची। वहां करीब तीन हजार लोग महाड़ जाने के लिए बाबासाहेब तथा अन्य मुम्बई के सत्याग्रहियों का इंतजार कर रहे थे। साथ ही कुलाबा जिले के पुलिस सुपरिंटेंडेंट मि. फेरेंट, पुलिस इंस्पेक्टर, फौजदार आदि पुलिस अधिकारी वहां उपस्थित थे। पुलिस सुपरिंटेंडेंट साहब और डॉ. अम्बेडकर ने एक दूसरे से कुशल–मंगल पूछा। फिर डॉ. अम्बेडकर को उन्होंने पत्र सौंपा जिसमें लिखा था कि कलक्टर साहब मिस्टर हूड आपसे मिलना चाहते हैं। इसलिए डॉ. अम्बेडकर और श्री सहस्त्रबुद्धे फेरेंट साहब की मोटर में बैठ कर महाड़ गए। जाने से पहले दासगाव में उपस्थित हुए लोगों को इकट्ठा कर बताया कि अनुशासनबद्ध तरीके से, शांतिपूर्वक ढंग से महाड़ आएं।

दासगाव से महाड़ तक

दासगाव बंदरगाह से महाड़ करीब पांच मील की दूरी पर है। डॉ. अम्बेडकर और श्री सहस्त्रबुद्धे के जाने के बाद श्री शिवतरकर और प्रधान बंधुओं ने वहां इकट्ठा हुए सत्याग्रहियों को डॉ. साहेब की हिदायतें ध्यान में रखने की विनती की। पांच लोगों की कतार बना कर उपस्थित लोगों की मानो सेना बना दी। इस प्रचंड थल सेना का जुलूस हर हर महादेव, महाड़ सत्याग्रह की जय आदि घोषणाएं करते हुए निकली।

इस जुलूस में कुछ नीति पर वाक्य लिखीं बीस–पच्चीस तख्तियां थीं। 'बहिष्कृत हितकारिणी सभा' के स्वयंसेवक दल का बैंड बज रहा था। सत्याग्रह के गीत गाए जा रहे थे। इस तरह यह जुलूस महाड़ पहुंचा। पुलिस सुपरिंटेंडंट इस जुलूस के आसपास ही चक्कर काट रहे थे। तय रास्ते से यह थल सेना जब सत्याग्रह की छावनी के पास पहुंचा, तब श्री अनंतराव चित्रे सामने आए उन्होंने वहां से दिखाई दे रहे रायगड़ किले की ओर इशारा कर इस कार्य में यश प्राप्ति के लिए श्री शिवराय और जिजामाता का जयकार करने के लिए कहा। उस जयकार से चारों दिशाएं गूंज उठीं। सभी लोगों में वीरता का संचार हुआ। बड़े उत्साह के साथ लोगों ने सत्याग्रह छावनी में प्रवेश किया।

परिषद का अधिवेशन

पहला दिन 25–12–1927

महाड़ के स्पृश्य लोगों द्वारा योजनाबद्ध षड्यंत्र रच परिषद के कामों के लिए सामग्री न मिल पाने के बारे में पहले ही हमने बताया है। इसीलिए कार्यक्रम का पंडाल खड़ा करने के लिए जगह मिल पाना बेहद मुश्किल हो गया था। महाड शहर और आसपास की सभी भूमि गूजर ब्राह्मणों की थी। इसलिए वे बड़े खुश हो रहे थे कि परिषद करने वालों की चुटियां अपने हाथों में होने के कारण उन्हें अब नाकों चने चबाने पड़ेंगे। लेकिन पास ही में फत्तेखान नामक मुसलमान की ज़मीन थी। उन्होंने परिषद को सभा का आयोजन करने के लिए खुशी–खुशी अपनी ज़मीन दे दी। खबर जब गूजर ब्राह्मणों तक पहुंची तब उनके हाथ–पैर ढीले पड़ गए। उन्होंने कसम खाई थी कि जो हो वे इस परिषद को होने ना दें। इसलिए उन्होंने फत्तेखान के दरवाजे पर धरना दिया। अस्पृश्य लोगों को परिषद के लिए जगह न दें, यह कह कर उनके पैर पकड़ लिए। लेकिन उनकी एक न चली। दिया हुआ वचन मैं कभी नहीं तोडूंगा, यह कह कर उन्होंने उन सभी याचकों को चलता कर दिया। इस प्रकार पाई गई जगह पर 7 (सात) से 8 (आठ) हजार लोग बैठ पाएं, इतना विशाल पंडाल खड़ा किया गया था। लता–पत्तियों से उसे सजाया गया था। आसपास कुछ तख्तियां लटकाई गई थीं जिन पर निम्नलिखित घोषणाएं लिखी गई थीं–

ब्राह्मण अथवा महार हो, मैं नहीं आंकता किसी को भी कभी।
इस सृष्टि में जो दिव्य है, वह है, वह है इंसानियत।।1।।
आप ना गर्व करें, ऊंची जाति मिल कर सब।
शुक्र शोणित की खदानें, आप और हम हैं एक ही योनि जने।।2।।

विष्णुमय दुनिया वैष्णव धर्म, भेदाभेद भ्रम अमंगल ।।3।।
ईश्वरः सब भूतानांहृदयेशेऽर्जुन तिष्ठति।। 4।।
सती बनने की कसम अगर खायी जिंदगी दांव पर लगाएं।।5।।
जीतने का व्रत जिसने लिया। वह मरने के डर से पीछे ना हटे।।6।।
ऐसी कैसी छुआछूत। छूते ही होते अपवित्र।।7।।
यह धर्मयुद्ध है अब, तुम न करो तो कैसे चलेगा?
ऐसा करो तो स्वधर्म कीर्ति को डुबाओगे, पाप को स्वीकारेंगे।।8।।

मरोगे लेकिन नाम होगा, इस धरा में सन्मुख जो समस्या होगी खड़ी उस चुनौती का जमकर उसको निपटारा करना होगा।

इसलिए उठो साथियों, दृढ़ निश्चय करें पूर्णतः रण युद्ध का।।9।।
अब तक तुमने यह क्यों नहीं सोचा, किस सोच में अब पड़े हो
स्वधर्म को भूले हो, तैर कर पार होना है जरूरी।।10।।

अंदर केवल गांधी की एक तस्वीर थी। मंडप के दरवाजे में मनुस्मृति के दहन के लिए एक बढ़िया तरीके से सजी वेदी तैयार की गई थी। मनुस्मृति का दहन किए जाने के कारण जिन ब्राह्मण्य ग्रस्त लोगों को गुस्सा आया था, वे कहते फिर रहे हैं कि सत्याग्रह कर नहीं पाए, इसलिए जब आ ही गए हैं तो कुछ करना तो होगा ही यह सोच कर डॉ. अम्बेडकर ने मनुस्मृति जलाने का उपक्रम किया। असल में पंडाल खड़ा करते समय ही मनुस्मृति जलाने के लिए वेदी भी तैयार की गई थी। जो यह जान लेंगे उनके मन में दुविधा नहीं होगी। असल में मनुस्मृति जलाने का निश्चय ऐन समय पर तय नहीं किया गया था। वह पहले से तय कार्यक्रम था। परिषद के तय कार्यक्रमों में वह शामिल था, यह आगे दी जा रही परिषद के कार्यक्रमों की सूची से जाहिर होगा।

महाड़ सत्याग्रह परिषद

कार्यक्रम

दिनांक 25 दिसंबर, 1927

सुबह 10 बजे अध्यक्ष का भाषण। बाद में परिषद के सभी लोग तालाब पर जाकर पानी भर कर ले आएंगे।

दोपहर 12.30 बजे भोजन। बाद में 3 बजे मनुस्मृति का दहन। समयोचित भाषण। उसके बाद अधिवेशन में उपस्थित सदस्य एक बार फिर तालाब पर जाकर पानी भर कर ले आएंगे। रात 7.30 बजे अल्पाहार। बाद में कीर्तन और सत्यशोधक तमाशा।

दिनांक 26 दिसंबर, 1927

सुबह 10 बजे जाति की अंतर्व्यवस्था में सुधार लाने के बारे में प्रस्ताव। बाद में पूरी परिषद तालाब पर जाकर पानी भर कर ले आएगी। दोपहर साढ़े बारह बजे भोजन। उसके पश्चात् तीन बजे सार्वजनिक प्रस्ताव और फिर एक बार कांफ्रेंस में उपस्थित सभी लोग चवदार तालाब पहुंचकर वहां से पानी भर कर लाएंगे। साढ़े सात बजे अल्पाहार। बाद में कीर्तन और सत्यशोधक नाट्य प्रदर्शन उसके बाद परिषद को बरखास्त किया जाएगा। केवल 250 लोग रुके रहेंगे और वे 2 जनवरी, 1928 तक पानी भरने का कार्यक्रम जारी रखेंगे।

विशेष सूचना

इस अवसर पर बेहद विनम्रता से और शांतिपूर्वक बर्ताव करने की सत्याग्रह कमेटी की विनती है। सत्याग्रह के लिए आए लोगों को उम्मीद है कि वे हालात कैसे भी क्यों न हों, लोगों को उम्मीद है कि वे हर हाल में शांतिभंग नहीं होने देंगे।

आपका विनम्र
सीताराम नामदेव शिवतरकर
सचिव, सत्याग्रह कमेटी

मुंबई के लोग समय से महाड पहुंच नहीं पाए थे इसलिए और कुछ अन्य कारणों से परिषद के तय कार्यक्रमों में फेर–बदलाव करना पड़ा लेकिन तय कार्यक्रमों पर एक नजर डालने के बाद पता चलता है कि मनुस्मृति को जलाने का कार्यक्रम ऐन समय पर नहीं बनाया गया था। बाद में किए गए बदलावों के अनुसार शाम करीब 4 बजे कार्यक्रमों की शुरुआत हुई। शुरुआत में बच्चों ने ईशस्तवन गाया। उसके बाद सत्याग्रह कमेटी के सचिव श्री शिवतरकर ने श्री श्रीधर बलवंत तिलक, डॉ. पुरुषोत्तम सोलंकी, एम.एल.सी. के सहानुभूति व्यक्त करने वाले तार और पत्र पढ़ कर सुनाए। उसके बाद तालियों की गड़गड़ाहट के बीच कमेटी के अध्यक्ष डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपना भाषण पढ़ कर सुनाया।

उन्होंने अपने भाषण में कहा,

सद्गृहस्थों! सत्याग्रह की कमेटी के आमंत्रण का आदर करते हुए आप लोग आज यहां आए इसके लिए कमेटी के अध्यक्ष के नाते मैं आप सबका स्वागत करता हूं।

आप में से कइयों को याद होगा कि आप सब मिल कर पिछले मार्च महीने की 19 तारीख को यहां उपस्थित होकर महाड़ के चवदार तालाब पर पानी पीने पहुंचे

थे। उस वक्त महाड़ के लोगों ने भले हमें पानी भरने से नहीं रोका। लेकिन बाद में मारपीट कर एहसास कराया कि इस काम पर उन्हें आपत्ति है। उस मारपीट का अंत जिस तरह होना था उसी तरह हुआ। मारपीट करने वाले स्पृश्य लोगों को चार–चार महीनों तक जेल की सजा मिली। आज वे लोग जेल में हैं। यदि पिछले मार्च को हमारे काम में रुकावट नहीं डाली जाती तो साबित हो जाता कि इस तालाब पर पानी भरने का हक हमें भी है। यह बात स्पृश्य लोग भी मान जाते तो आज हमें यह कार्यक्रम नहीं करना पड़ता। दुर्भाग्य से यह हो नहीं पाया। इसीलिए आज की इस सभा का आयोजन करना पड़ा। महाड़ का यह तालाब सार्वजनिक है। महाड़ के स्पृश्य लोग इतने समझदार हैं कि वे खुद इस तालाब का पानी भरते हैं, ऐसा नहीं है अपितु मुसलमान आदि अन्य धर्म के लोगों को भी यहां से पानी ले जाने के लिए वे मना नहीं करते। सो, मुसलमान आदि परधर्मी लोग भी यहां से पानी भर कर ले जाते हैं। मानवों से कनिष्ठ माने गए पशु–पक्षी आदि जीवों को भी इस तालाब पर पानी पीने की मनाही नहीं है। इतना ही नहीं अस्पृश्यों द्वारा पाले गए जानवरों को भी वे यहां पानी पीने देते हैं। स्पृश्य हिंदू लोग इस प्रकार दया का मानों मूर्तिमान रूप मायका हैं। वे कभी हिंसा नहीं करते, किसी को परेशान नहीं करते। खाना बनाते समय कौआ आए तो उसे खाने वाले हाथ से न भगाने वाले कृपण या स्वार्थी लोग भी वे नहीं हैं। साधुसंतों और याचकों की संख्या में आई बढ़ोत्तरी उनके दातृत्व का जीता–जागता सबूत है। परोपकार ही पुण्य है और पर पीड़ा ही पाप है, इस सिद्धांत के अनुसार उनका बर्ताव है। इतना ही नहीं, किसी ने अगर दुःख दिया तो उसे चुपचाप सहना चाहिए" इस कहावत के अनुसार उनका स्वभावगत धर्म है। इसीलिए वे गाय की तरह निरुपद्रवी प्राणी के साथ जिस तरह दयाभाव से पेश आते हैं उसी तरह सांप जैसे उपद्रवी कृमि–कीटों की भी वे रक्षा करते हैं। अर्थात् वे 'सर्वाभूति एक आत्मा', वाली बात को अपना शील बनाए हुए हैं। ऐसे स्पृश्य लोग अपने ही धर्म के कुछ लोगों को उसी चवदार तालाब का पानी लेने से मना करते हैं!! तब यह सवाल मन में आता है कि वे हमें ही भला क्यों मना करते हैं? इस सवाल का जवाब सब लोग ढंग से सोचें यह बहुत जरूरी है। उसके बगैर आज की सभा का महत्व आपको ठीक से समझ नहीं आएगा, ऐसा मुझे लगता है। हिंदुओं में शास्त्र के अनुसार चार, लेकिन रूढ़ियों के अनुसार पांच वर्ण हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अतिशूद्र। हिंदू धर्म के इन यम–नियमों में से पहला नियम वर्णव्यवस्था का है। उसी धर्म के दूसरे यम–नियम के अनुसार वर्ण असमान दर्जे के हैं। एक से दूसरा हलका इस तरह उसकी रचना और क्रम है। इन यम–नियमों के कारण केवल दर्जे तय हुए हैं, ऐसा भी नहीं है। कौन किस दर्जे का है, यह पहचान में आए इसलिए हर वर्ण की सीमाएं तय की गई हैं। हिंदू धर्म में बेटी बंदी, रोटी बंदी, लोटा बंदी और मिलने–जुलने पर पाबंदी आपसी सहवास की सीमाएं हैं, ऐसा लोग समझते हैं।

लेकिन उनकी यह समझ अधूरी है। क्योंकि ये पाबंदियां मेल–मिलाप की सीमाएं तो हैं ही, लेकिन मूलतः वे असमान दर्जे के लोगों को उनका दरजा दिखाने के लिए बनाई गई हैं। अर्थात् मिलने–जुलने की सीमाएं असमानता के चिह्न हैं। जिस तरह सिर पर मुकुट पहने हुए को राजा माना जाता है, हाथ में धनुष हो तो उसे क्षत्रिय माना जाता है उसी तरह जिनके पास इनमें से, कोई इन पंच बंदी का कोई भी बंधन, मर्यादा न हों वह वर्ग सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इन चार बंधों ने जिसे पूरी तरह जकड़ा हुआ है उस वर्ग का दर्जा सबसे हीन माना जाता है। ये बंद कायम रखने के लिए जो कोशिश की जाती है, वह केवल इसलिए की जाती है क्योंकि धर्म के कारण जो असमानता निर्माण हुई है वह उनके कारण टूट जाएगी और उसकी जगह समानता स्थापित होगी। महाड़ के लोग अस्पृश्यों को चवदार तालाब का पानी पीने नहीं देते, वह इसलिए नहीं कि उनके छूने से पानी सड़ जाएगा या भाप बन कर उड़ जाएगा। अस्पृश्यों को तालाब का पानी पीने न देने के पीछे जो वजह है, वह यह कि धर्मशास्त्रों ने जिन जातियों को असमान करार दिया है, उन जातियों को वे अपने समान मानने के लिए तैयार नहीं हैं।

सज्जनों! हमारी इस लड़ाई का, संघर्ष का भावार्थ (आशय) क्या है यह तो इस बात से आप समझ ही गए होंगे। सत्याग्रह समिति ने आपको चवदार तालाब का पानी पीने के लिए महाड़ बुलाया है, ऐसी बात नहीं है। हम और आप चवदार तालाब का पानी पीकर अमर हो जाएंगे ऐसा भी नहीं है। और आज तक चवदार तालाब का पानी पिए बगैर भी हम जिंदा हैं ही। चवदार तालाब पर जाना है तो सिर्फ उसका पानी पीने के लिए नहीं। हम वहां जा रहे हैं तो यह साबित करने के लिए कि हम भी औरों की तरह इंसान ही हैं। यानी कि, यह सभा समानता की लड़ाई का बिगुल बजाने के लिए ही बुलाई गई है यह बात स्पष्ट है। इस दृष्टिकोण से यदि हम इस सभा के बारे में सोचेंगे, विचार करेंगे तो हर किसी को यकीन होगा कि यह अपूर्व है। आज जो हालात हैं उसका अगर हमें तोड़ चाहिए तो वह हिंदुस्तान में हमें कहीं नहीं मिलेगा। इतिहास में इस तरह की सभा का उदाहरण ढूंढना होगा, तो हमें फ्रांस का इतिहास खंगालना होगा। 138 साल पहले फ्रांस के 16वें लुई राजा ने 24 जनवरी, 1789 के दिन एक आदेश–पत्र निकाल कर अपने राज्य की प्रजा के प्रतिनिधियों की एक ऐसी ही सभा बुलाई थी। कुछ इतिहासकार इस फ्रेंच राष्ट्रीय सभा को बुरा–भला कहते हैं। उनका आरोप है कि इस सभा ने फ्रांस देश के राजा और रानी को फांसी चढाया, ऊंचे वर्ग के लोगों को जान मुट्ठी में दबा कर भागने के लिए विवश किया। और उनके कत्ल किए। बचे हुओं को देश निकाला दिया। अमीरों की धनसंपदा पर कब्जा किया और पंद्रह सालों से अधिक समय तक पूरे यूरोप में गृहकलह मचाए रखा। मेरी राय में उनके ये आरोप गलत हैं। इतना ही नहीं तो ऐसे इतिहासकारों

को फ्रेंच राष्ट्रीय सभा ने जो कार्य किया है, उसका सही मर्म समझ नहीं आया, यही कहना पड़ेगा। ऐसा नहीं कि इस सभा के कारण केवल फ्रांस का ही कल्याण हुआ हो, पूरे यूरोप का कल्याण हुआ है। आज यूरोपीय राष्ट्रों के पास सुख–समृद्धि यदि है तो उसकी एक मात्र वजह यह है कि 1789 में हुई क्रांतिकारी फ्रेंच राष्ट्रीय सभा ने सामाजिक संगठन के जो सिद्धांत अस्त–व्यस्त और निर्माल्यस्वरूप हुए थे उसे पुनः फ्रेंच राष्ट्र के सामने रखे और जबरदस्ती उन पर थोपे गए और वे ही सिद्धांत यूरोप ने माने और उनके अनुसार आचरण में लाने का कार्य किया।

इस फ्रेंच राष्ट्रीय सभा का महत्व और उसके सिद्धांतों की महत्ता उपयोगिता समझने के लिए तत्कालीन फ्रेंच समाज की स्थितियों को जानना जरूरी है। हमारा हिंदू समाज वर्णाश्रम धर्म के आधार पर बना है, यह हम सब जानते हैं। सन् 1789 में इसी तरह की वर्णाश्रम व्यवस्था फ्रांस में भी थी। फर्क सिर्फ इतना था कि फ्रेंच समाज केवल तीन वर्णों तक सीमित था। हिन्दुओं के समान फ्रेंच समाज में भी ब्राह्मण वर्ण था। क्षत्रिय वर्ण भी था। हालांकि फ्रेंच समाज में वैश्य और शूद्र और अतिशूद्र इस तरह अलग अलग वर्ण किए बिना इन तीनों को मिला कर एक तृतीय वर्ण बनाया गया था। यह फर्क बहुत ही गौण है। महत्वपूर्ण बात यह है कि हिंदू समाज और फ्रेंच समाज इन दोनों समाजों में वर्णव्यवस्था एक–सी थी। वर्णव्यवस्था के कारण दो वर्णों के बीच पैदा होने वाली भिन्नता ही इन दो समाजों की समानता नहीं थी तो वर्ण व्यवस्था के बीच में होने वाली असमानता भी एक–सी थी। फ्रांस में असमानता का स्वरूप थोड़ा अलग था। वहां वर्णों के बीच असमानता थी, और वह बेहद ज्यादा थी। ध्यान में रखने वाली बात यह है कि आज यहां हो रही इस सभा में और 5 मई, 1789 को फ्रांस के वरसाय में हुई फ्रांसिसी लोगों की क्रांतिकारी राष्ट्रीय सभा में बहुत अधिक समानताएं हैं।

उनकी आपसी स्थितियों में समानताएं दिखाई देती हैं। इतना ही नहीं तो उनके उद्देश्य में भी काफी समानता है। फ्रांसिसी समाज के बीच संगठन खड़ा करने के लिए यह सभा बुलाई गई थी। आज की यह सभा हिंदू समाज का संगठन करने के लिए बुलाई गई है। अर्थात् यह संगठन किन सिद्धांतों के आधार पर खड़ा किया जाए इस बारे में विचार–विमर्श करने से पहले फ्रांसिसी लोगों की सभा ने फ्रांस देश का संगठन बनाने के लिए कौन–सी नीति अपनाई और किन सिद्धांतों का आधार लिया गया, इस बारे में हम सबको जानना जरूरी है। उस फ्रांसिसी सभा का कामकाज हमारी आज की सभा के कामकाज से बहुत विस्तृत था। फ्रांसिसी लोगों की इस सभा को राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक स्तर पर तीन पहलुओं वाला संगठन बनाना था। हमें सिर्फ सामाजिक और धार्मिक संगठन कैसे बनेगा इस बारे में सोचना आवश्यक है। फिलहाल राजनीतिक संगठनों से हमें कुछ लेना–देना नहीं है। धार्मिक

और सामाजिक संगठन के संदर्भ में इस फ्रेंच सभा ने क्या किया, यही हमें देखना है। इस फ्रांसिसी सभा की सामाजिक और धार्मिक संगठनों के बारे में क्या नीति थी इसका पता उसके द्वारा निकाले गए तीन महत्वपूर्ण घोषणा–पत्रों से किसी को भी चल सकता है। उनका पहला घोषणा–पत्र 17 जून, 1789 को जारी किया गया। यह घोषणा–पत्र फ्रांस देश के वर्णाश्रम धर्म के संदर्भ में था। फ्रांसिसी समाज त्रिवर्णी था यह हम पहले ही देख चुके हैं। घोषणा–पत्र के जरिए त्रिवर्णी समाज व्यवस्था को हटा कर समाज को एकवर्णी बनाया गया। इतना ही नहीं राजनीतिक सभागार में इन तीन वर्णों के लोगों के लिए जो अलग–अलग बैठने की जगहें तय की गई थीं, उस व्यवस्था को खत्म कर दिया। दूसरा घोषणा–पत्र धर्मोपदेशकों के बारे में था। पुरातन रूढ़ियों के मुताबिक धर्मोपदेशकों की नियुक्तियां अथवा उन्हें हटाना राष्ट्र के दायरे में नहीं था। पोप जैसे विदेशी धर्माधिकारी की ही इस मामले में चलती थी। पोप जिसे धर्मोपदेशक नियुक्त करे, वही धर्मोपदेशक बनता था। फिर जिन्हें वह उपदेश देता उनकी नजर में भले वह उस पद के लिए योग्य हो अथवा न हो! घोषणा–पत्र के द्वारा धर्माधिकारियों की इस स्वयंभू सत्ता को हटा दिया गया। यह पेशा कौन अपनाएगा, इस पेशे के लिए कौन लायक है और कौन लायक नहीं है, नियुक्ति के बाद वेतन दिया जाए अथवा नहीं आदि निर्णय लेने के अधिकार घोषणा–पत्र के द्वारा फ्रांसिसी राष्ट्र को सौंपे गए। तीसरा घोषणा–पत्र राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक व्यवस्था से नहीं जुड़ा था। वह साधारण था और हर तरह की सामाजिक व्यवस्था किन सिद्धांतों के आधार पर खड़ी की जाए इस बारे में था। इस हिसाब से यह तीसरा घोषणा–पत्र बहुत महत्वपूर्ण है। अन्य घोषणा–पत्रों का यह राजा है कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी। पूरी दुनिया में यह घोषणा–पत्र जन्म से प्राप्त मानवी अधिकारों से संबंधित घोषणा–पत्र के नाम से मशहूर हो गया। वह केवल फ्रांस के इतिहास की एक अनूठी चीज है ऐसा नहीं है। सभी विकसित राष्ट्रों के इतिहास में उसे महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है। क्योंकि इस सभा का अनुकरण कर यूरोप के हर राष्ट्र ने अपनी राज्य व्यवस्था में उसे स्थान दिया है। इसलिए ऐसा नहीं कि उसके कारण केवल फ्रांस में ही क्रांति नहीं हुई, बल्कि उसके कारण पूरी दुनिया में क्रांति आई, ऐसा कहना योग्य होगा। इस घोषणा–पत्र में कुल 17 धाराएं हैं। उनमें से कुछ महत्वपूर्ण धाराएं आगे दे रहे हैं –

(1) सभी इंसान जन्म से समान होते हैं और मृत्युपर्यंत समान दर्जे के ही रहेंगे। जनहित के कारणों से ही उनके दर्जे में अंतर (भेद) किया जा सकता है। बाकी मामलों में सभी का दर्जा एक समान होना चाहिए।

(2) उपरोक्त जन्मसिद्ध अधिकारों को कायम बनाना ही राजनीति का अंतिम उद्देश्य होना चाहिए।

(3) सभी इन्सान सर्वाधिकार की मातृभूमि है। किसी भी व्यक्ति के, समुदाय के अगर वर्ग के विशिष्ट अधिकार अगर जनता के द्वारा दिए हुए नहीं हों तो अन्य किसी आधार पर, फिर भले वे राजनीतिक आधार हों या धार्मिक आधार हों, उन्हें मान्यता नहीं दी जाएगी।

(4) किसी भी व्यक्ति को अपने जन्मसिद्ध अधिकारों के अनुसार आचरण करने की पूरी स्वतंत्रता है। यदि उस व्यक्ति की आजादी पर रोक लगाने की आवश्यकता का कारण यह होगा कि अन्य व्यक्ति को अपने जन्मसिद्ध अधिकारों का उपभोग करने का अवसर प्राप्त हो, इस सीमित अर्थ में ही व्यक्ति की स्वतंत्रता पर रोक लगाई जाएगी और यह व्यक्ति के अधिकारों पर रोक लगाने की सीमा कानून के द्वारा तय की जाएगी। वह धर्मशास्त्रों के आधार पर तय नहीं की जाएगी।

(5) समाज के लिए हानिकारक बातें करने पर ही कानूनी पाबंदी लगाई जाएगी। कानूनन जिन बातों पर प्रतिबंध न हो उन्हें करने की आजादी हर किसी को समान रूप से हो। साथ ही, जो बातें करना कानूनन जरूरी न हों उन्हें करने के लिए किसी को भी बाध्य न किया जाए।

(6) किसी वर्ग द्वारा तय किए गए बंधन यानी कानून नहीं। कानून कैसा होना चाहिए यह तय करने का हक जनता के हर सदस्य को अथवा उसके प्रतिनिधि को होना चाहिए। कानून सुरक्षात्मक हो या प्रशासनात्मक, वह सब पर समान रूप से लागू हो। सबकी समानता के सिद्धांत पर ही किसी भी तरह का प्रबंधन खड़ा करना न्यायपूर्ण होता है। सभी व्यक्तियों की योग्यता किसी भी प्रकार के मानसम्मान के लिए, अधिकार के लिए, व्यवसाय के लिए एक समान होगी। हर व्यक्ति के गुणों में जो फर्क होता है केवल उसी के आधार पर इस बारे में भेदाभेद किया जा सकता है। लेकिन जन्म के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता।

आज की इस सभा के कारण फ्रांसिसी राष्ट्रीय सभा की प्रतिमा आपकी आंखों के सामने साकार होनी चाहिए, ऐसा मुझे लगता है। फ्रांसिसी राष्ट्रीय सभा ने फ्रांसिसी राष्ट्र के संवर्धन के लिए जो मार्गदर्शन तैयार किया तथा जिस मार्ग को सभी विकसित राष्ट्रों ने मान्यता दी वही मार्ग हिंदू समाज के संवर्धन के लिए इस सभा को अपनाना चाहिए, तथा बेटी–बंदी से लेकर मिलने–जुलने पर लगी पाबंदी तक के वर्णाश्रम धर्म के चोखटे की कील उखाड़ कर हिंदू समाज के वर्णों को एक बनाना चाहिए। उसके बगैर अस्पृश्यता नष्ट नहीं होगी और न समता प्रस्थापित होगी।

हममें से कुछ लोगों को हो सकता है लगे कि हम अस्पृश्य हैं, सो हम पर लादी गई लोटा–बंदी और मेल–मिलाप की पाबंदी हट जाए यही बहुत हुआ। वर्णव्यवस्था

से हमारा कुछ लेना–देना नहीं है। वह जैसे है उसी हालत में रहे, तब भी क्या फर्क पड़ता है? लेकिन मेरी राय में इस तरह की सोच गलत है। वर्णाश्रम को कायम रखते हुए अस्पृश्यता का उन्मूलन करने की नीति अपनाई तो अपना उद्देश्य एकदम हलका है, ऐसा लोग कहेंगे। मनुष्य मात्र के उद्धार के लिए जैसे बाह्य कोशिशों की जरूरत होती है, उसी प्रकार इच्छाओं की भी जरूरत होती है। इतना ही नहीं बल्कि इच्छाओं के बगैर इन्सान कोशिशें भी करेगा, इस बारे में मुझे शक है। इसलिए बड़ी कोशिशें करनी होंगी तो इच्छाएं भी बहुत बड़ी होनी चाहिए। इच्छाएं पालते समय इस बात की फिकर नहीं करनी चाहिए कि उन्हें पूरा भी किया जा सकता है या नहीं। इस बारे में मन में न डर और और न शर्म को प्रवेश करने दें। अगर शर्म पालनी ही हो तो इच्छाएं छोटी होने की पालें। अस्पृश्यता के जाने से आज हम जो अतिशूद्र हैं व शूद्र होंगे लेकिन अतिशूद्र से शूद्र होने में यह नहीं कहा जा सकता कि अस्पृश्यता का जड़समेत नाश हुआ है। अस्पृश्यता निवारण के लिए मिलने पर पाबंदी, लोटी–बंदी आदि तोड़ने जैसी छोटी इच्छाएं रख कर हमारा काम अगर होता तो मैं आपसे वर्णव्यवस्था को खत्म करने का आग्रह कतई नहीं करता। सद्गृहस्थों! आप जानते हैं कि सांप को मारना हो तो उसकी पूंछ पर मार कर नहीं चलता, उसका सिर कुचलना पड़ता है। किसी भी हानि करने वाले तत्व को निपटाना हो तो पहले उसकी जड़ को ढूंढ कर उसे उखाड़ना पड़ता है।

किसकी मौत किस में है यह ढूंढ कर ठीक उसी पर वार करना होता है। भीम ने दुर्योधन की जंघा पर गदा से प्रहार किया इसलिए दुर्योधन मरा। वह उसके सिर पर वार करता तो दुर्योधन नहीं मरता। क्योंकि दुर्योधन की मौत उसकी जंघा में थी। सिर में नहीं थी। शरीर के रोग की मृत्यु किस में है, इस बात का पता न चलने के कारण वैद्य द्वारा किए गए इलाज किस तरह बेअसर होते हैं इसके कई उदाहरण हम देखते हैं। उसी प्रकार सामाजिक रोग का सही इलाज क्या है, इसका पता न चलने से उसका परिहार करने के लिए की गई सारी कोशिशें बेकार चली जाने के उदाहरण इतिहास में लिखे न जाने के कारण हमें देखने को नहीं मिलते हैं। हालांकि इस तरह का एक उदाहरण मेरे ध्यान में आया है जिसे मैं आपको बता रहा हूं। यूरोप के प्राचीन राष्ट्र रोमन में पेट्रीशियन और प्लेबियन नाम के दो वर्ग थे। इनमें से पेट्रीशियन उच्चकुलीन थे और प्लेबियन निम्न वर्ग के थे। पेट्रीशियन वर्ग के हाथ में पूरी सत्ता थी। इस सत्ता के बल पर वे प्लेबियन लोगों के साथ बहुत बुरा बर्ताव करते थे। इस परेशानी से मुक्त होने के लिए उन्होंने एकता के बल पर आग्रह किया कि मनमानी का कानून रद्द कर सबकी जानकारी के लिए और न्यायदान की सहूलियत के लिए कानून लिखित स्वरूप में हो, उसे लिखा जाए। प्लेबियन प्रतिपक्ष के पेट्रीशियन लोग इस बात के लिए राजी हुए। बारह

(12) कानूनों की एक तख्ती लिखी गई। लेकिन इतना कार्य करने भर से प्लेबियन लोगों की परेशानियां खत्म नहीं हुई। क्योंकि उन कानूनों पर अमल करवाने वाले सभी अधिकारी पेट्रीशियन वर्ग के थे। यही नहीं तो रोमन राष्ट्र का मुख्य अधिकारी जिसे ट्रायब्यून कहा जाता था, वह भी पेट्रीशियन ही था। इसीलिए, कानून एक ही होने के बावजूद उस पर अमल करते हुए पक्षपात होता ही रहता था। सो आखिरी उपाय के तहत उन्होंने पेट्रीशियन लोगों के सामने मांग रखी कि रोमन राष्ट्र का कामकाज एक ट्रिब्यून के हाथ में रहने की जगह दो के हाथ में हो। इनमें से एक ट्रिब्यून का चुनाव पेट्रीशियन लोग करें और दूसरे का चुनाव प्लेबियन लोग करें। उनकी यह मांग भी पेट्रीशियन लोगों ने स्वीकार कर ली। प्लेबियन लोगों को लगा कि अपने सभी क्लेशों का निवारण हुआ ही है। वे खुश हुए। लेकिन उनकी खुशी ज्यादा दिनों तक टिकी नहीं। रोमन लोगों में ऐसी रीत (परंपरा) थी कि ग्रामदेवता डेल्फी की मर्जी के बगैर कोई बात नहीं करनी है। इसीलिए ट्रिब्यून अगर चुना भी गया तो भी अगर वह डेल्फी को पसंद नहीं आया तो उस चुनाव को रद्द कर दुबारा चुनाव करना पड़ता था। देवता को सगुन लगाने का काम जिस पुरोहित के जिम्मे होता था, उसके चुनाव के बारे में रोमन समाज में एक संकेत हुआ करता था। रोमन समाज में शादी करने के कई तरीके थे। उनके शास्त्रों के अनुसार, उनमें से कनफेराशिओ तरीके से जिनका विवाह हुआ हो ऐसे माता—पिता से जिसका जन्म हुआ हो, केवल वही डेल्फी का पुरोहित बन सकता है। कानफेराशियो तरीके से शादी करने की रीत सिर्फ पेट्रीशियन लोगों में ही थी। इसीलिए डेल्फी का पुरोहित पेट्रीशियन वर्ग का ही हुआ करता था। इस पुरोहित की कार्रवाई से अंत में हुआ यह कि अगर प्लेबियन लोग अपने किसी कट्टर पुरुष को अपनी ट्रिब्यून के रूप में चुनते तो देवता डेल्फी सगुन नहीं देती थी। ट्रिब्यून के लिए प्लेबियन लोगों द्वारा चुना गया पुरुष अगर पेट्रीशियन लोगों के हितों की रक्षा करने वाला या दब्बू हो तभी देवी उसके नाम से सगुन देती और उसे अधिकार पाने का मौका मिलता। ऐसे में सोचिए कि, ट्रिब्यून चुनने का अधिकार पाकर भी प्लेबियन लोगों को आखिर क्या मिला? कहना पड़ेगा कि, कुछ भी नहीं। उनकी कोशिशें नाकाम रहीं, इसलिए कि समस्या की जड़ क्या है, यह खोजने की उन्होंने कोशिश नहीं की। इस बात का अगर उन्हें पता होता तो अपने ट्रिब्यून की मांग करते समय ही वे इस सवाल को भी हल कर लेते कि पुरोहित कौन होगा। समस्या का हल सिर्फ ट्रिब्यून मांगने में नहीं था। यह वे समझ नहीं पाए कि समस्या का हल असल में पौरोहित्य छीनने में था। हमें भी अस्पृश्यता को खत्म करने का उपाय ढूंढते हुए इस रोग की जड़ किस में है, इसका पता करना चाहिए। वरना हमारे साथ भी वही सब होने का डर है। हम भी निशाना चूक जाएंगे।

मेल–मिलाप की पाबंदियां हटीं या लोटा–बंदी हटी तो अस्पृश्यता खत्म हुई ऐसा समझने की गलती कत्तई नहीं करें। इस मामले में एक बात को अवश्य ध्यान में रखें। वह यह कि लोटा–बंदी और मिलने–जुलने पर लगी पाबंदी अगर हट गई तो अस्पृश्यता ही खत्म हुई ऐसी बात नहीं है। इनसे बहुत हुआ तो घर के बाहर की अस्पृश्यता खत्म होगी लेकिन घर के अंदर की अस्पृश्यता बरकरार रहेगी। दरवाजे से बाहर की अस्पृश्यता के साथ दरवाजे के अंदर की अस्पृश्यता को अगर आप हटाना चाहते हैं तो बेटी–बंदी हटानी होगी। उसके अलावा इस समस्या का कोई और उपाय नहीं है। अन्य नजरिए से देखें तब भी बेटी–बंदी को हटाना ही समता प्रस्थापित करने का सही मार्ग है। मुख्य भेद खत्म होते ही अन्य सभी भेद अपने आप खत्म होते हैं, यह सब जानते हैं। छोटे भेदभाव के खत्म होने से मुख्य भेद खत्म हो ही जाएगा इसका कोई भरोसा नहीं। बेटी–बंदी की एक बंदी से अन्य सभी – रोटी–बंदी, लोटी–बंदी और मेल–मिलाप की पाबंदियां अपने आप खत्म हो जाएंगी। बेटी बंदी को हटाने से अन्य सभी बंदियां अपने आप हट जाएंगी, कोशिश ही नहीं करनी पड़ेगी। मेरी राय में बेटी बंदी का बांध तोड़ना ही, ध्वस्त करना ही अस्पृश्यता निवारण का सही मार्ग है। उसीसे सही मायने में समता स्थापित होगी। हमें अस्पृश्यता को अगर नष्ट करना है तो हमें यह पहचानना चाहिए कि अस्पृश्यता की जड़ बेटी–बंदी में है। हमारा आज का हमला भले लोटी–बंदी पर हो लेकिन आखिर हमें बेटी–बंदी पर ही हमें अपने हमले का रुख करना होगा। उसके बगैर अस्पृश्यता जड़ समेत नष्ट नहीं होगी।

यह काम कौन पूरा कर सकता है? ब्राह्मणवर्ग इसे पूरा नहीं कर सकता, यह अलग से बताने की जरूरत नहीं है। जब तक वर्णव्यवस्था है तब तक ब्राह्मणों की श्रेष्ठता बनी हुई है। कोई भी अपने श्रेष्ठत्व के अधिकार छोड़ना नहीं चाहता। अपनी मर्जी से हाथ आई सत्ता कोई नहीं त्याग सकता। कई शतकों से ब्राह्मण वर्ग ने अन्य वर्गों पर अपना सार्वभौमत्व बनाए रखा है। उसे छोड़ कर अन्य लोगों की तरह ही उनकी बराबरी का व्यक्ति बन कर जीने के लिए वे तैयार होंगे यह संभव नहीं हो सकता। जापान का सामुराई वर्ग राष्ट्र प्रेमी है, किन्तु ब्राह्मणों में राष्ट्रप्रेम नहीं है। इसीलिए सामुराई वर्ग ने अपने विशिष्ट सामाजिक अधिकार त्याग कर राष्ट्रैक्य पाने के लिए समता की नीव पर राष्ट्र में एकता की स्थापना करने के लिए जो स्वार्थ त्याग किया ऐसा हमारे ब्राह्मण वर्ग से होगा ऐसी उम्मीद रखना भी बेकार है। गैर–ब्राह्मण वर्ग से भी लगता नहीं कि यह जिम्मेदारी निभाई जाएगी। गैर–ब्राह्मण यानी मराठा और उसके समान जातियों वाला वर्ग असल में अधिकारसंपन्न और अनधिकारी इन दो वर्गों के बीच वाला वर्ग है। अधिकार संपन्न वर्ग को थोड़ा स्वार्थ त्याग कर अपनी उदारता दिखाना संभव होता है। जो अनधिकारी वर्ग हमेशा ध्येयवादी होता है क्योंकि स्वार्थ के लिए ही सही उसे समाज

में क्रांति लानी होती है। और इसीलिए स्वार्थप्रियता से अधिक सिद्धांतप्रियता उसके रग–रग में बसी होती है। गैर–ब्राह्मण वर्ग इन दोनों के बीच का वर्ग होने के कारण इनमें से एक के पास होने वाली उदारता उसके पास नहीं होती और दूसरे को प्राप्त सिद्धांतप्रियता उसके अंदर नहीं पनप सकती और इसलिए ब्राह्मणों के समान अधिकार पाने से अधिक यह वर्ग अस्पृश्यों से अपने विशिष्ट अधिकारों को सुरक्षित रखने के प्रति ज्यादा जागरुक होता है। सामाजिक क्रांति के इस काम में वह समाज अपाहिज है। उनसे मदद पाने की उम्मीद लगा कर अगर हम बैठें तो हमारी हालत भी कहानी में बताए जाने वाले उस किसान की तरह होगी जो अपनी फसलों की कटाई के लिए औरों पर निर्भर करता रहता है। उसके खेत में बने घोंसले में पंछी अपने बच्चों से कहती है कि जब तक किसान अपने पड़ोसियों पर निर्भर हैं, तब तक हमारे लिए यहां कोई खतरा नहीं है। अस्पृश्यता का निवारण कर समता की स्थापना करने का जो बीड़ा हमने उठाया है, उस जिम्मेदारी को हमें खुद के भरोसे ही पूरा करना है। अपने अलावा किसी और के हाथों यह काम नहीं हो पाएगा। अपना जीवन इसी कार्य के लिए है, यही मान कर काम शुरू करने में ही जीवन की सार्थकता है। यह पुण्य कार्य हमारे हिस्से आ रहा है, तो हम पूरे सम्मान के साथ उसको स्वीकार करेंगे।

यह कार्य आत्मोद्धार का है, इसलिए अपनी उन्नति की राह की अडचनें दूर करने के लिए उसे स्वीकार करना ही होगा। अस्पृश्यता के कारण हमारी मिट्टी कैसे पलीत की गई है, यह आप सब लोग जानते हैं। आप जानते हैं किसी जमाने में हम लोगों की सेना में बडी संख्या में भर्ती हुआ करती थी। सेना की नौकरी हमारे लिए वतनदारी के समान थी। उसी वतनदारी के कारण हम में से किसी को पेट की चिंता नहीं करनी पड़ती थी। हमारे साथ वाले अन्य वर्ग के लोग सेना में, पुलिस में, कोर्ट–कचहरी में नौकरी पाकर खुशी खुशी अपना पेट पाल रहे हैं। लेकिन उन्हीं विभागों में हम में से कोई भी आदमी आज नहीं मिलता। इसकी वजह यह नहीं कि इन विभागों में नौकरी पाने से कानूनन हम पर पाबंदी लगाई गई है। कानूनन सभी राहें खुली हैं। लेकिन अन्य हिंदू लोग हमें अस्पृश्य मानते हैं, नीचा और हीन समझते हैं। इसलिए सरकार ने भी घुटने टेक दिए हैं। वे सरकारी नौकरियों में हमारा प्रवेश नहीं होने देते। इसी तरह हम सम्मान के साथ कोई व्यवसाय भी नहीं कर सकते। पैसा नहीं होने की वजह से हम व्यवसाय नहीं कर सकते, यह कुछ हद तक ठीक है लेकिन हमारी अस्पृश्यता के कारण हमारे हाथ का छुआ माल कोई नहीं लेगा यही हमारे व्यवसाय करने के राह की सबसे बडी मुश्किल है। कुल मिला कर कह सकते हैं कि अस्पृश्यता सीधी–सादी बात नहीं है। यह हमारी दरिद्रता और हीनता की जननी है। उसी के कारण आज हमारा ऐसा बुरा हाल हुआ है। इस हीन स्थिति से अगर हमें उबरना है तो हमें यह कार्य हाथ में लेना ही होगा। उसके अलावा हमारे सामने कोई चारा ही नहीं है।

यह काम जैसे स्वहित का है उसी तरह राष्ट्रहित का भी है। चातुर्वर्ण्य के तहत अस्पृश्यता जब तक नष्ट नहीं होती तब तक हिंदू समाज के आगे कोई और चारा नहीं है। जीवन कलह से उबरने का एक उपाय इस हिसाब से किसी भी समाज को जिस साधन–सामग्री की अवश्य जरूरत होती है उस साधन–सामग्री में सामाजिक नीतिमत्ता का बहुत बड़ा स्थान है। जिस समाज की नीतिमत्ता समाज को एकजुट करने वाली होगी उसी को स्तुत्य माना जाता है। जिस समाज में समाज को एकजुट करने वाले कारणों को निषिद्ध माना जाता है उसे जीवन कलह में हार खानी पड़ती है। उल्टे जिस समाज की नितिमत्ता इस प्रकार की है जिन कारणों से समाज में फूट पड़ती है उन कारणों को निंदनीय माना जाता है, उस समाज को जीवन कलह में सफलता मिले बगैर नहीं रहती। यही न्याय हिंदू समाज पर भी लागू करना पड़ता है। चातुर्वर्ण्य व्यवस्था लोकविग्रहकारी व्यवस्था है और एकवर्णी व्यवस्था लोकसंग्रहकारी है। खुली आंखों से जब यह बात दिखाई देती है, जिससे विग्रह होता ऐसी व्यवस्था की जय बोलने वाले हिंदू समाज को बार–बार हार का मुख देखना पड़ा हो तो उसमें आश्चर्य की ऐसी कौन सी बात है? लोगों के जो बुरे हालात हो रहे हैं, उससे अगर छुटकारा पाना हो तो चातुर्वर्ण्य का चौखटा तोड़ कर उसे एक वर्ण होना पड़ेगा। इतने भर से काम नहीं चलेगा। साथ ही चातुर्वर्ण्य के अंतर्गत होने वाली असमानता को भी नष्ट किया जाना चाहिए। कई लोग समता के तत्व का मजाक उड़ाते हैं। प्राकृतिक रूप से कोई भी मनुष्य दूसरे मनुष्य जैसा नहीं होता। किसी का शरीर भव्य होता है, तो किसी का शरीर बिल्कुल ठिंगना, दुबला–पतला होता है, कोई जन्म से ही श्रेष्ठबुद्धि होता है तो कोई मंद या कुंद बुद्धि होता है। जब इंसान पैदाइशी असमान होते हैं, तो समतावादियों का कहना लोगों को पागलपन लगता है कि सब लोग एक समान होते हैं। खिल्ली उड़ाने वाले इन लोगों को समता का अर्थ पूरी तरह समझ नहीं आया है यही कहना पड़ेगा। वे पूछते हैं कि अधिकार प्राप्ति किसी के जन्म के आधार पर, संपत्ति के आधार पर या अन्य किसी बात पर निर्भर न मानते हुए समता के सिद्धांत के अनुसार उसे केवल गुणों पर आधारित माना जाए तो जो गुणहीन है, गंदा (मलिन) है, बुरा बर्ताव करता है ऐसे व्यक्ति के साथ गुणवान, अच्छे बर्ताव वाला व्यक्ति समानता से पेश आए, ऐसी मांग कैसे की जा सकती है? ऐसा प्रति–प्रश्न पूछा जा सकता है। व्यक्तियों के साथ समानता से पेश आने वाली समता की परिभाषा का अधिकार बहाल करते हुए लागू करना ठीक है। लेकिन व्यक्ति के अंतर्भूत गुणों का विकास होकर उसके अधिकार के लिए लायक बनने से पूर्व ही सबके साथ फिर चाहे उनमें कितनी भी असमानता क्यों न हो एक–सा बर्ताव करना ही न्यायपूर्ण होगा। समाजशास्त्र के अनुसार व्यक्ति के अंदर जो गुण होते हैं, उनके विकास के लिए सामाजिक व्यवस्था ही कारण होती है। गुलामों के साथ हमेशा असमान बर्ताव किया जाता है, सो उनके अंदर दासत्व

से अलग किन्हीं गुणों का उद्भव होगा ही नहीं। वे किसी अन्य अधिकार को पाने के योग्य नहीं बनेंगे। उसी प्रकार अस्वच्छ गंदे–मलिन इन्सान को स्वच्छ साफ–सुथरे आदमी द्वारा गंदे आदमी को न छूने से, उसे दुत्कारने से, उसका बहिष्कार, उस आदमी को अपने से दूर करने पर उसके साथ होने वाला हर व्यवहार बंद करने से बुरी प्रवृत्ति वाले इंसानों के मन में कभी अच्छे तरीके से जीने की इच्छा ही पैदा नहीं होगी। गुनहगार या अनैतिक जातियों को अगर नैतिकतापूर्ण जातियां प्रश्रय नहीं देंगी अनीतिपूर्ण जातियों को नीतिपाठ भला कहां से पढ़ने मिलेगा। इस बारे में जो उदाहरण दिए हैं उनसे यह सिद्ध होता है कि जिसके अंदर समता के गुण नहीं होते, वहां उन गुणों को उत्पन्न करने् के लिए वे भले कारण न बनें लेकिन यह बात सच है कि समानता के बर्ताव के बगैर सुप्त गुणों का विकास कभी नहीं होगा। यह बात जितनी सत्य है उतनी ही यह बात भी सत्य है कि समानता के बर्ताव के बगैर हममें होने वाले गुणों की कदर भी नहीं होती। एक हाथ से हिंदू समाज के असमान व्यक्तियों का विकास अवरुद्ध कर समाज को बौना बनाते हैं और दूसरे हाथ से यही असमानता व्यक्ति की शक्तियों का सही उपयोग करने देने से समाज को रोकता है। चातुर्वर्ण्य के कारण दोनों ओर से अस्त–व्यस्त हुए हिंदू समाज को यह असमानता और अधिक दुर्बल बना रही है। इसीलिए कहता हूं कि अगर हिंदू समाज को स्वावलम्बी, समर्थ बनाना है तो चातुर्वर्ण्य और असमानता को नष्ट कर हिंदू समाज की रचना एकवर्णत्व और समता इन दो तत्वों की नींव पर रखनी ही चाहिए। अस्पृश्यता निवारण का मार्ग हिंदू समाज को सुदृढ़ बनाने वाले मार्ग से भिन्न नहीं। इसीलिए मेरा कहना है कि हमारा कार्य जितना स्वहित का है उतना ही राष्ट्रहित का भी है इसमें कोई शक नहीं।

सही मायनों में समाज में क्रांति लाने के लिए यह कार्य शुरू किया गया है। केवल मीठे शब्दों के मधुर स्वरों से मोह में पड़े मन को समझाने के लिए बस यह सब किया जा रहा है, ऐसा कोई भी ना समझे। इस कार्य को भावना का सहारा है और वह भावना इस कार्य को आगे बढ़ाने वाली शक्ति है। इसलिए इस कार्य की गति को रोकना अब किसी के लिए संभव नहीं। यह सामाजिक क्रांति शांतिपूर्ण तरीके से पूरी हो ऐसी मैं इस जगह जग के नियंता से प्रार्थना करता हूं। और यह समाज क्रांति शांतिपूर्ण ढंग से संपूर्ण हो इसकी जिम्मेदारी हमसे अधिक हमारे प्रतिपक्ष पर अधिक है इस बारे में किसी को शक नहीं हो सकता। समाज में आने वाली यह क्रांति अत्याचारी होगी या अनत्याचारी, यह पूरी तरह स्पृश्य लोगों के बर्ताव पर निर्भर करता है 1789 की फ्रांसिसी राष्ट्रीय सभा को अत्याचार करने के लिए जो लोग दोषी ठहराते हैं, वे एक बात भूलते हैं कि फ्रांसिसी राष्ट्रीय सभा के साथ फ्रांस देश के राजा ने अगर छलकपट भरा व्यवहार नहीं किया होता तो और

वरिष्ठ प्रजा ने यदि विरोध नहीं किया होता, और ना ही परायों की मदद लेकर उसे दबाने की कोशिश का पाप नहीं किया होता तो इसे क्रांति की राह में अत्याचार नहीं करने पड़ते। समाज की वह क्रांति शांतिपूर्ण ढंग से पूरी होती। हमारे प्रतिपक्ष से भी हमारा यही कहना होता है कि आप हमारा विरोध ना करें। पराए सरकार या पराए धर्म की मदद लेकर इस पर हमला, इसे कुचलने का प्रयास मत कीजिए। शास्त्रों से पल्ला झाड़ लीजिए, न्याय के अनुसार चलें, हम आपको यकीन दिलाते हैं कि हम यह कार्यक्रम शांतिपूर्ण ढंग से ही पूरा करेंगे।

डॉक्टरसाहेब का भाषण पूरा होने के बाद जो प्रस्ताव पारित किया गया, उसका मसौदा इस प्रकार था –

हिंदुओं के जन्मसिद्ध अधिकारों का घोषणा–पत्र

पहला प्रस्ताव :

इस सभा की यह पक्की राय है कि समकालीन हिंदु समाज इस बात का पक्का सबूत है कि सामाजिक अन्याय, धार्मिक ग्लानि, राजनीतिक अवनति और आर्थिक गुलामी के कारण राष्ट्र की कैसे अवनति होती है। बहुजन समाज ने यह जानने की तत्परता कभी नहीं दिखाई कि मनुष्यमात्र के जन्मसिद्ध अधिकार क्या हैं? और मनुष्यमात्र के इन जन्म सिद्ध अधिकारों को अक्षुण्ण रखने की जिम्मेदारी भी कर्त्तव्य निष्ठता से निभाई नहीं तथा स्वार्थ–लालच में लिप्त लोगों के षड्‌यंत्रकारी कारनामों का भंडाफोड़ कर, उन पर अंकुश लगाया नहीं, उनकी करतूतों की रोकथाम की नहीं, और यही हिंदु समाज की ऐसी घोर दशा होने का कारण बना। अधिकार क्या हैं? संकट के समय उनकी रक्षा कैसे की जा सकती है? आपसी व्यवहार में इस बात का खयाल कैसे रखें कि कोई हमें न कुचल दें? हिंदुओं के जन्मसिद्ध अधिकार क्या हैं, यह जानकारी हिंदुओं के हमेशा सामने रही, इसलिए दुनिया के रक्षक सर्व साक्षी परमेश्वर को गवाह रखते हुए और उसका आशिर्वाद मांगते हुए निम्नलिखित घोषणा–पत्र आज की सभा की ओर से सबकी जानकारी के लिए प्रकाशित कर रहे हैं –

(i) सभी इंसान पैदाइश से समान ही होते हैं और मरने तक वे समान दरजे के ही रहेंगे। उपयोगिता के नजरिए से ही लोगों में फर्क किया जा सकता है। बाकी समय उनका दर्जा समान होना चाहिए। इसीलिए राज्य के कामों में और सार्वजनिक व्यवहारों में इस सभा की राय में समानता के सिद्धांत पर आँच आने वाली किसी नीति और विचारों को बढ़ावा न दिया जाए।

(ii) राज्य की व्यवस्था और सामाजिक व्यवस्था का अंतिम उद्देश्य यही होना चाहिए कि ये उपरोक्त जन्मसिद्ध मानवी अधिकार कायम रहें। इसलिए हिंदु समाज की विषमतामूलक रचना का और वैसी रचना को स्वीकार

करने वाले प्राचीन और आधुनिक ग्रंथों के वचनों के प्रति इस सभा की ओर से तीव्र निषेध व्यक्त किया जाता है।

(iii) सम्पूर्ण जनता ही सभी अधिकारों और सत्ता का उद्गम स्थान है। किसी व्यक्ति का, समुदाय का, या वर्ग का विशिष्ट अधिकार, यदि बहुजन समाज की ओर से वे न दिए गए हों तो अन्य किसी भी आधार पर मान्यता प्राप्त करने के लिए योग्य नहीं हों सकते, भले वे आधार राजनीतिक हों या धार्मिक हों। इसीलिए समाज की व्यवस्था के बारे में श्रुति, स्मृति, पुराण आदि ग्रंथों के प्रति यह सभा तीव्र निषेध व्यक्त करती है।

(iv) हर व्यक्ति अपने जन्मसिद्ध अधिकारों के अनुसार बर्ताव करने के लिए स्वतंत्र है। उस पर अगर सीमा तय की जाए, तो वह इतनी ही डाली जा सकती है कि वह दूसरे व्यक्ति के लिए उसका उसी प्रकार के जन्मसिद्ध अधिकार का उपभोग करने का उसे अवसर मिले। यह सीमा लोगों द्वारा तैयार किए गए कानूनों से तय की जाए। धर्मशास्त्र या अन्य किसी भी आधार से उसे तय नहीं किया जाए। उसके लिए अष्टाधिकार जैसे मामलों की तरह, विभिन्न जातियों में तय की गई असमान व्यवस्था का यह सभा धिक्कार करती है।

(v) समाज के लिए घातक होने वाली बातों पर ही कानूनन पाबंदी लगाई जाए। कानून में जिस बात पर पाबंदी नहीं लगाई गई हो, उसे करने की आजादी हर किसी को हो। उसी प्रकार कानूनन जो बातें करना आवश्यक नहीं माना गया है, उन बातों को करने पर किसी को विवश नहीं किया जा सकता। इसीलिए सड़कों का, सार्वजनिक पनघटों का और मंदिरों आदि का, सभी लोगों द्वारा प्रयोग करने पर पाबंदी न लगाई जाए। इसके लिए यह सभा समझती है कि इस तरह की पाबंदियां लगाने वाले लोग सुव्यवस्थित समाज रचना के और न्याय के दुश्मन हैं।

(vi) कानून यानी किसी एक वर्ग द्वारा तय किए गए बंधन नहीं। वह किस प्रकार का हो, यह तय करने का अधिकार सारी जनता को अथवा उसके प्रतिनिधि को होना चाहिए। कानून सुरक्षा संबंधी हो या प्रशासनिक वह सब पर एक–सा लागू हो। समता की नींव पर समाज रचना करनी होती है। इसलिए मानसमान, अधिकार और व्यवसाय आदि के बारे में जाति का अडंगा बीच में नहीं आना चाहिए। भेदाभेद केवल व्यक्ति के गुणभेदों के कारण ही हों, उसके जन्म के कारण न हों। इसके लिए प्रचलित जातिभेद

पद्धतियों का और उनके साथ आने वाली विषमताओं तथा विभाजन के प्रति यह सभा तीव्र निषेध व्यक्त करती है।

प्रस्ताव प्रस्तुत कर्ता – डॉ. सीताराम नामदेव शिवतरकर
समर्थन किया – रा. भाऊ कृष्णा गायकवाड़
पुष्टि की – रा. एन. टी. जाधव
अनुमोदन दिया – श्रीमती गंगाबाई सावंत

दूसरा प्रस्ताव :

शूद्र जातियों की अवमानना करने वाली, उनके विकास को रोकने वाली, उनके आत्मबल को नष्ट कर उनकी सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक गुलामी कायम करने वाली, बातों को नुकसानदेह जान कर, उन छल–कपट भरे हथकण्डों को मनुस्मृति में आगे दिए जा रहे हैं, विभाजन कभी ध्यान में रखते हुए तथा उन पर हिंदु मात्र के जन्मसिद्ध हकों के घोषणा–पत्र में सम्मिलित किए गए तत्वों के साथ तुलना करते हुए यह ग्रंथ धर्मग्रंथ इस पवित्र नामकरण के लिए अयोग्य हैं, इस राय को व्यक्त करने हेतु, लोगों के बीच फूट डालने वाले और इंसानियत का कत्ल करने वाले धर्मग्रंथ का यह सभा दहन विधि कर रही है।

प्रस्ताव के प्रस्तुत कर्ता – श्री गंगाधर नीलकंठ सहस्त्रबुद्धे
समर्थन किया – रा. राजभोज

पुष्टि की – रा. थोरात

(सूचना– इस प्रस्ताव में जो वचन कहे गए उन्हें अगले अंक में प्रकाशित किया जाएगा। – सम्पादक, "बहिष्कृत भारत")

तीसरा प्रस्ताव

हिंदू धर्म के सभी लोगों को एकवर्णीय माना जाए। हिंदू के नाम से इस वर्ग को संबोधित किया जाए और पहचाना जाए। परिषद के मतानुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि वर्गों के नामों से या महार, मांग आदि जाति पर आधारित संज्ञाओं से खुद को अथवा औरों को संबंधित करने पर कानूनन पाबंदी लगाई जाए। जरूरत हो तो व्यवसाय पर आधारित शिंपी (दर्जी), सोनार (सुनार), माली आदि कहलाना और मराठा, कोकणस्थ (कोकण के रहने वाले), देशस्थ (देश के रहने वाले) आदि प्रांत निर्देशक अथवा देश निर्देशक नाम उपयोग में लाने में कोई ऐतराज नहीं।

"बहिष्कृत भारत" उक्त अंक उपलब्ध नहीं हो पाया।

प्रस्ताव के प्रस्तुतकर्ता – डॉ. कोंडीराम खोलवडीकर

अनुमोदक – श्री सुबेदार घाटगे

पुष्टि की – डॉ. निर्मल गंगावणे

दोबारा अनुमोदन दिया – धोंडिराम नारायण गायकवाड़

चौथा प्रस्ताव :

परिषद की राय है कि –

(1) धर्माधिकारी की संस्था को लोगों के मतों के अनुसार चलने वाली और लोगों द्वारा नियुक्त की जाने वाली बनाई जाए।

(2) इस पेशे को स्वीकारने को तथा उसके लिए खुद को लायक बनाने का हक और अवसर हर हिंदु को मिले।

(3) धर्माधिकारियों की परीक्षा ली जाए और तदुपरांत उन्हें प्रमाण–पत्र दिए जाएं। प्रमाण–पत्र न मिलने वाले किसी भी व्यक्ति को धर्माधिकारी कहलाने की अथवा उससे संबंधित विधि–कर्म करने की कानूनन मनाही की जाए।

(4) ग्राम धर्माधिकारी, तहसील धर्माधिकारी और प्रांत धर्माधिकारी इस तरह धर्माधिकारियों की योजना की जाए।

(5) ऊपर बताए अनुसार नियुक्त किए गए अधिकारी को धार्मिक विधियां पूरी करने के लिए दक्षिणा या अन्य तरह का मेहनताना या पुरस्कार देने का अधिकार न हो। उसकी जगह सभी विभागों के अधिकारी वर्ग के अनुसार इस विभाग के छोटे बड़े अधिकारियों को भी सरकारी नौकर माना जाए, और उन्हें सरकार की तरफ से योग्य वेतन दिया जाए।

प्रस्ताव प्रस्तुतकर्ता – रा. पतित पावन दास बुवा

अनुमोदन किया – रा. गिरिजाशंकर शिवदास

पुष्टि की – रा. चावरे मास्तर,

दोबारा अनुमोदन दिया – रा. राघो नारायण वनमाली

इस प्रस्ताव पर बेहद विचारोत्तेजक और मन को बांध लेने वाले भाषण हुए।[1]

सत्याग्रह सभा में मनुस्मृति की दहनभूमि तैयार करने के लिए दो दिनों से छह कारीगर मेहनत कर रहे थे। छह इंच गहरा और करीब डेढ फीट चौडा और लंबा गड्ढा खोद कर उसे चंदन की लकड़ियों से भर दिया गया। चार कोनों में चार

1."बहिष्कृत भारत", 3 फरवरी, 1928

फीट लंबाई वाले चार खंबे खड़े किए गए थे। तीन तरफ से पताकाएं लगाई गई थीं, जिन पर "मनुस्मृति की दहनभूमि", "अस्पृश्यता नष्ट करो", "पुरोहितवाद को दफना दो" आदि नारे लिखे गए थे। दिनांक 25 दिसंबर, 1927 को रात नौ बजे बापूसाहब सहस्त्रबुद्धे तथा अन्य पांच–छह अस्पृष्य साधुओं के हाथों इस दहनभूमि पर 'मनुस्मृति' की किताब रख कर, उसे जलाया गया।[2]

इसके बाद पहले दिन का कामकाज खत्म हुआ।

दूसरा दिन

पहले दिन की सभा की कार्रवाई रात साढ़े सात बजे खत्म होने के बाद लोग आतुरता से भोजन का इंतजार कर रहे थे। जिले–जिले से आए लोग सत्याग्रह समिति की सूचनाओं के अनुसार अपने साथ रोटियां लाए थे। लेकिन चूंकि ये लोग सम्मेलन के शुरू होने से दो दिन पहले आए थे, इसलिए उनकी रोटियां खत्म हो गई थीं। मुंबई से आए लोगों को पूरे दिनभर खाली पेट रहना पड़ा था और वे इतजार कर रहे थे कि भोजन कब मिलेगा। लेकिन मुंबई से खाना बनाने के बर्तन महाड न पहुंचने के कारण सामग्री होने के बावजूद खाना नहीं बनाया जा सका, इसलिए सबको निराशा हुई। सत्याग्रह समिति को अंदाजा था कि ऐसी स्थिति आ सकती है। इसलिए उन्होंने चावल दाल के साथ भुने हुए चने भी खरीदे थे। उस रात सबको खाने के बदले चने दिए गए और लोगों को उसी पर गुजारा करना पड़ा। ऐसा लगा कि कई लोगों को चना खाकर रहना रास नहीं आया। लेकिन जब डॉ. अम्बेडकर ने अपने हिस्से के चने लेकर खाना शुरू किया, तभी लोगों ने उनका अनुकरण किया।

26 दिसम्बर, 1927 को यानी दूसरे दिन सुबह नौ बजे परिषद के कामकाज की शुरुआत हुई। उस दिन सत्याग्रह के बारे में बातचीत करनी थी। सो परिषद में या सम्मेलन में विषय नियामक कमेटी का गठन किया गया। उसके अनुसार डॉ. अम्बेडकर ने सभा के आसपास खड़े किए स्वयंसेवकों को हिदायत दी थी कि कोई भी अजनबी आदमी अंदर न आने पाए। उसके बाद सत्याग्रह किया जाए, इस आशय का प्रस्ताव डॉ. अम्बेडकर ने सभा के सामने पेश किया। प्रस्ताव पेश करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा, कि कल कलक्टर साहब ने मुझे मुलाकात करने के लिए बुलाया था। उसमें उन्होंने मुझसे यह कहा कि वे इस सत्याग्रह के खिलाफ नहीं हैं। लेकिन स्पृश्य लोगों ने इस बारे में दीवानी अदालत में फरियाद की है और उसका निपटारा होने तक अस्पृश्य लोग चवदार तालाब पर ना जाएं। इस तरह का तात्कालिक स्थगनादेश वे ले आए हैं। कोर्ट की अवमानना न हो इसलिए मुझे इस

---

2. डॉ. भीमराव अम्बेडकर चरित्र : चांगदेव भवानराव खैरमोड़े, खंड 3, पृ. 194

काम को करना पड़ रहा है। मैंने उनसे कहा, कि मैं खुद सत्याग्रह करने का निश्चय करके आया हूं। मैं अपने निश्चय से डिगूंगा नहीं, और सत्याग्रह करने वाले लोगों को मैं सत्याग्रह करने की ही सलाह दूंगा। लेकिन सत्याग्रह के लिए आए लोगों पर मैं अपनी राय थोपूंगा नहीं। न उन पर दबाव आने दूंगा। लेकिन स्थगनादेश आया है, इसलिए आप सत्याग्रह न करें ऐसा भी मैं उनसे नहीं कहूंगा। इस पर कलक्टर साहब ने इच्छा जताई कि सत्याग्रह करने की बात अगर बहुमत से साबित हुई तो वहां इकट्ठे लोगों से सदुपदेश के दो शब्द कहने की इजाज़त मुझे दी जाए। मैंने उन्हें वचन दिया है कि उन्हें आपके सामने दो शब्द कहने की इजाजत दी जाएगी। इससे अधिक मैंने और कोई बंधन स्वीकार नहीं किए हैं। इसलिए आपको जो तय करना है उसे तय कर लें। इसमें एक बात का ध्यान रखना होगा। हमेशा के लिए अगर हित हो रहा है, तो कुछ समय तक तकलीफें और क्लेष तो सहने ही पड़ेंगे। कठोर तप के बगैर वरदान मिला हो, इसका हमारे इतिहास या पुराणों में कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है। हमेशा दुःख के बाद ही सुख की प्राप्ति होती है। इसलिए अगर मनाही का आदेश तोड़ने के बाद जेल में जाने की नौबत आई, तो भी डिगना नहीं चाहिए। स्थगनादेश इस्तेमाल के आधार पर दिया गया है। इस्तेमाल न्यायपूर्ण है अथवा अन्यायपूर्ण यह भी देखना पड़ेगा। वरना कोर्ट का आदेश पालन करने की कोशिश में जिस अन्याय के खिलाफ हम लड़ रहे हैं, उसी अन्याय को सहने की नौबत आ जाएगी। सत्याग्रह कठोर तपस्या ही है। सत्याग्रहियों को मन पर काबू रखना पड़ेगा, बेहद तकलीफें झेलनी पड़ेगी, खुद होकर अपनी गर्दन किसी के हाथ खुशी से सौंपनी होगी। आप लाठियां लेकर सत्याग्रह करने नहीं जा सकते। अधिकारियों की किसी भी आज्ञा को टाल नहीं सकेंगे। सत्याग्रह को जाते समय सरकारी अधिकारी पकड़ कर हवालात में बंद कर देते हैं, तब भी माफी नहीं मांगनी चाहिए। आखिर तक यही कहते रहना चाहिए कि हमने जो किया, वही सही था। कुल मिला कर (1) लाठियां नहीं रखना, (2) सरकार की आज्ञा का पालन करना, (3) जेल जाने की तैयारी रखना, (4) सरकार से माफी नहीं मांगना – इन शर्तों का आपको दृढ़ता से पालन करना होगा, तभी सत्याग्रह में शामिल होने का फायदा है। केवल मैं कह रहा हूं, इसलिए आपका सत्याग्रह में शामिल होना सही नहीं होगा। अपना मार्ग न्याय का मार्ग है, यह अगर आपको लगता हो, उस पर आपका यकीन हो और कई संकटों का सामना करने के लिए आप तैयार हों, तो ही आप सत्याग्रह करें।"

प्रस्ताव के बारे में इस तरह का भाषण देने के बाद डॉ. अम्बेडकर ने बताया कि जो पक्ष–विपक्ष में भाषण होंगे उन्हें शांति से सुनें, और फिर जो ठीक लगे उसके अनुसार निर्णय लें। इसके बाद एक पक्ष में और एक विपक्ष में इस क्रम से लोगों के भाषण हुए। उसमें सत्याग्रह के पक्ष में भाषण करने वालों के नाम इस प्रकार हैं –

1. पद्मनाथ राजाराम हाटे
2. पांडुरंग बाबाजी मांडलेकर
3. धोंडिराम गायकवाड
4. पांडुरंगजी नाथुजी राजभोज
5. भिकाजी महादू पेन्शनर
6. भांबू गणू शेणवलीकर
7. सोनू देवजी खांबोलीकर
8. हिरू बारकू शेलार
9. गोविंदबुवा मालखेडकर
10. भिवबा भोवडकर
11. गिरजा शंकर शिवदास
12. गणू धर्मा अंबोलीकर

निम्नांकित लोगों ने प्रतिकूल विपक्ष में भाषण दिए–

1. शिवराम सखाराम हाटे
2. कृष्णा येसू
3. गाडगेबुवा साहेब
4. गोविंद हवालकर
5. राघू आनंदा शिवतरकर
6. राघो नारायण वनमाली
7. पुंजाजी नवसाजी जाधव
8. एन. टी. जाधव

ध्यान देने योग्य बात यह है कि सत्याग्रह करने के लिए कोलली के रहने वाले केवल एक ही मराठा वयोवृद्ध रा. रा. विसोबा महादेव वाडवल ही आए थे। पक्ष–विपक्ष में हुए भाषणों के बाद वह खड़े हुए और उन्होंने कहा कि, "मैं मराठा हूं। मेरे गांव के महार बंधू रूठे हुए हैं। वे गांव में नहीं आते। गांव की सीमा रंडकी हुई है। अब हमें उससे क्या फायदा? हमारे महार बंधुओं का पानी का हठ है। हमें वह पूरा करना ही होगा। इसलिए मैं सत्याग्रह करने के लिए आया हूं।"

इन वक्ताओं के भाषणों का क्या असर होना है, इस विषय को लेकर किसी के मन में कोई आशंका नहीं थी। अगर किसी के मन में आशंका हो तो उसे दूर करने में रत्ती भर का समय नहीं लगता। क्योंकि, सत्याग्रह के पक्ष में बोलने वाले वक्ता को लोग बोलने देते थे, लेकिन विपक्ष में बोलने वाले को मुंह ही नहीं खोलने देते थे। बात यहां तक पहुंची कि डॉ. अम्बेडकर को कहना पड़ा कि, आप विपक्ष

के वक्ताओं की भी बात सुन लीजिए। पक्ष–विपक्ष के लोगों के भाषण खत्म हुए तो डॉ. अम्बेडकर ने कहा–

"कुल मिला कर सभा की राय सत्याग्रह के लिए अनुकूल है, ऐसा ही कहना पड़ेगा। मुझे इस बारे में खुशी है, लेकिन मेरे पीछे अंधों की सेना नहीं चाहिए। मैं कह रहा हूं इसलिए या कोई और कह रहा है, इसलिए जेल जाकर फंस जाने वाले लोग मैं नहीं चाहता। जेल जाऊंगा लेकिन मैं अपनी अस्पृश्यता से पीछा छुडाऊंगा, कहने वाले लोग मुझे चाहिएं। सत्याग्रह करना है अथवा नहीं यह निश्चित करने से पहले इस प्रकार आत्मयज्ञ करने के लिए कितने लोग तैयार हैं? यह तय करना जरूरी है। यह ऐसी बात नहीं है कि तालियों की गड़गड़ाहट से अथवा हाथ ऊपर उठा कर तय की जा सके। वह गिनती के आधार से ही तय की जानी चाहिए। इसीलिए जो लोग सत्याग्रह करने के लिए तैयार हैं ऐसे लोगों की गिनती करने के लिए मैं कहने वाला हूं। उस गिनती के आधार से अगर लगे कि बहुमत सत्याग्रह के लिए अनुकूल है, तो ही मैं कलक्टर साहब को सूचना दूंगा। और शाम के समय आकर आप लोगों के सामने भाषण करने का निमंत्रण दूंगा। उनकी बात सुनने के बाद भी अगर आपकी राय पक्की रही तभी हम सत्याग्रह करेंगे। अब साढ़े बारह बजे हैं और भोजनावकाश के लिए सभा स्थगित की जा रही है।"

वे सभा समाप्ति की घोषणा करने ही जा रहे थे कि मुंबई के गैर–ब्राह्मणों के पक्ष की ओर से केशवराव जेधे और श्री दिनकरराव जवलकर मुंबई से स्पेशल मोटर से आए। सभामंडप में वे दाखिल हुए। अध्यक्ष द्वारा उन्हें बोलने के लिए आमंत्रित किया गया। श्री जवलकर ने अपने भाषण में कहा, आप यहां धर्म की लड़ाई लड़ने के लिए आए हैं, यह ठीक है। दुर्भाग्य से कुछ मराठा लोग आपका विरोध कर रहे हैं। मैं मराठा हूं इसलिए मुझे इस बात से बेहद शर्म महसूस होती है। आज तक हम मराठों ने और ब्राह्मणों ने आपको जो तकलीफ दी उसके लिए मैं बस यही कह सकता हूं कि हम पातकी हैं। हमने आप लोगों के हाथ में ये सफाई के साधन थमाए हैं। उनका आपको त्याग करना होगा। जहां हमारी मालकियत है, वहां आपकी भी है। आपके नेता बैरिस्टर अम्बेडकर द्वारा चलाया गया यह आंदोलन आपके योग्य अधिकारों की प्रस्थापना के लिए है। मैं दो बार जेल गया। जेल से घबराने की कोई जरूरत नहीं है। अंग्रेज सरकार के जेल में कोई जातिभेद नहीं है। बाहर के भेद भरे इस नर्क में जीने से जेल बेहतर है। मैं और श्री जेधे 'सत्यशोधक समाज' की ओर से सहानुभूति दर्शाने के लिए आए हैं। मराठा लोग महारों से ज्यादा काम करवाते हैं। उनके शरीर से बहता पसीना देख कर भी कुलकर्णियों का दिल नहीं पसीजता। ईश्वर अगले जनम में मराठों को अस्पृश्य बनाए। डॉ. अम्बेडकर जैसा ज्ञानी और समर्थ आदमी अस्पृश्यों में कोई दूसरा नहीं है। वे आपके हित के लिए कोशिशें कर

रहे हैं। आपको उनका अनुसरण करना होगा। हिंदुस्तान का देवता ब्राह्मणों के वश में रह कर ब्राह्मणों की सोच रखने वाला हो गया है। वह आपके दुखों को नष्ट नहीं करेगा। आपका दुख बैरिस्टर अम्बेडकर जैसा आदमी ही दूर कर सकता है। आज अगर मैं महार होता तो बड़ी खुशी से आपके साथ जेल आता। आपको कानून भंग कर अपने अधिकारों की प्रस्थापना करनी होगी। हिंदुओं के इतिहास में आज का दिन बेहद महत्वपूर्ण माना जाएगा। आपको जेल से डरना नहीं चाहिए। ऐसा डर घी चुपड़ी रोटी खाने वाले ब्राह्मणों को लगता है। स्पृश्यों को उनकी जगह दिखाना, आपके अपने हाथ में है। आप हिंद पुत्र हैं। हर हर महादेव की जयकार कर तालाब को काबीज कीजिए। आपके सेनापति डॉ. अम्बेडकर साहेब जो कहेंगे उसका पालन कीजिए। मेरी अपनी यही राय है। गैर–ब्राह्मणों की पार्टी की राय हमसे अलग है। और वही बताने के लिए मैं यहां आया हूं। फरियाद का फैसला आ जाने तक सत्याग्रह को टाले रखिए, ऐसा संदेश गैर–ब्राह्मण संगठन ने आपके लिए भेजा है। उनकी राय में सरकार का विरोध करना अस्पृष्य वर्ग के हित में नहीं होगा।" उसके बाद श्री केशवराव जेधे ने कहा, "जिन लोगों ने आपको परेशान किया उनका आपको विरोध करना उनका निपटारा करना ही होगा। यह इंसानियत की स्थापना करने की लड़ाई है। गधे और कुत्ते तक जिन तालाबों पर पानी पीते हैं, उन तालाबों पर आपका पानी भरना मना है, यह बात लांछनास्पद है। आपने 'भाला', अखबार संग्राम समाचार पत्र और मनुस्मृति का दहन किया, यह बहुत योग्य बात की। सत्याग्रह कर जेल जाना ही मेरी राय में सही है। जो लोग आपका विरोध करेंगे, उनकी आप न सुनें।" इस प्रकार भाषण होने के बाद दोपहर डेढ बजे सभा स्थगित की गई।

कलक्टर साहब ने की सुलह की अगुवाई

सत्याग्रही लोगों की गिनती करने के लिए डॉ. अम्बेडकर ने पहले जैसे सुझाया था, वैसे ही दस–बारह लोगों को यह काम सौंपा कि वे उन लोगों की सूची बनाएं जो लोग जेल जाने के लिए तैयार हैं। घंटे भर में ही 3884 लोगों के नाम–पते इस सूची में दर्ज हुए। वहां आए सभी लोगों का यही कहना था कि हम जेल जाने की बात घरवालों से कह कर आए हैं तो अब हम ऐसे ही कैसे वापिस जाएं? आखिरकार नाम लिखने के लिए बैठे हुए लोग ऊब गए। उन्होंने कहा, सब लोग तैयार हैं ऐसा लगता है। फिर तो नाम लिखने का मतलब ही नहीं है। इसलिए करीब साढ़े तीन बजे के आसपास नाम लिखने का काम बंद कर दिया गया। फिर डॉ. अम्बेडकर ने कलक्टर साहब को खत लिख कर बताया कि लोगों का निश्चय हो चुका है कि वे सत्याग्रह करेंगे। आपने कहा था कि आप सभा में आकर अपना पक्ष रखना चाहते हैं शाम पांच बजे सभा की शुरुआत होगी। सो अगर आप चाहें तो आ सकते हैं। इस प्रकार कलक्टर साहब और पुलिस सुपरिंटेंडेंट मि. फैरेंट, पुलिस इंस्पेक्टर और

फौजदार आदि लोग सभा स्थल पर पहुंचे। डॉ. अम्बेडकर ने कहा, "शाम को जैसा कि मैंने आपको बताया था कलक्टर साहब आपसे दो शब्द कहना चाहते हैं। अब वे सभा में पहुंच चुके हैं। मैं उनसे विनती करता हूं कि वे अपनी राय यहां व्यक्त करें। उसके बाद कलक्टर साहब ने मराठी में इस प्रकार का भाषण दिया –

"अध्यक्ष साहब ने आपको बता ही दिया है कि मैं यहां किसलिए उपस्थित हुआ हूं। मैं मराठी नहीं जानता इसलिए आपसे माफी मांग रहा हूं। पिछले तीन–चार महीनों से आप सत्याग्रह की तैयारी कर रहे हैं यह मैंने सुना हुआ है। इसलिए अगर मैं कहूं कि आप सत्याग्रह नहीं कर सकते, तो यह सुनकर आपको बुरा लगेगा। इसी बारे में आपको उपदेश देने की मेरी इच्छा है। मुंबई लेजिस्लेटिव कौंसिल का प्रस्ताव स्कूल और सार्वजनिक तालाब, कुओं को छूने देना चाहिए ऐसा है। उसके अनुसार मुंबई सरकार ने आदेश दिया और म्युनिसिपालिटी लोकल बोर्ड को सूचित किया कि अस्पृश्य लोगों को मना नहीं किया जाए। सरकार के आदेशानुसार आपकी इच्छा चवदार तालाब पर जाने की है। अगर इस पर आपत्ति नहीं की गई होती तो हम आपको इजाजत दे देते। लेकिन दस–बारह स्पृश्य लोगों ने दीवानी अदालत में दावा किया है कि यह तालाब निजी है। मैं यह नहीं बता सकता कि तालाब निजी है या सार्वजनिक। लेकिन कागजातों को देख कर और वकीलों को सुन कर न्याय किया जाएगा। अगर तालाब निजी है तो स्पृश्यों द्वारा आपत्ति उठाना ठीक है। लेकिन अगर वह निजी नहीं है, तो किसी तरह की पाबंदी नहीं लगाई जा सकती। कोर्ट का जब फैसला आएगा बात तभी तय की जा सकती है। दूसरी बात कोर्ट से अस्थाई आदेश मिलने के बाद कोर्ट का फैसला आने तक कोर्ट का आदेश पालन कर चवदार तालाब पहुंचना नहीं है। आज आपको मेरा यही उपदेश है कि आपको कोर्ट का आदेश मान लेना चाहिए। मुझे नहीं लगता कि कोर्ट का आदेश न मानने से आपको फायदा मिलेगा। मुझे पता है कि दो चार महिनों से आप लोगों ने तैयारी की है, और आप लोगों ने तय किया है कि तालाब में जाना चाहिए। लेकिन सयाना आदमी हमेशा कानून के अनुसार ही बर्ताव करता रहता है। आप जानते हैं कि जो लोग आपके खिलाफ थे, उन्होंने कानून को तोड़ा और उन्हें सजा भुगतनी पड़ रही है। उसी तरह अगर आप कानून के अनुसार नहीं चलेंगे तो आपको भी तकलीफ होगी, और सजा मिलेगी। कोई फायदा नहीं होगा। आप तालाब में जाना चाहते हैं और हम आपको रोकेंगे। आप जानते हैं कि मैं जिले का कलक्टर हूं। आपकी खातिर बोल रहा हूं। यहां दो पक्ष हैं। एक तरफ स्पृश्य लोग, दूसरी तरफ अस्पृश्य लोग। सरकार किसकी तरफ है? वह अस्पृश्य लोगों की तरफ है। आप अगर आदेश नहीं मानते और सरकार की अवमानना करते हैं, तो उसका विपरीत असर होगा। आप ध्यान में रखें कि मैं आपका दोस्त हूं। और सरकार आपकी माई–बाप है। आज

खेद के साथ सुन रहा हूं कि आपसे कहा जा रहा है कि सत्याग्रह करना ही होगा। सरकार की अवमानना कर तालाब पर जाना ही होगा। याद रखिए इस तरह की सलाह देने वाले आपके हित चिंतक दोस्त नहीं हैं। वे आपके झूठे दोस्त हैं। यह काम शांतिपूर्ण और कानूनी तरीके से करना होगा, इसलिए धैर्यपूर्वक विवेक से व्यवहार करें। कानून के अनुसार कोर्ट में केस चल रहा है। आपके पक्ष में निर्णय होगा तो तालाब सबके लिए खुलेगा। खिलाफ हुआ तो आप कोर्ट में अपील करें। तब तक किसी और सार्वजनिक तालाब पर सत्याग्रह कीजिए। अब आप कानून और सरकार के खिलाफ बर्ताव न करें। इससे आपको कोई फायदा नहीं मिलेगा, उल्टे नुकसान ही होगा। इस बारे में एक कहानी सुनाता हूं। दो भाई हैं। एक हरि, और दूसरा भाऊ। हरि ने कहा – गर्मी का मौसम खत्म होने पर धान बोएंगे। भाऊ ने कहा, सभी तैयारी होने के बाद धान बोएंगे। हरि ने हड़बड़ी कर धान बोया। और भाऊ ने जमीन बुवाई के लिए तैयार करने के बाद धान बोया। सोचिए कि किसे अच्छी फसल मिली होगी? इसी प्रकार आप भी सोच–समझ कर काम करेंगे तो आपको जीत मिलेगी। अब हड़बड़ी करते हुए सरकारी आदेश के खिलाफ काम करेंगे, तो इस कहानी में बताए गए उदाहरण की तरह आपकी हालत होगी। फिर आप कहेंगे कि अब हम सत्याग्रह के लिए इकट्ठा हुए हैं। इसलिए आपने जो कार्यक्रम बनाया है उसे इस तरह बनाइए कि सत्याग्रह अब शुरू होगा और जब तक विजय मिलती नहीं, जब तक अस्पृश्य लोगों के लिए चवदार तालाब खुलता नहीं, तब तक हम सत्याग्रह जारी रहेगा। फिर आपके अध्यक्ष साहब बैरिस्टर हैं। उनके साथ बातचीत कर सबूत के लिए साक्ष्य बना लीजिए। साथ ही इस काम के लिए धन की जरूरत होगी। उसकी तैयारी कीजिए। आखिर में एक बात बताना चाहूंगा। बारह सालों से इस तहसील के महारों को मैं जानता हूं। मैं जानता हूं कि वे अच्छे लोग हैं, सरकारी नौकरी में हैं। ऐसे भी कई लोग हैं, जिन्होंने सेना में नौकरी की है। सुभेदार, हवलदार, जमादार, सिपाही आदि पदों पर वे तैनात रहे हैं। जिन्होंने सरकार की नौकरी की वे सरकार का अपमान करेंगे, ऐसा नहीं लगता। मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि जब तक फरियाद का फैसला नहीं आता, तब तक तालाब के सत्याग्रह का काम छोड़ दीजिए। ऐसा नहीं करेंगे तो नुकसान आपका ही है। आप जानते हैं कि हमने पुलिस का पक्का बंदोबस्त किया है। तालाब में जाने की जगह ही नहीं है। फिर भी आपने कोशिश की तो स्पृश्य लोग और सरकार दोनों आपके खिलाफ होंगे। इससे कोई फायदा नहीं है। थोड़ा रुकिए। आपके नेता समझदार हैं। उन्हें कोर्ट के बारे में जानकारी है। उनके साथ काम कीजिए। आपका काम बन जाएगा। फैसला आपकी तरफ से होगा। फिर कोई हर्ज नहीं होगा। आपके फायदे के लिए मैं यह उपदेश दे रहा हूं। जो कुछ कहा उसे अपने दोस्त द्वारा दी गई समझ मान कर उस पर अमल करेंगे ऐसी उम्मीद करता हूं।”

बाद में अध्यक्ष की इजाजत से श्री जवलकर ने कहा, "सुबह आए हैं तब से हम महाड के सभी मराठी नेताओं से मिले। उनमें से हर किसी ने बताया कि वे अस्पृश्यों के खिलाफ नहीं जाएंगे। सबूत के तौर पर उन्होंने मुझे एक घोषणा–पत्र लिख कर दिया है। वह इस प्रकार है –

श्री केशवराव जेधे और दिनकरराव जवलकर को

महाड दिनांक 26–12–1927

हमारा आगे दिया जा रहा कथन– महाड मराठा समाज की राय – अस्पृश्य समाज के सामने रखें।

महाड़ चवदार तालाब पर सत्याग्रह करने के लिए यहां बडी संख्या में अस्पृश्य समाज स्वोन्नति की कोशिष कर रहा है। कुछ अन्य जातियों के गैर–जिम्मेदार लोग अफवाहें फैला रहे हैं कि मराठा लोग उनके खिलाफ हैं। ये अफवाहें पूरी तरह निराधार हैं। हम महाड के मराठे, मराठा समाज के नेता के नाते आपको सूचित कर रहे हैं कि अस्पृश्य अपने मानवता के हक पाएं। मराठा समाज उनकी राह में अडंगे नहीं डालेगा। उल्टे, अस्पृश्यों की कोशिशों के बारे में हमारे मन में बहुत सहानुभूति है। हालांकि अगर कानूनी राह से अपनी कोशिशें जारी रखेगा तो हमें लगता है कि अस्पृश्य समाज का तुरंत कल्याण होगा।

सत्याग्रह के बारे में हम स्थिरप्रज्ञ रहेंगे, इस आशय का प्रस्ताव हमने 21 दिसंबर, 1927 को ही पारित किया है।

तालाब के संदर्भ में जिन 9 लोगों ने कोर्ट में फरियाद दाखिल की है उनमें से केवल एक व्यक्ति मराठा है। उन्होंने फरियाद दाखिल कराने में शामिल होने में पहले मराठा समाज की सहमति नहीं ली थी और उन्होंने जो कुछ किया है उसके लिए मराठा समाज की बिल्कुल सहमति नहीं है।

हस्ताक्षर
नारायण मामा मांगडे, पेंटर
कोंडीराम पांडुरंग शिंदे
किसन बाबा धुमाल
तुकाराम सावलाराम पानसरे
कृष्णाजी ग्यानबा पवार
बाबाजीराव माधवराव दलवी
सीताराम गोपाल चौधरी

इससे आप पाएंगे कि मराठा वर्ग आपके खिलाफ नहीं है। हालांकि, गैर–ब्राह्मण पार्टी का कहना है कि फरियाद का निर्णय होने तक सत्याग्रह रोकना ही सही होगा।

कलक्टर साहब की भी यही राय है। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप गैर–ब्राह्मण पार्टी और जिलाधिकारी (कलेक्टर) साहब की सलाह को मानना सही होगा, ऐसा लगता है।" दिनकर राव जवलकर के भाषण के बाद सूबेदार घाटगे ने कहा कि "मैं खुद पेन्शनर सूबेदार हूं। सत्याग्रह में हिस्सा लूंगा तो मेरी पेंशन पर आंच आएगी, यह मैं जानता हूं। इसके बावजूद सत्याग्रह करने के लिए मैं पुणे से यहां आया हूं। एक बात मैं जरूर कहना चाहूंगा कि मैं स्पृश्य लोगों के खिलाफ सत्याग्रह करने आया था। लेकिन ये लोग खुद सरकार की आड़ में छिप कर हमें और सरकार को आपस में भिड़ाना चाहते हैं। सो इस लड़ाई में कूदने से पहले हमें पूरी तरह सोच–विचार करना होगा। सरकार दुराग्रही होती तो हमें इस लडाई में कूदना ही पड़ता। लेकिन कलक्टर साहब के भाषण से ऐसा लगता नहीं। हमारे लिए उनके मन में सहानुभूति है। फिर बेवजह सरकार से भिड़ना क्यों? आज हमने जो उत्साह दिखाया, वह बहुत ही अपूर्व है। मैं उसके लिए आपका अभिनंदन करता हूं। इतना उत्साह हो तो आपको सफलता भी जरूर मिलेगी। हालांकि, बदले हुए हालात देख कर आपको सब्र करना होगा ऐसा मुझे लगता है। मेरी आपसे यही विनती है।" कलक्टर साहब को जल्द लौटना था, सो इसके बाद बाबासाहेब ने उनके प्रति आभार प्रदर्शन किया। और उन्हें छोड़ आए। हालांकि, कलक्टर साहब के भाषण का सत्याग्रह के लिए आए लोगों पर कोई असर हुआ हो, ऐसा नहीं लगा। क्योंकि ऐसा लगा जैसे कलक्टर साहब के जाने के बाद वक्ता जब उनके बारे में बोलने लगे तब सत्याग्रह के खिलाफ बोलने वाले वक्ताओं की बातें सुनने के लिए लोग तैयार नहीं थे। हालांकि राजमान्य कृष्णाजी दावणे तथा सुश्री शांताबाई शिंदे जैसे सत्याग्रह के पक्ष में बोलने वाले वक्ताओं के भाषण पर तालियां बजीं। शाम के 7 बजे तक यही बहस चल रही थी। तब डॉ. अम्बेडकर ने बताया कि आज रात एक बार फिर बैठ कर, इस पर विचार किया जाएगा। कल सुबह पक्का निर्णय लिया जाएगा। उन्होंने सभा समाप्ति की घोषणा की।

तीसरा दिन

दूसरे दिन शाम की बैठक समाप्त होने के बाद जैसा कि तय हुआ था रात में एक बार फिर कुछ चुनिंदा लोगों की बैठक हुई। उसमें गर्मागर्म बहस हुई। और आखिर इस बात पर सहमति हुई कि फिलहाल सत्याग्रह टाल दिया जाए। फिलहाल गांव में से जुलूस निकला जाए और तालाब के चारों तरफ जुलूस को घुमाया जाए। रात में ही इस बात की सूचना कलक्टर साहब के पास पहुंच गई। फिर यह सवाल उभरा कि आखिर सत्याग्रह को फिलहाल टालने का प्रस्ताव सभा के सामने किसके द्वारा रखा जाए। डॉ. अम्बेडकर ने अगर प्रस्ताव रखा है तो ही उसको सबका समर्थन मिलता। सभा केवल उनकी बात मानती, किसी और की नहीं, यह सब जानते थे। उसी के अनुसार तय हुआ कि डॉ. अम्बेडकर ही इस प्रस्ताव को प्रस्तुत करें और

डॉ. अम्बेडकर ने यह जिम्मेदारी अपने सिर पर ली।

तीसरे दिन सुबह जब परिषद की शुरुआत हुई तब डॉ. अम्बेडकर ने आगे दिया हुआ प्रस्ताव सभा के पटल पर रखा –

महाड़ परिषद का तीसरा दिन

प्रस्ताव –

जो स्पृश्य हिंदू लोग चवदार तालाब का पानी अस्पृश्य लोगों को भरने नहीं देते हैं, उनके खिलाफ सत्याग्रह करने के लिए सभा बुलाई गई। तब स्पृश्य हिंदुओं ने दीवानी कोर्ट में फरियाद दाखिल कर अस्पृश्यों के तालाब प्रवेश के खिलाफ अस्थाई स्थगनादेश हासिल किया और इस तरह सभा को सरकार के खिलाफ सत्याग्रह करने का आदेश हासिल किया और इस सभा को सरकार के खिलाफ सत्याग्रह करने की मुश्किल समस्या का पेच खड़ा कर डाला। इस बात को ध्यान में रखते हुए तथा कलक्टर साहब ने अपने भाषण में जो आश्वासन दिया था कि, इस मामले में सरकार का कोई दुराग्रह नहीं है। और समान अधिकार पाने के लिए चली अस्पृश्यों के अधिकारों की लड़ाई में उनके प्रति सरकार को पूरी सहानुभूति है। इसके बारे में खयाल कर यह परिषद दीवानी न्यायालय की फरियाद का निर्णय आने तक सत्याग्रह को स्थगित करने का निर्णय लिया जा रहा है। सभा के सामने प्रस्ताव रखते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा,

कल ही मैंने प्रस्ताव रखा कि सत्याग्रह कीजिए। और आज मैं खुद सत्याग्रह को कुछ दिनों के लिए स्थगित किए जाने का प्रस्ताव रख रहा हूं। इसलिए आपको लगेगा कि मैं चंचल मानसिकता वाला इंसान हूं। असल में ऐसी कोई बात नहीं है। दोनों बातों पर पूरी तरह गौर करने के बाद ही मैं कह रहा हूं। कल मैं देखना चाह रहा था कि आप लोगों में कितना निश्चय है। मुझे इसका अंदाजा हो गया। आपका निश्चय पक्का है इस बारे में अब मुझे कोई शक नहीं। इस बात से मैं पूरी तरह संतुष्ट हूं। दृढ़ संकल्प की कमी ही अब तक आपकी सबसे बड़ी कमी थी। आपने उस कमी पर विजय प्राप्त कर ली है। अब सत्याग्रह नहीं करने के बारे में मैं जो आपसे कह रहा हूं, वह भी मैं पूरी तरह से सोचने–समझने के बाद ही कह रहा हूं। बदन में शक्ति का संचार हुआ तो जरूरी नहीं कि तुरंत उसका प्रयोग किया जाए। शक्ति का इस्तेमाल करना हो तो सही समय का इंतजार करना उपयुक्त होता है। सोचने के बाद मुझे भी यह बात सही लगी है कि आज हमें इस शक्ति का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए। आज अगर हम सत्याग्रह करते हैं तो वह सरकार के खिलाफ साबित होगा। सरकार अगर दुराग्रह करे तो सरकार के खिलाफ सत्याग्रह करने में भी कोई हर्ज नहीं है। लेकिन पहले पता करना है कि क्या सरकार दुराग्रह कर रही है? सोचिए इस बारे में। सरकार की सहानुभूति हमारे साथ है। फिर बिना वजह

हम सरकार को क्यों मुश्किल में डालें? दूसरी बात यह कि हमारे सत्याग्रह के लिए स्पृश्य लोगों की जरा भी सहानुभूति नहीं है। आप लोग भी यह बात देख रहे हैं। स्पृश्य लोग हमारे साथ पूरी तरह असहकर कर रहे हैं। व्यापारियों ने बाजार बंद रखे हैं। जमींदार ने हमसे खेती छीनने का कार्यक्रम बनाया है। कुणबियों ने हमारे जानवरों को कांजीहाऊस में डालना शुरू किया है। हमें इस जोर–जबर्दस्ती से बच कर निकलना है। और इसमें हमें सरकार की सहायता की जरूरत है। सरकार सहायता का आश्वासन दे रही है। ऐसे में हम सरकार के खिलाफ सत्याग्रह करें यह अनुचित होगा। ऐसा अगर कुछ लोग कहते हैं, तो वे गलत कह रहे हैं, ऐसा कोई नहीं कह सकता। सो आप इस अवसर पर मेरी बात मानें और इस प्रस्ताव को सहमति दें। लोग आप पर हंस नहीं सकते। खुद कलक्टर साहब आपसे विनती कर रहे हैं। इसलिए कोई यह नहीं कह सकता कि आप डरपोक हो इसलिए आपने सत्याग्रह स्थगित किया। बहुत हुआ तो नीचा दिखाने के लिए कहेंगे कि आपके नेता पलट गए। लेकिन आप इस बारे में बुरा न मानें। मुझे इसका बिल्कुल बुरा नहीं लगता, क्योंकि अगर मैं पीछे हट भी रहा हूं तो केवल आपके भले की सोचकर। मेरे अनुयायी मुझसे चार कदम आगे पहुंचे यह मेरे लिए खुशी और गौरव की बात है। आज मैं कह रहा हूं कि सत्याग्रह को स्थगित करो, लेकिन आप ही की तरह मेरा भी निश्चय है कि तालाब को काबिज किए बगैर जाना नहीं है। यह निश्चय पूरा होने तक मैं चुप नहीं बैठूंगा, यह बात अपने मन में पक्की कर लें।"

डॉ. अम्बेडकर के इस भाषण को सुनकर सत्याग्रही लोग बहुत निराश हुए। इसके बावजूद सभी ने डॉ. अम्बेडकर की बात का सम्मान करते हुए उनके प्रस्ताव को सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया।

प्रतिनिधियों का भव्य जुलूस

प्रस्ताव के बाद वहां इकट्ठा हुए प्रतिनिधियों का शहर में बड़ा जुलूस निकला। इसमें सबसे आगे मुंबई से आए 50 स्वयंसेवक थे। इसके बाद सम्मेलन में हिस्सा लेने आई 50 महिलाएं थीं। उनके बाद चार–चार की कतार में एक के पीछे एक सभी प्रतिनिधि शामिल हुए थे। बीच–बीच में सूक्तियां लिखीं तख्तियां हाथों में लेकर लोग चल रहे थे। पिछले मार्च महीने में अस्पृश्य लोगों ने तालाब को अपवित्र किया, इसलिए महाड़ के सारे अस्पृश्य लोग धर्मवीर बने थे और वे जेल गए थे। अब कोर्ट का स्थगनादेश आने पर तो उन्हें तो छाती फुलाकर चलना चाहिए था। लेकिन सबने अपने घर के दरवाजे बंद कर लिए थे। महिलाओं और बच्चों की बात तो छोड़ ही दीजिए, पुरूष भी रास्ते पर नहीं दिखाई दे रहे थे। नेता लोग तो दुम दबाकर गांव से भाग खड़े हुए थे। एक भी नेता गांव में नहीं था। कोर्ट का स्थगनादेश आने के कारण थोड़े समय

के लिए सरकार उनके तरफ से थी। फिर भी महाड़ के लोग इतने दीन–हीन कैसे बन गए थे, इसका सभी को अचरज हो रहा था। यह एक पहेली थी कि शेर के बच्चे बिल्ली के पिल्ले कैसे बन गए। विशाल जुलूस महाड़ के बाजार से होकर निकलते देखने के बाद पहले से डरे हुए महाड़ के लोग और बौखला गए।

महाड़ शहर के लिए इस तरह का जुलूस देखने का यह पहला मौका था। जार्ज पंचम की जय, लोकहितवादी की जय, एकनाथ महाराज की जय आदि नारों से सारा शहर गूंज रहा था। जुलूस बाजार से गुजरते हुए चवदार तालाब के मोड़ पर आया। वहां लंबाई में जुलूस को इस तरह विभाजित किया गया कि आधा जुलूस तालाब के एक तरफ और आधा दूसरी तरफ ले जाया गया। दूसरे छोर पर फिर ये दोनों सिरे मिल गए और जुलूस एक हो गया और आगे वह सभा मंडप के पास पहुंचा। इस तरह तालाब को चारों तरफ से जुलूस ने घेर लिया। यह देखकर गांव वाले आपस में करुण स्वर में कह रहे थे कि अब तालाब से पानी लेने में क्या कसर रह गई है। ऐसे उद्गार निकलना स्वाभाविक भी था। कंधों पर लाठी लेकर चलकर आते लोगों का यह जुलूस शिवाजी की मावलों की सेना की याद दिला रहा था। जुलूस इतना लंबा था कि अगला वाला सिरा जब लौटकर मंडप तक पहुंचा तब तक पिछले सिरे के लोग मंडप के पास ही थे।जुलूस पूरा होने पर जब लौटे तब एक बार फिर सभा आरम्भ हुई। शिवतरकर जी ने यह प्रस्ताव लोगों के सामने रखा –

धन्यवाद प्रस्ताव :

इस सम्मेलन को सफल बनाने में जिन अस्पृश्य लोगों ने मदद की उनके प्रति और खासकर इन सज्जनों के प्रति यह सभा कृतज्ञतापूर्वक आभार प्रकट करती है। 1. अ. वि. चित्रे, 2.सुरेंद्रनाथ टिपणिस, 3. फत्तेखानसाहब मुठोलीकर, 4. शांताराम रघुनाथ पोतनीस, 5. केशवराव देशपांडे, 6. ग. नि. सहस्त्रबुद्धे।

इस प्रस्ताव पर श्री पाडुरंग नाथुजी राजभोज, श्री मोरे, श्री वनमाली आदि लोगों ने भाषण दिए। इस प्रकार धन्यवाद का यह प्रस्ताव तालियों की गड़गड़ाहट के बीच पारित हुआ। उस पर श्री अनंतराव चित्रे और सहस्त्रबुद्धे ने जवाबी भाषण दिए। उसके बाद डॉ. अम्बेडकर ने बताया कि सभा का कार्यक्रम अब खत्म हुआ, फिर भी अन्य कुछ महत्वपूर्ण बातों के बारे में विचार करना बाकी है। जब तक उन पर विचार नहीं होता, मैं यह नहीं कह पाऊंगा कि सम्मेलन खत्म हुआ। अब चूंकि काफी समय हो गया है, इसलिए इस विचार–विमर्श को शाम तक के लिए टालना जरूरी हो गया है। इसलिए आप सबसे मेरी यह विनति है कि आप घर न जाकर शाम की बैठक में उपस्थित हों। इस प्रकार अध्यक्ष के भाषण के साथ सभा का काम दोपहर एक बजे संपन्न हो गया।

18
अस्पृश्य होते हुए भी अस्पृश्यों के आंदोलन में सहभागी न होना लांछन है

25 से 27 दिसंबर, 1927 दरमियान महाड़ में हुई सत्याग्रह परिषद से वहां के चमार समाज में भी हलचल मचा दी। वे मानों गहरी नींद से हड़बड़ाकर जाग गए। 27 दिसंबर, 1927 की शाम को चमारों की बस्ती में सभा का आयोजन तय कर डॉ. अम्बेडकर को वहां आमंत्रित किया गया। उनके अनुरोध का सम्मान करते हुए डॉ. अम्बेडकर अपने मित्रों और साथियों के साथ शाम साढ़े सात बजे चमारों की बस्ती में गए। महाड़ में चमारों की बहुत बड़ी बस्ती है। उसी अनुपात में सभा के लिए चमार बड़ी संख्या में उपस्थित हुए थे। पहले श्री रा. ना. वनमाली, श्री गिरिजाशंकर शिवदास, एल. आर. चांगोरकर, श्री गोविंद झिपरू जाधव आदि के सामाजिक विषयों पर स्फूर्तिदायी भाषण हुए। उसके बाद डॉ. अम्बेडकर बोलने के लिए खड़े हुए और उन्होंने कहा कि,

"गिने चुने लोगों को छोड़ दें तो बाकी चमार लोग सत्याग्रह जैसे कार्यक्रमों में हिस्सा नहीं लेते यह बड़े अचरज की बात है। इसके पीछे क्या कारण हैं, मैं नहीं जानता। मैं समझ नहीं पा रहा हूं कि महार समाज की मदद करने में आप हिचकिचाते क्यों हैं? आप खुद सत्याग्रह की तरह का बड़ा कार्य करने की सोचें तो वह आपसे निभ नहीं पाएगा ऐसा मुझे लगता है। क्योंकि, आपकी जनसंख्या बेहद कम है। इसलिए महार लोगों की तरह बहुसंख्यक लोगों के साथ कार्यक्षमता के नज़रिए से सहकारिता के बगैर आपके सामने कोई चारा नहीं है। साथ ही, आपको एक बात के प्रति आश्वस्त रहना चाहिए कि महारों के साथ काम करने से, उन्हें अपना सहयोग देने से आपकी जाति भ्रष्ट नहीं होगी। सच पूछो तो सत्याग्रहियों का समूह वीरों का समूह है। और वीरों के समूह में जातियों के खयालों का कोई स्थान नहीं, यह बात पेशवाओं के ब्राह्मणों वाले शासन काल में भी मानी गई थी। ऐसा अगर न होता तो सिदनाक महार का तंबू मराठों की छावनी में रहने नहीं दिया जाता। इसके बावजूद कोई आपसे यह नहीं कह रहा कि आप अपनी जाति छोड़िए। सच पूछो तो आप धनवान हैं, व्यापारी हैं, खाते–पीते हैं। असल में आप लोगों को हमारी मदद करनी चाहिए। आप लोग जूते न देने का सत्याग्रह कर सकते हैं। आपके समाज में इतना सामर्थ्य है फिर भी आप उसका इस्तेमाल नहीं करते। इसे आप की लापरवाही कहें या हद दर्जे का आलसीपन कहें, यह मेरी समझ में नहीं आ रहा। आप खुद तय कीजिए कि आप सुख चाहते हैं या इंसानियत। इंसानियत के बगैर आपका वैभव व्यर्थ है। आप जैसे आज़ाद और सुखी लोगों को अस्पृश्यों को इंसानियत दिला देने के काम में उत्सुकता के साथ हिस्सा लेना चाहिए। थोड़ा

पुण्य आपको भी कमा लेना चाहिए। इसमें अगर आप हिस्सा लेते हैं तो महारों के साथ इतिहास में आपका नाम भी जुड़कर अमर हो जाएगा। वरना आपकी अगली पीढ़ी आपको दब्बू होने का दोष देगी।"[1]

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के संबोधन के बाद श्री एस. एन. शिवतरकर ने कहा, कि आप अस्पृश्योद्धार के कार्य में हिस्सा नहीं ले रहे हैं, इसलिए आपको डरपोक भीरु माना जा रहा है। आप अपने कर्त्तव्य से चूक रहे हैं। यह कार्य सिर्फ अस्पृश्यों का नहीं है, यह तो पूरी मानव जाति का काम है। लेकिन अस्पृश्य होते हुए भी आप इसमें हिस्सा नहीं ले रहे हैं यह आपके लिए लांछन की, कलंक की बात है। ब्राह्मणों के विचार अपनी प्रगति में बाधक हैं, इसलिए उन विचारों से आप प्रभावित न हों, इसे स्वतंत्रता प्राप्ति कार्य में सहभाग लें और सहकार करें। उनके बाद श्री पां. ना. राजभोज ने कहा कि, चमार लोग भटों के – ब्राह्मणों के विचारों से प्रभावित हो रहे हैं यह देखकर मुझे बड़ा दुख हो रहा है। उससे भी अधिक व्यथित मैं मातंग लोगों के समाज की दशा को देखकर होता है। चमार लोग अन्य अस्पृश्यों की तुलना में बेहतर स्थिति में हैं, लेकिन पढ़े–लिखे न होने कारण वे अपने कर्त्तव्यों से अनभिज्ञ हैं। आज अस्पृश्य नेताओं पर संकट छाया हुआ है। ऐसे समय आपको द्वेष भावना और जलन को त्याग देना चाहिए। जातिभेद बहुत ही भयंकर बात है। उसे भुला कर आप महार लोगों की सहायता करें। सत्याग्रही बनें। इसी में हम सबका हित है। उनके संबोधन के बाद श्री सहस्त्रबुद्धे ने कहा, बैरिस्टर साहब आपके कुल में पैदा हुए और आज विलायत जाकर विद्वान ब्राह्मणों से भी अधिक विद्वान होकर आए। इसीलिए, आज मैंने ब्राह्मण होते हुए भी उनका शिष्यत्व स्वीकार किया है। आपको भी इसी तरह उनसे सीख लेनी चाहिए। जातिभेद को खत्म करें और अस्पृश्योद्धार के काम में सहयोग करें। बैरिस्टर साहब के साथ मैं हमेशा खाना खाता रहा हूं, उससे मुझे कुछ नुकसान नहीं पहुंचा है। खाने–पीने के भेदभाव को आप लोग बेकार में तूल ना दें। उसके बाद श्री वनमाली ने कहा, आप लोगों ने सत्याग्रह में हिस्सा नहीं लिया, इस बारे में मुझे बहुत अफसोस है। अपना कर्त्तव्य निभाने का यह मौका बेकार ना गंवाएं। कर्त्तव्य निभाएंगे तो इतिहास में आपका भी नाम अमर होगा। इस प्रकार भाषण हुए। उसके बाद चायपान हुआ और अध्यक्षों के प्रति धन्यवाद अर्पण करने के बाद करीब 9 बजे सभा बर्खास्त हुई।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के साथ आए लोगों के चमारों की बस्ती से लौटने के बाद रात 10 बजे एक बार फिर सत्याग्रह परिषद की शुरुआत हुई। धुले जिले के खादी प्रसारक मंडल के आद्य प्रवर्तक रा. देव का व्याख्यान तय था। उनके आने में

1. "बहिष्कृत भारत", 3 फरवरी, 1928

थोड़ी देर होने के कारण श्री गणपतबुवा जाधव का और श्री कांबले का भगवान और भक्त विषय पर हास्य से भरा कीर्तन हुआ जो करीब आधे घंटे पन्द्रह–पन्द्रह मिनट चला। लोगों पर इसका काफी असर हुआ। रा. देव के भाषण के बाद परिषद के काम की शुरूआत हुई। पहले श्रीयुत वामनराव पत्की और कमलाकर टिपणीस इन दो कायस्थ जाति के युवकों को धन्यवाद देने तथा सम्मानस्वरूप सत्याग्रह समिति की ओर से उन्हें सोने की अंगूठियां अर्पण करने का प्रस्ताव रखा गया। इस प्रस्ताव पर श्रीयुत संभाजी गायकवाड़, गोविंद रामजी आड़ेरकर हवलदार और श्रीयुत मोरे के भाषण हुए। इसी प्रस्ताव पर बोलते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि,

इन दोनों युवाओं का काम उनके कुल और जाति को शोभा देने वाला ही है। ब्राह्मणवर्ग द्वारा कायस्थ लोगों पर कमतरी का ठप्पा लगा कर उन्हें हीन मानने का काम कइयों बार किया। लेकिन हर बार उन्होंने इन हालातों का सामना कर ब्राह्मण जाति के इस काले कारनामों पर अंकुश लगाया। समता की लड़ाई लड़ चुकी कायस्थ जाति को समता की लड़ाई लड़ने वाले अस्पृश्य समाज के बारे में सहानुभूति महसूस कर इस कार्य में उनका सहयोग देना स्वाभाविक है।" उसके बाद श्रीयुत कमलाकर टिपणीस और श्रीयुत पत्की के इसके लिए आभार व्यक्त करने वाले भाषण हुए। उसके बाद, महाड़ म्युनिसिपालिटी के अध्यक्ष रा. सुरेंद्रनाथ टिपण ीस बोलने के लिए उठ कर खड़े हुए। हिंदू धर्म की रक्षा के लिए अस्पृश्य वर्ग की कितनी जरूरत है इसका उन्होंने विस्तार से वर्णन किया। उनके बाद बोलते हुए श्री रा. शांताराम पोतनीस ने कहा, सभी गूजर और ब्राह्मण समाज अगर पलट भी जाए तब भी हम तन, मन, धन से मदद करते रहेंगे। कायस्थों में से कुछ पुराने लोग भी आपके विरोध में हैं। लेकिन हम रत्तीभर भी उनकी परवाह नहीं करते। चवदार तालाब पर जाने के लिए अस्पृश्य लोगों को जब तक इजाज़त नहीं मिलती तब तक मैं भी वहां पर पानी नहीं पिऊंगा।

इससे अगला प्रस्ताव डॉ. अम्बेडकर ने खुद रखा। वह कुछ इस प्रकार था – "सत्याग्रह परिषद के लिए जिन्हें नियुक्त किया गया है, उन प्रचारकों को रा. शिवराम गोपाल जाधव, संभाजी तुकाराम गायकवाड़, भाऊ बालू वारंगकर, पंढरीनाथ रामचंद्र आसूडकर, भाविकनाथ बुवा फलानकर और पांडुरंग महादेव वोउरकर ने अपना काम बेहतर ढंग से पूरा किया है इसलिए, यह परिषद उनके प्रति आभार प्रकट करती है। रा. बोऊरकर, सखाराम, गोपाल आचलोलकर, महादेव आचलोलकर ने परिषद के कार्य के लिए अपने आप को समर्पित किया इस बात पर गौर करते हुए उन्हें एक–एक चांदी का तमगा पुरस्कार स्वरूप दिया जाता है।[1]

1. "बहिष्कृत भारत", 3 परवरी, 1928

19
अस्पृश्यों की उन्नति और महिलाओं की जिम्मेदारी*

दिनांक 27 दिसंबर, 1927 को दोपहर परिषद का समापन कर प्रतिनिधि भोजन के पंडाल की तरफ बढे। डॉ. बाबासाहेब परिषद के दफ्तर में पहुंचे। वहीं उनके ठहरने का इंतजाम किया हुआ था। वहां जाकर वे अभी पहुंचे ही थे कि उन्हें देखने के लिए महिलाओं की भीड़ वहां उमड़ पड़ी। ये महिलाएं दूर दूर से – करीब नौ–दस मील की दूरी से खास डॉ. अम्बेडकर को देखने के लिए वहां पहुंची थीं। डॉ. अम्बेडकर को देखने की ऐसी ललक उनमें जगी थी कि उनमें से कई महिलाएं अपने दूध पीते बच्चों को पीछे छोड़ कर आई थीं। शाम के समय तो महिलाओं की और भीड़ उमड़ी। उनमें से एक वृद्ध महिला आई और डॉ. अम्बेडकर को देखकर जोर–जोर से रोने लगी। देखकर लोगों को यकीन–सा हो गया कि हो न हो इसे किसी स्पृश्य गुंडे ने पीटा होगा। इसलिए लोगों ने उससे पूछना शुरू किया, कि बताओ तुम रो क्यों रही हो? तुम्हें किसने मारा? तब उसने कहा कि मुझे किसी ने नहीं मारा। लेकिन मैं जब इस तरफ आ रही थी, तब रास्ते में कुछ दुष्टों ने मुझसे कहा कि तुम्हारे राजा स्वर्ग सिधार गए। तब जाकर उसके रोने का और अचानक इतनी महिलाओं के आने का कारण लोगों की समझ में आया। सच्चे प्रेम की डोर में बंधा महिला वर्ग इस प्रकार अपने को देखने आया हुआ पाकर डॉ. अम्बेडकर ने इस मौके का फायदा उठाते हुए महिलाओं को समाजहित की दो बातें बताने का निर्णय लिया। उन्होंने महिलाओं से कहा कि मैं आपको समाज हित की दो बातें कहना चाहता हूं, इसलिए मेरी विनती है कि आप शाम की परिषद के लिए उपस्थित रहें। महिलाओं ने उनकी बात मानी।

चमारों की बस्ती का कार्यक्रम पूरा होने के बाद डॉ. बाबासाहेब ने महिला वर्ग को उद्देश्य कर भाषण दिया। उसके बाद जाति के पंच, म्हेत्रे आदि अधिकारियों ने उनका मार्गदर्शन किया। तय कार्यक्रमानुसार आखिर वाले और सबसे अधिक महत्वपूर्ण कार्यक्रम की शुरुआत अध्यक्ष महोदय ने कर दी। यह आखिरी कार्यक्रम इतना महत्त्वपूर्ण था कि परिषद के कुल कार्यक्रमों मे से महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम तय करना हो तो इसे ही प्रमुखता दी जाए। यह कार्यक्रम इतनी गंभीरता से पूरा किया गया कि सभी उपस्थितों को अपने कर्त्तव्यों के बारे में बड़ी तीव्रता से अहसास हुआ। इन कार्यक्रमों का पहला कार्यक्रम था महिला वर्ग के लिए व्याख्यान देना। दोपहर में तय कार्यक्रम के अनुसार सभी महिलाएं लिहाज छोड़ कर आई और समारोह स्थल में बैठ गई। उनके बैठने के लिए बीच में ही जगह खाली रखी गई थी। उन्हें संबोधित करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा,

---

*"बहिष्कृत भारत", 3 फरवरी, 1928

"आप इस सभा में आईं इसलिए मुझे बेहद खुशी हो रही है। घर–गृहस्थी की मुश्किलों को जिस तरह पुरुष और स्त्री मिल कर हल करते हैं, उसी तरह समाज की गृहस्थी की अड़चनें भी पुरुषों और महिलाओं को मिल कर सुलझानी चाहिएं। केवल पुरुष अपने सिर पर ये काम लें तो उन्हें उसे पूरा करने में काफी समय लग सकता है। उसी काम को अगर महिलाएं अपने सिर पर लेती हैं तो उन्हें जल्द से जल्द सफलता मिल सकती है ऐसा मुझे लगता है। हालांकि अगर वे खुद इस काम को करने में असमर्थ हों तब भी जो पुरुष इस काम में लगे हुए हैं, उन्हें उनका साथ देना चाहिए। इसके लिए आगे से आप इस परिषद के लिए हमेशा उपस्थित रहें, यह मेरा आपसे अनुरोध है। सच पूछो तो अस्पृश्यता हटाने का सवाल पुरुषों का नहीं आप महिलाओं का ही है। आप ही ने हम पुरुषों को जन्म दिया है। अन्य लोग हमारे साथ जानवरों से भी बुरा सलूक करते हैं यह आप जानती हैं। कुछ जगहों पर तो हमारी छाया को भी अपवित्र माना जाता है, उससे लोग दूर रहते हैं। अन्य लोगों को कोर्ट–कचहरी में सम्मान का स्थान मिलता है, लेकिन आपके पेट से जने हमें पुलिस में चपरासी की नौकरी तक मिलती नहीं। इतना हमारा दर्जा हीन है। यह सब जानते हुए भी आपने हमें क्यों जन्म दिया?– यह सवाल अगर कोई आपसे पूछे तो क्या आप उसका जवाब दे पाएंगी? इस सभा में उपस्थित कायस्थ और अन्य स्पृश्य महिलाओं के पेट से जने और आपके पेट से जने बच्चों में क्या फर्क है? ब्राह्मण महिलाओं में जितना शील है उतना शील आपमें भी है। ब्राह्मण महिलाओं में जितना पतिव्रत्य है, उतना आपमें भी है और आपके पास जितना मनोधैर्य, स्वाभिमान, दृढ़प्रतिज्ञता, हिम्मत और साहस है, उतना उनके पास नहीं। इन स्थितियों में ब्राह्मण महिला के पेट से जने बच्चों को सर्वमान्यता क्यों मिले और आपके पेट से जने बच्चे को हर जगह बेइज्जती क्यों सहनी पड़े? उसे इंसानियत के अधिकारों तक से वंचित क्यों रखा जाता है? इस बारे में क्या आपने कभी सोचा है? आपने अगर सोचा होता तो पुरुषों से पहले आप ही सत्याग्रह करतीं। क्योंकि, आपके पेट से जनने का ही पाप उसके हाथ से हुआ है। उसी पाप के कारण हमें अस्पृश्यता का यह शाप भुगतना पड़ रहा है। इसलिए आपको सोचना चाहिए कि अन्य महिलाओं के पेट से जनना पुण्य कैसे हो सकता है? और आपके पेट से जन्म लेना पाप क्यों हो? इस सवाल पर सोचोगे, तो या तो आपको बच्चे पैदा करना बंद करना होगा या फिर आपके कारण लगा कलंक उसे साफ कराना होगा। आपको चाहिए कि इन दो मार्गों में से किसी एक मार्ग को आप अपनाएं। आप प्रतिज्ञा करें कि, हम ऐसी कलंक भरी स्थिति में नहीं जीएंगे। पुरुषों ने जिस तरह समाजोन्नति करने का निश्चय किया है, उसी प्रकार का निश्चय आप भी करें। एक और बात आपसे कहनी है कि, आप सब लोग पुराने और गंदे रीति–रिवाजों का पालन करना छोड़ दें। असल में अगर देखा जाए तो, अस्पृश्य व्यक्ति की अस्पृश्यता का ठप्पा उसके माथे पर मारा हुआ नहीं होता।

लेकिन अस्पृश्य लोगों के जो रीति–रिवाज हैं, उनके कारण लोग ठीक पहचान लेते हैं कि फलां व्यक्ति अस्पृश्य है। मेरी राय में किसी जमाने में ये रीति–रिवाज हम पर लादे गए थे, लेकिन अंग्रेज सरकार के राज में इस प्रकार की जबरदस्ती नहीं की जा सकती। इसीलिए, हमारे अस्पृश्य होने की बात की पहचान देने वाली सभी आदतों–बातों का हमें त्याग करना होगा। आपका साड़ी पहनने का तरीका आपके अस्पृश्य होने की पहचान है। इस साक्ष्य को आपको मिटाना होगा। ऊंचे वर्ग की महिलाएं जिस अंदाज से साड़ी बांधती हैं, आप भी उसी तरह साड़ी बांधना शुरू कर दें। इसमें आपको अपनी जेब से कुछ खर्च नहीं करना पड़ेगा। इसी प्रकार, गले में कई प्रकार के अलंकार और हाथ में कोहनी तक रांगे के या चांदी के अलंकार भी आपकी पहचान बता देते हैं। गले में एक से अधिक अलंकारों की जरूरत नहीं। ऐसा नहीं कि उससे पति की उम्र बढ़ती हो या आपकी सुंदरता खिलती हो। अलंकारों से अधिक सुंदरता कपड़ों से आती है। इसीलिए रांगे के या चांदी के अलंकारों पर पैसे खर्चने के बजाय अच्छे कपड़े खरीदने में पैसा खर्च करो। अलंकार पहनना ही हो तो सोने का बनवाकर पहनें। और अगर वह संभव न हो तो अलंकार न पहनें। इसी प्रकार साफ–सफाई का भी खयाल रखें। आप गृहलक्ष्मी हैं, घर में कोई भी अमंगल काम न होने देने के प्रति आप जागरुक रहें। पिछले मार्च महीने से सब ने मरे हुए जानवर का मांस खाना बंद किया है, यह बहुत आनंद की बात है। लेकिन अगर अभी भी किसी घर में इसकी शुरुआत नहीं हुई हो तो उसे शुरू करने की जिम्मेदारी आपको उठानी होगी। अगर पति मरे हुए जानवर का मांस घर में लाए तो उससे आप साफ–साफ कह दीजिए कि ऐसा मेरे घर में नहीं चलेगा। मुझे यकीन है कि अगर आप ठान लें तो यह होकर रहेगा। साथ ही आपको अपनी बेटियों को शिक्षा देनी होगी, उन्हें पढ़ाना होगा। ज्ञान और विद्या केवल पुरुषों के लिए नहीं हैं। महिलाओं के लिए भी वे जरूरी हैं। हमारे पूर्वजों ने यह बात पहले ही जानी थी। इसीलिए सेना में भर्ती हमारे पूर्वजों ने अपनी बेटियों की पढ़ाया। वरना वे अपनी बेटियों को पढ़ाते नहीं। जो बोओगे वही पाओगे इस बात को ध्यान में रखते हुए आप अगर अपनी अगली पीढ़ी में सुधार लाना चाहते हैं तो लड़कियों को शिक्षा से वंचित न रखें। मैंने जो दो–चार बातें आपसे कही हैं, उम्मीद करता हूं कि आप उन्हें नजरंदाज नहीं करेंगी। उसे अमल में लाने में देर ना कीजिए। इसलिए, सुबह घर जाने से पहले नए तरीके से साड़ी पहन कर मुझे दिखाएं और फिर घर जाएं। तभी मैं समझूंगा कि जो कुछ मैंने कहा उसका आप लोगों ने पालन किया।"

उसके बाद वहां इकट्ठा महिलाओं में से विठाबाई नामक महिला ने महिलाओं की तरफ से उन्हें आश्वासन दिया कि सभी महिलाएं उनकी कही बातों पर अमल करेंगी।

डॉ. अम्बेडकर के भाषण का वहां उपस्थित महिलाओं पर तुरंत असर होने का सबूत दूसरे ही दिन मिल गया। महिलाओं के ओढ़ने में जमीन–आसमान का बदलाव आया। उनके इस निश्चय के पुरस्कार स्वरूप उन्हें चोली और चूड़ी के लिए आठ–आठ आने देकर वहां से विदा किया गया। इसी प्रकार पुरुष वर्ग में भी बदलाव दिखाई दिया। उन्होंने भी हाथ–पैर–कानों आदि में से असभ्यता के लक्षणों का बोध कराने वाले गहने–जेवरों को तुरंत ही अपने शरीर से उतारकर उन्हें अपने से अलग कर दिया। इतना ही नहीं महाड़ म्युनिसिपालिटी की कचरापट्टी में झाडू वाले की नौकरी करने वाले महारों ने तुरंत अपने पद से इस्तीफा दे दिया।

20
बदले हालात का खयाल रखें*

दिनांक 27 दिसंबर, 1927 के दिन महाड़ सत्याग्रह परिषद में महिलाओं को उनकी जिम्मेदारी का बोध करा देने के बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने जाति के पंच, म्हेत्रे आदि अधिकारी लोगों को इकट्ठा कर बताया कि,

आज मैं आपको जो कुछ बताने जा रहा हूं वह सुन कर आप गुस्सा मत होना। मैं पंच का बच्चा हूं। अगर कोई गलती हो जाए तो माफ करना। हमारे बाप–दादाओं ने पंचों की व्यवस्था की वह बहुत अच्छी बात थी ऐसा मुझे लगता है। हर समाज के रीति रिवाज तय हो जाते हैं। उन्हीं रीति–रिवाजों के अनुसार सबको बरतना होता है। अगर कोई जाति के रिवाजों के अनुसार बर्ताव नहीं करता है तो उसे ठीक करने के लिए जाति को ओर से बहिष्कार या दंड की व्यवस्था होती है। यह सजा देने का काम जाति ने आप म्हेत्रे लोगों को सौंपा है। इससे आप लोगों को पता चलेगा कि समाज में आपकी क्या योग्यता है, आपका स्थान कितना ऊंचा है। आप समाज के न्यायाधिकारी और धर्माधिकारी लोग हैं। आप जैसा धर्म लोगों को बताएंगे और आप जैसा न्याय करेंगे उसी के अनुसार समाज में अच्छाई–बुराइयों का चलन होगा। लेकिन सभी लोगों का आप पर ऐसा आरोप है कि आप, “बेली वहां बोली” के हिसाब से बर्ताव करते हैं। यानी जहां कुछ मिले उस ओर झुक जाते हैं। सच को झूठ और झूठ को सच बना देते हैं। इसीलिए समाज में अधर्म बढ़ रहा है। इस सबके लिए आप ही जिम्मेदार हैं। इसलिए मैं आपसे जो कहना चाहता हूं, वह यह कि आप अपना कर्त्तव्य पहचानिए। समय बदल रहा है इसका खयाल रखिए। बदले हुए समय में क्या करना चाहिए इस पर गौर कीजिए। पुराने रीति–रिवाजों को त्याग कर उनकी जगह नए रीति–रिवाजों की नींव आपको रखनी होगी। इतना ही नहीं, नई रीति से जहां–जहां लोग मुख मोड़ेंगे वहां–वहां उन्हें सही रास्ते पर ले आने के लिए बहिष्कार के अस्त्र का प्रयोग करना होगा। यह करने के लिए अगर आप तैयार हैं तो हम आपकी परंपरा से चली आ रही गद्दी को मान लेने के लिए तैयार हैं। अगर आप यह मानना नहीं चाहते तो नई सोच वाले, नई नीति को अपनाकर चलने वाले पंचों की नियुक्ति कर आपके अधिकार हमें छीनने होंगे। बदले हुए हालात में अपनी जाति के लिए कौन से नियम लागू करना ठीक रहेगा, इस पर सोच–विचार करने के लिए मैं सभी म्हेत्रे लोगों की सभा बुलाऊंगा। उस सभा में जो नियम सबकी राय से पारित होंगे उन पर अमल करने के बारे में आप जागरूक रहेंगे, ऐसी उम्मीद मैं करता हूं।

---

*बहिष्कृत भारत : 3 फरवरी, 1928

उसके बाद रा. शिवतरकर ने सभा के सामने आखिरी प्रस्ताव रखा। उस प्रस्ताव में सत्याग्रह समिति की ओर से मुंबई इलाके के मराठी भाषिक सभी जिलों से महाड़ सत्याग्रह के लिए जो प्रतिनिधि आए थे, उनके प्रति आभार प्रकट किया गया था। महाड़ परिषद के बारे में कई बातें कहने लायक अपूर्व हैं। उनमें से एक यह कि महाड़ के चवदार तालाब का मसला केवल, केवल कुलाबा जिले के लोगों से जुड़ा है ऐसा न मानते हुए वह सभी अस्पृश्य लोगों से जुड़ा है, ऐसा माना गया था। मराठी भाषक जिलों में ऐसा कोई जिला नहीं था, जहां से लोग महाड़ सत्याग्रह के लिए न आए हों। ऐसी एकता अगर अस्पृश्य लोग हर बार दिखाएंगे तो अस्पृश्यता निवारण का काम बहुत आसान हो जाएगा. इस प्रकार रा. शिवतरकर के भाषण के बाद तथा रा. संभाजी गायकवाड़ के समर्थन के बाद तालियों की गड़गड़ाहट के बीच प्रस्ताव पारित हुआ और रात डेढ बजे सत्याग्रह परिषद का कामकाज समाप्त हुआ।

21
स्पृश्यों को अस्पृश्यों के बजाय स्पृश्यों को उपदेश देना चाहिए*

निवृत्तिनाथ की यात्रा के लिए श्रीक्षेत्र त्र्यंबकेश्वर में अस्पृश्य लोगों का बड़ा मेला लगता है। उसका फायदा लेकर लोकजागृति करने के इरादे से वहीं एक सभा का आयोजन करने के उद्देश्य से विज्ञापन बनाए गए थे। उसके अनुसार यात्रा के दिन यानी बुधवार दिनांक 18 जनवरी, 1928 के दिन सभा बुलाई गई थी। सभा का अध्यक्ष स्थान डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को दिया गया था। सभा में महिलाओं और पुरुषों का बड़ा जमावड़ा उपस्थित था। महिलाओं की उपस्थिति अधिक थी। सभा में मुख्यरूप से त्र्यंबकेश्वर में श्री चोखोबा का मंदिर बनाया जाए अथवा नहीं यही एक महत्वपूर्ण सवाल था। इसके बावजूद डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में अस्पृश्य वर्ग के सभी सवालों का विस्तार से, हर पहलू पर प्रकाश डालते हुए विवेचन किया और बताया कि श्री चोखोबा का मंदिर बनाने के बजाय चोखोबा द्वारा शुरू किए गए अस्पृश्यता निवारण के कार्य को पूरा करने के लिए हमेशा कोशिश करना यही चोखोबा राय का असल स्मारक होगा। उन्होंने सुझाव दिया, कि अगर आप यह कार्य करना चाहते हैं और 'बहिष्कृत भारत' पत्रिका खत्म न हो, ऐसी आपकी अगर मंशा है, तो हमारे द्वारा शुरू किए गए बहिष्कृत भारत फंड में सब मदद करें। उसके बाद श्री भाऊराव गायकवाड़, रा. भालेराव, पुंजाजी नवसाजी जाधव आदि सज्जनों के भाषण हुए। इस सबका इतना अधिक असर हुआ कि उसी जगह 203 रुपयों की रकम इकठ्ठा हुई। सार्वजनिक कार्य के बारे में जिन्हें कुछ भी पता नहीं था, उन गरीब बेचारी महिलाओं ने और साधुओं ने भी अल्प–स्वल्प चंदा दिया। सभा का कामकाज साढ़े चार बजे तक पूरा किया ही जाना चाहिए क्योंकि उसके बाद सभी लोगों को पालखी के जुलूस में जाना है, यह पहले से ही तय किया हुआ था। इसी कारण सभा की शुरुआत दो बजे की गई थी। पांच बजे के आसपास सभा पूरी होती। लेकिन उसी समय नासिक के दातार शास्त्री और 'स्वराज' पत्र के संपादक रा. मराठे आए और लोगों का भी पालखी के जुलूस से अधिक ध्यान सभा में ही लगा हुआ था, यह देखते हुए सभा का समय थोड़ा और बढ़ाने का निर्णय लिया गया। बाद में दातार शास्त्री और मराटे की अस्पृश्यों के आंदोलन के बारे में सहानुभूति दर्शाने वाले भाषण भी हुए। भाषण जब चल ही रहे थे रा. थोरात, वाडेकर और जलगाव के चौधरी आदि लोग पहुंचे। उनके भी भाषण हुए। अपने भाषण में रा. थोरात ने साफ तौर पर बताया कि, अस्पृश्यों से अपने पैरों पर खड़े होने के लिए कहना मूर्खता है। हम स्पृश्य लोगों को उनकी अस्पृश्यता नष्ट करने की कोशिश करनी चाहिए। उसके बाद रा. भाऊराव

*"बहिष्कृत भारत", 3 फरवरी, 1928

गायकवाड़ ने अपने भाषण में स्पृश्यों ने अस्पृष्यों के खिलाफ जो मुद्दे रखे थे, उनका खंडन किया। उसके बाद डॉ. अम्बेडकर ने इन सब बातों को समेट कर कार्यक्रम का सम्मान करते हुए कहा कि,

"आप अगर हमारे लोगों के बारे में सहानुभूति रखते हैं तो आप हमारे लोगों की सभा में आकर भाषण देने के बजाय स्पृश्य लोगों की सभा लेकर उस सभा में हमारे प्रति सहानुभूति निर्माण करने की कोशिश करें तो अधिक बेहतर रहेगा। मराठा लोगों से भी उन्होंने कहा कि, आप शहर में सभा लेने के बजाय गांव में सभा बुलाइए। क्योंकि, जैसे आपने कुलाबा जिले का हाल देखा है, उसी तरह गांवों के मराठे लोगों की स्थिति भी बिल्कुल उजड्डों की तरह है। उन्हें कुछ सिखाने की कोशिश आपको करनी चाहिए।" इस प्रकार का भाषण होने के बाद सभा का कामकाज पूरा किया गया। और सभा बड़े आनंद के साथ संपन्न हुई। ऐसे में, 'स्वराज्य' पत्रिका के संपादक ने डॉ. अम्बेडकर के भाषण का विपरीत अर्थ निकाल कर उस पर टीका–टिप्पणी की। उन्होंने जो भी कुछ लिखा उसे पढ़ने के बाद उस सभा में उपस्थित हर किसी को यकीन होगा कि स्वराज्य पत्रिका का संपादक एक नीच प्रवृत्ति का इंसान है। सो, इस विषय में और अधिक लिखने की जरूरत नहीं है।

22
अस्पृश्यता जातिभेद की पैदाइश है*

मंगलवार, दिनांक 25 सितंबर, 1928 के दिन रात 8 बजे मुंबई के दादर गणेशोत्सव में एक साथ डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और पुणे के श्री बापूसाहब माटे के भाषण आयोजित किए गए थे। लेकिन गला खराब होने का बहाना बना कर श्री माटे आए ही नहीं। उनके न आने से स्पृश्य सनातनियों को निराशा हुई थी। इसी प्रकार इस सभा में डॉ. अम्बेडकर को मात देने के, उनकी सभा में दंगल अथवा कोई समस्या खड़ी करने के सभी मंसूबों पर पानी फिर गया था। इसके बावजूद, इस सभा में डॉ. अम्बेडकर अगर स्पृश्य वर्ग के बारे में कुछ बोले तो उन्हें उसका मजा चखाने का प्लान भी उन्होंने बना लिया था। यह पूरी हकीकत गुरुवर्य केलुस्कर जी को पता चलते ही वे खास कर इस सभा में उपस्थित रहे थे।

लेकिन डॉ. अम्बेडकर का भाषण ही इतना व्यवस्थित, बढ़िया और असरदार हुआ कि सभा में हुल्लड़ मचाने के उद्देश्य से वहां इकट्‌ठा हुए लोग डॉ. अम्बेडकर की महानता के गीत गाते हुए अपने घरों को लौटे।

डॉ. बाबासाहेब ने यह सभा जीत ली थी। अपने भाषण में उन्होंने कहा था –

मैंने तय किया है कि मैं आज, "अस्पृश्यता निवारण का अस्पृश्यों द्वारा चलाया गया आंदोलन और उस पर ब्राह्मणादि स्पृश्य जातियों की आपत्तियों पर विचार" इस विषय पर आपके सामने बोलूं। विषय का नाम छोटा नहीं है, काफी लंबा है, लेकिन मैं यह भी चाहता हूं कि समय की कमी को देखते हुए आपके ऊब जाने तक इस पर चर्चा लंबी न खिंच जाए।

हमारे आंदोलन को लेकर तीन आपत्तियां जताई जाती हैं। पहली आपत्ति यह कि हम स्पृश्य वर्ग को सहयोग न देकर अलग से आंदोलन चलाते हैं। दूसरी आपत्ति यह कि, हमारी नीति हमला करने की होती है। तीसरी आपत्ति कि हम जातिभेद और अस्पृश्यता इन दो अलग–अलग बिंदुओं को बेवजह मिला देते हैं और इसीलिए अस्पृश्यता निवारण का दिन दूर ढकेलने का कारण बनते हैं।

पहली आपत्ति के बारे में बोलना हो तो सहयोग न देने का यहां मतलब अगर आत्मनिर्भरता के सिद्धांत पर आधारित और अलग से अगर आंदोलन चलाना है, तो यह आरोप बिल्कुल सही है। लेकिन अगर इसका मतलब यह है कि हम किसी की सहायता नहीं लेना चाहते या किसी भी स्पृश्य व्यक्ति के साथ सहकारिता से पेश नहीं

---

*समता : 5 अक्तूबर, 1928

आते तो यह गलत है। जो हमारा आदमी है, ऐसा हमें लगता है, तो फिर वह ब्राह्मण हो या गैर–ब्राह्मण हम उसे पूरा सहयोग देने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। इस संघ का अध्यक्ष बनने का सम्मान मुझे प्राप्त हुआ है। जातिभेद को खत्म कर हिंदू समाज से अस्पृश्यता को समूल नष्ट करने के लिए अपनी अल्प शक्ति के अनुसार जो संघ पूरी कोशिश में लगा हुआ है, उस हमारे समाज समता संगठन में ब्राह्मण, गैर–ब्राह्मण, अस्पृश्य आदि सभी जातियों के लोग शामिल हैं। किसी के आने पर कोई पाबंदी नहीं है। अस्पृश्यों ने अपने आंदोलन की बागडोर अपने हाथ में ले ली इस घटना में भी अब कोई अनहोनी बात नहीं रही। कोई समाज अथवा वर्ग अगर बेहद दयनीय स्थिति में होता है तब उसकी सहायता कर, हाथ देकर ऊपर उठने में उच्च वर्ग के कुछेक लोग ही उसकी सहायता करते हैं। इंडियन नेशनल कॉंग्रेस की स्थापना करने में कुछ अंग्रेज लोगों ने प्रमुख भूमिका निभाई थी। इंग्लैंड में मजदूर पक्ष निर्माण करने में उदार मतवादी, लिबरल लोगों की कोशिशें ही पहले सहायकारी बनीं। लेकिन शुरू–शुरू में सहायता करने वाले अगड़े वर्ग के लोगों की सहायता पिछड़े वर्ग के लोगों को निश्चित सीमा तक ही उपलब्ध हो सकती है। एक सीमा के बाद वे पिछड़े वर्ग के साथ नहीं आ सकते। इतना ही नहीं, जो पहले मददगार होते हैं, वे आगे चल कर उनके प्रतिस्पर्धी, विरोधी और दुश्मन बन जाते हैं। किसी जमाने में सहायक और आश्रयदाता होने वाली लिबरल पार्टी इन्हीं वजहों से आगे चल कर लेबर पार्टी की कट्टर दुश्मन और प्रतिस्पर्धी बनी हुई हम देखते हैं। लेकिन केवल इस वजह से मजदूर पार्टी एहसान फरामोश है अथवा उसे अलग से आंदोलन नहीं करना चाहिए ऐसा कोई भी सोचने समझने वाला आदमी नहीं कहेगा।

अस्पृश्यता निवारण आंदोलन का भी लगभग ऐसा ही इतिहास है। ब्राह्मण अथवा मध्यम वर्ग के कुछ सुधारवादी और उदार मतवादी लोगों ने पहले अस्पृश्यों को सहायता प्रदान की। स्व. आगरकर, रानडे आदि लोग कहते कि अस्पृश्यों को स्पर्श करने में कोई हर्ज नहीं। उनकी सभाओं में उपस्थित रह कर उन्हें सुधार की, सहानुभूति की दो बातें भी बताया करते थे। इस बात के लिए अपनी जात वालों से उन्हें दो बातें सुननी भी पड़तीं। लोग उनकी निंदा करते। लेकिन इन सुधारकों का जिस जाति में जन्म हुआ, उन्हें उसी में कई सुधार करवाने थे। पिछड़े लोगों में या देसी मराठी भाषा में जिसे 'पाट' (पुनर्विवाह) कहते हैं उस तरह के पुनर्विवाह ब्राह्मण महिलाओं को करने चाहिए अथवा नहीं, विधवाओं का सिर मुंडाना शास्त्रानुसार है अथवा नहीं है, पुरुषों को लंबे बाल रखने चाहिए अथवा नहीं, महिलाओं को पढ़ाया–लिखाया जाए अथवा नहीं, इन्ही मध्यम वर्गीय सवालों के बारे में चर्चा करने में ही इन सुधारकों का समय व्यतीत हो जाता था। अस्पृश्यादी पिछड़े वर्ग के लोगों के हितों से इस विचार का कोई संबंध नहीं होता था। ब्राह्मण विधवाओं के पुनर्विवाह हुए हों या विधवाओं

के केशवपन की रूढ़ि भले बंद हुई हो, लेकिन अस्पृश्यता की रूढ़ी पर इन बातों से कोई असर नहीं होना था। अस्पृश्यता की रूढ़ी पर क्या इससे कोई अंतर पड़ा? बिल्कुल भी नहीं।

यह थी रानडे, आगरकर आदि महाराष्ट्रीय ब्राह्मण सुधारवादियों की समकालीन अस्पृश्यता निवारण कोशिशों की दिशाएं और सीमाएं। फिलहाल महाराष्ट्र में हिंदू महासभा वालों की कोशिशों की धूम मची हुई है। रानडे–आगरकर के अंदर सुधारों को लेकर जो तिलमिलाहट थी वह हिंदू शुद्धि संगठनवादियों के पास दिखाई नहीं देती। आत्मशुद्धि से अधिक दूसरे धर्मों की शुद्धि की तरफ और संगठन से अधिक आंकड़ों की तरफ ही उनका रुझान है। संख्या में अधिक होने के बावजूद केवल संगठन न होने के कारण आज हिंदू मजबूर हैं, सच्ची ताकत संख्या में नहीं होती यह वे जानते हैं, लेकिन जानबूझ कर इस तरफ से उन्होंने आंखें मूंद रखी हैं। इनमें से अधिकतर नेता हवा के रुख के साथ बदलने वालों में से हैं। उनके भरोसे रहें तो अस्पृश्यता के संकट से अपनी मुक्ति संभव नहीं, ऐसा अगर अस्पृश्यों को लगे तो इसमें उनका कोई दोष नहीं।

अपने ही लोगों की गुलामी से मानव जाति को बचाने के लिए दूसरी मानव जाति का निष्ठापूर्वक जुट जाने का केवल एक ही उदाहरण इतिहास में हमें दिखाई देता है और वह है – कृष्णवर्णिय नीग्रो लोगों को गुलामी की पीड़ा से मुक्ति दिलाने वाले अमेरिका के गोरों का। उस प्रसंग में भाई–भाई के साथ, बेटा–बाप के साथ, दोस्त–दोस्त के साथ भिड़ गए। जातिभेद पर कुठाराघात कर अस्पृश्यता का पाप हमारे देश से जड़ सहित नष्ट करने की कोशिश करने वाला एक धर्मवीर हमारे देश में पैदा हुआ था – गौतम बुद्ध। लेकिन ऐसे उदाहरण और ऐसी घटनाएं देश में बार–बार नहीं होतीं। इसीलिए ऐसा ही कुछ एक बार और घटेगा इस मूर्खताभरी उम्मीद पर हम अपने को सौंप नहीं सकते।

हमारी नीति हल्ला बोलने की है, विनम्रता से, नजर नीची रख कर हम अपनी मांगें नहीं रखते। सो, अस्पृश्यता निवारण के पक्ष में जो लोग होते हैं, वे भी हमारे रवैये के कारण प्रतिकूल बनते हैं, ऐसा हम पर आरोप लगाया जाता है। लेकिन इस प्रकार की आपत्ति उठाने वालों को लोकलाज न सही अपने मन के सामने तो शर्मिंदा होना चाहिए ऐसा मुझे लगता है। समाज क्या दुनिया भर में कोई दूसरा समाज अस्पृश्यों जितना विनम्र और लाचार है? क्या हम सदियों से विनम्र नहीं रहते आए हैं? पत्थर भी करुणा से पिघल जाएं, ऐसे दीन–हीन और विनम्र हालात में हमने दिन बिताए हैं। सो, कम से कम अब आप हमें विनम्रता और विनय के पाठ न पढाइए। ऐसे पाठ अब आप उच्च वर्णियों को ही पढाएं। प्रार्थनाएं, अर्जियां, प्रतिनिधिमंडल

आदि की सहायता से गंवाई हुई आजादी और हड़पे हुए अधिकार पाना अगर संभव होता तो उदारवादी पार्टियों के लोग अब तक हिंदुस्तान के राजा बनते और हिंदुओं की धर्मसत्ता अस्पृश्यों के घर पर पानी भरती, आटा पीसती! हमें कोई उद्दंडता का अथवा सिर चढ़ कर बोलने का शौक नहीं है। दिन भर हाड़तोड़ मेहनत कर पेट के लिए दो कौर कैसे कमाए जा सकते हैं, यही हमारी दिन–रात की चिंता होती है। लेकिन रोटी से इंसानियत श्रेष्ठ होती है इसलिए हमने यह जंग छेड़ी है। ठोंके बगैर दरवाजे नहीं खुलते और छीने बगैर आपके हाथ से इंसानियत के हमारे अधिकार तक हमें दिए नहीं जाते।

तीसरी आपत्ति का जवाब देते हुए मैं शुरू में ही आपसे बस इतना कहना चाहूंगा कि हमारा अस्पृश्यता मिटाने का आंदोलन केवल अस्पृश्य वर्ग तक ही सीमित नहीं है। पूरे हिंदू समाज में व्याप्त इस जन्मजात अस्पृश्यता का खात्मा करना ही हमारे आंदोलन का प्रमुख उद्देश्य है। इस उद्देश्य को पूरा कर पाना आसान नहीं। हमें इसका पूरा–पूरा अहसास है। हालांकि, हिंदू समाज के इस रोग को जड़ समेत उखाड़ फेंकने की सच्ची लगन हम अस्पृश्यों को ही लगी है। ब्राह्मणों के अलावा अन्य सभी जातियों को अस्पृश्यता का थोड़ा–बहुत संताप झेलना ही पड़ा है और वे झेल रहे हैं। ब्राह्मणों के बीच भी जातिविशिष्ट अस्पृश्यता और ऊंच–नीचता का भाव है। पूजा करते समय पलसीकर ब्राह्मणों के आने से अपवित्रता छा जाती है, ऐसा चित्पावन ब्राह्मण मानते हैं। कायस्थ महिला के स्पर्श से अपने कपड़े अपवित्र न हो जाएं, इसलिए ब्राह्मण महिला कुंकुम की डिब्बी जमीन पर रखती है और कायस्थ महिला जमीन पर रखी डिब्बी से उठा कर कुंकुम का तिलक लगा लेती है। इस तरह स्पृश्य जातियों में ही अस्पृश्यता फैली हुई है। फर्क बस इतना ही है कि अस्पृश्य जातियों में उसने अति उग्र रूप धार लिया है। इसीलिए हम शूद्र वर्णियों का उच्चवर्णियों से मेलजोल खत्म हुआ और हम शूद्र बने। एक ही धर्मावलंबी होने के बावजूद हम मुसलमानादि अन्य धर्मियों की तरह स्पृश्य बनने के पश्चात् भी मुक्तता हमारे मन में अस्पृश्यता की जो भावना जड़े बिछा कर जम चुकी हैं उससे हमें निजात नहीं मिल रही। बस हम उसी के लिए जी तोड़ कोशिश कर रहे हैं। केवल स्पर्श की पावनता ही पानी होती तो हम अन्य धर्मों में जाकर आसानी से और बड़े सम्मान के साथ उसे पा सकते थे। फिर तो इतनी खींचतान और रस्साकशी की जरूरत ही नहीं पड़ती।

23
इसी जन्म में सर्वांगीण उन्नति करनी होगी*

2 फरवरी, 1929 को वालपाखाड़ी में रात के 9 बजे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में मराठी, गुजराथी अस्पृश्यों की विशाल सभा हुई थी। "बहिष्कृत भारत" और "समता" इन अखबारों का प्रसार कर अस्पृश्य समाज में जागृति लाना, दिनांक 9 और 10 मार्च को मुंबई इलाका महार वतनदार परिषद की मदद करना आदि प्रस्ताव इस सभा में पारित किए गए। अस्पृश्योद्धारक डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा –

"अस्पृश्य समाज को जिस हाल में हैं उसी हाल में रहने की मानसिकता छोड़ देनी चाहिए। अन्य समाज जिस प्रकार विद्या, अधिकार, संपत्ति पाने के लिए कोशिश करते हैं उसी तरह अस्पृश्य समाज को भी कोशिशें करनी होंगी। अगले जन्म में कल्याण होगा जैसी फालतू बातों पर विश्वास रखे बगैर इसी जन्म में और इसी समय में अपनी सर्वांगीण उन्नति साधकर मानवी समाज में समानता का दर्जा स्थापित कर लेना चाहिए। हिंदू समाज को भी अस्पृश्यता के पाप से मुक्त करना चाहिए।

इस सभा में प्रधान बंधु, कद्रेकर, गणपत बुवा जाधव, खोलवडीकर, गंगावणे आदि लोग हाजिर थे।

---

*"समता", 8 फरवरी, 1929

24
अपने हक प्रस्थापित करने के लिए हमले की नीति अपनाए बगैर कोई चारा नहीं*

दिनांक 23 मार्च 1929 को बेलगांव में दोपहर चार बजे बेलगांव जिला बहिष्कृत वर्ग की सामाजिक परिषद आयोजित की गई थी। परिषद के नियोजित अध्यक्ष अस्पृष्य वर्ग के मशहूर नेता श्री सीताराम नामदेव शिवतरकर, श्री कोंडदेव श्रीराम खोलवडीकर के साथ 22 मार्च, 1929 को सवा दस की मेल से बेलगांव आए। इस अवसर पर परिषद के स्वागताध्यक्ष श्री डी. आर. इंगले ने अस्पृश्य लोगों के साथ उनका स्वागत किया। अध्यक्ष का सम्मान कर उनके गले में फूलों का हार पहनाकर उनकी जयकार की गई। उसके बाद अच्छी तरह सजाई गई गाड़ी में बिठा कर श्री खोलवडीकर के साथ शहर के कलभाट रोड, लष्कर, हजाम गली, कंग्राल गली, दरबार गली और चवाट गली से कर्नाटक बहिष्कृत छात्र आश्रम, बेलगाव तक अध्यक्ष शिवतरकर जी का जुलूस निकाला गया। इस अवसर पर बैंड हुनरगे के बैंडवाले ने अपने बैंड वादन से लोगों का मन मोह लिया। जुलूस 11 बजे अस्पृश्यों के बोर्डिंग हाऊस के पास पहुंचा। बाद में शाम छह बजे श्री डी. आर. कांबले के घर अध्यक्ष आदि लोगों का चायपान का कार्यक्रम हुआ।

शनिवार दिनांक 23 मार्च, 1929 को परिषद के काम की बेलगांव के छात्र आश्रम की अमराई में दोपहर चार बजे शुरुआत हुई।

शुरुआत में ही विषय नियामक कमेटी ने बैठ कर प्रस्ताव का मसौदा तैयार किया था। इस अवसर पर अस्पृश्य वर्ग के सुधार के लिए नियुक्त की गई स्टार्ट कमिटी के सदस्य डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर, डॉ. सोलंकी, मेसर्स जानवेकर, देशपांडे, रावसाहब चिकोडी, रावसाहब थोरात तथा रा. मराठे, रा. गजेंद्रगडकर, नाडगौडा आदि बेलगाव के स्पृश्य नेता और रा. कोंडदेव खोलवडीकर, दत्तोपंत पवार, डॉ. रमाकांत कांबले, रा. यशवंतराव पोल और रामप्पा कांबले, धर्माण्णा सांब्राणी आदि अस्पृश्यों के नेता उपस्थित थे।

शुरुआत में इष्ट जन और अध्यक्ष के स्वागत के लिए गान हुआ। इस अवसर पर स्वागताध्यक्ष का विचारोत्तेजक, प्रतिपक्ष को मात देने वाला, खरी खरी सुनाने वाला भाषण हुआ। लोगों के मन पर इसका गहरा असर हुआ। और उससे स्पृश्य लोगों को भी पाठ मिल सकता था। ऐसा लगा कि उन पर भी इस भाषण का असर हुआ।

---

*"बहिष्कृत भारत", 29 मार्च, और 12 अप्रैल, 1929

अध्यक्ष का भाषण पूरा होते ही स्टार्ट कमेटी के सभी सदस्यों के साथ डॉ. अम्बेडकर, सोलंकी, अय्यर और अध्यक्ष को चाय पार्टी दी गई। और इसके पश्चात् निम्नलिखित प्रस्तावों को मंजूर किया गया। प्रस्ताव पारित होने के बाद अस्पृश्य समाज के उद्धारक और नेता डॉ. अम्बेडकर साहेब, अध्यक्ष के अनुरोध पर तथा वहां उपस्थित लोगों के आग्रह के अनुसार बोलने के लिए उठ कर खड़े हुए। उस वक्त तालियों की घनघोर गड़गड़ाहट हुई। उसके बाद उनके भाषण की शुरुआत हुई। उन्होंने कहा,

"अध्यक्ष महोदय और सज्जनों,

काफी समय हो रहा है। बरसात होने को है। और आपकी मातृभाषा से मेरी मातृभाषा अलग है। भाषा अलग होने के कारण मेरे विचार आप तक पहुंचेंगे या नहीं इस बारे में भी मुझे शक है। इसलिए मैं अपना भाषण थोड़े में समेटने वाला हूं।

हम जगह–जगह सभा का आयोजन करते हैं। भाषण करते हैं प्रस्ताव पारित करते हैं। बड़े–बड़े वक्ताओं को लाकर उनके भाषण भी आयोजित करते हैं। हालांकि, मेरा विचार है कि अस्पृश्यता खत्म करने का यह कोई ठीक–ठीक मार्ग नहीं है। हम पर अन्याय, अत्याचार और जुल्म होते हैं इस बारे में प्रस्ताव पारित कर सरकार को भेजे और अगर सरकार ने हमारी अस्पृश्यता नष्ट करने के लिए हमें सार्वजनिक कुएं, तालाब, चाय के होटल और मंदिर अगर कानूनन हमारे लिए खोले तब भी हमें ही उसे प्रत्यक्ष में हमें ही उसका अमल करना होगा। अगर हम यह नहीं कर पाए तो कानून भले कितने भी अच्छे क्यों ना हों, उनसे कुछ फायदा नहीं होने वाला।

हमें अपनी अस्पृश्यता खुद ही मिटानी होगी! उस हिसाब से हम जब बलवान और निडर होंगे तभी हमारी अस्पृश्यता नष्ट होगी। इसके लिए हमें बहुत कष्ट करने पड़ेगे। अगर कभी ऐसी स्थितियां पैदा हों, तो हो सकता है कि हमें स्पृश्यों के साथ हाथापाई भी करनी पड़े। इसके लिए हमें अपने अंदर हिम्मत रखनी होगी। मैं नहीं कहता कि यह गलत है, लेकिन हमारा समाज परावलंबी है। अस्पृष्य समाज, अस्पृश्य समाज के साथ सहयोगपूर्ण रवैए के बिना नहीं चलेगा। कई लोग पूछते हैं कि ऐसे बलवान समाज से असहयोग कर हमारी कैसे निभेगी? उनसे मेरा यही कहना है कि वे एक बात पक्की गांठ बांध लें कि आत्मनिर्भरता के मार्ग के अलावा अन्य सभी मार्ग घातक हैं और किसी काम के नहीं हैं, इसीलिए उन घातक मार्ग का अवलंब नहीं किया जाना चाहिए।

अस्पृश्य समाज में पैदा हुआ व्यक्ति भले कितना भी काबिल क्यों न हो, कितना भी विद्वान क्यों न हो, सर्वगुणसंपन्न क्यों न हो, उसके गुणों की केवल इस वजह से कद्र नहीं होती कि वह अस्पृश्य है। इसीलिए, अपने हक प्रस्थापित करने के लिए हमले की नीति अपनानी होगी। इसे अपनाए बगैर कोई चारा नहीं। धक्कमपेल की वर्तमान स्थिति में ऐसी नीति अपनाए बगैर और कोई उपाय नहीं।

अपने साथ होने वाले अन्याय से छुटकारा पाने का एक और महत्वपूर्ण तरीका है, और वह है, सरकारी सत्ता प्राप्त कर लेना! हमें चातुर्वर्ण्य की सीमा के बाहर रहना पडता है तब भी चातुर्वर्ण्य की सीमा को लांघ कर अगर अंदर प्रवेश पाना हो तो हमारे पास राजनीतिक सत्ता होना जरूरी है। राजनीतिक सत्ता के बगैर समाज में हमारा वर्चस्व हासिल नहीं हो सकता। फिलहाल महाराष्ट्र में केवल ब्राह्मणों का ही इतना अधिक वर्चस्व क्यों है? इसकी ओर भी कई वजह हो सकती हैं, लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि उनके हाथ में शक्तिशाली राजनीतिक सत्ता है, इसे हमें नहीं भूलना चाहिए।

आजकल महाराष्ट्र के ब्राह्मणों की इतनी प्रभुसत्ता क्यों है? इस बारे में इतिहास में एक कहानी मशहूर है। पेशवा काल से पूर्व मेरे प्रांत में रहने वाला बालाजी विश्वनाथ और उसके चित्पावन ब्राह्मण जातभाई निष्कपट अवस्था में, बेहद बुरी हालत में रहते थे। लेकिन जैसे ही उनके हाथ में राजनीतिक सत्ता आई, उस समाज को महाराष्ट्र में प्रमुख स्थान प्राप्त हुआ है। उन लोगों ने सभी सत्ता में मुख्य पद हासिल कर लिया है। लेकिन आज अगर ब्राह्मण समाज को सरकारी नौकरी से बेदखल कर दिया जाए, तो ब्राह्मणों का प्रभुत्व खत्म हो जाएगा। अन्य प्रांतों में ब्राह्मणों का बिल्कुल प्रभुत्व नहीं है। गुजरात में ब्राह्मणों को पनिहारी और खानसामे के अलावा कोई महत्व नहीं है। संयुक्त और पंजाब प्रांत के ब्राह्मण यहां के महार और मांगों की तरह गीली रसोई (पका–पकाया भोजन) मांग कर खाते हैं। कुल मिला कर अपने अधिकारों को प्रस्थापित करने को लेकर या तो हमें हमला करने का, या राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने का मार्ग अपनाना होगा। इन्हीं दो मार्गों से हम अपनी अस्पृश्यता से निजात पा सकते हैं। अन्य समाज के साथ बराबरी का दर्जा पा सकते हैं। इतना कह कर और आपने मेरा भाषण शांति से सुना इसके लिए आपके प्रति आभार प्रकट कर मैं अपना भाषण पूरा करता हूं।"

परिषद में जो प्रस्ताव पारित हुए उन पर मेसर्स माने, वराले, आसोदे, इंगले, कोंडदेव, श्रीराम खोलवडीकर, कोल्हापुर के पोल (ढोर) और धारवाड के सांब्रराणी (ढोर) आदि प्रसिद्ध नेताओं ने अपने विचार प्रकट किए। उसके बाद सभी नेताओं को फूल मालाएं पहनाई गई और गुलदस्ते अर्पण किए गए। इसी के साथ सभा का काम संपन्न हुआ।

बेलगाव जिला बहिष्कृत वर्ग की सामाजिक परिक परिषद पहले अधिवेशन में पारित किए गए प्रस्ताव

पहला प्रस्ताव

(अ) अस्पृश्यता के पालन को कानूनन अपराध घोषित किया जाए।

(ब) सरकारी सूची से जाति संबंधी कालम हटा दिए जाएं।

दूसरा प्रस्ताव

(अ) किसी को भी जन्म के आधार पर श्रेष्ठ या निम्न न समझा जाए। वेद, शास्त्र, पुराण और अन्य धर्मग्रंथों में जन्म के आधार पर उच्च–निम्न का प्रतिपादन किया जाता है इसलिए इन धर्मग्रंथों के कथ्य का अधिकार न मानें।

(ब) वर्णाश्रम धर्म ने हिंदू समाज में ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य, शूद्र इस प्रकार भेद किए हैं। इसीलिए यह परिषद वर्णाश्रम धर्म के घातक सिद्धांतों के प्रति निषेध व्यक्त करती है। साथ ही यह भी कहती है कि अपनी जाति या समाज का परिचय देने वाले शब्द अपने नामों के साथ न जोड़ें।

(स) राष्ट्र की प्रगति के लिए तथा समता की स्थापना के लिए अस्पृश्यता की परंपरा को तुरंत खत्म कर दिया जाना चाहिए। इसीलिए समाज या कानून के नज़रिए से कोई भी जाति ऊंची अथवा निम्न नहीं समझी जाए। साथ ही सार्वजनिक स्थान पर आने–जाने का अधिकार सबको मिले और उसका हर किसी को प्रयोग करना चाहिए।

तीसरा प्रस्ताव

धार्मिक मामलों में सरकार के रवैये के कारण बहुजन समाज की अनगिनत लोगों को अपमान सहना पड़ रहा है। उनके सामाजिक अधिकारों का हनन हुआ है। उनकी सामाजिक उन्नति अवरुद्ध हुई है। इसीलिए, इससे आगे सरकार धार्मिक विषयों में अपनी तटस्थता की नीति छोड़ दे। और बहुजन समाज की सामाजिक आजादी की रक्षा करने की कोशिश करें। उसी तरह इस बारे में समाजसुधारकों की ओर से प्रचलित कानून में बदलाव करें।

चौथा प्रस्ताव

(अ) अब के बाद सरकार सभी निवेदित जमीनें उन लोगों को दे जिनकी माली हालत बेहद खराब होती है। और सबसे पहले ऐसी जमीनें अस्पृश्यों को दें। परिषद की राय में सरकार उन लोगों को जमीन के साथ कुछ रकम

भी ग्रैंट के रूप में देकर जमीन की देखभाल कर कृषिकर्म करने के लिए इन जमीनों को खेती योग्य करने के लिए उस पर हल चलाकर फसल लेने के लिए उन्हें प्रेरित करें और सरकारी नौकरियों में अस्पृश्यवर्गीय उम्मीदवारों को लेने की योजना बनाएं।

(ब) अन्य समाज के साक्षरता अनुपात की बराबरी में आने तक अस्पृश्य वर्ग के छात्रों के लिए हर जिले में 100 छात्रों के बोर्डिंग खोले जाएं।

पांचवां प्रस्ताव

रायसाहब पापण्णा का बेटा नारायण की मृत्यु के बारे में यह सभा दुःख व्यक्त करती है। सभा प्रार्थना करती है कि ईश्वर मृतात्मा को शांति दे।

छठा प्रस्ताव

चमारों के व्यवसाय की हालत बहुत खस्ता होने के कारण उनको व्यावसायिक शिक्षा प्रदान करने के लिए कक्षाएं चलाई जाएं। उस समाज के लोग सहकारिता के सिद्धांत के अनुसार चलाई जा रही संस्थाओं को सरकार भरपूर मदद दे, और इस परिषद की राय है कि उनमें से लायक बच्चों को सरकारी खर्चे से व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए विदेश भेजा जाए।

सातवां प्रस्ताव

(अ) लड़के की उम्र जब तक बीस साल की नहीं होती और लड़की की उम्र जब तक 16 की नहीं होती तब तक उनकी शादी न कीजिए।

(ब) किसी भी जाति, वर्ग और समाज के महिला और पुरुषों को अन्तर्जातीय विवाह करने की पूरी आज़ादी हो।

(स) शादी और अन्य समारोहों में अस्पृष्य वर्ग कम समय लगाए और कम से कम खर्चा करे। साथ ही सभी विवाहों में एक खाना खिलाने से अधिक पैसा खर्च न करें। और बचे हुए पैसों का इस्तेमाल अपने बच्चों की 'लड़के और लड़कियों की' शिक्षा पर करें।

आठवां प्रस्ताव

जिस होटल में और ढाबे पर अस्पृष्य वर्ग को आने की मनाही होती है ऐसे होटलों और ढाबों को शुरू करने की इजाजत सरकार न दी जाए। साथ ही रेलवे की मालिकियत रेलवे का अधिकारी वर्ग वाले होटलों और ढाबों में अस्पृश्य वर्ग के साथ समानता का बर्ताव किया जाता है इस ओर ध्यान दें।

25
गुलामी की व्यवस्था को नष्ट कर बुरे रीतिरिवाजों को तिलांजलि दो*

भारतीय बहिष्कृत समाज सेवक संगठन की ओर से रत्नागिरी जिले के खेड और चिपलुन तहसीलों से रत्नागिरी जिला बहिष्कृत परिषद का दूसरा अधिवेशन डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में चिपलून में शनिवार, दिनांक 13 अप्रैल, 1929 के दिन शाम 4.30 बजे हुआ था। इस अधिवेशन के लिए जो विशाल पंडाल खड़ा किया गया था वह बेलों और पताकाओं से सजाया गया था। वहां का प्रबंध इतने बेहतर ढंग से किया गया था कि स्पृश्य कहलाने वालों को भी आश्चर्य महसूस हुआ। इस परिषद के लिए खास कर मुंबई से 'समता' पत्र के संपादक श्री देवराव नाईक, श्री एस. एन. शिवतरकर, द. वि. प्रधान, शं. शा. गुप्ते, भा. र. कद्रेकर आदिलोग डॉ. अम्बेडकर के साथ आए हुए थे। कर्हाड से सब लोग जब चिपलूण आ रहे थे तब रास्ते में पड़ने वाले अडरे गांव में अस्पृष्य लोगों की ओर से छोटा–सा पान–सुपारी का कार्यक्रम हुआ। चिपलूण में अध्यक्ष और मुंबई से आए मेहमानों की व्यवस्था सरकारी डाकबंगले में की गई थी। शनिवार के दिन अधिवेशन की शुरुआत में मंडप में करीब आठ हजार लोग उपस्थित थे। शहर निवासी अन्य समाज के कई मान्यवर लोग भी उपस्थित हुए थे। उनमें खानसाहेब देसाई, श्री साठे, श्री विनायकराव बर्वे वकील, स्थानीय म्युनिसिपालिटी के अध्यक्ष श्री खातू, श्री राजाध्यक्ष, श्याम कवि, ओम् स्वामी, बेंडके पिता पुत्र आदि लोग दिखाई दे रहे थे। सभा के अध्यक्ष का चुनाव हुआ। उसके बाद परिषद के स्वागताध्यक्ष श्री रगजी के भाषण के पश्चात्, जब अधिवेशन के अध्यक्ष डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भाषण देने के लिए खड़े हुए तो वातावरण तालियों से गूंज उठा। जब उनका भाषण शुरू हुआ स्पृश्य और अस्पृश्य सभी बड़ी उत्कंठा से उनका भाषण सुनने लगे। डॉ. बाबासाहेब ने अपने भाषण में कहा,

"आज मैं जो भी कुछ अपने बंधुओं को सुनाने जा रहा हूं, उसकी जिम्मेदारी केवल मेरी नहीं है। मैं अध्यक्ष हूं, लेकिन आप लोगों से मैं जो कुछ कहना चाहता हूं उसमें मेरा कुछ नहीं है। दो साल पहले समाज के भाईयों के सामने मैंने जो कुछ कहा था, वही संदेश आज फिर दोहरा रहा हूं। मेरे संदेश के भीतर का उद्देष्य समाज ने स्वीकृत किया है, इसीलिए उसकी जिम्मेदारी मेरे अकेले की ना होकर आप सभी लोग उस जवाबदेही से बंधे हुए हैं। आज का संदेशा अपनी जाति का है, इसलिए एक विचार होकर आम सहमति से और जिम्मेदारी से मान्य किया गया संदेश, आप सभी को स्वीकार होगा, ऐसी मुझे भरपूर आशा है। यह जाति द्वारा सर्वसम्मति से स्वीकृत किया हुआ संदेश सभी को पूर्ण रूप से बंधनकारी है। यह संदेश इस तरह

*"बहिष्कृत भारत", 3 मई, 1929

का है कि आज के इस अवसर पर हम क्या कर रहे हैं, और यहां किस उद्देष्य को हल करने के लिए इकट्ठा हुए हैं, आज के संदेश की जिम्मेदारी कौन–सी है, इस पर विचार–विमर्श करना आवष्यक है।

अखिल हिन्दू समाज ने वंष परंपरा से अपने समाज पर जिन मलिच्छ रीति–रिवाजों को जबरन थोपा है, उन्हें ठोकर लगाकर फेंक देना ही आज के संदेश का मुख्य उद्देश्य है। समग्रता से, सम्यक दृष्टि से विचार करने पर मेरे संदेष को बहुत अधिक महत्त्व है। इस भारत देश में बेहद गंदे जो काम हैं, जिन्होंने गंदगी फैलाई है उसे वे स्वयं ना करते हुए और वह कार्य व्यक्ति मात्र की खुशी–इच्छा पर करने के विकल्प ना रखकर, उन गंदे कामों को करने हेतु जबरन हमें करने हेतु बाध्य किया गया है, उन कामों को हम पर जबरन थोपा गया है, और इसी बाध्यता और जबरदस्ती का मैं विरोध करता हूं। वंश–परंपरागत जबरदस्ती का मैं विरोधक हूं।

इस तरह के परिवेश में, माहौल में, यदि कोई व्यक्ति योग्यता हासिल कर चाहे कितनी भी प्रगति क्यों ना कर ले, उन्नति के ऊँचे शिखर पर कितना भी ऊपर क्यों ना चढ़ ले, किन्तु उस व्यक्ति पर लगा गंदगी का, अस्पृश्यता का, हीनता का ठप्पा खत्म नहीं हो पाता। हीनता की इस दब्बू मानसिकता ने शरीर के कण–कण में अपनी पैठ बना ली है, इसलिए जब तक यह हीन भावना नष्ट नहीं हो जाती तब तक स्वाभिमान जागृत होना असंभव है। "जन्म के आधार पर व्यवहार, यही तेरा धर्म है, और उसका पालन निष्ठा से करें", यह उपदेश चमार, भंगी, महार, मांग आदि अस्पृश्यों को दिया जा रहा है। इस तरह के प्रतिकूल परिवेश में अस्पृश्य समाज में जुझारू, हिम्मत वाला, बुलंद विचारों वाला युग प्रवर्त्तक महापुरुश का निर्माण होना असंभव है।

ब्राह्मण आदि स्पृश्य जाति में जन्मा हुआ बच्चा मुन्सफ, मामलेदार, वकील आदि कैसे बन जाते हैं। मराठा समाज के बच्चे पुलिस और पुलिस अधिकारी के पद पर कैसे पहुंच जाते हैं? और उनकी तुलना में अस्पृश्य समाज के बच्चे युवा इस तरह हीन–दीन, मरियल, अशिक्षित, अयोग्य क्यों बन जाते हैं? अस्पृश्य और स्पृश्य बच्चों की उन्नति में यह भेद, यह अंतर किस वजह से हुआ है? इन सब गंभीर प्रश्नों का उत्तर एक ही है और वह है "सामाजिक माहौल", समाज का परिवेश। गंदगी भरे परिवेश और माहौल का असर, संस्कार अस्पृश्यों के बच्चों पर लगातार होने के कारण उन्हें गुलाम मानसिकता की दीक्षा उन्हें अनायास प्राप्त हो चुकी है। और यह परिवेश खुशी–खुशी किया हुआ सौदा नहीं है। इसीलिए गुलामी का यह चलन नष्ट करना, खत्म करना हमारा परम कर्त्तव्य है। और इस गुलामी को, इस घिनौने परिवेश को खत्म करने हेतु इसे स्वीकृत करने वाले रीति–रिवाजों को ठोकर मार, उसे निकाल कर बाहर फेंकना यद्यपि आर्थिक दृष्टि से अहितकारी और बड़ा नुकसानदेह होगा

और अपने समाज के उदर निर्वाह पर बाधा पहुंचेगी। किन्तु मेरे विचार में इस मुद्दे को लेकर हमारे सुधार और प्रगति की राह में वरिष्ठ, उच्च कहा जाने वाला समाज हमारे नासमझ लोगों को भ्रमित कर, और उन्हें भड़काकर षड्यंत्र रच रहे हैं। उनसे मेरा सवाल है कि, वैश्या के शान–शौकत भरे जीवन–यापन की राह और किसी गृहस्थाश्रमी नारी के स्वाभिमानी धरोहर का निर्वाह कर दिन भर मेहनत–मजदूरी कर जीवन–यापन का मार्ग चुनती है। शान–शौकत में लिप्त वैश्या का जीवन और गृहस्थाश्रमी सदाचारी महिला का जीवन इन दोनों में बहुत अंतर है, समान कुछ भी नहीं। वैश्या के जीने का ढंग शान–शौकत भरा, किन्तु घिनौना होता है, इस बात पर क्या कभी किसी ने गंभीरता से सोच–विचार किया है? यदि स्पष्ट रूप से कहा जाए तो स्वाभिमान शून्य जीवन, इज्जत त्याग कर किया जाने वाला कार्य नामर्दता का सूचक, संकेत होता है। जीवन के लिए स्वाभिमानी चेतना प्रज्ज्वलित रखें। अपनी आर्थिक हानि होने पर भी हमें अपने बुनियादी कर्त्तव्यों के प्रति सचेत रहना चाहिए। सुख या लोकप्रियता सहजता से प्राप्त नहीं होती। छिन्नी–हथौड़े के घाव सहे बिना पत्थर से ईश्वर की मूर्ति बन नहीं पाती। ठीक यही बात इन्सान के संसार और व्यवहार पर लागू होती है।

हम अपने कर्त्तव्यों का योग्य निर्वाह करने में जुटे होने पर तथाकथित उच्च कहे जाने वाले लोग हम पर बिना वजह अन्याय–अत्याचार करते हैं, यह बात सच है। हमें मानसिक, शारीरिक पीड़ा से गुज़रना होगा। हमारा अत्यधिक शोषण किया जाएगा, हमें छला जाएगा, यह बात मैं अच्छी तरह जानता हूं। किन्तु हमें अपनी उन्नति के कार्य में आने वाली बाधाओं को सहना ही होगा। बहुत सारे लोग मुझसे कहते हैं कि इस खेती, जमींदारी पद्धति के कारणों से हमसे अपने कर्त्तव्यों का पालन करना मुश्किल हो जाता है। इन लोगों से मैं स्पष्ट रूप से कहना चाहता हूं कि खोती के सम्बन्ध में योग्य व्यवस्था मैं जल्द ही करने जा रहा हूं। किन्तु किसी एक बाधा का निपटारा ना होने की वजह से हाथ–पर–हाथ धरे निठल्ला बैठे रहने से समस्या हल नहीं होगी। इसीलिए आलस त्याग कर, और निडर होकर कार्य करते रहना जरूरी है। सिर्फ खोती, जमींदारी पद्धति द्वारा होने वाला शोषण भर समाप्त होने से समस्या का समाधान होना असंभव है। तथाकथित उच्च वर्ग के लोग गांव भर के गुण्डे इकट्ठा कर आप लोगों का जीना मुश्किल कर देंगे, तुम्हें डराएंगे–धमकाएंगे, उसका समाधान कैसे होगा? गांव के सार्वजनिक कुओं से समता के अधिकार से पानी निकालकर उसका इस्तेमाल करना आपकी हिम्मत–हौसले पर निर्भर है। आप लोगों के न्याय अधिकारों को प्रस्थापित करते समय, उच्च वर्ग के लोगों के डराने–धमकाने पर यदि आप डर कर अपने कर्त्तव्य पालन से पीछे हट गए तो समझो, तुम्हारे हाथों से कुछ भी होना संभव नहीं। आपकी प्रगति, सुधार के लिए यदि मैंने इस कोंकल अंचल में

पैर रखने की हिम्मत की तो मुझे बंदूक की गोली से भून दिया जाएगा, इस तरह के धमकी भरे पत्र मुझे मिले हैं। इन धमकियों से यदि मैं भयभीत होकर घर बैठ गया, तो आज आप लोगों के सामने मैं गर्दन ऊंची कर, सीना तान कर खड़ा ही ना हो पाता। किन्तु केवल तुम्हारी वजह से मेरे सामने कोई और विकल्प नहीं है।

कोंकण अंचल सारी दुनियां में भिखारी हैं, यह बात मैं भली–भांति जानता हूं। यह अंचल बौद्धिकता से सम्पन्न किन्तु आर्थिक दृष्टि से पिछड़ा हुआ है। खोत, ब्राह्मण और मराठा आदि लोगों को भी इस कोंकण अंचल में सुख का लाभ होना असंभव है। व्यापार, उद्योग की और यदि हम ध्यान दें तो इस आपदा से हमें छुटकारा मिल सकता है। खोत, जमींदारों के अत्याचारों से जिन्हें मुक्त होना है, उन्हें मैं सिंध और इन्दौर जैसे प्रांत में खेती करने के लिए खेती की जमीन उपलब्ध कराने का भरसक प्रयास करूंगा। जीवनयापन और आर्थिक तंगी की समस्या को हल करने के लिए अफ्रीका आदि देशों में जाकर वहां व्यापार कर धनवान बने मुसलमानों का उदाहरण अपनी नजरों के, दृष्टि के सामने रखें। अपना गांव, अपने पुरखों की जगह, अपना अंचल को छोड़ कहीं दूसरी जगह जा बसने के विचार मात्र से ही मन को बेहद पीड़ा होती है। किन्तु अपनी सामाजिक हैसियत में बढ़ोतरी करने के लिए इस मार्ग को स्वीकार आप लोगों ने अवश्य ही करना चाहिए। मृत्त पशु का मांस खाना, अमंगल कार्य को करना आदि बातों को, दृढ़ संकल्प होकर, दृढ़ इच्छा शक्ति से छोड़ना होगा, उसे नकारना होगा। मेरे आज के इस संदेश में निहित बातों पर आप गंभीरता से गौर करें और आज ही स्वाभिमान और इज्जत के साथ जीने का संकल्प लेकर और उज्ज्वल जीवन जीने की कसम खाकर प्रत्यक्ष रूप से कार्य में जुट जाएं। आज के इस नवयुग में कोई भी गुलाम नहीं है, यह बात ध्यान में रखें।

26
आत्मनिर्भरता और स्वाभिमान का कोई पर्याय नहीं*

रविवार, दिनांक 14 अप्रैल, 1929 के दिन चिपलून में रत्नागिरी जिला किसान परिषद बुलाई गई थी। इस परिषद में मुंबई से आए श्री देवराव नाईक, द. वि. प्रधान, भा. रं. कद्रेकर, शंकरराव गुप्ते, शंकर वडवलकर, श्री शिवतरकर, बाबा आडरेकर, गायकवाड़, मोरे आदि लोग उपस्थित थे। साथ ही श्री विनायकराव बर्वे, साठे, राजाध्यक्ष, खानसाहेब देसाई, बेंडके – पिता और पुत्र, शिवराम जाधव आदि स्थानीय लोग भी उपस्थित थे।

परिषद की शुरुआत में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को अध्यक्ष के पद के लिए चुना गया। उसके बाद श्री रगजी का भाषण हुआ। उसके बाद श्री बेंडके ने रायबहादुर बोले, एडवोकेट आनंदराव सुर्वे, श्री सालवी, सबजज आदि लोगों के संदेश और तार पढ़ कर सुनाए। उसके बाद अध्यक्ष डॉ. अम्बेडकर ने भाषण किया। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि,

"मुझे ऐसा लगता है कि मेरा जन्म आम जनता की जिम्मेदारी का निर्वाह करने के लिए ही हुआ होगा। मैं भी मजदूर वर्गों में से एक हूं, इंप्रुवमेंट ट्रस्ट की चॉल में रहता हूं। अन्य बैरिस्टरों की तरह मैं भी बंगलों में रह सकता था, लेकिन मुझे लगा कि, मेरे अस्पृश्य और किसान बंधुओं के लिए चॉल में रह कर ही काम करना होगा। अपने इस निर्णय के बारे में मैं कभी नहीं पछताया, न कभी मुझे बुरा लगा। मुझे मुंबई आकर केवल चार बरस हुए हैं। अत्यंत हीन माने गए समाज में जन्म हुआ और इसीलिए मैंने तय किया कि इस समाज को न्याय दिलाना मेरा कर्त्तव्य है। साथ ही अस्पृश्य कामगारों को अन्य कामगारों जैसे मिलने वाले अधिकार सुविधा दिला देना भी, मेरा कर्त्तव्य कर्म है। दो साल पहले श्री बेंडके से मेरी पहचान हुई। उन्होंने खोती मामले की जिम्मेदारी मुझे सौंपी है और मैंने उसे स्वीकार किया है। खोती पद्धति के नफा–नुकसान के बारे में अध्ययन कर उसके बारे में पक्की योजना बिल के रूप में कायदे कौंसिल में लाना मेरा कर्तव्य है। खोती जैसी दुष्ट पद्धति कैसे चलन में आई इस पर मुझे बड़ा आश्चर्य महसूस होता है। इस पद्धति के कारण किसानों के दिलों को शांति नहीं है। दिन–रात जी–तोड़ मेहनत कर फसल खड़ी करने के बाद अचानक अमीरों द्वारा उनकी खेती पर "बने बनाए बिल में सांप" की तरह कब्जा कर लेने से उनका जीवन संकटों में घिरने के बाद भी अमीरों को इसकी कोई परवाह नहीं होती। ऐसे समय सरकार को चाहिए कि वह मेहनतकश किसानों

*बहिष्कृत भारत : 3 मई, 1929

को उनकी मेहनत का फल दिला दे। इंसान के जीवन और संपत्ति की रक्षा करना सरकार का आद्य कर्त्तव्य है। और ऐसे मामले में सरकार ने अगर गरीबों के भले के प्रति चिंतित न हो तो यह नहीं कहा जा सकता कि वह सरकार प्रगतिशील सरकार है। रत्नागिरी जिले में एक जुलमी खोत अपने अधिकार का इस्तेमाल महिलाओं की इज्जत पर हाथ डालने के लिए भी करता है। किसान वर्ग आज खोती पद्धति के कारण गुलामी में दबा जा रहा है। सत्ता का दुरुपयोग न्याय–नीति के अनुसार है, ऐसा कहना कैसे सही हो सकता है! अंग्रेजों के राज में जो गुलामी चल रही है, वह सरकार को निकम्मा साबित कर रही है। अन्याय के साथ किसी भी समाज में शांति का निर्माण नहीं होगा। शांति बरकरार रखनी हो तो सरकार को न्याय करना होगा। न्याय करने वाली सरकार अगर इतने समय तक खोती की पद्धति को चलने देती है, तो वह अन्यायकारी है। सरकारी जंगलों पर खोत (जमींदार) अपने अधिकार की तानाशाही चलाएं और किसानों पर बिना वजह अत्याचार करें, यह क्या चल रहा है, यही समझ में नहीं आता। अगर शांतिपूर्ण तरीके से सोचा जाए तो खोती की पद्धति ही सदोष है। छोटी–मोटी चिल्लपों, शिकायत, समस्या कभी सरकार के कानों तक पहुंचती ही नहीं। आप अपना आंदोलन बड़े धीरज के साथ जारी रखें। अपने ऊपर हो रहे अन्यायों के बारे में आवाज उठाते हुए विरोधकों के साथ हमेशा भिड़ते रहने से ही चार–पांच सालों में स्वराज के लिए पोषक हक मिलेंगे। आज तक आंदोलन करते हुए सरकार से विनती करनी पड़ती थी। लेकिन अब चार–पांच सालों के बाद पूर्ण स्वराज स्थापित होगा। अपने प्रांत के प्रतिनिधियों को कौंसिल में भेजते समय बहुत ध्यान रखिए। चाहे जो हो, किसीसे बिना डरे, अपने विचारों का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्ति को ही कौंसिल में भेजें. अच्छी तरह जांच–परख कर अपना प्रतिनिधि चुनें। खोत या उसके नाते–रिश्तेदारों को वोट देकर कौंसिल में कदापि ना भेजें। समाज का जीवन पराधीन है, इसलिए एक–दूसरे पर निर्भर रहने के अलावा कोई चारा नहीं है। कुणबी लोग अपने स्वाभिमान के साथ रहें और ऊंचे लोगों के हलके काम कर अपने सामाजिक दरजे में कमी न आने दें। आत्मनिर्भरता और स्वाभिमान के साथ अपना काम पूरी जोर (लगन) लगा कर करते समय एकता से चले और संगठन बनाएं। इस तरह एकता के साथ निर्मित संगठनों के आंदोलनों से अपनी शिकायतों की कौंसिल तक में सुनवाई हो सकती है। पूरे मनोबल के साथ की गई कोशिशों का असर सफलता में ही होगा इस बारे में मुझे पूरा विश्वास है।"

अध्यक्ष के भाषण के बाद सबकी सहमति से निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किया गया –

खोती व्यवस्था विशुद्ध गुलामी ही है। इस व्यवस्था के कारण रत्नागिरी जिले का खेतीहर वर्ग पूरी तरह खोतों के आधीन हो गया है। इस व्यवस्था के तहत अस्थायी

तौर पर कसने के लिए पट्टे पर जमीन लेने वाले काश्तकारों की हालत तो दयनीय होती ही थी साथ ही लेन–देन की रसीदों का चलन न होने के कारण स्थायी पट्टेदारों के अधिकार भी सुरक्षित नहीं रहते थे। आर्थिक तौर पर खोती व्यवस्था काश्तकारों के लिए नुकसानदेह है। इतना ही नहीं, बल्कि नैतिक रूप से भी यह पद्धति घातक है और जोतने वाले किसानों को किसी भी प्रकार से अच्छी माली हालत प्राप्त करने की आजादी खोती पद्धति नहीं देती। ऐसी खोती व्यवस्था के प्रति यह परिषद पूरी तरह निषेध व्यक्त करती है और सरकार से आग्रह के साथ प्रार्थना करती है कि इस व्यवस्था को नष्ट कर दें।

इस प्रस्ताव पर श्री रगजी, श्री बेंडके के भाषण हुए। इसके अलावा कुछ अन्य फुटकर प्रस्तावों के पारित होने के बाद शाम 7 बजे के आसपास परिषद का कामकाज समाप्त हुआ। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की जय इस घोषणा के बाद धन्यवाद अर्पण, प्रकट करते हुए पान–सुपारी के बांटे जाने क बाद सभा बर्खास्त हुई।

27
मुंबई इलाके की प्राथमिक शिक्षा की प्रगति*

मुंबई शहर के शिक्षामंत्री ना. मौलवी रफीउद्दीन अहमद के निमंत्रण से महाबलेश्वर में 6 मई, 1929 को प्राथमिक शिक्षा के प्रसार के साथ जुड़े विभिन्न जिलों के और अलग अलग जाति–धर्मों के लोगों की एक छोटी–सी परिषद बुलाई गई थी। इस इलाके में प्राथमिक शिक्षा की गति में तेजी कैसे लाई जाए और आज की प्राथमिक शिक्षा से संबंधित कानून में किस प्रकार के सुधार लाने की आवश्यकता है, आदि बातों पर सोच विचार के लिए यह परिषद बुलाई गई थी। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भी इस परिषद के लिए उपस्थित थे। उन्होंने अपने विचार शिक्षामंत्री और परिषद के सदस्यों के सामने रखे। उन्होंने अपने भाषण में कहा,

"प्राथमिक शिक्षा का प्रसार राष्ट्र की प्रगति की दृष्टि से बेहद महत्त्वपूर्ण प्रश्न पूछा है। आज के समय में जिस देश का बहुजन समाज अनपढ़ है, ऐसे देश की जीवन के कलहों में निभेगी नहीं, इसे अलग से बताने की जरूरत नहीं है। प्राथमिक शिक्षा का देश में सभी जगह प्रसार राष्ट्र की सर्वांगीण प्रगति की नींव है। लोगों की खुशी पर अगर यह मामला छोड़ दिया जाए तो प्राथमिक शिक्षा का सुदूर प्रसार होने के लिए कई शतकों का समय लगेगा। इसीलिए प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य करने वाला कानून बनाना पड़ता है। हम देखते हैं कि आज जो उन्नत राष्ट्र हैं, उन सभी देशों ने अनिवार्य शिक्षा का कानून बना कर ही लोगों की निरक्षरता को खत्म किया है। जो वर्ग पहले ही शिक्षा का लाभ लेते हैं, उन पर शिक्षा की अनिवार्यता लागू नहीं करनी पड़ती। जिन्हें शिक्षा का महत्व समझ में नहीं आता और जो उस बारे में उदासीन होते हैं, उनके लिए ही अनिवार्य शिक्षा का कानून लागू करना पड़ता है। इसीलिए इस देश में शिक्षा के क्षेत्र में जो पिछड़े वर्ग हैं, उनसे जुड़ा यह सवाल है। प्राथमिक शिक्षा के बारे में कानूनन अनिवार्यता लागू करने के उद्देश्य से स्मृतिशेष ना. गोपाल कृष्ण गोखले जो बिल ले आए, तब से अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के आंदोलन की शुरुआत हुई। देश की जनता ने और खास कर पिछड़े वर्गों के नेताओं ने इस बिल का जोरदार समर्थन किया। हालांकि विभिन्न प्रांतों में अनिवार्य शिक्षा का कानून लागू होने के लिए कई साल लगे। मुंबई इलाके में प्राथमिक शिक्षा की अनिवार्यता का कानून बना है लेकिन उस पर पूरी तरह से अमल नहीं हो पाया है। उसे म्युनिसिपालिटी और लोकल बोर्ड पर आधारित रखा गया है। सरकार ने खास अनुपात में मदद देना तय किया है इसके बावजूद अनिवार्य शिक्षा लागू करने के लिए जो अतिरिक्त खर्च वहन करना पड़ेगा उसके लिए कई म्युनिसीपालिटी और

*बहिष्कृत भारत : 31 मई, 1929

लोकल बोर्डस् राजी नहीं हैं। सो, अनिवार्य शिक्षा चींटी की चाल से आगे बढ़ रही है कहना अत्युक्ति नहीं होगी। 1920–21 साल तक इस क्षेत्र में छात्र–छात्राओं के प्राथमिक स्कूलों की संख्या 13000 से कम थी और इन विद्यालयों में पढ़ने वाले–छात्र छात्राओं की संख्या 8 लाख 1 हजार थी। 1926–27 में स्कूलों की संख्या 13835 और छात्र–छात्राओं की संख्या दस लाख से कुछ कम पायी गयी। 1920–21 से 1926–27 के दरमियान के पांच सालों में स्कूलों की संख्या में 4.8 प्रतिशत और छात्र–छात्राओं की संख्या में 14 प्रतिशत की वृद्धि हुई। 1920–21 में प्राथमिक शिक्षा पर कुल 1 करोड़ 27 लाख रुपया खर्च हुआ और 1926–27 में एक करोड़ 98 लाख रुपए खर्च हुए। ये आंकडे भले ही उन्नतिदर्शक लगें लेकिन अगर बहुजन समाज में कितने बड़े पैमाने पर निरक्षरता है इस पर ध्यान दें तो पता चलेगा कि उन्नति बेहद धीमी गति से चल रही है। 1921 की चंदावरकर कमेटी की रिपोर्ट की सिफारिशें अगर अमल में लाई जातीं तो आज तक अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा लागू करने में काफी उन्नति दिखाई देती। चंदावरकर कमेटी ने दस साल का कार्यक्रम तैयार किया था और अनुमान व्यक्त किया था कि उसे लागू करने के लिए करीब 1 करोड़ 10 लाख रुपयों तक सालाना खर्च करना पड़ सकता है। इनमें से 77 लाख रुपये सरकार को देने थे लेकिन आगे बढ़ता हुआ खर्चा ध्यान में लेते हुए इस अनुमानित राशि में बदलाव करना पड़ा। अनिवार्य शिक्षा सर्वत्र लागू करने क लिए 1 करोड़ 83 लाख रुपयों का सालाना अतिरिक्त खर्चा आएगा और उसमें से 1 करोड़ 21 लाख रुपये सरकार को देने पड़ेंगे यह आज का अनुमान है। अनिवार्य शिक्षा पर आने वाले कुल खर्चे में से जिला लोकल बोर्ड के हिस्से का दो तिहाई और म्युनिसीपालिटी के जिम्मे का आधा खर्चा वहन करने की जिम्मेदारी कानूनन सरकार पर डाली गई है। तथा ऐच्छिक शिक्षा के बारे में बनाई गई योजनाओं का खर्चा उसी अनुपात में देने का आश्वासन भी सरकार ने दिया है। 1922–23 साल से प्राथमिक शिक्षा के बारे में मुंबई सरकार का खर्चे में मुंबई महापालिका का अनुदान जोड़ते हुए 28 लाख रुपयों की बढ़ोतरी हुई है। हालांकि, इस बढ़ोतरी का बहुत बडा हिस्सा अध्यापकों की तनख्वाह पर खर्च हो रहा है। अनिवार्य तथा ऐच्छिक शिक्षा की जो योजनाएं सरकार के सामने मदद की मांग करते हुए पेश की गई हैं, उनमें से केवल 6 लाख रुपये के खर्च की योजनाएं ही सिर्फ सरकार मंजूर कर पाई। कानून के प्रावधान के अनुसार अनिवार्य शिक्षा का कार्यक्रम पूरा करने के लिए और 1 करोड़ 72 लाख रुपयों का खर्चा होगा और उसमें से 1 करोड़ 15 लाख रुपए सरकार को देने पड़ेगे। यह रकम मुहैया कराने के लिए सरकार को लोगों पर कर लगाने होंगे। चंदावरकर कमेटी ने इस बारे में भी सुझाव दिया था कि कौन–कौन से कर लगाए जा सकते हैं। लेकिन सरकार ने इस मामले में अब तक कोई कार्रवाई नहीं की है। क्योंकि, एक तो प्रांतिक सरकार और वरिष्ठ सरकार के दरमियान महसूल

के बंटवारे को लेकर खींचतान चल रही है। केंद्र सरकार से मुंबई सरकार के हिस्से हर साल अगर अधिक रकम आती है तो उतनी रकम के लिए चिंता खत्म हो जाएगी। अंदाजा यह भी लगाया जा रहा है कि साइमन कमीशन द्वारा भी कुछ सुझाव आएंगे। इसलिए अतिरिक्त कर लागू कर शिक्षा के लिए जरूरी अतिरिक्त रकम मुहैया कराए जाने की फिलहाल कोई उम्मीद नहीं। मेरी राय में अनिवार्य शिक्षा से संबंधित मसले के दो प्रमुख पहलु हैं। पहला, शिक्षा पर नियंत्रण और दूसरा, अनिवार्यता का तत्व लागू करने की जिम्मेदारी। इन दोनों मामलों में वर्तमान अनिवार्य शिक्षा संबंधी कानून में कुछ मूलभूत दोष हैं ऐसा हमें लगता है। स्थानिक स्वराज्य की सीमा का विस्तार करने के खिलाफ मैं नहीं हूं। लेकिन आज के हालात में शिक्षा स्थानिक स्वराज के कार्यक्षेत्र में शामिल होना ठीक नहीं। म्युनिसिपालिटी और लोकल बोर्ड में फिलहाल जो लोग चुन कर आते हैं, उनमें से कई लोग शिक्षा पर नियंत्रण रखने के लिए अयोग्य होते हैं। कइयों को शिक्षा का उद्देश्य और पद्धति के बारे में कोई जानकारी नहीं होती। इसके अलावा जातिभेद और पार्टी के भेद के कारण सदस्यों में प्रतिस्पर्धा होती है। और इस प्रतिस्पर्धा का असर विद्यालय के प्रबंधन और वातावरण पर होता है। अध्यापक वर्ग भी सदस्यों के साथ अपने फायदे के लिए या अपने बचाव के लिए सिफारिश गांठने के चक्कर में रहते हैं। सदस्यों को भी चुनाव के समय वोट पाने के लिए अध्यापकों की जरूरत होती है। इस झमेले के कारण विद्यालय में जिस तरह का अनुशासन लागू रहना चाहिए, वह नहीं रह पाता। मुंबई म्युनिसिपालिटी के स्कूलों के प्रबंधन में भी ऐसे मामले उजागर हुए हैं, तो फिर अन्य छोटी म्युनिसिपालिटियां और लोकल बोर्डों के नियंत्रण में होने वाले विद्यालयों में कामकाज कैसे चलता है, इस बारे में केवल कल्पना करना ही काफी है। आज के हालात में बेहद पिछड़े अथवा अल्पसंख्यक लोगों के हितों की ठीक से रक्षा नहीं होती। कई जगहों पर अस्पृश्य वर्ग और मुसलमान वर्ग में से एक ही सदस्य होता है। म्युनिसिपालिटी के अथवा लोकल बोर्ड के कामकाज के दौरान उसे वतनदार बन चुके जातियों के सदस्यों के सामने लाचार होना पड़ता है। इन सभी बातों पर गौर करते हैं तो लगता है कि शिक्षा पर प्रांतिक सरकार का नियंत्रण रहना ही योग्य और जरूरी है। रास्ते बनाना, गटर साफ रखना, आदि बातों से शिक्षा का मामला अलग है। बारभाई का व्यवहार यहां किसी काम का नहीं। प्रांतिक स्वायत्तता की मांग करो और राष्ट्रीय नजरिए से शिक्षा की नीति तय कीजिए। हमें उससे कोई आपत्ति नहीं होगी। लेकिन शिक्षा के क्षेत्र में काम सिलसिलेवार ढंग से होना चाहिए। शिक्षा बेहतरीन होनी चाहिए। जिस किसी को शिक्षा के क्षेत्र में हस्तक्षेप करने की सहूलियत नहीं होनी चाहिए। पिछले कुछेक सालों में कई स्थानीय स्वराज संस्थाओं में चल रहे अनुशासनहीन कामकाज का पर्दाफाश हो चुका है और सरकार को अस्थायी रूप से उन संस्थाओं के अधिकारों को निरस्त करना पड़ा है। अन्य मामलों में बेहिसाब कामकाज के कारण

सार्वजनिक संपत्ति का ही नुकसान होगा, लेकिन शिक्षा के कामकाज में अगर गलत ढंग से कामकाज चले तो नई पीढ़ी का नुकसान होगा, इस बात को कभी भी नहीं भूलना चाहिए। इसके अलावा शिक्षा पर प्रांतिक सरकार का ही नियंत्रण होना क्यों जरूरी है, इस बात की पुष्टि में एक और महत्वपूर्ण मुद्दा दिया जा सकता है। वह यह कि शिक्षा पर 80 प्रतिशत से अधिक खर्चा प्रांतिक सरकार ही करती है। उसी तरह प्राथमिक शिक्षा को सब तक पहुंचाने की जिम्मेदारी भी सरकार पर ही होनी चाहिए। हाल के अनिवार्य शिक्षा कानून के अनुसार सरकार ने अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा की ज्यादातर जिम्मेदारियां लोकल बोर्ड और म्युनिसिपालिटियों पर डाल दी हैं। प्राथमिक शिक्षा के कुल खर्च में से लोकल बोर्ड के लिए दो तिहाई और म्युनिसिपालिटी के लिए आधे खर्चे की जिम्मेदारी कुछ ज्यादा है क्योंकि लोकल बोर्ड और म्युनिसिपालिटियों की आर्थिक हालत ठीक नहीं है और उनमें से ज्यादातर जितना बोझ अब उठा रहे हैं, उससे अधिक बोझ उठा नहीं पाएंगे। आमदनी बढ़ाने के, नए खर्चे उठाने के पर्याप्त साधन भी उनके पास नहीं हैं। इसलिए, इच्छा के बावजूद कई लोकल बोर्ड और म्युनिसिपालिटियां अनिवार्य शिक्षा की योजना पर काम नहीं करना चाहते। इसके अलावा जिन लोकल बोर्ड और म्युनिसिपालिटियों में शिक्षित लोगों की संख्या अधिक होती है, उन्हें अनिवार्य शिक्षा योजना से कोई लेना–देना नहीं होता। अनिवार्य किए बिना ही उनकी जाति में शिक्षा का प्रचार प्रसार होता रहता है। इसलिए, जो जातियां शिक्षा के क्षेत्र में पिछड़ी हुई हैं उन्हें पढ़ाने–लिखाने का जिम्मा उठा कर समाज में अपने वर्चस्व को वे क्यों संकट में डालेंगे? ये तो अपने ही पैरों पर कुल्हाडी मारने जैसा हुआ। इन दो अड़चनों के कारण अनिवार्य शिक्षा का कानून बन कर इतने साल बीतने के बाद भी इस क्षेत्र में ज्यादा विकास नहीं हो पाया है। लोगों को साक्षर बनाना, निरक्षरता को देश निकाला करना प्रांत सरकार की जिम्मेदारी है, जिससे वह कभी भी मुंह नहीं मोड़ सकती। उसने अगर इस जिम्मेदारी को निभाने से आना–कानी की तो कह सकते हैं कि सरकार ने अपने एक पवित्र कर्त्तव्य को निभाने से मुंह मोड़ा। जिस सरकार को अपनी इस जिम्मेदारी का, अपने पवित्र कर्तव्य का अहसास होता है वह कभी अपनी जिम्मेदारी को टालती नहीं। अनिवार्य शिक्षा का मसला ऐसा नहीं है, जिसे कभी कभार कोशिश कर हल किया जा सके। लगातार कोशिश करके उस पर काम किया जाना चाहिए, उसे हल किया जाना चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में पूरे प्रांत की एक –सी उन्नति की अगर उम्मीद हो तो प्रांत सरकार को ही पूरी जिम्मेदारी उठानी होगी। सभी लोकल बोर्ड और म्युनिसिपालिटियों की आर्थिक स्थिति एक–सी नहीं होती। हालात के मुताबिक उनकी आय के साधन कम या अधिक होते हैं। उर्वर जमीन, व्यापार, उद्यम, कल–कारखाने, मिलें, यात्रा आदि के अनुकूल किसी के पास आय के पुख्ता साधन होते हैं तो तो कइयों की आय उनके साधारण खर्चे के लिए भी नाकाफी होती है और आय बढ़ाना

उनके लिए संभव नहीं होता। हर जिले को अपनी साधनसंपत्ति लगा कर अनिवार्य शिक्षा की योजना लागू करनी चाहिए, ऐसा अगर कहा जाए तो रत्नागिरी, पंचमहाल जैसे आय के साधन वंचित जिलों को प्रलय आने तक इंतजार करना होगा। ऐसे इलाकों को उनकी आर्थिक दरिद्रता के कारण अनिवार्य शिक्षा से वंचित रखना क्या उचित होगा? इसीलिए, यह प्रांत सरकार की ही जिम्मेदारी है। अगर इसे मान भी लिया जाए तब भी एक सवाल बचा ही रहता है कि पूरे प्रांत में अनिवार्य शिक्षा योजना लागू करने के लिए जरूरी धन कहां से लाया जाए? प्रांत सरकार और हिंदुस्तान सरकार के बीच अगर आर्थिक लेनदेन हो तो मुंबई सरकार को शिक्षा पर खर्च करने के लिए कुछ अतिरिक्त रकम मिल सकती है। इसके अलावा, प्राथमिक शिक्षा अगर अनिवार्य कर भी दी जाए तब भी सब मुफ्त रखा जाए ऐसा हमें नहीं लगता। प्राथमिक विद्यालयों में नाममात्र फीस ली जाती है। जिनकी फीस देने की हैसियत हो उनसे जरूर फीस ली जानी चाहिए। इंग्लैंड में जब अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा लागू की गई थी, तब वह सबके लिए मुफ्त नहीं रखी गई थी। मुफ्त शिक्षा देना बाद की बात है उसे अनिवार्य बनाना पहली शर्त है। समाज के जिन वर्गों को इतनी कम फीस देना भी संभव नहीं होता, केवल उनके लिए वह मुफ्त रखी जाए। उदारता से फीस माफी की जाए। लेकिन जिन लोगों को फीस देना संभव है, उनसे फीस वसूलना न तो पाप है और न ही कोई अन्याय है। अगर इस प्रकार थोड़ी भी फीस वसूली हो तो अनिवार्य शिक्षा को लागू करने का कुछ तो खर्चा जुट जाएगा। वर्तमान द्विदल राजनीति के कारण एक तरफ तो शिक्षा का खर्च बढ़ा है तो दूसरी तरफ अबकारी उत्पादन कम कर, शराब की बिक्री पर पाबंदी लगाने की नीति पर अमल करने की मांग लोगों से की जा रही है। इससे विभागों के खर्चे को पूरा करने का सवाल आन पड़ा है। शराबबंदी की नीति और शिक्षा का प्रसार दोनों पर अमल करना लगभग नामुमकिन हो चला है। अनिवार्य शिक्षा को लागू करने के लिए लोगों पर अतिरिक्त कर लगाए जाने चाहिए और शराबबंदी की नीति पर अमल करने के लिए भी कर लागू किए जाने चाहिए। करों का दुगुना बोझ उठा पाने में जनता कितनी सक्षम है, इस बारे में हमें आशंका है। वैसे, ये दोनों सुधार लागू करना बेहद जरूरी होने के कारण, तथा इनके मीठे फल एक पीढ़ी के बाद ही सही, सभी जनता को चखने को मिलेंगे इस बात का यकीन होने के कारण अन्य मामलों में हरसंभव बचत करने के लिए सरकार को मजबूर कर खुद भी करों का बोझ सिर पर लेने के लिए तैयार रहने में ही समझदारी है। हालांकि, अगर कोई हमसे यह पूछे कि पहले शराब पर पाबंदी लगाएं या पहले 'अनिवार्य शिक्षा' को लागू किया जाए तो हम यही कहेंगे कि पहले अनिवार्य शिक्षा को ही लागू किया जाना चाहिए। शिक्षा का सार्वजनिक प्रसार होने से शराब पर पाबंदी लगाना आसान हो जाएगा। इतना ही नहीं, शराब पर पाबंदी लगाने की लोगों की मांग जोरदार ढंग से व्यक्त होगी,

इसका हमें पूरा यकीन है। शराबबंदी की नीति लागू करने में सरकार टालमटोल कर रही है और कहा नहीं जा सकता कि कब उसे लागू किया जाएगा। ऐसे में अगर पहले दारू–बंदी पर निर्णय लिया जाएगा तो फिर तो शराब बंदी भी नहीं और अनिवार्य शिक्षा भी नहीं, ऐसा हाल होगा। इस स्थिति ढुलमुल को स्वीकारने में क्या रखा है? उससे अच्छा यही होगा कि फिलहाल शराबबंदी पर अमल करने के नजरिए से आबकारी आय की कमी को पाटने के लिए लोगों को करों का जो नया बोझ सहना होगा उसे वे सहें और अनिवार्य शिक्षा का सुधार ही लागू करवा ले। साठे कमेटी ने शराब पर पाबंदी लगाने के लिए करों का जो सुझाव दिया था उसे अगर अनिवार्य शिक्षा के लिए लागू किया जाए तो एक महत्वपूर्ण मसले पर काम शुरू हो जाए। साठे कमेटी ने शराब पर पाबंदी लगाने के लिए जिन करों की सिफारिश की थी, उनका इस्तेमाल अगर प्राथमिक शिक्षा के सार्वत्रिकीकरण पर किया जाए तो एक महत्वपूर्ण मसले पर काम शुरू हो जाएगा। इस समिति की सिफारिशों में सुधारों के लिए अवसर न हो ऐसी बात नहीं है। हालांकि वह नीति अनिवार्य शिक्षा का खर्च पूरा करने के लिए कुछ हद तक काम आएगी। हालांकि, जो भी हो, शिक्षा का मसला टाला नहीं जाना चाहिए।

28
इंसानियत के अधिकार के लिए अत्याचार के खिलाफ विद्रोह करें*

रविवार, दिनांक 26 मई, 1929 के दिन नासिक जिले की ओर से चित्तेगाव में स्वाभिमान संरक्षक परिषद का अधिवेशन आयोजित किया गया था। अध्यक्ष पद के लिए डॉ. भीमराव अम्बेडकर, बार एट लॉ, एम. एल. सी. को चुना गया था। इस परिषद में करीब छह हजार दर्शक और प्रतिनिधि उपस्थित थे। परिषद के लिए नासिक से प्रो सबनीस, मेसर्स गायकवाड़, सेठ रणखांबे, काले आदि लोग और देवलाली से स्वयंसेवक पथक, मुंबई से समता पत्र के संपादक श्री देवराव नाईक, समाज समता संघ के मेसर्स द. वि. प्रधान, रा. कवली बी. ए, भा. वि. प्रधान बी. ए., एल. एल. बी, भो. बा. देशमुख एम. ए., शं. शा. गुप्ते बी. एस. सी., भा. र. कद्रेकर आदि लोग आए हुए थे। स्वागताध्यक्ष श्री रोकडे सेठ बीमार होने के कारण उनका भाषण नहीं हो पाया।

अध्यक्ष डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा–

"स्वाभिमान सुरक्षा का आंदोलन जोरदार ढंग से शुरू करना आज की स्थितियों में जरूरी हो गया है। इसी आंदोलन के बल पर स्पृश्य और अस्पृश्य के बीच के आपसी भिन्नता, भेदभाव के प्रति लोगों में अनुभूति होगी। पूरे समाज में समता स्थापित करने के लिए अवसर प्राप्त होगा। अस्पृश्योद्धार आदि अस्पृश्यों के उद्धार के बारे में हवाई बातचीत करने के दिन अब लद चुके हैं। आज प्रत्यक्ष स्वाभिमान को जगाने का समय आन खड़ा है। अस्पृष्य समाज की हालत को देखें तो उनकी स्थिति के बारे में असंतोष, असमाधान दिखाई देगा। अस्पृश्य माने गए समाज में जन्म से शामिल होने के कारण उच्चवर्ण के समाजबंधुओं से अधिक अलौकिक गुण होने के बावजूद वे कुछ कर नहीं पाते। उच्च वर्णियों द्वारा पैदा किए गए हालात हमारे, हमारे स्वाभिमानपूर्ण उद्देश्यों और कार्यों के राह के रोड़े बन रहे हैं। मंदिर प्रवेश, तालाब, कुएं आदि जगहों पर प्रवेश करने के लिए अस्पृश्यों को मना किया जाता है। उन पर अत्याचार किए जाते हैं। ऐसे हीन हालात से मुक्त होने के लिए अस्पृष्य बंधुओं को चाहिए कि वे अपना स्वाभिमान जगाएं और इंसानियत की रक्षा के लिए आर या पार की लड़ाई छेड़ दें। केवल शिक्षा से अगर इंसानियत पाई जाती तो पढ़े–लिखे वर्ग की ओर से हम अस्पृष्य बंधुओं पर सुधार के इस अवसर पर अन्याय

*"बहिष्कृत भारत", 21 जून, 1929

एवं अत्याचार नहीं किए जाते। हिंदू समाज द्वारा बेवजह हमारा दर्जा हीन बताया गया है। हीनता का यह कलंक धो डालने के लिए मुझे स्वाभिमान जगाने का यह मार्ग ठीक लगता है। इसीलिए मेरे बंधुओं, स्वाभिमान को जिंदा रखना। अपने पर हो रहे अन्यायपूर्ण अत्याचारों के खिलाफ विद्रोह कीजिए। इसके बगैर हमें इंसानियत के सच्चे अधिकार प्राप्त नहीं होंगे।

29
अस्पृश्यों द्वारा दिया गया धर्म परिवर्तन का नोटिस*

पूर्वघोषित कार्यक्रम के अनुसार पातुर्डा, जिला बुलढाणा में बुधवार, दिनांक 29 मई, 1929 को डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर, बार. एट. लॉ की अध्यक्षता में मध्यप्रांत और वर्हाड अस्पृश्य परिषद का सम्मेलन निर्विघ्न संपन्न हुआ। इस सम्मेलन के लिए अस्पृष्य वर्ग के नेता रा. पी. के. मटकर, रा. सोनोने, रा. मकेसर, रा. केशवराव खंडारे रा. (राजमान्य) संभाजी जाधव, रा. रायभान इंगले, रा. संभूजी खंडारे आदि लोग उपस्थित थे। इसी तरह ब्राह्मणेतर पार्टी के नेता वेद शास्त्र संपन्न आनंदस्वामी, श्री उकंडराव टाले आदि लोग भी उपस्थित थे। डेढ़ हजार से अधिक लोग वहां इकठट्ठा हुए थे। शाम सात बजे सम्मेलन की शुरुआत हुई। इसी सम्मेलन की शुरुआत में उदाहरणस्वरूप रा. बक्षुरामजी दाभाड़े की कन्या कु कवतिकाबाई का ब्याह सखाराम इंगले के साथ संपन्न हुआ जो कि अस्पृश्य वर्ग के लिए उदाहरणस्वरूप था क्योंकि, यह विवाह परिष्कृत तरीके से और कम खर्चे में किया गया था।

इसके बाद परिषद के कामकाज की शुरुआत हुई। स्वागताध्यक्ष के भाषण के बाद डॉ. अम्बेडकर का विद्वत्तापूर्ण और तर्कसंगत भाषण हुआ उन्होंने कहा,

"इस जिले के अस्पृश्य वर्ग के तथा ब्राह्मणेतर वर्ग के नेताओं ने मिल कर विशेष रूप से अस्पृश्यता निवारण की जी–तोड़ कोशिश की। लेकिन उन्हें इस काम में सफलता नहीं मिली। उल्टे पुरोहित भिक्षुतंत्र से प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से उन पर कई तरह के अत्याचार किए गए और उनके आंदोलन को कुचल देने की कोशिश की गई। नेताओं के बारे में अखबारों में झूठमूठ खबरें फैलाना, अस्पृश्य वर्ग में फूट डालना आदि निंदनीय तरीकों को उन्होंने अपनाकर मानों उस आंदोलन को नेस्तनाबूत करने की उन्होंने कसम खाई हो। उनके इन आत्यंतिक अत्याचारों, अन्याय और छल–कपट से तंग आकर इस जिले के कुछ हिस्सों के हजारों अस्पृश्य धर्म परिवर्तन करने का मन बना चुके हैं। उन्होंने इस प्रकार का एक नोटिस भी स्पृश्य वर्ग के नाम भेज दिया है। लेकिन स्वार्थी अंतःकरण वाले भिक्षुतंत्र को इससे कोई फर्क नहीं पड़ा। इस बात का पता ही न होने का नाटक करने वाले शुद्धिवालों और हिंदुसभा वालों ने तो उनके दुखों की रत्ती भर भी परवाह नहीं की।"

*"बहिष्कृत भारत", 21 जून, 1929

धर्म परिवर्तन के बारे में अपने अस्पृश्य बंधुओं की क्या राय है, यह जानने के लिए जलगाव तहसील के अस्पृश्य वर्ग के नेताओं ने इस परिषद का आयोजन किया था। इस परिषद में पहले दिन धर्म परिवर्तन के प्रस्ताव पर विचार–विमर्श हुआ। उससे पता चला कि पूरा बहिष्कृत समाज इसके लिए तैयार है। प्रस्ताव पर सभी की अनुकूल प्रतिक्रिया थी। ब्राह्मणेतर पार्टी के नेताओं ने इस पर समर्थन के स्वरूप जोरदार भाषण कर प्रस्ताव के पक्ष में राय दी। अध्यक्ष साहब द्वारा जनता की राय जानने हेतु प्रस्ताव वोटिंग के लिए प्रस्तुत किया तब उसे सबने प्रस्ताव को स्वीकार किया, किसी ने विरोध नहीं किया। इस तरह पहले दिन का कामकाज खत्म हुआ।

30
सभी अस्पृश्यों को हम समान मानते हैं*

शनिवार, दिनांक 29 जून, 1929 के दिन रात 7 बजे मुंबई के परेल इलाके के दामोदर हॉल में रावबहादुर बोले, जे. पी. की अध्यक्षता में बहिष्कृत वर्ग की विशाल सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया था। सभा में बहिष्कृत वर्ग का बड़ा समुदाय इकट्ठा हुआ था। मंच पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर, मे. डॉ. सोलंकी, में. शिवतरकर, मे. द. वि. प्रधान, भा. र. कद्रेकर, रा. गुप्ते, ति. गायकवाड़, ति. आडरेकर, ति. जाधव आदि लोग दिखाई दे रहे थे। तिर्शरूप गायकवाड़ ने अध्यक्ष की सूचना को सभा पटल पर रखी और उसका समर्थन किया रा. वालावलकर ने। नियोजित अध्यक्ष रावबहादुर बोले, जे. पी. (जस्टिस ऑफ पीस) तालियों की गड़गड़ाहट में अध्यक्ष स्थान पर विराजमान हुए। अध्यक्ष का शुरुआती भाषण हुआ और सभा में निम्नानुसार प्रस्ताव पारित किए गए –

पहला प्रस्ताव – कोकण इलाके का, खास कर चिपलूण, खेड और दापोली तालुका का बहिष्कृत वर्ग अपनी उन्नति के मार्ग पर अग्रसर है लेकिन उन पर छुआछूत मानने वाले हिंदू लोगों द्वारा अन्याय किया जा रहा है। उनके इस अधम कृत्य के लिए यह सभा उनके प्रति निषेध व्यक्त करती है। साथ ही अपना गुस्सा भी व्यक्त करती है। इस शिकायत के बारे में न्याय पाने के लिए अस्पृश्य नेताओं का एक प्रतिनिधिमंडल नेक नामदार गवर्नर साहब के यहां भेजने की इजाज़त यह मंच दे रहा है।

दूसरा प्रस्ताव – सभा की ओर से सूचित किया जाता है कि, कोकण के बहिष्कृत वर्ग के हितों की रक्षा के लिए एक "कोकण संरक्षक फंड" निर्माण किया जाए।

तीसरा प्रस्ताव – बहिष्कृत वर्ग के श्री चां. भ. खेरमोडे और रा. गाडेकर ये दो छात्र इस वर्ष की बी. ए. परीक्षा में और रा. कदम मैट्रिक की परीक्षा में पास हो चुके हैं, और इसलिए यह सभा उनका अभिनंदन करती है।

चौथा प्रस्ताव – डॉ. पी. जी. सोलंकी, एम. एल. सी. को सरकार ने मुम्बई म्युनिसिपालटी के सदस्य के रूप में चयन किया है, इसलिए यह सभा डॉक्टर साहब का अभिनंदन करती है और सही तैनाती के लिए संतोष व्यक्त करती है।

आखिर लोगों के आग्रह के कारण और अध्यक्ष की इच्छा की खातिर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर बोलने के लिए उठ कर खड़े हो गए। उन्होंने कहा कि–

---

*बहिष्कृत भारत : 12 जुलाई, 1929

"आज जैसी आपात स्थितियां हैं, ऐसे में हम सभी अस्पृश्यों को संगठित होकर रहना होगा। दुख की बात यह है कि हम में से कुछ लोग महार–बिगर महार का विवाद पैदा करते हैं!! महार लोगों में अगर महाड़ के चवदार तालाब के लिए अपने प्रतिस्पर्द्धियों (विरोधियों) के साथ संघर्ष किया और उस तालाब पर उन्होंने अपना अधिकार मनवा लिया तो उस तालाब का पानी चमार और मांग भी पी सकते हैं! इसलिए, हम सब जब तक एक होकर नहीं लड़ते, तब तक हमारा टिक पाना संभव नहीं है! इतना ही नहीं अपनी संस्था की ओर से इस इलाके में जो–जो बोर्डिंग शुरू हैं उनमें किसी तरह का भेदभाव नहीं है, किसी भी अस्पृश्य जाति के बच्चे को छात्र को उसमें प्रवेश मिलता है। सभी अस्पृश्य जाति के छात्र इस बोर्डिंग में रहते हैं।

खुद के स्वार्थ के लिए कुछ चमार लोग महारों के खिलाफ बिना–वजह हल्ला मचा कर खुद को धन्य मान रहे हैं। असल में हमारा आंदोलन जिस उद्देश्यों पर चल रहा है, उससे महाराष्ट्र के अन्य आंदोलनों के प्रमुखों को, कर्ता–धर्ताओं को सबक लेना चाहिए। पुणे, सोलापुर की म्युनिसिपालिटी के चुनावों में इन दोनों जगहों पर मैंने खुद कोशिशें कर महार उम्मीदवारों से अपने नामांकन वापिस लेने के लिए कहा है। और उन्होंने अपने नामांकन वापिस ले भी लिए हैं। इन दोनों म्युनिसिपालिटियों में मैंने चमार उम्मीदवार ही जीत कर जाएं इस पर खास ध्यान दिया है। इससे यह बात ध्यान में आएगी कि सभी अस्पृश्यों को हम समान मानते हैं। फिर उसमें जाति या प्रांत के आधार पर भेदभाव करने की हमें कोई जरूरत नहीं लगती। हालात की तलवार, सिलबट्टा सबके सिर पर कमोबेश एक–सा है।" आखिर अध्यक्ष के प्रति धन्यवाद ज्ञापन के बाद और फूलमालाएं अर्पण करने के बाद सभा बर्खास्त हुई।

31
मजदूरों की कोई जाति नहीं होती कहने वाले स्पृश्य नेता इसका जवाब दें*

डॉ. अम्बेडकर की अध्यक्षता में पर्वती, पुणे के सत्याग्रह आंदोलन के समर्थन में बुधवार, दिनांक 16 अक्तूबर, 1929 को शाम 6.30 बजे परेल मुंबई में बहिष्कृत वर्ग की एक बड़ी सार्वजनिक सभा आयोजित की गई थी। पूरा सभागार लोगों से खचाखच भरा हुआ था। मंच पर श्री. भुस्कुटे, देवराव नाईक, ठाकरे, प्रधान, खांडके, कवली, कद्रेकर, आचार्य डॉ. सुरतकर आदि स्पृश्य लोग और साथ ही श्री. शिवतरकर, माली, आडरेकर, आदि अस्पृश्य मंडली भी दिखाई दे रही थी। श्री. शिवतरकर ने डॉ. अम्बेडकर के अध्यक्ष स्थान स्वीकारने का प्रस्ताव रखा और श्री. खांडके ने उसका समर्थन किया। उसके बाद तालियों की गड़गड़ाहट के बीच डॉ. अम्बेडकर ने अध्यक्ष स्थान ग्रहण किया।

"अपने भाषण की शुरुआत में डॉ. अम्बेडकर जी ने पुणे के सत्याग्रह का इतिहास संक्षेप में बताया। उन्होंने कहा कि, पुणे में बहिष्कृतों द्वारा किए जा रहे सत्याग्रह की सभी बहिष्कृतों द्वारा जहां तक संभव हो सके मदद करना सबका पवित्र कर्त्तव्य है। उन्होंने जब लोगों से पूछा कि, जरुरत पड़ने पर क्या आप पुणे जाने के लिए तैयार हैं? तो चारों तरफ से हां की ध्वनि गूंज उठी।

स्पृश्य लोगों के बर्ताव के प्रति और और बहिष्कृतों के बारे में उनके नजरिए के प्रति निषेध व्यक्त कर उन्होंने कहा कि और कुछ दिन रुके रहो और समाज के मत परिवर्तन की राह देखें, कहने वालों का मन कितना नीच होता है। कॉंग्रेस ने भी जब अंग्रेजों को चेतावनी दी है कि 31 दिसंबर से पहले अगर 'डोमिनियन स्टेटस' नहीं दिया गया तो अंग्रेज सत्ता से संबंध विच्छेद किए जाएंगे, तो ऐसे में बहिष्कृत वर्ग को भुलावे में रखने की कोशिश करने के क्या मायने हैं? इससे तो, हजारों सालों के इंतजार के बाद भी कुछ न देने वाले स्पृश्यों के मन की नीचता ही उजागर होती है। रुकने के लिए कहना उनका लुका–छुप्पी का खेल है, उनके नीच मन पर चढ़ा अच्छाई का झूठा मुलम्मा है। लेकिन ऐसी झूठी बातों में फंसने के लिए अस्पृश्य वर्ग अब उतना नादान नहीं रहा है। वह अब जाग गया है। उसका स्वाभिमान अब जागृत हो चुका है। पुणे का सत्याग्रह इसी का एक प्रत्यक्ष रूप है। जल्द ही मुंबई में मंदिर प्रवेश के सत्याग्रह की मुहिम शुरू की जा रही है और उसे सफल बनाने के लिए मुंबई के बहिष्कृतों को भी कमर कस कर, उनके साथ खड़े हो जाना चाहिए।"

*बहिष्कृत भारत : 15 नवंबर, 1929

भाषण के बाद उन्होंने श्री. वनमाली से विनती की कि वे आगे दिया जा रहा प्रस्ताव सभा के सामने रखें–

"समाज समता संघ और भारतीय बहिष्कृत समाज सेवा संघ के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित की गई इस सार्वजनिक सभा, पुणे के बहिष्कृत हिंदुओं द्वारा अपने न्यायपूर्ण और मानवीय हकों के लिए छेड़े सत्याग्रह आंदोलन को अपना पूर्ण समर्थन देती है। जिन स्पृश्य लोगों ने इस आंदोलन को अपना समर्थन दिया है, उन्हें हम हृदय से धन्यवाद अर्पित करते हैं और अपने निश्चय से बिना डगमगाए अपनी सत्याग्रह की लड़ाई जारी रखने की बहिष्कृत वर्ग से अनुरोध करते हैं।"

सभा के सामने इस प्रस्ताव को रखते हुए श्री वनमाली ने बहिष्कृतों के मंदिर में प्रवेश के हक का समर्थन किया और इस बात के प्रति आश्चर्य प्रगट किया कि क्यों स्पृश्य लोग इसका विरोध कर रहे हैं।

श्री. वडवलकर ने प्रस्ताव के समर्थन में भाषण दिया। उसके बाद श्री. के. सी. ठाकरे ने प्रस्ताव रखा। इस प्रस्ताव के अनुसार शांतिपूर्ण ढंग से आंदोलन करने वाले अस्पृश्यों पर हमला करने वाले स्पृश्य लोगों के प्रति धिक्कार प्रकट किया गया।

श्री. द. वि. प्रधान ने अपने भाषण में ठाकरे जी के इस प्रस्ताव का समर्थन किया।

श्री खटावकर और आचार्य के भाषणों के बाद प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित हुए। तीसरे प्रस्ताव के अनुसार अस्पृश्य लोगों पर हो रहा हमला खुली आंखों से देख रहे कलक्टर ने तुरंत कोई कार्रवाई नहीं की इस बारे में खेद प्रगट किया गया। इस सभा में श्री देवराव नाईक, भुस्कुटे आदि के भी भाषण हुए। जुल्मी सत्ता के खिलाफ जिन पर जुल्म होते हैं, उन्हें सत्याग्रह करने का अधिकार होता ही है। इसीलिए उस अधिकार का प्रयोग करने की सलाह डॉ. अम्बेडकर ने बहिष्कृतों को दिया। लेकिन यहां मिल मजदूर युनियन का मालिकों के खिलाफ जो आंदोलन छिड़ा हुआ था, उसका डॉ. अम्बेडकर ने क्यों विरोध किया? यह सवाल सभा की शुरुआत में किसी ने पूछा था, तब उसे उन्होंने आश्वासन दिया था कि सभा का कामकाज पूरा होने से पहले उसे इस प्रश्न का उत्तर दिया जाएगा। उसके सवाल का जवाब देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा,

"मिल मजदूर युनियन के आंदोलन का हमने क्यों विरोध किया, यह पूछने वालों को शायद इस बात की खबर नहीं कि पिछली मिलों के बंद के पीछे क्या कारण थे? और उस समय हालात कैसे थे? पहली बात तो यह कि यह सार्वजनिक हड़ताल नहीं थी। मिलों में काम करने वाले मुसलमान मजदूरों में से कोई भी इस हड़ताल में

शामिल नहीं था। जिन इलाकों की मिलों में मुसलमान मजदूरों की संख्या अधिक थीं, वे मिलें बाकायदा धड़ल्ले से चल रही थीं। इसी प्रकार हड़ताल से एक दिन पहले मिल मदजूर यूनियन के अध्यक्ष, सचिव तथा अन्य दो लोग मुझसे मिलने आ पहुंचे। उस समय मेरे साथ वहां श्री देवराव नाईक और श्री. द. वि. प्रधान भी उपस्थित थे। काफी विचार–विमर्श हुआ। मैंने मिल मजदूर संघ के लोगों से कहा कि हड़ताल के लिए योग्य कारणों के अभाव में तथा धन का पुख्ता इंतजाम नहीं होते हुए हड़ताल पुकारना मूर्खता है। मैंने उनसे कहा कि, हड़ताल पुकारने योग्य कारण हों और उससे हम बहिष्कृत वर्ग का कुछ फायदा होने वाला हो, तो मैं बड़ी खुशी से हड़ताल का समर्थन करूंगा और उसमें शामिल भी होऊंगा।

उसके बाद मैंने जब हड़ताल के सभी कारणों के बारे में जांच की तो मुझे यकीन हुआ कि कुछ लोग अपनी दबंगई के बल पर हड़ताल को जारी रखना चाहते हैं। यूनियन द्वारा दिए गए वचनों पर अगर यूनियन को चलाने वाले अमल नहीं करेंगे तो उस यूनियन के शब्दों की, उनकी बातों की क्या कीमत रहेगी, यह सोचने लायक स्थितियां थीं। मुंबई सरकार द्वारा नियुक्त हड़ताल पूछताछ कोर्ट के सामने गवाही देते हुए इसी यूनियन के अधिकारियों ने अपना संगठन बिखर गया है, इसीलिए हड़ताल पुकारने की बात धड़ल्ले से कही है, यह बात सबको ध्यान में रखनी चाहिए।

तीसरी प्रमुख वजह यह है कि अब तक जो–जो भी हड़ताल हुए उनमें बहिष्कृतों को कोई न्याय नहीं मिला है। कपड़ा विभाग में उन पर लगाई गई पाबंदी अब तक कायम है। जहां तक संभव हो कपड़ा विभाग बहिष्कृतों के लिए भी खुल जाए और मुंबई के लोगों को कपड़ों का काम आए, इसके लिए यह विरोध किया गया। क्योंकि यहां के स्पृश्य लोग उन्हें काम सिखाने के लिए तैयार नहीं हैं। इसीलिए वर्हाड से 130 लोगों को लाया गया। लेकिन कपड़ा विभाग के स्पृश्य मजदूरों ने अस्पृश्य मजदूरों के साथ मिल कर काम करने से इनकार करते हुए जगह–जगह हड़ताल की घोषणाएं कीं, जिसकी वजह से लाए गए अस्पृश्य मजदूरों को लौट जाना पड़ा। अस्पृश्यों के साथ जुल्म करना ही मजदूर आंदोलन का न्याय हो तो जो नेता हमेशा यह चिल्लाते फिरते हैं कि मजदूरों की कोई जाति नहीं होती, वे इस बात का जवाब दें।

इसी प्रकार मिल का कोई भी बड़ा पद अस्पृश्य लोगों को नहीं दिया जाता। क्योंकि जाति मानने वाले स्पृश्य मजदूर अस्पृश्य अधिकारी के और मुकादम के मातहत काम करना पसंद नहीं करते। मिल में नल पर होने वाली झड़पें और स्पृश्य महिलाओं द्वारा अस्पृश्य महिलाओं की अवमानना रोजमर्रा की बातें हैं। जिस आंदोलन में अस्पृश्यों पर जुल्म ढाए जाते हैं और उन्हें बरकरार रखने की ओर झुकाव होता है, ऐसे हर आंदोलन का विरोध करना यह हमारा कर्त्तव्य है।

अस्पृश्य वर्ग से सहयोग की जो लोग उम्मीद रखते हैं उन्हें चाहिए कि वे अस्पृश्यों के साथ न्याय करें। जहां भी, जो भी लोग मेरे अस्पृश्य वर्ग के साथ न्याय कर गुलामी से उन्हें मुक्ति दिलाने और प्राप्त स्थिति से उन्हें ऊपर उठाने की जी–जान से कोशिश करते हों, उन्हें सहयोग देने से मैं कभी पीछे नहीं हटूंगा। लेकिन हर आंदोलन का सूत्र अस्पृश्यों को न्याय दिलाना और उनके साथ समानता का व्यवहार ही होना चाहिए, तभी वह न्यायपूर्ण और सही साबित होगा। स्वार्थी 'स्पृश्यों' के फायदों के आंदोलन से मुझे कुछ लेना–देना नहीं। एक बार फिर आप सब लोगों से पर्वती के सत्याग्रह की मदद करने की प्रार्थना करता हूं। इस तरह 9 बजे सभा का कामकाज संपन्न हुआ।

32
सिर्फ शिक्षा पाने से योग्यता हासिल नहीं होती*

धारवाड़ जिले बहिष्कृतों की पहली परिषद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में धारवाड में दिनांक 28 दिसंबर, 1929 के दिन शाम को किले के अब तक बुलंद खड़ी सीमा के पास वाले विशाल मैदान में बड़े उत्साह के साथ हो रही थी। इस सभा में हिस्सा लेने के लिए पूरे जिले से अस्पृश्य प्रतिनिधि के तौर पर महार, मांग, चमार, भंगी, ढोर आदि हजारों की संख्या में लोग आए थे। अस्पृश्यों के अलावा स्पृश्य लोग भी बडी संख्या में उपस्थित थे। मंच पर मैसूर की श्रीमती कनकलक्ष्मी अम्मा, श्री मुदवेडू कृष्णरायप्पा बैठे थे। स्पृश्यों में डॉ. किर्लोस्कर, डॉ. कमलापूर आदि कई गण्यमान्य लोग दिखाई दे रहे थे। रिवाज के अनुसार स्वागत के गीत गाने बाद स्वागताध्यक्ष वाय. बी. सांबाणी जी का छोटा सा भाषण हुआ।

उसके बाद यहां धारवाड़ के कर्नाटक कॉलेज के अस्पृश्य छात्र मि. एस एन माने ने मराठी में प्रस्ताव रखा कि सभा का अध्यक्ष स्थान डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर स्वीकारें। उसके प्रस्ताव का सचिव मि. सबाणी ने कन्नड भाषा में समर्थन किया। रावसाहब पापण्णा जालिहाल, बेलगांव के द्वारा किए गए समर्थन के बाद तालियों की गड़गड़ाहट के बीच अध्यक्ष अपनी जगह पर आसीन हुए। अध्यक्ष के भाषण से पहले सचिव ने परिषद के लिए अन्य स्थानों से आए संदेश पढ़ कर सुनाए। मि. राजभोज, पुणे, मि. स्टार्ट, नासिक, देश भक्त गंगाधरराव देशपांडे, हुबली (बेलगांव), नामदार जाधव, सुभेदार घाडगे, डी. सी. मिशन, पुणे आदि के संदेश पढ़ने के बाद अध्यक्ष का भाषण हुआ। वह मराठी में ही हुआ। डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा,

की जा रही प्रशंसा के लिए मैं खुद योग्य हूं अथवा नहीं इसका फैसला अपने आप करना असंभव है। प्रशंसा करना या नहीं करना पूरी तरह श्रोताओं पर ही निर्भर है। मैं जब विलायत से लौटा तब मानपत्र देने के लिए लोगों ने बहुत प्रयास किया। लेकिन किसी भी आग्रह के सामने घुटने टेके बिना मैंने मानपत्र लेने से इनकार किया। मेरे हिसाब से इसका कारण बिल्कुल स्पष्ट है। केवल शिक्षा पाकर योग्यता आ जाती है, ऐसा मुझे नहीं लगता। दूसरी बात, आदमी विद्वान हो तो ऐसा नहीं कि वह समाज के लिए उपयोगी ही साबित होगा। विद्वान आदमी बदमाश, धोखेबाज, उधार लेने वाला, जुगत लड़ाने वाला और अन्य भी बुरे गुणों से परिपूर्ण हो सकता है। आज के हालात में विद्वान, पढे–लिखे, सुधरे हुए ये लोग अस्पृश्यों के

---

*ज्ञानप्रकाश : 1 जनवरी, 1930

साथ कैसे बर्ताव करते हैं, यह हम देख ही रहे हैं। लेकिन यह सब ऐसे ही चलेगा, क्योंकि स्पृश्या स्पृश्य भेद कालातीत है। आज कोई भी सीना ठोंक (तान) कर यह नहीं बता सकता कि यह भेदभाव कब मिटेगा। अस्पृश्यता निवारण के कई मार्ग हैं। उनमें से एक महत्वपूर्ण मार्ग है राजनीतिक सत्ता अपने हाथ में आना। आपमें सुधार लाने के लिए आजकल आपके आसपास कई स्पृश्य लोग घूमने–फिरने लगे हैं। साहब लोग भी हमारे बारे में बहुत चिंता दिखाते हैं। फिर धीमे से कहते हैं कि अपना रहन–सहन सुधारो, साफ–सुथरे रहे, नया नजरिया अपनाइए। ऐसा नहीं कि ये बातें ठीक नहीं हैं, ठीक ही हैं वे सब बातें। लेकिन ध्यान रखें कि ये सभी बातें राजनीतिक सत्ता के अधीन हैं।

राजनीतिक सत्ता हमारे हाथ आए तो फिर सब ठीक हो जाएगा। राजनीतिक सत्ता के अभाव में जो भी कुछ हो रहा है, वह केवल सुधार हैं और राजनीतिक सत्ता मिलने तक ऐसे सुधार होते ही रहेंगे, किन्तु वे कभी पूरे नहीं होंगे। हाल ही में स्टार्ट कमेटी पर जाने का मौका मुझे मिला और जिन्हें "जंगली लोग" माना जाता है उनसे मिलने का मौका मुझे मिला। उनमें और हममें फर्क केवल वस्त्रों का, बाह्य फर्क ही है। कोई कितना भी बताएं, ये लोग अपना पहनावा कभी नहीं बदलेंगे। आज उनके इस तरह के पहनावे के कारण ही वे बिल्कुल अलग दिखाई देते हैं। इन लोगों में पहनावे के कारण तो कोई सुधार नहीं आने वाला है। सो, सुधार वगैरह में परिवर्तन कर किए गए बदलाव बस बाह्यात्कारी होते हैं, समूचे सुधार की दृष्टि से बड़े कमजोर होते हैं ऐसे बदलाव।

जंगली लोग और हिंदु समाज तथा अस्पृश्य समाज में बहुत फर्क दिखाई देता है। इन सभी के रीति–रिवाज अलग–अलग हैं। सरकार के पास अस्पृश्योद्धार के बारे में कानून बनाने की हिम्मत नहीं है। अन्य जातियों का गुस्सा, रोष, असंतोष अपने ऊपर लेना नहीं चाहती सरकार। राजनीतिक सत्ता का कुछ अंश हमारे हाथ में आए बगैर हमारे सुधारों में ताकत नहीं आएगी, जोर नहीं लगेगा। राजनीतिक सत्ता को हाथ में लेने की हमें कोशिश करनी चाहिए। उसी तरह ऊंचे वर्ग द्वारा किए जाने वाले अत्याचारों को दूर करने की कोशिश भी की जानी चाहिए। धक्कमपेल चारों तरफ से करनी है। कोंकण में अस्पृश्यों की जो भी स्थिति है, वह केवल गांव वालों पर ही निर्भर है। गाँव के पाटील अस्पृश्यों के अनुकूल होने चाहिए। पाटील अगर नाराज हुआ तो वह और गुंडे दोनों मिल कर अस्पृश्यों की जान हलकान कर देते हैं, जीना मुश्किल कर देते हैं। उन पर कड़ा सामाजिक बहिष्कार डाला जाता है। अपने गांव में वे यह सब कर सकते हैं। इस तरह से बहिष्कृत होने से, अस्पृश्यों को डर लगता है। जाहिर है कि वे इस तरह के समान अधिकार प्राप्त करने वाले

आंदोलनों से दूर रहते हैं। अस्पृश्यों की हालत आज भी बड़ी विचित्र है।

इस अंग्रेजी राज्य में तो अस्पृश्यों पर होने वाले सामाजिक बहिष्कार और अत्याचारों को दूर करने वाला कानून तो नहीं ही बनेगा। अब मेरी पक्की राय बनी है कि हमें स्वराज्यवादी ही होना चाहिए। इस देष में कम से कम महार, मांग, चमार को आजादी चाहिए। आजकल जो स्वराज की कोशिशें चल रही हैं, उनसे तो जो हासिल होगा, वह भी औरों को ही होगा। अब जो स्वराज का संविधान बनाया जा रहा है उसमें हम जरूरतमंदों को भी हिस्सा मिलना चाहिए। हालांकि, स्वराज के इस बहस, लेन–देन वाद–विवाद से कुछ काम का निकल आएगा, उसमें कुछ दम है ऐसा मुझे नहीं लगता। मैं साफ बताता हूं कि अंग्रेज सरकार पर मुझे विश्वास नहीं है। हमारे भले के लिए ये सरकार कुछ नहीं करने वाली। अपना भला हमें खुद करना होगा। स्वागताध्यक्ष ने कहा कि अस्पृश्यता है तब तक स्वराज नहीं मिलता। लेकिन यह बस भूल है। अंग्रेज सरकार किसी दर्शन के सहारे नहीं चलती, वे बहुत ही व्यवहार कुशल लोग हैं। कोई मांग रहा है, तो उसे स्वराज दे देने के लिए वह यहां नहीं आई है। काटने वाले को, खसोटने वाले को वे खुश करेंगे, फिर अपने साम्राज्य की सुरक्षा देखेंगे। आपके झमेलों से उसे कुछ लेना–देना नहीं है। इस देश के सुख सम्पन्नता के लिए वे स्वराज नहीं देने वाले। फिलहाल स्वराज के बारे में बातचीत चल रही है। उसमें आपकी और हमारी कोई खोज–खबर ले रहा है क्या? वे विचार–विमर्श कर रहे हैं गांधी, सप्रू, नेहरू, जिन्ना के साथ। इन लोगों का हमसे कितना ताल्लुक है, यह तो साफ ही है। इसीलिए अब हमें स्वराजवादी होना पड़ेगा। हालांकि, सिर्फ स्वराज पाकर क्या होना है? हमें भी तो स्वराज के लायक होना चाहिए। चीखेंगे–चिल्लाएंगे तो हमें सत्ता मिल भी जाएगी, लेकिन ज्ञान के बिना उसे पाना व्यर्थ है। अस्पृश्यों की बहुसंख्या से कुछ नहीं होने वाला है। स्वराज को भोगने के लिए योग्यता, काबीलियत भी चाहिए। अन्य समाज से हमारी स्थिति अलग है। ऐसा जातिभेद अन्य समाज में भी है, लेकिन हममें एक विशेष, नमूना उदाहरणस्वरूप करना गुणभेद भी है।

जातिभेद और गुणभेद समानांतर हैं। आज भी वे पॅरलल हैं। अन्य किसी भी देश में इस तरह के हालात नहीं हैं। अनादिकाल से हमने आनुवंशिक गुणों को मान्य कर उसे स्वीकारा है, आज हम उसी के बुरे परिणामों को भुगत रहे हैं। अस्पृश्य कितना भी विद्वान रहे, वह दूर ही रहता है और अज्ञानी ब्राह्मण ऊंची जगहों पर विराजमान होता है। आज तक यह केवल अज्ञान के कारण ही चलता आया है। अज्ञान न होता तो समता का संग्राम कब का छिड़ चुका होता। ब्राह्मण गुण से कनिष्ठ भले हो, जन्म से श्रेष्ठ होता है।

गुणभेदों में यह जो खाई है, उसे पाट दिया जाना चाहिए। उसके लिए शिक्षा का प्रसार होना चाहिए। हमें बहुत जागृत होने की जरूरत है। अवसर सुलभ होना और उसे हासिल कर लेना, यह हम पर निर्भर है। शिक्षा के अभाव में यह संभव नहीं हो पाता है। हमें खुद अपने अधिकारों को झपट लेने की, हां मैं झपट लेने की ही बात कर रहा हूं, कोशिश करनी चाहिए।

हमारा संघर्ष इंसानियत का है। इसके लिए आखिर हमें सत्याग्रह करना पड़ेगा और वह अंतिम उपाय होता है। स्वदेशी और विदेशी दोनों की तरफ से जिस प्रकार के अन्याय होंगे उनके अनुसार ही उनके विरोध के उपाय किए जाने चाहिएं। पुराणकाल में कौरवों और पांडवों के बीच इतना बड़ा युद्ध क्यों हुआ? केवल राज्य के लिए। अस्पृश्यता समग्र समाज का कल्याण होने ना देगी। वह समाज कल्याण की राह के अडंगे की तरह है। हालांकि हमें अपने स्तर में बढ़ोतरी कर सुधार लाना होगा। पक्की तरह ध्यान में रखें कि अपनी मुक्ति, प्रगति, विकास, उन्नति की लड़ाई हमें खुद कभी ना कभी तो करनी ही होगी। स्पृश्य जनता का दुरभिमान कैसे जाएगा? वे पुराण मताभिमानी होंगे ही। आखिर में मैं बस इतना ही कहना चाहता हूं कि आत्मनिर्भरता का मार्ग अपनाइए। आपको इसी हाल में रखने की कार्रवाई बेहद पूर्वनियोजित है। आपका वह महार की वतन, उसके अभिमान के कारण आप कितने परावलंबी हो गए हैं इसका क्या आपको कहां अहसास है? इसी महारकी वतन के कारण महार गांव में हमेशा–हमेशा के लिए कैद हो गया है।

महार यानी सरकारी भिखारी। वतनों के कारण हर गांवों को ऐसे सरकारी भिखारी मिले हैं। भिखारी बनाने वाले वतन के चक्कर में महार को बंधे नहीं रहना चाहिए, उन्हें अपने बाहुबल के सहारे संघर्ष करना होगा। शिक्षा पाने के लिए उन्हें स्वयं खुद की मदद करनी होगी। अन्य कोई उनकी मदद नहीं करेंगे। कुछ उदारमन लोग अवश्य उनकी मदद करेंगे।

लेकिन इस प्रकार उदारमन चूहों से पाई हुई मदद केवल उधारी है। महार लोग गरीब होंगे लेकिन क्या वे संख्या में कम हैं? वे अपनी ही मदद लें, उसे एकत्रित करें तो शिक्षा का सवाल अपने आप हल हो जाएगा। धारवाड़ जिले में एक लाख महार लोग होंगे। हरेक अगर एक रुपए का चंदा भी देगा तो एक लाख रुपयों का फंड इकट्ठा हो जाएगा। और उसके सहारे सहजता से सौ बच्चों का बोर्डिंग चलेगा। फिलहाल यहां एक बोर्डिंग की स्थापना की गई है। सरकारी छात्रावास, आश्रम है। ठीक–ठाक, काम चलाऊ ग्रॉंट मिलती है। हर छात्र के पीछे दस रुपए मिलते हैं। अन्य जगहों पर मदद नहीं दी जाती। फिलहाल पंद्रह बच्चों की ही व्यवस्था हो पाई

है। लड़ झगड़ कर इस संख्या को दुगुना किया जा सकता है। लेकिन इससे अच्छा है कि आप खुद अपना इंतजाम करिए। फिलहाल इस बोर्डिंग का प्रबंधन हमारे पास है। हम मुंबई में और बोर्डिंग यहां। बीच में बहुत ज्यादा अंतर, दूरी है। प्रबंधन जैसा होना चाहिए, वैसा नहीं हो पाता है। इसके लिए एक कमेटी की स्थापना करें और अपनी व्यवस्था आप खुद करें। सोचिए कि, धारवाड़ जिले में अस्पृश्य छात्रों के लिए जिस प्रकार का प्रबंध उपलब्ध है, उससे कहीं अधिक बेहतर प्रबंध होना चाहिए, और वह आप खुद करवा सकते हैं।"

इस प्रकार, डॉ. अम्बेडकर ने अपने बंधुओं को सलाह दी और अध्यक्ष स्थान देने के लिए उन्हें धन्यवाद दिया और तालियों की गड़गड़ाहट में अपना भाषण पूरा किया।

33
अखंड भारत हमारा ध्येय है

साइमन कमीशन के प्रस्तावों के बारे में अस्पृश्य समाज की प्रतिक्रिया जान लेने और उनके राजनीतिक हकों के लिए भविष्य की नीति तय करने की जरूरत थी। इसके अलावा विलायत में होने वाले गोलमेज सम्मेलन में अस्पृश्य वर्ग के प्रतिनिधि का जाना भी उतना ही महत्वपूर्ण था। क्योंकि हिंदुस्तान के भावी संविधान की योजना उस सम्मेलन में बनाई जाने वाली थी। और देश का भविष्य तय करते समय इस देश के सात करोड़ जनसंख्या वाले अस्पृश्य वर्ग का राजनीतिक भविष्य उसी समाज के प्रतिनिधियों को तय करने का अधिकार मिलना जरूरी था। उसके लिए अखिल भारतीय स्तर पर अधिवेशन का आयोजन जरूरी हो गया था। इस तरह का अधिवेशन लेने का, आयोजित करने का सम्मान पहली बार नागपुर को मिला।

नागपुर के स्थानीय नेताओं ने ही निर्णय लिया कि अखिल भारतीय अधिवेशन नागपुर में आयोजित किया जाए। इस निर्णय के अनुसार दशरथ पाटील और लक्ष्मणराव ओगले एमएलसी मुंबई जाकर डॉ. अम्बेडकर से मिले। इस मुलाकात में अखिल भारतीय दलित वर्ग की परिषद डॉ अम्बेडकर की अध्यक्षता में नागपुर में लेना तय हुआ। नागपुर में 8 और 9 अगस्त, 1930 को होने वाला अखिल भारतीय डिप्रेस्ड क्लासेस कॉंग्रेस का यह अधिवेशन अस्पृश्य वर्ग के उत्थान के आंदोलन का इतने व्यापक स्तर पर आयोजित किया गया पहला ही प्रातिनिधिक आयोजन था।

स्वागत समिति के पदाधिकारी

स्वागताध्यक्ष टी. सी. साखरे, नागपुर, उपाध्यक्ष दशरथ लक्ष्मण पाटील, बेला, खजिनदार विश्रामजी सवाईथूल, नागपूर, सेक्रेटरीज एल. के. ओगले, एम.एल.सी, अमरावती, हरदास एल. एन., कामठी, पी. के. भटकर, अमरावती, शामराव जी. रहाटे, वडगाव, एच. डी. बेहाडे (मातंग नेता) नागपूर।[1]

अखिल भारतीय दलित कॉंग्रेस परिषद के लिए किस–किस को आमंत्रित किया जाए, बुलाया जाए और परिषद किस की अध्यक्षता में हो, इसके लिए परिषद के सचिव हरदास एल. एन. ने पुणे के शिवराम जानबा कांबले को खत लिखा था। खत और शिवराम जानबा कांबले द्वारा उस खत का दिया गया जवाब आगे दे रहे हैं –

शिवराम जानबा कांबले द्वारा इस खत का दिया गया जवाब –

1. "विदर्भ (वर्हाड) के दलित आन्दोलन का इतिहास" – लेखक : हि.ल. कोसारे, पृष्ठ 147–148

अखिल भारतीय डिप्रेस्ड क्लासेस परिषद

कार्यालय
विश्राम हॉल
लकड़गंज,
सर्कल नं. 1510
नागपूर शहर

1 फरवरी, 1930
स्वागत समिति अध्यक्ष के.जी. नन्दागवली
उपाध्यक्ष – डी.एल. पाटील
कोषाध्यक्ष – वी.एस. सवाईभूल
सचिव – एल.के. ओगले, एम.एम.सी., हरदास एल.एन.,
पी.के. भटकर, एच.डी. बेहाडे
प्रतिष्ठा में,
मिस्टर एम.जे. काम्बले, पुना
प्रिय महोदय,

आप लंदन में होने वाली राऊण्ड टेबल कांफ्रेंस की जानकारी से अवगत होंगे, जिसमें भारत के आगामी राजनीतिक संविधान पर चर्चा होनी है। मुझे पूर्ण विश्वास है कि आप इस बात से सहमत होंगे कि डिप्रेस्ड क्लास नागरिक अधिकार की सुरक्षा और उनके हितों के प्रावधानों के लिए इसमें उपस्थिति बेहद जरूरी है। और इस गंभीर विषय पर हमारे समाज के लोगों का ध्यान केन्द्रित होना आवश्यक है। भारत के विभिन्न प्रान्तों के लोगों ने इस सम्बन्ध में विचार–विमर्श हेतु हमें डॉ. बी.आर. अम्बेडकर एम.पी.एच.डी, डी.एस.सी., बार–टाट–लॉ, एम.एल.सी. बॉम्बे के सलाह–मशविरे, मार्गदर्शन के लिए सम्पर्क में हैं, समापन कमेटी की रिपोर्ट से सम्बन्धित उनके विचारों को अखिल भारतीय डिप्रेस्ड क्लासेस परिषद के नागपुर में होने जा रहे सम्मेलन के माध्यम से लोगों के विचारार्थ रखे जाते हैं।

हम आपके आभारी होंगे यदि आप 15 फरवरी के पूर्व अपने इस सम्बन्ध में सम्मेलन लेने के सम्बन्ध में आपके विचार व राय से अवगत कराएं साथ ही सम्मेलन के अध्यक्ष किसे बनाया जाए, उसकी जानकारी देकर अनुकम्पा करें।

धन्यवाद।
हम आपके आभारी रहेंगे।

आपका
हरदास एल.एन.
सेक्रेटरी ए.आई. डी.सी.
नागपुर

"The All India Depressed Classes Congress"

Office

Visram Hall

Lakadganj Cir. 1510

NAGPU

Dated: the 1st Feb.; 1930

To,

Mr. S.J. Kamble

Poona

Dear Sir,

You are aware of the proposed Round Table conference....

We shall feel dlighed, if you kindly fovour us before the 15th Feb...

Thanking you

Yours

Hardas

Secretary A.I.D.C.

C.C. Nagpur

कामटीपूरा, 5वां रस्ता

कैम्प पूना

फरवरी 1930

प्रतिष्ठा में

सैक्रेटरी

ऑल इण्डिया डिप्रेस्ड क्लासेस काँग्रेस

नागपूर

प्रिय महोदय,

आपको 1 फरवरी, 1930 के पत्र की प्राप्ति की सूचना में कहना चाहूंगा कि आप पत्र को पढ़कर बेहद खुश हुई कि आप लोग नागपुर में A.I.D.C. की ओर से सम्मेलन का आयोजन करने जा रहे हैं।

इस कांफ्रेंस के लिए योग्य व्यक्ति के होने के कारण डॉ. अम्बेडकर का नाम सुझाना चाहता हूं। और इसी के साथ ही डिप्रेस्ड क्लास का प्रतिनिधित्व करने के योग्य प्रतिनिधि के रूप में राऊण्ड टेबल कांफ्रेंस में डॉ. अम्बेडकर योग्य प्रतिनिधि हैं।

मैं सम्मेलन को सफलतापूर्वक सम्पन्न होने की तथा हामरे छः करोड़ समाज बंधुओं के उत्थान के कार्य की सफलता की आशा व्यक्त करता हूं।

आपका

शिवराम जानबा काम्बले

Kamtipura, 5th Street,
Camp Poora
February 1930

To,
Secretary
A.I.D.C.G.
Nagpur
Dear Sir,

I am in receipt .....
With refort.....

Wishing every success in your

Your Sincerely,
S.J. Kamble

अखिल भारतीय डिप्रेस्ड क्लासेस काँग्रेस

कार्यालय
विश्राम हॉल
नागपुर सिटी,
दिनांक 20 जून, 1930

सर्कुलर नं. 5 (ज्ञापन नं. 5)
संदर्भ नं.:
प्रिय महोदय,

साइमन कमिशन की रिपोर्ट के सम्बन्ध में समाचार पत्रा पढ़कर ज्ञात हुआ है कि वह 20 जून 1930 को प्रकाशित होने जा रही है।

हम अपने समाज के पाठकों को साइमन कमिशन की रिपोर्ट का अध्ययन करने हेतु समुचित समय देकर इस सम्बन्ध सम्मेलन का आयोजन करने सम्बन्धी 24 मई 1930 की मीटिंग में तय किया कि सम्मेलन 12 और 13 जुलाई 1930 को आयोजित किया जाए।

इस सम्बन्ध में डॉ. अम्बेडकर से सम्पर्क करने पर उन्होंने इस सम्मेलन के आयोजन की तारीख पर पुनर्विचार करने को कहा है।
इस कार्य के लिए ......

यह भी तय किया गया है कि इस सम्मेलन में युवा शिक्षा तथा महिलाओं से सम्बन्धित कांफ्रेंस भी आयोजित की जाएं।

भारत के सभी डिप्रेस्ड कांफ्रेंस के सभी लोगों से निवेदन है कि वे इस कांफ्रेंस के लिए अपने डेलीगेट्स (प्रतिनिधि) भेजें। प्रतिनिधियों के नाम, अपने सम्पर्क प्रस्ताव का प्रारूप, सेक्रेटरी के नाम – विश्राम हॉल, नागपुर के पते पर भेजें।

नागपुर
20 जून, 1930
आपका
हरदास एल.एन.
सेक्रेटरी

The All India Depressed Classes Congress
Dated 20th June, 1930
Circular No. 5

Dear Sir,

As it was notification....

But we are asked by Dr. Ambedkar..................changed.

For this purpose.................the session.

It has also been decided by the................for them.

Depressed Classed all over India are earnestly requested to send their delegates to make the Congress............Nagpur city.

I remain

Your Most Sincrely
Hardas L.Q.
Secretary

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर पत्राचार द्वारा सम्पादक – वी.जी. सुखाड़े
खण्ड I, पृष्ठ – 83 और 84

दिनांक 8 और 9 अगस्त, 1930 को परिषद का आयोजन करना तय हुआ। उसके बाद सचिव हरदास एल एन ने जो पत्रक प्रकाशित किया वह इस प्रकार था–

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के रहने का इंतजाम राज्यपाल भवन के पडोस में रहने वाले अब्दुलभाई खाकरा के बंगले में की गई थी। लेकिन डॉ. अम्बेडकर ने अकेले अलग रहने से इनकार किया। अधिवेशन में आए अन्य नेताओं के साथ ही वे रहे। इन नेताओं के लिए कॉटन मार्केट में शामियाने लगाए गए थे। वहीं उनके रहने का भी इंतजाम किया गया था। अधिवेशन व्यंकटेश थिएटर (बाद में उसका नाम श्याम थिएटर हुआ) में संपन्न हुआ।

इस परिषद के साथ सामाजिक, महिला, युवक और शिक्षा के बारे में भी अधिवेशन आयोजित किए गए थे और ये कार्यक्रम 10 अगस्त को सम्पन्न हुए। सामाजिक परिषद के अध्यक्ष पां. ना. राजभोज और स्वागताध्यक्ष दशरथ पाटील थे। महिला परिषद पुणे के सौभाग्यवती गुणाबाई गडेकर की अध्यक्षता में हुई महिला परिषद की स्वागताध्यक्षा थीं श्रीमति शेवंताबाई ओगले, अमरावती और सचिव थीं श्रीमति तुलसाबाई बनसोडे पाटील, नागपुर, श्रीमती जाईबाई चौधरी, नागपूर और श्रीमती काशीबाई मांडवघरे अकोला। युवकों की परिषद के अध्यक्ष थे लखनौ के एडवोकेट शिवदयाल सिंह चौरसिया और स्वागताध्यक्ष की जिम्मेदारी संभाली थी राघवेंद्रराव बोरकर जी ने।

दलित कांग्रेस अधिवेशन का महत्त्व

1930 में नागपुर में आयोजित अखिल भारतीय दलित कॉंग्रेस परिषद का दलित वर्ग के उत्थान के आंदोलन के इतिहास में खास राजनीतिक ऐतिहासिक महत्व है। पहली बात यह है कि भारत का समूचा अस्पृश्य समाज एक छत्र के नीचे इकट्ठे होकर अखिल भारतीय स्तर पर सम्मेलन आयोजित किया गया। दलित कॉंग्रेस का यह पहला अधिवेशन था। दूसरी बात, अस्पृश्य वर्ग के नेताओं ने डॉ. अम्बेडकर का नेतृत्व पहली बारी मान कर अपनी राजनीतिक मांगें पूरे भारत के स्तर पर एक स्वर में पहली बार ही सामने रखीं। तीसरी बात, विलायत में होने वाले गोलमेज सम्मेलन के लिए अस्पृश्य समाज के एकमात्र नेता के रूप में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को एक राय से चुना गया। चौथी बात दलित वर्ग के अखिल भारतीय संगठन की स्थापना की गई और पांचवी बात इस परिषद में बहिष्कृत वर्ग के भावी राजनीतिक जीवन की उद्देश्य और नीतियों सहित योजनाओं की नींव रखी गई। संक्षेप में इंसानियत से महरूम इस बहिष्कृत भारत के आजादी के आंदोलन के इतिहास का पहला पन्ना दलित कॉंग्रेस के अधिवेशन के साथ लिखा गया।

समाज का कोटि–कोटि धन्यवाद

जिन नेताओं ने, सामाजिक कार्यकर्त्ताओं ने और सेवकों ने दलित काँग्रेस की बागडोर सम्हाली और बहिष्कृत वर्ग की राजनीतिक क्रांति की पहले–पहल शुरुआत की और सामाजिक जीवन में आमूलाग्र बदलाव लाने के लिए आगे बढ़ाए गए संगठित कदमों के दृढ़ संकल्पों के कार्य के, इस समाज पर अनंत उपकार हैं। 1930 में डॉ. अम्बेडकर के प्रभावी नेतृत्व में आत्मोद्धार के इस आंदोलन का भारतीय सरकार पर पहला संगठित कदम दलित काँग्रेस ने पहली बार इस अधिवेशन के जरिए उठाया।

अधिवेशन में पारित प्रस्ताव

8 और 9 अगस्त, 1930 में नागपुर में हुई अखिल भारतीय डिप्रेस्ड क्लासेस की कॉग्रेस में जो प्रस्ताव रखे गए थे वे इस प्रकार हैं –

1. अखिल भारतीय डिप्रेस्ड क्लासेस कांफ्रेंस की ओर से साफ तौर पर इस बात की घोषणा की जाती है कि भारतीय राष्ट्रीय काँग्रेस द्वारा संपूर्ण आजादी के जिस विचार की घोषणा की गई है, वह भारत के हित संबंधों के लिए घातक और नुकसानदेह साबित होने वाली है। इसीलिए राष्ट्रीय काँग्रेस की संपूर्ण आजादी की मांग का हम बिल्कुल समर्थन नहीं करते। इस काँग्रेस के अनुसार उपनिवेश का स्वराज ही भारत की स्थितियों के अनुकूल सर्वोत्तम उद्देश्य हो सकता है।

2. उपनिवेशिक स्वराज तुरंत प्राप्त हो, इस उद्देश्य से सत्ता का हस्तांतरण करते हुए जिम्मेदारी से भरे जिन अधिकारों का तुरंत सत्तांतर करना राज्य के कामकाज के दृष्टिकोण से अव्यावहारिक होता है उन मामलों को छोड़ कर अन्य सभी जिम्मेदारीपूर्ण अधिकारों संबंधी अधिसत्ता प्रदान करने के लिए इस काँग्रेस का विरोध नहीं है। लेकिन ऐसा करते हुए अस्पृश्य वर्गों के हितसंबंधों की सुरक्षा के लिए हिंदुस्तान के संविधान में जिन बातों को समाविष्ट किया जाना चाहिए वे इस प्रकार हैं –

    (अ) देश के सभी केंद्रीय और प्रांतिक विधिमंडलों में अस्पृश्यों को योग्य प्रतिनिधित्व दिया जाए।

    (ब) सरकारी नौकरियों में सही अनुपात में आरक्षित जगहें हों।

3. स्थानीय स्वराज संस्थाओं में अस्पृश्य वर्ग की शिक्षा के बारे में, उनके अधिकार और हितसंबंधों की यदि उपेक्षा हो रही हो तो उस संदर्भ में भारत मंत्री से (सेक्रेटरी ऑफ स्टेट) से फरियाद करने का अधिकार हो और शिक्षा के इस

मसले पर अंदाजपत्रक (बजट) में अथवा कानून में प्रबंध करने के बारे में भारत मंत्री द्वारा रखी गई सूचना केंद्रीय और प्रांतों के मंत्रिमंडलों पर बंधनकारी हों।

4. सनातनी सवर्ण वर्ग द्वारा अस्पृश्य वर्ग के लोगों के साथ किए जाने वाले बर्बरतापूर्ण व्यवहार में, वे कोई ठोस बदलाव नहीं ला पाए हैं, इसलिए अस्पृश्य वर्ग का भरोसा वे गंवा बैठे हैं। उसी तरह हिंदुस्तान के भावी संविधान में अस्पृश्य वर्ग को सुरक्षा संबंधी पक्का भरोसा दिलाने के लिए वे तैयार नहीं हैं। इसीलिए अस्पृश्य वर्ग को लगता है कि सबको मान्य हो ऐसा संविधान बनाते हुए उसमें इस देश की सामाजिक स्थितियों के बारे में सुयोग्य ढंग से सोचना भी जरूरी है और उसके लिए राज्य के संविधान में जरूरी प्रावधान केवल एक–दूसरे की सहमति से ही किए जा सकते हैं। सविनय अवज्ञा आंदोलन असल में दबाव की नीति होने के कारण शांतिपूर्ण सुलह की नीति से वह मेल नहीं खाता इसलिए यह परिषद सविनय अवज्ञा आंदोलन की नीति को मान्यता नहीं दे सकती। इसीलिए वह अस्पृश्यों को इस तरह के आंदोलन में हिस्सा न लेने की सलाह देती है।

5. यह परिषद इस बात को मानती है कि वर्तमान की राजनीतिक समस्या का संवैधानिक समाधान खोजने और उसे हल करने का गोलमेज सम्मेलन बेहतर मार्ग है। इसीलिए वह अस्पृश्यों को उनके हित में उपदेश भी देती है कि वे उसमें शामिल हों। और परिषद सरकार को यह सुझाना चाहती है कि गोलमेज सम्मेलन पूरी तरह से सफल बनाने के लिए सरकार ने सभी पक्षों को उसमें हिस्सा लेने के लिए, उन्हें योग्य प्रतिनिधित्व देकर आमंत्रित करना चाहिए।

6. देश के विधिमंडल के लिए अस्पृश्य वर्ग के प्रतिनिधि नियुक्त करने के इस तरीके का यह परिषद पुरजोर विरोध कर रही है। अस्पृश्य वर्ग के प्रतिनिधि उसी समाज द्वारा चुनाव के जरिए चुने जाएं यह हमारी मांग है। अस्पृश्य वर्ग के नियुक्त प्रतिनिधि अन्य वर्ग के प्रतिनिधियों द्वारा चुने जाएं और उन्हें गवर्नर का प्रमाणपत्र प्राप्त हो इस साइमन कमिशन द्वारा रखी गई घातक सिफारिशों का निषेध करती है।

7. अलग चुनाव क्षेत्र की उपयुक्तता के बारे में पूरा भरोसा होने के बावजूद अस्पृश्य वर्ग के प्रतिनिधित्व के लिए आरक्षित जगहों के साथ संयुक्त चुनाव क्षेत्र के सिद्धांत को मान्यता देने के लिए यह परिषद तैयार है। लेकिन उसके लिए वयस्क मतदान पद्धति को अपनाना जरूरी है।

8. जिन अस्पृश्य वर्गों को सामाजिक विषमता की अत्यंत निकृष्ट स्थितियों में जीवन बिताना पड़ रहा है, उनकी तुलना में अन्य अल्पसंख्य वर्ग कहीं अधिक बेहतर सुखद स्थिति में है। इसके बावजूद साइमन कमिशन द्वारा अस्पृश्य वर्ग को वाजवी प्रतिनिधित्व मिलने की मांग को कमतर आंक कर उनके हकों को नजरंदाज किया गया और अन्य अल्पसंख्यक वर्गों को विशेष प्रतिनिधित्व बहाल किया गया। परिषद इस बाबत भी खेद व्यक्त करती है। यह परिषद ठोस रूप से चाहती है कि सभी अल्पसंख्यकों के लिए समानता का सिद्धांत समान स्तर पर लागू किया जाए। परिषद की मांग है कि अस्पृश्य वर्ग को उनका सामाजिक पिछड़ापन ध्यान में लेकर उनकी जनसंख्या के अनुपात में मिलने वाले प्रतिनिधित्व के अलावा अधिक जगहें दी जाएं।

9. असेंब्ली और स्टेट कौंसिल में अश्पृश्य वर्ग के प्रतिनिधि उसी वर्ग के लोगों द्वारा चुने जाएं इसके लिए इस अधिवेशन द्वारा परिषद अप्रत्यक्ष चुनावों की मांग करती है लेकिन उसमें अस्पृश्य वर्ग का यथायोग्य प्रतिनिधित्व का हक मान लिया जाए यह मांग रखती है।

10. साइमन कमीशन द्वारा कौंसिल ऑफ स्टेट में अस्पृश्य वर्ग के प्रतिनिधित्व की कोई व्यवस्था नहीं की गई है। इस बारे में यह परिषद खेद जताती है और मांग करती है, कि कौंसिल ऑफ स्टेट में अस्पृश्य वर्ग का सुयोग्य प्रतिनिधित्व की बात मान ली जाए।

11. असेंब्ली की पुनर्रचना करते समय साइमन कमिशन ने जो खाका तैयार किया है उसकी उपयुक्तता ध्यान में रखते हुए इस परिषद की ये राय है कि वह खाका असेंब्ली से अधिक स्टेट कौंसिल के लिए अधिक उपयुक्त है। इस बात को ध्यान में रखते हुए और कौंसिल ऑफ स्टेट जनतंत्र के अधिक अनुकूल बनाने के लिए उसमें जरूरी संविधानात्मक बदलाव की जरूरत को ध्यान में रखते हुए इस परिषद की ये राय है कि एसेंब्ली के लिए साइमन कमीशन ने जो खाका तैयार किया है वह स्टेट कौंसिल के लिए लागू किया जाए और एसेंब्ली का गठन प्रत्यक्ष चुनावों द्वारा किया जाए।

12. साइमन कमिशन ने हिंदुस्तान की सेना के बारे में जो योजना सुझायी है, वह इस परिषद को मंजूर नहीं। इस परिषद की राय में सेना भले आरक्षित विभाग हो, उसे हिंदुस्तान की सरकार के जिम्मेदारीपूर्ण अधिकार से हटाया नहीं जाना चाहिए।

13. इस परिषद को यकीन हो चला है कि हिंदुस्तान के अस्पृश्य वर्ग का एक केंद्रीय अखिल भारतीय संगठन होना जरूरी है। इस बात को ध्यान में रखते हुए यह परिषद कमेटी नियुक्त करती है और–

(अ) कमेटी अखिल भारतीय संगठन का संविधान बना कर परिषद के अगले अधिवेशन के सामने रखे। और

(ब) यह कमेटी परिषद की वर्किंग कमेटी के रूप में आगामी वर्ष के लिए काम करेगी और अस्पृश्य वर्ग से जुड़े सभी सवालों के बारे में और देश की हालिया राजनीतिक स्थितियों में पैदा होने वाली समस्याओं के बारे में सोचेगी।[1]

अध्यक्ष का भाषण

इस अधिवेशन में दिनांक 8 अगस्त, 1930 के दिन अध्यक्ष पद से डॉ. अम्बेडकर ने जो भाषण दिया था, वह काफी महत्त्वपूर्ण था. उन्होंने अपने भाषण में कहा था –

"सज्जनों,

आज की सभा का अध्यक्ष पद स्वीकारने का आमंत्रण आपने मुझे दिया है इस बात की मुझे खुशी है। आपने यह सम्मान मुझे देने के लिए मैं आपका आभार व्यक्त करता हूं। आपने मुझ पर जो भरोसा किया है उसकी अहमियत मैं जानता हूं। हालांकि, इस भरोसे के साथ आपने जो जिम्मेदारी मुझे सौंपी है, वह बेहद कठिन है, और नितांत असामान्य स्वरूप की है, उसे मैंने यदि टालने की कोशिश की होती, तो ज्यादा समझदारी होती ऐसा मुझे अब लग रहा है। इसके बावजूद इस जिम्मेदारी को उठाने के लिए अगर मैंने हामी भरी तो केवल इसलिए कि फिलहाल जो आपात समय चल रहा है उसमें अपने समाज के भाई–बहनों के हित के लिए हर किसी को अपनी शक्ति के अनुसार अपनी सेवा उपलब्ध करा देनी चाहिए, ऐसा मुझे पक्की तरह लगता है। हालांकि इस जिम्मेदारी को पूरा करने के लिए आप लोगों से प्राप्त सहयोग और मदद में किसी तरह की कमी नहीं आएगी और यहां इकट्ठा हुए अपने समाज के नेता अपने समृद्ध अनुभव का और विचारशील निर्णय का लाभ मुझे देंगे इसका मुझे अहसास और विश्वास है और इसीलिए मैंने यह जिम्मेदारी स्वीकारी है।

(अ) भारत के स्वराज का मसला

1. क्या भारत के लोगों का स्वशासित, एकजुट समाज बन सकता है? भारत के क्षितिज पर आज यह गंभीर समस्या का सवाल बेहद विशाल आकार धारण कर झूले–सा झूल रहा है। इस प्रश्न के समाधान के बारे में दलित समाज की क्या राय है, यह जानने के लिए ही हम आज यहां इकट्ठा हुए हैं। इस सवाल ने भारतीय

1. विदर्भ के दलित आंदोलन का इतिहास : हि. ल. कोसारे पृ. 148, 149, 169 और 171

लोगों के बीच ही नहीं वरन् पूरे अंग्रेज राज में और पूरी दुनिया में हलचल मचा रखी है। इस सवाल के निपटारे के लिए हमारे जवाब पर ही बड़े पैमाने पर इस देश का भविष्य निर्भर करता है। भारतीय जनता के स्वयंशासित एक संघ समाज के निर्माण का हार्दिक समर्थन कर हम इसे गति प्रदान कर सकते हैं, या इसमें बाधा डाल, विरोध कर उसकी राह में रोड़े भी अटका सकते हैं। कुल मिला कर वह हमारी ही राय पर आधारित है। इसीलिए मुझे लगता है कि यह निर्णायक मसला आप ढिलाई से सुलझा नहीं सकते। उसके सभी पहलुओं के बारे में ठीक तरह से सोच–समझ कर ही बाद में उचित निर्णय लिया जाना चाहिए। इस बात का डर अपने मन में बिल्कुल न रखें कि मेरा रुझान, मत अगर अन्यों से अलग होगा तो क्या होगा? आप बस इस बात का खयाल रखें कि, अपना निर्णय आप स्वतंत्र सोच के साथ, पूरी श्रद्धापूर्वक विवेक से, सम्यक दृष्टि से ले रहे हैं।

2. इस सवाल के दो पहलू हैं, इसका आप लोगों को अहसास तो है ही। बताया जाता है कि भारत की जनता विभिन्न मानववंश से बनी हुई है। वे कहते हैं, यहां के लोग परस्पर विरोधी रूढियों एवं परंपराओं वाले, रीति–रिवाजों वाले तथा विभिन्न सिद्धांतों वाले विभिन्न धर्मों का पालन, उपासना करते हैं। वे अलग–अलग भाषाएं बोलते हैं और परस्परविरोधी सामाजिक रूढ़ियों के कारण तथा विभिन्न हितसंबंधों के कारण यहां की जनता में मनमुटाव और आपसी विद्वेष है। कई बार यह प्रश्न पूछा जाता है कि, इस तरह का भिन्न वंश वाले लोगों का समूह स्वयंशासित समाज के रूप में सफलता कैसे पाएगा? असल में, यह एक कठोर वास्तविकता है और इस बात को कोई भी सयाना व्यक्ति नजरंदाज नहीं कर सकता कि स्वराज पर इस बात का क्या असर होगा? हालांकि, इन कटु सत्यों को मान लेने के बाद भी उनसे क्या निष्कर्ष निकलते हैं?

सज्जनों, इस मामले में आप अपनी राय व्यक्त करें इससे पहले ऐसे ही कुछ और कटु सत्यों की ओर मैं आपका ध्यान दिलाना चाहता हूं। लैटिविया, रूमानिया, लिथिआनिया, युगोस्लाविया, इस्टोनिया और झेकोस्लोवाकिया जैसे देशों में क्या स्थितियां हैं इस पर भी सोचिए। ये सारे नए राज्य हैं, 'स्वयंशासन सिद्धांत' की स्थापना के लिए सौगंध खाकर लड़े गए 1914 के महायुद्ध के बाद अस्तित्व में आए हैं। इन नए–नए अस्तित्व में आए राष्ट्र स्वयंशासित, सार्वभौम, आजाद तथा अंतर्गत और बाह्य निर्णयों के बारे में सर्वश्रेष्ठ अधिकारी राष्ट्र हैं। इन राष्ट्रों की अंदरूनी सामाजिक स्थितियां कैसी हैं? सुन कर आपको शायद अचरज होगा कि भारत से अधिक नहीं सही वरन् वहां की स्थितियां भारत की स्थितियों की ही तरह बदतर हैं। लेटिविया में लेट, रशियन, ज्यू, जर्मन और अन्य लोग भी हैं। लिथिआनिया में लिथोनिअन, ज्यू, पोल, और रशियन तथा अन्य लोग भी बसे हुए हैं। युगोस्लाविया

में सर्ब, क्रोट, स्लाव्हन रूमानियन, हंगेरियन, अल्बेनियन, जर्मन और स्लाव लोग भी रहते हैं। इस्टोनिया में इस्टोनियन, रशियन, जर्मन और अन्य छोटे–छोटे गुटों के लोग हैं। चेकोस्लोवाकिया में जेक, जर्मन, मेगयर, रुथिनियन और अन्य लोग हैं। हंगरी में मेग्यर, जर्मन ओर स्लोवाक लोग हैं। वंश और भाषा की दृष्टि से अलग–अलग होने के बावजूद इन लोगों ने अपने राष्ट्र को शक्तिशाली राष्ट्र बनाए हैं। एक राष्ट्र के निर्माण के लिए इन विभिन्न वंशों के लोगों को जोड़ने के लिए इनके पास धार्मिक एकता का सहारा भी नहीं है। इनमें चार या पांच तरह के कैथोलिक पंथीय लोग आप पाएंगे। वहां रोमन कैथोलिक, ग्रीक कैथोलिक, जेकोस्लोवाक कैथोलिक पंथों के लोग हैं। उनके साथ ही साथ वहां एवेंजेलिन, ज्यू, प्रोटेस्टंट और अन्य छोटे–छोटे पंथों के कई लोग रहते हैं। इस बारे में गंभीरता से सोचिए। इन देशों में दिखाई देने वाली मानवी दुनिया क्या भारत की मानवी दुनिया में अधिक भिन्न वंशीय लोग और क्या अधिक भिन्नता की भीड़ हैं? यकीन के साथ मैं कह सकता हूं कि, नहीं हैं। भारत के बारे में आपका निर्णय यदि ईमानदार और स्वतंत्र हो, ऐसी आपकी इच्छा तो आपको इस यथार्थ पर ध्यान देना ही होगा।

सज्जनों, इस तुलना के परिणामस्वरूप एक सवाल उभरता है कि अगर लॅटिविया, लिथिओनिया, युगोस्लाविया, इस्टोनिया, जेकोस्लोवाकिया, हंगरी, और रुमानिया इन देशों में लोग भिन्न वंश, भाषा, धर्म और संस्कृति के होने के बावजूद वे एकजुट और स्वयंशासित राष्ट्र बन कर उभर सकते हैं, निर्वाह कर सकते हैं तो भारत इस प्रकार निर्वाह क्यों नहीं कर सकता? इसका क्या कोई जवाब है? मेरे पास इसका कोई जवाब नहीं है। अपने मित्रों में से यदि किसी के पास इसका सटीक जवाब हो तो मैं उसे सुनने के लिए बडा उत्सुक हूं।

3. स्वराज की सुविधा प्राप्त होने से पहले ही किसी राज्य के सभी परस्पर विरोधी घटक नष्ट होकर वह राज्य एक पूरी तरह एक संघ हो जाए, इस तरह के दुराग्रह पर कायम रहना मेरी राय में वास्तविक स्थिति को उलटे क्रम में देखना है। यह एक तरह से स्वयंशासन में एक राष्ट्रीयत्व की भावना निर्माण करने की जो शक्ति है उसे पूरी तरह नजरंदाज करना ही है। एक भाषा, एक धर्म और एक संस्कृति के सूत्र में बंधे राष्ट्र इस दुनिया में बहुत कम हैं। लेकिन भिन्न धर्म, भाषा और संस्कृति से भिन्न होने वाले जनसमूह राजनीतिक, भौगोलिक और ऐतिहासिक समानता के कारण एक होकर परिणामस्वरूप एकराष्ट्रीय जनता होने के कई उदाहरण मिलते हैं। ऐसे राष्ट्रों को अगर एक राष्ट्रीयत्व की कसौटी पर कसा जाता तो उन्हें कभी स्वयंशासन का ही मौका नहीं मिलता। इस बारे में जो भी कुछ बताया गया और जो कुछ किया गया उसे अगर गृहित मान लें तब भी कई राष्ट्रों को संगठित होने के लिए स्वयंशासन ही कारण बना है इस बात को भूल नहीं सकते। और वे राष्ट्र

स्वयंशासन के अभाव में पहले ही की तरह विभिन्न लोगों के समूहों के रूप में क्या नहीं रहे होते? जर्मन साम्राज्य द्वारा स्वयंशासन का नियम स्वीकार करना ही क्या जर्मनी के एक राष्ट्र होने का कारण नहीं बना? बवेरियन, प्रशियन, सैक्सन और अन्य अनेक विभिन्न जनसमूह एक राष्ट्र में अंतर्भूत होकर एक शासन के तहत नहीं आते तो क्या वे उसी स्थिति में नहीं होते जिस स्थिति में 1870 से पहले थे? विभिन्न वंशों के जनसमूहों को एक राष्ट्र में अंतर्भूत करने के लिए एक शासन कई बार एक उत्तम उपाय साबित हो सकता है। भारत के उदाहरण से भी क्या यही साबित नहीं होता? आज भारत में जो थोड़ी–सी एकता की, एक राष्ट्र की भावना दिखाई देती है वह अंग्रेजों के राज में एक सामान्य शासन के कारण ही उपजा है, क्या यह एक सामान्य बात नहीं है? ऐतिहासिक अथवा तार्किक नजरिए से भी देखें तो मुझे लगता है कि भारत की जनता की विभिन्नता भारत के स्वयंशासन के मार्ग में रोड़ा नहीं बन सकती। और, अगर आपका उद्देश्य है कि भारत एकराष्ट्र बने तो इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए स्वराज ही सबसे महत्वपूर्ण साधन बनेगा।

(ब) इस समस्या की शर्तें

4. भारत में जो जनसमूह विद्यमान हैं, उनके इस भिन्नता का क्या कुछ भी असर नहीं होने वाला हैं? स्वराज के संविधान का निर्माण करते हुए क्या हमें उसके बारे में कुछ भी नहीं सोचना चाहिए? आप मुझसे ये सवाल पूछेंगे इस बारे में मुझे बिल्कुल शक नहीं है। लेकिन बिना ना–नुकुर किए मैं इसका जवाब देता हूं कि, उस पर सोचना ही होगा। इस जनसमूह की भिन्नता की स्थिति की ओर ध्यान दिए बगैर उसकी ओर अनदेखी कर शर्तों को ठुकराकर और मर्यादा को त्यागकर भारत की स्वतंत्रता की दंभी कोशिशें करते रहने की कांग्रेस वालों की हटेली मानसिकता है। सज्जनों, यदि संविधान तैयार करने का सोचा तो इन हालातों में शासन की शक्ति किसके हाथ जा सकती है? क्या आपको ऐसा लगता है कि सत्ता की बागडोर अल्पसंख्यकों के हाथों में दी जाए? या निम्न वर्णों के हाथों में दी जाए? मुझे तो अगर किसी बात का यकीन है तो सिर्फ इस बात का कि, भारतीय समाज की वास्तविक स्थिति पर ध्यान न दिया जाए तो भारत के भावी स्वराज के शासन की बागडोर उच्च शिक्षाप्राप्त, प्रतिष्ठित, अमीर और महत्वाकांक्षी लोगों के ही हाथ में चली जाएगी। यानी कि संपत्ति, शिक्षा और सामाजिक दर्जा जिन्हें प्राप्त हैं उन सामंतों के हाथों में ये सारे सूत्र चले जाएंगे। जीवन के अन्य क्षेत्रों की ही तरह राजनीति में भी शक्तिशाली लोगों को ही विजय प्राप्त होती रहती है। शिक्षा और संपत्ति की शक्ति सामंतों के इस वर्ग की सहायक बनेंगी। लेकिन अपनी राजनीतिक हिस्सेदारी के लिए दुर्बल समाज घटकों को सामंतों के गुट को सहायक होने वाली इन शक्तियों के खिलाफ लडना

ही काफी नहीं होगा। ऊपरी तौर पर अत्यंत सूक्ष्म दिखाई देने वाली लेकिन काफी प्रभावकारी एक और शक्ति भी है जो उनके सामाजिक दर्जे में शामिल है। सामाजिक रचना के तय सांचे में योग्यता या गुणवत्ता का कोई स्थान नहीं। भारत में केवल जाति को महत्व है, जाति संबंधी भावनाएं पुरजोर हैं, जो अपने से अलग जाति के लोगों से भिड़ने के लिए उकसाती रहती हैं। ज्यादातर जातियों के मन में यह भावना कार्यरत होती है इसलिए अल्पसंख्यक जातियों के लिए वे भयंकर रोड़े पैदा करेंगे और राज्य शासन के दरवाजे उनके लिए शायद हमेशा के लिए बंद कर देंगे। ऐसी सामाजिक स्थितियों की कार्यवाही का भयंकर असर जाहिर है कि दलित वर्ग पर होगा। आपको इस बात का अहसास तो होगा ही कि हिंदू धर्म के अनुसार भारत में जातियों की रचना बढ़ते क्रम में आदर की तथा उतरते क्रम में तिरस्कारपूर्ण है। दर्जे के इस जन्मजात ठप्पे के परिणामस्वरूप निम्न जाति के लोगों के मन में उच्च जाति के उम्मीदवार को ही उचित समझने, उसे ही पसंद करने की भावना जागृत होती है। इस मानसिक स्थिति का दलित वर्ग की शासन सत्ता के लिए किए जाने वाले संवैधानिक प्रयास पर बुरा असर पड़ेगा। अस्पृश्य उम्मीदवार के लिए एक भी वोट दिए बगैर स्पृश्य लोग अस्पृश्यों के कई वोट पा सकते हैं। और इसका असर ये होगा कि अस्पृश्य केवल चुनाव ही नहीं हारेंगे, वरन अनजाने ही अपने प्रतिस्पर्धियों के लिए सहायक बनेंगे। सामाजिक स्थितियों की तरफ ध्यान न देने के कारण अमीर, उच्च शिक्षित और उच्च वर्ण के लोगों का शासन सत्ता में सामंतवाद स्थापित हो रहा हो तो अपने ध्येय के साथ मिलते–जुलते सभी उपायों से उस पर पाबंदी लगाना अपना कर्त्तव्य है ऐसा मुझे लगता है। क्योंकि, केवल अपने मालिक के बदल जाने पर हमें बिल्कुल संतोष नहीं कर लेना चाहिए। किसी भी देश का दूसरे देश पर साम्राज्य होना ठीक नहीं। काँग्रेस वालों की यह राय मैं मानता हूं। लेकिन मुझे भी उन्हें साफ तौर पर यह बताने की आजादी है कि उनका कथ्य यहीं पूरा नहीं होता, बल्कि यह भी सच है कि किसी भी वर्ग का दूसरे वर्ग पर आधिपत्य ठीक नहीं। यूरोपीय नौकरशाही, लालफीताशाही और स्वदेशी सामंतवाद यह शब्द संपत्ति, शिक्षा और सामाजिक दर्जे के लिए मैं इस्तेमाल कर रहा हूं। इन दोनों में से कौन जनता का अच्छा खयाल रख सकता है? स्वदेशी सामंतों का कहना है कि जनता की हालत, उसकी आदतें, उनके सोचने और जीवन जीने के तरीके, जरूरतें और शिकायतें और सुलह करने के उनके तरीकों के बारे में ज्ञान उन्हें ब्रिटिश नौकरशाहों से अधिक है। हो भी सकता है, लेकिन स्वदेशी सामंतों के मन में अन्य वर्गों के बारे में पक्षपात की भावना है, साफतौर पर दिखाई देने वाला वंशाभिमान है। अपने जातिबंधुओं के प्रति पक्षपात करने की मानसिकता है। साथ ही, आम जनता के भविष्य के बारे में तय करने वाली शासन की सत्ता उनके हाथ में नहीं सौंपी जानी चाहिए, यह जो गंभीर आरोप उन पर लगाया जाता है, उससे वे सही सलामत बेगुनाह छूट सकते हैं, बरी

नहीं हो सकते हैं, ऐसा मुझे नहीं लगता। असल में कोई इससे भी आगे जाकर कह सकता है कि उनके और आम जनता के बीच जो गहरी खाई है उसके कारण उन्हें आम जनता की जरूरतें, आशा–आकांक्षाओं का ज्ञान होना संभव ही नहीं है। यही नहीं, यह वर्ग आम जनता की आशा–आकांक्षाओं का दुश्मन है। मैं इतना जोर देकर कह रहा हूं इसकी वजह यही है कि इस स्वदेशी सामंती वर्ग के हाथ में शासन की सत्ता सौंपी नहीं जा सकती। हजारों सालों से चली आ रही और आज भी जो लागू है उस जनतंत्र संबंधी आम जनता की धारणाओं से स्वराज की यह कोरी कल्पना कहीं मेल नहीं खाती है। हर व्यक्ति का मूल्य मानना यही आधुनिक जनतांत्रिक राज्य का मूलभूत तत्व है और हर व्यक्ति को केवल एक बार यह जीवन जीने का मौका मिलता है, इसलिए हर व्यक्ति को अपने गुणों का विकास करने का पूरा–पूरा मौका मिलना चाहिए। लेकिन, यह कहा नहीं जा सकता कि भारत के सामंतों को इनमें से कोई सिद्धांत मान्य हों। वे यही मानते हैं कि यह जीवन कई जीवनों की श्रृंखलाओं का एक हिस्सा भर है और वर्तमान जीवन की स्थिति उनके पूर्वजन्म के कर्मों का फल है। पूर्वजन्म में किए पाप–पुण्यों के हिसाब से ही व्यक्ति के वर्तमान जीवन का फल निश्चित होता है। किसी का चरित्र भले कितना भी उज्ज्वल क्यों न हो, भले उसने कितनी भी योग्यता हासिल क्यों न की हो, जन्म से प्राप्त उसकी सामाजिक स्थिति में कोई फेरबदल नहीं हो सकता। सामंतवाद का सिद्धांत है कि, जब कोई ब्राह्मण होकर जन्म पाता है तो वह जीवनपर्यंत ब्राह्मण के अलावा कुछ और नहीं हो सकता। और भले कुछ भी हो, परिया आखिर परिया ही रहता है। यह कोई गप्प नहीं, फिलहाल जो धर्ममत अस्तित्व में है वह यही है। ऐसी विचारधारा रखने वाले लोगों के हाथ में अनिर्बाध सत्ता सौंपना फांसी देने वाले के हाथ में छुरी भी थमाने जैसा है।

5. इस तरह की राय देने–अपनाने के कारण बेहद निर्दयता के साथ घोषित किया जाता है कि हम जातीयवादी और इस देश के दुश्मन हैं। हर देश में राज्य के शासन के सभी सूत्र पढ़े–लिखे वर्ग के सुपुर्द होते हैं और काँग्रेस वाले यह कहते नहीं थकते कि समर्थ शासन के लिए यह जरूरी भी है। भविष्य में कोई भी हमारे मालिक बनें लेकिन सामंतों के हाथों में सत्ता सौंपते हुए सबकी सोच यही है कि सामाजिक और राजनीतिक मसले दो अलग बातें हैं और उनका आपस में कोई संबंध नहीं है। सद्गृहस्थों, मानवी जीवन के लिए इस प्रकार की यांत्रिक कल्पनाओं के द्वारा मार्गच्युत करने वालों से आपको सावधान रहना होगा। इस तरह की चोर कोशिशों से आप अगर सावधान हों तो आप पाएंगे कि व्यक्ति को उसके स्वभाव से प्राप्त गुणों से केवल राजनीति के लिए अलग नहीं किया जा सकता। जब कोई व्यक्ति राजनीतिज्ञ के नाते आपका वोट मांगने आता है तब वह अपनी राय, हितसंबंध और अपना स्वभाव कोट की तरह खूंटी पर टांग कर बिल्कुल कोरा बन कर नहीं

आता। अपना व्यक्तित्व और अपनी प्रकृति सब साथ लेकर ही वह वोट मांगने आता हैं। सामंत वर्ग की बुद्धि देश की बहुत बड़ी संपदा है। लेकिन इस बुद्धि के सहारे उन्हें शासन का स्वयंसिद्ध अधिकार मिलना कोई जरूरी नहीं है। यह अधिकार उस व्यक्ति के चरित्र पर और बुद्धि का कैसे प्रयोग करेंगे इस बात पर आधारित होता है। हमें सिर्फ कार्यक्षमता पर ध्यान देना होगा। ॲडिसन कहता है कि, किसी की बुद्धि से समाज का किस तरह हित या अहित हो रहा है, इस बात की फिकर किए बगैर जब लोग उनकी योग्यता के बारे में आदर पालने लगें तो समाज के लिए इससे बड़ी घातक कोई और बात नहीं हो सकती। बुद्धि की इस प्राकृतिक देन का और कलात्मक योग्यता, सिद्धि का इस्तेमाल सद्गुणों के विकास के लिए हो रहा हो, तो सभ्यता को बाधा पहुंचाने वाली न हो, तो ही वह सिद्धी अमूल्य हो सकती है। हम जिनसे बातें करते हैं उनके मन का रुझान और उनकी मानसिकता का ठीक–ठीक पता चलने तक उनके बारे में अच्छी राय नहीं बना लेनी चाहिए। वरना उनके व्यक्तित्व के आकर्षण के कारण सोचने के बाद तिरस्कार करने योग्य व्यक्तियों के जाल में हम फंस सकते हैं। शासन सत्ता पाने के लिए एड़ी–चोटी का पसीना एक करने वाले अमीर लोगों के चरित्र के बारे में मैंने पहले ही विवरण दिया है। इसलिए अब और कुछ बताने की जरूरत नहीं है। लेकिन इन्ही अमीर–उमरावों के कारण इस देश में घट रही लज्जादायक घटनाओं को नजरंदाज नहीं किया जा सकता। इस देश में पांच से छह करोड़ लोग अस्पृश्यता का शाप भुगत रहे हैं। यह शाप और उनका दुख इतना भयानक है कि दुनिया में कहीं अन्यत्र इस तरह का दुख दिखाई नहीं देता। हर मानव के लिए आवश्यक मूलभूत अधिकारों से उन्हें वंचित किया गया है। समान अवसर की कमी के कारण उनकी हालत बेहद दीन–हीन हो गई है। अस्पृश्यों के अलावा इस देश में उतनी ही संख्या में आदिवासी और वन्य जनजातियों के लोग भी हैं। संस्कृति और सुधारों के उजाले में उन्हें ले आने के बजाए उन्हें पुरातन और जंगली स्थिति में छोड़ दिया गया है। स्वदेशी सामंतों द्वारा भूतकाल में जो सेवाभाव का अभाव और गैरजिम्मेदारी के ये जीते–जागते उदाहरण हैं। इन अमीर–उमरावों का बर्ताव भविष्य में पूरी तरह अलग रहेगा, इस पर भरोसा करने के लिए हमसे कहा जाता है। इस पर भरोसा करने लायक मैं भोला नहीं हूं क्योंकि आज के इस शैतान में रातों–रात बदलाव आया और वह भगवान का दूत बन गया ऐसा उदाहरण मैंने तो नहीं देखा है।

6. हमसे यह भी कहा जाता है कि, देश को राजनीतिक आजादी मिलने तक सामाजिक समस्याओं को हल करना आगे टाला जाना चाहिए। कोई भी समझदार व्यक्ति इस जाल में नहीं फंस सकता। किसी दीवानखाने में प्रवेश करने से पहले हर किसी को इस बात को जांच–परख कर लेनी चाहिए कि वह कहीं पिंजड़ा तो नहीं

है? हममें से हर कोई जानता हो या फिर हर किसी को जान लेना चाहिए कि साधन संपन्न व्यक्ति साधनहीनों की अपेक्षा कहीं अधिक शक्तिशाली होता है। हममें से हर किसी को यह पता है या फिर उसे पता कर लेना चाहिए कि जिसके हाथ में सत्ता होती है, वह सत्ता से बाहर के व्यक्ति का पक्ष यदा–कदा ही लेता है और उसे सत्ता में भागीदारी भी यदा–कदा ही देता है। इसीलिए अब सामाजिक मसले हल करने से जिनका नुकसान होने की संभावना प्रबल है, उनके हाथ में अगर आप आसानी से सत्ता दे देंगे तो सामाजिक मसलें हल होने की उम्मीद आप नहीं कर सकते। साथ ही, आज आप सत्ता पर आसीन करने के लिए जिनकी मदद करेंगे, उन्हीं को गद्दी से नीचे खींचने में आपको आगे चल कर क्रांति भी करनी पड़ सकती है!

सज्जनों, मेरी यह सलाह एक बहुत बड़े राजनीति के दर्शनशास्त्री – एडमंड बर्क द्वारा भी दी गई सलाह है। वह कहता है, अपनी स्वीकृति देते वक्त अन्यों द्वारा हम खुद अपने तिरस्कार का कारण बने, इतनी अधिक चौकसी दिखाना भी, आसानी से विश्वास कर सर्वनाश के लिए जिम्मेदार होने से बेहतर होता है, इस सलाह के अनुसार मुझे ऐसा लगता है कि, सामाजिक समस्या को हल करने की व्यवस्था पर विशेष बल देकर राज्य के संविधान में ही सामाजिक मसलों के बारे में संमत प्रावधानों को दर्ज किया जाए। हमें इस बारे में आग्रह कायम रखना होगा। हमें इस बात के प्रति आग्रही होना चाहिए कि राज्य के संविधान में सामाजिक मसलों के बारे में होने वाली सुलह को दर्ज किया जाए। जो लोग अनिर्बाध शासनसत्ता अपने कब्जे में करने की कोशिशों में लगे हुए हैं, उनकी इच्छा पर यह मामला कत्तई नहीं छोड़ा जाना चाहिए।

(क) दलित वर्ग के लिए सुरक्षा की व्यवस्था

7. इसीलिए, मुझे साफ–साफ बताना होगा कि, सामाजिक समस्याएं भारतीय स्वराज के रास्ते में रोडे बनती हैं। ऐसा हमें भले नहीं लगता हो लेकिन भारत की राजनीतिक पुनर्रचना करते समय दुर्बल सामाजिक घटकों को दुख की खाई में धकेला न जाए इसके लिए भारत के संविधान, जिसमें कहा गया है कि, 'राजनीतिक संतुलन अमल करने की जरूरत नहीं है', में जो राय व्यक्त की जा रही है उसका हम विरोध करते हैं। केवल दलित वर्ग के संदर्भ में कहें तो यह सोचा जाए कि यह समस्या किस तरह अच्छे से अच्छे तरीके से हल की जा सकती है इस बारे में ऊहापोह करने की मेरी मंशा है। कुछ राजनीतिज्ञों के अनुसार इस सवाल को हल करने के लिए कुछ उपाय करने होंगे और जो उपाय किए जाएंगे उन्हें स्वयंशासित भारत के संविधान में समाविष्ट किया जाए, यह भी वे मानते हैं। राजनीति के इन विशेषज्ञों ने महायुद्ध के बाद अस्तित्व में आए और मेरे भाषण के पहले हिस्से में जिसका जिक्र किया गया है, उन राष्ट्रों के साथ घटी घटनाओं का अध्ययन करने के पश्चात् राह ढूंढने की

कोशिश करना स्वाभाविक भी है। क्योंकि भारत की स्थिति इन राष्ट्रों की स्थिति से मिलती–जुलती है। इन राष्ट्रों में अल्पसंख्यकों की सुरक्षा की व्यवस्था संविधान के कानून के द्वारा की गई है और इसे अल्पसंख्यकों के मौलिक अधिकार कहा गया है। नेहरू कमेटी ने भी दलित वर्ग की सुरक्षा व्यवस्था के तौर पर इस योजना को अपनी रिपोर्ट में मान्यता प्रदान की है। लेकिन इस प्रकार की योजना से आप ठगे जाओगे इस बारे में मैं आपको आगाह करना चाहता हूं। भारत के राजनीतिज्ञों का, मौलिक अधिकारों के नाम से जानी जाने वाली संविधान की धारा में बेहद विश्वास है और अंग्रेजों के आक्रमण के विरोध में वे जिस प्रकार अपने लिए इन मौलिक अधिकारों की मांग कर रहे हैं, उसी तरह अपने वर्ग के लोगों द्वारा होने वाले अत्याचारों के खिलाफ अल्पसंख्यकों को भी उसी प्रकार के अधिकार देने के लिए उत्सुक हैं। लेकिन अपनी सुरक्षा के लिए इस प्रकार के इंतजामों वाली योजनाओं का हमें धिक्कार करना चाहिए। इस प्रकार की योजनाएं भले स्वागतायोग्य लगें लेकिन मैं आपको बताना चाहता हूं कि मौलिक अधिकारों के संदर्भ में दिया गया कोई विश्वास, फिर भले वह कितना भी व्यापक क्यों न हो, उसका आशय और अनुसंधान के नजरिए से उसकी व्याख्या कितनी भी स्पष्ट क्यों न हो, वह उन हकों के उपभोग की गारंटी नहीं दिला सकते। अधिकारों की केवल उद्घोषणा करने भर से कुछ नहीं होता है। मौलिक अधिकार यदि छीन लिए जाते हैं या उनका हनन होता है, तो उसके विरुद्ध में, या वे ना छीने जाएं, इसका ठोस उपाय किए जाने की व्यवस्था, प्रावधानों के बगैर मौलिक अधिकार सुरक्षित है, या रह पाएंगे, यह कहा नहीं जा सकता। 1914 के महायुद्ध के बाद पैदा हुए और जिनका मैंने पहले जिक्र किया है उन राष्ट्रों के संविधान में ऐसी योजना की गई है कि अल्पसंख्यकों को अगर लगे कि अपने मौलिक अधिकारों पर अतिक्रमण हुआ है या उन अधिकारों का सत्ताधारी बहुसंख्यकों की ओर से हनन हुआ है तो वे राष्ट्रसंघ से शिकायत कर सकते हैं। राष्ट्रसंघ में इस कार्य के लिए एक कमेटी नियुक्त की गई है, जो इस तरह की अपीलों का सोच–विचार के बाद निर्णय करती है। मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होने पर उसके खिलाफ किसी तरह के उपायों का प्रावधान क्या नेहरू कमेटी की रिपोर्ट में है? मुझे तो ऐसा कोई उपाय किया हुआ उस रिपोर्ट में दिखाई नहीं दिया। इसीलिए, नेहरू कमेटी की सुरक्षा संबंधी उपायों की गारंटी महज एक धोखा है।

8. नेहरू योजना में अगर इस प्रकार राष्ट्रसंघ में अपील करने का प्रबंध होता, तब भी मैं आपको यही सलाह देता कि आप इस योजना को स्वीकार ना करें। गवर्नर, वायसराय अथवा राष्ट्रसंघ के पास अपील करने का हक होना यानी दलित वर्ग के शस्त्रागार में एक हथियार का इजाफा होना है और उम्मीद करने लायक यह मामला है। लेकिन यह हथियार भी असरदार साबित नहीं हो सकता। आपके हितसंबंधों

की रक्षा करने की सबसे बड़ी गारंटी तभी हो सकती है, जब सत्ता आपके हाथ में आए। क्योंकि उसके कारण आपके हितों के लिए बाधाजनक कार्य करने वालों को आप सजा दे सकते हैं। इतना ही नहीं, आगे भी जिन बाधक, हानिकारक कामों की संभावना हो, उन पर रोक लगाने के लिए भी ठोस इंतजाम किया जा सकता है। गवर्नर हो, वायसराय हो अथवा राष्ट्रसंघ हो किसी तीसरे के हाथ में यह सत्ता देकर इसे हल (साध्य) नहीं किया जा सकता। जिसके हाथ में हम यह अधिकार सौंपेंगे उससे हस्तक्षेप, बीच–बचाव करने की मांग करने पर अगर वह साफ इनकार कर दे तो हमें इस अधिकार का क्या फायदा होगा? अपनी हितरक्षा के लिए हमें भावी स्वयंशासित भारत के कार्यकारी मंडल पर कब्जा पाना ही एकमात्र कारगर उपाय होगा, ऐसा मुझे लगता है। देश के विधिमंडल में प्रतिनिधित्व प्राप्त करने से ही यह संभव हो सकता है। सिर्फ इसी एक साधन के सहारे सत्ताधारियों की रोजमर्रा की हरकतों पर हम नजर रख सकते हैं। आपको अगर और कोई सुरक्षा के उपाय और गारंटी मिल रही हो तो उसे भी ले लीजिए। उससे आपकी सुरक्षा के साधनों में इजाफा होगा। लेकिन ठीक–ठीक योग्य प्रतिनिधित्व के बदले आप किसी अन्य बात को न स्वीकारें। और आपको निश्चित प्रतिनिधित्व दिए बगैर अगर वर्तमान संविधान में बदलाव लाने की कोशिश की गई तो, उसे नकारना, उसे न मानना पूरी तरह आपके अधिकार की बात है।

9. "निश्चित प्रतिनिधित्व", शब्द आज हर अल्पसंख्यक जनजातियों के मुंह से सुनाई देता है। इस मामले में सही आंकड़ा देना बेहद कठिन है, इस कारण यह हास्य–व्यंग्य, मजे का विषय होकर रह गया है। इसीलिए, आपको अगर अपनी मांगें सामने रखनी हों तो उस शब्द का निश्चित अर्थ हमें ठोस संख्या और आंकड़े के रूप में तैयार करना होगा। काँग्रेस के खेमे में प्रचलित राय के अनुसार जरूरी प्रतिनिधित्व का मतलब जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व इस प्रकार लिया जाता है। मेरी राय में अल्पसंखक प्रतिनिधित्व के बारे में यह बिल्कुल गणिती बुद्धि की सोच, अपरिपक्व और मूर्खताभरी कल्पना है। भारत के बहुसंख्यकों के मन में अल्पसंख्यकों के लिए जो अनुदारता की भावना है, उसी की यह प्रतिक्रिया है। अपने जातिबांधवों से तथा उनके सामाजिक दरजे से जितनी ताकत मिल सकती है वह शक्ति इन अल्पसंख्यकों के पास है, लेकिन वह बहुत ही कम है इसका अहसास होने के कारण ही ये जातियां अपनी सुरक्षा के लिए उसमें बढ़ोतरी होने की मांग कर रही हैं। इस तरह के प्रतिनिधित्व में बढ़ोतरी के बगैर सरकारी सत्ता से सुसज्ज बहुसंख्यकों का सामना करने के लिए वे पूरी तरह से समर्थ हैं, ऐसा उन्हें नहीं लगता। इस नजरिए से देखें तो अल्पसंख्यकों को उनकी जनसंख्या के अनुपात में जो जगहें मिलनी हैं, उनमें बढ़ोतरी करने से ही उन्हें सुरक्षा प्रदान की गई है ऐसा लगेगा। यह अगर सच है तो

फिर कोई यह पूछ सकता है कि अल्पसंख्यक जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्या के अनुपात में ही प्रतिनिधित्व की जगहें दी जाएं तो उनकी सुरक्षा का इंतजाम पूरा हुआ, ऐसा कैसे माना जा सकता है? अल्पसंख्यकों की सुरक्षा की भाषा का इस्तेमाल कर उनका प्रतिनिधित्व सिर्फ उनकी जनसंख्या के अनुपात में ही रखना ये दो बातें परस्पर विरोधी हैं। अल्पसंख्यकों को उस अनुपात में विधिमंडल में प्रतिनिधित्व देना तय करवाने का मतलब है, आज समाज में जो हाल है उसी की एक छोटी प्रतिकृति संसद में बना लेनी होगी। इस तरह की योजना से समाज का बलाबल ठीक रखता है, संतुलन बना रहता है। समाज की मौजूदा हालत को वह बरकरार रखती है। इसीलिए अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के नजरिए से सही ढंग से सुधार लाने हों तो सामाजिक शक्तियों के संतुलन में अल्पसंख्यकों के लिए सुविधाजनक हो इस ढंग से सामाजिक बदलाव किया जाए और यह जनसंख्या के अनुपात से अतिरिक्त तराजू की तरह पलड़ा बहुसंख्या की ओर न झुक जाए, इसके लिए पासंग की जगहें अल्पसंख्यकों को देकर ही उसे साध्य किया जा सकता है।

10. सभी अल्पसंख्यकों को जनसंख्या के अनुपात से अतिरिक्त पासंग, पलड़ा, स्थिर रहने की जगहें देना आवश्यक है, यह बात मान भले ही ली गई हो लेकिन इस पर प्रत्यक्ष कार्यवाही करने के बारे में एकमत हुआ है ऐसा नहीं लगता। इस नाप–तौल पासंग की शक्ति से क्या पाया जा सकता है, इसके बारे में ठीक–ठीक जानकारी ना होने की वजह से ही ऐसा हो रहा है, ऐसा मुझे लगता है। वरना इन अतिरिक्त जगहों के अलावा अल्पसंख्यकों की शक्ति उनकी सुरक्षा के लिए बेहद कम साबित होगी। इसीलिए, शक्ति की जो आपूर्ति करनी है, वह हालिया अनुपात में कितनी कम है इसके नाप–तौल के आधार से बढ़ाई जानी चाहिए। जिनके हाथ में कम शक्ति हो उन्हें उसकी अधिक आपूर्ति की जानी चाहिए। किसी के हाथ में जरूरत से अधिक शक्ति हो तो उसे निकाल लेनी होगी। यही बात अलग शब्दों में बयान करनी हो तो सभी अल्पसंख्यक समुदायों को पासंग या स्थिर पलड़े की ये जगहें नहीं मिलेंगी उनके सामाजिक दरजे के अनुसार उन्हें मिलने वाली जगहों की संख्या बदलती रहेगी। किसी अल्पसंख्यक समुदाय का सामाजिक दर्जा भले निम्न हो, ऐसा भी संभव है कि उसे ज्यादा जगहें मिलें और जिन लोगों का दर्जा, प्रतिष्ठा प्राप्त हो, उन्हें कम जगहें मिलें। दुर्भाग्य से कुछ अल्पसंख्यकों की मानसिकता ऐसी है कि वे अपने सामाजिक दर्जे के बल पर खुद को हमेशा अन्यों की तुलना में उच्च जगहों पर बैठाना चाहते हैं और प्रतिनिधित्व की अधिक से अधिक जगहें हड़पना चाहते हैं। और वह भी इसलिए कि उनका सामाजिक दर्जा, हैसियत ऊंचा है। मैंने पहले ही बताया है, कि पासंग की अतिरिक्त जगहें देने के पीछे उद्देश्य यही है कि तूफानी हवाओं में थरथर कांपने वाले मेमने को ठंड से सुरक्षा प्रदान की जाए और

इसीलिए ऊपर बताई गई विपरीत मानसिकता का विरोध किया जाना चाहिए। क्योंकि उससे देश के हित को और अन्य अल्पसंख्यकों के हित को भी नुकसान पहुंचने की संभावना पैदा होती है।

11. अल्पसंख्यकों को देने वाली तराजू का पासंग समतोल रखने के लिए अतिरिक्त जगहें किस सिद्धांत के आधार पर दी जाएं इस बारे में सही मार्ग के बारे में इससे पहले ही मैंने सूचित किया है। इसीलिए, कितनी जगहें दी जानी चाहिएं यह सवाल अभी भी बाकी है। प्रतिनिधियों की संख्या परिस्थितिनुसार बदलनी चाहिए। और उनकी संख्या तय करने के लिए सामान्य सिद्धांत का सुझाव देने से अधिक और कुछ नहीं किया जा सकता। वह सिद्धांत इस प्रकार है पहले बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक समुदाय आपसी सोच–विचार के बाद जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व से अतिरिक्त और अधिक कितनी जगह पासंग की जगहों के तौर पर दी जा सकती हैं, इस बात का निश्चित आंकड़ा तय करना होगा। फिर किसी विशिष्ट अल्पसंख्यक समुदाय के अतिरिक्त प्रतिनिधित्व का हिस्सा तय करते हुए यह अतिरिक्त प्रतिनिधित्व उस समुदाय की सामाजिक परिस्थिति के विपरीत अनुपात में तय करें। इस सामाजिक परिस्थिति के बारे में निर्णय लेते हुए उस समुदाय के सामाजिक दर्जे, आर्थिक बल और उसकी शैक्षिक स्थिति भी ध्यान में लेनी चाहिए। अगर यह संभव हो पाया तो अन्य अल्पसंख्य समुदायों के साथ भी न्याय होगा और सही ढंग से सुलह हो पाएगी। किसी भी पक्ष को शिकायत का मौका नहीं मिलेगा।

12. इसके बाद विचारार्थ जो विषय चुने गए हैं वे हैं, चुनाव क्षेत्र और मतदान के अधिकार। सज्जनों, इस संदर्भ में हमारी क्या मांगें होनी चाहिएं? चुनाव क्षेत्र की रचना के बारे में हमारे सामने दो विकल्प हैं। पहला है – अलग चुनाव क्षेत्र की योजना और दूसरा – आरक्षित जगहों के साथ संयुक्त चुनाव क्षेत्र की योजना। मैं जानता हूं कि इस विषय में दलित वर्ग में मतभेद हैं। बहुत बड़ी जनसंख्या अलग चुनाव क्षेत्र के पक्ष में है। उन्हें डर लगता है कि संयुक्त चुनाव क्षेत्र के तरीके में बहुसंख्य समुदाय भी हमारे उम्मीदवार के पक्ष में मतदान करने वाले हैं, इसलिए, जो उनके लिए हितकारी हो उसी के पक्ष में वे मतदान करेंगे ऐसा उन्हें लगता है। यह डर निर्मूल है, ऐसा मैं नहीं कह सकता। लेकिन केवल इसलिए अलग चुनाव क्षेत्र में खुद को कैद करना यही एक मार्ग नहीं बचता। इस मामले में एक और विकल्प भी उपलब्ध है – वयस्क मतदान की मांग करते हुए अपने समुदाय की मतदान की शक्ति ज्यादा से ज्यादा बढ़ा कर लेना भी एक उपाय है। सो, बहुसंख्यक समुदाय के मतदाताओं द्वारा अपने उम्मीदवार के पक्ष में मतदान करने से जो दुष्परिणाम हो सकते हैं उन्हें कम किए जाने की संभावना का निर्माण भी हो सकता है। वयस्क मतदान के लिए हमें विशेष आग्रह के साथ मांग करनी ही चाहिए, यह कह कर

आगे मैं यह कहना चाहता हूं कि अगर वयस्क मतदान प्राप्त हुआ तो हमें दलित वर्ग के लिए आरक्षित जगहें रखते हुए संयुक्त चुनाव क्षेत्र स्वीकारने में भी कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए।

13. इस बारे में मैं एक और बात का खुलासा करना चाहता हूं। यह देश जाति–समुदायों में, पंथो में बंटा हुआ है। इसलिए जाति–समुदायों की सुरक्षा का प्रबंध जब तक संविधान में ही नहीं किया जाता तब तक यह देश अखंड और स्वयंशासित नहीं बन सकता। यह वास्तविकता है, और इस पर आपत्ति नहीं की जा सकती। लेकिन अल्पसंख्यकों को यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि आज भले हम पर ये अलग–अलग पंथ हावी हो गए हैं और हम जातियों में विभाजित हो गए हैं, लेकिन हमारा लक्ष्य है अखंड भारत। जिन अल्पसंख्यकों को अपनी प्रतिष्ठा का खयाल है, उन्हें यही उद्देश्य अपनाना चाहिए। इससे एक बात साफ समझ में आती है कि जिन अल्पसंख्यक समुदायों ने सुरक्षा के प्रबंध की मांग की है, उन्हें अपने सुरक्षा संबंधी अधिकार प्राप्त करते समय इस बात का भी खयाल रखना होगा कि वे भारत की एकता की राह के रोड़े न बनें। आप पर जो बंधन लादे गए हैं, आपके सामने जो अडचनें हैं वे सत्य हैं इसलिए उनके खिलाफ सुरक्षा पाने के लिए जी–तोड़ कोशिश कीजिए। आपके लिए तैयार किए गए सुरक्षा प्रबंध इस देश में मौजूद भेदभाव की खाई को अक्षुण्ण रखने का कार्य ना करें, इस बात का खयाल अवश्य रखें। अलगाव की इस खाई को पुल के द्वारा पाटा जाए, यही उम्मीद हमें रखनी चाहिए। अल्पसंख्यकों की सुरक्षा से संबंधित सुविधाओं को स्वीकृति देना, बहुसंख्यक समुदायों का कर्तव्य है। लेकिन अल्पसंख्यकों का भी यह पवित्र कर्तव्य है कि वे सबको एक करने की राह में रोडे न अटकाएं। इस नजरिए से कहना पड़ेगा कि संयुक्त चुनाव क्षेत्र की योजना व आरक्षित जगहें, अलग चुनाव क्षेत्र से अधिक उत्तम उपाय है।

14. दलित वर्ग की सुरक्षा के लिए एक और बात खासा महत्व रखती है। उसका संबंध सरकारी नौकरियों में प्रवेश पाने से है। कानून तैयार करने के अधिकार से अधिक महत्वपूर्ण एक बात है। कानून बनाने के अधिकार से अधिक कानून का क्रियान्वयन करने के अधिकार का महत्व कम नहीं है। और अमल करने वाली व्यवस्था के जरिए कानून बनाने वालों को भले पूरी तरह हतोत्साहित नहीं किया जा सकता, लेकिन उस पर अंकुश जरूर रखा जा सकता है। लेकिन सिर्फ यही एक कारण नहीं है जिसके लिए प्रशासन की कार्यकारिणी पर दलित वर्ग को कब्जा पाने की आतुरता हो। काम की हड़बड़ी के कारण या हालात के कारण कई बार उसे लागू करने वाले अधिकारी को तारतम्यता के साथ निर्णय करने का अधिकार भी होता है। उस प्रसंग के अनुसार उचित निर्णय देने के अधिकार पर निष्पक्ष ढंग से अमल हो पा रहा है अथवा नहीं, इस पर ही जनता का कल्याण निर्भर करता है। भारत जैसे देश में जहां

निर्णय को लागू करने का अधिकार किसी एक ही विशिष्ट जाति के हाथ में होता है वहां इस तरह के प्रसंगोचित न्याय देने के अधिकार का दुरुपयोग विशिष्ट वर्ग की अनुचित और बेहिसाब तरक्की हासिल करने के लिए किए जाने की बहुत बड़ी संभावना होती है। इस पर सही उपाय है कि इस आग्रह पर कायम रहें कि सरकारी नौकरियों में दलित वर्ग के साथ सबको सम्मिलित किया जाए। दलित वर्ग के लिए सरकारी नौकरियों में खास अनुपात में पद आरक्षित रखने की मांग हमें करनी होगी और संविधान की एक धारा में बदलाव कर यह साध्य कर पाना असंभव नहीं है। इस प्रकार के सुरक्षा प्रबंधों के द्वारा ही आप भविष्य में देश के मंत्रीमंडल में कुछ जगहों की मांग कर सकते हैं। लेकिन दलित वर्ग चूंकि हमेशा अल्पसंख्यक रहने वाला है, इसलिए कम से कम आज तो इसकी संभावना बहुत कम नजर आती है। इस प्रकार की शाश्वत मांग करना क्यों जरूरी है यह भी इससे व्यक्त होता है।

(ङ) दलित वर्ग और साइमन कमीशन

15. भारतीय स्वराज के संविधान में किन सुरक्षा प्रावधानों को समाविष्ट किया जाना चाहिए, इस ओर मैंने आपका ध्यान दिलाया। अब मैं साइमन कमीशन द्वारा अपने पक्ष में की गई सूचनाओं के बारे में बोलूंगा। संविधान के तहत दलित वर्ग की सुरक्षा के बारे में साइमन कमीशन ने सहानुभूति से सोचा इस बारे में कोई आशंका नहीं। किसी भी मायने में वह सूचनाएं पर्याप्त नहीं होने के बावजूद साइमन कमीशन ने वास्तव स्थिति का चित्र खींचने की कोशिश की इसमें दो राय नहीं हो सकती। हालांकि, उन्होंने केवल पाठशाला और पनघट पर जिन मुश्किलों से दलितों को दो–चार होना पड़ता है, केवल उसी के बारे में सोचा है। इस दुर्भाग्यशाली वंचित वर्ग को समाज में रहते हुए जिन यातनाओं का सामना करना पड़ता है उनमें से यह केवल एक छोटा–सा हिस्सा है। इसके बावजूद मोंटफोर्ड कमीशन की तुलना में साइमन कमीशन ने दलितों को संविधान प्रदत्त सुरक्षा का प्रावधान दिए जाने का महत्व बेहतर तरीके से जाना यह बात माननी ही पड़ेगी। हालांकि अत्यंत खेदपूर्वक कहना पड़ रहा है कि हमारे प्रतिनिधियों की संख्या और पद्धतियों के बारे में साइमन कमीशन की सिफारिशें अत्यंत निराशाजनक हैं।

16. आप जानते ही हैं कि आजकल दलित वर्ग के प्रतिनिधियों को मनोनीत कर लिया जाता है। संसद में आपका प्रतिनिधित्व करने की मुसीबत जिन्हें झेलनी पड़ती हैं वे आपको इस तरह मनोनीत करने की पद्धति में क्या खामियां हैं, यह बता सकते हैं। और मुझे खुशी है कि साइमन कमीशन के सामने हमारे सभी लोगों ने इस बात की निंदा की। अपने प्रतिनिधित्व के लिए बेहतर प्रतिनिधि चुनने का अधिकार इस पद्धति द्वारा हमसे छीन लिया जाता है। नियुक्त किए गए प्रतिनिधियों को आचरण की

आजादी नहीं मिलती। खेद की बात है कि साइमन कमीशन ने इस दुष्ट पद्धति का त्याग नहीं किया। आज भी वे इसी बात से चिपके हुए हैं और उन्होंने अनुशंसा की है कि चुनाव कराने के लिए अगर योग्य उम्मीदवार नहीं मिलते हैं तो गवर्नर दलित वर्ग के प्रतिनिधि का चुनाव करें। सिर्फ इतना ही नहीं तो जो दलित वर्गों से नहीं हैं, ऐसे व्यक्ति को भी दलित वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में नियुक्त करने का अधिकार देने वाली अप्रत्याशित अनुशंसा भी साइमन कमीशन ने की है। हालांकि, यह आरक्षित उपाय होने के कारण इस पर सोच–विचार के लिए हमें ज्यादा समय खर्च करने की आवश्यकता नहीं है। किन्तु, साइमन कमीशन की प्रमुख योजना भी मेरी राय में स्वीकारने योग्य नहीं है। उसके अनुसार दलित वर्ग के लिए आरक्षित पद रखते हुए संयुक्त चुनाव क्षेत्र द्वारा उनके प्रतिनिधियों का चुनाव होना है, अगर यह संभव हो पाता, तो अपनी वर्तमान स्थिति में इससे बहुत सुधार हो सकता था। लेकिन इसमें एक और बेढंगी शर्त रखी गई है कि प्रांत के गवर्नर से इस अर्थ का प्रमाण–पत्र प्राप्त किए बगैर दलित वर्ग का कोई भी उम्मीदवार चुनाव नहीं लड़ सकता। यह पद्धति अस्वीकारणीय है। इसकी वजह यह है कि यह पद्धति फिलहाल नियुक्ति का जो तरीका अस्तित्व में है उससे यह प्रस्ताव बेहद मिलता–जुलता है कि दोनों में से किसका चुनाव करें यह कहना मुश्किल है। और जिन चुनाव क्षेत्रों में उम्मीदवार की केवल एक ही जगह है वहां गवर्नर किसी एक को ही इस तरह का प्रमाण–पत्र देने वाले हैं। सो ऐसे चुनाव क्षेत्रों के बारे में चुनाव की यह पद्धति सीधी–सादी नियुक्ति की पद्धति ही साबित होती है। प्रमाणपत्र वाला यह नुस्खा वास्तव में किस तरह से काम करने वाला है इसके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। साथ ही, प्रमाण–पत्र देने के लिए किन बातों पर गौर किया जाएगा, यह भी स्पष्ट नहीं है। साइमन कमीशन की सूचना बताती है कि गवर्नर दलित वर्ग के संगठनों से सलाह लेकर यह तय करें या अगर उन्हें योग्य लगे तो इस तरह की सलाह के बगैर भी सर्टिफिकेट दें। इन दोनों में से किसी भी सूचना के लिए आप सहमति न दें। संगठनों की सलाह लेने का तरीका अगर लागू किया गया तो भले कितना भी अप्रिय क्यों न हो जनता अपने उम्मीदवार को स्वीकृति दिलाने के लिए, केवल उसे समर्थन दिलाने के लिए कई जाली संगठन उठ खड़े होंगे। दूसरी पद्धति पर अगर अमल किया गया तो उसके परिणामस्वरूप गंदी लालफीताशाही पनपेगी और प्रमाण–पत्र देने की शक्ति मामलतदार या तहसीलदार के हाथ में होगी। क्योंकि गवर्नर को अगर कोई बौद्धिक नीति अपनानी होगी तो उसे अफसरों की सलाह के अनुसार ही प्रमाण–पत्र देना पड़ेगा। आप जानते ही हैं कि तहसीलदार और मामलतदार लोग किस वर्ग के लोग हैं। दलित वर्ग के बारे में और दलितों में से पढ़े–लिखे लोगों के बारे में उनकी मानसिकता कैसी है, यह भी आप जानते ही हैं। इसीलिए ये लोग प्रमाण–पत्र के लिए किस तरह के लोगों की सिफारिश करेंगे, इसका अंदाजा आप लगा सकते हैं।

17. साइमन कमीशन के इस मत से कि दलित वर्ग के प्रतिनिधि को प्रमाण–पत्र की खास आवश्यकता है, मैं सहमत नहीं हूं। संसद की अकार्यक्षमता को दूर करने के लिए इस प्रकार की बंदिश अगर वे रखना चाहते हैं, तो मैं कहूंगा कि ऐसे और भी कई समुदाय हैं, कि इस तरह के प्रमाण–पत्र जिनके लिए लागू किए जाएं। अकार्यक्षमता के मायने अंग्रेजी के ज्ञान की कमी और उस भाषा में अपना मत व्यक्त करने की असमर्थता होगा, तो बॉम्बे लेजिस्लेटिव काउंसिल के बहुसंख्यक अब्राह्मण और सिंधी मुसलमानों को अंग्रेजी नहीं आती थी, इस तरह के कई अन्य उदाहरण मैं जानता हूं। उन लोगों ने संसद में शायद ही कभी मुंह खोला हो, शायद ही कभी सवाल पूछा हो। विधानसभा में जो दलित वर्ग के प्रतिनिधि हैं, वे भी अपनी विधानसभा के ऐसे उदाहरण बता सकेंगे। उनको अगर प्रमाण–पत्र की आवश्यकता नहीं है, तो दलित वर्ग के लिए इसकी क्यों आवश्यकता हो, यह बात मेरी समझ से बाहर है। इसीलिए, साइमन कमिशन द्वारा तैयार की गई इस योजना को ठुकरा कर, किसी भी तरह की शर्त न रखते हुए हमें अपना प्रतिनिधि खुद चुनने की आजादी की मांग करनी होगी। अपने हित के बारे में निर्णय लेने के लिए हम खुद ही सर्वाधिकारी हैं और हमारा हित किसमें है, यह तय करने का अधिकार हमें गवर्नर को भी नहीं देना चाहिए।

18. केंद्रीय संसद के गठन के बारे में साइमन कमीशन की योजना के बारे में आपका क्या मत, विचार है, क्या जाने। वर्तमान विधानसभा चुनावों का तरीका और प्रांत के लेजिस्लेटिव एसेंब्ली के चुनाव प्रत्यक्ष पद्धति से होते हैं। इस बारे में साइमन कमीशन की सिफारिश यह है कि प्रांत की सभा के चुनाव की पद्धति जो फिलहाल है, वही कायम रहे, लेकिन विधानसभा के चुनाव प्रांत विधानपरिषद के सदस्यों द्वारा अप्रत्यक्ष तरीके से हो। मुंबई प्रांत के साइमन कमीशन के एक सदस्य के नाते मैंने इसके विरोध में एक ज्ञापन प्रस्तुत किया है, जिसमें यह सारे दोष गिनाए हैं। लेकिन साइमन कमीशन ने जिस रूप में यह योजना पेश की है, उससे कुछ सुविधाएं और असुविधाएं भी उभरने वाली हैं। पहली बात तो यह कि उसमें स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र या संयुक्त चुनाव क्षेत्र के सवाल को टाल दिया गया है। दूसरी बात यह है कि उसमें दोहरे मतदान का अधिकार टाल दिया गया है। (एक प्रांतीय कौंसिल के लिए और एक संसद के लिए।) तीसरी बात यह है कि उसने संसद को सुचारू गुट का रूप दिया हुआ है। इसमें क्या–क्या असुविधाएं हैं, यह देखें तो सरकार और जनता के बीच की कडी में इससे बाधा आने की संभावना है। इससे राष्ट्रीय एकता की बढ़ोतरी पर असर होगा, वह रुक जाएगी, क्योंकि इसमें पूरे देश के साथ लोगों का जो कर्त्तव्य है उसका लोप होता है, और उनकी नजर में पूरे देश के बारे में उनका कोई भी कर्त्तव्य नहीं बचता। इस बारे में सुविधा की तरफ पलडा झुके या

असुविधा की तरफ पलड़ा झुके, लेकिन केंद्रीय संसद के बारे में साइमन कमीशन की योजना को जगह मिलनी ही चाहिए। हालांकि उसकी सही जगह के बारे में सवाल बाकी बचता ही है। केंद्रीय विधानसभा के लिए या कि राज्यसभा के लिए वह योजना योग्य रहेगी? साफ है कि यह योजना दोनों जगह लागू नहीं की जा सकती। अप्रत्यक्ष चुनाव पद्धति का सबसे बड़ा दोष है कि वह पहली बारी में ही खत्म हो जाती है। एक मतदाता एक ही बार वोट देता है इसलिए उसे विशेष महत्त्व होता है इस विचार से यह योजना लागू की गई होगी। दो बार मतदान करने की असल में कोई जरूरत ही नहीं बचती। इसका मतलब यह कि अगर दो सभागारों की पद्धति को अपनाना हो तो चुनाव की यह पद्धति विधानसभा पर लागू की गई तो राज्यसभा के सभासद चुनने का दूसरा तरीका नहीं बचता। आज के सरकार की रचना में राज्यसभा की रचना करने की पद्धति बेहद खराब है। और पुनर्परीक्षण करने वाली सभा के रूप में उसका अस्तित्व कायम करना हो तो आज जिस स्थिति में है उसी स्थिति में उसे हमेशा नहीं रखा जा सकता। मेरी राय यदि सही हो तो इसका यही मतलब निकलता है कि विधानसभा के लिए प्रत्यक्ष चुनाव पद्धति का अवलंब किया जाए और और अप्रत्यक्ष चुनावों से राज्यसभा की रचना की जाए। प्रांतीय विधानसभाओं के सदस्यों द्वारा ये चुनाव संतुलित प्रतिनिधित्व के तरीके से किया जाए। इस मामले में यही योग्य उपाय है। अंततः यही कहा जा सकता है कि केंद्रीय संसद खड़ी करने का मार्ग भले कुछ भी तय हो लेकिन यह स्पष्ट है कि दलित वर्ग के प्रतिनिधि के लिए अप्रत्यक्ष पद्धति ही आसान सिद्ध होगी। नियुक्ति की पद्धति से इसकी तुलना की जाए तो पता चलेगा कि वही हमारे लिए अधिक हितकारी है।

19. प्रांतीय विधानसभाओं में दलित वर्ग का अस्तित्व बेहद कम है। इस बारे में 1919 के साऊथबरो कमेटी द्वारा बहुत अन्याय किया गया है। उस कमेटी द्वारा तय किए गए हिस्से में भारत सरकार ने भी बढोतरी करने का सुझाव दिया है। हालांकि वे गलतियां अभी भी वैसे के वैसे ही रह गई हैं। 1923 में नियुक्त की गई मुद्दीमन कमेटी ने संसद में दलित वर्ग का प्रतिनिधित्व कितना अधिक कम है, इस बात की ओर ध्यान दिलाया था, हालांकि यहां–वहां एकाध सदस्य की बढ़ोतरी करने के अलावा इस शिकायत को दूर करने के लिए कोई ठोस उपाय नहीं किया गया था। दलित वर्ग को उसकी दुर्बल स्थिति में अधिकारी वर्ग की मदद पर निर्भर रहने के लिए कहा जाता है। अनुभव से हम जान चुके हैं कि अधिकारी वर्ग अपने अलावा और किसी का हितैषी नहीं होता। उसकी मित्रता और मदद उसके अपने हित–संबंधों पर निर्भर रहती है। बेहद खेद के साथ बता रहा हूं कि इन दस सालों में अधिकारी वर्ग ने दलित वर्ग से जितना लिया उससे बहुत ही कम दिया। जो भी हो, भविष्य में अधिकारी वर्ग से ऐसी मदद की आशा भी दलित वर्ग नहीं रख

सकता। इसीलिए यदि हर अल्पसंख्यक समुदाय को सही अनुपात में प्रतिनिधित्व दिया जा रहा है, तो फिर दलित वर्ग को वह क्यों न मिले? प्रांतीय विधानसभाओं में साइमन कमीशन ने दलित वर्ग के लिए किस अनुपात का सुझाव दिया है? उनके अनुसार, इस तरह की आरक्षित जगहों की संख्या उस चुनाव क्षेत्र में अन्य वर्ग की जनसंख्या के अनुपात में दलित वर्ग की जनसंख्या के तीन चौथाई जितनी हो। भारत के अन्य अल्पसंख्यक समुदायों को साइमन कमीशन के द्वारा दिया गया आरक्षण भी देखिए। 'लखनऊ अनुबंध' में काँग्रेस को परास्त कर मुसलमानों ने जबरदस्ती पाया हुआ अत्यधिक प्रतिनिधित्व उसी तरह कायम रखने की अनुमति दी गई है। भारतीय ईसाई, एंग्लो इंडियन, यूरोपियन आदि को उनकी जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व के साथ–साथ तराजू का तोल बराबर करने के लिए, जिसे पासंग कहा जाता है, वे सरासर ठगी, अतिरिक्त जगहें भी दी गई हैं। क्या यह धोखाधड़ी नहीं है? जो समुदाय कई मुश्किलों से घिरा है, उसके साथ अगर उदार बर्ताव नहीं करना है, तो न करें, लेकिन क्या न्यायपूर्ण बर्ताव का भी वह हकदार नहीं? भारत की केंद्रीय समिति ने भी दलित वर्ग के साथ अन्याय कर केवल उसकी जनसंख्या के अनुपात में उसे प्रतिनिधित्व दिया।

20. शुरू से ही केंद्रीय संसद के दरवाजे दलित वर्ग के लिए कभी भी खोले नहीं गए। 1921 में जब जनसंख्या के आधार पर उसकी पुनर्रचना की गई तब भी दलित वर्ग को वहां प्रवेश नहीं मिला। सन् 1926 तक 150 सदस्यों वाली विधानसभा में दलित वर्ग को केवल एक जगह देने की मेहेरबानी की गई थी। राज्यसभा के द्व ार तो अब भी उनके लिए बंद हैं। केंद्र की विधानसभा में दलित वर्ग को प्रतिनिधित्व मिले, इसके लिए साइमन कमीशन द्वारा थोड़ी कोशिश की गई थी, लेकिन उसकी योजना केवल विधानसभा तक ही सीमित हैं, राज्यसभा तक तो वे पहुंची ही नहीं। इस छुटपुट सहानुभूति के लिए मैं उनका आभारी हूं, लेकिन उनके इस कृपणतापूर्ण व्यवहार को लेकर मुझे शिकायत भी है। साइमन कमीशन की नियुक्ति होने के दरमियान दलित वर्ग के कई लोगों को विधानसभा में लिया गया। सरकार समेत देश के सभी हिस्सों से सब ने ये हल्ला मचाया है, कि दलित वर्ग की जनसंख्या प्रत्यक्ष जनगणना में सामने आयी जनसंख्या से कहीं अधिक है। जनगणना का न्यूनतम आंकड़ा भी अगर लें तब भी साइमन कमीशन के द्वारा विधानसभा में जगहें देते समय दलित वर्ग की जनसंख्या को प्रति सैंकड़ा बीस मानी गई है। जबकि साइमन कमीशन द्व ारा विधानसभा में जगह देते हुए सैंकड़ा आठ से अधिक जगहें देने से इनकार किया और राज्यसभा में तो एक भी जगह नहीं दी।

21. मैं यह समझ ही नहीं पा रहा हूं कि अपने हकों और जरूरतों का यह जान बूझकर किया गया अवमूल्यन साइमन कमीशन के द्वारा क्यों किया गया? आपमें से

हर किसी की यही उम्मीद है कि साइमन कमीशन द्वारा दलित वर्ग के मामले में केवल न्यायपूर्ण ही नहीं वरन् उदार भूमिका रखनी चाहिए। और ऐसा कोई कारण नहीं है, कि जिसके लिए कमीशन द्वारा इस तरह की भूमिका न ली जाए। किसी अल्पसंख्य समुदाय की राजनिष्ठा के बारे में संविधान निर्माण करते हुए उन्हें क्या अधिकार मिल सकते हैं, इस बारे में मुझे आज तो कोई जानकारी नहीं है। लेकिन भारत में जिस प्रकार अधिकार प्रदान करते समय राजनिष्ठा को ध्यान में लिया जा रहा है, तो कहना पड़ेगा कि दलित वर्ग की राजनिष्ठा सीमाविहीन है। उन्होंने अंग्रेज राज से प्रेम किया केवल सिद्धांत की तरह और अकृत्रिम। हालांकि दलितों के साथ अधिक उदार बर्ताव किया जाए, यह मांग उन्होंने केवल दलितों की दीन–हीन स्थिति के कारण ही की है। भारत का कोई भी अन्य अल्पसंख्यक समुदाय इतनी दीन–हीन स्थिति में, दमित स्थिति में नहीं है और न इतना अधिक दुर्बल है। उनकी जरूरतें इतनी विस्तृत और इतनी सादी हैं, कि भारत को स्वयंशासित राज्य बनाने की मांग करने के अलावा उनके सामने कोई चारा नहीं है। जिस समुदाय पर इतने अधिक अन्याय किए गए, उसके साथ असल में बहुत उदार बर्ताव किया जाना चाहिए। लेकिन साइमन कमीशन के द्वारा दलितों के साथ न तो उदारतापूर्ण व्यवहार ही किया गया और न ही उनके साथ न्याय ही किया गया है। कोई यह भी पूछ सकता है कि लॉर्ड बर्कनहेड द्वारा साइमन कमीशन की नियुक्ति का प्रस्ताव पार्लियामेंट में प्रस्तुत करते हुए जो भावनाएं व्यक्त की गई थीं, उसका क्या हुआ? तब कहा गया था कि, दलित वर्ग के हम ट्रस्टी, न्यासी हैं और उनकी सुरक्षा का समुचित प्रबंध किए बगैर हम उन्हें किसी और के हाथ में नहीं सौंप सकते। इस प्रकार व्यक्त की गई गंभीर भावनाओं की पूर्तता क्या साइमन कमीशन के द्वारा होती हुई दिखाई देती हैं?

सज्जनों! हमारे साथ अन्य लोग किस तरह का बर्ताव कर रहे हैं, इस बारे में हमें सतर्क रहना चाहिए। मुझे इस बात का डर है कि, अंग्रेज हमारी खस्ता हालत और विपदाओं का जो विज्ञापन कर रहे हैं, वह हमारी बुरी हालत का निवारण करने के लिए नहीं। हो सकता है, इस तरह का तरीका भारत की आजादी को रोकने के लिए उन्हें उपयुक्त लगा हो और इसीलिए वे इसे विज्ञापित कर रहे हों। ऐसी स्थितियों में अंग्रेजों ने हमारे लिए कुछ किया इस बात से विचलित हुए बगैर, और भविष्य में अपना क्या होगा, इस बारे में बेकार की चिंता किए बगैर अपने नेता किसी का भय पाले बिना इस बात के आग्रह पर कायम रहें कि हमारे साथ उदारतापूर्ण न सही लेकिन न्यायपूर्ण बर्ताव तो किया ही जाना चाहिए, यह उनका कर्त्तव्य है। हमारे हालात इस तरह हैं इसलिए इस तरह की मांग करना हमारे लिए जायज है, हमारी दुर्दशा नष्ट करने हेतु न्याय की अपेक्षा रखना हमारा अधिकार है।

(ई) दलित वर्ग और स्वराज

22. भावी स्वयंशासित भारत में हमें किस सुरक्षा प्रावधानों और उसके समुचित क्रियान्वयन की गारंटी की आवश्यकता है, इस बारे में मैंने काफी जानकारी दी, ऐसा मुझे लगता है। तथापि, इस परिषद के सामने जो विषय हैं, वे यहीं समाप्त नहीं हो जाते हैं। फिलहाल देश में जो चल रहा है, उन राजनीतिक आंदोलनों के बारे में सोचना, यदि यह परिषद टाल गई और उस पर अपनी राय व्यक्त नहीं की गई तो यह कदापि नहीं कहा जा सकता कि उसका उद्देश्य पूरा हुआ है। दिसंबर 1928 को कलकत्ता में हुई इंडियन नेशनल कॉंग्रेस के अधिवेशन में ब्रिटिश संसद को दिए जाने वाले अंतिम नोटिस के प्रारूप का एक प्रस्ताव पारित किया गया था, यह शायद आपको याद होगा। इस प्रस्ताव में दिसंबर 1929 से पहले भारत को ब्रिटिश साम्राज्य में सार्वभौम राष्ट्र का दर्जा दिया जाए, ये मांगें रखी गईं और साथ में धमकी भी दी गई कि इस मांग को पूरी करने में अगर ब्रिटिश पार्लियामेंट असफल रही तो भारतीय कॉंग्रेस अपनी नीतियों में बदलाव लाते हुए पूर्ण स्वराज की मांग की जाएगी। कॉंग्रेस के इस प्रस्ताव पर वायसराय द्वारा भारतीय राज्य का दर्जा ब्रिटिश साम्राज्य के तहत सार्वभौम हो यह अंग्रेजों का भी उद्देश्य है, इसकी घोषणा की गई। हालांकि इससे कॉंग्रेस को संतुष्टि नहीं हुई। यह केवल एक उद्देश्य भर हो यह कॉंग्रेस को पसंद नहीं था, कॉंग्रेस चाहती थी कि तुरंत इसकी पूर्तता हो। इसीलिए दिसंबर 1929 में जब कॉंग्रेस का अधिवेशन हुआ, तब कॉंग्रेस ने अपने ध्येयानुसार भारत के लिए स्वराज की प्राप्ति करने का प्रस्ताव पारित कर एक कदम आगे बढ़ाया। इंडियन नैशनल कांग्रेस के इस प्रस्ताव के बारे में आपकी क्या भूमिका, राय है यह आपको घोषित करना होगा। और फिर हम अपने अपने नजरिए से स्वराज की मांग को खारिज भी कर सकते हैं, क्योंकि वह अव्यावहारिक है और देश के मौजूदा हालात में संकट का कारण भी बन सकता है। जिस देश के लोग एक राष्ट्रीयता की भावना से, एक संविधान से और एक समान भविष्य के साथ जुड़े होते हैं, वे स्वराज्य से हमें ठगे जा सकते हैं, धोखा उठा सकते हैं। कोई भी इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि ऐसी स्थितियों से यह देश कोसों दूर है। साम्राज्य के तहत स्वयंशासन का ध्येय ही बेहतर है, ऐसा मुझे लगता है। क्योंकि, पूर्ण स्वराज का जोखिम टाल कर हम अपने स्वयंशासित राष्ट्र के फायदे प्राप्त कर सकते हैं। इसीलिए हमें पूर्ण स्वतंत्रता के उद्देश्य का समर्थन करने से इनकार करना चाहिए। क्योंकि उसके बारे में कॉंग्रेस वालों के मन में भी बड़ी आशंकाएं हैं।

23. लेकिन साम्राज्य के अंतर्गत स्वयंशासन के बारे में आपकी भूमिका क्या होगी? क्योंकि वह भी एक प्रकार का स्वराज होता है, जनता का, जनता के लिए और जनता द्वारा चलाई जाने वाली सरकार होती है। सोच–विचार कर आपको इस सवाल पर सतर्कता से निर्णय लेना चाहिए। अंग्रेजों का इस देश में आना देश

के लिए एक बड़ा वरदान ही साबित हुआ है, इस बारे में कोई शक नहीं। समता, स्वतंत्रता और बंधुभाव के मूलभूत सिद्धांतों पर आधारित यूरोपीय संस्कृति के सहचर्य के बगैर हिंदू धर्म के कई बुरे सामाजिक, रीति–रिवाजों के बारे में उन्हें कभी शर्म नहीं महसूस होती। क्योंकि वह उनके धर्म और नीतिशास्त्र का एक हिस्सा था। इन दो संस्कृतियों के साथ आने के कारण उन दोनों के बीच के तीव्र विरोधाभास भारतीयों को समझ में आना, और इन सामाजिक कुरीतियों और रीति–रिवाजों को दूर करने की जरूरत उन्हें महसूस होने लगी। अन्य किसी भी उपाय के द्वारा पुनर्संगठन नहीं हो सकता था, जो इस मौके के कारण भारत को करना पड रहा है। अंग्रेजों के आने से पूर्व एक ही शासन पद्धति, और सब पर एक ही कानून लागू होने जैसी महत्वपूर्ण सुविधा भारत को कभी भी प्राप्त नहीं हो सकती थी। किसी भी देश के लिए यह कोई छोटी ताकत नहीं है। भारत के लिए इसका बहुत बड़ा मूल्य है। राष्ट्रीयता की भावना की जड़ें जितनी गहराई तक पनपनी हों, उतनी गहरे तक जमीन तैयार हो चुकी है और स्थिर राज्य की बुनियाद भी उन्होंने तैयार कर रखी है। उन्होंने मुद्रा, रास्ते, रेलवे, डाक आदि मोर्चों पर सुधार किए बगैर दे को आधुनिक संस्कृति में प्रयुक्त साधनों से दूर रखा, ऐसा भी हम नहीं कह सकते।

24. यह सब सही है। लेकिन सवाल यह है कि यह सब उन्होंने किस चीज के बदले में किया? अंग्रेज प्रशासन के तहत भारतीय जनता एक तरह से बौनी होती जा रही है। उसकी प्रगति रोकी जा रही है, इसमें कोई दो राय नहीं। स्व. गोखले के शब्दों में कहना हो तो, पूरे दिन हमें कुंठाओं से ग्रस्त जीवन बिताना होगा और हममें से जो ऊंचे कद के हैं, उन्हें झुक कर जीना होगा। स्वयंशासित राष्ट्र में दिखाई देने वाली आत्मसम्मान की भावना किसी भी भारतीय में दिखाई नहीं देती है। जिस नैतिक आधार से स्वराज की मांग की गई है, वह शायद आपको पसंद न आए। इतना ही नहीं, यह देखकर आपको लगेगा कि जैसे कोई शैतान धर्मग्रंथ का जिक्र कर अपना काम करवा ले, उसी तरह ये पूंजीपति, ये सामंती लोग स्वतंत्रता की मांग कर रहे हैं। हो सकता है आपको यह सब मजेदार लगे। लोगों की नैतिक शक्ति की ओर देखा जाए तो लगता है कि अंग्रेजों का राज हमें काफी महंगा पड़ा है, इसमें कोई संदेह नहीं। किंतु इस बिंदू से भी आप शायद सहमत ना हों। आप कहेंगे कि इस देश में शांति और सुरक्षा कायम रखने के बदले में चाहे कोई भी कीमत देनी पड़े तो भी वह कम ही है। लेकिन शायद आपको भी मान्य हो, पसंद आए ऐसी एक बात इस देश में है और वह है इस देश के लोगों की दरिद्रता। दुनिया के किसी भी हिस्से में भारत की बराबरी कर सके ऐसी गरीबी है क्या? 19वीं शताब्दी के पहले 25 सालों में अंग्रेजों का राज एक सर्वमान्य हकीकत बनी तब दस लाख लोगों की जान लेने वाले पांच अकाल आए। अगले 25 सालों में दो बार अकाल आए और उसमें करीब

चार लाख लोग मृत्यु को प्राप्त हुए। तीसरे 25 सालों में छह बार अकाल पड़ा और उनमें मरने वालों की संख्या पचास लाख होने के यथार्थ को दर्ज किया गया। और इस उन्नीसवीं सदी के आखिरी पच्चीस सालों में हमने क्या पाया? अठारह अकाल! और इन अकालों में मरने वालों की संख्या एक करोड़ पचास लाख से दो करोड़ साठ लाख तक जा पहुंचा! और एक साल में सरकार के भिक्षागृह में रखे गए साठ लाख लोगों को इसमें जोड़ा नहीं गया है।

सज्जनों! इसकी वजह क्या हो सकती है? इसका कारण यदि साफ–साफ शब्दों में कहना हो तो अंग्रेजों द्वारा इस देश में लागू की गई नीति। वे हमेशा इस देश के व्यापार और कलकारखानों की उन्नति में बाधक बनते रहे हैं। यह केवल तर्क पर आधारित नहीं है, वे चाहते थे कि भारत का राज इस तरह से चलाया जाए कि भारत, इंग्लैंड में बनने वाले माल का हमेशा के लिए ग्राहक बना रहे। अंग्रेजों के प्रशासन का यह सुनियोजित सूत्र था। उनकी इसी नीति के कारण भारत युगों–युगों तक के लिए दरिद्र देश बना रहा। देश को दरिद्र बनाने की इस विकसित क्रिया के शिकार मुख्य रूप से कौन बने? दलित वर्ग के जिन किसान लोगों को आज भी छह महीने भर पेट भोजन नहीं मिलता वही इसके शिकार हुए। उन्हीं की इसमें बलि चढ़ी। उनकी हमेशा की दरिद्रता के कारण उनकी हालत अकाल में बलि चढ़ने लायक तो थी ही। ये यदि आपके अपने लोग हैं, उनसे अगर आपका सचमुच जुड़ाव है, तो आप आंखें मूंदे उदासीन बैठे नहीं रह सकते।

सज्जनों! केवल नए रास्ते बना कर, नई नहरें खुदवाकर, रेलमार्ग बना कर, डाक से पैसा भिजवा कर, स्थिर मुद्रा लाने से भूगोल और खगोल शास्त्र की नई कल्पनाओं का प्रसार कर, या अंतर्गत कलह को रोकने को रेखांकित कर अंग्रेजों के नौकरशाह वर्ग के स्तुति सुमन गाते हुए आप बैठे नहीं रह सकते। सुरक्षा और सुव्यवस्था संभालने के कारण वे तारीफ के भी काबिल हैं। परंतु, सज्जनों! दलित और अन्य लोग केवल सुरक्षा और सुव्यवस्था खाकर जिंदा नहीं रह सकते। वे रोटी खाकर जिंदा रहते हैं, और हमें यह बात भूलनी नहीं चाहिए। जीवन के कठोर नियमों के कारण दलितों को भी ऐसी सरकार की मांग करना जरूरी हो जाता है कि जो देश में आर्थिक उन्नति लाए, और उसके द्वारा भौतिक जीवन में उन्नति आए। लोगों की दरिद्रता के पीछे कारण है, उत्पादन में कमी। आपमें से कोई यह ठोस मुद्दा उपस्थित कर, कह सकता है कि जितना भी उत्पादन आता है, उसका सही बंटवारा नहीं होता। मैं पहले ही इस बात को मान लेता हूं कि इस देश की गरीब मजदूर जनता से बड़े जमींदार और पूंजीपति जबर्दस्ती जो पैसा वसूलते हैं, उस ओर गंभीरता से ध्यान देने पर साल भर अंग्रेजों की जो प्रशंसा की जानी है, उस पर पानी फिर जाता है। हालांकि, एक बात मेरी समझ में नहीं आ सकती कि लूटने वाले, शोषण करने वाले पूंजीपति और जमींदारों

से अंग्रेज सरकार लोगों की रक्षा करे, यह उम्मीद कोई कैसे लगा सकता है? एक बात हमें ध्यान में रखनी ही होगी कि प्रो. डायसी के बताए अनुसार किसी भी सरकार पर फिर वह कितनी भी शक्तिशाली ही क्यों न हो दो बातों की सीमा होती है। पहली सीमा आंतरिक होती है। और वह राज्यकर्त्ताओं के स्वभाव, उद्देश्य और हितसंबंधों पर निर्भर होती है। और अंग्रेज सरकार अगर भारतीय समाज में प्रचलित शक्तियों को बढ़ावा नहीं देती है, तो यह उनके उद्देश्यों और हितसंबंधों के खिलाफ है, इसलिए, शिक्षा के बारे में वे उदासीन हैं और स्वदेशी के खिलाफ हैं, तो इसलिए नहीं कि वे उसका समर्थन नहीं कर सकते बल्कि इसलिए कि ऐसा करना उनके उद्देश्यों के दायरे में फिट नहीं बैठता। राज्यकर्त्ताओं पर दूसरी जिस बात की पाबंदी होती है वह है – बाहर से विरोध होने का उसे लगने वाला डर। भारतीय समाज के जीवन–मूल्य नष्ट करने वाले सामाजिक दोषों की गंभीरता क्या अंग्रेज राज्यकर्त्ता नहीं जानते? भारत के जमींदार जनता को निचोड़ कर शुष्क बनाते जा रहे हैं, क्या सरकार यह बात नहीं जानती? भारत के पूंजीपति, मजदूर वर्ग को जीवन–निर्वाह के लिए जरूरी मजदूरी और सहूलियतें नहीं देते, क्या सरकार यह भी नहीं जानती? सरकार को इन सभी बातों का पता है। लेकिन आज तक सरकार ने उन्हें छूने तक का साहस नहीं किया है, क्यों? उन्हें नष्ट करने का अधिकार उसके पास नहीं था, क्या इसलिए? बिल्कुल नहीं, उसने अगर भारत का सामाजिक यथार्थ और आर्थिक जीवन यदि नष्ट किया, या उसे सुधारने की कोशिश की तो, उसे विरोध का सामना करना होगा, यह डर उसे था। ऐसी सरकार किस के और कैसे काम आने वाली है? इस प्रकार मुख्य दो मामलों में लंगड़ी सरकार के आधिपत्य में जाहिर है कि जीवन जैसा था वैसा ही रहेगा। देश के हित के लिए अपनी अविभक्त निष्ठा ढो सकने वाले अधिकारी सरकार प्रशासन में हों ऐसी सरकार हम चाहते हैं। जिनमें शामिल व्यक्तियों को आज्ञापालन की सीमा कहां खत्म होती है और कहां से प्रतिकार शुरू होता है, इसका अहसास होते हुए भी जो अत्यंत आवश्यक होने वाले न्याय, आर्थिक और सामाजिक सुधार लागू करने से हिचकिचाएंगे नहीं। इस भूमिका को अंग्रेज सरकार कभी भी निभा नहीं सकती। लोगों की, लोगों द्वारा और लोगों के लिए चलाई जाने वाली सरकार, यानी दूसरे शब्दों में बताना हो तो स्वकीयों की सरकार के लिए ही यह संभव हो सकता है।

25. आपके सीमित उद्देश्य के लिए ही सही इस प्रश्न के बारे में गौर से सोचिए। अंग्रेजों के आने से पहले अस्पृश्यता के कारण आपकी हालत बेहद दयनीय थी। आपकी अस्पृश्यता को मिटाने के लिए अंग्रेज सरकार ने क्या किया है? अंग्रेजों के आने से पहले आप लोग गांव के कुएं से पानी नहीं भर सकते थे। आपको अपना वाजिब अधिकार दिलाने के लिए क्या अंग्रेज सरकार ने कोई कोशिश की है? अंग्रेजों के आने से पहले आप मंदिर में प्रवेश नहीं कर सकते थे। क्या अब आप मंदिर में

प्रवेश कर सकते हैं? अंग्रेजों के आने से पहले आप पुलिस की नौकरी में शामिल नहीं हो सकते थे, क्या अब हो सकते हैं? क्या अंग्रेज सरकार आपको पुलिस की नौकरी में शामिल करती है? अंग्रेजों के आने से पहले आपको सेना में भर्ती होने की इजाजत नहीं थी। क्या अब यह सुविधा आपके लिए उपलब्ध है?

सज्जनों, इनमें से किसी भी सवाल का आप हामी भर कर जवाब नहीं दे सकते। जिन्होंने इस देश पर इतने लंबे अर्से तक राज किया, वे कोई न कोई अच्छी बात हमारे लिए जरूर करते। लेकिन आपकी हालत में नियम से किसी भी तरह का कोई फर्क नहीं आया है। जिस मामले से आपका ताल्लुक है, उन सभी बातों को अंग्रेजों ने बड़ी चालाकी, धूर्तता से यथास्थिति बनाए रखी। एक बार किसी चीनी दर्जी के पास नया कोट बनवाने के लिए दिया गयाा। नमूने के लिए साथ में एक पुराना कोट भी दिया। उसने बड़े गर्व के साथ बिल्कुल हुबहू कोट सिल कर दिया थिग्गड़, थेगलियों, कटे–फटे हिस्से समेत! ब्रिटिशों के राज में भी आपके समाज की रचना में जो दोष थे, वर्णव्यवस्था की जो थेगलियां थीं, वे उन्होंने ठीक करने के बजाय जैसी थीं वैसे ही रखीं। और इससे भी आगे जाकर मैं यह कहूंगा कि अंग्रेजों की पूरी शक्ति और सिद्धांतों के बारे में सोच कर लगता है कि, आपके दुःख–दर्द, आपकी पीड़ा, आपकी शिकायतें दूर करने और यहां की समाज रचना में बदलाव करने की क्षमता और कुवत ही अंग्रेज सरकार के पास नहीं है। और जब तक आपके हाथ में सत्ता नहीं आती, तब तक आप अपने दुःख का निवारण नहीं कर सकते। जब तक यहां इस देश में अंग्रेजों का राज है वह जब तक जस का तस कायम रहेगा, तब तक आपके हाथ में सत्ता की हिस्सेदारी नहीं आएगी, केवल स्वराज्य द्वारा संवैधानिक अधिकार मिलने की स्थिति में ही आपके हाथ सत्ता आने की संभावना है, जिसके सहारे आप अपने लोगों को मुक्ति नहीं दिला सकते हैं। मैं जानता हूं कि, अपने देश के बहुसंख्य लोगों के हाथों में स्थित स्वराज यानी लगभग भूतों का बाजार है। दलितों पर हमारे देश के लोगों ने जो अन्याय, अत्याचार और जोर–जबरदस्ती पेशवा के युग में की वह भी मुझे पता है। मुझे डर लगता है कि कहीं आगामी स्वराज में भी हम पर इसी प्रकार अत्याचार न होते रहें। लेकिन सज्जनो, अगर कुछ समय के लिए आप भूतकाल को भूल जाएं और भावी स्वराज के कुछ वर्गों से आम जनता की रक्षा करने वाले संविधान प्रदत्त प्रावधानों के बारे में यदि आप सोचें तो भावी स्वराज में भूतों का बाजार दिखाई देने के बजाय आपको अपने हाथ में सत्ता आने की संभावना दिखाई देगी। और अन्य लोगों के साथ आप भी इस देश के सार्वभौम राज्यकर्त्ता बनेंगे। भूतकाल का भूत आप अपने ऊपर हावी ना होने दें। अपने निर्णय पर आप किसी भी डर का अथवा उपकार का असर होने ना दें। अपने कल्याण के बारे में सोचें, इस तरह मुझे यकीन है कि आप मान्य करोगे कि स्वराज ही आपका सही ध्येय है।

26. यदि यह वैचारिक सोच आपको सही लगे तो भारत के आगामी सरकार के बारे में साइमन कमीशन की योजना को आप मान्यता नहीं दे सकते। कमीशन की रिपोर्ट के विस्तारपूर्वक विवेचन, विश्लेषण में मैं जाना नहीं चाहता, क्योंकि उसके लिए पर्याप्त समय नहीं है। साइमन कमिशन द्वारा सुझाई योजना में देश की सरकार का कितना उत्तरदायित्व है? इस बात की ओर आपका ध्यान दिला कर ही मैं संतुष्ट हूं। केंद्र सरकार के कार्यकारी मंडल के मंत्रीमंडल की स्थिति में साइमन कमीशन ने कोई भी आमूलाग्र बदलाव नहीं सुझाया है। यह कार्यकारीमंडल जैसे अभी गैर जिम्मेदार है, वैसे ही आगे भी बना रहेगा। प्रांत का कार्यकारीमंडल विधानसभा को जवाबदेह बनाने की कोशिश की गई है। लेकिन उसे गवर्नर की सत्ता के बंधनों में जकड़ा गया है। आपात्कालीन स्थिति में विधानसभा के लिए उत्तरदायी न होनेवाले कार्यकारीमंडल की नियुक्ति करने का अधिकार गवर्नर को दिया गया है, और इस तरह कोई भी विभाग गवर्नर अपने हाथ में ले सकते हैं।

सज्जनों, साइमन कमीशन की इस योजना पर मैं केवल एक ही राय व्यक्त कर सकता हूं। इस समस्या की तरफ देखने के दो मार्ग हैं। पहला यह कि भारत की केंद्रीय विधानसभा और प्रांतीय विधानसभाओं द्वारा कार्यकारीमंडल को कितने अधिकार दिए जाने चाहिए? दूसरी बात यह कि, कार्यकारीमंडल को केंद्रीय और प्रांतिक विधानसभाओं की तुलना में किस अनुपात में अधिकार दिए जाने चाहिए? इन दो में से साइमन कमीशन ने पहले मार्ग का चयन किया है। ऐसा अगर है तो हर किसी बात में यह उत्तरदायित्व लागू किया जाना चाहिए था। प्रांतिक कार्यकारीमंडल को पूरी तरह उत्तरदायी क्यों नहीं बनाया गया, इसका कोई ठोस कारण मुझे दिखाई नहीं देता। और मिलिट्री और विदेश व्यवहार अगर छोड़ दें, तो केंद्रीय मंत्रीमंडल को भी उत्तरदायी बनाना कठिन नहीं है, ऐसा मुझे लगता है।

27. हममें से कुछ लोग कहेंगे दिल्ली अभी बहुत दूर है। फिलहाल तो दलित वर्ग अपने तक केवल प्रांतिक राज्य सरकार तक की सीमा तय कर लें। ऐसे लोगों को मैं सुझाव देना चाहता हूं कि, वे अपने प्रांतीय अथवा केंद्रीय मंत्रीमंडल के उत्तरदायित्व के बारे में अपनी राय बनाते हुए दो बातें ध्यान में रखें। पहली बात यह कि, दलित लोगों के साथ–साथ अन्य लोगों का भविष्य, उनका कल्याण भी अधिक व्यापक रूप से और घनिष्ठता से प्रांतिक सरकार से कहीं अधिक देश की केंद्रीय सरकार पर निर्भर होता है। और इसीलिए, केंद्रीय सरकार की यह चक्की कैसे चलेगी, आसानी से चलेगी भी कि नहीं, इसी पर पूरे देश की प्रगति निर्भर करती है। विधानसभा के बारे में उसे कितनी सहानुभूति है इसी बात पर उसकी पीसने की क्षमता निर्भर करेगी। इस दृष्टिकोण से देखने के बाद पता चलेगा कि, यदि आप देश की जनता की नैतिक और भौतिक समृद्धि चाहते हैं, तो आप केंद्र सरकार के उत्तरदायित्व के प्रति उदासीन

नहीं रह सकते। लेकिन इस निर्णय को सूचित करने के पीछे एक और नजरिया है। सुरक्षा और व्यवस्था की जिम्मेदारी निभाने के बारे में प्रांतिक सरकार हमेशा केंद्र सरकार की जिम्मेदार प्रतिनिधि के तौर पर रहेगी। इन दोनों को अगर एक–दूसरे की सहायता से काम करना हो तो इन दोनों को एक ही अधिकारी से आदेश मिलने चाहिए। प्रांतिक या राज्य सरकार का कार्यकारीमण्डल, प्रांतीय विधानसभा के प्रति जवाबदेह होने के कारण वह केन्द्रीय मंत्रीमंडल के आदेष का पालन करने के लिए बाध्य नहीं होगा। क्योंकि, इस केन्द्रीय मंत्रीमंडल की योजना में केंद्रीय विधानसभा की जगह देश के सचिव को जवाबदेह बनाया गया है। और इस तरह सुचारू तालमेल के अभाव में आपात स्थिति में देश का प्रशासन पूरी तरह दुर्बल साबित होने की संभावना है। इसलिए, आपको चाहे पसंद हो या नापसंद हो, आप प्रांतीय मंत्रीमंडल का उत्तरदायित्व ऐसे हालात में केंद्रीय मंत्रीमंडल को नहीं सौंप सकते।

(च) दलित वर्ग और असहकारिता

28. सज्जनों! हम जब आरक्षित स्थानों के साथ–साथ उपनिवेश में स्वराज्य का समर्थन कर रहे हैं, तो महात्मा गांधीजी ने पिछले मार्च महीने से इस देश में जो असहयोग आंदोलन शुरू किया है उसमें शामिल होना क्या हमारा कर्त्तव्य है? इस प्रश्न के संदर्भ में आपको अपनी भूमिका स्पष्ट करनी होगी। मैं मानता हूं कि, सभी उदारमत वादी लोगों ने दोष दिया है कि यह असहयोग आंदोलन गैर–कानूनी है, लेकिन मुझे यह तर्क युक्तिवाद पसंद नहीं है। यदि पुरातनपंथी लोग आपसे यह कहें कि आपका मंदिर प्रवेश का आंदोलन गैर–कानूनी है, तो आप क्या जवाब दोगे? इस प्रकार सीधे–सीधे कार्रवाई करने के बजाय क्या पुरातनपंथी लोगों से विनती, अपील करना कानून के अनुसार होगा? या फिर कानून को ही बदलना कानूनन सही होगा? पुरातनपंथी लोगों के साथ छेड़ी गई आपकी आजादी की लड़ाई में आपके साधनों पर इस तरह के प्रतिबंध लगाना क्या आपको सही लगता है? मुझे लगता है कि अगर कोई स्वीकृत संवैधानिक मार्ग पहले से तैयार हो तो आप कानूनी मार्ग को अपनाने का आग्रह कर सकते हैं। लेकिन जहां इस तरह संविधान में कोई प्रावधान ना हो वहां कानूनी मार्ग का उपदेश सुनने के लिए बहुत कम लोग तैयार होंगे। अंग्रेजों के लिए भी यह विचार नया नहीं है। अल्स्टर आंदोलन क्या असहयोग आंदोलन नहीं था? और क्या कई श्रेष्ठ अंग्रेज राजनीतिज्ञों ने उसका समर्थन नहीं किया था? यहां केवल यही प्रश्न महत्त्वपूर्ण है कि, अपने हितसंबंधों के नजरिए से वह समयोचित है या नहीं। असहयोग के इस आंदोलन का मैं इसलिए विरोध करता हूं क्योंकि वह कत्तई समयोचित नहीं है। इस बारे में मुझे पूरा यकीन हो गया है। मेरे अलावा भी अन्य कई लोगों की यह राय है कि साम्राज्यवाद में दोष होंगे, लेकिन अंग्रेज साम्राज्य ने भारतीय लोगों की प्रगति के द्वार

खुले रखे हैं। यह बात महात्मा गांधी को भी स्वीकार्य है, जो यह कहते हैं कि भारत में प्रस्थापित सरकार का विश्वासघात न करना मेरा अनिवार्य कर्त्तव्य है। अंग्रेजों के साम्राज्य की इस तरह की केवल मानसिकता थी ऐसा नहीं है। भारत के स्वयंशासन की प्रगति के लिए प्रांतीय सत्ता की जिम्मेदारी लोगों को सौंप कर अपना उद्देश्य प्रत्यक्ष रूप में कार्यान्वित करने की कोशिश भी उसने 1920 में की है। हो सकता है कुछ कमी रह गई हो जिस कारण हम उसे आदर्श नहीं कह सकते। शायद अपने उद्देश्य की तरफ बढने की उसकी गति धीमी हो, लेकिन जो नीति तय की गई थी, अंग्रेज सरकार उसके खिलाफ रही हो, क्या हम ऐसा कह सकते हैं? योग्य उद्देश्य के खिलाफ अगर उनका बर्ताव रहा हो तो असहयोग आंदोलन छेड़ने का यह सही वक्त है, इस बात को हर कोई समझ जाता। लेकिन बात ऐसी नहीं है, वॉइसराय की घोषणा के द्वारा अंग्रेजों ने अपना उद्देश्य साम्राज्य के तहत स्वराज देने की बात को एक बार फिर साफ–साफ शब्दों में दोहराया है। और उस उद्देश्य का प्रत्यक्षीकरण जल्द से जल्द हो इसलिए भारतीय लोगों को गोलमेज सम्मेलन में बात करने का मौका देकर स्वराज के बारे में चर्चा करने का मार्ग खोल दिया है। साम्राज्य के तहत स्वराज की मांग करने वालों के अनुसार इसमें कई सारी त्रुटियां हो सकती हैं, यह सच है। लेकिन गोलमेज सम्मेलन में हिस्सा लेने से कॉंग्रेस ने इनकार किया इसके पीछे यह वजह नहीं थी। वायसराय के साथ या अंग्रेज मंत्रीमंडल के साथ किसी आश्वासन के लिए या किसी करार के लिए या अन्य किसी उद्देश्य के लिए लड़ना भले सही हो, लेकिन उसका कोई असर नहीं होने वाला है। क्योंकि इस तरह का अनुबंध बनना भारतियों की एकत्रित आवाज पर ही निर्भर करता है। और उपनिवेश के स्वराज के लिए हम सभी भारतीयों की आवाज को अगर जोड़ सकते हैं तो निश्चत तौर पर ब्रिटिश पार्लियामेंट पर उसका असर होगा। जो भी हो, लेकिन कांग्रेस अगर गोलमेज परिषद में जाना स्वीकारती तो उसमें किसी तरह का कोई नुकसान तो नहीं था। इस कोशिश में अगर सफलता नहीं भी मिलती तब भी कॉंग्रेस को अपना असहयोग का कार्यक्रम एक साल के लिए आगे टालना पड़ता। और उसमें भी उसका कोई नुकसान नहीं होता। उल्टे, फायदा ही होता। गलत वजह के लिए हो या सही वजह के लिए हो आज अंग्रेज सरकार पर जिनकी श्रद्धा है, उनका भ्रम तो कम से कम दूर होता। इन सभी बातों पर गौर करते हुए ऐसे समय कॉंग्रेस को सविनय अवज्ञा आंदोलन शुरू कर देना चाहिए और कोई भी बता सकता है कि गोलमेज सम्मेलन द्वारा उपलब्ध कराया गया शांतिपूर्ण ढंग से बातचीत करने का मौका मना कर कॉंग्रेस ने बहुत बड़ी गलती की।

29. इस सविनय अवज्ञा आंदोलन का मैं समर्थन नहीं कर सकता। इसकी एक और वजह है। मेरी राय में यह आंदोलन हमारे हितसंबंधों के, सुरक्षा के और सुरक्षा के दृष्टिकोण से भी ठीक नहीं हैं। सविनय अवज्ञा आंदोलन जनता का आंदोलन

है। जबरदस्ती इस आंदोलन का मुख्य सिद्धांत है। गैर–जिम्मेदाराना भगदड़ मचाने अथवा अफरा–तफरी के इस तरीके को बहुत बड़े पैमाने पर शुरू किया जाए, तो उसे क्रांति का रूप धारण करने में देर नहीं लगेगी। कोई क्रांति फिर वह रक्तरंजित हो या रक्तविहीन हो – कोई फर्क नहीं पड़ता। सफलता के नजरिए से बेहद अनिश्चित होने के कारण इस पद्धति में अफरा–तफरी मचने की और भयंकर प्रसंग निर्माण होने की संभावना ज्यादा होती है। फ्रेंच क्रांति का उदाहरण हमारे सामने है ही। उसका प्रकट उद्देश्य जनतंत्र की स्थापना था। लेकिन आखिर उसका असर अनिर्बंध तानाशाही के निर्माण में हुआ। कई बार क्रांति अनिवार्य होती है। जिस तरह विजय के कारण किसी राष्ट्र से या किसी वंश से दूसरे के हाथ में सत्ता जाती है। उसी प्रकार विद्रोह के कारण भी सत्ता, एक पक्ष के हाथों से दूसरे पक्ष के हाथों में चली जाती है। लेकिन इस तरह का बदलाव अन्दर से खोखला होता है। मुझे यकीन है कि हमें उससे संतुष्ट होना संभव नहीं। भारतीय समाज में आज जो शक्तियां कार्यरत हैं, उनमें राजनीतिक सत्ता के बंटवारे द्वारा ही अपेक्षानुकूल असली बदलाव पैदा हो सकता है, हम इस तरह का सत्तांतर चाहते हैं। ऐसे सत्तांतर के लिए सुलह की जरूरत है। ऐसी सुलह होने पर तथा उस पर प्रत्यक्ष रूप से कार्रवाई होने पर ही दलित वर्ग का भविष्य पूरी तरह निर्भर है। भारत की असली समस्या केवल सरकार की स्थापना करना न होकर या सिर्फ आजादी पाना न होकर सही मायने में स्वतंत्र शासन सत्ता स्थापन करने की है। और एडमंड बर्क की भाषा में फिर से बताना होगा तो– सच्ची सरकार की स्थापना करने के लिए बेहद अक्लमंद नजरिए की जरूरत होती है। शासन सत्ता की जगहें निश्चित कीजिए। लोगों को आज्ञाकारी होने की शिक्षा दें। और फिर समझ लें कि आपका काम पूरा हुआ। सिर्फ आजादी देना आसान काम है। उसका मार्गदर्शन करने की कोई आवश्यकता नहीं होती है। जरूरत होती है तो उसके केवल शासन या सत्ता छोड़ देने से काम बन जाता है। लेकिन असल स्वतंत्र सरकार बनाना यानी स्वतंत्रता के लिए उत्सुक सभी विरोधी शक्तियों को समक्ष बुला कर एक झंडे के तले लाना, एक राष्ट्रीयता के धागे में उन्हें बांधना यह कितना कठिन कार्य है और उसके लिए गंभीर चिंतन की जरूरत होती है। और यह सवाल सही सुलह का है। सविनय अवज्ञा आंदोलन जैसे भगदड़ भरे तरीके से उसे पाना संभव नहीं, इसका मुझे यकीन है।

30. सज्जनों! इस सविनय अवज्ञा आंदोलन को इन्हीं वजहों से दलित वर्ग द्वारा समर्थन नहीं दिया जाना चाहिए, ऐसा मुझे लगता है। गोलमेज सम्मेलन द्वारा उपलब्ध होने जा रहे शांतिपूर्ण तरीके से ही उनका काम अधिक आसान होगा। इसीलिए आपको आग्रहपूर्वक कहना चाहिए कि इस गोलमेज सम्मेलन के लिए हमारे बेहद भरोसेमंद और श्रेष्ठ योग्यता वाले कुछ लोगों को लिया जाए।

(छ) दलित वर्ग का संगठन

31. मेरे अनेक मित्रों का कहना है कि, हमारी इस स्थितप्रज्ञ नीति के कारण दलित वर्ग का बहुत बड़ा नुकसान होगा। उनकी राय है कि दलित वर्ग को अंग्रेज सरकार के साथ या इंडियन नेशनल काँग्रेस के साथ जुड़कर रहना चाहिए। मैंने उनकी इस सलाह पर कई बार सोचा तो मुझे यकीन हुआ कि इन दोनों से अलग रहने में ही दलित वर्ग की सुरक्षा है। जैसे कि मैंने पहले ही बताया है, मैं साम्राज्यांतर्गत स्वराज का विरोध नहीं कर सकता। क्योंकि मुझे इस बात का पूरा यकीन है कि अंग्रेज सरकार हमारी समस्या का समाधान ढूंढने के लिए कभी भी समर्थ नहीं थी। लेकिन काँग्रेस में शामिल होने के कारण ही अपना सवाल हल होने की दिशा में हम आगे बढ़ रहे हैं। हमारी समस्या हल होने की दिशा में हमारी प्रगति हो रही है, यह मैं बिना सोचे–समझे कैसे कह सकता हूं? कहा जाता है कि काँग्रेस अस्पृश्यता पालन को मान्यता नहीं देती। सारी जनता का प्रतिनिधित्व करने वाली केवल यही एकमात्र संस्था है। इसमें कोई शक नहीं कि महात्मा गांधी के नेतृत्व में काँग्रेस ने अस्पृश्यता के रिवाज का निषेध करने वाला प्रस्ताव पारित किया है। लेकिन उस पर अमल करने के लिए काँग्रेस ने प्रचार–प्रसार के लिए अपने सदस्यों पर खादी के इस्तेमाल की शर्त लगाई है। लेकिन अस्पृश्यता का पालन न करने की शर्त काँग्रेस ने अपने सदस्यों के लिए क्यों नहीं रखी? इस तरह के बंधन पर आसानी से अमल किया जा सकता था। स्पृश्य सदस्य अपने–अपने घर में अस्पृश्य नौकर रख कर या किसी अस्पृश्य छात्र को अपने घर में रख, उसे पढ़ाई करने की सुविधा देकर इस शर्त का पालन आसानी से किया जा सकता था। महात्मा गांधी ने अस्पृश्यता निवारण के लिए जो उपाय किए, उसके क्या फिर भी कोई परिणाम दिखाई देते हैं? उनका भले ही बहुत बड़ा नैतिक समर्थन हो, उनके व्यक्तिगत प्रभाव और उनके विशिष्टतापूर्ण साधनों पर ध्यान दें तो उन्होंने अस्पृश्यता के निवारण का अपना उद्देश्य साकार करने के लिए बहुत ही कम प्रयास किए हैं। हर वर्ष सूत कातने के लिए फंड इकठ्ठा करने के लिए वे चक्कर काटते हैं। उन्होंने अस्पृश्यता के खिलाफ क्या कभी ऐसी मुहिम छेड़ी है? चरखे पर अपना जितना समय व्यतीत किया उसका एक शतांष हिस्सा भी इस काम के लिए खर्च नहीं किया। हिंदू और मुस्लिमों के बीच एकता प्रस्थापित करने के लिए तीन हफ्तों तक उन्होंने अनशन रखा था। यह बात आप सब लोग जानते ही हो। किंतु स्पृश्यों के मन में अस्पृश्यों के लिए अधिक दयाभाव निर्माण हो इसके लिए गांधीजी ने क्या एक दिन का भी अनशन कभी रखा है? ये बातें अगर की जातीं तो कोई भी काँग्रेस के मंच को स्वीकार करता। लेकिन अस्पृश्यता का कलंक दूर करने के लिए काँग्रेस ने ईमानदार कोशिश की नहीं। और हम सब यह भी जानते हैं कि स्वामी श्रद्धानंद ने कॉग्रेस का त्याग इसी कारण किया कि काँग्रेस इस मामले में दिखावे के अलावा और

कुछ नहीं कर रही, और न ही करने के लिए तैयार है। काँग्रेस ने जो प्रस्ताव रखा है उस आधार पर अगर कोई काँग्रेस के अंतर्रंग के बारे में निर्णय लेना चाहे तो यह प्रकट हो जाएगा कि कांग्रेस आम लोगों के लिए है या नहीं? इस बारे में निर्णय लेते समय जल्दबाजी नहीं करनी चाहिए। काँग्रेस के आर्थिक प्रस्तावों में उच्च वर्ग और मध्य वर्ग के हितसंबंधों के बारे में ही प्रतिबिंब दिखाई देता है। उसके व्यापार से संबंधित प्रस्ताव का ताल्लुक केवल व्यापार और उद्यमियों से ही होता है। उसमें मेहनत करने वालों की कोई जगह नहीं। जो संगठन केवल एक चौथाई या एक षष्ठमांष लोगों के लिए ही काम करते हैं, उन्हें यह दावा करना छोड़ देना चाहिए कि वह सम्पूर्ण जनता का प्रातिनिधि संगठन है। नमक के सत्याग्रह का समावेश काँग्रेस के कार्यक्रम के साथ जोड़ देने से उसके बुनियादी चेहरे में कोई फर्क नहीं आने वाला। नमक पर लगाए गए कर विरोध में जिस तरह जोरदार निंदा की जा रही है, वह राजनीतिक आंदोलन का ही एक हिस्सा है। लेकिन जिस तरह हलवा खाए बगैर हलवे के स्वाद का पता नहीं चलता, उसी तरह नमक सत्याग्रह आंदोलन में भी आम जनता कुचली न जाए इसके लिए क्या उच्चवर्ग के कंधों के सहारे खड़ा किया जाएगा? और इसी एक बात से इस आंदोलन की सफलता निर्भर करती है। उसके पीछे ईमानदार उद्देश्य है या नहीं उसे केवल आने वाला समय ही स्पष्ट कर पाएगा। लेकिन मुझे इस बारे में कोई आशंका नहीं कि जब–जब निर्णय लेने की घड़ी आती है तब–तब काँग्रेस के लोग आम जनता की ओर आंख मूंदकर केवल उच्च वर्ण का ही पक्ष लेते हैं। इस बारे में मुझे कोई शक नहीं है। आम जनता के प्रति कँग्रेस का उदासीन और बेफिकर रहना मानो एक प्रकार से अनिवार्य ही है। क्योंकि वह राष्ट्रवादी लोगों का नेतृत्व करती है और वह कोई राजनीतिक पार्टी नहीं है। इसलिए वहां नीति और कार्यक्रम काफी व्यापक होना जरूरी है। सब जानते हैं कि किसी संगठन पर सब के हितसंबंधों की अनेकविध जिम्मेदारियां थोपी गई तो सबके नाम पर वह केवल कुछ एक लोगों का ही हित साध सकती है। और हितसंबंधों में अगर कोई विरोध पैदा हुआ तो दुर्बल लोगों को आंधी के हवाले कर दिया जाता है। ऐसे में मेरी समझ में यह नहीं आ रहा कि हम यह उम्मीद कांग्रेस से कैसे लगा सकते हैं कि वह हमारे लिए काम की जिम्मेदारी का निर्वाह करेगी और जब हमारे प्रतिपक्ष के साथ विरोध पैदा होगा, उस समय जो कि तय है, हम यह उम्मीद भी कैसे करें कि वह हमारा पक्ष लेकर लड़ेगी।

32. हममें से जो काँग्रेस की सेवा करने के लिए व्याकुल हैं, उन्हें ऐसा लगता है कि स्वराज प्राप्ति के बाद इस सेवा के बदले में काँग्रेस हमारी अस्पृश्यता को नष्ट करेगी, और हमने, यदि अभी उसकी सेवा नहीं की तो, बाद में वह हमें गुलाम ही बना कर रखेगी। मुफ्त की मदद का कोई मुआवजा नहीं इस गुनाह के लिए। इसलिए उपरोक्त सोच के बारे में अपनी राय व्यक्त करना जरूरी नहीं है, ऐसा मैं

समझता हूं। लेकिन मुझे लगता है कि एक बात साफ करना जरूरी है। वह यह कि, अब आप भले ही काँग्रेस की जितनी भी सेवा कर लीजिए, लेकिन स्वराज प्राप्ति के बाद आप इस काँग्रेस को कहीं नहीं पाएंगे। उस समय आपको अपनी ही शक्ति पर निर्भर रहना पड़ेगा। क्योंकि काँग्रेस अपने उद्देश्य को पा लेने के बाद, स्वराज के आगमन के साथ ही वह हवा में गुम हो जाएगी और हैमिल्टन के शब्दों में बताना हो तो, "हमें यहां की पशु समान जनता के भयानक द्वेष और विकराल वासनाओं के साथ दो–दो हाथ करने पड़ेंगे।" मुझे तो यह डर भी लगता है कि जिनके नाम से हमें अपनी सारी कोशिशें छोड़ देने के लिए कहा जाता है उस महात्मा गांधी को भी अगर आम आदमी की तरह और थोड़ी लंबी जिंदगी मिले और स्वराज के समय में अगर वे जीवित रहे, तो वे भी इस भयानक जानवर से हमारी रक्षा करने में असमर्थ साबित होंगे।

33. मैं जो सोच रहा हूं यदि वह सही हो तो खुद के लिए अपनी राह ढूंढ लेना चाहिए, ऐसा निष्कर्ष इसमें से निकलता है। मैं यह जानता हूं कि इस तरह की राह चुनने से जो डर रहे हैं उनके डर की वजह मैं समझ सकता हूं। काँग्रेस और सरकार इन दोनों से अलग भूमिका का चयन करने पर उन्हें अपने साथ धोखा होने की आशंका है। यह अपनी दुर्बलता को कबूलना ही है, और यह सुखद नहीं होगा कि सत्ता के सहारे के बिना दलित वर्ग अपनी अलग भूमिका बना ले, मैं यह बात मानता हूं। लेकिन मैं आपसे यह पूछना चाहता हूं कि सरकार अथवा काँग्रेस इनमें से किसी पर भी निर्भर ना रहने से हमें क्या लाभ मिलेगा? केवल कोई पार्टी ताकतवर है, इसके लिए अपनी वहां इज्जत है अथवा नहीं, इस बात की फिकर किए बगैर जुड़े रहना भिखारियों का मार्ग है। शर्मनाक शरणागति है वह। कोई सभ्य व्यक्ति इसे सह नहीं पाएगा। अन्य लोग ध्यान में रखा करें कि इस तरह की ताकत दलित वर्ग कैसे प्राप्त करें, और ताकत के बल पर वे अपना कल्याण कैसे साध लें, यही आज उनके सामने सवाल खड़ा है। दलित वर्ग के आंदोलन में दो गंभीर बातों की कमी है, ऐसा दिखाई देता है। पहली बात यह कि दलित वर्ग की अपनी कोई जनमत नहीं है। और दूसरी बात यह कि, सभी दलित लोग एक जगह बैठ कर आपस में सलाह–मशविरा करें इसका कोई भी साधन उनके पास नहीं हैं। अपने दुःख जैसे थे वैसे ही रहे, इसकी वजह यह है कि हम युगों–युगों से गूंगे बन कर जिए है। अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों को हमने व्यक्त नहीं होने दिया। न्याय के नजरिए से देखें तो हम सरकार को या सुधारकों को भी दोष नहीं दे सकते। हमें यह बात माननी ही होगी कि जान–बूझ कर हमने अपने को इस हालत में रखा और उन्हें अपनी हालत के बारे में किसी भी तरह अहसास कराए बगैर या उनकी कोशिशों का समर्थन किए बगैर उन्हें दोष दे रहे हैं। अपनी सभाओं में पारित किए

हुए प्रस्ताव के रूप में सरकार के सामने हमने जो मांगें रखी हैं, उन पर सरकार की ओर से अन्य समुदायों की मांगों की तरह गंभीरता से विचार क्यों नहीं किया जाता, इस बारे में मैं चिंतित होकर सोचता आया हूं। इससे मुझे यकीन हो गया है कि हम केवल अपने प्रांत तक ही आंदोलन छेड़ सकते हैं। किसी एक प्रांत में चलाए जा रहे आंदोलन को दूसरे प्रांत में समर्थन नहीं मिलता। लेकिन इस प्रकार का आंदोलन अगर पूरे देश के केंद्रीय संगठन द्वारा छेड़ा जाता तो निश्चित तौर पर उसे पूरे देश का समर्थन प्राप्त होता। मुझे लगता है कि इस मामले में दलित वर्ग के जागृत होने की आवश्यकता है। मुझे लगता है कि दलित वर्ग को जागृत होना चाहिए और अखिल भारतीय स्तर का एक संगठन खड़ा कर उसके द्वारा अपना आंदोलन संचालित करें। अब इसके लिए सही मौका मिल रहा है। पिछले दो–तीन सालों से ऑल इंडिया डिप्रेस्ड क्लास एसोशिएशन नाम की एक संस्था बनी हुई है। लेकिन इस संस्था के अब तक केवल पदाधिकारी ही हैं, उनके सदस्य कोई नहीं हुए। यह तो एक खुला राज है। मेरे प्रांत में ठीक ऐसे ही हाल हैं। इस प्रकार झूठी और काल्पनिक संस्था दलित वर्ग की कोई सेवा नहीं कर सकती। आप लोगों को सचमुच एक जीवंत संस्था की स्थापना करनी चाहिए। आपको सचमुच एक जीवंत संस्था की स्थापना करनी होगी। उसके कार्यकर्ताओं का जाल पूरे देश में फैलाना होगा। कई कार्यकर्ताओं को उससे जोड़ना होगा और उसके द्वारा दलितों की भावनाएं आपको व्यक्त करनी होंगी। मेरे कहे अनुसार इस तरह का कोई संगठन खड़ा करने के लिए, उसका संविधान बनाने के लिए इसी सभा में अगर एक छोटी–सी कमेटी का गठन करेंगे तो बेहतर रहेगा। हमारी यह बहुत बडी कमी है जिसे जितनी जल्दी हो सके हमें पूरी करनी होगी।

(ग) दलित वर्ग की उन्नति

34. सज्जनों! हमें राजनीतिक सत्ता प्राप्त करनी होगी। इसीलिए इस विषय पर मैंने लंबे समय तक भाषण देकर आपको आग्रहपूर्वक अपने मन की बात बताई। लेकिन एक और बात भी बता दूं कि, दलित वर्ग के सभी रोगों पर केवल राजनीतिक सत्ता की औषधि ही काम नहीं आ सकती। दलित वर्ग की मुक्ति सामाजिक उन्नति में है। दलित वर्ग को चाहिए कि वे अपने बुरे रीति–रिवाजों का त्याग करें। जीवनयापन के उनके जो बुरे मार्ग हैं उन्हें उनका त्याग करना होगा। जीवन जीने के तरीके में बदलाव करने से आपका रहन–सहन बेहतर होना चाहिए। इतना कि औरों के मन में आपके बारे में आदर की भावना पैदा हो और उन्हें आपसे मित्रता करने की इच्छा हो। आपको सुशिक्षित होना होगा। सिर्फ लिखने–पढ़ने का ज्ञान काफी नहीं होगा। हम में से कुछ लोगों को शिक्षा के आखिरी पायदान तक पहुंचना होगा। सो, उनके साथ आगे बढ़ कर पूरे समाज का दर्जा ऊंचा होगा। "रखा जिस तरह अनंत

ने, रहे आजम उसी तरह" इस उक्ति की तरह, भगवान जिस हाल में रखेंगे वैसे ही रहने की मानसिकता को त्यागना होगा। और लोगों को भी इसके लिए प्रेरित करना होगा। क्योंकि जो उपलब्ध है, उसमें संतुष्ट न रहने की मानसिकता के कारण ही समाज की उन्नति होती है। आखिरी और बेहद महत्वपूर्ण बात यह है कि दलित वर्ग में उत्साह का निर्माण करना होगा। सो उनके मन का डर खत्म होगा और अन्य लोगों की तरह ही वे भी अपने मानवीय अधिकारों का इस्तेमाल करने लगेंगे। यह हमारे हाथ में केवल राजनीतिक सत्ता के आने भर से नहीं होगा। हमें यह जानना होगा कि, अपना उद्देश्य हासिल करने का वह एक साधन है। मैं यह चेतावनी दे रहा हूं क्योंकि, दलित वर्ग के केवल कुछ लोगों को विधानसभा में प्रतिनिधित्व मिलने से दलित लोगों की यातनाएं खत्म होंगी ऐसी गलतफहमी कुछ लोगों को हो रही है। असल में यह काम सामाजिक उन्नति से ही हो सकता है। स्व. गोखले की 'सर्वंट्स ऑफ इंडिया' या स्व. लाला लाजपत राय की 'सर्वंट्स ऑफ पीपल' संस्था की तरह दलित वर्ग की एक संस्था स्थापन कर उस पर यह जिम्मेदारी सौंपनी होगी।

उपसंहार

35. सज्जनों! जरूरत से बहुत लंबा भाषण देकर मैंने आपको परेशान किया है। मुझे इस बात का खेद है। किन्तु संक्षिप्तता हमेशा अपेक्षित होती है, लेकिन जहां राजनीति के बारे में कुछ भी न जानने वाले लोग जहां पहली ही बार इकठ्ठा हुए हों ऐसी जगह आपके सामने उपस्थित समस्या के हर पहलू पर मैं सोचना चाहता था। आपका जहां तक संभव हो अधिक से अधिक मार्गदर्शन मैं करना चाहता था। इसलिए, इस लंबे भाषण के लिए मैं क्षमा प्रार्थी हूं, ऐसा मुझे लगता है। उम्मीद करता हूं कि, हमारी यह सभा आखिरी सभा साबित ना होकर, वह हमारे भव्य आंदोलन की यह केवल एक शुरुआत हो और उसके द्वारा हमारे लोगों को मुक्ति प्राप्त हो और इस देश में हर व्यक्ति यह एक मूल्य – राजनीतिक, सामाजिक, और आर्थिक मूल्य माना जाए ऐसे समाज का निर्माण का वह कारण बने।

आपने मेरा जो सम्मान किया है और मेरा भाषण सुन लिया, इसके लिए मैं आप सबका आभारी हूं।[1]

---

1. 'डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के भाषण' – खंड–2, पृष्ठ सं. 65–98, सम्पादक – प्रो. मा. फ. गांजरे

34
देश के स्वराज का मैं समर्थन करता हूं

दिनांक 4 अक्तूबर, 1930 को डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर गोलमेज परिषद के लिए इंग्लैंड जाने वाले थे। इसीलिए 2 अक्तूबर, 1930 के दिन शाम 4 बजे मुंबई इलाके के अस्पृश्य माने गए वर्ग की ओर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को मानपत्र और थैली अर्पण करने का समारोह डॉ. सोलंकी की अध्यक्षता में दामोदर हॉल के मैदान में संपन्न हुआ। समारोह में करीब छः से सात हजार लोग उपस्थित थे।

अध्यक्ष द्वारा किए गए शुरुआती भाषण के बाद समारोह समिति के महासचिव श्री सीताराम नामदेव शिवतरकर जी ने मानपत्र पढ़ कर सुनाया। उन्होंने कहा कि थैली में अब तक 3700 रुपए इकठ्ठा हुए हैं और उम्मीद है कि कल शाम तक यह रकम 5000 रुपयों तक पहुंच जाएगी।[1] मानपत्र इस प्रकार था –

मानपत्र

डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर, एम. ए., पी.एच.डी., डी.एस.सी., बार एट–लॉ, एम.एल.सी.

परमप्रिय महाराज, हिंदुस्तान को ग्रेट ब्रिटेन द्वारा स्वराज के अधिकार देने के मामले में बातचीत करने के लिए लंदन में होने वाले गोलमेज सम्मेलन में हिस्सा लेने के लिए सरकार से आमंत्रण पाकर आप जा रहे हैं। ऐसे समय आपके बारे में अपने दलित बंधुओं के मन में जो आदर, प्रेम और विश्वास है उसे व्यक्त करना हमारा पवित्र कर्त्तव्य है, ऐसा हम मानते हैं। आपने जो प्रशंसनीय ज्ञान प्राप्त किया है और जिसके कारण आपको जो अनुभव प्राप्त हुए हैं, उनका उपयोग अपने देश और अपने देशबंधुओं के हित के लिए उपयोग करने का समय आ गया है, जिसके लिए हम आपका हार्दिक अभिनंदन करते हैं।

विद्वतरत्न महोदय, समाजशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि गहन विषयों का दीर्घकाल तक अध्ययन करने के बाद, उनके तहत प्रमेय आदि पर आपने यथायोग्य चिंतन किया है। इस ज्ञान को व्यावहारिक स्तर पर आजमाने के कई मौके आपको अपने देश में और विदेशों में प्राप्त हुए हैं। अपने देश की उन्नति के लिए किन बातों की फिलहाल आवश्यकता है, यह आपने मन में तय किया ही हुआ है। इन बातों से

1. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर चरित्र : चा. मे. खैरमोडे, खंड 4, पृ. 66

हमें अनुभव हुआ है कि किसी बात का निडरता से और निरपेक्ष बुद्धि से समर्थन करने का मानसिक धैर्य आपके पास है। इसलिए, आप जिस काम के लिए जा रहे हैं, उसमें आपके इन प्रशंसनीय गुणों को सुयोग्य निर्देशन मिलेगा और एक सच्चे देशभक्त और सत्यनिष्ठ होने की आपकी कीर्ति में और इजाफा होगा, इसका हम सबको पूरा भरोसा है। लोभ और लाभ के वशीभूत होकर स्वदेश के वास्तविक चिरस्थायी कल्याण की बातों से आप उदासीन नहीं होंगे या उन पर अमल करने से आप बिल्कुल नहीं चूकेंगे इसका हमें पूर्ण विश्वास है। हमारी संस्कृति अत्युच्च दर्जे की होने के कारण आपसे इस तरह का कार्य नहीं होगा, इसका हमें पूरा भरोसा है। अपने देश की सही–सही पैरवी करने का मौका आपको प्राप्त हो रहा है हमें पूरी उम्मीद है कि इस मौके का सही–सही फायदा उठाने में आप बिल्कुल कोई कसर नहीं छोड़ेंगे।

सुजन महाशय, हमारे देश के एक बड़े जनवर्ग के प्रति पिछली कई सदियों से धार्मिक और सामाजिक तौर पर घनघोर अन्याय होता रहा है। इन अन्यायों के कारण उस वर्ग की स्थिति बड़ी दीन–हीन हो गई है। इस स्थिति से वह जब तक नहीं उबरता तब तक हमारे देश की सही मायने में उन्नति होना असंभव है। इन बातों के बारे में इधर कई बड़े हृदयवान लोगों को खेद महसूस हो रहा है। इस जनवर्ग के उद्धार के लिए वे कोशिशें भी कर रहे हैं। लेकिन जब से आपने उसे अपने हाथ में लिया है, तब से उसे खास महत्व और विशेष परिणामकारक स्वरूप प्राप्त हुआ है। और कुछ सालों तक अगर हम अपनी कोशिशें जारी रखें तो इस मामले में काफी असर दिखाई देगा, सफलता मिलेगी। आपके जैसा सच्ची लगन वाला और समर्थ तारनहार इस समाज को पहले कभी नहीं मिला था। आप जो कोशिशें कर रहे हैं उनके कारण इस वर्ग के लिए आप देवता समान बन गए हैं। आप पर उनकी प्रगाढ़ श्रद्धा है। आपके प्रति उनके मन में भक्तिभाव है। आप उनके इन भावों के लिए सर्वथा सुयोग्य हैं। उनके हित के लिए कोई भी आत्मयज्ञ करने के लिए आप हमेशा सिद्ध होते हैं। आपकी योग्यता बहुत बड़ी है। इसलिए, आपके व्यक्तित्व का, बुद्धिमत्ता का और स्वहितकारकता के परिणाम सब लोगों के मन पर बेहतरीन ही होता है। आपके निश्चयी और योग्य व्यक्तित्व का इन लोगों को राजनीतिक अधिकार दिलाने में बेहतर उपयोग होने वाला है। और लंदन की परिषद में इस जनवर्ग के राजनीतिक अधिकारों का योग्य समर्थन आप ही के हाथों होने वाला है। हमें पूरी उम्मीद है कि इस वर्ग के लिए आप बेहतर पैरवी कर उनके हित साधने में सफलता पाएंगे।

राजनीति के मामले में आपकी नीति की रूपरेखा को कुछ दिन पूर्व नागपुर में हुई अखिल भारतीय बहिष्कृत वर्ग परिषद में अध्यक्ष स्थान से दिए अपने भाषण में आपने उजागर कर ही दिया है। हमें पूरा यकीन है कि वह नीति कुल हिंदी राष्ट्र और अस्पृश्य माने गए वर्गों के हित की है।

हे दीन–हीनों के संबल महाराज, हमने सुन रखा है कि आपकी यात्रा सिर्फ लंदन तक सीमित ना होकर, आप लौटते वक्त ऊपर जिनका जिक्र किया है, उनके उद्धार के लिए आवश्यक आर्थिक सहायता पाने के उद्देश्य से अमेरिका और अन्य देश घूम कर वहां के सह्रदयों की मदद का स्त्रोत इस अकिंचन जनवर्ग की ओर मोड़ने की कोशिश भी करने वाले हैं। आपका यह उद्देश्य बहुत ही स्तुत्य है। आपके जैसे विद्यावान, महान और स्वार्थरहित पुरुष को अमेरिका जैसे अमीर देश में आपके इस उद्देश्य में निश्चित रूप से सफलता मिलेगी और अपने लोगों का थोड़ा–बहुत कल्याण करने का सुयश आपको मिले, ऐसी हम कामना करते हैं तथा "जो का रंजले गांजले, त्यांसी म्हणे जो आपुले, तोचि साधु ओलखावा, देव तेथेचि जाणावा" (जो दुखी हैं, परेशान हैं, उन्हें जो अपना मानता है, उसमें साधु पहचानें, भगवान का वहीं दर्शन करें) इस साधु उक्ति की तरह आप सर्वमान्य और सर्वपूज्य हों और आपका जीवन सफल रहे।

आखिर में हम मन से यही चाहते हैं कि आपकी यह यात्रा अत्यंत सफल रहे और आपका स्वास्थ्य बेहतरीन रहे। आप जिस काम को करने के लिए जा रहे हैं, उसे पूरा करने की सामर्थ्य ऊर्जा आपके पास बनी रहे और सुकीर्ति संपादन कर आप सकुशल स्वदेश लौट आएं और हम सब आपके आने का उत्कंठा से इंतजार करते रहेंगे।

मानपत्र पढ़ने के बाद उसे थैली के साथ अध्यक्ष डॉ. सोलंकी के हाथों अर्पण किया गया। डॉ. अम्बेडकर ने उनका स्वीकार किया।

बाद में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर मानपत्र का जवाब देने के लिए खड़े हुए। लेकिन उनका गला भर आया था, इसलिए 5–6 मिनटों तक वे कुछ बोल ही नहीं पाए। फिर संभल कर उन्होंने अपने भाषण की शुरुआत की। उन्होंने कहा,

"अध्यक्ष महाराज और भाइयों और बहनों,

आज के दिन मैं आपको क्या सुनाऊं, मुझे कुछ सूझ नहीं रहा है। अब अगले पांच–छह महीनों तक हमारी और आपकी मुलाकात नहीं होने वाली है। पिछले दो सालों में मुझसे जो थोड़ा बहुत काम हुआ है, उसमें अगर हजारों सज्जनों का साथ नहीं होता, तो मुझ अकेले से कुछ भी नहीं बन पाता। मैंने जो कुछ काम किया है, उसमें से मुंबई विधानपरिषद के मेरे मित्र डॉ. सोलंकी ने काफी सहायता की है। 1926 में गवर्नर ने मुझे बुला कर पूछा, कि अगर अस्पृश्य समाज की ओर से डॉ. सोलंकी को चुना जाए तो उनके साथ परिषद के काम करने में आपको कोई दिक्कतें तो नहीं आएंगी? इस पर मैंने जवाब दिया था कि, सोलंकी काफी पढ़े–लिखे इंसान हैं

इसलिए परिषद के काम करने में हमारी अच्छी बनेगी। मैं थोड़ा गुस्सैल और ढीठ हूं। परिषद में काम करते समय डॉ. सोलंकी के साथ मेरे बर्ताव में कभी ये दोष व्यक्त भी हुए होंगे। लेकिन डॉ. सोलंकी ने किसी बात को मन से नहीं लगाया और पूरे मनोयोग से मदद की। इसीलिए कौंसिल के काम का सारा श्रेय डॉ. सोलंकी को जाता है। परिषद के बाहर के कामों में समता संघ ने मेरी बहुत मदद की। श्री देवराव नाईक ने आज तक मेरी जितनी मदद की है उससे मैं उन्हें अपना दाहिना हाथ मानता हूं। मुझे यकीन है कि, मैं भले ही 5–6 महीनों तक विदेशों में तब भी हम दोनों के सहकार्य के कारण हममें इतनी आत्मीयता हो गई है कि मेरे पीछे श्री नाईक ही काम कर पाएंगे। समता संघ के मेरे स्नेही श्री प्रधान, कद्रेकर, कवली आदि लोगों ने काफी मदद की है। उसी तरह श्री शंकरराव परशा ने रुपयों के मामले में काफी मदद की है। श्री शंकरराव जैसा मेरा कोई दूसरा आधारस्तंभ था ही नहीं। सार्वजनिक कार्यक्रमों के लिए रुपयों की जरूरत होती है। किन्तु, मैंने पहले–पहल शुरू किए सोलापूर बोर्डिंग के समय मेरे पास हाथ में सिर्फ 500 रुपए ही थे। बाद में एक ज्यू दोस्त को 1000 रुपयों की प्रॉमिसरी नोट लिख कर दी और इस तरह ये बोर्डिंग संस्था शुरू हुई है। इस काम में श्री शंकरराव ने बहुत मदद की। प्रेस खरीदने के लिए उन्होंने रुपयों 1800 की मदद की।

आज तक अस्पृश्य वर्ग के लिए जो थोड़ी–बहुत सेवा मुझसे बन पाई है, उसका सारा श्रेय अलग–अलग कामों के मेरे सहयोगियों को जाता है। आप जो थैली और मानपत्र दे रहे हैं, उसका मैं स्वीकार करता हूं लेकिन इस थैली की रकम का अपने निजी कामों के लिए बिल्कुल उपयोग नहीं करना है। जिस गरीब समाज की मदद से यह रकम इकट्ठा हुई है उसी गरीब जनता के कामों के लिए इसका उपयोग होना है। अखिल भारतीय दलित कॉंग्रेस के केंद्रीय संगठन के खर्चे के लिए मुंबई इलाके की ओर से चंदा इकट्ठा कर देने की बात मैंने कबूल की है। इस काम के लिए इस में से थोड़ी रकम डॉ. सोलंकी के पास जमा कर जा रहा हूं। बहिष्कृत कॉंग्रेस के लिए उन्हें इस रकम का उपयोग करना है। बाकी रकम का इस्तेमाल अलग ढंग से किया जाना है। अपनी बंद हो चुकी पत्रिका “बहिष्कृत भारत” का फिर प्रकाशन करने का मन है। वर्तमान हालात का निरीक्षण कर जो बातें सामने आएंगी, वे इस पत्रिका में दी जाएंगी। इसका नाम बदलने का मैंने निश्चय किया है। क्योंकि इस नाम के कारण कई लोग हमारी पत्रिका खरीदने से झिझकते थे, नहीं खरीदते थे। इससे, हमारी बात सारी जनता तक पहुंचे यह हमारी मंशा पूरी नहीं होती थी। इसीलिए पत्रिका का नाम बदलने का मैंने निश्चय किया है। अब पत्रिका का नाम जनता होगा और उसके संपादन की जिम्मेदारी श्री. देवराव नाईक की होगी। इस पत्रिका के लिए ग्राहक दिलाने की आप कोशिश करें। थैली की रकम

का कुछ हिस्सा मेरे द्वारा चलाए जा रहे बोर्डिंगों को दिया जाए। इस प्रकार थैली के पैसों का इस्तेमाल किया जाएगा। गोलमेज सम्मेलन के लिए विलायत जाने–आने का खर्च अगर अंग्रेज सरकार दे रही है, तो फिर यह थैली किसलिए? – इस तरह का सवाल आपमें से कुछ लोगों के मन में आना सहज है। लेकिन जिस समय मुझे आपकी मदद की जरूरत थी, तब भी जहां मैंने आपसे मदद लेने की उम्मीद नहीं रखी तो अब मेरे निजी कामों के लिए भी आपकी मदद की जरूरत नहीं होगी। जब जरूरत होगी तब मैं जरूर आपसे मदद मांगूंगा।

मैं गोलमेज परिषद के लिए जाने वाला हूं। इस सम्मेलन से कम से कम अस्पृश्य वर्ग का फायदा जरूर होगा। लेकिन जिन लोगों ने इस सम्मेलन का बहिष्कार किया हुआ है उन लोगों से मैं पूछता हूं कि यदि दो पक्षों में लड़ाई छिड़ जाए तो सुलह की भाषा बोलने में बुराई क्या है? आज सरकार और कांग्रेस के बीच आर–पार की लड़ाई जारी है। कॉंग्रेस के आंदोलन के कारण सरकार का नुकसान होता हैं इस तरह अगर दोनों पक्ष अगर अड़ जाएं तो किसी न किसी को गोलमेज सम्मेलन के द्वारा सुलह की कोशिश करनी ही होगी। सुलह का यह मार्ग गोलमेज सम्मेलन के द्वारा निकल सकता है। इस परिषद से कोई मार्ग नहीं निकलेगा, ऐसा भी कहा जा रहा है। किन्तु मुझे ऐसा नहीं लगता। जिन लोगों को लगता है कि यह परिषद असफल होगी उनसे मैं यह पूछना चाहता हूं कि यह सम्मेलन क्यों असफल रहेगा? आज हिंदू, मुसलमान और अस्पृश्य सब स्वराज चाहते हैं। हाल ही में नागपूर में हुई अखिल भारतीय बहिष्कृत कॉंग्रेस ने उस तरह का प्रस्ताव पारित किया है। इस बारे में सब की राय एक ही है। मतभेद केवल एक बात के बारे में है और वह है, स्वराज किस तरीके से दें! मतभेद इस बारे में है कि अल्पसंख्यक लोगों की रक्षा हो तो उसके कैसे उपाय हों और उन्हें किस तरीके से सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक समानता मिले। आज ऐसे हिंदू धर्म की आवश्यकता है, जिसमें सभी स्वतंत्र हों। लेकिन मतभेद हैं तो इस बात पर कि स्वराज से मिलने वाली सत्ता पूरे समाज में सही ढंग से बंटे या किसी विशिष्ट वर्ग के ही हाथ में रहे। दलित समाज, पिछड़ा वर्ग और बहुसंख्यक समाज अगर मन का बड़प्पन दिखाएं तो आपसी विवाद सुलझाना असंभव नहीं है।

अपने समाज के लिए जो जरूरी है वह तो मांगूंगा ही, लेकिन साथ में इस देश को स्वराज दिया जाए इस तरह का प्रस्ताव रखा गया, तो मैं उसका समर्थन करूंगा। इस देश की हर तरह से उन्नति हो और यह देश श्रेष्ठता के पद पर पहुंचे यह कॉंग्रेस की ही तरह हमारी भी मनोकामना है। आखिर, गोलमेज सम्मेलन पूरा होने के बाद मैं लोक–जागृति का काम करना चाहता हूं। यह बेहद महत्वपूर्ण काम है। कॉंग्रेस का आंदोलन अमेरिका, जर्मनी आदि सभी देशों में होता है। उसी तरह

अपनी अस्पृश्यता का दुख अन्य देशों तक पहुंचना चाहिए। इसीलिए मैं रशिया, जर्मनी, अमेरिका और जापान आदि देशों के प्रमुख नेताओं से मिल कर अपना दुख उनके सामने रखूंगा। इतना ही नहीं, लीग ऑफ नेशन्स के सामने भी अस्पृश्यों की समस्या रखने की मेरी इच्छा है। इसी तरह अस्पृश्यों को फिलहाल पुलिस और सेना की नौकरी पर जो पाबंदी है उसे हटवाने के लिए विशेष कोशिश करूंगा। आप सब लोगों से एक आखरी विनती करना चाहता हूं कि आप सब लोगों को एकता से और मिल–जुल कर रहने की कोशिश करनी चाहिए। हममें आपस में कई गुट पैदा हो गए हैं। पिछले दो–चार सालों में एक बेहद बुरी बात मेरी नजरों में आई है और वह यह है कि हर आदमी खुद को नेता कहलवाना चाहता है और इतराता फिरता है। यह बहुत बुरी बात है। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप अबके बाद यह सब बंद करें। हमारे सामने इतनी मुश्किलें हैं, इतने ज्यादा काम पड़े हैं कि उन्हें करने के लिए एक पूरा जिला या एक पूरा इलाका भी कुछ नहीं कर सकता। इसलिए अखिल बहिष्कृत बंधु अपने आपसी मतभेद भुला कर कंधे से कंधा लगा कर काम पर लग जाएं, इसी में अपना हित है। मेरे पीछे डॉ. सोलंकी और श्री. नाइक के मतानुसार आप चलें और समाज में जागरुकता आई है, उसे बढ़ाने की जिम्मेदारी अब आप पर सौंप कर मैं आपसे विदा लेता हूं।[1]"

डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में ये विचार व्यक्त किए।

सुना गया है कि, सभा खत्म होने के बाद अस्पृश्य लोग वहां से बाहर निकले तब बाहर इकट्ठा कुछ लोगों ने उन पर हमला किया। परेल में अस्पृश्य और कॉंग्रेस पार्टी के लोगों के दरमियान बहुत बड़ी लड़ाई हुई। उसमें पत्थर और लाठियों का इस्तेमाल किया गया। इन दंगों में 8 लोग घायल हुए। उन्हें पास ही के किंग एडवर्ड अस्पताल में इलाज के लिए भर्ती किया गया।[2]

1. डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र : चां. ग. खैरमोडे, खंड 4, पृष्ठ 66–69
2. ज्ञानप्रकाश : 4 अक्तूबर, 1930

35
जब तक इस देश में अंग्रेज सरकार है, हमारे हाथ में सत्ता आना संभव नहीं

(पहला गोलमेज सम्मेलन 1930 में लंदन में आयोजित किया गया था। इस परिषद के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को आमंत्रित किया गया था। 20 नवंबर, 1930 के दिन हुए इस पहले गोलमेज सम्मेलन में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर द्वारा किया गया पहला भाषण कई मायनों में क्रांतिकारक साबित हुआ। इंग्लैंड के अखबारों ने उनके भाषण पर विशेष गौर किया। –संपादक)

डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा,

अध्यक्ष महोदय,

मैं और मेरे सहयोगी रावबाहदुर श्रीनिवासन दलित वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में यहां उपस्थित हुए हैं। भारतीय संविधान के नवीनीकरण के बारे में सोचते हुए यहां सिद्धांततः मैं दलित वर्ग का दृष्टिकोण ध्यान में रखते हुए बोलने के लिए खड़ा हुआ हूं। इस वर्ग का प्रतिनिधित्व करना मेरे और मेरे सहयोगी के लिए सम्मान की बात है। यह दृष्टिकोण चार करोड़ तीस लाख लोगों का अथवा अंग्रेजों के शासन वाले भारत के एक पंचमांश लोगों का नजरिया है। यह दलित लोगों का वर्ग है और मुसलमानों के वर्ग से वह स्पष्ट रूप से अलग वर्ग है। हिंदू समाज के साथ उसे जोड़ कर भला ही देखा जाता हो, लेकिन किसी भी मायने में वह उस समाज का अभिन्न अंग नहीं है। दलित वर्ग का अलग अस्तित्व है, इतना ही नहीं तो हिंदुओं ने द्वेष भावना के कारण उनका एक अलग सामाजिक दर्जा तय किया हुआ है, जो हिंदू समाज की किसी भी अन्य जाति से बिल्कुल अलग है। हिंदू धर्म में कुछ जातियां ऐसी भी हैं, जिन्हें दोयम या निचला दर्जा प्राप्त है, परंतु दलित वर्ग का दर्जा सबसे अलग है। उसे भूदास और गुलाम के बीच का दर्जा प्राप्त है। भूदास और गुलामों पर स्पर्श की पाबंदी नहीं लगाई गई थी। किन्तु दलितों के स्पर्श पर पाबंदियां हैं। इसलिए गुलाम और भूदासों से भी दलितों की स्थिति बेहद चिंताजनक है। इस कारण अगर कोई भयंकर बात हुई हो तो वह यह कि उन पर गुलामी लाद दी गई। उनके मानवी क्रियाकलापों पर सीमाएं तान दी गई। ऐसा नहीं कि केवल उनके सार्वजनिक जीवन पर ही अस्पृश्यता के इस ठप्पे का असर होता है, समानता के मौके मिलने से भी उन्हें वंचित किया जाता है और मानव का अस्तित्व ही जिस पर आधारित है उन मूलभूत नागरी अधिकारों से उन्हें वंचित किया गया। इंग्लैंड या फ्रांस की सम्पूर्ण जनसंख्या जितनी जिस वर्ग की जनसंख्या है, वे जीवन–कलह में इतने संकटों,

विघ्नों से घिरे हैं कि परिणामतः मुझे यकीन है कि राजनीतिक समस्या को हल करने के सही रास्ते तक जाएगा ही। मुझे उम्मीद है कि इस प्रश्न को जितनी जल्दी हो सके हल करने की जिम्मेदारी यह परिषद स्वीकारेगी।

जहां तक संभव हो सके, मैं इस समस्या को संक्षेप में प्रस्तुत करने की कोशिश करूंगा। मैं बस यह बताना चाहता हूं कि जितनी जल्दी हो सके भारत में प्रचलित नौकरशाही को रद्द कर लोगों की, लोगों के द्वारा और लोगों के लिए चलाई जाने वाली, सरकार स्थापन की जाए। मुझे यकीन है कि दलित वर्ग के दृष्टिकोण से मेरे इस विधान के बारे में कुछ लोगों को अचरज महसूस होगा। क्योंकि दलित वर्ग को ब्रिटिश शासकों के साथ जोड़ने वाला धागा बिल्कुल अलग किस्म का है। धर्मांध हिंदुओं ने पीढ़ी–दर–पीढ़ी दलितों पर जो अन्याय किए, उनका जो दमन किया उनसे आंशिक छुटकारा दिलाने वाले मुक्तिदाता के रूप में उन्होंने अंग्रेजों का स्वागत ही किया। हिंदू, मुसलमान और सिक्खों के खिलाफ होकर अंग्रेजों के पक्ष में लड़ कर उन्होंने भारत का साम्राज्य उन्हें प्राप्त करवा दिया। इसके बदले में दलितों के विश्वस्त के रूप में भूमिका निभाने का वचन भी अंग्रेजों ने दिया था। इस तरह दोनों के बीच जो घनिष्ठ संबंध था, उसकी पृष्ठभूमि पर दलितों के मन में जो यह परिवर्तन आया वह एक लक्षणीय बदलाव की तरफ संकेत कर रहा है। इस मतपरिवर्तन के कारणों को ढूंढना मुश्किल नहीं है। केवल बहुमत के हाथों अपना भविष्य सौंप देना है, इस इच्छा के कारण हमने यह निर्णय नहीं लिया है। आप जानते ही हैं कि भारत का बहुमत और मैं जिस अल्पमत का प्रतिनिधि हूं, उनमें कभी बेहतर रिश्ते नहीं रहे। हमने अपना निर्णय अलग से लिया है। हम जिन हालात में फंसे हैं, उनके संदर्भ में वर्तमान सरकार को हमने जांचा–परखा है और अच्छी सरकार के लिए जो आवश्यक होते हैं, वे मूलतत्व इस सरकार में नहीं हैं, यह हमने पाया है। आज के हमारे हालात और ब्रिटिषराज से पहले का भारतीय समाज की आपस में तुलना करें तो पता चलता है कि पुराने समाज में हमारे हिस्से जो दुर्भाग्यपूर्ण हालात आए थे, उनसे निकल कर आगे की ओर बढ़ने के बजाय हम बस कालक्रमण कर रहे हैं। ब्रिटिशों के आने से पहले अस्पृश्यता के कारण हम अत्यंत घिनौने हालात में दिन बिता रहे थे. ये हालात दूर करने के लिए अंग्रेज सरकार ने क्या कुछ किया है? अंग्रेजों के आने से पहले हमें गांव के कुएं पर पानी भरने के लिए पाबंदी थी। कुओं पर पानी भरने का अधिकार क्या अंग्रेज शासन ने हमें दिलाया? अंग्रेजों के आने से पहले हम मंदिरों में प्रवेश नहीं कर सकते थे, क्या अब हम मंदिरों में जा सकते हैं? अंग्रेजों के आने से पहले पुलिस में हमारी भर्ती की इजाज़त नहीं थी। उस पर पाबंदी लगी हुई थी।

यह वाक्य – डॉ अम्बेडकर लाइफ एंड मिशन, घनंजय कीर पृ. 150

क्या अब अंग्रेज सरकार हमें पुलिस में प्रवेश दिला रही है? अंग्रेजों के आने से पहले हमें सेना में प्रवेश नहीं दिया जाता था। क्या ये सरकार हमें सेना में नौकरी करने की इजाज़त देती है? क्या आज यह क्षेत्र हमारे लिए खुला है? इनमें से किसी भी सवाल का हम हां में जवाब नहीं दे सकते हैं। इतने लंबे अर्से तक जिन्होंने राजसत्ता चलाई, वह केवल इसलिए कि वे अंग्रेज थे। मैं बड़ी खुशी से यह बात मानता हूं कि उन्होंने हमारे लिए कुछ अच्छे काम भी किए हैं। लेकिन हमारे हालात में उन्होंने कोई बुनियादी बदलाव नहीं किए। समाज की जो व्यवस्था थी, उसी को उन्होंने सुरक्षा प्रदान की। एक चीनी दर्जी को नमूने के तौर पर एक पुराना कोट दिया गया था जिसमें कुछ सिलवटें और छेद पड़े हुए थे। उसने हुबहू नया कोट बनवाते हुए उस पर ठीक जगह पर सिलवटें और छेद भी बना डाले। ठीक इसी तरह का ब्रिटिश सरकार का इस बारे में कार्य रहा है। ब्रिटिशों ने ड़े सौ सालों तक इस देश पर राज किया, किन्तु हमारे दु:ख, खुले ज़ख्मों की तरह वैसे के वैसे ही रहे। उनका कोई इलाज नहीं किया गया।

अंग्रेजों ने हमारे प्रति सहानुभूति व्यक्त नहीं की या वे हमारी स्थितियों के बारे में उदासीन रहे इस कारण हम उन्हें दोष दे रहे हैं ऐसा नहीं है। हमने पाया कि हमारी समस्याओं का तोड़ निकालने में वे पूरी तरह अकार्यक्षम हैं। सिर्फ उदासीनता की समस्या होती, तो हम कह सकते थे कि वह तात्कालिक हो सकती है। उसके कारण फिर हमारी राय में कोई गंभीर बदलाव नहीं आते। लेकिन हालात का गहराई से विश्लेषण करने के बाद ऐसा प्रतीत होता है, कि यह केवल उदासीनता का मामला नहीं है, अपने कर्तव्य को न जान पाने की अकार्यक्षमता के कारण ही ऐसा हुआ है। दलित वर्ग को लगता है कि भारत की अंग्रेज सरकार पर दो गंभीर तरह के बंधन हैं। पहले बंधन का स्वरूप अंतस्थ है और जो लोग अधिकार के पदों पर हैं, उनकी भूमिका, उनके हितसंबंध और उनकी प्रेरणाओं के कारण ये बंधन निर्माण हुए हैं। अंग्रेज सरकार हमारे मसले को सुलझाने में हमारी मदद नहीं कर सकती। इसलिए नहीं बल्कि वे अगर मदद करते हैं, तो उनके कृत्य, उनकी भूमिका, उनके हितसंबंध और उनकी प्रेरणाओं के साथ मेल नहीं खाते इसलिए वे हमारी मदद नहीं कर सकते। अगर इस तरह कोई उपाय किया तो उसके लिए हिंदू समाज की ओर से तीव्र विरोध होगा, इस बात की आशंका भी उन्हें उपाय करने से रोकता है। भारतीय समाज के मर्मस्थान पर वार करने वाले दोषों को खत्म करना जरूरी है, यह बात अंग्रेज सरकार जान गई है। इन्हीं दोषों की वजहों से दलित वर्ग का जीवन हजारों सालों से सड़ता रहा है, यह वे जानते हैं। अंग्रेज सरकार को इस बात का अहसास है कि भारत के जमींदार बहुजन समाज को बेरहमी से निचोड़ते रहे हैं। पूंजीपति भी मजदूर वर्ग को जीने लायक मजदूरी नहीं देते और न काम पर

सहूलियतें उपलब्ध करा देते हैं। लेकिन इनमें से किसी भी कुव्यवस्था, रीति–रिवाजों के बारे में कुछ करने की पहल सरकार की नहीं, यह बड़े दुःख की बात है। सरकार क्यों नहीं कुछ करती? जो करना चाहें वह करने के लिए क्या उनके पास कोई कानूनी अधिकार नहीं हैं? ऐसा बिल्कुल नहीं है। सामाजिक और आर्थिक जीवन के प्रचलित ढर्रे को उन्होंने केवल इसलिए छोड़ना, उसे धक्का लगाना, इसमें बदलाव करना उचित नहीं समझा क्योंकि उन्हें डर था कि हितसंबंधी वर्ग द्वारा इसका तीव्र विरोध किया जाएगा। ऐसी सरकार से किसका और क्या कल्याण होगा? इन दो बातों से अपाहिज सरकार से बस यही उम्मीद की जा सकती है, कि भारत की सामाजिक स्थितियां पहले जैसी ही बनी रहें। हम ऐसी सरकार चाहते हैं, जिसके सत्ताधारी देश के सर्वोच्च हित के बारे में प्रतिबद्ध हों। प्रचलित सामाजिक और आर्थिक रीति–रिवाजों में सुधार लाने की कोशिश की जाए तो लोगों में आज्ञापालन की प्रवृत्ति कब नष्ट होगी और कब विद्रोह करने की प्रवृत्ति जोर मारेगी, इन दो बातों के बीच की सीमारेखा को भांपनेवाली और निडरता से सुधारों को लागू करने वाली सरकार हम चाहते हैं। क्योंकि ऐसी ही जगह न्यायप्रियता और उपयुक्तता की परख होती है। अंग्रेज सरकार कभी भी इन कर्त्तव्यों को निभाने की कसौटी पर खरी नहीं उतर सकती। ये कार्य सिर्फ लोगों की, लोगों द्वारा और लोगों के लिए चलाई जाने वाली सरकार के जरिए ही हो सकता है।

दलित वर्ग द्वारा अपने दृष्टिकोण से उपस्थित किए गए कुछ सवाल और उनके संभाव्य जवाब इस प्रकार हैं। इसीलिए हम ऐसे नतीजों पर आ पहुंचे हैं कि हमारी आज की विशिष्ट संकटपूर्ण स्थिति में बदलाव लाने के सोच से आपके उद्देश्य अच्छे हो सकते हैं लेकिन आज की नौकरशाही भारत सरकार पूरी तरह सामर्थ्यहीन है। हमारे दुःख दूर करने का सामर्थ्य किसी में नहीं है, इसका हमें यकीन हो चुका है। केवल हम ही अपने दुःख दूर कर सकते हैं। और जब तक हमारे हाथ में राजनीतिक सत्ता नहीं आती, तब तक हम अपने दुखों को समाप्त नहीं कर सकते। अंग्रेज सरकार जब तक इस देश में है, तब तक राजनीतिक सत्ता का बूंद भी हमारे हाथ में नहीं आ सकता। केवल स्वराज्य के संविधान के द्वारा ही राजनीतिक सत्ता हमारे हाथ में आने की संभावनाओं का निर्माण संभव है। इसके अलावा हमारे लोगों की मुक्ति किसी और रास्ते संभव नहीं लगती है।

अध्यक्ष महोदय, एक और बात की ओर मैं आपका विशेष ध्यान दिलाना चाहता हूं। दलित वर्ग का नजरिया आपके सामने स्पष्ट करते हुए मैंने अब तक कभी 'स्वयंसत्तात्मक दर्जे का राज्य' ऐसे शब्दों का प्रयोग नहीं किया है। इस शब्द का गर्भितार्थ न जानने की वजह से या भारत को स्वसत्तात्मक राज्य का दर्जा प्राप्त होने के लिए दलितों का विरोध है इसलिए मैं इस शब्द के प्रयोग करने से बचता

रहा ऐसी बात नहीं है। इस शब्द का प्रयोग मैं केवल इसलिए नहीं कर रहा, क्योंकि इस शब्द के जरिए दलित वर्ग की भूमिका पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो रही है। दलित वर्ग के लिए सुरक्षा का प्रबंध वाले स्वसत्तात्मक दर्जे का राज्य दलित भी चाहते हैं। हालांकि वे मुख्य रूप से एक मुद्दे पर जोर देना चाहते हैं। वे जानना चाहते हैं कि स्वसत्तातमक दर्जे वाले भारत सरकार का कामकाज किन तत्वों के आधार से चलने वाला है? राजनीतिक सत्ता का केंद्र कहां होगा? वह किसके हाथ में रहेगा? क्या दलित भी उसका वारिस होगा? इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक नए संविधान की राजनीतिक व्यवस्था जब तक हाथ में नहीं होती तब तक दलितों को संदेह है, कि उन्हें राजनीतिक सत्ता का अल्पांश भी नहीं मिलेगा। इस व्यवस्था का निर्माण करते हुए भारतीय सामाजिक जीवन के कुछ कठोर सत्यों को अनदेखा नहीं किया जा सकता। भारतीय समाज विभिन्न जातियों की श्रेणियों से बना हुआ है। इस समाज रचना में एक व्यवस्था पनपी है, जिसके तहत बढ़ती श्रेणी के आधार पर सम्मान और उतरती श्रेणी के आधार पर अवमान की जातिगत श्रेणी भी निर्माण हुई है। समता और बंधुभाव जनतंत्र प्रशासन के अत्यावश्यक अंग होते हैं जिन्हें पनपने का अवसर यह समाज रचना कतई नहीं देती। दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि, हमें यह बात भी मान ही लेनी चाहिए कि बुद्धिमान प्रबुद्ध वर्ग को भारतीय समाज में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। लेकिन यह वर्ग केवल श्रेष्ठ श्रेणियों से ही बना है। यह वर्ग भले ही देश के बारे में बोल रहा हो और राजनीतिक आंदोलन का नेतृत्व कर रहा हो, किन्तु जिन जातियों में वह पैदा हुआ, उन जातियों के बारे में संकीर्ण दृष्टिकोण को उसने नहीं त्यागा है। दूसरे शब्दों में कहना हो तो समाज की मानसिकता और राजनीति की बनावट में आपसी संबंध होना चाहिए। और दलितों का आग्रह है कि उस व्यवस्था को चाहिए कि वह सामाजिक मानसिकता के बारे में गौर करे। ऐसा न हो तो आप जो योजना बनाएंगे वह केवल अग्रकेंद्रित होने के कारण जिस समाज के लिए वह तैयार की जाएगी उसे ही अयोग्य साबित होगी।

अपना भाषण पूरा करने से पहले मैं एक और बात का विवेचन करना चाहता हूं। हमें बार–बार यह बताया जाता है कि दलित वर्ग का मसला असल में सामाजिक मसला है और उसे हल करने का उपाय राजनीति से अलग है। हम इस विचार का पुरजोर विरोध करते हैं। इस बारे में हमारी पक्की राय है कि जब तक दलित वर्ग के हाथ में राज्य शासन के सूत्र नहीं आएंगे, तब तक उनके प्रश्नों का निराकरण होना कभी भी संभव नहीं है। अर्थात्, दलितों का प्रश्न राजनीतिक हो तो उसे हल भी उसी तरह किया जाना चाहिए। इसीलिए, मैं इस समस्या को राजनीतिक मुद्दा मान कर प्रस्तुत कर रहा हूं। राजनीतिक समस्या के तौर पर ही उस पर विचार होना चाहिए। जिन लोगों की हम पर भयावह आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक हुकूमत

है, उन्हीं लोगों के हाथों में राजनीतिक सत्ता का हस्तांतरण हो रहा है, इसका हमें अहसास है। असल में स्वराज्य शब्द के साथ हमारे मन में वे सारी यादें मंडराती हैं, जब हम अन्याय, अत्याचार के शिकार हुए थे, हमारा दमन हुआ था और हमारे मन में डर पैदा होता है कि भावी स्वराज्य में उसकी पुनरावृत्ति होगी। इसके बावजूद हमें लगता है कि आजादी मिलनी चाहिए। हमारे देशबंधुओं के साथ हमें भी राज्य की सत्ता में बराबरी का हिस्सा मिलेगा इसी उम्मीद के साथ इस गंभीर और अनिवार्य जोखिम को उठाने के लिए हम तैयार हैं। बल्कि ऐसा जोखिम उठाने का साहस हम कर रहे हैं। हालांकि इसे हम एक ही शर्त पर मंजूरी दे सकते हैं कि हमारी समस्या केवल समय की मर्जी पर न छोड़ी जाए बदलते समय के अनुसार कुछ चमत्कार हो जाएंगे, इस भोली आश के सहारे हम सालों से इंतजार में बैठे हुए हैं। आज मुझे इसी बात से डर लगता है। प्रातिनिधिक सरकार को विशेष अधिकार देने की प्रक्रिया के दौरान ब्रिटिश सरकार ने हर कदम पर हमें दरकिनार किया है। राज्य की सरकार में हमारा भी हिस्सा है, यह विचार किसी के मन में ही नहीं आया है। आज मैं अपनी पूरी ताकत समेट कर, जोर दे कर बोल रहा हूं कि इसके बाद कोई हमारी सहनशीलता को आजमाएं नहीं। सभी राजनीतिक प्रश्नों के साथ ही हमारी समस्याओं को भी हल किया जाना चाहिए। किसी भी हाल में आगामी अस्थिर राज्यकर्त्ताओं के भरोसे, उनकी सहानुभूति और दया के सहारे नहीं छोड़ देना चाहिए। दलित वर्ग इस बात पर इतना जोर क्यों देता है इसका कारण साफ है। हमारे इस आग्रह के पीछे के कारणों का विश्लेषण भी साफ है। एक व्यावहारिक सत्य सब जानते हैं कि स्वामित्वविहीन व्यक्ति की तुलना में स्वामित्व प्राप्त व्यक्ति हमेशा शक्तिशाली होता है। साथ में यह भी कहीं दिखाई नहीं देता कि स्वामित्वविहीन के लिए स्वामित्व प्राप्त व्यक्ति अपना स्वामित्व छोड़ दे। इसीलिए, हमारी सामाजिक समस्या आगे चल कर हमारे हित साध्य होने से हल होगी, ऐसी आशा हम कर ही नहीं सकते। आज इस सवाल को सर्वसहमति से हल किए बगैर यदि हम उनके हाथों में सहजता से सत्ता को जाने देते हैं, तो आज जिन्हें हम सत्ता में लाने के लिए मदद करेंगे, कल उन्हीं को सत्ता से नीचे खींचने के लिए हमें एक बार और विद्रोह करना पड़ेगा, क्रांति लानी पड़ेगी। हमारे इस अतिरिक्त संदेह के लिए अगर कोई हमें दोष देना चाहे तो बेशक दे क्योंकि प्रचंड विश्वास के कारण हामी भर कर ध्वस्त होने की तुलना में धिक्कारा जाना बेहतर ही होगा। इसीलिए कहता हूं कि हमारे मसलों को हल करने के लिए सत्ता में हमारी भी भागीदारी, हमारा हक हो, यही एक न्याय और सही मार्ग है, ऐसा मुझे लगता है। शासकीय प्रणाली में इस तरह की व्यवस्था करना ही सबसे बढ़िया तरीका है, ऐसा मुझे लगता है। इस सत्ता को अनियंत्रित तरीके से केवल अपने ही हाथों में लेने के लिए जो लोग जी–तोड़ कोशिश कर रहे हैं उनकी मर्जी पर इस मसले को छोड़ देने से इसका हल नहीं निकलने वाला।

राज्य की व्यवस्था में दलित वर्ग की सुरक्षा और सुखरूपता, सुरक्षितता के हेतु, उन्हें किस तरह के समझौते, सुलह की उम्मीद है वह सही समय पर मैं इस परिषद के आगे रखने वाला हूं। हमें उत्तरदायित्व निभाने वाली सरकार की जरूरत है, लेकिन हम यह नहीं चाहते कि नई व्यवस्था में केवल हमारे मालिक बदले, हमारी सुपूर्दगी एक के चंगुल से दूसरे के चंगुल में न हो, इतना ही मैं आज इस अवसर पर कहना चाहता हूं। अगर आप चाहते हैं कि शासक वर्ग जिम्मेदार हो, तो यह जरूरी है विधिमंडल पूरी तरह और सच्चे मायने में प्रातिनिधिक हो! यही आज के इस अवसर मैं कहना चाहता हूं।

अध्यक्ष महोदय, इस तरह साफगोई से मुझे बोलना पड़ रहा है, इस बात का मुझे दुख है। लेकिन इसके अलावा मुझे तो और कोई पर्याय नजर नहीं आ रहा। दलितों का कोई दोस्त नहीं है। आज की सरकार ने अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए आज तक कई बहाने बना कर उनसे अपना काम निकलवाया है। हिंदुओं ने भी अपनी जरूरत से उन्हें पास लिया है, तब भी अंतिमतः उन्हें दूर करने के लिए ही लिया और स्पष्टता से अगर कहना हो तो, हिंदू उन्हें अपने अधिकारों से पूरी तरह वंचित रखना चाहते हैं। अपने विशेष अधिकारों में कोई हिस्सेदार न हो इसलिए मुसलमान भी उनका अलग अस्तित्व अस्वीकार करते हैं। यानी सरकार द्वारा दुर्बल बनाया, हिंदुओं के दमन का शिकार और मुसलमानों से अवमानित किया गया वर्ग है यह। मुझे यकीन है कि, और कहीं भी ऐसा वर्ग नहीं होगा, जिसकी इतनी असहाय और असहनीय स्थिति हो गई हो। और इसीलिए मुझे आपका ध्यान इस ओर आकृष्ट करना पड़ा है।

जिस अगले सवाल पर बातचीत होनी है उसके बारे में कहना हो तो, बड़े खेद के साथ मुझे यह कहना है कि, परिषद के सामान्य विषयों के साथ बेकार में ही इस विषय को जोड़ दिया गया है। यह सवाल इतना महत्त्वपूर्ण है कि अलग सत्र में ही अल्पसंख्यकों से जुड़ी इन संमस्याओं के बारे में सोचा जाना चाहिए। छुटपुट जिक्र करने भर से इस सवाल का हल निकलना संभव नहीं है। यह प्रश्न दलितों की दृष्टि से भी अहम होने के कारण महत्त्वपूर्ण है। अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधि के नाते हमें केन्द्र सरकार से यह उम्मीद है कि सरकार अल्पसंख्यकों के हितों को ध्यान में रखते हुए कदम उठाए और प्रांत के बहुसंख्यकों द्वारा फैलाई जा रही अव्यवस्था पर नियंत्रण रखा जाए। एक भारतीय होने के नाते भारतीय राष्ट्रवाद के संबंध में मुझे निश्चित रूप से आस्था है और इसे बढ़ावा मिले ऐसा मैं चाहता हूं और इसीलिए केंद्रीय प्रशासन पद्धति में मेरा विश्वास है। इस व्यवस्था को विघटित करने या उसमें दरारें पैदा करने का खयाल भी मुझे बेचैन कर जाता है। एक केंद्रीय शासन व्यवस्था में भारतीय राष्ट्र की छवि बनाने की अपार क्षमता है। एक केंद्रीय शासन पद्धति के

कारण ही भारत में एकराष्ट्र का भाव पनपा है। लेकिन अभी वह पूर्णावस्था तक नहीं पहुंची है। इसीलिए, आज की राष्ट्र निर्मिति की प्राथमिक स्थिति में इस एक केंद्रीय शासनपद्धति को हटाना मुझे अमान्य है। क्योंकि, भारत अभी भी पूरी तरह एक संघ राष्ट्र नहीं बना है।

तथापि, जिस तरह से इस सवाल को पेश किया गया है, उसे गौर से देखें तो यह केवल किताबी सवाल महसूस होता है। इसीलिए प्रांत की सरकारें अगर केंद्रीय सरकार के साथ विसंगत नहीं चलने वाली हों, तो संघ शासनपद्धति के बारे में भी सोचने के लिए मैं तैयार हूं।

अध्यक्ष महोदय, दलितों के प्रतिनिधि के तौर पर उनकी तरफ से जो भी कुछ मैं कहना चाहता था, वह सब मैंने आपके सामने रखा है। आज एक भारतीय के नाते हमें किन स्थितियों से मुकाबला करना पड़ता है, इस बारे में दो शब्द कहने की इजाज़त मिले तो मैं कुछ कहना चाहूंगा। राष्ट्रीय आंदोलन का मूक प्रेक्षक ना होने पर भी अब तक इस विषय पर जो गंभीर राय सामने रखी गई हैं उनके बारे में मैं अलग से भाष्य नहीं करना चाहता। हमारी समस्या का हल निकलने के दृष्टिकोण से क्या हम सही रास्ते पर चल रहे हैं अथवा नहीं, इस बात को लेकर मैं चिंतित हूं। इन उपायों का स्वरूप क्या हो यह तय करना अंग्रेजों के प्रतिनिधियों के दृष्टिकोण पर निर्भर है। मैं उन्हें इतना ही कहना चाहता हूं कि इन स्थितियों से राह निकालने के लिए सुलह का रास्ता अपनाना है या दमन का इसका निर्णय उन्हें करना है। क्योंकि निर्णय भले कोई भी हो, अंतिम जिम्मेदारी उन्हीं की होगी। आपमें से जिनका बलप्रयोग में विश्वास है उन्हें राजनीतिक दर्शन के एक महान शिक्षक एडमंड बर्क के एक चिरस्मरणीय वाक्य की याद दिलाना चाहता हूं। अमेरिका के उपनिवेश की समस्याओं के बारे में विचार कर उन्होंने अंग्रेजों के राष्ट्र को उद्देश्य कर कहा,

"बल का प्रयोग (उपयोग) केवल क्षणिक होता है। कुछ समय के लिए उसके सहारे सत्ता चलाई जा सकती है। लेकिन उन्हें हमेशा अपने अधीन रखने के लिए बल का प्रयोग करने की आवश्यकता बढ़ाने के लिए दूर नहीं कर सकते। जिस राष्ट्र को हमेशा अपने शासन में रखना हो उस पर इस प्रकार शासन नहीं किया जा सकता।"

मेरी दूसरी आपत्ति है, बल की परिणामकारकता की अनिश्चितता के संदर्भ में। बल के प्रयोग से हमेशा दहशत कायम रहेगी, ऐसा नहीं है और सुसज्ज सेना का मतलब विजय नहीं होता। आपको अगर सफलता नहीं मिली, तो फिर कोई भी मार्ग नहीं बचता। बातचीत से हल न निकले तो बल का ही प्रयोग करना पड़ता है। बल के प्रयोग से हर बार दहशत पैदा हो यह जरूरी नहीं। लेकिन बल का प्रयोग भी

अगर असफल रहे तो बातचीत में कुछ उम्मीद नहीं बचती। दया के बदले–कभी कभी सत्ता और अधिकार पाए जा सकते हैं, लेकिन शक्तिपात और हारी हुई हिंसा को भीख के तौर पर सत्ता और अधिकार की मांग नहीं की जा सकती..........

बल के इस्तेमाल के मेरे विरोध की अगली वजह है जी–तोड़ कोशिश कर आप जो कमाएंगे, उसे ही हानि पहुंचाएंगे। आप जो पाते हैं वह उसके मूल रूप में नहीं पाते हैं, आपको जो मिलता है, उसका पहले ही अवमूल्यन हुआ होता है, वह मटियामेल हुआ होता है, वह उजाड़ और उसका सर्वनाश हुआ होता है।

इस यथार्थ को आपने नजरंदाज किया और महान अमेरिका खंड आपके हाथ से निकल गया। आपने उसकी सुध ली तभी बाकी बचे राज्य आपके नियंत्रण में हैं। हममें से जो लोग सुलह की बात को मानते हैं उन्हें मैं एक सलाह देना चाहता हूं यहां के प्रतिनिधियों को शायद ऐसा लगता है कि स्वसत्ता वाले राज्यों के स्तर के बारे में होने वाली यह लड़ाई निर्णायक साबित होगी और उसी पर अंतिम निर्णय निर्भर होगा। लेकिन इतने बड़े सवाल को तार्किक सूत्रों में बांधने की कोशिश करने जैसी कोई बड़ी गलती नहीं होगी। तर्क विज्ञान से मेरा बैर नहीं है, लेकिन यहां के विद्वान अपने पूर्वानुमान ज्ञान से चुनें, यही मेरा कहना है। वरना जिन्हें दूर नहीं किया जा सकता ऐसे संकट आन खड़े होंगे। मेरा उनके लिए यही संकेत है। डॉ. जॉनसन ने जिस तरह बर्कले के सारे विरोधाभासों को कुचल दिया, उसी तरह तर्क के बल पर हार होने के बाद आप हार मान लेते हो या फिर से तर्क करते हुए उस राय को गलत साबित करने की कोशिश करते हो, यह पूरी तरह आपके स्वभाव पर निर्भर करता है। एक बात शायद कोई ठीक तरह से समझ नहीं पाया है। वह यह कि, देश की फिलहाल मानसिकता और प्रवृत्ति ऐसी है, कि बहुसंख्यक लोगों को जो अस्वीकार है, ऐसी कोई भी घटना यहां पर काम की साबित नहीं हो पाती। आप चयन करें, और हम उसको चुपचाप स्वीकार करें, यह व्यवस्था कब की खत्म हो चुकी है। वह कभी भी लौट कर नहीं आने वाली है। इसीलिए संविधान लागू हो, ऐसी अगर आपकी इच्छा हो तो नया संविधान तय करते वक्त नए संविधान को तर्क के आधार के बजाय लोक सम्मति की कसौटी पर कसना चाहिए, यही सही होगा।

36
भारत का सुरक्षा विशिष्ट जातियों तक सीमित न होकर सभी जनता के लिए हो*

16 जनवरी, 1931 के दिन गोलमेज सम्मेलन में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ। अपने भाषण में उन्होंने कहा–

महोदय,

इस रिपोर्ट के दूसरे उपविभाग के चौथे परिच्छेद में दिए गए संविधान सुधार के सुझाव की तरफ मैं आपका ध्यान खींचना चाहता हूं। इस सुझाव के अनुसार भारतीय सेना में दलित वर्ग के साथ–साथ सभी नागरिकों के दाखिल होने की इजाजत होने की बात कही गई है। सेना में भर्ती के समय केवल आवश्यक योग्यता और कार्यक्षमता पर ही ध्यान दिया जाए। मेरे इस सुझाव पर गौर किया जाए। केवल यही मैं नहीं चाहता बल्कि एक बुनियादी ढंग के संविधान सुधार का यह सुझाव है। यह सोच कर इस सभा द्वारा उसे प्रत्यक्ष लागू करने पर सोचा जाए यह भी मैं चाहता हूं। मैंने जो सुझाव दिया है उसका स्वरूप बिल्कुल सीधा–सादा है। सेना में भर्ती करते समय भारतीय नागरिकों के बीच जो भेदभाव आज बरता जाता है उसे नष्ट करने की यह मेरी कोशिश है। इसमें कोई शक नहीं कि, दलित वर्ग पर विशिष्ट हकों का आरक्षण हो इस नजरिए से ही मैं इस सुधार का सुझाव दे रहा हूं लेकिन ऐसा भी नहीं कि यह करते हुए मैं इस वर्ग के लिए परिषद द्वारा कुछ खास सिफारिशें करने की वकालत कर रहा हूं। यहां, मेरा बस इतना ही कहना है कि भारतीय सरकार के कानून द्वारा स्वीकृत तत्वों को प्रत्यक्ष में लाया जाए। भारतीय संविधान में प्रावधान है कि देश के किसी भी नागरिक को जाति, पंथ, धर्म अथवा वर्ण के कारण सार्वजनिक क्षेत्र की नौकरी पाने से वंचित न किया जाए। इसीलिए, मैं जब इस तरह के सुधार का सुझाव रखता हूं तब मुझे नहीं लगता कि मैं खास सुविधाएं या सहूलियतों की मांग कर रहा हूं।

महोदय, मैं आपका ध्यान एक बात की ओर दिलाना चाहता हूं, कि ये सुधार सर्विस कमेटी द्वारा स्वीकृत नीति के अनुसार ही हैं। इस परिषद द्वारा नियुक्त की गई सर्विस समिति की रिपोर्ट के संदर्भ पर अगर आप गौर करें तो भारतीय नागरिकों को सार्वजनिक क्षेत्र में नौकरी करने की न्यायपूर्ण और पूरा–पूरा मौका प्राप्त हो। आप पाएंगे कि, इसके लिए उस कमेटी द्वारा पूरी–पूरी कोशिश की गई है। सरकारी नौकरी से वंचित रखने वाले बंधनों से सुरक्षा प्रदान कर समिति ने एक तरह से

*मूल अंग्रेजी भाषण के मराठी में किए गए अनुवाद पर आधारित हिंदी अनुवाद

मौलिक अधिकार ही तय किए हैं और इससे आगे जाकर दलित और एंग्लो इंडियन जैसी विशिष्ट जातियों का जिक्र करते हुए उनके लिए खास सिफारिशें की हैं।

महोदय, ऐसा नहीं कि ये सुधार केवल दलित वर्ग के हित में हैं, मैं यहां विनम्रता पूर्वक आपका ध्यान इस बात की ओर दिलाना चाहूंगा कि, ये सुधार सभी जातियों के और भारतीय नागरिकों के कल्याण के लिए हैं। देश की किसी भी नौकरियों पर किसी एक खास जाति का एकाधिकार प्रस्थापित करने की इजाजत देना कुल नागरिकों के साथ धोखा करना है ऐसा मुझे लगता है। गर ऐसा होता है तो उस विशिष्ट जाति के लोगों को सम्मान की जगहों पर रहने का सुरक्षात्मक दर्जा दिया जाता है जिससे कि न सिर्फ उन जातियों में श्रेष्ठत्व की भावना पैदा होती है, बल्कि लोगों के कल्याणकारी मार्ग पर वह एक संकट बन जाता है और उन्हें उस जाति पर ही निर्भर होकर रहने पर मजबूर होना पड़ता है। इसीलिए मेरा निवेदन है कि, चूंकि हम भारत के लिए नए संविधान का निर्माण कर रहे हैं इसलिए भारतीय नागरिकों में से हर एक को उसकी योग्यता के अनुसार देश की हर सरकारी नौकरी करने की इजाजत मिले ऐसी पद्धति निर्माण करना हमारा कर्त्तव्य है। मैं जो सुधार यहां सबके सामने रख रहा हूं वह केवल समिति की रिपोर्ट में प्रकाशित दर्ज तथ्यों पर आधारित तर्कशुद्ध परिणाम मात्र हैं जो कि, चौथे विभाग में से पहले उपविभाग में दर्ज हैं।

"इस उपसमिति की राय यही है कि, नई राज्य व्यवस्था की भारत की नई भावी सरकार और भारत की सुरक्षा ज्यादा से ज्यादा भारतीय लोगों से ही जुड़ा हो, ब्रिटिशों के साथ नहीं।"

महोदय, अगर इस कथन का कुछ मतलब हो तो भारत की सुरक्षा अधिकाधिक अनुपात में भारत की सभी जनता के साथ जुड़ी हो, किसी एक जाति के साथ उसके जुड़े होने से कोई फायदा नहीं होगा।

इसीलिए, मेरा सुझाव है कि मैंने जो संविधान सुधार प्रस्तुत किए हैं, उनको स्वीकार किया जाए।"

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के भाषण के बाद हुए विचार–विमर्ष में मि. थॉमस कहते हैं कि उपसमिति द्वारा साफ तौर पर भारतीयकरण (Indianisation) शब्द का प्रयोग किया है इसलिए अलग से गलती को सुधारने की जरूरत नहीं है। इस पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर कहते हैं,

"मेरे कथन का अर्थ स्पष्ट है, मैं यह कहना चाहता हूं कि सभी जातियों के लोगों द्वारा नौकरियां पाई जा सकें, इसी तरह भारतीयकरण हो। आज भी भारतीयकरण को कुछ जातियों का एकाधिकार यही अर्थ प्राप्त है।"

37
मैं (बेढंगे) विचित्र देशभक्तों की तरह नहीं हूँ

19 जनवरी 1931 को गोलमेज सम्मेलन में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ। उन्होंने अपने भाषण में कहा,

"माननीय प्रधानमंत्री,

किसी देश के राजनीतिक जीवन को एक सूत्र में पिरोने की, उसमें सिलसिला बनाने की कोशिश करते हुए हमेशा दो महत्त्वपूर्ण सवालों का सामना करना पड़ता है। इसीलिए गोलमेज सम्मेलन को इन दो सवालों पर ध्यान केंद्रित करना होगा। पहला सवाल है जवाबदेही (त्मेचवदेपइसम) प्रशासन का। और दूसरा – प्रातिनिधिक सरकार का।

प्रांत की जिम्मेदार सरकार के बारे में मुझे बहुत कम बातें बतानी हैं। मेरे मतभेदों को गृहित मान कर मंडल ने जो रिपोर्ट पेश की है उसका मैं समर्थन करता हूं, वह मुझे मान्य हैं, लेकिन केंद्रीय प्रशासन के बारे में मेरे मन में शंकाएं होने के कारण मेरा नजरिया पूरी तरह अलग है। संघराज्य की उपसमिति ने आज की नौकरशाह प्रशासन पद्धति में बदलाव लाने की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया कहना बेइमानी होगी। हालांकि, मेरी अपनी राय आपसे छिपाना भी उसी तरह की बेइमानी होगी। समिति ने जो सुझाव दिए हैं वे अव्यावहारिक हैं, पक्की नींव पर आधारित नहीं हैं और उनमें व्यक्त की गई जिम्मेदारी विश्वसनीय नहीं, जाली है।

लॉर्ड चान्सेलर ने हमें बताया कि उन्होंने हमारे लिए बीज बोने का काम किया है, लेकिन पौधे की देखभाल खुद हमें करनी होगी। महोदय, इस अति महत्त्वपूर्ण सम्मेलन में चान्सेलर ने बहुत बड़ा काम किया है। इसके लिए हम सचमुच उनके आभारी हैं। मैं उनके प्रति ऋणी होने के बावजूद, उनका लगाया पौधा उनके अनुमानों के अनुसार बड़ा होगा, इसकी मुझे बिल्कुल उम्मीद नहीं है। मुझे यह डर लगता है कि बीज के रूप में उन्होंने जो अनाज चुना है, वह निःसत्व है और जिस जमीन में उसे बोया गया है, वह जमीन भी उनकी बढ़त के अनुकूल नहीं है।

भारत के भावी संघराज्य के संविधान के बारे में मेरे विचार मैंने लॉर्ड चान्सेलर को सादर किए हैं। जिस समिति के वे अध्यक्ष हैं उस समिति ने उन पर विचार किया है अथवा नहीं यह मुझे पता नहीं है. क्योंकि, वे जिस समिति के अध्यक्ष हैं उसकी रिपोर्ट में मेरे विचारों पर गौर किया गया है यह मुझे कहीं दिखाई नहीं दिया। मैंने वहां जो विचार व्यक्त किए हैं वही मेरा नजरिया अब तक कायम है और मेरे विचारों से बड़े मायनों में मेल न खाने वाले संविधान को मैं मंजूरी नहीं दे सकता। सचमुच

यदि किसी ने मुझसे यह कहा कि, फिलहाल जो प्रणाली अस्तित्व में है और समिति द्वारा जो मिश्र पद्धति प्रस्तुत की गई है, इन दोनों में से किसी एक का चुनाव करो तो मैं प्रचलित प्रणाली ही चुनूंगा। लेकिन समिति के रिपोर्ट वाला केंद्रीय सरकार का संविधान अगर टी. बी. सप्रू को मान्य होगा तो उसका विरोध करने का कोई कारण मेरे पास नहीं होगा। क्योंकि वे परिषद के मित्र, दार्शनिक और मार्गदर्शक हैं, उसी तरह भारतीय युवाओं के प्रतिनिधि कहलाने वाले श्री जयकर और भारत के गैर–ब्राह्मणों की बात करने वाले श्री ए. पी. पात्रो यदि इस संविधान से खुश हों तो मैं भी उसका विरोध नहीं करूंगा। आज मेरी स्थिति इस प्रकार की है कि उस संविधान का मैं विरोध भी नहीं करता और उस संविधान को मैं मान्यता भी नहीं देता। जिन्हें उसे प्रत्यक्ष लागू करना हैं, मैं यह मसला उन्हीं पर छोड़ता हूं।

जिनका मैं प्रतिनिधि हूं, उनकी तरफ से प्रशासन के बारे में मेरे लिए कोई आज्ञा न होने के कारण मेरे लिए इस नीति का अवलंब करना आसान हो जाता है। लेकिन मेरे लिए एक और तरह की आज्ञा जरूर दी गई है, जिसके तहत उत्तरदायी शासन पद्धति का मैं विरोध ना करूं और साथ ही उत्तरदायी सरकार सही मायनों में प्रातिनिधिक सरकार न हो तो उसे मान्यता न दूं। परिषद द्वारा प्रातिनिधिक सरकार के मुद्दे पर अब तक किस तरह अमल किया है, और उसे कितनी सफलता या असफलता मिली है, यह मैं जब अवलोकन करता हूं, तब मुझे घोर निराशा होती है। वोट देने का अधिकार और विभिन्न वर्गों को विधिमंडल में मिला प्रतिनिधित्व, खालिस प्रातिनिधिक प्रशासन के दो आधार स्तंभ हैं। हर कोई जानता है कि नेहरू समिति ने वयस्क मतदान पद्धति को स्वीकृति दी है। इस समिति के द्वारा संविधान का यह जो हिस्सा तैयार किया गया, उसे भारत की सभी राजनीतिक पार्टियों का समर्थन प्राप्त है। मैं जब इस सम्मेलन में आया तब मैंने पाया कि मतदान के अधिकार का जहां तक सवाल था, वहां तक हमने पहले ही लड़ाई जीत ली है। लेकिन मताधिकार समिति ने मुझे पूरी तरह निराश किया। मैं इस बात से आश्चर्यचकित रहा कि नेहरू की रिपोर्ट पर जिन लोगों ने हस्ताक्षर किए हैं, उन सभी की सोच केवल एक पहलु तक ही सीमित है। उनके विचार इतने एकांगी हैं कि भारत के उदारवादियों तक का इस रिपोर्ट के लिए समर्थन मिलना मुश्किल है। क्योंकि, इससे प्रांतिक विधिमंडल के लिए सिर्फ 25 प्रतिशत लोगों को ही मताधिकार मिलने वाला है। केंद्रीय विधिमंडल के लिए कितने लोगों को मताधिकार मिलने वाला है, यह अभी अनिश्चित है। लेकिन जिस प्रकार प्रांतिक सरकार प्रतिनिधिक होती जा रही है, उसे देखने के बाद केंद्रीय विधिमंडल का स्वरूप उससे अधिक प्रातिनिधिक बनेगा, इस बारे में मेरे मन में जरा भी आशा बची नहीं है। इस तरह के सीमित मताधिकारों के कारण भारत का आगामी प्रशासन सभी लोगों से संबंधित न होकर खास वर्गाधिष्ठित होगा, इस बारे में शक की कोई गुंजाइश ही नहीं है।

बहुसंख्यक जातियों और अल्पसंख्यक जातियों के बीच विधिमंडल की जगहों के बंटवारे को लेकर पेंच पैदा हो गया है यह आप सब लोग जानते ही हैं। मुझे लगता है कि, पहले जानबूझ कर लिए गए कुछ हानिकारक निर्णयों के कारण ही ये स्थितियां पैदा हुई हैं। भारत के पूर्व शासक यदि "सबके प्रति न्याय और किसी के बारे में पक्षपात नहीं", इस न्याय तत्त्व को अपनाकर उसके अनुसार व्यवहार करते तो मुझे यकीन है, कि ये समस्याएं हल करना उतना कठिन नहीं होता। जिनका और जैसे भी राजनीतिक इस्तेमाल करना संभव हो पाता उसके अनुसार ब्रिटिश सरकार ने योग्यता का अलग अलग मूल्य तय कर कई जातियों को राजनीति में असाधारण अधिकार प्रदान किए और दलितों को उनके न्यायपूर्ण अधिकार देने से भी इनकार कर दिया। इसमें दलितों के साथ बहुत बड़ा अन्याय हुआ। मुझे उम्मीद थी, कि एक बार गलती से प्रस्थापित हुई पद्धति को हमेशा के लिए प्रस्थापित न किए जाने के सिद्धांत का अनुसरण करते हुए परिषद द्वारा पुराने मूल्यों का पुनर्मुल्यांकन कर दलितों को उनके अधिकारों के हिसाब से विधिमंडल में सही अनुपात में जगहें दी जाएंगी, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। अन्य अल्पसंख्यकों की मांगों को पहले ही स्वीकृत किया गया है और उनके अनुसार स्वरूप तय किया गया है। उसमें अब केवल प्रशासन के विस्तारित होते स्वरूप और व्यवस्था के अनुसार जो योग्य हों, वे बदलाव और सुधार करने होंगे। जो बदलाव या सुधार लाने हैं उन्हें लाने के लिए पहले से रखी गई नींव में थोड़ा–सा भी बदलाव करने का किंचित–सा साहस भी कोई नहीं करेगा। दलित वर्ग की समस्या बिल्कुल अलग है। उनकी मांगें अब जाकर सुनने में आ रही हैं। इन मांगों पर अब तक गौर नहीं किया गया है और उनमें से कितनी मांगों को स्वीकार किया जाएगा, इसका मुझे अंदाजा भी नहीं है। मुझे ऐसा भी लगता है, कि स्वसुरक्षा के लिए नहीं वरन् प्रशासन और सत्ता अपने वश में हो इसके लिए जो लोग रणनीति बांध रहे हैं और हमेशा प्रतिस्पर्द्धा में लगे हुए हैं, उन्हें खुश करने के लिए दलित वर्ग की असहायता का फायदा उठाते हुए शायद उनके प्रतिनिधित्व को हमेशा के लिए बलि चढ़ा दिया जाएगा, यह असंभव नहीं है।

इस दृष्टिकोण से मेरी विचारधारा को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत करने की जिम्मेदारी मुझे निभानी होगी। भावी संविधान में दलितों को दिए जाने वाले अधिकार अभी तक स्पष्ट नहीं किए गए हैं। इसीलिए, प्रांत और केंद्र सरकार को संविधान तैयार करते हुए, ब्रिटिश सरकार उसे जाहिर करे इससे पूर्व यह बात सुनिश्चिति कर लें कि जिन लोगों के हाथ में सत्ता जा रही है उनके आगे दलित वर्ग के हितों और अधिकारों का वास्तव में संरक्षण हो, ऐसी शर्तें रख कर स्पष्ट समझौता करवा लेना जरूरी है। वास्तविक स्थिति की गंभीरता को ध्यान में लेते हुए मुझे आपको यह बताना जरूरी हो जाता है कि इस बात को साफ किए और सुलझाए बगैर और इस

बारे में कोई निर्णय होने तक हम किसी भी घोषणा–पत्र को नहीं मानेंगे। इस बात को यदि नहीं स्वीकार कर लिया गया, तो परिषद की अगली कार्यवाही में मैं और मेरे सहयोगियों का उपस्थित रह पाना संभव नहीं होगा। हमें मजबूरन परिषद से असहयोग भी करना पड़ सकता है।

अध्यक्ष महोदय, आपने पहले हमसे जो वादे किए थे, उनसे मैं कुछ ज्यादा की मांग नहीं कर रहा हूं। ब्रिटिश लोकसभा और जो लोग उनकी ओर से बोलते हैं, वे हमेशा यही कहते आए हैं कि वे दलित वर्ग के विश्वस्त हैं। मुझे यकीन है कि मानवी संबंध सुखमय हों, इसके लिए अक्सर संस्कृतिमान्य तहजीब के तहत की जाने वाली यह सुरक्षित लफ्फाजी भी नहीं है। इसीलिए, मेरी नजर में, यह किसी भी सरकार का यह प्रथम कर्तव्य है, उसे यह सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि यह विश्वास किसी भी तरह से भंग न हो। माननीय प्रधानमंत्री, मैं आपसे कहना चाहता हूं कि, जिनकी उन्नति, जिनका उत्कर्ष हमारे पूर्ण विध्वंस और अवनति पर ही आधारित है, जिन्होंने कभी सपने में भी हमारे कल्याण की आस्था संजोयी नहीं, अंग्रेज सरकार यदि उनकी दया की भीख पर जीने के लिए ही हमें सौंपना चाहती है, तो हम यही समझेंगे कि ब्रिटिश सरकार ने हमारे साथ भयंकर विश्वासघात किया है।

मेरे इस कथन के कारण भारत के राष्ट्रवादी और देशभक्त मुझे जातिवादी करार देंगे। मैं इस बात से नहीं घबराता। भारत विचित्र देश है, और यहां के राष्ट्रभक्त और देशभक्त भी बेढंगे, विचित्र तरह के लोग हैं। भारतीय राष्ट्रभक्त और देशभक्त ऐसे हैं, जो अपने देशबांधवों के साथ नीच बर्ताव होता हुआ देखते रह जाते हैं। उनकी इंसानियत कभी भी इसके खिलाफ निषेध व्यक्त नहीं करती। यह देशभक्त जानते हैं कि बेवजह यहां के महिलाओं और पुरुषों को मानवी अधिकारों से वंचित रखा गया है, लेकिन उनकी कृतिशील मदद करने के लिए, नागरी संवेदना जागरुक नहीं होती। लोगों के एक बड़े वर्ग को सार्वजनिक उद्योगों में आने नहीं दिया गया है, यह वह देशभक्त शर्तिया जानता है, लेकिन न्याय रक्षणार्थ या उन्हें न्यायपूर्ण मौका देने के लिए उसे अपने कर्त्तव्यों की याद नहीं आती। उसे ऐसी सैंकड़ों रूढ़ियां याद होती हैं, जो मानव और समाज के लिए हानिकारक साबित हुई हों, लेकिन उसे, उद्वेग दिलाने वाली इन बातों से अंदरूनी तकलीफ कभी नहीं होती। अपने और अपने वर्ग के लिए अधिकार और अधिक अधिकार, यही इस देशभक्त की एकमात्र घोषणा होती है। मुझे खुशी है कि मैं ऐसे देशभक्तों के वर्ग में से एक नहीं हूं। जनतंत्र की रक्षा करने वालों के वर्ग में से मैं हूं, जो किसी भी आकार और पद्धति में होने वाली एकाधिकार पद्धति का विध्वंसक है। 'एक व्यक्ति एक मूल्य' यह हमारा उद्देश्य है, और इस साध्य के अनुसार हम राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक जीवन के हर क्षेत्र में कृतिशील होकर, उसके अनुसार आचरण करना चाहते हैं। इन अत्युच्च मूल्यों

के साथ दलित वर्ग की प्रतिबद्धता जुड़ी हुई है। इसीलिए इस उद्देश्य को साकार करने का 'प्रातिनिधिक सरकार' एक माध्यम है। इन मूल्यों के प्रति हमारे मन में जो आदरबुद्धि है, उस दृष्टिकोण से उन्हें प्रत्यक्ष में लाने के लिए आवश्यक घोषणा–पत्र जारी किया जाए, यह मेरा आग्रह है। दलित वर्ग के बारे में अपनी पूरी सहानुभूति होने का आप शायद आश्वासन देंगे। मैं उस पर यह कहना चाहता हूं कि, दुखी लोगों को इससे कुछ अधिक की जरूरत है, वे कुछ पक्के तौर पर और इससे अधिक सुविधाओं वाला कुछ चाहते हैं। मैं बेवजह भय व्यक्त कर रहा हूं, कह कर आप मुझ पर गुस्सा भी होंगे। लेकिन सुरक्षितता की गारंटी को पक्का मान कर, निश्चिंत होकर, बाद में अपने सर्वनाश का कारण बनने के बजाय उस डर के बारे में चिंता करने से अगर कोई गुस्सा भी करता है, तो वह बेहतर है, ऐसा मुझे लगता है।[1]

1. मूल अंग्रेजी भाषण के मराठी अनुवाद से, जो कि अतिथि सम्पादकों ने किया था।

38

स्वराज में अस्पृश्य जनता समान अधिकारों के साथ रह सके

मुंबई इलाके के अस्पृश्य लोगों ने डॉ. बाबासाहेब का सार्वजनिक स्वागत और सम्मान करना तय किया। इसके लिए रविवार, दिनांक 1 मार्च, 1931 की तारीख तय की गई। स्वागत की इस सार्वजनिक सभा में प्रवेश के लिए दो आने का टिकट रख कर इन टिकटों की बिक्री से होने वाली आय नासिक मंदिर प्रवेश सत्याग्रह के फंड में देने की बात तय हुई। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपने हितों के बारे में किए अपूर्व कार्य के बारे में सुनने के लिए इस सार्वजनिक सभा में अस्पृश्य समाज के करीब दस हजार लोग उपस्थित थे। परेल मुंबई के दामोदर हॉल के पीछे वाला मैदान लोगों से भर गया था। इस सार्वजनिक सभा का अध्यक्ष स्थान डॉ. पी. जी. सोलंकी ने स्वीकार किया था। सभा के लिए मुंबई इलाके के विभिन्न शहरों से, तहसीलों से आए अस्पृश्यों के प्रतिनिधि उपस्थित थे। समता संघ के उपाध्यक्ष श्री देवराव नाईक के स्वागत भाषण के साथ शाम सात बजे सभा की शुरुआत हुई। उन्होंने डॉक्टर साहब के विलायत में किए गए कार्य का परिचय देते हुए कहा कि, डॉक्टर साहब अपने काम की वजह से केवल अस्पृश्यों के ही नेता नहीं हैं वरन उन्हें आम जनता का और मुसलमान समाज का भी भरपूर समर्थन प्राप्त है। आने वाले समय में वे बहुजन समाज के प्रिय नेता बनेंगे, इसमें कोई शक नहीं। उनके हाथों सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और राजनीतिक दृष्टिकोण से उत्क्रांतिकारक कार्य होंगे, ऐसा ईमानदारी से मुझे लगता है। आप सबकी ओर से जनता के इस सच्चे नेता का स्वागत करने में मुझे बड़ी धन्यता महसूस हो रही है।

डॉ. अम्बेडकर का भाषण सुनने के लिए उत्सुक जनता के भावों को ताड़ कर सभा के अध्यक्ष डॉ. सोलंकी ने अपना स्वागत भाषण संक्षेप में पूरा किया। फिर उन्होंने डॉक्टर साहब से बोलने की विनती की। डॉक्टर साहब ने अपने भाषण में कहा,

"आज करीब पांच महीनों की अवधि के बाद आप सबसे मिलने का अवसर प्राप्त हुआ है, इसकी मुझे बेहद खुशी है। मुझ पर विश्वास करते हुए ही आप सब सहयोग करते हो, इसमें मुझे जितनी धन्यता महसूस होती है, उतना ही जोखिम और जिम्मेदारी का अहसास भी होता है। इंसान के पीछे जो प्रापंचिक स्थितियां पारिवारिक जिम्मेदारियां होती हैं, उनसे मार्ग निकालना अलग बात है, और आप सबके हितों की स्थितियों से मार्ग निकालना बेहद मुश्किल भरा है। इन स्थितियों से निकलने का मार्ग मुझे ही ढूंढ कर निकालना होगा। यहां से गोलमेज सम्मेलन में गए सिक्ख,

*जनताः 9 मार्च, 1931

मुसलमान, उदारवादियों के प्रतिनिधियों से उनके पक्ष के लोगों ने विदाई समारोह में उन्हें फलां–फलां तरह की जिम्मेदारी निभाने के लिए कहा था, लेकिन आप लोगों ने मुझे विदा करते समय सम्मेलन में जो काम करने थे उनकी जिम्मेदारी पूरी तरह मुझ पर सौंप दी। अपनी उन्नति का मार्ग ढूंढने की जिम्मेदारी आपने मुझ पर ही लाद दी। सम्मेलन में गए अन्य प्रतिनिधियों में और मुझ में यह बड़ा फर्क था। सम्मेलन में मैं जो रास्ता ढूंढ कर निकालूंगा, वह मेरी तरह आपको भी पसंद आएगा, इस बारे में मुझे शक था। महत्प्रयासों के साथ जो मार्ग ढूंढ निकाला उसका, मैं संक्षेप में यहां वर्णन करता हूं। रा. ब. श्रीनिवासन के सहयोग से मैंने जो योजना सम्मेलन में प्रस्तुत की उसमें हमने आठ शर्तों की मांग रखी है जो इस प्रकार हैं – समान अधिकारों वाली नागरिकता। हिंदुस्तान को स्वराज मिलना चाहिए अथवा नहीं? स्वराज यदि प्राप्त होता है, तो वह किस प्रकार का हो? स्वराज किसी भी तरह का हो, लेकिन उसमें अस्पृश्य जनता को समान हक से रहने का अधिकार मिलना चाहिए। हमारे लिए उस स्वराज में अगर कोई जगह नहीं है तो वह स्वराज 100 प्रतिशत पूर्णरूपेण हो, तब भी हमें नहीं चाहिए। साथ ही, एक और बात स्पष्ट है कि, अगर हिंदुस्तान की स्वराज की स्थापना हो तो सत्ता उच्च वर्ग के हाथों में जाएगी। इसलिए, उच्च वर्ग के हाथ में राजनीतिक सत्ता जाने से पहले हमारी अस्पृश्यता अगर कानूनन दूर की जानी चाहिए, तभी हम उसको स्वीकार करेंगे।

कानूनन अगर अस्पृश्यता निवारण की धारा बना भी ली जाए तो भी सभी वर्ग के लोग समान अधिकार से रहेंगे, यह तय करना जरूरी था। अस्पृश्यों को यदि कोई पैरों के नीचे कुचलने की कोशिश करता है, तो उसे राजनीतिक अपराध करार दिया जाना चाहिए। इस मांग के बारे में केवल मुख्य प्रधान मिस्टर रॅम्से मैकडोनल्ड का आश्वासन मिला है। आगे कमेटी में होने वाले विचार–विमर्श में इस मामले में निर्णय होगा।

कुछ भी हो जाए, और हमें जितने चाहे राजनीतिक अधिकार मिल जाएं, फिर भी अस्पृश्य वर्ग को यह डर लगता है कि अगली योजनाओं में उनके बारे में कानूनन या कार्यकारीमंडल के आदेश से भेदभाव पूर्ण व्यवहार होगा। इसीलिए, विधिमंडल या कार्यकारीमंडल ऐसा कोई भेदभाव कर ही न सकें, जिससे कि द्वेष या क्षोभ पैदा हो, ऐसी कोई व्यवस्था की जानी चाहिए और जब तक ऐसी व्यवस्था नहीं की जाती तब तक बहुसंख्यक लोगों के शासन में रहने की बात मानना अस्पृश्य समाज के लिए संभव नहीं है। अगले विधिमंडल में हम अल्पसंख्यक ही रहने वाले हैं। सौ में से 10–15 प्रतिनिधियों का अनुपात बहुत कम है। विधिमंडलों को विभिन्न जातियों में भेदभाव करते हुए कानून बनाने का मौका नहीं मिलना चाहिए। केवल ऐसी नीति ही अपनाएं, जिससे मानवता के हक प्राप्त हों, और यह मांग सम्मेलन में मान ली गई।

चुनावों के बारे में आज की स्थिति संतोषजनक नहीं है। इस बारे में केवल अमीरों और मध्यवर्ग के लोगों को ही मतदान का अधिकार हैं। गरीब और श्रमजीवी लोग अपना प्रतिनिधि नहीं चुन सकते। इस देश में गरीबों की संख्या 90 प्रतिशत है। उन्हें अपने हितसंबंधों के बारे में सरकार का मुंह ताकना पड़ता है। और इसीलिए वे परावलंबी हो जाते हैं। इसीलिए, भाविष्यकालीन आजाद भारत में ऐसी अपमानजनक स्थिति पैदा न हो, इसके लिए सभी वयस्कों को मतदान के अधिकार की मैंने मांग की। इस सवाल पर बहुत माथापच्ची हुई, सिरफुटौवल हुई। हम चार प्रतिनिधियों ने ही इस सवाल पर जोर दिया, लेकिन उसका कोई फायदा नहीं हुआ। यह सवाल जब पूछा गया कि, पृथक या संयुक्त मतदान प्रणाली में से कौन–सी प्रणाली अस्पृश्यों को चाहिए? तब मैंने सुझाव दिया कि सभी वयस्कों को मतदान का अधिकार मिले और पहले दस सालों तक पृथक मतदान पद्धति हो, बाद में संयुक्त मतदान पद्धति हो और सीटों के आरक्षण की व्यवस्था हो। कुछ समय तक पृथक मतदान पद्धति स्वीकार की है।

सरकारी नौकरियों के बारे में कहें तो किसे नियुक्त किया जाए, यह सरकारी अधिकारियों द्वारा नहीं वरन् कमीशन के द्वारा तय किया जाएगा। लेकिन इससे अधिक फायदे की बात यह है कि अनुपाततः कुछ सरकारी नौकरियां अल्पसंख्यक और अस्पृश्य समाज के लिए आरक्षित रखी जाएंगी। इस बारे में जिम्मेदारी के सारे अधिकार केवल गवर्नर के हाथों में ही रहेंगे।

विधान परिषद में बहुसंख्यक, अल्पसंख्यकों के साथ यदि गलत व्यवहार करें तो, या बजट में हमारी मांगों पर कोई विचार नहीं किया गया तो, हम क्या करें? सो, इस समस्या के समाधान के लिए अपील करने का अधिकार हमें दिया गया है। अपनी न्यायपूर्ण मांगों का अनादर हो तो गवर्नर से अपील की जा सकती है और यदि गवर्नर भी ना सुनें तो वाइसराय से अपील करने का अधिकार दिया गया है। इसके अलावा पूरे देश में अस्पृश्यता की समस्या है। इस मामले में एकसूत्रता लाने के लिए केंद्रीय विधिमंडल में अस्पृश्यों की तरफ से एक दीवान नियुक्त कर उसके द्वारा सभी शिकायतें सुनी जाएं। लेकिन इस मामले में संतोषजनक निर्णय नहीं दिया गया है। पुलिस और सेना में अपने लोगों को सभी स्तर की नौकरियां मिलने का प्रावधान रखा गया है। इस मामले में सभी प्रतिनिधियों का इस बात के लिए समर्थन मिल चुका है कि आज के बाद इन दोनों जगहों पर नौकरी पाते समय जाति, धर्म आदि मामलों को लेकर रोक नहीं लगाई जाएगी।

आखिर में इतना ही कहा जा सकता है कि, ऊपर बताई सभी बातों पर सोच–विचार के बाद यही लगता है कि हिंदुस्तान को मिल नेवाले आगामी स्वराज में अल्पसंख्यकों

के बारे में शर्तें निश्चित किए बगैर किसी भी तरह का नया संविधान लाना बेकार है। और इस तरह, अगर हम ऐसा स्वराज चाहते हैं जिसमें बहुजन समाज के साथ समता का व्यवहार हो तो हर बालिग को मतदान का अधिकार मिले, इसके लिए कोशिश करना जरूरी है। सभी वयस्कों को मतदान के अधिकार का प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है। और इस बारे में मुझे शिद्दत से यह लगता है कि गरीबों का जीवन जिसमें सुरक्षित नहीं वह स्वराज धोखादायक है।

इसके बाद, नासिक कालाराम मंदिर सत्याग्रह के लिए तन, मन, धन से मदद करने की मैं आप सबसे तहे दिल से विनति करता हूं। यहां के हालात चिंताजनक हैं ही, इसके बावजूद मेरे पीछे मेरे सहयोगियों ने अखिल भारतीय बहिष्कृत समाज सेवा संघ और डॉ. अम्बेडकर सेवा दल ने जो जिम्मेदारी निभाई है, उसके लिए उन्हें धन्यवाद दिए बगैर रहा नहीं जा रहा।"

डॉ. अम्बेडकर के भाषण के बाद अध्यक्ष डॉ. सोलंकी का भाषण हुआ। विलायत में हुए सम्मेलन में अस्पृश्यों की ओर से उन्होंने कितनी बड़ी जिम्मेदारी निभाई इसकी जानकारी दी। गोलमेज सम्मेलन में गए अन्य प्रतिनिधियों से वे मिले तो उन्होंने उनके बारे में क्या कहा, यह बताया। उनके बाद गुरुवर्य श्री. कृष्णराव केलुस्कर का भाषण हुआ। अपना उज्ज्वल स्वप्न पूरा होने की बात उन्होंने कही। उन्होंने कहा कि, डॉ. अम्बेडकर ने युरोप में अपना तेज प्रकाशित कर वहां के चतुर राजनीतिज्ञों को आश्चर्यचकित किया। उन्होंने जो काम किया वह केवल अस्पृश्य वर्ग के लिए नहीं वरन् पूरे भारतीय समाज के लिए हैं। ईश्वर से उन्होंने डॉ. अम्बेडकर की दीर्घायु की कामना की।

अंत में श्री एस.एन. शिवतरकर जी ने अध्यक्ष, सभा में उपस्थित अतिथि, अस्पृश्य भाई–बहनों का और विभिन्न सेवादलों के प्रति सार्वजनिक रूप से आभार प्रकट किया। और नासिक मंदिर प्रवेश फंड को मुसलमान बंधुओं की तरफ से मि. मनियार ने एक सौ एक रुपयों का चंदा दिए जाने की घोषणा की। बाद में अम्बेडकर सेवादल के सर्वाधिकारी श्री शंकर वडवलकर का स्फूर्तिदायी भाषण हुआ। डॉ. अम्बेडकर को विभिन्न संस्थाओं की ओर से फूलमालाएं और गुलदस्ते अर्पण किए जाने के बाद सार्वजनिक सम्मान का यह समारोह समाप्त हुआ।

39
निश्चय के साथ लड़ी सम्मान की लड़ाई में ही अपने आंदोलन की सफलता है*

पुणे जिला बहिष्कृत परिषद का पहला सम्मेलन डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में जुन्नर तहसील के नारायणगाव में 23 और 24 मई, 1931 को आयोजित किया गया था। इस परिषद में भाग लेने के लिए पुणे जिले के अलग–अलग इलाकों से करीब पांच–छः हजार लोगों का समुदाय इकट्ठा हुआ था। मुंबई से श्री सी. ना. शिवतरकर, श्री लोटेकर, शंकरराव श्रावण भोसले, श्री आडरेकर और गणपत बुवा आदि अस्पृश्य वर्ग के नेता और मुनशी सेठ, देवीदास, श्री रामचंद्र अनाजी, पा. बुट्टे, ऑनररी मैजिस्ट्रेट और प्रेसिडंट तहसील लोकल बोर्ड, जुन्नर, श्री. दशरथ पांडुजी बनकर मेम्बर डिस्ट्रिक्ट लोकल बोर्ड, पुणे, श्री. गजानन रावजी पा. भुजबक, वाईस प्रेसीडेंट, तालुका लोकल बोर्ड, जुन्नर, श्री भीमाजी गेनूजी, पा. खेबडे, श्री डुंबरे, पाटे, खैरे, तांबे, शिंदे, मिस्त्री, भुजबल आदि स्थानिक और पुणे से सुभेदार घाडगे, थोरात, गायकवाड़, चौरे, चंदनशिवे, घोगरे, मधाले, रणपिसे आदि लोग उपस्थित थे। इनके अलावा मांग और चमार लोगों ने भी हिस्सा लिया था।

स्वागताध्यक्ष श्री देवजी दगडूजी डोलस ने अपने भाषण की शुरुआत में परिषद के लिए आए सभी लोगों के प्रति आभार व्यक्त किया। परिषद जिस गांव में हो रही थी, उसके ऐतिहासिक महत्व के बारे में उन्होंने बताया। बहिष्कृत समाज का संगठन मजबूत होने के लिए पहले जातिभेद नष्ट करने की कोशिश तथा अपनी आर्थिक स्थिति मजबूत करने की कोशिश, इन दो मुद्दों पर ही अपना वक्तव्य केंद्रित कर उन्होंने अपना भाषण जल्द ही पूरा किया। स्वागताध्यक्ष के भाषण के बाद परिषद के महासचिव श्री शा. अं. उपशाम ने परिषद के नाम आए शुभ संदेश पढ़ कर सुनाए। रा. मा. शा. गायकवाड़ और राजमान्य कोंडाजी रामजी मास्तर जी द्वारा सूचना का समर्थन किए जाने के बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अध्यक्ष स्थान स्वीकारा। अध्यक्ष स्थान स्वीकारने के बाद अपने भाषण में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा,

आपने आज की परिषद का अध्यक्ष स्थान मुझे दिया लेकिन उसका स्वीकार करते हुए मुझे थोड़ा संकोच हो रहा है। आजकी इस सभा में अपने परमपूज्य नेता रा. कोंडाजी रामजी मास्तर उपस्थित हैं, उनके साथ काम करने वाले अन्य लोग भी यहां उपस्थित हैं। ऐसे नेता भी हैं जिन्होंने मुझसे पहले कई कई सालों से अस्पृश्य वर्ग में लगातार आंदोलन जारी रखे, ऐसे लोग भी इस जिले में हैं, जो भले आज की

*जनता : 8 जून, 1931

सभा में यहां उपस्थित नहीं हैं। मुझे याद है कि, मैं जब मराठी चौथी की कक्षा में पढ़ रहा था, तब, पुणे में श्री शिवबा जानबा कांबले, थोरात, रामचंद्रराव कदम आदि लोग अस्पृश्यों से संबंधित काम कर रहे हैं, ऐसा मेरे पिताजी मुझसे कहा करते थे। उनमें से श्री. थोरात आज यहां प्रत्यक्ष उपस्थित हैं। श्री कांबले और श्री कदम आज की सभा में आ नहीं पाए। इस तरह के पुराने और वरिष्ठ नेताओं के रहते हुए आज की सभा का अध्यक्ष स्थान का सम्मान मुझे केवल आपके अति आग्रह के कारण ही लेना पड़ रहा है। खैर। अब हाल की स्थितियों में हमें क्या करना चाहिए। इस बारे में पहले सोचना होगा। हम भले अस्पृश्य माने गए हैं लेकिन आखिर हम भी इंसान हैं। समाज के अन्य लोगों की तरह ही हमें भी सम्मान के साथ, समान दर्जे के साथ जीना आना चाहिए। हम मान–सम्मान के योग्य हैं, फिर भी समाज ने हमारे अज्ञान का फायदा उठा कर हमें बहिष्कृत करार दिया है। इस देश को काबीज करने के लिए जिन वीरों की सहायता लेनी पड़ी वे सभी लड़ाकू वीर हमारे समाज के थे। महार सैनिकों के बल पर अंग्रेज यहां अपना साम्राज्य स्थापन कर पाए, उसे स्थिरता दे पाए। इस बारे में विजयचिह्न के रूप में अंग्रेजों ने कोरेगाव में विजयस्तंभ खड़ा किया और हमारे समाज के वीरों की स्मृति को अमर कर दिया है। लेकिन उस समय का अपना दर्जा आज कहीं दिखाई नहीं देता। महारों के पराक्रम, वीरता से अंग्रेजों को राज्य तो मिला, लेकिन देश के उच्चवर्णीय लोगों को खुश करने के लिए तथा महार आदि अस्पृश्य माने गए लोगों का कोई पालनहार, समर्थक न होने के कारण अंग्रेजों ने सेना के वरिष्ठ पदों पर और अन्य महत्त्वपूर्ण पदों पर महारों की भर्ती करने पर पाबंदी लगा दी। आज हालात ऐसे हैं कि लश्कर के महार अधिकारियों के मातहत काम करना कम दर्जे का मानने वाले लोग मुसलमान अधिकारियों के मातहत काम करने में किसी तरह की दिक्कत महसूस नहीं करते। यही बात पुलिस विभाग के बारे में भी है। लेकिन पिछले पांच–छः वर्षों से चल रहे स्वावलंबी आंदोलन के कारण हालात में थोड़ा–बहुत बदलाव आने लगा है। पुलिस विभाग में अपने समाज बन्धुओं को कई सुविधाएं मिलने की बात परसों के सरकारी परिपत्र से सबको पता चल जाएगी। आप सब लोक बस इतना ध्यान में रखें कि हमें अन्य समाजों से कोई बड़ा स्थान प्राप्त नहीं करना है, हमें तो बस इंसानियत पानी है। अपनी आर्थिक स्थिति के बारे में सोचते हुए हिंदुस्तान (भारत) के अन्य दरिद्र कहलाने वाले लोगों से भी हम अधिक दरिद्र हैं। हमें यह दरिद्रता क्यों प्राप्त हुई, इस बारे में सोचेंगे पर पता चलेगा कि अस्पृश्यता की यह रूढ़ि ही इसका एक–मात्र कारण है। इसलिए, जिन उपायों से इंसानियत का अधिकार प्राप्त किया जा सकता है, उन सभी उपायों को हम संगठन के बल पर और निर्भयता से अपनाएं। नासिक, पुणे आदि जगहों पर सत्याग्रह के शस्त्रों को भांज कर अपनी लडाई को सफल बनाने की हिम्मत

रखें। सम्मान के साथ और लगातार संघर्ष करने से अपना आंदोलन सफल होने में अधिक समय नहीं लगेगा।"

डॉ. बाबासाहेब के स्फूर्तिदायक भाषण के बाद परिषद में स्थानीय, शैक्षणिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रस्ताव पारित किए गए। खास कर लंदन में हुए पहले गोलमेज सम्मेलन में अस्पृश्य वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर और रा. ब. श्रीनिवासन ने जो कार्य किए उनके लिए उनका अभिनंदन किया गया। विभिन्न प्रस्तावों पर श्री. शिवतरकर, हरिभाऊ रोकडे, गायकवाड, कांबले, दारुले, ओझरकर, फुलपगार, काडोखे, विट्ठल उपशाम, घोगरे, मधाले, रणपिसे, थोरात, शिशुपाल, आमोंडीकर, धोत्रे, ठोसर, चौरे, चंदनशिवे, गायकवाड़, आडरेकर आदि वक्ताओं के भाषण के उपरांत सभा का समापन किया गया।

40
अस्पृश्यों को आपस में भिड़ाने वाले हितशत्रुओं की कारस्तानी पहचानिए*

शुक्रवार, दिनांक 29 मई, 1931 के दिन मुंबई के डिलाइल रोड पर बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर की अध्यक्षता में अस्पृश्य वर्ग की सार्वजनिक सभा आयोजित की गई थी। सभा में कम से कम 5 से 6 हजार लोग इकठ्ठा हुए थे। चार–पांच सौ महिलाएं भी उपस्थित थीं। स्वयंसेवकों के विभिन्न दलों ने सभास्थल पर सही ढंग का प्रबंधन और अनुशासन रखा था। इस अवसर पर डॉ. अम्बेडकर ने करीब घंटे भर तक भाषण दिया। उन्होंने अपने भाषण में कहा,

"आज की सभा का कोई तय कार्यक्रम नहीं है, या सभा का आयोजन करने का कोई खास प्रयोजन ना होने के कारण यहां आना मैं टालने वाला था। लेकिन सभा के आयोजकों ने ऐसा आग्रह किया, इस तरह पीछे पड़े रहे कि मुझे आना ही पड़ा। कोई खास वजह न होने के कारण इतने अधिक लोग इकट्ठा होंगे, इसकी मुझे उम्मीद नहीं थी। यदि मैं नहीं आता तो यहां इकठ्ठा पांच–छह हजार लोगों का दिल टूट जाता। लोगों की आपके बारे में जो राय है, वह कितनी तीव्र, जागृत और जीवंत है, यह जानने के लिए इस तरह की सभाएं, एक तरह से बेहद उपयुक्त साबित होती हैं। सभा का विषय तय नहीं था, इसलिए मुझे क्या बोलना है, यह मैं सोच ही रहा था। हालांकि, नेताओं के एकजुट होने से संबंधित जो प्रस्ताव इस सभा में रखा गया है और जिस पर यहां उपस्थित वक्ताओं ने बोलते हुए अब से पहले जो भाषण दिए हैं, उन्हें सुन कर यहां क्या बोलना समयोचित होगा, इसका मुझे पता चल चुका है। उसी आधार पर मैंने अपना विषय चुना है। अपने अस्पृश्य समाज के जो लोग मुझ पर टीका–टिप्पणी करते रहते हैं, उनकी आलोचनाओं का आज के भाषण में जवाब देने की मैंने ठान ली है। अन्य वर्ग के लोगों और पत्रकारों द्वारा की गई आलोचना, टीका–टिप्पणी का मैं यहां जिक्र नहीं करूंगा। उनकी आलोचना का स्वरूप, कारण और उद्देश्य के बारे में हम में से अनेकों को पता है। उनकी आपत्तियों के बारे में समय–समय पर मैं बोलता रहा हूं। कारण रहेगा या उसके उद्भव होने पर आगे भी मुझे बार–बार यह काम करना होगा। आज मैं सिर्फ अस्पृश्य व्यक्तियों में से कुछ लोगों द्वारा मुझ पर लगाए गए आरोप कैसे खोखले और बेबुनियाद हैं, यह मैं आज यहां बताने जा रहा हूं। अस्पृश्यों की अलग–अलग जातियों के द्वारा मुझ पर दो तरह के आरोप लगाए जाते हैं। चमार आदि अस्पृश्यवर्ग के कुछ लोग कहते हैं कि डॉ. अम्बेडकर की

---

*जनता : 8 जून, 1931

जाति महार होने के कारण अस्पृश्य वर्ग को जो सहूलियतें मिलनी हैं, उन छूटों और सुविधाओं का सारा का सारा मलीदा वे अपनी महार जाति को ही खिलाने वाले हैं। चमारों को वे उसमें से कुछ मिलने नहीं देते। यह आरोप इतना निराधार और झूठा है, कि पहले तो इसकी तरफ ध्यान देना ही मुझे गैरजरूरी लगा। मेरे साथ मतभेद रखने वाले लोग बाकी समाज में हैं वैसे ही चमारादि अस्पृश्य वर्गों में भी होंगे, यह मैं जानता हूं। हालांकि, कोई भी विचारवान, ईमानदार और जिम्मेदार चमार इस तरह के नीच और झूठे आरोपों से सहमत होगा ऐसा मुझे नहीं लगता। राष्ट्रीय अखबार के पन्नों में जो चटपटा वर्णन पढ़ने में आए, उससे पता चला कि चमारों के भले माने जाने वाले कुछ नेताओं के मुंह से ये आपत्तियां निकली हैं। राष्ट्रीय अखबार की यह खबरें अगर सच हैं तो मुझे इन चमार मंडलियों के बारे में सचमुच बड़ा खेद महसूस होता है। मुझ पर इस तरह के झूठे और निराधार आरोप लगा कर उन्होंने अपना इस हद तक अधःपतन नहीं करवाना था। मेरे बारे में आलोचना करनी ही थी, तो वे कोई और मुद्दा निकाल लाते, या और कोई बहाना ढूंढते। सहूलियतों का चूरमा मैं बस महारों को ही खिलाता हूं और चमार आदि को केवल पत्तों से पोछता हूं, यह मुझ पर लगा आरोप इतना निराधार है कि, इसके झूठ होने का प्रमाण मैं किसी को भी दे सकता हूं।

ठाणे, पुणे, सोलापुर, सातारा आदि जिन जिलों के साथ मेरा निकट परिचय है ऐसे जिलों में भी म्युनिसिपालिटी, लोकल बोर्डस्, स्कूल बोर्ड आदि में जो सदस्य अस्पृश्यों की तरफ से जाते हैं, उन प्रतिनिधियों के बारे में, उनकी जाति के बारे में खोजबीन की जाए, तो पता चलेगा कि महारों को ही लाभ का सारा चूरमा खिलाने वाला आरोप कितना झूठा, बेबुनियाद, बदमाशीभरा और दुष्टताभरा है, इस बारे में किसी को भी यकीन आ जाएगा। अन्य जिलों की तरह ही ठाणे जिले में भी महारों की जाति बड़ी संख्या में है। इस जाति में लायक लोगों के होने के बावजूद ठाणे म्युनिसिपालिटी में, लोकल बोर्ड में, स्कूल बोर्ड में जो अस्पृश्य सभासद प्रतिनिधि हैं, उनमें एक भी महार जाति का प्रतिनिधि नहीं है। औरों की तुलना में महारों की संख्या अधिक है, उनमें अधिक जागृति भी हुई है। पुणे म्युनिसिपालिटी में भी दोनों चमार जाति के ही प्रतिनिधि हैं। सातारा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड में भी एक भी महार जाति का प्रतिनिधि नहीं है। धारवाड, विजापूर आदि कन्नड इलाके में भी यही हाल है। इस प्रकार स्थानीय संस्थाओं में अस्पृश्यों के प्रतिनिधि के तौर पर केवल महार जाति के लोग ही भरे हुए हैं, यह आरोप पूरी तरह से झूठा और निराधार है। प्रत्यक्ष व्यवहार में पुलिस विभाग अस्पृश्य समाज के लिए बंद ही था। कौंसिल में जाने के बाद इस सवाल को मैं और मेरे सहकारी मित्र डॉ. सोलंकी ने काफी प्रमुखता दी। हमने कोशिश की कि पुलिस विभाग अस्पृश्यों के लिए खुल जाए। उस कोशिश को सफलता मिली और अस्पृश्यों के लिए पुलिस विभाग के दरवाजे खुलने के बारे में सरकारी प्रस्ताव

हाल ही में प्रकाशित हुआ है। उसके अनुसार वरिष्ठ दर्जे के पुलिस अधिकारी के पद पर पहले अस्पृश्यों की जो नियुक्ति हुई है, वह चमार जाति के व्यक्ति की हुई है। हम चाहते तो उस पद पर महार व्यक्ति की नियुक्ति हो सकती थी, लेकिन हमने ऐसा नहीं किया। अस्पृश्य वर्ग में महार जाति बहुसंख्यक है। चमारादि अल्पसंख्यक जातियों का विश्वास अर्जित करना उसका कर्त्तव्य है, ऐसा मैं समझता हूं। और इसीलिए जो भी सुविधाएं मिलती हैं उनका बड़ा हिस्सा महार समाज के लोगों की नाराजगी सह कर भी मैं चमार आदि अल्पसंख्यक जातियों को मिले, इसका ध्यान रखता हूं। इस बारे में मेरी, "गोली खाने के लिए महार और रोटी के लिए चमार" यह नीति है, कह कर मुझ पर टीका–टिप्पणी करने वाले, मेरी आलोचना करने वाले मुझ पर गुस्सा होने वाले कई लोग महार जाति में हैं, यह मैं जानता हूं। मेरे खिलाफ उनकी यही एक बडी शिकायत है! ऐसे हालात में मैं महारों को ही पूरी मलाई खिलाता हूं, चमारादि अल्पसंख्यकों को कुछ मिलने नहीं देता यह आरोप मुझ पर करना बेहद नीचता भरा है और ये आरोप बिल्कुल बेबुनियाद हैं। चमारों में से कुछ जिम्मेवार नेताओं द्वारा इस तरह के आरोप मुझ पर किए जाने से महार समाज के कई लोग जाहिर है कि नाराज हैं। उन्हें आगाह करते हुए मैं उनसे विनति करता हूं कि उन्हें अपना गुस्सा काबू में रखना चाहिए। महार लोग बहुसंख्यक हैं। कोई कुछ कहे, उनका कर्त्तव्य उनके लिए जाहिर है। अन्य अल्पसंख्यक जातियों का जिसमें कल्याण हो, जिसमें उन्हें संतुष्टि हो, ऐसी नीति ही अंत तक हमें अपनानी चाहिए। बिना वजह दोषारोपण करने वाले लोगों को इसी नीति को अपनाकर सही जवाब हम दे सकते हैं। अस्पृश्यों के बीच झगड़े पैदा हों, महारों के खिलाफ चमारों को खड़ा कर हमारे समग्र कार्य का सर्वनाश करना और फिर हमारी ओर उंगली दिखा कर हंसना ही हमारे हितशत्रुओं का एकमात्र उद्देश्य है। हमें उनकी इस चाल को नाकामयाब करना होगा। बहुसंख्यक होने के नाते यह जिम्मेदारी महारों के कंधों पर ही आती है। उन्हें यह जिम्मेदारी निभानी ही होगी। महार समाज से मैं बारबार यही बात कहता रहा हूं। जैसे को तैसा न्याय आप चमारों के साथ बरत सकते हैं, उनके किए का जवाब भी दे सकते हैं, लेकिन इसमें हमारे आंदोलन का हित नहीं है। उदारता और क्षमाशीलता का ही हमें अनुसरण करना होगा। यही नीति हमारे काम के लिए और हमारे उद्देश्य के लिए आखिर हितकारी और भूषणास्पद होने वाली है।

महार जाति के कुछ लोग भी मुझ पर टीका–टिप्पणी करते हैं। मैं शिक्षा का कार्य नहीं करता, केवल सत्याग्रहादि आंदोलन करता हूं जैसे आरोप मुझ पर लगाए जाते हैं। मेरे इन आलोचकों की नजर में शिक्षा के क्या मायने हैं और वे कितने व्यापक हैं, इसका पता चलता तो उनका समाधान करना आसान हो जाता। सत्याग्रह के और इंसानियत के अधिकार प्राप्त करने के लिए छेड़े गए आंदोलन में उत्तम शिक्षा हो सकती

है और मिल सकती है, यह बात मैं उन्हें अच्छी तरह समझा सकता हूं। लेकिन वे जिसे शिक्षा कहते हैं, वह शिक्षा देने के मामले में भी मेरी कोशिश मेरे ऊपर टीका–टिप्पणी करने वाले इन आलोचकों से बड़े हैं यह मैं शर्त लगा कर कह सकता हूं। मैंने ठाणे, अमदाबाद, धारवाड आदि जगहों में बोर्डिंग चलाए हैं। मेरी कोशिशों के कारण आज 70 छात्र मुफ्त में शिक्षा ले रहे हैं। मेरी आलोचना करने वाले भी इस मामले में अपनी कोशिशों का जायजा लें। शिक्षा के लिए उन्होंने कितना पैसा खर्च किया है, और कितनी मेहनत की है यह वे जनता को बताएं। खुद बिना कुछ किए औरों के बारे में 'इसने यह नहीं किया, वह करना चाहिए था' आदि बेकार की ऊंची हांकनी नहीं चाहिए। नासिक जिले में ऐसे आलोचक खासकर मेरे देखने में आए। हालांकि उनकी आलोचना में थोड़ा दम तो जरूर है, लेकिन सातारा जिले के रा. निकालजे आदि महार जाति के ही लोग जो मेरी आलोचना करते हैं, वह बिल्कुल बेसिर–पैर की आलोचना होती है। कुछ खिलाफ करके दिखाना है, बेकार में उल्टा–सीधा बोल कर अपने आपको नेता कहलवाना, यही उनके जीवन का इतिकर्त्तव्य है ऐसा लगता है। अभी कुछ कुछ दिनों पहले निकालजे आदि लोगों ने सातारा जिले की ओर से महार समाज की एक परिषद बुलाई थी। इस परिषद का स्थान पुणे के मुजुमदार, इनामदार साहब को दिया था। ये इनामदार जाति से ही नहीं बल्कि प्रकृति से भी पेशवाई के सच्चे वंशज हैं। पुणे के पर्वती सत्याग्रह का विरोध करने वालों में ये इनामदारसाहब प्रमुख थे। ऐसे व्यक्ति को अध्यक्ष बना कर तथा अस्पृश्यों के आंदोलन के सूत्र एक पराए व्यक्ति के हाथों सौंप कर निकालजे क्या दिखाना चाहते हैं?

स्वावलंबन और स्वाभिमान की बुनियाद पर आज का अस्पृश्य आंदोलन खड़ा है। मुजूमदार साहब जैसे लोगों को अध्यक्ष बना कर इन सिद्धांतों पर निकालजे आदि लोगों ने पानी फेर दिया है। इसके बजाय अगर वे खुद अध्यक्ष बनते, या अपने मतों को मानने वाले अस्पृश्य उपाधिधारक को ही अध्यक्ष बनाते तो लोगों को वह ज्यादा पसंद आता। लेकिन इनामदार साहब को अध्यक्ष बना कर वे खुद भी सभा में नहीं आए और न ही लोग इकट्‌ठा हुए। मुझ पर एक आरोप यह भी लगाया जाता है कि रा. निकालजे जैसे लोगों के साथ मैं मिल–जुल कर नहीं रहता। लेकिन मैं समझ नहीं पाता कि इनके साथ मिल–जुल कर कैसे रहा जाए? जो सिद्धांत क्या है, यह तक नहीं जानते, न जानने की इच्छा है, जिनके पास स्वाभिमान नहीं है, केवल खुद का महत्व जो बढ़ाना चाहते हैं, उनसे कौन, कहां तक और कैसे मिल–जुल कर रहे? उन्हें कोई कैसे समझाए? ऐसे लोगों को आप जैसे आम लोग ही उनकी सही जगह दिखा सकते हैं। सच्चा और लायक नेता कौन और अपना हित कौन साध्य सकता है, इसका निर्णय अब तो जनता को ही करना होगा। जिन्हें नेता बनना है, वे भी ध्यान में रखें कि केवल "मुझे नेता कहें" कहने मात्र से कोई नेता नहीं बन जाता।

41
कठिन स्थितियों से संघर्ष करके ही समाज की उन्नति की जा सकती है*

तहसील चांदवड जिला–नासिक के वडनेर गांव में 31 मई, 1931 के दिन हुई सभा में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने नासिक जिले के युवाओं को निम्नानुसार संदेश दिया। उन्होंने कहा,

नासिक जिले के युवक संगठन के आज तक के काम के बारे में मुझे संतोष है। जिले में जागरुकता लाने का काम युवाओं ने बड़ी हिम्मत से पूरा किया है। हर गांव में कड़ी से कड़ी स्थितियों से जूझ कर समाजोन्नति के जलसे के द्वारा की गई कोशिशें अपूर्व और अलग हैं। हर गांव में निर्भय युवाओं के संगठन स्थापित कर लाठी चलाना, कसरत करना, शारीरिक खेल वगैरा सीखना, अखबार वगैरा पढ़ कर अज्ञानी लोगों को हालात के बारे में जानकारी देना आदि कामों को और व्यापक बनाएं। फिर हमारी लड़ाई को सफलता दिलाना कठिन नहीं रहेगा।

*जनता, 8 जून, 1931

42
दुनिया में व्याप्त गुलामी की सभी पद्धतियों में अस्पृश्यता भयंकर और भीषण है*

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और उनके सचिव श्री. एस. एन. शिवतरकर दिनांक 28 जून, 1931 को अहमदाबाद गए थे। वहां अस्पृश्य छात्रों के लिए स्थापन किए गए छात्रावास का मुआयना करना और वहां कुछ अन्य सुविधाओं का प्रबंध करना था। अहमदाबाद की जनता को डॉ. अम्बेडकर के आने की खबर ऐन समय पर मिलने के बावजूद थोड़े समय में ही उन्होंने उनके जोरदार स्वागत की सारी तैयारियां पूरी कर ली थीं। हजारों अस्पृश्य लोग डॉ. अम्बेडकर के दर्शन के लिए अहमदाबाद में आए और अहमदाबाद स्टेशन पर इकट्ठा हुए। वहां के स्पृश्यवर्ग के युवा मंडल ने (यूथ लीग) और अस्पृश्यों के अलग–अलग करीब–करीब तीस संस्थाओं ने अपने स्वयंसेवकों को लाकर वहां का ठीक प्रबंधन संभाला हुआ था। अस्पृश्य समाज की यह अपनी मर्जी से, उत्साह के साथ और अपने बलबूते पर की गई तैयारी को देख कर कौतुक और धन्यता का भाव पैदा हो रहा था। लेकिन इस तैयारी को देख कर वहां के गुजरात प्राविंशियल कॉंग्रेस कमेटी के कुछ सदस्यों के पेट में मत्सर और द्वेश पैदा हुआ। अपना उद्देश्य क्या है, अपने नेता ने किस ध्येय को साध्य करने की दीक्षा अपने लोगों को दी है, आदि बातों के बारे में बिना सोचे वहां के कॉंग्रेस वाले हाथ में काले झंडे लेकर और मुंह से कुछ गंदे और कॉंग्रेस की गरिमा को बट्टा लगाने वाले शब्दों का उच्चारण करते हुए डॉ. अम्बेडकर पर शेम–शेम शब्द बरसाने के लिए पहुंच गए। इन उन्मत्त और अविचारी गुंडों ने अस्पृश्यों को गुस्सा दिलाने वाली और उनका अपमान करने वाली हरकतें हुड़दंग मचाकर अफरा–तफरी मचाने का प्रयास किया। उन्हें चुप कराना अस्पृश्य स्वयंसेवकों और जनता के लिए कठिन नहीं था, लेकिन डॉ. अम्बेडकर के पहुंचने का समय करीब आ गया था, उनके सामने किसी तरह का हुड़दंग न मचे, इसलिए उन्होंने शांति और अनुशासन बनाए रखा। इसके बावजूद कॉंग्रेस के उन लोगों ने धक्कमपेल करते हुए थोड़ी बहुत अफरा–तफरी मचा ही दी।

कुछ समय पहले ही मौ. शौकत अली यहां आए थे तब इन डरपोक लोगों को इस तरह विरोध जताने का साहस नहीं हुआ था। क्योंकि उन्हें पता था कि अस्पृश्यों की तरह मुसलमान लोग शांति से काम नहीं लेंगे। समय आने पर अपने से अधिक गुंडागर्दी कर वे अपनी खोपड़ी तोड़ेंगे, इसका उन्हें पूरा यकीन था। इसीलिए बड़े

---
*जनता : 6 जुलाई, 1931

भाई के साथ मजाक करने का साहस उन्होंने नहीं दिखाया। अस्पृश्य हैं क्या चीज, अपने पैरों तले के जीव। हम उन्हें जब चाहे मसल देंगे, ऐसा उन्हें लगा होगा और इसीलिए वे उनके प्रिय नेता का बेवजह अपमान करने चले आए थे। अस्पृश्य स्वयंसेवकों ने संयम से काम लिया। गुस्से को दूर रखा उनकी करतूतें गैरकानूनी रूप धारण करने लगीं, तो सरकारी सिपाहियों ने उन्हें वहां से खदेड़ दिया। इसीलिए, स्पृश्य–अस्पृश्यों के बीच मारपीट टल गई। लेकिन इस सारे प्रसंग में किसकी बेइज्जती हुई, जो काँग्रेसी नेता यह कहते फिरते थे कि सरकारी सिपाही गुंडागर्दी करते हैं और गांधी–आयर्विन सुलह भंग करते हैं, क्या ऐसी बकवास करने वाले काँग्रेसी नेताओं की बेइज्जती नहीं हुई इस प्रसंग से?

डॉ. अम्बेडकर के सार्वजनिक सम्मान का और सार्वजनिक भाषण का वहां के युवा मंडल ने जो कार्यक्रम तय किया था उसे बिगा़डने का उनका षड्यंत्रकारी कार्यक्रम कामयाब तो नहीं ही हुआ उल्टे, उनके विघ्नसंतोषी स्वभाव पर लगाम कसने के लिए उम्मीद से कहीं अधिक जनसमुदाय डॉ. अम्बेडकर के सम्मानार्थ तथा उनका भाषण सुनने के लिए वहां इट्ठा हुआ था। काँग्रेस और गांधीजी की राजनीति का संक्षेप में विश्लेषण कर उनमें और अपने में कहां, कैसे और क्यों मतभेद पैदा हो रहा है, इस बारे में संक्षेप में लेकिन सिलसिलेवार विश्लेषण उन्होंने जनता के सामने रखा। अस्पृश्य युवाओं को संबोधित कर उन्होंने कहा,

अपनी लड़ाई सभी तरह की गुलामियों के खिलाफ है। अस्पृश्यता की प्रचलित गुलामी दुनिया में व्याप्त गुलामी की सभी पद्धतियों में भयंकर और भीषण है और अकेले हिंदू समाज के और धर्म के मुंह पर लगी कालिख ही नहीं है, वरन् पूरे मानव धर्म और इंसानियत पर लगा लांछन है। हम हिंदू समाज के अभिन्न अंग हैं। और इसीलिए हिंदुओं की हर धार्मिक संस्था और मंदिरों में प्रवेश करना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है। आपकी आज की तैयारी और साहस देखकर मुझे बहुत संतोष हुआ। लेकिन मेरी अगली मुलाकात के वक्त मैं चाहता हूं कि आपकी इससे अधिक तैयारी हुई हो। अस्पृश्यता निवारण का जो कार्य आपने स्वीकारा है वह अधिक परिणामकारी होने की मैं उम्मीद रखता हूं।" डॉ. अम्बेडकर का यह सार्वजनिक भाषण अमदाबाद के प्रेमाभाई हॉल में सम्पन्न हुआ।

43
अस्पृश्य महिलाएं सर्वांगीण सुधार के लिए प्रयत्नशील रहें*

दूसरे गोलमेज सम्मेलन में हिस्सा लेने के लिए अखिल अस्पृश्य वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर शनिवार दिनांक 15 अगस्त, 1931 को विलायत जाने वाले थे। उसके लिए उन्हें प्रेमपूर्वक विदाई देने के लिए अखिल अस्पृश्य माने गए वर्ग की तरफ से शुक्रवार दिनांक 14 अगस्त, 1931 को मुंबई के सर कावसजी जहांगीर हॉल में डॉ. पी. जी. सोलंकी की अध्यक्षता में समारोह आयोजित किया गया था। शुक्रवार की रात आठ बजे पहले भगिनी वर्ग की तरफ से उन्हें विदाई दी गई। अस्पृश्य मानी गई अनगिनत भगिनीवर्ग के समुदाय से कावसजी हॉल पूरी खचाखच भरा हुआ था।

इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को भगिनीवर्ग तथा पुरुषवर्ग की ओर से विदाई दी गई।

डॉ. अम्बेडकर के स्वास्थ्य में ज्यादा सुधार नहीं आया था। इसके बावजूद इस अवसर पर उपस्थित रह कर उन्होंने भगिनी वर्ग को खास तौर पर उपदेष किया। अपने भाषण में मुख्यतः भगिनी वर्ग को उद्देश्य कर उन्हें अपने स्वावलंबी लड़ाई के बारे में जानकारी देते हुए उन्होंने कहा,

"आज से हमें अपनी उन्नति के लिए अतिरिक्त जोश के साथ काम में जुट जाना होगा। हमारे गले के चारों ओर हिंदुओं ने तथा सरकार ने गुलामी का पाश डाला, हमें शिकंजे से कसा हुआ है, उसे फट से तोड़ कर हमें अपनी आजादी हासिल करनी होगी। हमारी महिलाओं को इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए अपने रहन–सहन में तथा अन्य सामाजिक बातों में बहुत ही सुधार लाने होंगे। सबसे पहले अपने बदन पर के पीतल और निक्कल के अलंकारों का त्याग करना होगा। स्पृश्य समाज की महिलाओं की तरह ही साड़ी पहनने का आपका अंदाज होना चाहिए। साथ ही समाज को हमें यह दिखा देना चाहिए कि अगर चाहें तो हम स्वावलंबन के सहारे क्रांति ला सकते हैं। पुरुषों की सहायता से अपना काम हमेशा बड़े पैमाने पर चलता रहे, इसलिए उनकी हर तरह से मदद करने के लिए भी आपको तैयार रहना चाहिए।

*जनता : 17 अगस्त, 1931
(यहां दिया जा रहा भाषण डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर द्वारा भगिनीवर्ग को दिया गया था। पुरुषों के लिए उन्होंने जो भाषण दिया उसे अलग से दिया गया है। –संपादक)

पुरुष वर्ग को उनके कर्तव्य का अहसास करा देने की बड़ी जिम्मेदारी आपके सिर पर है। पुरुषों को नशे की लत से तथा अन्य हानिकारक कृत्यों से अलग रखने का काम आपको करना चाहिए। भावी पीढ़ी को आज की गुलामी का पता भी न चले, इस तरह के अलौकिक निःस्वार्थ कार्य आपको बिल्कुल निर्भयता से करने चाहिएं। इसके लिए जब आप तैयार हो जाएंगी, तब मेरे कार्य की जिम्मेदारी अपने आप पूरी होने का पुण्य आपकी झोली में होगा।

44
लड़ाई अगर कांटे की हो तो भी उसे पार लगाने की जिम्मेदारी अपनेपन की भावना के साथ निभाए*

दिनांक 14 अगस्त, 1931 को बहनों की सभा के बाद 10 बजे तक पगारे बंधू चांदोरीकर के जलसे का कार्यक्रम हुआ। डॉक्टर साहब ने जलसे वालों का अभिनंदन कर उन्हें धन्यवाद दिया और उन्हें एक चांदी का पदक अपने हाथों से अर्पण किया।

पुरुष वर्ग से विदा लेते समय डॉ. अम्बेडकर ने बेहद असरदार भाषण दिया। मन को हिला देने वाला उनका मर्मस्पर्शी भाषण सुन कर सबके मन आगामी युद्ध के लिए उत्सुक हो गए हों, ऐसा लग रहा था। अध्यक्ष डॉ. सोलंकी ने विलायत जा रहे डॉ. अम्बेडकर के काम के बारे में सबको बताया। उसके बाद डॉक्टर साहब बोलने के लिए उठ खड़े हुए। उन्होंने कहा,

हमें आज तक मिली सफलता में डॉ. सोलंकी का भी हिस्सा है, यह बात मैं भूल नहीं सकता। हमारी लड़ाई बड़ी विकट है, और अपने काम में सफलता पाना बहुत कठिन है। गोलमेज सम्मेलन में पूरे हिंदुस्तान से हर पार्टी के, पंथ के, जाति के मिला कर करीब 125 प्रतिनिधि हैं। इन में से केवल दो ही प्रतिनिधि अपने समाज से चुने जाएं, यह बड़े दुःख की बात है। हम दो एक तरफ और बाकी सब दूसरी तरफ, ऐसी स्थितियों में अगले गोलमेज सम्मेलन में कहां तक सफलता मिलेगी, मैं आज कुछ कह नहीं सकता। पूरी–पूरी कोशिश, भरसक प्रयास करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं। आपका मुझ पर जो अलौकिक प्रेम है उसे देख कर मुझमें हर काम करने का उत्साह पैदा होता है। इसी उत्साह के बलबूते पर मैंने अपने काम की नींव रखी है। इसी के बल पर अपनी स्वतंत्रता की लड़ाई में अधिक से अधिक जीत हासिल करूंगा। लेकिन मेरे लौटने तक डॉ. सोलंकी के नेतृत्व में आपको अपना संगठन और पुख्ता बनाना होगा, उसकी व्यापकता की ओर ध्यान देना होगा।

दूसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि, महात्मा गांधीजी के साथ मेरी जो मुलाकात हुई उसमें मुझे पूरी तरह निराशा ही दिखाई दी। हमारे राजनीतिक अधिकारों के संदर्भ में महात्मा गांधी आज की स्थितियों में कुछ भी नहीं कर सकते। हमारे लिए जितने अपनेपन के साथ उन्हें काम करना चाहिए, उतना करना उनके लिए असंभव है। जनता पत्र में दी गई जानकारी से आपको गांधीजी के साथ हुई मुलाकात के

*जनता : 17 अगस्त, 1931

बारे में विस्तृत जानकारी मिलेगी ही। ऐसी आपात् स्थितियों में आपको अपना बल और अधिक बढाना चाहिए और अपनी लड़ाई आगे जारी रखिए। इस सिंहस्थ मेले में नासिक में जो सत्याग्रह होने वाला है वहां जाकर आर्थिक और मानव संसाधनों की मदद दीजिए। मंदिर प्रवेश के सत्याग्रह के साथ नासिक जिले ने बड़ी जिम्मेदारी निभाई है और इसीलिए उनकी पुकार का जवाब देते हुए, लड़ाई भले कितनी ही कठिन लगे, उससे निपटने की जिम्मेदारी अपनत्व के भाव से स्वीकार कीजिए। नासिक की तरह ही पुणे जिला भी पिछड़ा हुआ नहीं है ऐसा अब मुझे लगने लगा है। दो माह पूर्व पुणे जिला बहिष्कृत परिषद हुई थी। उसमें हुए कामकाज से लगता है कि जल्द ही उस जिले में जोश के साथ आंदोलन की शुरुआत होगी। इस परिषद को सफल बना कर मेरे मित्र रेवजीबुवा डोलस ने मुझे दिखा दिया है कि पुणे जिला किसी भी तरह की जिम्मेदारी उठाने के लिए तैयार है। अपने सहयोगियों के साथ वे इस आंदोलन को इसी तरह बरकरार रखें। समता सैनिक दल के अनुशासन पर मुझे गर्व महसूस होता है। मैं उनसे कहना चाहूंगा कि वे इस अनुशासन और कर्तव्यनिष्ठा को कायम रखते हुए अपने कार्य करने के संकल्प को और अधिक करें। अनुशासन और संगठन कायम रखते हुए अपनी जिम्मेदारी आप मेरी गैर–हाजिरी में भी बेहतर तरीके से निभाते रहेंगे, ऐसी मैं उम्मीद करता हूं।" इसके बाद उन्होंने अपना भाषण समाप्त किया।

45
अपने लोगों के हितसंबंधों का मैं खुद प्रतिनिधि हूँ*

पिछले गुरुवार यानि दिनांक 8 अक्तूबर, 1931 का दिन गोलमेज सम्मेलन के इतिहास का विशेष महत्त्व का दिन था। अल्पसंख्यकों के मसलों पर बातचीत के लिए जो निजी समिति महात्मा गांधी की अध्यक्षता में नियुक्त की गई थी और आठ दिनों तक लगातार बातचीत के बाद भी जिस समिति के जरिए इस अल्पसंख्यकों के मसले पर कोई निर्णय नहीं लिया जा सका था, उस समिति के कुछ सदस्यों के उस दिन भाषण हुए। अल्पसंख्यकों के सवालों पर कोई सर्वसम्मत हल निकल नहीं पाया। पंजाब के हिंदू, मुसलमान और सिक्खों की मांगों के हल निकल न पाने के कारण इस समिति को यह सवाल हल करने में असफलता का सामना करना पड़ा जिसके बारे में सबने खेद व्यक्त किया। कँग्रेस की तरफ से महात्मा गांधी ने अस्पृश्यों के सवाल पर जो पक्षपातपूर्ण रवैया अपनाया था उसका खुले तौर पर विरोध करने के अलावा इस वक्त डॉ. अम्बेडकर के सामने कोई अन्य चारा ही नहीं था। लेकिन, केवल इसी बात को लेकर कि, डॉ. अम्बेडकर ने महात्मा गांधी का विरोध किया, सभी हिंदू राष्ट्रीय पत्रकारों ने और कॉंग्रेस ने और तथाकथित देशभक्तों ने समाचार पत्रों के पाठकों और जवानों का मन कलुषित करने का घिनौना कार्य किया। उन लोगों का यह लगभग धर्म ही हो बैठा था कि वे अपने पाठकों का मन डॉ. अम्बेडकर के खिलाफ कलुषित करते रहें। डॉ. अम्बेडकर ने विरोध क्यों किया और उन्हें विरोध क्यों नहीं करना चाहिए, इस बात के बारे में ठंडे और निर्विकार दिमाग से सोचने की उदारता इन पत्रकारों तथा देशभक्त कहलाने वालों के पास नहीं थी! बस महात्मा गांधी की योजना है, तो फिर वह भले वह सुसंगत हो या विसंगत उसका विरोध करना तो जैसे प्रत्यक्ष भगवान का विरोध करने जैसा भयावह और पापमूलक है, ऐसी मानसिकता बनाई गई थी! अंग्रेज सरकार द्वारा भड़काए जाने के बगैर कोई ऐसा कर ही नहीं सकता है, वाली भ्रामक और गलत सोच को इन राष्ट्रीय और देशभक्त पत्रकारों ने पाल रखी है और अपनी इसी सोच का प्रसार वे हर रोज अपने पाठकों के बीच करते रहते हैं। महात्मा गांधी ने तो यह तुनतुना बजाना शुरू ही कर दिया था कि, "डॉ. अम्बेडकर अस्पृश्यों के सच्चे प्रतिनिधि या नेता नहीं हैं। उन्हें सरकार ने चुना है। अस्पृश्यों के सच्चे, लोकमान्य नेता कोई और ही हैं, और वे कॉंग्रेस के पास हैं। कॉंग्रेस और मैं ही अस्पृश्यादि सभी अल्पसंख्यक समाज के प्रतिनिधि हैं। गुरुवार की सभा में भी उन्होंने इसी बात पर बल दिया। इसीलिए उनके इस कथन का झूठ स्पष्टता के साथ उघाड़ना जरूरी हो गया था।

---

*जनताः 12 अक्तूबर, 1931

मुसलमानों की तरफ से सर महंमद शफी ने गांधीजी के इस कथन का विरोध किया। डॉ अम्बेडकर को भी गांधीजी के कथन को निरस्त करना पड़ा। लेकिन कहते हैं ना कि गुपचुप चिकोटी काटने वाले का हाथ दिखाई नहीं देता, लेकिन चिल्लाने वाले का मुंह जरूर दिखाई देता है! कुछ ऐसा ही यहां भी हुआ है। महात्मा गांधी सत्पुरुष हैं, अस्पृश्योद्धारक हैं, इसलिए उनका कहा हर शब्द वेदतुल्य माना जाए। उन्होंने सच कहा या झूठ कहा, अच्छी–बुरी कोई भी नीति अपनाई, तो भी उसे स्वीकारना ही चाहिए इस प्रकार जो सोचते हैं, उन्हें डॉ. बाबासाहेब का दिया भाषण कड़वा लगना स्वाभाविक है, इसमें आश्चर्य लगने जैसी कोई बात नहीं है। यहां के छोटे–बड़े सभी राष्ट्रीय अखबारों ने महात्मा गांधीजी के तार से भेजे गए भाषण प्रसिद्ध किए, लेकिन डॉ. अम्बेडकर के भाषण को समाचार पत्र में जगह न देकर उनका सिर्फ जनमत को कलुषित करने वाला सारांश देकर अपनी बदले की आग को शांत कर लिया है। आठ तारीख को डॉ. अम्बेडकर का जो भाषण प्रसिद्ध हुआ है, उसका सारांश आगे दिया जा रहा है। डॉ. अम्बेडकर ने कहा,

"कल रात की असफल बातचीत के बाद समिति के सदस्यों ने 'अपनी कोशिशें असफल रहीं' इस भावना के साथ एक–दूसरे से विदा ली थी। यह भी तय किया था कि आज उस बारे में बातचीत करते हुए विवाद पैदा करने वाले बिंदुओं के बारे में या मतभेदों को और गहरा करने वाली नीतियों पर कोई भाषण ना करें। इस प्रकार की बातें आपस में मोटे तौर पर तय की गई थीं। लेकिन गांधीजी का अभी का भाषण सुन कर और उनके द्वारा इस समझौते का भंग होता देखकर मुझे खेद हुआ। गांधीजी ने भाषण की शुरुआत से ही समिति के कार्य को सफलता क्यों नहीं मिलने के कारणों को अपने नजरिए से गिनाते समय कई विवादपूर्ण पहलु उत्पन्न किए। समिति का कार्य असफल क्यों रहा, इसके कई सबूत मेरे पास भी हैं, लेकिन आज यहां उनका जिक्र करना अप्रासंगिक होगा। इसीलिए, मैं ऐसा नहीं करना चाहता।

समिति की बैठक क्या बेमियाद टाल दी जानी चाहिए, इस समयोचित विषय पर बोलने के बजाय समिति के सदस्य उन–उन समाज के प्रतिनिधि हैं अथवा नहीं हैं, का अप्रासंगिक विवादित मुद्दा बेवजह उठा कर गांधीजी ने अलग ही विषय को बढ़ावा दिया है। सरकार ने हमें यहां चुन कर भेजा है, इस बात से हम में से कोई भी इनकार नहीं कर सकता। लेकिन अगर मेरे ही बारे में बोलना हो तो गांधीजी को मैं चुनौतिपूर्ण तरीके से बताना चाहता हूं कि अपना प्रतिनिधि कौन हो यह चुनने का मौका अगर अस्पृश्य वर्ग को दिया जाए तो उनके द्वारा चुने गए सदस्यों में मेरा नाम भी होगा ही। इसलिए, गांधीजी द्वारा बेवजह उछाले गए मुद्दे का जवाब देते हुए आज मैं बस इतना ही बताना चाहूंगा कि मेरा चुनाव भी सरकार द्वारा अन्य

लोगों की तरह ही किया गया है, लेकिन मैं अपने लोगों के हित का पूरा और सच्चा प्रतिनिधि हूं और अच्छा होगा कि वे इस सच्चाई को ना भूलें।

गांधीजी बार–बार यही बात कहते रहे हैं कि काँग्रेस अस्पृश्यों के लिए मेहनत कर रही है और अस्पृश्यों का प्रतिनिधित्व मैं और मेरे सहयोगियों से अधिक काँग्रेस के पास जाने की ज्यादा संभावना है! इस बारे में मैं बस इतना ही कह सकता हूं कि गैरजिम्मेदार लोगों से जो कई जाली हकों की बात उछाली जाती है उन्हीं में से ये भी जाली हक हैं और जिनके नाम से ये जाली हक रखे जाते हैं, वे अस्पृश्य लोगों द्वारा बार–बार इनकार किए जाने के बावजूद फिर–फिर वही बातें आगे रखने की परले दर्जे की बदमाशी है।

कुगन, अलमोडा से अस्पृश्य समाज संघ के अध्यक्ष द्वारा भेजा गया एक तार अभी–अभी मुझे प्राप्त हुआ है, जिसमें अस्पृश्य समाज को कांग्रेस के बारे में जो अविश्वास महसूस होता है, वह व्यक्त हो रहा है। मैंने अभी तक वह जगह नहीं देखी और न तार भेजने वाले से मेरी पहचान है। हालांकि उन्होंने लिखा है कि, काँग्रेस के कुछ लोगों के मन में अस्पृश्यों के बारे में सहानुभूति है लेकिन बहुजन अस्पृश्य समाज काँग्रेस के साथ नहीं है, यह बात बिल्कुल सही है।

हालांकि इस मुद्दे पर चर्चा करने का भी मौका नहीं है। अब जिस मुद्दे पर बोलना तय हुआ है उसके बारे में यानी, माइनॉरिटी समिति की बैठक बेमियादी रूप से रद्द कर दी जानी चाहिए, इस महात्मा गांधी के प्रस्ताव का सर म. शफी की तरह मैं भी पूरी तरह विरोध करता हूं। इस महत्वपूर्ण मसले को बीच में ही छोड़ कर किसी दूसरे मसले पर सोचा जाए यह बात मुझे पसंद नहीं है। पहली बात, कि एक और बार कोशिश कर अल्पसंख्यकों के इस माजरे को हमें आपस में ही सुलझा लेना चाहिए और सुलह कर लेनी चाहिए। और अगर यह असंभव लग रहा हो, तो ब्रिटिश सरकार पहले इस मसले को हल करने का कोई उपाय लागू करे और फिर आगे बढ़ा जाए। हालांकि, यह बात भी सही है कि किसी पराए देश के लोगों के हाथ में यह मसला सुलझाने के लिए दिया नहीं जाना चाहिए। क्योंकि, इस मामले में ब्रिटिश सरकार जितनी जिम्मेदारी किसी और अजनबी को महसूस नहीं होगी।

एक और बात की ओर मैं लोगों का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं कि अंग्रेज लोगों के हाथ से सत्ता की बागडोर लेकर, ब्रिटिश नौकरशाही के बजाय वरिष्ठ वर्ग हिंदी स्वराज्य वालों के हाथ में उसे सौंपने के राजनीतिक आंदोलन में अस्पृश्य समाज ने अब तक हिस्सा नहीं लिया है। अंग्रेज राज के बारे में राज्यकर्ताओं के खिलाफ अस्पृश्यों की कुछ शिकायतें हैं, लेकिन सिर्फ इतने भर के लिए राजनीतिक सत्ता की अदला–बदली होनी चाहिए, ऐसी अस्पृश्य लोगों की मांग नहीं है। सिर्फ राजनीतिक सत्ता की अदला–बदली के लिए वे ज्यादा उत्सुक नहीं हैं। हालांकि जो लोग इस

बात के लिए आंदोलन छेड़े हुए हैं, उन्हें रोकना अगर सरकार के बस की बात नहीं हो तो, और उसके लिए अगर राजनीतिक सत्ता का विभाजन करना अनिवार्य हो जाए तो वह सत्ता मुसलमान अथवा हिंदू समाज के थोड़े लोगों के या विशिष्ट वर्ग के कब्जे में न चली जाए और उस सत्ता का सामान्य लोगों के और पददलित जातियों के बीच बंटवारा हो, इस बारे में सरकार को जागरुक रहना होगा। इसके लिए पहले से कुछ संरक्षणात्मक शर्तों की (सेफगार्डस् की) व्यवस्था होना अति आवश्यक है। इस नजरिए से देखा जाए तो इस प्रश्न को पहले हल किए बगैर तथा आगामी राज्य संविधान में हमारी स्थिति क्या होगी, इसका सही–सही पता चले बगैर उस संविधान को बनाने में हम दिलो–दिमाग से कैसे सहभागी हो सकते हैं?

46
देश की एकता के लिए संगठन जरूरी है*

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर विलायत का अपना काम थोड़े समय के लिए रोक कर लौट रहे हैं, यह खुशखबरी निम्नलिकित पत्रक के द्वारा दी गई थी :—

शुक्रवार, दिनांक 29 जनवरी, 1932 के दिन सुबह 6 बजे (स्टैन्डर्ड टाईम) बेलार्ड पीयर बंदरगाह पर सभी उपस्थित रहें। डॉ. अम्बेडकर के सार्वजनिक स्वागत समारोह में जिन व्यक्तियों को और संस्थाओं को हिस्सा लेना है, वे अपने नाम, 'डॉ. अम्बेडकर स्वागत समिति' को दें। गुरुवार शाम छह बजे तक अपने नाम दर्ज कर पासेस लें। संस्था, मंडल या पंचों को नाम दर्ज करने की फीस पांच रुपया प्रति नाम होगी, जबकि व्यक्तियों के लिए यह एक रुपया प्रति व्यक्ति रखी गई है। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के जहाज से उतरकर बेलार्ड पियर स्टेशन के हॉल में पहुंचने के बाद, करीब आठ बजे के आसपास सबकी ओर से स्वागत समारोह आयोजित किया गया है। इस समय सब डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को फूलमालाएं और गुलदस्ते अर्पण करें।

दोपहर 3 से 6 बजे तक परेल का डॉ. साहब के लाइब्रेरी हॉल में विभिन्न इलाकों से आए नेताओं में आपसी विचार—विमर्श होगा।

रात 7 से 10 बजे तक गोलमेज सम्मेलन के बारे में डॉ. अम्बेडकर का सार्वजनिक भाषण होगा।

शनिवार, दिनांक 30 जनवरी, को सुबह 11 से दोपहर 1 बजे तक मुंबई के प्रमुख नेताओं के साथ विचार—विमर्श होगा। दोपहर 2.15 की पंजाब मेल से वे गोलमेज सम्मेलन की वर्किंग कमिटी के काम के लिए दिल्ली रवाना होंगे।

स्वागत समिति की सूचना के अनुसार जिन व्यक्तियों ने स्वागत समारोह के पासेस खरीदे होंगे, उनका स्वागत समिति में समावेश होगा।

आपका विनम्र,
सीताराम नामदेव शिवतरकर
सचिव,
डॉ. अम्बेडकर स्वागत समिति, मुंबई

इस प्रकार अस्पृश्य समाज उनके जोरदार स्वागत की तैयारी कर चुका था। संपूर्ण भारत के अस्पृश्य बंधु—बांधवों के आगामी राज्य संविधान के लिए गोलमेज सम्मेलन

*जनता : 23 और 30 जनवरी, 1932

में डॉ अम्बेडकर ने जो अद्वितीय कार्य किया उसके लिए अस्पृश्य समाज उनके लिए धन्यवाद के गीत गा ही रहा था। लेकिन उनमें से हर किसी को यही लग रहा था कि डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के प्रत्यक्ष दर्शन किए बगैर उनके कार्य के बारे में अपने मन में चेतनाशील विचार व्यक्त नहीं होंगे। "दिनांक 29 जनवरी, 1932 के दिन एस एस मुलतान जहाज से मुंबई आऊंगा" का तार पहुंचा तो यहां के अस्पृश्य समाज में खुशी की लहर दौड़ पड़ी। 29 तारीख का हर किसी को बेसब्री से इंतजार था। और आखिर उनके आगमन का दिन बीते शुक्रवार को निकल आया।

सुबह छह बजे डॉ. अम्बेडकर बेलार्ड पियर के मॉल स्टेशन पर उतरने वाले थे। इसके बावजूद अनगिनत अस्पृश्य भाई–बहनों का जमावड़ा तड़के साढ़े चार–पांच बजे से ही मॉल स्टेशन पर इकट्ठा होने लगा था। हर एक के मुख पर खुशी की, एक तरह के संतोष की और संतृप्ति की भावनाएं साफ दिखाई दे रही थीं। आनंद के कारण मुख से सहज ही 'डॉ. अम्बेडकर की जय' की घोषणा निकल रही थी। महिलाओं द्वारा की गई इसी घोषणा से बीच–बीच में वातावरण गूंज उठता था। सबको डॉ अम्बेडकर के दर्शन की उत्सुकता थी। और आखिर छह बज गए, सबकी नजरें मुलतान जहाज की राह में बिछी थीं। इतने में डॉ. अम्बेडकर ने जहाज के डेक पर आकर छुटपुट दर्शन दिया और उनकी जयकार से वातावरण गूंज उठा।

पहले से तय था कि डॉ. अम्बेडकर के स्वागत का कार्यक्रम मॉल स्टेशन के एक भव्य हॉल में किया जाएगा। उस हॉल को बढ़िया ढंग से सजाया गया था। उसमें एक उच्चासन भी बनाया गया था। डॉ. अम्बेडकर जिस जहाज से आने वाले थे, उसी जहाज से मौ. शौकत अली भी आने वाले थे, जिनके स्वागत की भी मुसलमान बंधुओं ने और खिलाफत के स्वयंसेवकों ने तैयारी की थी। इसी हॉल का आधा हिस्सा मुसलमान बंधुओं को दिया गया था। एक तरफ मुसलमान समाज और दूसरी तरफ अस्पृश्य समाज इस प्रकार हॉल को बांटा गया ता। जिस तरह डॉ. अम्बेडकर के स्वागत के लिए अस्पृश्य लोग उत्सुक थे उसी तरह मौ. शौकत अली के स्वागत के लिए मुसलमान बंधू भी आतुर थे। सात बजे का समय दोनों के स्वागत के लिए तय किया गया था। जहाज पर उनके स्वागत के लिए मुसलमान और अस्पृश्य समाज के नेता गए थे। स्वागत से पहले जहाज के सबसे ऊपर वाले डेक पर गोलमेज सम्मेलन के बारे में डॉ. अम्बेडकर और श्री देवराव नाईक, डॉ. प्रधान, श्री असईकर, कद्रेकर, गुप्ते, प्रधान, खांडके, शिवतरकर, रणखांबे आदि के साथ थोड़ा विचार–विमर्श हुआ। फिर डॉ. अम्बेडकर ने जहाज पर अपना फुटकर काम निपटाया और उसके बाद वे और मौ. शौकत अली स्वागत के लिए तैयार किए गए हॉल में आए। उस वक्त एक बार फिर उनकी जयकार से वहां का वातावरण गूंज उठा। डॉ. अम्बेडकर और मौ. शौकत अली का दोनों समाजों की ओर से स्वागत हुआ ऐसा कहना गलत नहीं होगा।

विलायत में गोलमेज सम्मेलन के काम में मुसलमानों ने डॉ. अम्बेडकर की जो मदद की थी, उसके कारण मौ. शौकत अली का स्वागत भी उन्होंने किया। अस्पृश्य और मुसलमानों का यह संयुक्त स्वागत समारोह अभूतपूर्व कहें तो अत्युक्ति नहीं होगी।

अपने स्वागत के लिए जवाब देते हुए मौ शौकत अली ने कहा कि डॉ अम्बेडकर मेरे छोटे भाई की तरह हैं, और जब तक हर धर्म के, जाति के और पंथ के व्यक्ति इस तरह के भाईचारे का अनुभव नहीं करते तब तक सच्चे स्वराज की प्राप्ति नहीं हो सकती। इंसान पहले अपने काम के लिए हिम्मत बटोरे। इस नजरिए से देखें तो डॉ. अम्बेडकर ने विलायत में गोलमेज सम्मेलन में जो हिम्मत का काम किया है, वह वाकई काबिले तारीफ है। मुसलमान समाज हिम्मत से हिंदवी स्वराज की मदद कर रहा है। और इसीलिए सबको एक–दूसरे के साथ सहकारिता से पेश आना ही पड़ेगा। मौ. शौकत अली के भाषण के बाद डॉ. अम्बेडकर बोलने के लिए उठ खड़े हुए। तब लोगों की तालियों की और जयध्वनि की आवाज गूंज रही थी। उनके गले में लगातार फूलमालाएं डाली जा रही थीं। कई बार तो डॉ. अम्बेडकर फूलमालाओं के बीच दब से जाते हुए दिखाई दे रहे थे। कुछ समय बाद यह गगनभेदी जयघोष रुका और डॉ. अम्बेडकर ने बोलने की शुरुआत की। पहले उन्होंने अपने स्वागत के लिए सबके प्रति आभार व्यक्त किया। फिर उन्होंने कहा,

"आज यहां इकट्ठा हुआ जमावड़ा एक तरह से अद्‌भुत है। आज तक स्वागत के हिंदुओं के और मुसलमानों के कार्यक्रम अलग–अलग हुआ करते थे। इससे विभिन्न समाजों की भिन्नता ध्यान में आने की संभावना हुआ करती थी। लेकिन आज हम यहां मन में एकता का, अपने हिंदी होने का भाव लेकर इकट्‌ठा हुए हैं। गोलमेज परिषद के बारे में यहां कुछ कहना नहीं है, यह तय है। लेकिन एक बात मैं जरूर कहना चाहूंगा। वहां मुसलमान प्रतिनिधियों ने बेहद अपनेपन की भावना से मेरी मदद की है। उनकी मदद न मिलती तो शायद सभी प्रतिनिधियों से संघर्ष करना मेरे लिए असंभव होता। गोलमेज परिषद के अन्य हिंदू प्रतिनिधियों में अस्पृश्यों बारे में जो स्पष्ट रूप से कुछ कहने की हिम्मत नहीं थी, वह मुझे मुसलमान प्रतिनिधियों में दिखाई दी। उनके द्वारा दिए गए सहयोग के लिए मुझे उनके प्रति हमेशा आदरभाव ही रखना होगा। भारत की एकता के लिए हम सबको संगठन के बल पर अपने कार्यक्रम की रूपरेखा बनानी होगी।"

इस स्वागत समारोह से पहले चमार समाज के मिस्टर पी. बालू, राजभोज, काजरोलकर, पवार आदि लोग डॉ. अम्बेडकर से जहाज पर मिले। फूलमालाएं पहनाकर, गुलदस्ते देकर उन्होंने डॉ. अम्बेडकर का सम्मान किया। उनका स्वागत करते हुए मिस्टर पी. बालू ने कहा, कि 'डॉक्टर साहब, अस्पृश्य समाज के आप सच्चे

हितचिंतक नेता हैं। गोलमेज परिषद में आपने जो अपूर्व कार्य किया है, उसके बारे में हमें धन्यता महसूस होती है।"

डॉ. अम्बेडकर को अपने स्वागत से आनंद हुआ। स्वागत करने आए सभी को उन्होंने अंतःकरण से धन्यवाद दिया। शेठ शंकरराव परशा, रा. ब. सी. के. बोले, सेठ मणियार आदि अन्य समाज के नेताओं ने भी डॉक्टर साहब का स्वागत किया। अस्पृश्य समाज के डॉ. सोलंकी, एन. टी जाधव, श्री वनमाली, श्री संभाजी गायकवाड़, गुडेकर, चांदोरकर, श्री शिवराम जाधव, श्री. नेवरीकर, श्री. दिवाकर पगारे बंधु, जाधव, श्री. गणपतबुवा, श्री. वराले, पुणे के सुभेदार घाडगे, नासिक के श्री रणखांबे, गायकवाड़, काले, रोहम, बापूसाहब दाणी, श्री. पतितपावन आदि लोग हाजिर थे।

बेलार्ड पियर के सुबह के स्वागत समारोह में समता सैनिक दल ने विशेष काम किया है। दल के सर्वाधिकारी श्री वडवलकर और सचिव और उपाध्यक्ष श्री सालवे और श्री लोटेकर ने भी इस काम में काफी मेहनत की है। डॉ. अम्बेडकर का मौ. शौकत अली के साथ जुलूस में जाने का कार्यक्रम भले ऐन समय पर तय किया गया था, लेकिन बेहतर ढंग से पूरा हुआ। दोनों नेताओं और जुलूस के फोटो लेने के लिए मोल स्टेसन पर फोटोग्राफर्स की भीड़ जुट गई थी। अस्पृश्य और मुसलमान लोगों का यह संयुक्त जुलूस बेलार्ड पियर निकला और जी. पी. ओ. मार्ग से होता हुआ मार्केट, अब्दुल रहमान स्ट्रीट, पायधुणी मार्ग से होता हुआ भायखला रोड के खिलाफत ऑफिस तक आया। खिलाफत ऑफिस में डॉ. अम्बेडकर का सम्मानपूर्वक स्वागत करने के उपरान्त डॉ. अम्बेडकर मौ. शौकत अली से विदा लेकर परेल के लिए निकले। परेल तक कार में उनका जुलूस निकाला गया। करीब 10.30 बजे डॉ. अम्बेडकर परेल के अपने ऑफिस में आ पहुंचे।

परेल में अस्पृश्य समाज के लोग पहले से उनके स्वागत के लिए इकट्ठा हुए थे। उनके स्वागत को स्वीकार करने के बाद शाम सात बजे तक उन्होंने विभिन्न संस्थाओं के प्रतिनिधियों से और नेताओं से मुलाकातें कीं।

मान पत्र

Dr. B.R. Ambedkar
MA, PhD, DSc, Bar-at-Law, MLC
Delegate, Indian Round Table Conference

Dear Sir,

We the undermentioned Institution, feel this an occasion of honour.......... communities in Indian.

Allow us to take this opportunity of putting on record that..........would never be safe and..........the credit goes to you.............constitution forth is country.

Oppressed, tyranised and exploited as were are by one and all from ages *.......one but few friends.

It is needless for us to repeat..........community, we remain.

yours truly
The members of
1) Social Equality Army

47
स्वाभिमान और आजादी का दीप कभी ना बुझने दें*

मुंबई और मुंबई इलाके की 114 संस्थाओं की ओर से तय कार्यक्रम के अनुसार शुक्रवार, दिनांक 29 जनवरी, 1932 को शाम 7 बजे दामोदर हॉल मुंबई में डॉ. पी. जी. सोलंकी की अध्यक्षता में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को मानपत्र देने का समारोह संपन्न हुआ। कार्यक्रम की शुरुआत में छोटी बच्चियों ने उनकी प्रशंसा में गीत गाए। स्वागत समारोह में हजारों महिलाओं और पुरुषों का समुदाय इकट्ठा हुआ था। बाद में अध्यक्ष श्री सोलंकी की सूचना के अनुसार श्री एन. टी. जाधव ने मानपत्र पढ़ कर सुनाया। इस मानपत्र पर मुंबई और मुंबई इलाके की कुल 114 संस्थाओं के हस्ताक्षर हैं। यह मानपत्र निम्नानुसार है,

मानपत्र का जवाब देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा–

"आज आपने मुझे जो मानपत्र दिया है, उसमें उल्लिखित गौरव के लिए मेरी कितनी योग्यता है इस बारे में साशंक हूं। किसी पड़ोसी को, या पास/नजदीक के व्यक्ति को उसके जितने दोष दिखाई देते हैं, उतने किसी दूर के व्यक्ति को दिखाई नहीं देते। गोलमेज परिषद में मैंने जो काम किया, उसकी सफलता का श्रेय मेरी झोली में डालने की कोशिश इस मानपत्र में गौरवपूर्ण शब्दों के सहारे की है। लेकिन मेरी मनोवेदना मुझे बताती है कि गोलमेज सम्मेलन में हुए काम की सफलता का केवल मैं भागीदार नहीं हूं। उस सफलता के धनी यहां इस समय इकट्ठा हुए मेरे अनगिनत भाई–बहन ही हैं। हम सबको एक बात पूरी तरह ध्यान में रखनी चाहिए कि किसी भी समाज का या पक्ष का नेता किसी सुयश का अकेला हकदार कभी नहीं बन सकता। केवल नेता का पद होना काफी नहीं है, हम जिस कार्य के लिए आगे आए हैं, वह इंसानियत के अधिकारों का अपना पवित्र कार्य कड़े स्वार्थत्याग से और अनुशासन के साथ किया जाना चाहिए। गोलमेज परिषद के लिए आपकी ओर से मैं प्रतिनिधि नियुक्त तो हुआ, लेकिन अगर आप खुद अपने काम की जरूरत को जान कर मेरी कोशिशों को एकमत से और एकजुट से समर्थन नहीं देते तो मैं शायद कुछ नहीं कर पाता। राउंड टेबल परिषद के बहाने ही सही भारत के समस्त अस्पृश्य वर्ग में जागृति का दावानल भड़क उठता और जागृति की यह ज्योति अपने उज्जवल स्वरूप के साथ ब्रिटिशों को, वहां के राजनीति के धुरंधरों को दिखाई नहीं

---

*जनता : 30 जनवरी, 1932

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को समर्पित मानपत्र : संपादक : शंकरराव हातोले पृ. 29–33

(इस मानपत्र पर तारीख नहीं है। लेकिन 114 संस्थाओं की ओर से मानपत्र और गोलमेज सम्मेलन का जिक्र इन बातों को ध्यान में लेते हुए वह ऊपर बताए कार्यक्रम में दिया गया हो। –संपादक)

देती, तो गोलमेज सम्मेलन में मैं कुछ नहीं कर पाता। आपके अंतःकरण में स्वाभिमान का और स्वतंत्रता का जो दीप जल रहा है, उसे अधिक उज्जल करने की कोशिश की जानी चाहिए ताकि वह फिर कभी बुझ न पाए। आप लोगों को सबसे पहले इसी बात का खयाल रखना होगा।

छह करोड़ अस्पृश्य जनता यदि अपने राजनीतिक अधिकारों के बारे में घोषणा करती है, तो यह अलौकिक है। नेता के पीछे चलने के बजाय यदि जनता खुद निडरता से कमर कस कर खड़ी हो जाए, तो किसी भी कार्य में उसे सफलता मिलनी ही चाहिए। मेरे छह करोड़ अस्पृश्य बंधु अगर हिम्मत से काम लें तो भारत के लोगों को स्वराज मिलने में समय ही कितना लगने वाला है! अपने अंतःकरण में दबी इंसानियन की, अपनत्व की नमी को सूखने ना दें। उसे और अधिक कैसे चमकाया जा सकता है, यह सोचें। कुछ वर्ष पूर्व हमारे पूर्वजों को जो बातें असंभव लगती थीं, वे आज दस वर्षों के अंतराल में ही संभव हो चली हैं। खासकर, पिछले दो सालों में जो जागृति हुई है वह हर तरह सें अपूर्व ही कहलाएगी। कुछ समय पूर्व तक मेरे कार्य में मेरे चमार बंधुओं को विश्वास नहीं था, यह बात बार–बार मेरे मन को कुरेद रही थी। लेकिन आज मैं जिस जहाज से भारत आया, तब मेरे स्वागत के लिए आए आप अन्य जातियों के नेताओं के साथ–साथ अचानक मि. पी. बालु, श्री राजभोज, काजरोलकर, पवार आदि चमार समाज के लोगों को देखकर मेरा मन खुशी से भर आया। अपने महार समाज के लोगों को देख कर मुझे जितनी खुशी हुई उससे अधिक इन लोगों के प्रेमपूर्वक मिलने से हुई। मैं इंसान हूं, इंसान से गलतियां होना स्वाभाविक हैं। इन बातों को अपनाकर कार्य करते हुए, हो सकता है मेरी ओर से आपके प्रति कुछ पक्षपातपूर्ण व्यवहार हुआ हो और उसका कारण बस इतना ही है कि अपना अस्पृश्य समाज इतना पददलित है कि उनके बारे में जो काम करना है, उसकी व्यापकता बहुत अधिक है। ऐसे में मैं अकेला सबको कैसे संतुष्ट कर सकता हूं? अपना समाज कार्य असल में देखा जाए तो जैसे आकाश की ही परिक्रमा करने जैसा है। खैर, जो भी हो, इसके बावजूद उन्होंने मेरा जो स्वागत किया है, उससे मुझे कल्पनातीत संतुष्टि मिली है। हमारे सार्वजनिक कार्य में उनके राजनीतिक अधिकारों के बारे में मैं उन्हें पूरा यकीन दिलाना चाहता हूं।

महार जाति में यदि मेरा जन्म हुआ भी है, तो भी समग्रता से महारों के लिए ही मैं कभी काम नहीं कर सकता। बल्कि, मैं सोचता हूं कि यदि मेरे समाज को कुछ न मिला तो भी कोई बात नहीं, मैं बाकी लोगों के लिए भी जो चाहे करने के लिए तैयार हूं, कर सकता हूं बशर्ते कि मेरे हर काम में मुझे उनका पूरा–पूरा सहयोग मिले। इस कार्य में अपने समाज की विभिन्न जातियों में एकता होने से आगे के काम एक–दूसरे की सहमति से मिलजुल कर हल करना असंभव नहीं है, ऐसा मुझे लगता

है। गांधी की बातों से जिनकी संतुष्टि नहीं होती, उनका मेरी बातों से भला क्या समाधान होगा! इसके बावजूद कोशिश तो करनी ही पड़ेगी। महारों से लेकर भंगी समाज तक सबके साथ अपनी एकता होनी जरूरी है। इस पूरे समाज की उन्नति के लिए कोशिश करना ही मेरा ऊंचा ध्येय है और इस बारे में सभी लोगों को अपने हृदय में एक–दूसरे के प्रति विश्वास रखना चाहिए।

मेरी गैरहाजिरी में यहां के अखबारों में मेरे बारे में अनर्गल हल्ला मचाया गया था। मुझे राष्ट्रद्रोही करार देने की यहां के कट्टर राष्ट्रप्रेमी पत्रकारों ने यथासंभव कोशिश की थी। इसके बावजूद मेरे भाई–बहनों ने मुझ पर अटल विश्वास रखते हुए अपना कार्य उत्साह के साथ आगे बढ़ाने की हरसंभव कोशिश की, इस बारे में मुझे बेहद संतोष है। गोलमेज सम्मेलन में मैंने गांधी का विरोध किया, इसके लिए मैं भले ही राष्ट्रद्रोही करार दिया गया हूं, लेकिन मुझे इन आरोपों से जरा भी डर नहीं लगता। उलटे अपने बंधुओं को गुलामी से मुक्ति दिलाने जैसे उच्च कार्य में महात्मा कहलाने वाले व्यक्ति द्वारा जी–जान से विरोध किया जाना दुनिया की नजर में कितना अन्यायपूर्ण है, यह सोचनेवाले खुद तय करें। मेरी मनोदेवता मुझसे कहती है कि मैं सही रास्ते जा रहा हूं, इसलिए स्वार्थी लोगों द्वारा लगाए जानेवाले आरोपों की मुझे बिल्कुल परवाह नहीं करनी चाहिए। मैं राष्ट्रद्रोही हूं, देशद्रोही हूं ऐसा आज जो लोग कह रहे हैं, वे भविष्य में मेरे कार्य के बारे में प्रशंसात्मक बोलेंगे, इस बारे में मुझे कोई शक नहीं है। आज का तूफानी दौर कल जब खत्म होगा, गोलमेज सम्मेलन के कुल कार्य पर जब ठंडे दिमाग से सोचा जाएगा, तब मुझे पूरा यकीन है कि उनका मेरे बारे में विचार बदलेगा। यहां राष्ट्रीय अखबारों में आनेवाली खबरों में और वहां के गोलमेज सम्मेलन के कामकाज में कितना फर्क था, यह भी वे जान जाएंगे। और मुझे यकीन है कि हिंदुओं की अगली पीढ़ी यही कहेगी कि मैंने राष्ट्र के लिए बेहतर काम किया।

मेरी और गांधी की विलायत जाने से पूर्व ही पहली मुलाकात हुई थी और इस बारे में आप सब लोग जानते हैं। गोलमेज परिषद के कार्यक्रम में महात्मा गांधी और मेरे बीच चार–चार पांच–पांच घंटों की बातचीत हुई है। लेकिन उन्होंने आखिर में साफ–साफ बताया था कि मुसलमान और सिक्ख समाज के अलावा अन्य किसी समाज को वे स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र नहीं दे सकते। अल्पसंख्यक समिति के मुसलमान प्रतिनिधि और मुझमें एकता न हो, मुसलमान मुझे अपनी सहायता न दें, इसके लिए महात्मा गांधी ने कैसी भेदनीति अपनाई थी, इस बारे में पुख्ता सबूत, कागजातों समेत मेरे पास मौजूद हैं। उनके कारण मेरे मन में यह आशंका पनपती है कि वे महात्मा पद के लिए कहां तक योग्य हैं? गांधी की कोशिशों को मुसलमानों ने साफ नकार दिया तो वे चिढ़ गए। मार्केट से उन्होंने एक कुरान खरीदी और एच. एच. आगाखान

जिस होटल में रहते थे, वहां वे गए। उनके सामने कुरान रख कर उन्होंने कहा, कि कुरान में कहीं ये लिखा हो तो दिखा दीजिए कि हिंदू–हिंदू के बीच फूट डालें। उस समय मि. आगाखान ने बस इतना ही कहा कि अस्पृश्य समाज हमारे समाज से बहुत ज्यादा पददलित है। हम जब अपने न्यायपूर्ण अधिकारों की मांग कर रहे हैं, उनके लिए लड़ रहे हैं, ऐसे में उनकी अपनी न्यायपूर्ण मांगों की लड़ाई का हम कैसे विरोध करेंगे? उनका जवाब सुन कर गांधी उल्टे पैर अपने निवासस्थान को लौटे।

गांधी की तरह आप मेरी बिना वजह प्रशंसा कर मुझे देवत्व न दें। किसी को देवता बना कर अन्य अंधों की तरह उसके पीछे चलते रहना, यह कम से कम मुझे तो अपनी कमजोरी की ही निशानी लगती है। आप अपना संगठन बनाएं और अनुशासन से, हिम्मत से अपनी सर्वांगीण उन्नति साध्य करें।"

डॉ. अम्बेडकर के भाषण के बाद उन्होंने नासिक के मंदिर प्रवेश सत्याग्रह में सजा भुगत कर लौट आए सत्याग्रही वीरों का उनके गले में पुष्पहार पहना कर सम्मान किया। साथ ही सातारा जिले के अस्पृश्य समाज के चित्रकला सीखने वाले श्री. सावंत का जे. जे. आर्ट स्कूल की चित्र प्रदर्शनी में बेहतर चित्र के लिए प्रशस्तिपत्र पाने और भावनगर के महाराजा द्वारा दिया जाने वाला दो सौ रुपयों का पुरस्कार पाने के लिए अभिनंदन किया। इस अवसर पर उसे नगर जिले की ओर से एक स्वर्णपदक और पुष्पहार अर्पण किया गया।

उसके बाद देर रात तक डॉ. अम्बेडकर और अन्य प्रांतीय नेताओं से विचार–विमर्श हुआ।

48
स्वावलंबन के लिए अखबारों की जरूरत*

जैसे कि दूसरे गोलमेज सम्मेलन में तय हुआ था, ब्रिटिश पार्लियामेंट की तरफ से चुनी गई मतदान पूछताछ समिति के कामकाज की शुरुआत इस महीने के पहले हफ्ते में दिल्ली में लॉर्ड लोथियन की अध्यक्षता में शुरुआत हुई। पहले दिल्ली में मतदान कमेटी के कामकाज की सर्वसाधारण रूपरेखा तैयार की गई, और उस रूपरेखा के आधार पर हिंदुस्तान के हर प्रांत तथा उस प्रांत के गांवों में जाकर पूछताछ करने और साक्ष्य लेने की बात तय हुई। उस मतदान कमिटी में अस्पृष्यवर्ग और अन्य पिछड़े समाज की ओर से डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को चुना गया है। बहुजन पददलित और पिछड़े समाज के समानता के अधिकारों के लिए इस कमेटी की ओर से डॉ. अम्बेडकर ने काम करना तय किया है। दिल्ली से मतदान कमेटी का दौरा लखनऊ में हुआ था। यहां शहर की सही स्थिति स्थानीय मतदान कमेटी की सहायता से आजमाने के बाद आसपास के गांवों में कमेटी के सदस्य पूछताछ के लिए गए।

मतदान कमेटी के दौरे के समय लखनऊ के पददलित और पिछड़े समाज की ओर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का एक समारोह में सम्मान किया गया। इस सम्मान समारोह में भाषण करते हुए डॉक्टर साहब ने कहा,

"अखिल बहिष्कृत समाज की सर्वांगीण उन्नति के लिए बहिष्कृत समाज सेवा संघ के कोई केंद्रीयमंडल तैयार करना होगा। साथ ही अपने स्वावलंबन के आंदोलन का विस्तृत और सभी जगहों पर प्रसार हो, इसके लिए हर प्रांत में हमारा कम से कम एक अखबार तो होना ही चाहिए, तथा मेरे सभी बंधुभगिनियों से एक बड़े ही आग्रह के साथ विनती करता हूं कि अपने समाज के हर व्यक्ति को चाहिए कि अपने राजनीतिक अधिकार पाने के लिए जितनी हो सकें कोशिशें करनी चाहिएं। वरना आने वाले राज्य में हमारी हालत बेहद बुरी होगी, यह बात आप ध्यान में रखें।"

---

*जनता : 13 फरवरी, 1932, भाषण की तारीख नहीं दी गई है – संपादक

49

फूट डालने वाली नीति का मैंने अपने पर असर नहीं होने दिया*

मद्रास की अस्पृश्य जनता ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को दिनांक 28 फरवरी, 1932 की सार्वजनिक सभा में जो अपूर्व, भरपूर और अद्‌भुत उत्साह के साथ स्वागत किया उसका मुंबई की अस्पृश्य जनता को शायद अचरज नहीं होगा। क्योंकि डॉ. अम्बेडकर के प्रति अपना विश्वास मुंबई की जनता ने कई बार व्यक्त किया है। इसके बावजूद मद्रास में डॉ. अम्बेडकर का जो भरपूर स्वागत हुआ, वैसा स्वागत मद्रास जैसे शहर में भी कभी–कभार ही देखने को मिलता हैं। इस सभा में अस्पृश्य समाज के ही करीब दस हजार लोग इकट्‌ठा हुए थे। हजारों लोगों को जगह न मिलने के कारण लौटना पड़ा था। अस्पृश्य समाज के लोगों के अलावा और ब्राह्मणेतर लोगों के अलावा स्पृश्य हिंदू और ईसाई, मुसलमान आदि समुदायों के भी काफी लोग उस सभा में इकट्ठा थे।

शहर के अस्पृश्य समाज में से सभी जातियों के प्रमुख और कायदे कौंसिल के सभी अस्पृश्य प्रतिनिधि वहां हाजिर थे, ही साथ ही 'जस्टिस' और मुसलमान पक्ष के प्रमुख नेता भी स्वागत के लिए उपस्थित थे।

'डिप्रेस्ड क्लासेस सर्विस आर्मी' (दलित समाज सेवा सेना) संस्था के अध्यक्ष श्री सुंदरराव नायडू ने अध्यक्ष स्थान की शोभा बढ़ाई थी।

'पददलित लोगों का निर्भय और सच्चा प्रतिनिधि', इन यथार्थ शब्दों में डॉ. अम्बेडकर की पहचान अध्यक्ष ने वहां उपस्थित लोगों को दी और डॉ. अम्बेडकर ने अस्पृश्य जनता की मानसिकता में कैसी विलक्षण और अपूर्व क्रांति करवाई है, तथा उनके अंदर के खुद के इंसान होने के भाव को, उनके आत्मविश्वास को कैसे जगाया है इस बारे में उन्होंने संक्षेप में जानकारी दी।

अध्यक्ष के भाषण के बाद दलित समाज सेवा सेना, मद्रास प्रांत डिप्रेस्ड क्लासेस फेडरेशन, दी प्रेसिडेन्सी आदि द्रविड़ महाजन सभा, आदिआंध्र महासभा, अरुंधत्येय महासभा, केरल डिप्रेस्ड क्लासेस एसोसिएशन, लेबर युनियन और अन्य कई संस्थाओं की ओर से डॉ. अम्बेडकर को मानपत्र और फूलमालाएं और गुलदस्ते अर्पण किए गए।

उपरिनिर्दिष्ट सभी संस्थाओं के और वहां इकट्‌ठा जनसमूह के प्रति अपने आभार प्रकट करने के लिए डॉ. अम्बेडकर जब खड़े हुए तब उनके स्वागत में तालियों की प्रचंड गड़गड़ाहट हुई। उन्होंने अपने भाषण में कहा–

---

*जनता : 5 मार्च, 1932

"मद्रास की अस्पृश्य जनता, तथा अन्य लोगों द्वारा व्यक्त किए गए अपनत्व के लिए मैं सबके प्रति आभार प्रकट करता हूं। अब तक अस्पृष्य समाज में अपने हकों के बारे में एकमत था और समाज पर उसका असर भी होता रहा। रावबहादुर एम. सी. राजा ने अचानक बिना किसी वजह के इस एकता को भंग किया और इस कारण पहले भी जो राह आसान नहीं थी वह अब और अधिक मुश्किल हो गई है। डॉ. मुंजे की भेद नीति का रावबहादुर राजा बहुत जल्द और अचानक शिकार हो गए हैं। रावबहादुर राजा अगर थोड़ा और सब्र कर लेते और पहले जो बात उन्होंने जाहिर की थी, उसके अनुसार अगर नागपुर में सभा लेकर अस्पृश्य जनता का मत आजमाते और डॉ. मुंजे के साथ करार करते तो अपने समाज के लिए रा. ब. राजा अधिक सुविधाएं और अधिक लाभ पा सकते थे। आज उन्होंने कुछ सफेदपोश नेताओं की निजी और शाब्दिक वाहवाही के अलावा कुछ भी नहीं पाया है। डॉ. मुंजे के साथ मेरी भी कई बार बातचीत होती रही है उनके साथ मैंने 'पैक्ट' नहीं किया, लेकिन उनके मेरे बीच कोई व्यक्तिगत वैर भावना नहीं है। परंतु मैं जानता हूं और डॉ. मुंजे भी जानते हैं कि वे अस्पृश्यता के सामने लाचार हैं। भेद डालने जैसी आसान बात ही वे कर पाए, क्योंकि यही एक बात बस वे कर सकते थे। लेकिन स्पृश्य जनता की मनोभावना में बदलाव लाना उनकी पहुंच से बाहर की बात थी। मैं यह जान चुका इसलिए उनकी व्यक्तिगत भेदनीति का असर मैंने अपने ऊपर पड़ने नहीं दिया। लेकिन रावबहादुर राजा को आसानी से वे अपनी गिरफ्त में ले पाए। इतनी आसानी से रावबहादुर राजा उनके चंगुल में न आते तो बेहतर होता।

संयुक्त चुनाव क्षेत्र, वोट डालने का सार्वजनिक अधिकार और अस्पृश्यों के लिए आरक्षित जगहें हों, इन बातों को मैंने निजी तौर पर पहले ही स्वीकार किया था। लेकिन मेरा मत देखने में भले राष्ट्रीय और व्यापक हो, किन्तु अस्पृश्य जनता का इससे बिल्कुल फायदा नहीं होने वाला है और इस बात के बारे में आप ही की कई संस्थाओं ने मुझे चेताया है। नागपुर में जैसे ही मैंने संयुक्त चुनाव क्षेत्र की बात को स्वीकारा तो रावबहादुर राजा ने मेरे बारे में कितना हल्ला मचाया था, यह बात आपमें से कई लोगों को आज भी अच्छी तरह याद होगा। कल–परसों तक रावबहादुर राजा का और अन्य प्रमुख नेताओं का मुझ पर लगातार दबाव बना हुआ था। ऐसे हालात में मैं अपनी निजी पसंद को परे रख कर अस्पृश्यों को जो चाहिए उसको स्वीकार किया इसमें बुरा क्या किया? इसके अलावा, गोलमेज परिषद में किन हालात में हम फंसे थे और वहां अल्पसंख्यकों का जो समझौता हुआ उसके लिए अस्पृश्यों की ओर से समर्थन देना किस प्रकार जरूरी और आवश्यक था, यह बात भी रावबहादुर राजा को अच्छी तरह पता है। इस करारनामे के बारे में अपनी सहमति और संतोष व्यक्त करते हुए कल–परसों तक उन्होंने मुझे पूरा समर्थन दिया था। लेकिन अब वे इस

समझौते को गलत बता रहे हैं। इसमें अब किसका अपराध है, इसका निर्णय जनता को ही करना होगा, और जनता का निर्णय नेताओं को मानना होगा।

अस्पृश्य समाज जब संगठित होगा और राजसत्ता के सूत्र अपने हाथ में लेगा तभी उसकी अस्पृश्यता नष्ट होगी। जहां तक हो सके अपने ही खून पर और अपने सुख–दुःखों का अपने अनुभवों के आधार पर जिन्हें अनुभव होगा, केवल उन्हीं पर भरोसा कीजिए। अन्यों के लंबे–चौड़े आश्वासनों को और अच्छी–अच्छी बातों में न आइए। राजसत्ता पाने के लिए एकता से, स्वावलंबन से और खुद पर, खुद की संघशक्ति पर विश्वास रखते हुए अगर आपने कार्य किया तो आज जो आपको तुच्छ समझते हैं और जैसे चाहे झुलाते रहते हैं, नचाते हैं, वे ही कल आपके पैरों पर लोट लगाएंगे और आपकी सदिच्छा और दोस्ती प्राप्त करने के लिए आप जो चाहेंगे, वह आपके बिना मांगे आपको देंगे।"

स्वामी सहजानंद ने अध्यक्ष और मेहमानों को धन्यवाद दिया और रात आठ बजे सभा का कामकाज पूरा हुआ।

50
किसी के भी बहकावे में आपस में फूट न पड़ने दें*

भारतीय गोलमेज परिषद के मतदान कमेटी की स्पेशल गाडी रविवार, दिनांक 6 मार्च, 1932 के दिन पांच बजे सोलापुर में पहुंची। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर इसी गाड़ी से आने वाले थे। लोगों को इस बात की खबर थी, इसलिए जुलूस निकालने के इरादे से ही वे दोपहर के दो बजे से स्टेशन पर आकर खड़े थे। लोगों की भीड़ की वजह से रेलवे के अधिकारियों ने अस्पृश्यों में से चुनिंदा 50 प्रातिनिधिक लोगों को तथा कुछ स्पृश्य लोगों को ही प्लेटफार्म पर जाने की इजाजत दी थी। उस हिसाब से मे. पापासाहेब, बेंच मैजिस्ट्रेट, धर्माजी खरटमल म्यु. काउंसिलर, मोहनदास बाबरे म्यु. काउंसिलर, रा. जिनाप्पा मेदाले, तोरणे मास्तर, रा. ब. डॉ. मुले, डॉ. वैशंपायन, एम. एल. सी. और श्री प्रधान वकील एम. ए., एल. एल. बी., आदि स्पृश्य और अस्पृश्य लोगों ने डॉ. अम्बेडकर से प्लेटफार्म पर मुलाकात की, उन्हें हार पहनाए, गुलदस्ते दिए। फिर स्टेशन के बाहर इकट्ठा अनगिनत लोगों के आग्रह के कारण वे बाहर आए। कुछ समय तक वहां का वातावरण उनके जयकार की ध्वनि से गूंज उठा।

मे. पापासाहेब बेलपवार जी ने डॉ. अम्बेडकर के विलायत के और हिंदुस्तान के कामों का गौरवपूर्ण उल्लेख किया और कहा कि डॉ. अम्बेडकर की कोशिश के बगैर असली अस्पृश्योद्धार होगा ही नहीं। इस अवसर पर रा. ब. डॉ. मुले का भी गरिमा से परिपूर्ण भाषण हुआ। उसके बाद डॉ. अम्बेडकर ने जवाब देते हुए कहा,

"सोलापुर के महार, मांग, ढोर, चमार, भंगी आदि लोगों को चाहिए कि वे आपस में एकता से रहें। किसी के भी भड़काने–बहकावे में आपस की एकता में फूट न पड़ने दें। खुद को उंचे कहलाने वाले लोग भी हमारे बीच की फूट का फायदा उठाएंगे, यह बात आप कतई न भूलें।"

समयाभाव के कारण डॉ. अम्बेडकर को वहां इकट्ठा लोगों से थोड़े समय बाद ही विदा लेनी पड़ी।

---

*जनता : 12 मार्च, 1932

51
अस्पृश्य समाज के हाथों में राजनीतिक सूत्र होना जरूरी है*

कामठी, जिला–नागपुर में आयोजित अखिल भारतीय दलित वर्ग काँग्रेस परिषद का महत्व बयान करने वाला पत्रक स्वागताध्यक्ष हरदाल एल. एन. ने प्रकाशित किया था जो इस प्रकार था –

सम्मेलन का आयोजन करने की सूचना पत्रक के अनुसार कामठी, जिला–नागपुर में दिनांक 7 और 8 मई, 1932 को अखिल भारतीय दलित काँग्रेस के अधिवेशन का कार्यक्रम आयोजित किया गया था। उसके लिए लोगों में अदम्य उत्साह था। डॉ. अम्बेडकर शुक्रवार दिनांक 6 मई, 1932 को मुंबई से नागपूर मेल से निकलेंगे, इसका नागपूर में पहले से ही सबको पता चल चुका था। साथ ही काँग्रेस के अध्यक्ष रावसाहेब मुनुस्वामी पिल्लै और मद्रास के अन्य प्रतिनिधि सुबह ही आएंगे, यह बात भी सबको पता चल चुकी थी। सो, शुक्रवार के दिन 5.45 की नागपूर मेल से डॉ. अम्बेडकर और मुंबई के अन्य प्रतिनिधि ट्रेन में बैठ नागपुर की ओर रवाना हुए। बोरीबंदर स्टेशन पर उन्हें लोगों ने विदा दी थी। नागपूर मेल केवल बड़े स्टेशनों पर रुकती थी और बहुत जल्दी गंतव्य तक पहुंच जाती थी। बोरीबंदर के बाद ट्रेन सीधे कल्याण में रुकती थी। कल्याण के प्लॅटफॉर्म पर ट्रेन गाड़ी के पहुंचते ही 'डॉ. अम्बेडकर की जय' का जयनाद हुआ और उसके साथ ही स्टेशन पर चारों तरफ खलबली मच गई। लोग उनके डिब्बे के सामने इकट्ठा हुए। उन्हें फूलमालाएं और हार पहनाए, उनके काम में सफलता मिले, यह कामना व्यक्त की। इसी तरह का दृश्य कसारा, इगतपुरी, देवलाली, नासिक, मनमाड, चालीसगाव, मूर्तिजापुर, अकोला, बडनेरा, धामणगाव आदि स्टेशनों पर दिखाई दिया। इसी गाड़ी में आसाम के राज्यपाल भी यात्रा कर रहे थे, इसलिए कई लोगों को प्लॅटफॉर्म पर आने नहीं दिया गया। लेकिन फिर भी लोगों ने हर स्टेशन का वातावरण अम्बेडकर की जयध्वनि से गुंजा दिया। दिया। 7 मई, 1932 के दिन नागपुर मेल सुबह ठीक 9 बजे नागपुर स्टेशन पर पहुंची। चारों तरफ डॉ. अम्बेडकर की जय की गूंज उठी। लगभग 5000 लोग प्लॅटफार्म पर डॉ. साहब के स्वागत के लिए इकट्ठा हुए थे। डॉ. साहब के रेल से नीचे उतरते ही श्री तुलसीराम साखरे एम. एल. सी. ने उनका स्वागत किया। नागपुर के समता सैनिक दल के बैंड की सुरीली ध्वनि से वातावरण गूंज उठा। लोगों की भीड़ इतनी अधिक थी, कि बंदोबस्त के लिए तैनात सिटी मैजिस्ट्रेट, पुलिस सुपरिंटेंडेंट और अन्य पुलिस

---

*जनताः 9 अप्रैल और 14 मई, 1932
परिषद आयोजन करने की तारीख में किए गए बदलाव की सूचना देने वाला पत्रक प्राप्त नहीं हो पया–सम्पादक

अफसरों को एडी–चोटी का पसीना एक करना पड़ रहा था। स्टेशन से वे जैसे ही बाहर आए, तो समता दल के 1000 वॉलंटियर्स ने मेहमानों को गार्ड ऑफ ऑनर दिया। स्टेशन के परिसर में लोगों की भीड़ ऐसे जुटी थी, मानों किसी लोकप्रिय मेले में लोग इकट्ठा हुए हों। दस से पंद्रह हजार का समुदाय बार–बार डॉ. अम्बेडकर की जय का उद्घोष कर रहा था। सभी कामगार डॉ. अम्बेडकर के स्वागत में उपस्थित हुए थे इसके कारण आज नागपुर की सभी मिलें बंद रहीं। एक मिल में कुछ हिंदू और मुसलमान कामगार ही सिर्फ काम पर गए थे। लोगों को डॉ. साहब का दर्शन हो इसके लिए छोटा–सा मंच तैयार किया गया था। गार्ड ऑफ ऑनर की सलामी के बाद डॉ. अम्बेडकर लोगों की जयकार की घोषणा के बीच यहां आकर बैठे। पहले ही आकर उपस्थित हुए डिप्रेस्ड क्लासेस कांग्रेस के अध्यक्ष मुनुस्वामी पिल्लई और रावबहादुर श्रीनिवासन भी वहां आकर बैठे। लोगों ने इन तीनों मेहमानों का फूलमालाएं और गुलदस्ते देकर स्वागत किया। अध्यक्ष और डॉ. अम्बेडकर का जुलूस निकालने की बात सुन कर लोगों में और उत्साह बढ़ गया। कई तरह के फूलों से सजी मोटर में डॉ. अम्बेडकर, मुनुस्वामी पिल्लै और रा. ब. श्रीनिवासन को बिठाया गया था। अन्य मेहमानों के लिए जुलूस में और मोटरें भी थीं। ठीक 9.45 को जुलूस निकाला गया। 10,000–15,000 लोग जुलूस में शामिल थे और डॉ. अम्बेडकर की जय कहते हुए साथ–साथ चल रहे थे। मई महीने की तेज धूप थी, लेकिन लोगों को उसकी परवाह नहीं थी। इंदोरा, गड्डीगुदाम के पास जुलूस आते ही करीब करीब 500 महिलाओं ने डॉ. अम्बेडकर को हार पहनाया। कुछ देर तक जुलूस रोका गया। डॉ. अम्बेडकर ने उन्हें प्रेमपूर्वक विदा किया और जुलूस फिर आगे चला। मंडप के पास जुलूस आते ही श्री साखरे ने बताया कि काँग्रेस का अधिवेशन शाम 5 बजे शुरू होगा। उन्होंने लोगों को अपना खाने–पीने के काम से निवृत्त होने की विनती की। स्टेशन से निकला जुलूस इंदोरा तक आया और वहां पर लोगों को धूप से तकलीफ न हो इसलिए जुलूस विसर्जित किया गया। मेहमानों की गाड़ियां वहीं से आगे कामठी जाने के लिए निकलीं। नागपुर से कामठी गांव बस 10 मील की दूरी पर है। वहां गांव की सीमा तक आते ही फिर से कामठी के लोगों की तरफ से स्वागत करा कर कॉंफ्रेंस सभा मंडप की तरफ जुलूस निकाला। इस जुलूस में भी छह–सात हजार लोग थे। सामने बैंड बज रहा था और डॉ. अम्बेडकर के नाम का जयकार गूंज रहा था।

पंजाब, संयुक्त प्रांत, बंगाल, बिहार, उड़ीसा, मुंबई जैसी जगहों से लोग सुबह ही कामठी आ पहुंचे थे।

सभा मंडप बहुत ही बड़ा था। उसमें 15000 तक लोगों के बैठने की सुविधा प्राप्त थी। उस जगह को लताओं और पत्तों से सजाया गया था। अध्यक्ष और अन्य

नेताओं के लिए बढ़िया–सा मंच तैयार किया गया था। उस पर कोच, कुर्सियां आदि रखी गई थीं। आए हुए प्रतिनिधियों के लिए बड़े बंगले किराए में लिए गए थे। सभा मंडप में जाने के लिए एक प्रमुख और अन्य तीन दरवाजे रखे गए थे। पास ही प्रतिनिधि का टिकट लेने का दफ्तर खोला गया था। थोड़ी दूरी पर दुकानदारों को जगह दी गई थी। अध्यक्ष को आने में थोड़ी देर हो गई थी, इसलिए ठीक 6 बजे कार्यक्रम की शुरुआत हुई। प्लेटफॉर्म पर हर प्रांत के प्रमुख नेताओं के बैठने का इंतजाम किया गया था। प्रमुख लोगों में बंगाल के श्री मलिक, दुसीया, विश्वास, यूपी के स्वामी अच्छुतानंद, रामसहाय, बलदेव प्रसाद, जयस्वाल, श्यामलाल, बख्तावरलाल, पंजाब के मि. हंसराज, हरीराम, जालंधर के गुरु हंतासिंह, बिहार के श्रीधर रासमल, पुणे के सुभेदार घाडगे, नासिक के पतितपावनदास, मद्रास के श्री कॅनन और रा. ब. श्रीनिवासन, मुंबई के डॉ. अम्बेडकर, शिवतरकर, खोलवडीकर, वनमाली आदि नेता दिखाई दे रहे थे। ठीक छह बजे स्वागत समिति के अध्यक्ष श्री हरदास भाषण करने के लिए खड़े हुए। स्वागताध्यक्ष और अध्यक्ष के भाषण हुए। बाद में जगह–जगह से प्राप्त 50–60 तार और 50–60 पत्र स्वागत समिति के अध्यक्ष ने पढ़ कर सुनाए। उसमें से केवल एक तार छोड़ कर बाकी सभी तार स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र का समर्थन करने वाले, राजा–मुंजे समझौते का निषेध करने वाले, रावबहादूर श्रीनिवासन और डॉ. अम्बेडकर पर विश्वास व्यक्त करने वाले थे। उस पूरे पत्राचार को या उसके अनुवाद को यहां देना या उनका जिक्र करना स्थलाभाव के कारण असंभव है, हालांकि कुछ का जिक्र करना आवश्यक है। उनमें से मुंबई इलाके के जिला धारवाड़ के मदग से रा. निलाप्पा यल्लाप्पा बेलोडी, म्युनिसिपल स्कूल मेंबर और बसाप्पा नागप्पा घोडके, जनरल मर्चंट ने स्वगताध्यक्ष को निम्नांकित पत्र लिखा था –

"सप्रेम नमस्कार, विनंती विशेष, आपके काँग्रेस का नोटिस जनता पत्र में देखी। कुछ दिक्कतों के कारण हम सभा में उपस्थित नहीं रह सकते। हमारी तरफ से सभी अस्पृश्य लोगों का डॉ. अम्बेडकर की स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र की मांग को पूरा समर्थन है और वे ही हमारे अस्पृश्य संघ के सच्चे नेता हैं। डॉ. मुंजे और रा. ब. राजा के पेक्ट को हम कर्नाटक की जनता का समर्थन नहीं है। रा. ब. राजा और गवई ने स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र का विरोध कर ऐन समय पर हथियार डाल दिए, इसके लिए यहां की जनता के सामने उनका निषेध करने के अलावा कोई चारा नहीं है। हमारा यह पत्र सभा में पढ़ कर सुनाने की मेहरबानी जरूर करें।"

मुंबई के रोहिदास ज्ञानोदय समाज संस्था ने रा. (राजमान्य) वनमाली को अपना प्रतिनिधि बना कर भेजा था, उनके साथ जो संदेश भेजा था उसमें अस्पृश्यों को स्वतंत्र मतदार संघ ही चाहिए, ऐसा कहा गया था।

रा. वनमाली और रा. निलप्पा यल्लप्पा बेलोडी जाति से चमार हैं और रा. बसाप्पा

नागप्पा घोडके ढोर जाति के हैं। इस बात को ध्यान में रखने पर काँग्रेस की तरफ से जो फूट डालने वाले वाक्य बोले जाते हैं, जैसे कि "डॉ. अम्बेडकर पर सिर्फ महार जाति को ही भरोसा है और साथ ही स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र सिर्फ महारों को ही चाहिए और चमार, ढोर स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र के विरोधी हैं" आदि। उनकी बातें कितनी निरर्थक और फालतू हैं यह साफ पता चलता है। जिक्र करने लायक दूसरा खत है असम प्रांत के अस्पृश्यों के बाबू सोनाधरदास सेनापति का। उन्होंने रा. ब. एम. सी. राजा को डॉ. अम्बेडकर के जरिए खत भेजा है।

परिषद के पास कोलकाता से अखिल भारतीय बौद्ध महासभा संस्था के महासचिव का भी एक खत आया था। उसमें परिषद के लिए शुभेच्छाएं देकर सभी अस्पृश्य वर्गों को बौद्ध धर्म की दीक्षा लेनी चाहिए, यह बात सूचित की गई थी।

स्वागत कमेटी के अध्यक्ष द्वारा संदेष तथा पत्रों को पढ़कर सुनाने के पश्चात् विषय नियामक समिति का चुनाव करने के सवाल पर विचार किया गया। रात ठीक 11 बजे विषय नियामक समिति की बैठक की शुरुआत होकर वह काम रात 3 बजे पूरा हुआ। विषय नियामक समिति में जिन–जिन लोगों के सामने जो–जो सवाल थे, उन सभी को डॉ. अम्बेडकर ने स्पष्ट जवाब दिए और सबका ठीक तरह से, अच्छे से संतुष्ट किया।

दूसरे दिन का कार्यक्रम

सुबह 9 बजे काँग्रेस के अधिवेशन की फिर से शुरुआत हुई। पहले दिन के जितना ही लोगों का समुदाय सभा मंडप में उपस्थित था। शुरुआत में अध्यक्ष ने काँग्रेस की सफलता की कामना करने वाले और तार आने का जिक्र किया। फिर काँग्रेस के उस खुले अधिवेशन में निम्नलिखित प्रस्ताव रखे गए –

कांग्रेस में रखे गए प्रस्ताव

पहला प्रस्ताव – यह काँग्रेस सार्वभौम बादशाह के प्रति में अपनी राजनिष्ठा व्यक्त करती है।

दूसरा प्रस्ताव – यह काँग्रेस खूनी हिंसात्मक आंदोलन का और सविनय अवज्ञा आंदोलन का निषेध करती है। और सरकार से अनुरोध करती है कि इस आंदोलन पर नियंत्रण रखने की सूचना देती है।

तीसरा प्रस्ताव – बंगाल प्रांत के मिदनापुर जिले के मैजिस्ट्रेट मि. डगलस, आई.

सी. एस. की निर्मम हत्या कर दी गई। यह काँग्रेस उस हत्या का निषेध करती है और रा. डगलस के परिवार के प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त करती है।

प्रस्ताव 1, 2 और 3 अध्यक्ष ने अध्यक्ष पद से सभापटल पर विचारार्थ रखे और सर्वानुमति से पारित हुए।

चौथा प्रस्ताव – नए राज्य संविधान में अस्पृश्यों के हितों की पूरी तरह रक्षा करने का वचन देने के लिए यह काँग्रेस सेक्रेटरी ऑफ स्टेट (राज्य सचिव) को धन्यवाद देती है। लेकिन सरकार से सहकारिता करने वाले पक्ष की उपेक्षा कर, सरकार के साथ असहकारिता का व्यवहार करने वाली पार्टी को मनाने की ओर जो सरकारी झुकाव दिखाई देता है उसके लिए यह काँग्रेस खेद व्यक्त करती है।

प्रस्ताव रखा – मि. विश्वास (बंगाल)

समर्थन किया – मि. बलदेवप्रसाद (संयुक्त प्रांत)

प्रस्ताव सर्वानुमति से पारित हुआ।

पाँचवां प्रस्ताव –(क) गोलमेज सम्मेलन के अल्पसंख्यकों के करारनामे को यह कांग्रेस अपनी सहमति प्रदान करती है।

(ख) इस काँग्रेस के मार्फत सरकार तक एक बात पहुंचानी है कि अल्पसंख्यकों के करारनामे में जो भी बातें अस्पृश्यों के पक्ष में दिखाई गई हैं, वे अधिकतम हक न होकर न्यूनतम अधिकार हैं। इसीलिए उनमें किसी तरह की काटछांट के लिए यह काँग्रेस तैयार नहीं है। अगर किसी तरह की काटछांट की गई तो उसके बारे में अस्पृश्य वर्ग की ताजा राजनीतिक नीतियों में फेरबदलाव लाने का अधिकार इस काँग्रेस के पास सुरक्षित रखा जा रहा है।

(ग) इस काँग्रेस की ओर से सरकार को यह घोषित किया जा रहा है कि अल्पसंख्यकों के करारनामे में '20 साल के बाद अस्पृश्य वर्ग पृथक चुनाव क्षेत्र के बदले एकत्रित चुनाव क्षेत्र को मानेगी', वाला जो कालम है उसके लिए उसकी पूर्णता के लिए शयशुमारी मतदान पद्धति यह इकलौती शर्त न होकर अल्पसंख्यकों के करारनामे में जितने प्रतिनिधियों की जगहों की मांग रखी गई है, उतनी मिलनी चाहिएं, यह सबसे महत्त्वपूर्ण शर्त हैं।

(घ) अस्पृश्य लोगों के प्रतिनिधि कम हो जाएं, इसके लिए अस्पृश्य लोगों की जनसंख्या कम दिखाने की हिंदू लोगों ने कोशिश शुरू की है। इस

काँग्रेस की तरफ से इस बात का निषेध किया जाता है और सरकार को यह खुले आम बताना चाहती है कि इन लोगों द्वारा दिए गए जनसंख्या के आंकड़ों को सच मानना बेहद जोखिम भरा साबित हो सकता है।

(च) यह काँग्रेस साफ तौर पर यह घोषित करना चाहती है कि पृथक प्रतिनिधित्व का अधिकार अस्पृश्य वर्ग का अपनी आत्मरक्षा के लिए प्राप्त प्राकृतिक हक है, जो तात्कालिक नहीं है। इसीलिए लोथियन कमेटी के सन्मुख साक्ष्य देते समय अस्पृश्यों को स्वतंत्र प्रतिनिधित्व का हक केवल कुछ समय के लिए ही चाहिए, ऐसा रा. बा. राजा ने जो कहा उसके प्रति यह काँग्रेस निषेध व्यक्त करती है।

प्रस्ताव रखा – मि. एम. बी. मलिक (बंगाल), मि. एन. सी. धुसिया (बंगाल)

समर्थन किया – मि. रामसहाय (यू. पी.) मि साखरे (सी. पी.), मि. हंसराज (पंजाब), मि. गाडेकर (मुंबई), मि. कानन (मद्रास)

पुष्टि की – महात्मा कालीचरण नंदागवली (सी. पी.), मि. ओगले (वर्हाड), स्वामी अच्छुतानंद (यू.पी.), श्रीमति अंजनीबाई (सेन्ट्रल प्रोविन्स)

मि. खांडेकर (सी. पी.), मि जाटव (दिल्ली) इन दो विरोधी वोटों के अलावा अन्य सभी के वोटों से प्रस्ताव पारित।

छठा प्रस्ताव– राजा–मुंजे समझौता अस्पृश्य वर्ग के राजनीतिक हितों के लिए घातक होने के कारण यह काँग्रेस उससे इन्कार करती है और वह इस बात की घोषणा करती है कि इसे स्वीकार करना अस्पृश्य वर्ग के लिए बंधनकारी नहीं है।

प्रस्ताव रखा – पी. बी. मलिक (बंगाल)

समर्थन किया – स्वामी अछुतानंद (सं. प्रांत)

पुष्टि की – बलदेवप्रसाद (सं. प्रांत), बिहाडे (म. प्रांत)

मि. खांडेकर (म. प्रांत) और जाटव (दिल्ली) इन दो विरोधी वोटों के अलावा अन्य सभी वोटों से प्रस्ताव पारित।

सातवां प्रस्ताव – गोलमेज परिषद में अस्पृश्य वर्ग को बहुत ही कम प्रतिनिधि दिए गए। उसके लिए यह कॉग्रेस खेद व्यक्त करती है और सरकार से आग्रहपूर्वक मांग करती है कि गोलमेज सम्मेलन के अगले अधिवेशन में अस्पृश्य वर्ग को भरपूर प्रतिनिधित्व दिया जाए।

प्रस्ताव रखा – दुलोरलाल (मध्य प्रांत)

समर्थन किया – सुभेदार घाटगे (मुंबई)

पुष्टि की – पाटील (संयुक्त प्रांत)

सभी वोटों से प्रस्ताव पारित।

आठवां प्रस्ताव – डॉ. अम्बेडकर और रा. ब. श्रीनिवासन द्वारा गोलमेज परिषद में किए गए काम के लिए कॉंग्रेस उन्हें धन्यवाद देती है। और घोषणा करती है कि उन पर अस्पृश्य वर्ग का पूरा विश्वास है।

यह प्रस्ताव अध्यक्ष द्वारा अध्यक्ष पद से सभा पटल पर रखा गया और सभी मतों से पारित हुआ।

नौवां प्रस्ताव – पंजाब के कायदे कौंसिल में अस्पृश्य वर्ग का एक भी प्रतिनिधि दिया नहीं गया है। इस अन्याय के बारे में यह कांग्रेस खेद व्यक्त करती है। अगली बार उनके प्रतिनिधित्व की गुंजाइश रखने की, उस दृष्टि से तैयारी करने की आग्रहपूर्वक विनती करती है।

प्रस्ताव रखा – हंसराज (पंजाब)

समर्थन किया – कानन (मद्रास)

पुष्टि की – गुसावीलाल (मध्य प्रांत)

सभी वोटों से प्रस्ताव पारित।

दसवां प्रस्ताव – मौलिक अधिकारों की जो सूची बनाई जा रही है उसमें आगे गिनाए जा रहे मौलिक अधिकारों का समावेष किया जाए –

(अ) स्थानीय स्वराज संस्थाओं से अस्पृश्यों की जनसंख्या के अनुपात में पृथक चुनाव संघों के जरिए उनके प्रतिनिधि लिए जाएं।

(ब) केद्रीय सरकार अस्पृश्यों में उच्च दर्जे की शिक्षा के प्रसार के लिए कुछ रकम कुछ समय के लिए ही सही खर्च करने की जिम्मेदारी ले।

प्रस्ताव रखा – श्यामलाल (मध्य प्रांत)

समर्थन किया – वनमाली (मुंबई)

पुष्टि की – बारसे (संयुक्त प्रांत)

सभी वोटों से प्रस्ताव पारित।

ग्याहरवां प्रस्ताव– "ऑल इंडिया डिप्रेस्ड क्लासेस फेडरेशन", इस नाम से सभी अस्पृश्य वर्गों की एक केंद्रीय संगठन स्थापना से करने के लिए इस काँग्रेस की पूरी सहमति है और इस केंद्रीय संस्था का कामकाज सुचारू रूप से चलाने के लिए नियुक्त तात्कालिक समिति को अपनी मंजूरी दे रही है।

बारहवां प्रस्ताव – यह काँग्रेस नासिक के सत्याग्रहियों का अभिनंदन करती है।

11वां और 12वां प्रस्ताव अध्यक्ष ने सभामंच के समक्ष रखे और वे सर्वसहमति से पारित हुए।

काँग्रेस के सामने रखे गए प्रस्तावों पर श्री मलिक, रामसहाय, नंदा–गवली और साखरे के बेहद प्रभावशाली भाषण हुए। सभी प्रस्ताव पारित होने के बाद डॉ. अम्बेडकर इस अवसर पर दो शब्द कहें, इसके लिए लोग आग्रह करने लगे। लोगों के इस आग्रह की खातिर डॉ. अम्बेडकर करीब डेढ़ बजे के आसपास बोलने के लिए खड़े हुए। उन्होंने अपने भाषण में कहा,

"अस्पृश्य समाज के हाथ में राजनीतिक बागडोर आए, यह बेहद आवश्यक है। इसके लिए सभी लोगों को संगठित होकर अपना ठोस राजनीतिक स्तर प्राप्त करना होगा। जब तक इस देश की राजनीति अस्पृश्यों के नियंत्रण में नहीं आती, तब तक उनकी अस्पृश्यता जाने वाली नहीं है और उनकी अनसुनी भी इसी तरह होती रहेगी।" उनके बाद रा. ब. श्रीनिवासन् ने भी दो शब्द कहे।

आखिर में कांग्रेस का अगला अधिवेशन बंगाल में आयोजित करने का आमंत्रण श्री मलिक ने दिया। अध्यक्ष का छोटा–सा भाषण हुआ और स्वागत कमेटी द्वारा किए गए बेहतरीन प्रबंध के लिए धन्यवाद दिए जाने के बाद ठीक 2.30 बजे काँग्रेस का अधिवेशन "डॉ. अम्बेडकर की जय" की ध्वनि के साथ संपन्न हुआ।

52

अपने पैरों पर खड़े रहने के अलावा युवाओं के सामने कोई रास्ता नहीं है

मई 1932 में सोलापुर की अस्पृश्य जनता ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को एक समारोह आयोजित कर मानपत्र प्रदान किया। मानपत्र देने का यह कार्यक्रम पापय्या बाबाजी बेलपवार, ऑ. बेंच मैजिस्ट्रेट की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। इस समारोह में महार, मांग, चमार, भंगी आदि सभी जाति के लोगों ने हिस्सा लिया था। इस समारोह सभा में धर्माजी नरसू खरटमल म्यु कौंसिलर, मोहनदास अन्याबा बाबरे म्यु कौंसिलर, विश्राम जीना, भंगी, पंढरी सखाराम बंदसोडे, सिद्राम बाबूराव जाधव, दत्तू तात्या सर्वगोड म्यु. कौंसिलर, नामदेव बुधाजी बंदसोडे आदि अलग–अलग जातियों के नेता उपस्थित थे।

"अस्पृश्यों को अब इससे आगे अपने पैरों पर खड़े होकर अपनी सर्वांगीण उन्नति करवा लेनी चाहिए। हिंदू समाज की सहायता से अस्पृश्यता कभी भी खत्म नहीं होनेवाली है। उल्टे, हमारे बदन में जो अब स्वावलंबन की हवा दौड़ने लगी है वह भी खत्म हो जाएगी।" इस आशय का स्फूर्तिदायक उपदेश डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपने मानपत्र के जवाब में दिए भाषण में दिया।

जनता : 25 जून, 1932. भाषण की तारीख बताई नहीं है। –संपादक

53
भगवान के दर्शन के बिना कोई मरता नहीं

बेलगांव जिले के चिकोडी तालुके के निपाणी गांव में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को मानपत्र देने और थैली अर्पण करने के समारोह की तैयारियां चल रही थीं। इसी सिलसिले में 23 मई, 1932 के दिन तीन बजे के आसपास कोल्हापुर से निपाणी जाते समय क. कागल, ज. कागल के अस्पृश्य समाज द्वारा महारवाडा की तक्के की इमारत में पान–सुपारी का कार्यक्रम पहले से ही रखा था। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर मोटर से करीब साढ़े तीन बजे के आसपास जब आ रहे थे, तब उनके स्वागत के लिए कागल जागीर से अस्पृश्य समुदाय के चार–पांच हजार लोग इकट्ठा हुए थे। लोग गांव से चार–पांच फर्लांग की दूरी पर इकट्ठा हुए थे। डॉ. साहब की मोटर आते ही अस्पृष्य समाज ने जोर–जोर से जयजयकार करते हुए तथा बैंड बजाते हुए चले। गाड़ी के पीछे लाठीधारी स्वयंसेवक थे, जो पीछे से जयकार कर रहे थे। मोटर के चारों तरफ भी एक–दूसरे के हाथ पकड़कर लोगों ने चेन बना ली थी। पूरे बंदोबस्त के साथ सब जयकार करते हुए जा रहे थे। इसके अलावा करीब चार–पांच हजार दर्शक इकट्ठा हुए थे। इस तरह के बंदोबस्त के साथ डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर का जुलूस निकल पड़ा था। समारोह की जगह पर जुलूस आते ही महिलाओं और पुरुषों ने जोर–जोर से जयघोष किया। मोटर से उतर कर सिंहासन पर विराजमान होते ही मि. भीमराव संताजी कांबले मास्तर ने समयाभाव के कारण गौरव के दो शब्द ही कहे और फिर पुष्पहार अर्पण किया गया।

तय कार्यक्रम के अनुसार तारीख 23 मई, 1932 के दिन कर्नाटक राज्य के बहिष्कृत वर्ग की विभिन्न संस्थाओं की ओर से डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को दि. ब. लट्ठे एम. ए, एल.एल.बी. की अध्यक्षता में मानपत्र देने का कार्यक्रम संपन्न हुआ। इस कार्यक्रम के लिए बेलगांव, धारवाड, कोल्हापुर और सांगली आदि जिलों से करीब 7–8 हजार जनसमुदाय इकट्ठा हुआ था। बैंड के सुस्वर धुन पर कोल्हापुर नगर की सीमा से सभामंडप तक जुलूस आने के बाद मानपत्र प्रदान करने के कार्यक्रम की शुरुआत हुई। समारोह में मंच पर मे. बागडे वकील, पुणे, भाऊराव पाटील – सातारा, दत्तोबा पोवार, कोल्हापुर, गणेशाचार्य वकील कोल्हापुर, मलगौडा पाटील बेनाडीकर और अन्य काफी लोग वहां इकट्ठा हुए थे।

शुरुआत में स्वागत के पद्य गाने के बाद मे मारूतीराव राव ने अध्यक्ष की सूचना रखी। उनकी सूचना को बेलगांव के रावसाहब पापाणा ने समर्थन दिया। उसके बाद

जनता : 25 जून, 1932

दि.ब. लट्ठे ने तालियों की गड़गड़ाहट के बीच अध्यक्षस्थान ग्रहण किया। इसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने जवाबी भाषण दिया। उन्होंने कहा,

दि. ब. लट्ठेसाहब और सज्जनों!

आपने मुझे यहां ले आने का अवसर तैयार किया, इसके लिए मैं आपका आभारी हूं।

आज देश में देशद्रोही, देश के लिए घातक, हिंदू धर्म विघातक तथा हिंदू–हिंदू में फूट डालने वाला जिसे कहा जाता है, देश का सबसे बडा दुश्मन अगर किसी को कहा जा रहा हो, तो वो मैं ही हूं। लेकिन यह आंधी–तूफानी वातावरण जब शांत होगा, गोलमेज सम्मेलन के कार्य की यदि आज के मेरे आलोचक ध्यानपूर्वक छानबीन करेंगे तो उन्हें यह बात माननी ही होगी, कि डॉ. अम्बेडकर ने राष्ट्र के लिए कुछ किया ही है। अगर यह बात आजकल का दूषित वातावरण बदलने के बाद भी अगर उन्होंने नहीं मानी तो भी मैं उन्हें फूटी कौड़ी की कीमत नहीं दूंगा। मेरे काम पर मेरे दलित समाज को विश्वास है। यही सबसे बड़ी उपलब्धि, सबसे बड़ी बात मैं समझता हूं। और जिस समाज में मेरा जन्म हुआ है, जिनके बीच मेरा उठना–बैठना है, जिनके बीच ही मुझे मरना है उन्हीं के लिए मैं काम कर रहा हूं, करता रहने वाला हूं। आलोचना करने वालों की मुझे फिकर नहीं है। मुझ पर आरोप है कि मैं देश का काम नहीं करता। पिछले सौ सालों से सुधारक हो या दुर्धारक, उग्रवादी हों या उदारवादी राष्ट्र के नाम पर अपनी जाति के लोगों का पेट पाला जा रहा है। उन लोगों ने मेरे समाज के लिए कुछ भी नहीं किया है। फिर वे मुझ से ही राष्ट्र के कार्य की उम्मीद क्यों करते हैं? मुझे अपने समाज की सेवा करनी चाहिए।

महाड, नासिक और अन्य जगहों पर हुए सत्याग्रहों से मुझे यकीन होता चला है कि हिंदू लोगों के अंतःकरण पत्थर–गारे से बनी दीवार की तरह मुर्दा है। वे इंसान को इंसान समझना, दूसरों को उनके हक देना जरूरी नहीं समझते। पत्थर की दीवार पर सिर पटकेंगे तो खून ही निकलेगा। दीवार की कठोरता कम नहीं होगी। इसीलिए इस बारे में मेरा पूरी तरह मत परिवर्तन हो चुका है। आज तक हमें हिंदुओं के भगवान के दर्शन नहीं हुए, इसलिए हम मरे नहीं या आज तक हिंदुओं के मंदिरों में जाने वाले गधे, कुत्ते, बिल्लियां वगैरा प्राणी इंसान बने नहीं। वे यदि हमें छूना नहीं चाहते, तो हम भी उन्हें अपने को छूने नहीं देंगे।

अबके बाद हम केवल सरकारी अधिकारियों के तंबू गाड़ने वाले या साफ–सफाई करने वाले नहीं रहेंगे। अन्य लोगों की तरह हम भी राजनीतिक सत्ता को हाथ में लेंगे, और अपनी सामाजिक स्वतंत्रता को स्थापित करेंगे। हम निश्चय करते हैं कि अबके बाद हम किसी के भी गुलाम नहीं रहेंगे।" उसके बाद डॉ. अम्बेडकर ने भाषण पूरा किया। फिर यह समारोह 7–8 हजार लोगों की तालियों की गूंज के साथ समाप्त हुआ।

54
आज हमारा संघर्ष राजनीतिक सत्ता के लिए है*

सोमवार, दिनांक 5 सितंबर, 1932 के दिन रात 9 बजे लोगों के आग्रह के कारण मुंबई के वडाला में हुई सभा में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर उपस्थित रहे। यह सभा वाई.एम.सी.ए के भव्य मैदान में आयोजित की गई थी। बारिश की भले ही कृपा दृष्टि हुई थी, लेकिन 3000 लोगों का हुजूम वहां इकट्ठा हुआ था। ठीक नौ बजे बाबासाहेब सभास्थल पर हाजिर हुए। फाटक के पास तानाजी बालवीरों ने उन्हें सलामी दी। इस सभा की सारी व्यवस्था वडाला के गेंदाजी गायकवाड़ के स्काऊट ने की।

बालवीरों का गायन शुरू में ही रखा था। उनके गायन के बाद श्री मोगल मारुती गायकवाड़ ने स्थानीय लोगों की तरफ से बाबासाहेब से विनति की कि वे दो शब्द कहें,

डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा,

"गणेशोत्सव के कार्यक्रम में मुझे भाग लेना है, यह सोच कर कुछ समय तक मुझे थोड़ा–सा अटपटा लगा था और मैं गणपती की मूर्ति के बारे में कुछ बोलने वाला था। किंतु मुझे यहां कहीं भी गणपति की मूर्ति दिखाई नहीं दी, इसलिए मैं यहां अब कुछ बोलूंगा नहीं। इस हिंदू धर्म ने हमारा जितना अकल्याण किया है, उतना नुकसान किसी छूत की बामारी ने भी नहीं किया है। मैं आपसे नहीं कहूंगा कि आप इस हिंदू धर्म से चिपके रहें। अब तक 2000 (दो हजार) सालों से हम इस धर्म में रहते आए हैं। जिन्हें हमने खड़ा किया, जिसकी रक्षा करने में हमारी पूरी जिंदगी बर्बाद हो गई, उसी हिंदू धर्म में हमारी कीमत फूटी कौड़ी जितनी भी नहीं है। कुछ दिनों पहले हमें काशी के ब्राह्मणों के खत आए हैं कि हम आपके लिए काशी विश्वेश्वर के मंदिर खोल देते हैं। लेकिन हमें पत्थर के मंदिरों की जरूरत नहीं है। हमने जो यह संग्राम छेड़ा है, वह केवल हमारे लिए मंदिरों के दरवाजे खोले जाएं, इसके लिए नहीं और न ही काई जमे तालाबों का पानी हमें पीने के लिए मिले, इसलिए भी नहीं। हमें ब्राह्मणों के घरों में नहीं जाना है। हमें सहभोजन भी नहीं करना है। अस्पृश्यों के लिए ब्राह्मणों की लड़कियां ब्याहना भी हम नहीं चाहते। हमारे समाज में क्या लड़कियों की कमी है जो हम ब्राह्मणों की लड़कियां चाहने लगे? ऐसा भी नहीं कि हमारी स्त्रियां बच्चे नहीं जन सकतीं और या फिर उनके जने बच्चों के जननांग नहीं होते। ऐसा बिल्कुल भी नहीं है। सो, मैं यह कहना चाहता हूं कि हमारा यह संघर्ष केवल राजनीतिक सत्ता पाने के लिए है। हिंदुओं

जनता, 10 सितंबर, 1932

से यदि हम चिपके रहे तो हमें नर्क में सड़ना पड़ेगा, और इसीलिए मैं भी इस हिंदू धर्म से एकदम ऊब चुका हूं। इतना ही नहीं, तो मुझे धर्म परिवर्तन करने का मन हो रहा है। लेकिन मैं वैसा यदि कर नहीं रहा हूं तो क्यों? मैं इसी नर्क में क्यों रहना चाहता हूं यह अगर आप पूछेंगे तो उसका जवाब है कि आप लोगों को छोड़ कर जाने का मेरा मन नहीं है। इतना यकीन है कि चाहे कहीं भी जाऊं मैं अपनी हिम्मत से जी सकता हूं। लेकिन मैं आप लोगों के साथ ही क्यों रहना चाहता हूं, इसकी वजह सिर्फ यही है कि आप लोगों को छोड़ कर जाना मुझे रास नहीं आ रहा। साथ ही जो काम मैंने हाथ में लिया है, उसे मैं पूरा करना चाहता हूं। मैं आपसे बस इतना ही कहता हूं कि धर्म के इस चक्कर में आप ना पड़ें। पीछे करीब 2000 (दो हजार) सालों तक हिंदुओं ने राज किया उनके बाद अब पिछले 150 सालों से अंग्रेजों ने राज किया। लेकिन इसके बाद जो स्वराज मिलने वाला है, उसमें केवल हिंदू ही राजकाज नहीं चलाएंगे, राज्य को चलाने का काम अब अस्पृश्य और हिंदुओं की सहमति से चलेगा।

हर समाज में कोई न कोई सामर्थ्य (ताकत) होती है। किसी के पास आर्थिक शक्ति होती है। पारसी समाज को ही देखिए। यहां इस सभा में बैठे हुए लोगों से अधिक लोग शायद उस समाज में नहीं होंगे। लेकिन उनके पास आर्थिक सामर्थ्य है। हमारे समाज के लोक उनके यहां मजदूरी करते हैं। ब्राह्मण समाज में अगर आर्थिक ताकत नहीं भी हो, क्योंकि सभी ब्राह्मण अमीर तो नहीं होते, लेकिन उनके हाथ में धार्मिक सत्ता है। समाज के हाथ में राजनीतिक सत्ता होना बहुत जरूरी है। ऐसी राजनीतिक सत्ता आपके लिए पाने के लिए ही मैं गोलमेज सम्मेलन गया था। मेरे उस जाने का फायदा भी आप लोगों को मिला है। मैं वह आपको संक्षेप में बताता हूं।

गोलमेज सम्मेलन जाकर मैंने अस्पृश्यों के लिए दस जगहें पाईं। मेरे खिलाफ जो बोलते हैं वे पूछते हैं कि अम्बेडकर ने गोलमेज सम्मेलन में जाकर क्या हासिल किया? लेकिन अगर वही लोग आज अभी यहां उपस्थित होते तो मैं उन्हें यकीन दिलाता कि जो कुछ मैंने कमाया है, वह किसी और समाज को मिला नहीं है। किसी मुर्गे के आगे अगर हम मोती का चुग्गा डालें तो उसे उन मोतियों की कीमत कैसे पता चलेगी? ज्वार के एक दाने से भी उस मोती का मूल्य उसे कम ही लगेगा।

ये दस जगहें मिलने से हमारे समाज के हाथ में काफी सत्ता आई है। संक्षेप में बताना हो तो अब जो स्वराज मिलने वाला है, उसे अब आपके चुने हुए प्रतिनिधि चलाएंगे। यह स्वराज आपकी सहमति से, आपकी सलाह से, आपके मत से ही चलेगी। इसकी पूरी जिम्मेदारी आप पर ही है। अब आपको जो कुछ भी मिला है, वह मेरे हिसाब से काफी है। आपके लिए 10 जगहें आरक्षित हैं। इसके अलावा अहमदाबाद जैसी जगह जहां

80 से 90 प्रतिशत मजदूरों की बस्ती है, उसमें से 2–3 जगहें अस्पृश्यों को मिलेंगी। साथ ही, मुंबई जैसी जगह जहां अस्पृश्यों की बस्ती है, वहां से भी हम एक दो सीटें जीत सकते हैं। इसके अलावा नासिक जिला, पुणे से पृथक चुनाव क्षेत्र से हम जिन्हें चुन कर लाएंगे, वे हमेशा नब्बे फीसदी हमारी मुट्ठी में रहेंगे।

मुंबई कौंसिल में कुल 200 जगहें हैं। उनमें से 97 हिंदुओं के लिए हैं, 63 मुसलमानों के लिए और 10 अस्पृश्यों के लिए हैं। इसलिए, किसी एक पार्टी को ज्यादा सत्ता मिलना असंभव है। क्योंकि कौंसिल में जो भी कामकाज चलेगा वह बहुमत से ही चलेगा। किसी भी पक्ष के बहुमत के लिए उसकी तरफ कम से कम 115 वोट होना जरूरी है। इसीलिए केवल हिंदुओं के 97 लोग (जगहें) बहुमत नहीं खड़ा कर सकते। उसी तरह मुसलमान भी 63 मतों के सहारे राजसत्ता चला नहीं सकते। बहुमत के लिए उन दोनों को अस्पृश्यों के मत मिलना जरूरी है। इस तरह अपने हाथ में बहुत बड़ी सत्ता मिली है। क्योंकि, हम जिस तरफ अपने मत देंगे उस तरफ का पलड़ा भारी हो जाएगा और विरोधी पलड़ा ऊपर ही लटकता रह जाएगा। इतनी सत्ता हमारे हाथ आई है लेकिन एक भयानक आशंका ने मुझे घेरा है। वह यह कि, आपमें मतदान करने की अकल कितनी है? आज आपको जो दस जगहें मिली हैं उन जगहों पर अपने जो लोग जाएंगे वे जो भी काम चाहे कर सकेंगे। वे पूरी मुंबई को घुमा सकते हैं। लेकिन उन जगहों का सही इस्तेमाल होना चाहिए। केवल ये 10 लोग सभी अस्पृश्यों का उद्धार कर सकते हैं। इतने दिनों तक कोई छोटा–सा भी काम क्यों न हो मामलतदार या कलक्टर के यहां कई–कई चक्कर काटने पड़ते थे। वरिष्ठ अधिकारियों की मर्जी रखनी पड़ती थी। इतना ही नहीं कोई छोटा–सा काम भी करवाना हो तो किसी 7 रुपल्ली कमाने वाले मामूली सिपाही को भी मुझ जैसे आदमी को हवलदार साहब कहकर पुकारना पड़ता था। लेकिन इसके बाद हमें कभी ऐसा नहीं करना पड़ेगा। अबके बाद सभी बातें कानूनन ही होंगी। हममें से कुछ अस्पृश्य कलक्टर बनेंगे। सैंकड़ा 20 मामलतदार, सैंकड़ा 20 कुलकर्णी, और सैंकड़ा 20 सिपाही अस्पृश्य लोगों में से ही होंगे। और ऐसा करने के लिए हमें किसी की खुशामद नहीं करनी पड़ेगी। हालांकि यह सब अपने लोगों का चरित्र कैसे बनेगा, इस पर निर्भर करेगा। क्योंकि हममें से कुछ लोग दो पैसे के चनों को या एक दमड़ी के चिवड़े (भुजिया) के मोह में अपना वोट बदलते हैं, यह हमने देखा है। जिन नेताओं ने पिछले मार्च माह में अस्पृश्यों की सभाएं लेकर और खुद अध्यक्ष बन कर अस्पृश्यों के लिए पृथक चुनाव क्षेत्र की मांग की थी, उन्होंने ही विरोधी पार्टी के दिखाए गए लालच के कारण अपनी राय बदल डाली और अस्पृश्यों के लिए संयुक्त चुनाव क्षेत्र की मांग की। इस तरह अगर नेता अपने आप को बेचने लगे तो हाथ में आई सत्ता किस काम की है?

कुछ दिनों पहले मेरे साथ काम करने वाला सातारा जिले का घोलप नाम का एक लड़का मुझसे कह रहा था कि शिवतरकर मास्तर चमार होने के बावजूद साहब ने उसे अपने पास रखा। इसीलिए उन्होंने मेरे साथ असहयोग किया। लेकिन सातारा के यह महार जिसे शिवतरकर से केवल इसलिए घिन आती है कि वह चमार है वह, खुद भी देवरुखकर जैसे चमार के आश्रय से ही अखबार निकाल रहा है। उसी अखबार को उसने मुझे गालियां देने का माध्यम बनाया है। महार समाज की अंट–शंट ढंग से बदनामी कर देवरुखकर ने हमारे समाज की इज्जत को चौराहे पर टांग दिया है। इन्हीं देवरुखकर के मातहत काम करते हुए इस लंबी नाक वाले महार को कैसे शर्म नहीं महसूस होती? अन्य समाज के लोग हमेशा गालियां देते रहते हैं, उसी तरह हमारे समाज के एक ने गालियां दीं तो मुझे उस बारे में कुछ नहीं लगता। मुझे बस एक आशंका होती है कि आपको मिले हुए अधिकार का सही इस्तेमाल आप कर पाएंगे कि नहीं। मैंने जो इतना बड़ा आंदोलन खड़ा किया है, वह किसी सिद्धांत के सहारे ही छेड़ा है। अपने नेताओं की ऐसी ढुलमुल नीति देख कर मुझे बहुत दुःख होता है। मैं आपसे सिर्फ यही विनती करना चाहता हूं कि आप स्वाभिमानी बनें। अपने सही नेता को चुनें और उसके बताए अनुसार कार्य करें। बेकार में अपने वोट ना बेचें। वरना कोई भी आकर एकाध–दो रुपये देकर वह आपके वोट मताधिकार खरीद लेगा। चुनावों के बारे में भी आपको कई सहूलियतें मिली हुई हैं। इतनी सहूलियतें अन्य किसी समाज को नहीं दी गई हैं। अन्य समाज के लोगों को वोट देने का अधिकार प्राप्त होने के लिए कम से कम मराठी चौथी कक्षा तक की शिक्षा होना अनिवार्य है। लेकिन आपकी ऐसी स्थिति नहीं है, आपको बस अपने हस्ताक्षर करना आना चाहिए। आपको बस 'रामापांड्या' या जो भी आपका नाम हो उस नाम से अपने हस्ताक्षर करना आया, तो फिर आपको वोट देने का अधिकार प्राप्त हुआ। यह सहूलियत अन्य किसी समाज को नहीं मिली है। केवल अस्पृश्य लोगों को ही दी गई है। इसीलिए कहता हूं आप में से हर किसी को रात के स्कूल में जाकर हस्ताक्षर करने जितनी ही सही शिक्षा लेना जरूरी है। ऐसा करने से आपके नाम वोटर रजिस्टर में दर्ज होंगे।"

55
अस्पृश्य समाज के लिए शिक्षा के प्रसार की बेहद जरूरत है*

शनिवार, दिनांक 10 सितंबर, 1932 की रात महार बालवीर संस्था की ओर से परेल, मुंबई के दामोदर हॉल में सभा का आयोजन किया गया। उस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ। उस भाषण का सारांश यहां दे रहे हैं।

दामोदर हॉल लोगों से खचाखच भरा था। कई लोगों को अंदर प्रवेश नहीं मिल पाया था, इसलिए वे अंदर जाने की कोशिश कर रहे थे। हमारे संवाददाता को आने में थोड़ी देर होने के कारण बडी मुश्किल से वह अंदर घुस पाया। तालियों की प्रचंड गड़गड़ाहट हो रही थी। बाबासाहेब बोलने के लिए जब उठ खड़े हुए। उस वक्त वही आवाज (ध्वनि, शोर) बाबासाहेब के मुख से शब्द निकलते ही एकदम बंद हो गया। निश्चल होकर सभा बाबासाहेब का भाषण सुनने लगी। शुरुआत में मंडल के बहुविध कार्य के बारे में संतोष व्यक्त करने के बाद उनके शिक्षा विषयक कार्य की बाबासाहेब ने प्रशंसा की।

मंडल की ओर से प्रस्तुत किए गए हिसाब के बारे में बोलते हुए उन्होंने कहा कि, "मंडल की ओर से मेरे स्वागत में पुष्पहार की खरीदारी पर जो रुपया खर्च किया गया है, उसे किसी और उपयुक्त काम में लगाया जा सकता था। मंडल की आर्थिक स्थिति की ओर देखते हुए खर्चे का यह बोझ कुछ अधिक था, ऐसा लगता है। यह बोझ मंडल पर ना पड़े और कार्य–विस्तार के लिए उन्हें मदद मिले, इसके लिए उन्होंने इस अवसर पर मंडल को 25 रुपयों की छोटी–सी मदद की घोषणा की। उन्होंने आगे कहा कि,

"आज अस्पृश्य समाज के सामने बेहद जरूरी अगर कोई काम है, तो वह है शिक्षा के प्रसार का काम। समाज के हर व्यक्ति को तथा हर संस्था को शिक्षा के क्षेत्र में अपनी युवा पीढ़ी के कदम आगे कैसे बढ़ेंगे, इस ओर ध्यान देना चाहिए। तथा उसी दिशा में अपने काम की ओर नजर रखनी चाहिए। हमने खुद भी यही काम शुरू किया है। और उस हिसाब से काम जारी रखा है। इसका प्रमाण है फिलहाल चल रहे तीन बोर्डिंग। महाराष्ट्र के बच्चों के लिए ठाणे का बोर्डिंग, कर्नाटक के शिशुओं के लिए धारवाड़ का बोर्डिंग और गुजरात के बच्चों के लिए अहमदाबाद का बोर्डिंग। इन तीनों जगहों पर आज की तारीख में करीब सौ बच्चों की व्यवस्था की गई है।"

*जनता : 17 सितंबर,, 1932

आगे बाबासाहेब ने वहां इकठ्ठा हुए लोगों को ठीक से समझ आए इसलिए आज की स्थिति का एक शब्दचित्र बनाया। उन्होंने कहा कि, "इस देश की उच्च नीचता दृढ़मूल होने के लिए जातिव्यवस्था तो कारण है ही, लेकिन उसे स्थायित्व मिला तो जाति के गुणों के कारण। कुछ जातियों की वरिष्ठता अन्य जातियों में पाए गए शिक्षा के अभाव के कारण कायम रही। बड़ी–बड़ी सरकारी नौकरियां, मामलतदारी अथवा पुलिस अधिकारी जैसे लोगों के ऊपर रौबदाब रखने वाली नौकरियां या फिर लोगों पर सत्ता का प्रयोग करने वाली नौकरियों के क्षेत्रों में अस्पृश्य समाज को प्रवेश की अनुमति नहीं इससे प्रत्यक्ष व्यवहार में इस समाज की उपेक्षा तो हो ही जाती है, लेकिन इस समाज की ओर देखने का अन्य समाज का दृष्टिकोण भी अलग ही होता है। इस तंग संकुचित दृष्टि को बदल कर अपने समाज के बारे में अन्य लोगों के मन में जो असमानता की भावना है, उसे अगर नष्ट करना हो तो उसका सटीक उपाय है, इन बड़ी–बड़ी नौकरियों को पाना। आज डिप्टी कलक्टर के पद पर काम कर रहे एक युवक का उदाहरण इस मामले में दिया जा सकता है। वे जिन–जिन जिलों में जाते हैं वहां के अस्पृश्य समाज को अपने सिर पर कृपाछत्र होने का अहसास तो होता ही है। साथ ही, बाकी समाज द्वारा अस्पृश्यों के साथ हेय मानने की मानसिकता भी कम हो जाती है। ऐसे अनेक अधिकारी होंगे तो आज की यह स्थिति पलटने में देर नहीं लगेगी। लेकिन एक बात हमेशा हमें ध्यान में रखनी चाहिए कि, अभी जिसका उदाहरण दिया, उस व्यक्ति ने यदि उच्च शिक्षा प्राप्त नहीं की होती, तो क्या उसे यह स्थिति नसीब होती? घोर मेहनत कर अगर उन्होंने शिक्षा प्राप्त नहीं की होती तो क्या उन्हें आज का यह दिन देखने मिलता? इसीलिए कहता हूं कि एक व्यक्ति के नाते नाम कमाना और साथ में अपने समाज का नाम भी ऊंचा करना केवल शिक्षा से ही संभव हो सकता है। आज कानूनन हमने सरकारी नौकरियों में अपना अनुपात तय करवा लिया तो भी उन्हें पाने के लिए सही शिक्षा प्राप्त कर अपने में काबीलियत (योग्यता) पैदा किए बगैर हमारी अधि ाकार प्राप्ति की मांगें, अपना असर खो बैठेंगी। इसमें दुर्बलता के कारण अपनी ही चीज हम पा नहीं सकेंगे।

गोलमेज सम्मेलन हो या कोई और जगह हो, हर बार अस्पृश्य समाज के लिए विधिमंडल में आरक्षित जगहों की मांग करते हुए मुझे हमेशा इस बड़े सवाल ने परेशान किया है। लेकिन अस्पृश्यों की बढ़ती महत्वाकांक्षाएं और और दिनोंदिन उनमें बढ़ती जा रही शिक्षा पाने की लालसा पर मुझे पूरा भरोसा था। पिछले जमाने के साथ तुलना करने से आज अस्पृश्य साज को उपलब्ध ज्ञानार्जन के साधन तथा स्थितियों में आए फर्क के कारण उत्साह बढ़ता है।" इतना कह कर इस अवसर पर उन्होंने अपने जीवन में घटित एक मनोरंजक लेकिन बोधप्रद अनुभव कथन किया। उन्होंने बताया

कि वे जब अंग्रेजी की शिक्षा प्राप्त करने के लिए मुंबई आए थे, तब के हालात का उन्होंने वर्णन किया। मुंबई की मलिन बस्ती में अपना 8 फूट चौडाई और दस फूट लंबाई वाला कमरा, उसमें रहने वाले आठ–दस जिंदा लोग, कमरे के एक तरफ मोरी, उसके पास ही चूल्हा, कोने में और सिर पर के माले पर रखी लकड़ियां, हर तरफ धुआं ही धुआं और उसी में इतने लोगों का अपने–अपने काम निपटाना, छात्रों की संगत का अभाव, ऐसे कठिन हालात में पाठ्यक्रम पूरा करके अलग–अलग परीक्षाएं कैसे देनी पड़ीं, इसका बाबासाहेब ने मनोहारी वर्णन किया। आज के छात्रों के लिए अलग–अलग तरह की छात्रवृत्तियां, रहने के लिए बोर्डिंग और पठन–पाठन करने वाले छात्रों का सहवास मिलने के कारण उनके लिए पढ़ाई बेहद आसान हो गई है। इसीलिए कहता हूं कि इस मौके का फायदा उठा कर अपना और अपने समाज का कल्याण करना हर युवा का कर्तव्य है। आखिर में उन्होंने छात्रों को उपदेश दिया कि, छात्रावस्था में अपने सामने केवल विद्याध्ययन का ही उद्देश्य रखना चाहिए। छात्रावस्था फिर से प्राप्त नहीं होने वाली। इस अवधि में घनघोर कोशिशें करके ज्ञान प्राप्त करें। समाजसेवा के लिए आगे चल कर जीवन में बहुत समय मिलेगा। छात्रावस्था में ही व्याख्यान देकर समाज का जो भी हित करने की कोशिश की जाती हो, वह पूर्ण ज्ञानप्राप्ति के बाद समाज की सेवा करने की तुलना में कमतर, निकृष्ट होती है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए फिलहाल शिक्षा की प्राप्ति ही अपने जीवन का उद्देश्य रखने का उपदेश उन्होंने बच्चों को दिया। बाद में उन्होंने मंडल की तरफ से उन्हें जो मौका दिया गया, उसके लिए उन्होंने मंडल के प्रति आभार व्यक्त किया। मंडल के काम में सुयष की कामना करते हुए उन्होंने अपना भाषण समाप्त किया।

उनके बाद रा. डी. वी. प्रधान का भाषण हुआ। मंडल के कार्यकर्ताओं के उत्साह के बारे में आनंद व्यक्त करते हुए उन्होंने बताया कि किस तरह अखबार लोकशिक्षा का काम करते हैं। अस्पृश्य जनता के लिए निकलने वाला 'जनता' पत्र अस्पृश्य समाज का मुखपत्र है, और इसीलिए सभी अस्पृश्य लोगों को मनोभाव के साथ उसका पठन करना चाहिए, यह कह कर उन्होंने बताया कि जनता पत्र का प्रसार यानी लोकशिक्षा का प्रसार है। इसके लिए 'जनता' के खरीददारों की संख्या बढ़ना कितना आवश्यक है, यह बताया। फिर मंडल के सचिव ने बाबासाहेब का और अन्य आमंत्रित मेहमानों का और वहां एकत्रित अन्य सभी लोगों के प्रति मंडल की ओर से आभार व्यक्त कर बालिकाओं के सुस्वर गायन के साथ डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को पुष्पहार अर्पण किया गया। उसके बाद सभा बर्खास्त हुई।

56
अपने लोगों के न्यायपूर्ण अधिकारों के लिए लड़ते हुए अगर किसी ने रास्ते के लालटेन लगाने के खंभे पर फांसी चढ़ाया तो भी मुझे उसकी परवाह नहीं

भारत के आगामी संविधान में अल्पसंख्यक समाज का स्थान क्या हो, इस विषय में निर्णय लेने के लिए विचारार्थ अल्पसंख्यक उप समिति (माइनॉरिटीज सब कमेटी) नियुक्त की गई थी।

"अल्पसंख्यकों की समस्याओं के बारे में निर्णय किए जाने के सम्बन्ध में मुस्लिम, अछूत, यूरोपीय, ईसाई, एंग्लोइंडियन आदि समाजों के अल्पसंख्यक प्रतिनिधियों ने आपस में विचार–विनिमय कर आम सहमति से जो अनुबंध तैयार किया था, वह यहां दिया जा रहा है। इस अनुबंध में कुल ग्यारह मांगें रखी गई थीं और उसी अनुपात में प्रांत प्रतिनिधियों की संख्या तय की गई थी।

अल्पसंख्यक वर्ग की आम मांगें

1. नौकरी, व्यवसाय, या नागरिकता का अधिकार हासिल करने के मामले में किसी भी व्यक्ति के लिए जाति, धर्म या पंथ बाधा न बने।

2. किसी जाति के बारे में कानून बनाने के संदर्भ में विधान बाकायदा मंडल पर लागू किए जाने वाले निर्बंधों, नियंत्रणों का संविधान में उल्लेख किया जाए।

3. धर्म के मामले में हर किसी को पूरी आजादी हो और धर्म परिवर्तन के कारण नागरिकता के अधिकारों से कोई वंचित न हो।

4. हर जाति को अपनी जाति की धार्मिक और शिक्षा संस्थाओं के खर्चों पर नियंत्रण रखने का तथा इस तरह की संस्थाओं को धार्मिक मामलों पर अमल करने का अधिकार प्राप्त हो।

5. धर्म, संस्कृति, व्यक्तिविषयक कानून, शिक्षा का प्रसार, भाषा का संवर्द्धन और धर्मदाय संस्थाओं का प्रसार आदि के बारे में सभी अल्पसंख्यक जातियों को पूरी सुरक्षा प्रदान किए जाने की व्यवस्था संविधान में की जाए और सरकार और स्थानिक स्वराज संस्थाओं को मिलनेवाली सहायता राशि में भी उनका न्यायपूर्ण हिस्सा हो।

6. हर जाति को नागरिकता के अधिकार होना चाहिए।

7. सभी मंत्रि मंडलों में मुस्लिम और अन्य अल्पसंख्यकों को ज्यादा से ज्यादा शामिल करने की परिपाटी शुरू करें।

8. अल्पसंख्यक जातियों के हितों की रक्षा के लिए और उनकी उन्नति के लिए केंद्रीय और प्रादेशिक विभागों की स्थापना की जाए।

अलग चुनाव क्षेत्र का अधिकार

9. फिलहाल संविधान सभा में प्रतिनिधित्व का अधिकार रखने वाली अल्पसंख्यक जातियों के लिए हर संविधान सभा में स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र हो और उन्हें आगे दिए जा रहे परिशिष्ट के अनुसार प्रतिनिधित्व दिया जाए। किंतु किसी भी बहुसंख्यक जाति को अन्य जातियों की तुलना में अल्पसंख्यक अथवा समबल न बनाया जाए।

10. केंद्रीय और राज्य लोकसेवा आयोग की स्थापना की जाए और उनके जरिए विभिन्न जातियों के लायक तथा काम के लिए योग्य लोगों की सही अनुपात में अलग–अलग विभागों में भर्ती की जाए। इस तत्त्व पर अमल करने का सुझाव गवर्नर जनरल एवं गवर्नर को दिया जाए और समय–समय पर इन सेवाभर्तियों की जांच की जाए।

11. किसी जाति की धार्मिक और सामाजिक रीतियों के संदर्भ में बने बिल का संविधान सभा में शामिल उस जाति के दो तिहाई सदस्य विरोध करें तो उस बिल के अमल को स्थगित किया जाए । एक साल के बाद भी उक्त बिल में जाति संबंधित विरोध को अमान्य कर बदलाव लाने से अगर संविधान सभा इनकार करती है, तो उस बिल को मंजूरी देने अथवा न देने का अधिकार गवर्नर जनरल को हो। ऐसे बिल के कानूनी पक्ष को लेकर उस जाति के दो सदस्य उच्चतम न्यायालय में फरियाद कर सकते हैं।

विभिन्न जातियों को मिलने वाले प्रतिनिधियों की संख्या

भारत की वरिष्ठ एवं कनिष्ठ संविधान सभा में अलग–अलग जाति के कितने प्रतिनिधि हों इस बारे में मसौदे में यह परिशिष्ट नत्थी किया गया था–[1]

---

1. अम्बेडकर–गांधीः तीन मुलाकातें: रत्नाकर गणवीर, पृ. 19–21

परिशिष्ट

कोष्ठक के आंकड़े = 1931 की जनसंख्या के आधार अनुसार तथा दलितों का सैंकड़ा अनुपात साइमन रिपोर्ट के अनुसार

1	2	3			4	5	6	7	8	9
	संविधान सभा सदस्यों की सख्यां	हिन्दू			मुस्लिम	ईसाई	सिक्ख	एंग्लो इंडियन	जमाति आदि	यूरोपीयन
		जाति	दलित	कुल						
केन्द्रीय (अखिल) भारतीय)	1931	(47.5)	19	66.5	(21.5)					

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
वरिष्ठ समागृह	200	101	20	121	67	1	6	1	..	4
कनिष्ठ समागृह	300	123	45	168	100	7	10	3	..	12
		(48.9)	(13.4)	(62.3)	34.8)					
आसाम	100	38	13	51	35	3	..	1	..	10
		(18.3)	(24.7)	(43.)	(54.9)					
बंगाल	200	38	35	73	102	2	..	3	..	20
		(67.8)	(14.5)	(82.3)	(11.3)					
बिहार और उड़ीसा	100	51	14	65	25	1	..	1	3	5
		(68)	(8)	(76)	(20)					
मुंबई	200	88	28	116	66	2	..	3	..	13
		(63.1)	23.7)	(86.8)	(44)					
सिंध के विमाजन के कारण मुंबई के मुस्लिमों का वेटेज एनडब्ल्यूएफपी के हिंदुओं के वेटेज के आधार से										
मध्य प्रदेश	100	58	20	78	15	1	..	2	2	2
		(71.3)	(15.4)	(86.7)	(7.1)	(3.7)				
और वहार्ड	200	102	40	142	30	14	(13)	4	2	8
		(15.1)	(13.5)	(28.6)	(56.5)					
मद्रास	100	14	10	24	51	1.5	20	1.5	..	2
		(58.1)	(26.4)	(84.5)	(14.8)					
पंजाब										
उत्तर प्रदेश	100	44	20	64	30	1	..	2	..	3

इस निवेदन पर (1) हिज हाइनेस द आगा खान (मुस्लिम)

(2) डॉ. अम्बेडकर(दलित वर्ग)

(3) राव बहादुर पन्नियर सेल्वम (भारतीय ईसाई)

(4) सर हेनरी गिडने (एंग्लो इंडियन)

(5) सर हबर्ट कर्र (यूरोपियन) ने हस्ताक्षर कर अपनी सहमति जताई थी।[1]

1. डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर रायटिंग एंड स्पीचेस, खंड 2, पृष्ठ क्रमांक 666

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपने तथा राव बहादुर आर. श्रीनिवासन के हस्ताक्षर के साथ अछूतों के खास प्रतिनिधित्व के लिए एक आवेदन अलग से समिति के सामने पेश किया था।[2]

अछूतों की मांगों के बारे में महात्मा गांधी की भूमिका को जनता के सामने स्पष्ट करने के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने लंदन से 13 नवंबर, 1931 को जो खत भेजा था उसमें लिखा था –

"हिंदुस्तान के राष्ट्रीय अखबारों ने मेरे खिलाफ जो जहर उगलने और गलतफहमियाँ फैलाने की मुहिम छेड़ रखी है उसके कई चुनिंदा नमूने मुझ तक पहुंच चुके हैं। उनमें से कुछ मैंने पढ़ कर भी देखे हैं। खुद को सत्य के पक्षधर और अहिंसा के मार्ग पर चलाने का दावा करने वाले इन लोगों का सत्य प्रेम सच्चा और नेक है ऐसी गलतफहमी मुझे कभी भी नहीं थी। इसीलिए, विपरीत और सच–झूठ की छानबीन किए बगैर उन्होंने जो कुछ लिखा है उसे पढ़ कर मुझे अचरज भी नहीं लगा और मैं निराश भी नहीं हुआ...............

ऐसा नहीं कि गांधीजी केवल अछूतों को अलग मतदाता संघ न मिले यह नहीं चाहते थे, गांधीजी तो यह भी नहीं चाहते थे कि अछूतों को अलग प्रतिनिधित्व मिले। अछूत हिंदू हैं और इसीलिए उनके लिए अलग आरक्षित जगहों वगैरेह की कानूनन व्यवस्था किए जाने की भी जरूरत नहीं है यह गांधीजी का पक्का दुराग्रह था। अछूतों के बारे में गांधीजी का विरोध जिस हद का था उसके अनुसार वह तय कर चुके थे कि भले मेरी गर्दन कट जाए, लेकिन हिंदुओं से अलग अछूतों को कोई हक मिले ऐसा मैं होने नहीं दूंगा। अछूतों को लेकर गांधीजी का जो विरोध था इस तरह का था। लेकिन वह कहते यही रहे थे कि इसमें अछूतों का आत्मघात है और यही वजह है कि मैं इसका विरोध कर रहा हूं। इस तरह की बातें कह कर वह अपने प्राणांतिक विरोध का दुनिया के सामने समर्थन कर रहे हैं। और ऊपर से इसमें अछूतों का ही आत्मघात हैए इसीलिए मैं विरोध कर रहा हूं . कहते हुए अपने इस जानलेवा विरोध का वे समर्थन भी कर रहे हैं यही वास्तविक स्थिति है। गांधीजी के विरोध का यह स्वरूप ठीक से जान लेने के बाद आज जो दो–चार अछूत नेता मेरे विरोध में हैं वे भी अपना विरोध छोड़ देंगे। इससे मन ही मन गांधीजी भले खुश हो जाएं लेकिन उनके दुराग्रह के बारे में मैं इतना ही कहूंगा कि अछूतों का कल्याण–अकल्याण उनके जैसे सवर्ण से अधिक मुझ जैसे अछूत को ही ज्यादा अच्छी तरह से समझ में

2. तत्रैव पृष्ठ 669

आएगा। अपना यही मत व्यक्त करते हुए मैं सभी स्वाभिमानी अछूत जनता के हृदय की बात व्यक्त कर रहा हूं इसका मुझे विश्वास है।"[1]

"अल्पसंख्यकों के सवाल पर सर्व सहमति से कोई निर्णय नहीं हो रहा यह बात ध्यान में आते ही ब्रिटिश मुख्य प्रधान मैकडोनल्ड ने प्रस्ताव रखा कि अल्पसंख्यकों के सवाल पर निर्णय के लिए मुख्य प्रधान को समिति के सदस्य सर्वसहमति से लवाद चुनें और वह जो न्याय करेगा उसे हम स्वीकार करेंगे इस अर्थ को व्यक्त करने वाला लिखित निवेदन दें। मुख्य प्रधान से न्याय की गुहार करने वाले इस लिखित निवेदन पर अन्य सदस्यों की तरह गांधीजी ने भी हस्ताक्षर किए। लेकिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का अपनी मांगों पर इतना अटल विश्वास था कि उन्होंने इस निवेदन पर हस्ताक्षर नहीं किए।"[2]

इस बारे में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अपना स्पष्टीकरण प्रकाशित किया है—

बाबासाहेब अम्बेडकर का खुला खुलासा

"जैसे कि पहले ही बताया गया था निजी अल्पसंख्यक उप—समिति की कोशिशें असफल रहीं और इस कारण अल्पसंख्यकों के मुद्दे से करीब से जुड़ी पार्टी द्वारा इस मसले का हल हो पाना असंभव है ऐसा ही सबको लगने लगा। इस पराजय की खोज में कई लोग लगे हुए हैं। पिछले हफ्ते हुई खुली बैठक में गांधीजी ने स्पष्ट रूप से अपने मतानुसार सुलह न हो पाने के कारण बताएं। अल्पसंख्यक वर्ग के प्रतिनिधि और स्वयं प्रधानमंत्री की तरफ से गांधीजी की सोच का सही—सही जवाब दिया गया। इसमें कोई शक नहीं कि गांधीजी ने जो कारण बताए उनके अलावा भी कई बातें हैं जो सुलह के लिए घातक सिद्ध हुईं। हालांकि, सबसे घातक थी खुद गांधीजी की कुछ जातियों के बारे में कलुषित बुद्धि तथा अलग—अलग जातियों में भेदभाव करने की उनकी प्रवृत्ति। खास कर अपनी अध्यक्षता में बुलाई जा रही निजी समिति में दलित वर्गों के बारे में उन्होंने जो नीति अपनाई, उसकी तरफ मैं जनता का ध्यान दिलाना चाहता हूं।

अल्पसंख्यक के नाते हम दो मांगें रख रहे हैं — जिंदा रहने की आजादी और अपनी संपत्ति की रक्षा हो इसके लिए हमें मूलभूत अधिकार मिलें और साथ ही अछूत का कलंक दूर करने का विश्वास दिलाया जाए यह हमारी पहली मांग है। दूसरी मांग है विधिमंडल से या कार्यकारी सभा से हमारे हकों को नुकसान न पहुंचे इसलिए विधान

1. जनता : 5 दिसम्बर, 1931

2 डॉ. अम्बेडकर : लाइफ एंड मिशन : धनंजय कीर, पुनःप्रकाशन 1981, पृष्ठ 190

सभा में हमें प्रतिनिधित्व मिले। अन्य छोटे–बड़े अल्पसंख्यक समुदायों की मांगें कुछ इसी तरह की हैं। मुस्लिम और सिक्खों के संदर्भ में गांधीजी ने इन दोनों मांगों को स्वीकार लिया है। लेकिन अछूतों को विशेष प्रतिनिधित्व देने की बात वे नकार रहे हैं। गांधीजी हमें बता रहे हैं कि मूलभूत अधिकार आपको दिए जाएंगे और उनसे आपको संतोष करना होगा। लेकिन विशेष प्रतिनिधित्व देने के मामले में सिक्ख, मुस्लिम और अछूतों के बीच इस तरह का भेदभाव क्यों बरता जा रहा है यह हमारी समझ से बाहर है।

खुले आम बरते जा रहे इस भेदभाव के बारे में शायद गांधीजी को शर्म महसूस होती हो, इसीलिए अछूतों को वयस्क मताधिकार (Adult Sufforage) देकर वे अपनी शर्म पर पर्दा डालना चाहते हों! इस तरह का भेदभाव बरतने की नीति जिस भावना से उपजी है उसकी क्षुद्रता वयस्क मताधिकार देकर कतई कम नहीं होगी। क्योंकि मतदान की इस पद्धति का केवल अछूतों को ही नहीं वरन सबको लाभ मिलेगा। वयस्क मताधिकार जब तक सब पर लागू रहेगा तब तक अछूतों की स्थिति में कोई फर्क नहीं आएगा। आज की ही तरह वे मतदाताओं में भी अल्पसंख्यक ही रहेंगे। साथ ही एक और सवाल भी उठेगा कि अगर अछूतों के हकों की रक्षा केवल वयस्क मतदान पद्धति से ही संभव है तो फिर मुस्लिमों के हितों की रक्षा भी इसी तरीके से क्यों संभव नहीं है? सबके मतानुसार सिक्ख और मुस्लिम दोनों आर्थिक रूप से संपन्न हैं, उनमें संगठितता और नागरिकता के हकों का वे पूरे अर्थों से उपभोग कर रहे हैं। लेकिन अछूतों की स्थिति इसके विपरीत है। अछूत आर्थिक स्तर पर एकदम पिछड़े हुए हैं। उनमें संगठन बिल्कुल भी नहीं है। साधारण नागरिकों के अधिकार भी उनको नहीं मिल रहे हैं और साथ ही समाज के अन्य वर्ग उनके साथ अत्यंत कठोर बर्ताव करते हैं। न्याय बुद्धि जिसमें जागृत हो ऐसा कोई भी व्यक्ति अलग–अलग जातियों से रखी जा रही मांगों पर समुचित ढंग से सोचेगा तो यही मत व्यक्त करेगा कि इन सभी विभिन्न जातियों से अधिक अछूतों को ही उनके अधिकारों के प्रति सुरक्षा दी जानी चाहिए।

महात्मा गांधी इस बात को नहीं मानते। इसकी वजह यह नहीं है कि वे इस कथन की सच्चाई या न्यायकारकता से असहमत हैं। शायद उन्होंने खुद ही यह धारणा बना ली है कि मांगें मंजूर न होने की स्थिति में अल्पसंख्यक जिस तरह दिल्ली पर हल्ला बोलेंगे, उस तरह अस्पृश्य वर्ग के लोग हल्ला नहीं बोलेंगे। इसी धारणा के कारण अछूतों की मांगों को धता बताने की धृष्टता वे कर रहे हैं। इसके अलावा गांधीजी की राष्ट्रीयता की भावना उच्चवर्ण के हिंदुओं के प्रति उन्हें महसूस हो रहे अपनत्व से जुड़ी है। असल में, मुस्लिम और सिक्ख समुदाय जब राजनीतिक क्षेत्र का अपना हिस्सा लेंगे, उसके बाद बचा हुआ हिस्सा उच्चवर्णीय हिंदुओं के लिए आरक्षित रखने का उनका इरादा है। प्रौढ़ मतदाता पद्धति के लिए अगर वे तैयार हैं तो उसमें खास बात क्या है? राजनीतिक अधिकार पाने का सीधा, सरल

और भरोसेलायक मार्ग विशेष प्रतिनिधित्व पाना ही है। प्रौढ़ मतदान का तरीका टेढ़ा तो है ही, भरोसेलायक भी नहीं। गांधीजी के ध्यान में यह बात जरूर आई होगी कि ऊपर बताई गई मतदान पद्धति उच्चवर्णियों के लिए फायदेमंद है। अछूतों के बारे में अपनी नीति हिंदुस्तान में रहते हुए ही अगर गांधीजी जाहिर करते तो बहुत अच्छा होता। दुर्भाग्य की बात यह है कि हिंदुस्तान में रहते हुए उन्होंने अछूतों को इस बात की भनक तक नहीं लगने दी कि वे विशेष प्रतिनिधित्व की उनकी मांग के खिलाफ हैं। वे यह कत्तई नहीं कह सकते कि उन्हें अस्पृश्यों की इस मांग के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। काश कि वे समय रहते अस्पृश्यों को अपना दिल खोल कर दिखा देते। इससे उनके बड़प्पन में चार चांद लगते। गांधीजी इस सीधे रास्ते को अपनाते तो अस्पृश्य भी अपनी मांगों पर कॉंग्रेस की सहमति पाने के लिए जी–जान लड़ा देते।

जनता का ध्यान हम दूसरी एक और बात की तरफ आकर्षित करना चाहते हैं। खास प्रतिनिधित्व के लिए मुस्लिम और सिक्खों की मांगों पर ही गौर करना कांग्रेस का जनादेश जैसे तय था उसी तरह इन मांगों को मानने के लिए कॉंग्रेस कहां तक आगे बढ़े इस बारे में भी एक सूत्र बना हुआ था। अल्पसंख्यकों की निजी समिति के अध्यक्ष और कांग्रेस के प्रतिनिधि इन दो पहलुओं वाले रिश्ते के कारण मुस्लिमों के साथ सुलह करवाने का कार्य उनको सौंपा गया था। हर दिन वे समिति के सदस्यों से कहते कि उनकी कोशिशें विफल रहीं। लेकिन असफलता के कारणों का उन्होंने कभी खुलासा नहीं किया। मुस्लिम अपने चौदह मुद्दों पर अड़े रहे और महात्मा गांधी कॉंग्रेस की नीतियों से बंधे रहे और इन्हीं वजहों से सुलह होना संभव नहीं हो पाया ऐसा अन्य सदस्यों को लगा। गांधीजी ने मुस्लिमों के चौदहों मुद्दे माने और कहा कि चुनाव क्षेत्र संयुक्त हो या अलग–अलग हों इस बात का निर्णय मुसलमानों के जनमत–संग्रह के अनुसार तय किया जाए, आदि बातें अब खुल चुकी हैं। गांधी ने शर्त रखी कि कॉंग्रेस की सभी राजनीतिक मांगों को मुसलमान पूरी तरह मान लें तथा अन्य अल्पसंख्यकों के बारे में किसी तरह की दखलंदाजी न करें। उनकी इसी शर्त के कारण सुलह नहीं हो पाई।

मुसलमानों के साथ सुलह की बातें करते हुए गांधीजी कॉंग्रेस के निर्देशों में अपनी पसंद के अनुसार बदलाव करते या कभी उन निर्देशों की धज्जियां भी उड़ाते लेकिन अस्पृश्यों या अन्य अल्पसंख्यकों के साथ जब सुलह की बातें शुरु होतीं तब वे मूल निर्देश ज्यों के त्यों उनके मुंह पर दे मारते। यह तिलमिलाहट पैदा करने वाली बात थी। हालांकि हम यह नहीं कहते कि इस क्रोध को व्यक्त करने के लिए इस पत्र को आपके अखबार में जगह मिले। अस्पृश्यों को स्वतंत्र प्रतिनिधित्व मिलने के लिए चल रही हमारी कोशिशों को विफल करने के लिए गांधीजी किन–किन उपायों पर अमल

कर रहे हैं यह सबके सामने प्रकट हो इसलिए हमारी विनती है कि इस पत्र को आप प्रकाशित करें। ऐसा करना खुद हमारे लिए भी दुःखदायी है। लेकिन अस्पृश्यों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए हमने अगर तुरंत इलाज नहीं किया तो हमें लगेगा कि अस्पृश्यों के नेता होने के नाते हम अपना कर्त्तव्य निभाने से चूक गए।

अल्पसंख्यक उप–समिति की निजी समिति का काम जारी रहे इसलिए गांधीजी ने जब उप–समिति का काम स्थगित रखे जाने का प्रस्ताव रखा तब अस्पृश्यों की ओर से हमने आपत्ति जताई। हमने जो विरोध किया था उसका कारण था। हमारे बारे में काँग्रेस की नीति का पता चलने के कारण निजी समिति में हमारे भाग लेने के बावजूद कुछ होने वाला नहीं है यह हमें पता चल चुका था और यही हमारे विरोध का कारण था। हालांकि गांधीजी ने यह भी बताया था कि अन्य अल्पसंख्यकों द्वारा अस्पृश्यों की मांगें अगर मान ली जाएं तो उन्हें मान लेने के काँग्रेस के निर्देश उनके पास थे। गांधीजी से यह आश्वासन पाने के बाद हम निजी समिति के कामकाज में हिस्सा लेने के लिए राजी हुए। समिति में गांधीजी ने काँग्रेस के निर्देशानुसार ही कदम–कदम पर हमारा विरोध किया। हालांकि, गांधीजी इस हद तक विरोध करेंगे इसका हमें बिल्कुल अंदेशा नहीं था। विश्वसनीय सूत्रों से हमें पता चला कि अस्पृश्यों के साथ गांधीजी का बर्ताव मित्रों–सा तो नहीं ही है, अफसोस ये है कि वह ईमानदार शत्रु का भी नहीं है। उन्होंने अपने मुसलमान मित्रों के आगे शर्त रखी कि आपकी चौदह मांगें अगर मनवानी हों तो अस्पृश्यों का और अन्य अल्पसंख्यकों का विरोध करो। खुलेआम यह कहना कि, अन्य अल्पसंख्यकों द्वारा अस्पृश्यों की मांगें अगर मान ली जाएं तो उन्हें मान लेने में उन्हें कोई ऐतराज नहीं, और फिर अंदर ही अंदर उनके द्वारा अस्पृश्यों की मांगें मान न ली जाएं इसके लिए उनके साथ बातचीत जारी रखना, उन्हें हर तरह के लालच दिखाना आदि शायद किसी महात्मा को ही शोभा देगा या फिर अस्पृश्यों के दुराग्रही शत्रु को। गांधीजी की नीति से हम परास्त नहीं हुए, हारे नहीं। क्योंकि, अपनी मांगें सही और न्यायसंगत होने का हमें विश्वास है। साथ ही, सप्रू, पेट्रो जैसे प्रतिनिधियों की न्यायबुद्धि पर भी हमें भरोसा है।[1]

प्रधानमंत्री जो निर्णय लेंगे उसे मानने के बारे में गांधीजी ने अपनी स्वीकृति दी थी। गोलमेज सम्मेलन में कोई निर्णय न होने की वजह से 1 दिसंबर, 1931 को अनिर्णय की स्थिति में सम्मेलन का समापन किया गया। इसके बावजूद अस्पृश्यों की मांगें बिल्कुल न मानी जाएं इसके लिए गांधीजी ने हिंदुस्तान के स्टेट सेक्रेटरी (सचिव) सर सैम्युअल होअर के साथ पत्र–व्यवहार किया।

---

1. जनता, 14 नवंबर, 1931

होअर के नाम गांधीजी का पत्र

दिनांक 11 मार्च, 1932 के दिन येरवडा जेल से गांधीजी ने सैम्युअल होअर को जो पत्र लिखा था, वह निम्नलिखित है –

"प्रिय सर सैम्युअल,

आपको याद होगा कि गोलमेज सम्मेलन में अल्पसंख्यकों के हकों की मांग रखी गई थी। उस समय दिए अपने भाषण के अंत में मैंने कहा था – अस्पृश्य वर्गों को स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र देने की योजना का मैं जीवन के अंतिम क्षणों तक विरोध करूंगा। बोलने या विवाद की रौ में मैंने ये बातें नहीं कही थीं। ये वाक्य मैंने अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए बड़ी गंभीरता से कहा था। मैंने जो कहा था उसे पूरा करने के लिए हिंदुस्तान लौटने पर आम तौर पर स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र बनाने के, लेकिन खास तौर पर अस्पृश्यों को उसे देने की योजना के खिलाफ जनमत बनाने का इरादा मैं रखता था। लेकिन शायद ऐसा होना नहीं था। मुझे जो अखबार पढ़ने की इजाजत है उनके आधार से कहा जाए तो लग रहा था कि अस्पृश्यों के लिए स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र बनाने के बारे में अंग्रेज सरकार जल्द ही अपने निर्णय की घोषणा करने वाली थीं। पहले मुझे लग रहा था कि उस निर्णय के बाद अगर स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र की स्थापना की जाए तो उसके बाद ही अपनी प्रतिज्ञा का पालन करने के उपायों के बारे में सोचना होगा। लेकिन अब लगता है कि सरकार को अग्रिम सूचना दिए बगैर अपनी प्रतिज्ञा पर अमल करना ठीक नहीं होगा। साथ ही, जो कुछ मैंने कहा जरूरी नहीं कि वह औरों को भी उतना ही महत्वपूर्ण लगे जितना मुझे लगता है।

मैं स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र के विरोध में क्यों हूं?

अस्पृश्यों के लिए अलग चुनाव क्षेत्र निर्माण करने की योजना के विरोध में जो कारण हैं उनके बारे में विस्तार से चर्चा करने की यहां जरूरत नहीं है। मैं खुद अपने आपको अस्पृश्य मानता हूं। बाकी लोगों में और उनमें फर्क है। संविधान सभा में उनके प्रतिनिधि हों इसके विरोध में मैं नहीं हूं। अन्य वर्गों के मतदान का अधिकार अगर किसी भी हद तक संकुचित किया गया तो भी कोई हर्ज नहीं। लेकिन मतदाता बनने के लिए शिक्षा, संपत्ति आदि मामलों में जो शर्तें हैं वे जरूर अस्पृश्यों पर लागू न की जाएं बल्कि मेरे मत में, उनमें से हर किसी का नाम मतदाता सूची में शामिल किया जाना चाहिए। लेकिन मुझे लगता है कि, उन्हें अगर स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र दिया जाए तो उनका और राजनीति के परिपेक्ष से हिंदु समाज का बहुत बड़ा अहित होगा। स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र के कारण उनका कितना नुकसान होगा इसके सही–सही आकलन के लिए स्पृश्य हिंदू समाज में अस्पृश्य हिंदू समाज किस तरह शामिल है और वह किस तरह उस समाज पर आश्रित है इस बात का अहसास होना जरूरी है। हिंदू

समाज के बारे में मैं कहूंगा कि स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र दिया जाए तो वह उस समाज को जीते जी छिन्न–विच्छिन्न करने जैसा सिद्ध होगा। इससे उनमें फूट पड़ेगी।

मेरे मतानुसार दलितों का सवाल मुख्यतया नैतिक और धार्मिक है। इस प्रश्न के नैतिक और धार्मिक महत्त्व के आगे उसका राजनीतिक महत्त्व कोई मायने नहीं रखता।

मैं आमरण अनशन करूँगा

मुझे बचपन से ही समाज के इस वर्ग की बड़ी चिंता थी। कई बार उनकी खातिर मैं जान की बाजी लगाने पर भी उतारू हो गया था। यह बात यदि आप समझ पाएं तभी इस मामले में मेरी भावनाओं को आप परख सकेंगे। इस मामले में मैं यह बात अभिमान से नहीं कह रहा। क्योंकि मेरा मत है कि पिछले कई शतकों से अस्पृश्यों को जिस दयनीय स्थिति में हिंदू समाज ने रखा था उसके लिए किसी भी तरह का प्रायश्चित्त क्यों न ले, हिंदू समाज उबर नहीं सकता।

किंतु मुझे लगता है कि स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र निर्माण करने से अपमान की जिस मरणप्राय स्थिति में वे हैं उसमें कोई सुधार नहीं होगा और न ही हिंदू समाज द्वारा उन पर किए गए अत्याचार मिट जाएंगे। इसीलिए बड़ी विनम्रता से मैं ब्रिटिश सरकार को बताना चाहता हूं कि अगर ब्रिटिश सरकार अस्पृश्यों के लिए स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र बनाएगी तो मैं प्राणांत तक अन्न का त्याग करूंगा।

मेरे जेल में कैद होने के समय इस तरह के कामों में मेरा लिप्त होना सरकार को किसी बड़े संकट में डाल कर उनके कामकाज में रोड़े खड़े करने जैसा है इसका मुझे अहसास है, और मुझे इस बात का खेद है। राजनीति के क्षेत्र में मेरा जो स्थान है उसे ध्यान में लें तो इस तरह अन्नत्याग करने की मेरी बात से लोगों को लगेगा कि शायद मुझ पर कोई पागलपन सवार हुआ है। लोग यह भी कहेंगे कि जो मैं कर रहा हूं वह अत्यंत अनुचित है। मैं इस बारे में इतना ही कह सकता हूं कि अन्नत्याग करने की जो बात मैं कर रहा हूं वह मेरे काम करने का एक तरीका भर है। लोगों की मेरे बारे में जो राय बनी है कि मैं एक समझदार आदमी हूं वह अगर मैं गंवा बैठूं तब भी मुझे उसकी फिकर नहीं। अपने विवेक द्वारा दी गई आज्ञा को मैं टाल नहीं सकता। मेरा जो नजरिया बना है उसके अनुसार अगर अब मुझे कारागार से छोड़ भी दिया जाए तो मैं अपने अन्नत्याग की कसम को तोड़ नहीं सकता। मुझे आशा है कि अस्पृश्य वर्ग के लिए स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र निर्माण करने के बारे में सरकार ने अभी कोई निश्चय नहीं किया है और मैं आशा करता हूं कि इस बारे में मेरा डर झूठा सिद्ध हो।

आपसे मेरे इस पत्र–व्यवहार की बात मैंने अपनी ओर से गुप्त रखी है, यह अलग से कहने की जरूरत नहीं होगी। अभी–अभी सरदार वल्लभ भाई और श्री महादेव

देसाई मेरे साथ रहने के लिए आए हैं, जो इस पत्र–व्यवहार के बारे में जानते हैं। आप जब अनुमति देंगे तभी मैं इन पत्रों का उपयोग करूंगा।

आपका
(हस्ताक्षर)
एम. के. गांधी[1]

सर सैम्युअल होअर का जवाब

सर सैम्युअल होअर ने 13 अप्रैल, 1932 को महात्मा गांधी के खत का जवाब दिया–

प्रिय मि. गांधी,

आपके 11 मार्च, को लिखे पत्र का मैं इस पत्र के जरिए जवाब भेज रहा हूं। पहले ही बता दूं कि अस्पृश्य वर्ग के लिए स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र निर्माण करने को लेकर आपकी भावनाएं कितनी उत्कट हैं, इसका मुझे पूरा अहसास है। मैं बस इतना ही कह सकता हूं कि जब इस सवाल का हल निकाला जाएगा, तब उससे जुड़े सभी पहलुओं पर सोच कर ही निर्णय लिया जाए। आप जानते हैं कि लॉर्ड लोथियन की अध्यक्षता में गठित की गई समिति ने अभी अपना दौरा पूरा नहीं किया है तथा उस समिति द्वारा की गई सिफारिशें हम तक पहुंचने में अभी कुछ और हफ्तों का वक्त लगेगा। सिफारिशें हम तक पहुंचने के बाद उन सिफारिशों पर हमें विचारपूर्वक गौर करना पड़ेगा। उसी समय आप और आप जैसे विचार रखने वालों के सुझावों पर बिना गौर किए हम निर्णय नहीं देंगे। मुझे यकीन है, अगर आप मेरी जगह होते तो इसी तरह काम करते। समिति की सिफारिशों की राह देखना आपको भी जरूरी लगता। उन सिफारिशों पर गौर करना भी जरूरी है और आखिरी निर्णय लेने से पूर्व इस विवाद में फंसे दोनों पक्षों के कथन पर भी आप गौर करते। इससे अधिक मैं कुछ लिख नहीं पाऊंगा। और मुझे नहीं लगता कि आपको मुझसे इससे अधिक कुछ लिखे जाने की उम्मीद होगी।

आपका
(हस्ताक्षर)
सैम्युअल होअर[2]

1 दिसंबर, 1931 के दिन बिना किसी निर्णय के ही दूसरी गोलमेज सम्मेलन खत्म हुई थी। आखिर आठ महीनों के बाद ब्रिटिश सरकार ने खुद निर्णय लिया और

1. डॉ. भी. रा. आंबेडकर चरित्रः चां. भ. खैरमोडे, खंड 5, पृ. 17–20
2. तत्रैव : पृ. 20–21

बुधवार दिनांक 17 अगस्त 1932 के दिन जाति संबंधित सवाल के बारे में निर्णय (Communal Award) घोषित किया।

जाति से संबंधित सवाल का निर्णय

बुधवार दिनांक 17 अगस्त, 1932 के दिन ब्रिटिश सरकार की ओर से प्रधानमंत्री रॅम्से मैकडोनाल्ड ने जाति से संबंधित सवालों का निर्णय (Communal Award) हिंदुस्तान और इंग्लैंड में एक ही समय घोषित किया था। इस निर्णय में क्षेत्रीय कानून परिषद में हर समाज के प्रतिनिधियों को किस अनुपात में शामिल किया जाएगा और सुरक्षा की किन–किन लोगों को आवश्यकता है इस बारे में निवेदन दिया गया था। अल्पसंख्यकों के साथ किए गए अनुबंध के अनुसार (1) मुसलमान, (2) सिक्ख, (3) भारतीय ईसाई, (4) ॲग्लो इंडियन और (5) यूरोपियनों को स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र दिया गया था। महिलाओं को भी स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र दिया गया था। अस्पृश्य समाज के लिए स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र रखा गया था उसके अलावा सामान्य चुनाव क्षेत्र से अधिक मत देने का अधिकार रखा गया था।

निर्णय की धाराएं

(1) पिछले दिसंबर की पहली तारीख को दूसरी गोलमेज सम्मेलन के आखिर में प्रधानमंत्री ने साफ तौर पर कहा था कि, हिंदुस्तान की सभी जातियां मिल कर जाति से संबंधीत मसलों पर सभी पक्षों को स्वीकार्य तोड़ नहीं निकाल पाएं तो स्थितियों से दो–हाथ करने के लिए अंग्रेज सरकार ने एक निर्णय लिया है कि हिंदुस्तान के संविधान की प्रगति के लिए जाति से संबंधित मसले बाधक न हों इस तरह की एक तात्कालिक योजना बना कर सरकार ये अडंगे दूर करेगी। प्रधानमंत्री की इस घोषणा को संसद के दोनों सभागृहों ने अनुमोदन दिया था।

(2) जातियों के बीच एक मत न होने के कारण संविधान की प्रगति में बाधाएं उत्पन्न होने की बात से राज्य सरकार को पिछले 19 मार्च को जब अवगत कराया गया था तब सरकार ने इस बात की ओर ध्यान दिलाया था कि इन कठिन और विवादास्पद मसलों पर फिर से विचार किया जा रहा है। अल्पसंख्यकों के स्तर के बारे में कुछ मसलों को हल किए बगैर नए संविधान की निर्मिति के कार्य में आगे नहीं बढ़ा जा सकता यह सरकार अब साफ तौर से जान गई है।

(3) इसलिए ब्रिटिश सरकार की ओर से मिली सूचनाओं को संसद के सामने पेश किए जाने वाले भारतीय संविधान में समाविष्ट करने का फैसला किया गया है। इस योजना को प्रांत विधानमंडल में ब्रिटिश भारत के विभिन्न जातियों के प्रतिनिधियों को शामिल कराने तक सीमित किया गया है। केंद्रीय विधिमंडल के प्रतिनिधियों से

संबंधित विचार को फिलहाल छोड़ दिए जाने के पीछे जो कारण हैं उन्हें धारा 20 में दिया गया है। अन्य मसले हल करने में असफलता मिली इसलिए इस योजना को सीमित किया गया ऐसा इसका मतलब नहीं, बल्कि, प्रतिनिधित्व का अनुपात और मार्ग इन दो प्रमुख सवालों के बारे में निर्णय लिए जाने के बाद अब जिन सवालों के बारे में अब तक कोई फैसला नहीं किया गया है, उनके बारे में आपस में बातचीत के सहारे सुलह संभव होने की आशा है।

(4) इस बारे में ब्रिटिश सरकार यह जाहिर करना चाहती है कि अब दिए गए निर्णय में बदलाव का जो प्रस्ताव बिना सभी पार्टियों की सहमति के आएगा, उस पर विचार नहीं किया जाएगा। हालांकि, भारत सरकार का नया कानून पास होने से पहले अगर देश की जातियाँ आपस में मिल कर किसी प्रांत के लिए या पूरे ब्रिटिश भारत के लिए इससे अलग कोई योजना सर्वसम्मति से बनाती है तो उसे मान कर प्रस्तुत योजना की जगह उसका स्वीकार करने की सूचना संसद को करने के लिए ब्रिटिश सरकार खुशी–खुशी तैयार होगी।

(5) जिस प्रांत में गवर्नर हो उस प्रांत के विधिमंडल से, तथा जहां अपर लेवल चेंबर होगा, वहां लोअर चेंबर में किस अनुपात में प्रतिनिधियों का चयन किया जाए इसकी जानकारी धारा 24 में दी गई है।

दस साल के बाद पुनर्विचार

(6) मुस्लिम, यूरोपीय और सिक्ख आदि मतदाता संघों को दी गई जगहों के लिए प्रांत के स्वतंत्र मतदाता संघ से चुनाव होंगे। लेकिन कुछ क्षेत्र पिछड़े होने की वजह से इनमें शामिल नहीं किए जाएंगे। चुनावों के बारे में किए गए तथा नीचे दी गई व्यवस्था के तहत दस वर्षों के बाद उन जातियों की सहमति से पुनर्विचार की योजना रखी जाएगी तथा उसके लिए मार्ग भी तय कर दिए जाएंगे।

(7) मुस्लिम, सिक्ख, भारतीय ईसाई (धारा 10), एंग्लो इंडियन (धारा 11) या यूरोपीय मतदाता संघ में जो मतदाता के तौर पर दर्ज नहीं हैं, वे सभी आम मतदाता संघ से अपना मत दे सकते हैं।

मराठों के लिए सात जगहें

(8) मुंबई प्रांत के उन मतदाता संघों में जहां एक से अधिक सदस्यों को चुना जाना है, वहां मराठों के लिए सात जगहें आरक्षित की जाएंगी।

अछूतों के लिए व्यवस्था

(9) बहिष्कृत वर्ग के योग्य मतदाता सामान्य चुनाव क्षेत्र से मत दे सकेंगे। इस उपाय से विधिमंडल में बहिष्कृत वर्ग का पर्याप्त प्रतिनिधित्व लंबे समय तक नहीं मिल पाएगा इसलिए धारा 24 के अनुसार उन्हें सामान्य चुनाव क्षेत्र में कुछ जगहें दी जाएंगी। इन जगहों पर बहिष्कृत वर्ग के योग्य मतदाताओं द्वारा किए गए मतदान से ही उम्मीदवार चुने जाएंगे और ये मतदाता सामान्य चुनाव क्षेत्र से भी मतदान कर सकेंगे। बहिष्कृत वर्गों की आबादी जहां अधिक हो केवल उन्हीं चुनिंदा स्थानों पर ऐसे चुनाव क्षेत्र निर्माण किए जाएं और मद्रास का अपवाद छोड़ अन्य प्रांतों में ऐसे मतदाता संघ पूरे प्रांत में फैले न हों ऐसा इरादा है।

अनुमान है कि बंगाल में कुछ सामान्य चुनाव क्षेत्रों में बहुसंख्यक मतदाता बहिष्कृत वर्ग के होंगे। इसलिए अगली पूछताछ पूरी होने तक उस वर्ग में खास बहिष्कृत वर्ग के चुनाव क्षेत्र से कितने उम्मीदवार चुन कर आएंगे, इस बारे में निर्णय नहीं लिया गया है। हालांकि बंगाल के विधिमंडल में दस से कम प्रतिनिधि न हों।

योग्य मतदाताओं में से बहिष्कृत वर्ग के मतदाता संघ से कौन मत देने के लिए योग्य है, इसकी परिभाषा अभी तक नहीं की गई है, हालांकि इस मामले में मतदान कमेटी द्वारा दर्ज किए गए सिद्धांतों का अनुसरण किया जा सकता है। उत्तर हिंदुस्तान में कुछ जगहों पर अस्पृश्य के केवल वही लक्षण मानना अयोग्य होगा, इसलिए उनमें बदलाव की जरूरत है।

सरकार को लगता है कि बहिष्कृत वर्ग के इन खास चुनाव क्षेत्र की जरूरत विशिष्ट समयावधि के बाद नहीं रहेगी। इसलिए अगर पहले इस बारे में कोई योजना तय नहीं की गई हो तो बीस वर्षों के बाद वे रद्द किए जाएं।

(10) भारतीय ईसाई मतदाता पृथक चुनाव क्षेत्र से मतदान करेंगे।

लेकिन प्रांत से केवल एक–दो जगहों पर ही ईसाइयों के पृथक चुनाव क्षेत्र का निर्माण करना पड़ेगा ऐसा लगता है। यहां के हिंदी ईसाई सामान्य चुनाव क्षेत्र से मत नहीं दे सकते। लेकिन बाहर के हिंदी ईसाई सामान्य चुनाव क्षेत्र से मत दे सकते हैं। बिहार, उडिसा प्रांत के ज्यादातर हिंदी ईसाई जंगलों में बसे आदिवासी जनजातियों के होने के कारण उनके लिए अलग से व्यवस्था करनी पड़ेगी।

(11) एंग्लो इंडियन मतदाता पृथक चुनाव क्षेत्र से मतदान करेंगे। उनके लिए सभी प्रांतों की क्षेत्र सीमा रखना विचाराधीन है। साथ ही, उनके लिए डाक से भी मत भेजे जाने की व्यवस्था की जा सकती है। हालांकि, इससे संबंधित जो व्यावहारिक परेशानियां हो सकती हैं, उन पर विचार किया जाना बाकी है और इस कारण इस बारे में अभी तक कोई ठोस निर्णय नहीं किया गया है।

(12) पिछड़ी जातियों को दी जाने वाली जगहों का मसला अभी विचाराधीन होने के कारण अब ऐसे विभागों के लिए दी जा रही जगहें तात्कालिक समझी जाएं।

महिलाओं के प्रतिनिधि

(13) विधिमंडल में स्त्रियों का भी प्रतिनिधित्व हो, इस बात को ब्रिटिश सरकार बहुत महत्व दे रही है और ऐसा तभी संभव हो सकता है, जब कुछ जगहें महिलाओं के लिए आरक्षित की जाएं। साथ ही इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि सभी महिला प्रतिनिधि, एक ही जाति की न हों। किन्तु इस भय को नष्ट करने का कोई ठोस उपाय अभी सरकार को मिला नहीं है। इसलिए महिला प्रतिनिधियों की जगह हर जाति के लिए एक इस रूप में सीमित की गई हैं। इसके लिए जो अपवाद हैं उन्हें धारा 24 में दर्ज किया गया है। इस तरह महिलाओं की खास जगहें विभिन्न जातियों में बांटी गई हैं। हालांकि, उनके चुनाव की विधि के बारे में अभी विचार–विमर्श चल रहा है।

श्रमिक वर्ग के प्रतिनिधि

(14) श्रमिक वर्ग के प्रतिनिधि उन चुनाव क्षेत्रों से चुने जाएंगे, जो किसी विशिष्ट जाति के लिए आरक्षित न किए गए हों। चुनाव का मार्ग अभी तय होना बाकी है। लेकिन कहीं–कहीं श्रमिकों के प्रतिनिधि ट्रेड यूनियनों से चुन कर आएंगे तथा कुछ जगह मतदाता कमेटी की सिफारिशों के अनुसार विशिष्ट चुनाव क्षेत्रों से चुन कर आएंगे।

(15) व्यापार, उद्योग, खदान और बागानों को दी गई जगहों पर चेंबर ऑफ कॉमर्स और अन्य संस्थाओं के माध्यम से चुनाव होंगे। हालांकि, अभी इस योजना पर विस्तार से विचार होना बाकी है।

(16) जमींदारों के लिए खास चुनाव क्षेत्रों से चुनाव होंगे।

(17) विश्वविद्यालयों की जगहों के चुनावों के बारे में अभी विचार–विमर्श जारी है।

बदलाव करने का हक

(18) ऊपर बताए गए बिंदुओं पर सोचते हुए उनसे संबंधित छोटे–छोटे मसलों पर भी सरकार को सोचना पड़ रहा है। इसके बावजूद चुनाव क्षेत्रों की सीमाएं तय करना बाकी है और जहां तक संभव हो हिंदुस्तान में ही जितनी जल्दी हो सके इस मसले पर विचार किया जाए।

कुछ मामलों में चुनाव क्षेत्रों की सुविधा को ध्यान में रखते हुए जगहों की संख्या में बदलाव करना आवश्यक हो तो सरकार ने ऐसा बदलाव करने का हक अपने पास सुरक्षित रखा है। इस तरह के बदलाव करते वक्त जातियों के संतुलन का विशेष ध्यान रखा जाएगा। बंगाल और पंजाब के बारे में कोई बदलाव नहीं किए जाएंगे।

सेकंड चेंबर का विचार

(19) प्रांत के विधिमंडल में सेकेंड चेंबर के होने के बारे में अब तक बहुत कम विचार–विमर्श हुआ है। किन प्रांतों में सेकेंड चेंबर की जरूरत है, इस पर विचार किया जाना बाकी है। हालांकि, सरकार को लगता है कि सेकेंड चेंबर की स्थापना करते वक्त भी लोअर चेंबर में जाति के अनुपात के संतुलन में किसी तरह का व्यवधान न आने पाए, इसका खयाल रखना होगा।

केंद्रीय विधिमंडल

(20) केंद्रीय विधिमंडल के संविधान के बारे में सोचते हुए संस्थाओं के तथा अन्य कई मुद्दे उभरते हैं। हालांकि उन पर अभी सोचने का सरकार का इरादा नहीं है। आगे जब कभी इस पर विचार किया जाएगा, तब उसमें हर जाति को योग्य प्रतिनिधित्व मिले इसका सरकार खयाल रखेगी।

(21) सिंध प्रांत को स्वतंत्रता मिले, इस बात को सरकार ने सिद्धांततः स्वीकार किया है। हालांकि आर्थिक दृष्टि से उस पर विचार मंथन अभी बाकी है, इसलिए विधिमंडल सदस्यों के आंकड़े देते वक्त मुंबई प्रांत और सिंध प्रांत के आंकड़े अलग–अलग दिए गए हैं। और सिंध के साथ मुंबई प्रांत के आंकड़े भी दिए गए हैं।

(22) बिहार, उड़ीसा के आंकड़े अभी के हैं और उड़ीसा को आजाद करने का मुद्दा अभी विचाराधीन है।

(23) धारा 24 के अंतर्गत मध्यप्रांत और वर्हाड के आंकड़े एक साथ दिए गए हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि वर्हाड के भविष्यकालीन संविधान के बारे में नीति तय की गई है।

अलग–अलग प्रांतों की जगहों का बंटवारा

(24) प्रांतिक विधिमंडलों में निम्नानुसार जगहों का बंटवारा किया जाएगा –

	विभिन्न वर्ग (1)	मद्रास प्रांत (2)	मुंबई और सिंध प्रांत (3)	बंगाल प्रांत (4)	संयुक्त प्रांत (5)	पंजाब प्रांत (6)
1.	सामान्य	128	92	78	128	42
	महिला प्रतिनिधि	6	5	2	4	1
2.	अस्पृश्य	18	10	..	12	
3.	पिछड़े	1	1	...	...	...
4.	मुसलमान	20	62	117	64	84
	महिला प्रतिनिधि	1	1	2	2	2

5.	हिन्दी ईसाई	8	3	2	2	2
	महिला प्रतिनिधि	1	...	...	...	...
6.	एंग्लो इंडियन	2	1	3	1	1
	महिला प्रतिनिधि	..	1	1	...	...
7.	यूरोपीय	3	4	11	2	1
8.	व्यापारी आदि	6	8	19	3	1
9.	जमींदार	6	3	5	6	5
10.	विश्वविद्यालय	1	1	2	1	1
11.	मजदूर	6	8	8	3	3
12.	सिक्ख	......	......	......	......	31
	महिला प्रतिनिधि	......	......	......	......	1
	कुल	215	200	250	223	175

	विभिन्न वर्ग	बिहार उड़ीसा	मध्य प्रांत वर्हाड	असम प्रांत	नॉर्थ वेस्ट फ्रंटियर
1	सामान्य	96	74	43	9
	महिला प्रतिनिधि	3	3	1	..
2	अस्पृश्य	7	10	4	..
3	पिछड़े	8	1	9	..
4	मुसलमान	41	14	34	36
	महिला प्रतिनिधि	1	..	..	..
5	हिन्दी ईसाई	2	..	1	..
	महिला प्रतिनिधि	..	..	..	..
6	एंग्लो इंडियन	1	1	..	..
	महिला प्रतिनिधि	..	..	..	..
7	युरोपीय	2	1	1	..
8	व्यापारी आदि	4	2	11	..
9	जमींदार	5	3	..	2
10	विश्वविद्यालय	1	1	..	..
11	मजदूर	4	2	4	..
12	सिक्ख	..	..	..	3
	महिला प्रतिनिधि	..	..	..	..
	कुल	175	112	108	50

बंगाल प्रांत के अस्पृश्य प्रतिनिधियों की संख्या बाद में सूचित की जाएगी। इसके अलावा जिन प्रांतों को स्वतंत्र उम्मीदवारों के अतिरिक्त चुनाव क्षेत्र दिए जाएंगे उनके नाम भी जाति से संबंधित सवालों के इस निर्णय में नहीं दिए गए हैं। हालांकि जल्द ही उन प्रांतों के नाम घोषित किए जाएंगे। जिन प्रांतों में अस्पृश्य वर्ग की जनसंख्या अधिक है उन प्रांतों में अधिक दिए जाएंगे।[1]

इस निर्णय की घोषणा किए जाने के बाद ब्रिटिश प्रधानमंत्री रॅम्से मैकडोनाल्ड ने जो विस्तृत विवरण दिया था वह इस प्रकार है –

"ब्रिटिश सरकार की ओर से आज मैंने जिस जाति से संबंधित सवालों को लेकर निर्णय घोषित किया है उसके बारे में प्रधानमंत्री की हैसियत से नहीं, वरन पिछले दो सालों से आपके निकट सान्निध्य में जो दोस्ती पनपी है, उस दोस्ती से प्रेरणा लेकर थोड़ा स्पष्टीकरण दे रहा हूं।

हिंदुस्तान के जाति संबंधी सवालों को लेकर हमें दखलंदाजी करने की जरूरत नहीं थी। पिछले गोलमेज सम्मेलन के समय हमने जानबूझ कर कहा है कि इस प्रश्न को आप लोग ही आपस में हल करें। हम अच्छी तरह जानते हैं कि जाति के इस सवाल का हम चाहे जिस तरह हल करें हर जाति को यह शिकायत रहेगी कि उनकी सभी मांगें नहीं मानी गईं। इसके बावजूद हिंदू संविधान बेखटके सफल हो इसके लिए हर समाज को कुछ सुविधाजनक मार्ग स्वीकारने पड़ेंगे और एकजुट होकर इस नए संविधान पर अमल करना होगा। इस प्रकार अगर अपने कर्त्तव्य के बारे में सब जागरुक रहें तो हिंदुस्तान को ब्रिटिश उपनिवेशों के संविधान में नया स्थान प्राप्त होगा।

हमारा कर्त्तव्य जग–जाहिर है। जाति से संबंधित मसलों के बारे में समाज में अगर एकमत नहीं हुआ, नए संविधान के लिए संकट पैदा होने जैसी स्थितियां पैदा हुई तो सरकार को कड़े उपाय लागू करने पड़ेंगे। इसीलिए, हमने जो पहले वचन दिया था उसके अनुसार तथा पिछले दोनों गोलमेज सम्मेलनों के दौरान हिंदुस्तान की अलग–अलग जातियों के प्रतिनिधियों द्वारा की गई विनती के अनुसार तथा ब्रिटिश सरकार द्वारा इससे पूर्व किए खुलासे के अनुसार आज हम जाहिर कर रहे हैं कि हिंदू प्रांत के विधिमंडल में विभिन्न समाज के प्रतिनिधियों की संख्या कितनी होनी चाहिए। हमारे इस निर्णय को समाज के सभी वर्गों द्वारा जांचा जाए और संसद में नया बिल प्रस्तुत करने से पहले अपनी सुलह की राय प्रस्तुत करें।

संसद के आगे पेश करने और इस योजना को कानून का रूप प्राप्त होने से पहले सभी भारतीय प्रतिनिधियों के अनुमोदन से बनी कोई योजना अगर इस बीच तैयार

1. जनता : 27 अगस्त, 1932

की जा सके तो सचमुच हमें बड़ी खुशी होगी। हालांकि पिछले अनुभवों के आधार से अगर देखा जाए तो इस बारे में किसी भी तरह की बातचीत या सुलह नहीं हो पाती। इसीलिए, भारतीय नेता अगर नई योजना तैयार करने के लिए बातचीत शुरू करते हैं तो सरकार उसमें शामिल नहीं हो सकेगी। लेकिन भारतीय अगर जाति से संबंधित विवादों को भुला कर सर्वसहमति से कोई निर्णय लेते हैं और कोई योजना प्रस्तुत करते हैं तो हमारी योजना को वापिस लेने और उस नई योजना का स्वीकार करने के लिए सरकार बड़ी खुशी से तैयार होगी। अगर कोई प्रांत सर्वसहमति से कोई योजना तैयार कर लेता है तो उस प्रांत के लिए हमारी योजना को रद्द करते हुए नई योजना को स्वीकृति दी जाएगी।

सरकार के आज के इस निर्णय की अच्छाई–बुराई की पड़ताल करने से पहले किन परिस्थितियों में सरकार को यह निर्णय लेना पड़ा उस पर विचार किया जाना जरूरी है। अल्पसंख्यक समाज को अपने हितों की रक्षा के लिए लंबे समय से स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र की जरूरत महसूस हो रही है। इस बात पर भी ध्यान दिया जाना जरूरी है। इसलिए अब तक जो कानूनी और विकासोन्मुख योजनाएं बनीं उनमें से हर एक में स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र की योजना की गई है। सब में एक–सा चुनाव क्षेत्र हो ऐसी सरकार की इच्छा भले हो, लेकिन अल्पसंख्यक समाज को स्वतंत्र चुनाव क्षेत्र की तथा अन्य संरक्षण बंधनों की तीव्र आवश्यकता महसूस हो रही है। सरकार इस बात को नजरंदाज नहीं कर सकती। अल्पसंख्यकों को पहले इसकी आवश्यकता क्यों महसूस हुई इस बारे में चर्चा करने से कुछ हासिल नहीं होगा। मैं मानता हूं कि भूत से अधिक भविष्य की चिंता करना बेहतर होता है। मैं उस भविष्य के इंतजार में हूं जिसमें हिंदुस्तान की छोटी–बड़ी सभी जनजातियां एक होकर विश्वास के साथ काम करेंगी तथा सुरक्षा बंधनों की किसी को भी जरूरत महसूस नहीं होगी। लेकिन फिलहाल जो स्थितियां हैं उन्हें ध्यान में रखते हुए इस तरह की अपवादस्वरूप योजना प्रस्तुत करने के अलावा सरकार के सामने कोई चारा नहीं था।

इस निर्णय को ध्यान में रखते हुए मुझे लगता है कि उसमें दिए गए दो प्रमुख सवालों का उल्लेख करना जरूरी है। उनमें से एक मुद्दा अस्पृश्य समाज तथा दूसरा महिला वर्ग से संबंधित है। ऐसी कोई भी योजना सरकार मंजूर नहीं होगी जिसमें इन दो वर्गों के बारे में खास व्यवस्था नहीं की गई हो। अस्पृश्यों के बारे में सोचते हुए हमने दो प्रमुख मुद्दों की ओर ध्यान दिलाया है। पहला मुद्दा है –बड़ी संख्या में अस्पृश्यों की बस्ती होने वाले प्रांत में या उस क्षेत्र में उनके विश्वासपात्र या उनकी पसंद के प्रतिनिधियों को चुनने का मौका अस्पृश्य समाज को देना और दूसरा मुद्दा यह कि – पहले मुद्दे में उल्लेखित मौके उपलब्ध कराते हुए अब तक वे जिस तरह समाज से बाहर रहे वैसा न होने पाए ऐसी चुनाव पद्धति उन्हें देनी है इस तरफ ध्यान

देना। इन दो मुद्दों के आधार से अस्पृश्य समाज के मतदाता हिंदुओं के संयुक्त चुनाव क्षेत्र में मतदान करेंगे और अपनी पसंद का प्रतिनिधि चुनेंगे, ऐसा प्रबंध किया गया है। अब स्पृश्य उम्मीदवारों को अहसास होगा कि अस्पृश्य समाज की उपेक्षा करना उनके हित में नहीं होगा। अपने आप वे अस्पृश्य समाज की सदिच्छा पाना चाहेंगे। साथ ही, अगले बीस वर्षों तक उन्हें एक और सहूलियत दी जाएगी। अस्पृश्यों के पृथक चुनाव क्षेत्र स्थापित कर उनके समूहों के जरिए अस्पृश्य अपने प्रतिनिधि चुन कर ला सकते हैं। इस योजना के कारण अस्पृश्य समाज के कुछ मतदाताओं को दोहरे मतदान का अधिकार प्राप्त होने वाला है। यह सुविधा अपूर्व है लेकिन फिर भी अस्पृश्य समाज की परिस्थिति तथा अन्य वर्गों के उनके साथ बर्ताव को ध्यान में रखते हुए इस तरह की सुविधा उन्हें देना उनकी प्रगति के लिए आवश्यक है।

महिलाओं के मताधिकार के बारे में आधुनिक युग में एक बात सब जान गए हैं कि भारतीय महिलाओं का आंदोलन भारत के विकास का मर्म है। पढ़े–लिखे और प्रभावशाली नागरिक के नाते भारत की महिलाएं जब तक भारत के सार्वजनिक जीवन का हिस्सा नहीं बनतीं तब तक इस राष्ट्र को जो दर्जा पाने की मंशा है वह उसे नहीं मिलेगी। महिलाओं के मताधिकार का मसला हल करते हुए जातिविशिष्ट नीति अपनाना कई लोगों को रास नहीं आएगा, लेकिन महिलाओं के लिए आरक्षण की व्यवस्था करना तथा वह स्थान समाज में सबको समान रूप से बांटना अगर आवश्यक हो तो ऐसा किए बगैर कोई चारा नहीं।

इस स्पष्टीकरण के बाद अलग–अलग जातियों की परस्परविरोधी मांगें और हकों का मिलान करने की ये योजना एक सीधी–सादी कोशिश है यह बताते हुए मैं सभी हिंदु नेताओं से इनको स्वीकार करने की विनती करता हूं। सबकी सब तरह की मांगें पूरी करने का सामर्थ्य भले इस योजना में ना हो, भले इस दृष्टि से यह योजना अधूरी लगे तब भी इसका स्वीकार कर भारत के भावी राजनीतिक विकास का मार्ग खोल देने की मैं आप सबसे अनुशंसा करता हूं। कृपा कर इस बात को न भूलें कि इस योजना पर टीका टिप्पणी करते हुए इसका धिक्कार करने वाले बार–बार कहने के बावजूद इससे बेहतर और सबको संतुष्ट करने वाली दूसरी योजना बना नहीं पाए हैं। आखिर भारतीयों द्वारा ही इस मसले का स्थायी और संतोषजनक हल निकाला जा सकता है। हमारी इस योजना से कुछ समय तक ही सही अगर दिक्कतें दूर हुई और विकास का मार्ग खुल गया तब भी हम समझेंगे कि बहुत कुछ हुआ। इस निर्णय के बारे में हमें इतनी ही उम्मीदें हैं। इस मसले की तरह ही कई और महत्वपूर्ण मसले हैं और हम चाहते हैं कि इस मसले के हल होने के बाद भारतीय नेताओं का अन्य मसलों की तरफ भी ध्यान जाए और विकास के मार्ग पर हम एक–एक कदम आगे बढ़ते जाएं। जातियों में आपसी सौहार्द पैदा होकर जब तक सब एक होकर

काम नहीं करते तब तक राष्ट्र के विकास का मार्ग खुलता नहीं, उस पर देश आगे नहीं बढ़ सकता इस बात को ध्यान में रखते हुए इस महत्वपूर्ण अवसर पर हम उम्मीद करते हैं कि नेता अपनी अगली नीति इसके आधार पर बनाएंगे।

अस्पृश्य समाज की दृष्टि से यह निर्णय अधूरा, असंतोषजनक और अन्यायकारक है

पिछली 17 तारीख को मि. रेम्से मैकडोनल्ड ने हिंदु, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, अस्पृश्य के बारे में जिस निर्णय की घोषणा की उसके संदर्भ में अम्बेडकर ने अपना अभिप्राय इस तरह व्यक्त किया है -

प्रधानमंत्री मि. मैकडोनल्ड जातियों के बारे में जो निर्णय देंगे, वह सबको हर तरह से संतोषजनक लगेगा, ऐसी किसी को उम्मीद नहीं थी। इसलिए, अस्पृश्य समाज की ओर से गोलमेज सम्मेलन में मैंने और मेरे सहकारी मित्र रावबहादुर श्रीनिवासन ने अस्पृश्यों के लिए जिन राजनीतिक हकों की मांग की थी वे अस्पृश्यों को मिल जाएंगे, ऐसी उम्मीद हमें भी नहीं थी। हमारी मांगों में थोड़ा बहुत बदलाव करना पड़ेगा ऐसा हमें लगा था, हालांकि, निर्णय देख कर मुझे लगता है कि हमारी मांगों में बड़ी निर्ममता से काट—छांट की गई है। प्रांत विधिमंडल में जो जगहें हमारे हिस्से रखी गई हैं, वे बहुत कम हैं जिसके कारण अस्पृश्यों के बहुत कम प्रतिनिधि विधिमंडल में जा सकेंगे और जाहिर है कि उनका वांछित प्रभाव नहीं दिखाई देगा। यानी कि, अपने हितों की रक्षा करने के लिए अस्पृश्यों को जितनी कम से कम जगहें मिलनी चाहिए थीं वे भी इस निर्णय के कारण न मिल पाने की वजह से कहा जा सकता है कि यह निर्णय अस्पृश्य समाज के हितों के दृष्टिकोण से अधूरा, असंतोषजनक और अन्यायकारक है।

अस्पृश्यों के बारे में खुलेआम बरती गई इस विषमता और उनके साथ किए गए पक्षपात के ही दर्शन इस निर्णय से हो रहे हैं और कोई इसका समर्थन कैसे कर सकता है? इस तरह का ॒न्याय नहीं होना चाहिए था और खासकर पंजाब के बारे में तो इस पक्षपातपूर्ण रवैये ने सभी हदें पार कर दी हैं। अन्य राज्यों में अस्पृश्यों को कुछ जगहें तो पृथक रूप से मिली हुई हैं, किन्तु पंजाब में अस्पृश्यों के हिस्से कोई भी राजनीतिक हक या प्रतिनिधित्व नहीं आया है। मुझे पंजाब के बारे में जो प्रत्यक्ष जानकारी मिली है, उसे देख कर लगता है कि उत्तर भारत के अन्य सभी प्रांतों से पंजाब प्रांत के अस्पृश्यों की स्थिति बड़ी दयनीय है। अमानवीय सामाजिक अत्याचारों और अन्यायों के नीचे पंजाब का अस्पृश्य समुदाय पिस रहा है। इसलिए पंजाब के अस्पृश्य समाज को अपने हितों की रक्षा के लिए तथा उन्नति के लिए पृथक चुनाव की और आरक्षित जगहों की खास जरूरत थी।

वास्तविकता यही होते हुए भी अंग्रेज सरकार ने पंजाब के अस्पृश्यों को सुविधाएं क्यों नहीं दीं, यह समझ में नहीं आता। मेरे विचार में इस अन्याय की एक ही वजह हो सकती है, और वह है पंजाब के बाकी वर्गों का जबरदस्त ताकतवर होना और अस्पृश्यों का दीन और असहाय होना। पंजाब के अन्य जबरदस्त ताकतवर समाज के हल्ला मचाए जाने पर घबराकर उनकी संतुष्टि के लिए तथा उनके हिस्से की सहूलियत के लिए सदा से सताए गए अस्पृश्य समाज को जिसकी निहायत जरूरत थी, वह उन्हें न देकर सरकार ने उनका न्यायपूर्ण हिस्सा अन्य समाजों को दे दिया है। इससे साफ जाहिर है कि यह अन्याय है। उल्टे ईसाई और एंग्लो इंडियन, जिनकी आबादी पंजाब में बिल्कुल नगण्य है और जिन पर किसी तरह के सामाजिक जुल्म और अन्याय भी नहीं होते, उन्हें तक सरकार ने अलग जगहें और खास प्रतिनिधित्व दिया है। इस पक्षपात के कारण अस्पृश्यों के साथ होने वाले अन्यायपूर्ण व्यवहार से एक बार फिर पर्दा उठा है।

अंग्रेज सरकार के निर्णय में इस तरह के अन्याय और पक्षपात होने की वजह से उस पर सोच–विचार के लिए ऑल इंडिया डिप्रेस्ड क्लासेस फेडरेशन की जो बैठक जल्द ही होने वाली है उसमें इस निर्णय को अस्पृश्यों का अनुमोदन मिलेगा ऐसा मुझे नहीं लगता।[1]

इस निर्णय की घोषणा होते ही गांधीजी ने उसके विरोध में आमरण अनशन करने की घोषणा की और अपने अनशन के निर्णय की जानकारी प्रधानमंत्री जे. रॅम्से मैकडोनल्ड को दिनांक 14 अगस्त, 1932 को लिखे पत्र द्वारा दी।

म. गांधी का प्रधानमंत्री के नाम पत्र

येरवडा केंद्रीय जेल
दिनांक 18 अगस्त, 1932

प्रिय मित्र को,

अस्पृश्य वर्ग के प्रतिनिधित्व के बारे में मैंने सर सैम्युअल होअर के नाम 11 मार्च, के दिन जो खत लिखा था, उसकी तरफ निश्चय ही उन्होंने आपके तथा मंत्रीमंडल के सदस्यों का ध्यान आकर्षित किया होगा। उस पत्र को इस पत्र का हिस्सा मानकर ही यह पत्र पढ़ा जाए।

1. तत्रैव

अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधित्व के बारे में ब्रिटिश सरकार ने जो निर्णय दिया है, वह मैंने पढ़ा और उस पर विचार करना टाल दिया। सर होअर को जो खत मैंने लिखा और दिनांक 13 नवंबर, 1931 के दिन सेंट जेम्स राजमहल में गोलमेज सम्मेलन की अल्पसंख्यक लोगों की बैठक में, मैंने जिस नीति की घोषणा की थी, उसके अनुसार मुझे आपके इस निर्णय का प्राणांत तक विरोध करना होगा। और ऐसा करने का एक ही मार्ग है और वह है प्रायोपवेशन से अन्न ग्रहण ना कर उपवास करना। नमक या सोडा खाकर अथवा न खाते हुए केवल जलप्राशन करते हुए अनशन करना और मृत्यु को अपनाने के अपने निर्णय की मैं घोषणा कर रहा हूं। प्रायोपवेशन के दौरान ब्रिटिश सरकार ने अगर खुद होकर या लोगों के दबाव में आकर अपने निर्णय के बारे में फिर से विचार किया और अपनी जातिनुसार अलग चुनाव क्षेत्र की योजना का प्रस्ताव वापिस लिया तो मेरा अनशन रुकेगा। अस्पृश्यों के प्रतिनिधि सार्वजनिक चुनाव क्षेत्रों से चुन कर आएं और सबको समान अधिकार हों। भले उनका क्षेत्र चाहे जितना व्यापक क्यों न हो। जातियों से संबंधित निर्णय अगर इस तरह से बदला नहीं गया तो सामान्य स्थितियों में दिनांक 20 सितंबर की दोपहर से मेरा आमरण अनशन शुरू होगा।

यहाँ के अफसरों से मैं कह रहा हूं कि मेरा यह पत्र आप तक तार द्वारा भेजा जाए, ताकि आपको काफी पहले ही सूचना मिल जाए। डाक द्वारा धीमी गति से भी यदि यह खत आप तक पहुंचेगा तब भी मैं आपको काफी समय दे रहा हूं। मेरा यह कहना है कि यह खत तथा सर होअर को लिखा मेरा पत्र जितनी जल्दी संभव हो प्रकाशित करें। जेल के नियमों का निष्ठापूर्वक पालन करते हुए मैंने इन दोनों खतों की जानकारी सरदार वल्लभ भाई पटेल और श्री महादेव देसाई के अलावा और किसी को नहीं दी है। हालांकि यदि आप फुर्सत दें तो मेरी इच्छा है कि उन खतों का जनता पर परिणाम हो और इसीलिए उन खतों को प्रकाशित करने की मांग मैंने की है।

अपने आमरण अनशन के निर्णय के बारे में मुझे दुख है। किंतु एक धार्मिक व्यक्ति इस दृष्टि से भी, और मैं धार्मिक हूं ऐसा मैं समझता हूं, इससे अलग कोई राह बची नहीं है। सर होअर को लिखे खत में मैंने कहा ही है कि, सरकार अगर अपने ऊपर आने वाले दबाव के कारण मुझे बंधनमुक्त करे तो, या अब मुझे जेल से छोड़ भी दिया जाए, तो मैं अपने अन्नत्याग की कसम को तोड़ नहीं सकता। मेरा प्रायोपवेशन जारी रहेगा। क्योंकि इस जाति के बारे में लिए गए इस निर्णय का विरोध अन्य किसी मार्ग से नहीं किया जा सकता, ऐसा मुझे लगता है। और, मैं केवल सम्मानजनक ढंग से ही अपनी मुक्तता चाहता हूं। अन्य किसी तरह से करवाने की मेरी बिल्कुल भी इच्छा नहीं है।

हो सकता है कि अस्पृश्यों को अलग चुनाव क्षेत्र देना, उनके और हिंदू धर्म के लिए घातक है, यह मेरी सोच गलत हो और मेरा मत विकृत हो। अगर यही

वास्तविक स्थिति हो तो इससे यही साबित होगा कि मेरे जीवन का बाकी दर्शन भी गलत है। अगर यह बात सही हो, तो अन्नत्याग से प्राणत्याग करना मेरी गलती का प्रायश्चित्त होगा। इसके साथ ही जो असंख्य स्त्री–पुरुष आज बच्चों की तरह मेरे बुद्धिचातुर्य पर विश्वास करते हैं उनके ऊपर का बोझ भी कम होगा। लेकिन अगर मेरा मत सही होगा, और उसके सही होने के बारे में मुझे रत्तीभर भी दुविधा नहीं है, तो भी जो करने की मैंने ठानी है वह मेरे जीवन को सार्थक करने वाला ही सिद्ध होगा। चौथाई शतक से अधिक समय तक मैं इसी जीवनमार्ग से चल कर आया हूं और ऐसा भी नहीं कि मुझे इसमें भरपूर यश न मिला हो।

आपका विश्वासपात्र मित्र,
(हस्ताक्षर)
एम के गांधी[1]

ब्रिटिश प्रधानमंत्री का जवाब

10, डौनिंग स्ट्रीट
दिनांक 8 सितम्बर, 1932

प्रिय मि. गांधी,

आपका पत्र मिला। मुझे बडा विस्मय और खेद हुआ। साथ में यह भी लगा कि सरकारी निर्णय में अस्पृश्यों के बारे में क्या अर्थ निकला कि जिससे आपको गलतफहमी हुई और आपने वह खत लिखा। हिंदू समाज से अस्पृश्यों को हमेशा के लिए अलग करने के लिए शुरु से आप कड़ा विरोध करते आए हैं, यह हमें पता है। आपने अपना मत अल्पसंख्यक मंडल के आगे तथा 11 मार्च को सर होअर सॅम्युअल को लिखे खत में साफ तौर पर लिखा ही है। आपके मन को हिंदू समाज के बडे वर्ग का अनुमोदन है, यह भी हम जानते हैं। इसीलिए अस्पृश्यों को हक देने के मसले पर सोचते हुए हमने आपके मत पर गहराई से सोचा।

अस्पृश्यों की संस्थाओं से जो अनगिनत अर्जियां हमारे पास आई हैं, और उनकी राहों में जो दिक्कतें हैं जिन्हें मानने से आपको भी ऐतराज नहीं, उन सब के बारे में हमने सोचा, और हमें लगा कि विधिमंडल में योग्य अनुपात में प्रतिनिधित्व पाना अस्पृश्यों का अधिकार है और उनके उस हक की रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है। साथ ही, हम इस बात का भी खयाल रख रहे थे कि किसी तरह अस्पृश्य समाज हिंदुओं

1. डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र : चां. भ. खैरमोडे, खंड 5, पृ. 22–23

से अलग न हो। विधिमंडल में अस्पृश्यों को प्रतिनिधित्व मिलने के खिलाफ मैं नहीं हूं ऐसा आपने भी अपने 11 मार्च के खत में दर्ज किया हुआ है।

मतदान में समानता

सरकारी योजना के अनुसार पिछड़े वर्ग (डिप्रेस्ड क्लासेस) हिंदू जाति का ही एक हिस्सा रहेंगे और उन्हें हिंदू चुनाव क्षेत्र में समान मताधिकार मिलेंगे। साथ ही, पहले बीस सालों तक हिंदु जाति का हिस्सा रहते हुए, पृथक चुनाव क्षेत्र के कारण पिछड़े वर्ग अपने हकों एवं हितों का संरक्षण कर सकेंगे। इसलिए वर्तमान स्थिति में उन वर्गों का अलग होना जरूरी है, जहां पिछड़े वर्गों को इस तरह पृथक चुनाव क्षेत्र दिए जाएंगे उस जगह सामान्य हिंदू चुनाव क्षेत्र से मतदान का उनका हक उनसे नहीं छीना जाएगा, बल्कि हिंदू जाति में उनका स्थान बना रहे, इसके लिए उन्हें मतदान का दोहरा हक दिया जा रहा है। इसके अलावा हमने सभी पिछड़े वर्गों को सामान्य हिंदू चुनाव क्षेत्र में भी शामिल किया है, जिसके परिणामस्वरूप स्पृश्य हिंदू उम्मीदवार को अस्पृश्य मतदाता से और अस्पृश्य उम्मीदवार को स्पृश्य मतदाता से मतयाचना करनी पड़ेगी। इस तरह हिंदू समाज में एकता बनी रहेगी।

पिछड़े वर्गों को पृथक चुनाव क्षेत्र देने के पीछे एक खयाल यह भी था कि एक जिम्मेदार राज्यव्यवस्था की शुरुआत में अपनी शिकायतों को वाणी देने के लिए तथा विशिष्ट उद्दीष्टों के खिलाफ होने वाले निर्णयों का सामना करने के लिए नौ में से सात प्रांतों में उनके अपने अलग उम्मीदवारों का चुना जाना बेहद जरूरी है। इससे उन पर किसी और के हाथों से पानी पीने की नौबत नहीं आएगी। फिलहाल जगहें आरक्षित रख कर उनके लिए प्रतिनिधि चुनने के सवाल पर हमने सोचा नहीं है। जाति के आधार पर मुसलमानों को दिए गए अलग चुनाव क्षेत्र से ज्यादा अस्पृश्यों को दिए गए अलग चुनाव क्षेत्र का उन्हें फायदा होगा जैसे कि, मुसलमान सामान्य चुनाव क्षेत्र से मतदान नहीं कर पाएंगे और न वे उम्मीदवार बन पाएंगे जबकि कोई भी योग्य अस्पृश्य सामान्य चुनाव क्षेत्र से अपना मत दे पाएगा और उम्मीदवार भी बन सकेगा। पृथक चुनाव क्षेत्र के कारण मुसलमानों को जो चुनाव क्षेत्र मिले हुए हैं उनमें बढ़ोतरी होने की कोई उम्मीद नहीं है, उन्हें लगभग हर प्रांत से जनसंख्या के अनुपात से अधिक जगहें मिली हुई हैं। लेकिन अस्पृश्यों को हमने जान–बूझ कर कम जगहें दी हैं। सिर्फ अस्पृश्यों द्वारा चुने गए कुछ एक प्रतिनिधि तो विधिमंडल में चुन कर आएं यही उन्हें पृथक चुनाव क्षेत्र देने के पीछे हमारा यह उद्देश्य है।

आपके संकेत से मुझे तो यही लग रहा है, कि आप यही चाहते हैं कि समाज में बुरी स्थिति को प्राप्त अस्पृश्यों का उनकी तरफ से बोलने वाला कोई प्रतिनिधि चुनने का जो फायदा सरकार उन्हें देना चाहती है, वह उन्हें न मिले और उसके लिए प्राणों

की आहुति जैसे भयंकर दिव्य तक करने के लिए आप तैयार हो गए हैं। आपका यह प्रायोपवेशन अस्पृश्यों को संयुक्त चुनाव क्षेत्र मिले इसलिए है, ऐसा मुझे नहीं लगता। क्योंकि वह तो उन्हें दे दिया गया है। हिंदू समाज में एकता रहे, इसके लिए अगर आपका यह प्रायोपवेशन है, ऐसा आप कहेंगे तो वह भी मैं आपका झूठ ही कहूंगा। क्योंकि सरकारी योजना में उसका भी प्रबंध किया गया है। इन सभी बातों पर गौर करते हुए मुझे ऐसा लगता है कि वास्तविक स्थिति पर ध्यान न देते हुए आपने यह निर्णय लिया है। जाति के बारे में निर्णय पर सोचे बगैर जब सब लोगों ने हमसे अनुरोध किया तभी हमने अल्पसंख्यकों के सवाल पर ध्यान देने का निर्णय लिया। अब उस निर्णय में एक शर्त के साथ ही फेरबदल संभव है और वह शर्त है कि अगर सभी जातियां मिल कर कोई योजना बनाएं, तो सरकार उसे मान्यता देगी।

आप चाहते हैं कि सर सैम्युअल होअर को भेजे पत्र के साथ आपका सभी पत्राचार प्रकाशित किया जाए। इसके लिए मेरी भी सहमति है। आखिर में मैं आपसे सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूं कि सरकारी निर्णय पर एक बार फिर आप पूर्ण रूप से गौर करें और निर्णय करें कि आप जो भयंकर दिव्य करने जा रहे हैं उसका क्या औचित्य है।

आपका,
(हस्ताक्षर)
जे. रैम्से मैकडोनल्ड[1]

महात्मा गांधी की प्रायोपवेशन की प्रतिज्ञा

मि. रैम्से मैकडोनल्ड के उपर्युक्त पत्र के उत्तर में म. गांधी ने दिनांक 9 सितंबर, 1932 के दिन येरवडा जेल से जो खत भेजा उसका आशय इस प्रकार था –

प्रिय मित्र,

आपने स्पष्टतापूर्ण, विस्तृत पत्र भेजा उसके लिए मैं आपका अत्यंत आभारी हूं। हालांकि दुख भी है कि आपने पत्र से वह मतलब निकाला है, जो मेरे मन में भी नहीं था। पिछड़े वर्गों के हितों की मैं बलि चढ़ाने जा रहा हूं, ऐसा जो आरोप आपने मुझ पर लगाया है, उसका जवाब वह दिव्य है जो मैं करने जा रहा हूं। इस तरह का निश्चय मुझे न्यायपूर्ण लगता है। अस्पृश्यों को दो बार मतदान का अधिकार देने से हिंदू समाज में पड़ने वाली फूट को टाला नहीं जा सकता। अस्पृश्यों को पृथक चुनाव क्षेत्र देने से उनका भला तो नहीं होगा, लेकिन उससे हिंदू समाज में विष के बीज बोए गए हैं। मैं बस इतना ही कहना चाहता हूं कि लोगों की आस्था के और धर्म के मसलों का हल आप सही ढंग से निकाल ही नहीं सकते।

---

1. डॉ. बी. आर. अम्बेडकर चरित्रा : चां. भ. खैरमोडे, खण्ड 5, पृ. 23–25

अस्पृश्यों को जरूरत से अधिक प्रतिनिधित्व देने के खिलाफ मैं नहीं हूं। जो बात मुझे कांटे की तरह चुभ रही है, वह यह कि अस्पृश्यों को हिंदू समाज से कायदे–कानून बना कर अलग किया जा रहा है। इस सरकारी योजना के कारण जिन महापुरुषों ने आज तक अस्पृश्योद्धार का आंदोलन बिना किसी स्वार्थ के शुरू किया, उनकी कोशिशें धरी रह जाएंगी। इसी कारण प्रयोपवेशन का दिव्य करने के लिए मैं तैयार हुआ। अपने व्रत के लिए मैंने केवल अस्पृश्यों के सवाल ही चुने हैं। इसका मतलब यह नहीं कि आपके निर्णय की बाकी बातें मुझे मंजूर हैं। मेरे मतानुसार इस निर्णय की अन्य बातें भी उतनी ही दोषपूर्ण एवं ऐतराज करने योग्य हैं।

आपका स्नेहाकांक्षी
(हस्ताक्षर)
एम के गांधी[1]

अखबारों के संवाददाताओं ने जब डॉ. अम्बेडकर से पूछा कि गांधीजी ने आत्महत्या की प्रतिज्ञा की है उसके बारे में आपको क्या लगता है, तब उन्होंने कहा,

"गांधीजी ने, 'अन्नत्याग कर मैं आत्महत्या करूंगा', कह कर जो धमकी दी है वह कोई सीधा–सादा या ईमानदार युद्ध नहीं है, वह राजनीति की पैंतरेबाजी है। अपने प्रतिस्पर्धियों को मनवाने का यह सीधा मार्ग या ईमानदार कोशिश नहीं है। इसीलिए गांधीजी के इस डराने–धमकाने वाले बयान का मेरे लिए कोई महत्व नहीं। इसीलिए उनकी इस घोषणा से मेरा मत उनके अनुकूल भी नहीं बन सकता।

मेरा निर्णय पक्का है। हिंदुओं के स्वार्थ के लिए अपने प्राणों की बाजी लगा कर अगर उन्हें अस्पृश्यों के खिलाफ संग्राम छेड़ना ही हो तो अस्पृश्य समाज को भी अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए तथा अपनी सुरक्षा के लिए अपने प्राणों की बलि देने के लिए तैयार होना पड़ेगा।

गांधीजी अपनी बात साफ तौर पर कहें

यह पूछने पर कि, गांधीजी के प्रण के बारे में आप क्या कुछ भी नहीं करेंगे?, डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि, गांधीजी ने जो पत्राचार प्रसिद्ध किया है, उससे किस बात के लिए उन्होंने अपने प्राणों को दांव पर लगाया है, इसका खुलासा नहीं होता है। अस्पृश्यों से वे किस बात की अपेक्षा कर रहे हैं, हिंदुओं की तरफ से अस्पृश्यों को कौन से अधिकार देने के लिए वे तैयार हैं, तथा उनके इस तरह सुलह के लिए क्या हिंदू समाज तैयार है, जिसके लिए उन्होंने अपने प्राणों को दांव पर लगाया है

---

1. तत्रैव : पृ. 25–26

इस बारे में साफ–साफ और भरोसेलायक खुलासा जब तक नहीं होता, तब तक मैं भी इस मामले में निश्चित रूप से कुछ कह नहीं पाऊंगा।[1]

15 सितंबर, 1932 को गांधीजी ने मुंबई सरकार को खत लिखकर अपने आमरण अनशन की भूमिका स्पष्ट की। 21 सितंबर, 1932 को वह खत अखबारों में प्रकाशित करने के लिए दिया गया। इस खत में गांधीजी ने स्पष्ट किया है कि, मेरा अनशन अस्पृश्यों के राजनीतिक हकों के लिए ही है तथा अस्पृश्यों के जीने–मरने का सवाल पूर्ण रूप से धार्मिक होने के नाते मैंने इस प्रश्न पर अपना ध्यान केंद्रित किया है और इस समस्या का हल पाना मेरा परम कर्त्तव्य – पवित्र कर्म होने के नाते मैं यह अनशन कर रहा हूं।

'My fast has a narrow application. The depressed classes' question being predominently religious matter, I regard it as specially my own by reason of lifelong concentration on it. It is a sacred personal trust which I may not shirk.'[2]

गांधी जी के आमरण अनशन के खिलाफ अपनी भूमिका को स्पष्ट करने वाला परिपत्र डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने प्रकाशित किया।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का सार्वजनिक बयान

सभी पक्षों के नेताओं की परिषद के दिन यानी सोमवार दिनांक 19 सितंबर, 1932 के दिन बाबासाहेब अम्बेडकर ने महात्मा गांधी के आमरण अनशन के बहाने अपनी योग्य भूमिका को विस्तार से समझाते हुए तथा महात्मा गांधीजी का अनशन किस तरह अस्पृश्यों के अधिकार और हित के खिलाफ है यह स्पष्ट करते हुए एक सार्वजनिक बयान जारी किया। अंग्रेजी में लिखे उस बयान का हिंदी अनुवाद यहां दिया जा रहा है –

"अंग्रेज सरकार ने अपनी खुशी से या जनमत के दबाव में आकर कोई और चारा न होने के कारण अस्पृश्य समाज को जो पृथक चुनाव क्षेत्र का जो अधिकार दिया है, उसे यदि सार्वजनिक रूप से रद्द न किया, तो मैं आमरण अनशन कर अपने प्राण त्याग दूंगा", यह महात्मा गांधी की प्रतिज्ञा सुन कर मैं हैरान रह गया। अपनी आत्महत्या की प्रतिज्ञा से महात्मा गांधी ने मुझे कैसी कठिन और विपरीत स्थितियों में ला खड़ा किया है तथा मुझ पर कितनी बड़ी संकटपूर्ण जिम्मेदारी का बोझ लाद दिया है, यह हर कोई आसानी से समझ सकता है।

---

1. जनता : 17 सितंबर, 1932
2. डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र : चां. भ. खैरमोडे, खंड 5, पृ. 26

जाति से संबंधित निर्णय का सवाल अन्य सवालों की तुलना में बड़ा मामूली होने की बात खुद गांधीजी ही गोलमेज सम्मेलन में कर रहे थे। फिर, जो बात उनके मत में मामूली थी उसके लिए उन्होंने इतना बड़ा 'प्राणत्याग का' निर्णय क्यों लिया गया, यह मेरी समझ से परे है! उनके जैसे व्यक्ति की नजर में जाति से संबंधित मसले हिंदुस्तान के संविधान की किताब के साथ जोड़े जाने वाले परिशिष्ट की तरह माने जाने चाहिए। जातियों से संबंधित मसले उस पुस्तक का प्रमुख या महत्वपूर्ण हिस्सा नहीं माना जाता। हिंदुस्तान को पूरी राजनीतिक आजादी मिलनी चाहिए इस मसले पर गांधीजी ने गोलमेज सम्मेलन में बहुत जोर दिया था। इस बात के लिए वे कितने आग्रही बन गए थे। इस तरह राजनीतिक आजादी जैसे महत्वपूर्ण और बड़े मुद्दे पर अगर गांधीजी अपने प्राणों की बाजी लगाते तो शायद वह ठीक भी लगता। लेकिन राजनीतिक आजादी जैसे उनकी नजर में भी महत्वपूर्ण होने वाले मसले छोड़ कर अस्पृश्यों के मतदान का एक साधारण प्रश्न चुनकर उसे वे उछाल देते हैं और उसका बहाना बना कर, अपने प्राणों की बाजी लगाते हैं यह सिरदर्द पैदा करने वाले आश्चर्य का एक खेदजनक, परेशानीमूलक तथा क्षोभकारी नमूना है। पृथक चुनाव क्षेत्र केवल अस्पृश्यों को ही नहीं मिला है, भारतीय ईसाई, एंग्लो इंडियन, मुस्लिम, सिक्खों को भी पृथक चुनाव क्षेत्र मिले हैं। इतना ही नहीं तो जमींदार वर्ग, मजदूर वर्ग और व्यापारी वर्ग के लिए भी खास या पृथक चुनाव क्षेत्र की योजना बनाई गई है। शुरुआत में मुसलमान और सिक्खों के अलावा अन्य सभी के पृथक चुनाव क्षेत्र पर गांधीजी ने आपत्ति की थी और विरोध किया था। अब केवल मुसलिम या सिक्खों को ही नहीं बल्कि अस्पृश्यों के साथ–साथ जमींदार, व्यापारी, एंग्लो इंडियन, ईसाई आदि वर्गों के लिए भी अलग चुनाव क्षेत्र दिए गए हैं। अगर विरोध करना ही था तो गांधीजी इन सभी वर्गों के अलग चुनाव क्षेत्रों को विरोध करते। लेकिन गांधीजी ने उन सभी को छोड़ कर केवल अस्पृश्य समाज को मिली सहूलियतों का बहाना करते हुए उस योजना के विरोध में अपने प्राणों की बाजी लगाने का संकल्प किया।

अस्पृश्य समाज को कुछ समय तक पृथक चुनाव क्षेत्र देने से बड़ा अनर्थ होगा, यह गांधीजी की भयावह धारणा पूरी तरह काल्पनिक है। मुस्लिम और सिक्खों को पृथक चुनाव क्षेत्र देने से राष्ट्र के टुकड़े होंगे, ऐसा अगर गांधीजी को नहीं लगता और वे उस बात के लिए राजी होते हैं, तो फिर अस्पृश्यों को पृथक चुनाव क्षेत्र मिलने से हिंदू समाज टुकड़ों में बंट जाएगा, कहते हुए उसके विरोध में आमरण अनशन पर बैठना गांधीजी को कैसे तर्कपूर्ण और न्यायपूर्ण लगता है? अस्पृश्य वर्ग के अलावा किसी अन्य वर्ग को पृथक चुनाव क्षेत्र मिलने से अगर गांधीजी की विवेकबुद्धि विरोध नहीं करती है, किन्तु अकेले अस्पृश्यों को अलग चुनाव क्षेत्र मिलने से उनका विवेक क्यों जाग जाता है? और अपने प्राणों तक की बाजी लगा कर उसके खिलाफ दंड ठोंक कर खड़ा क्यों होता है? इस अनोखी न्यायप्रियता को क्या कहें?

प्राप्त होने जा रहे स्वराज्य में बहुसंख्यक वर्ग के अत्याचारों से अल्पसंख्यक वर्ग की रक्षा के लिए यदि किसी वर्ग को सबसे पहले और सबसे अधिक राजनीतिक रियायतों की खास जरूरत है तो वह अस्पृश्य वर्ग ही है। सोचने–समझने वाले व्यक्ति को अब तक यह बात समझ में आ चुकी होगी, ऐसा मुझे लगता है। अस्पृश्य समाज ही एक ऐसा वर्ग है, जिसके पास आसपास चल रहे भीषण जीवनकलह में टिके रहने की बिल्कुल ऊर्जा नहीं है। जिस धर्म का उसने आश्रय लिया और जिस धर्म के बंधनों ने उसे जकड़ रखा है, उसी धर्म ने आज उसे सम्मानित जीवन देने की जगह कोढ़ी का घिनौना जीवन जीने के लिए विवश किया है। धर्म ने उसकी इन्सानियत को कलंकित कर दिया है, रौंद डाला है। रोजमर्रा के सीधे–सादे व्यवहारों में भी सम्मानपूर्वक हिस्सा लेने की योग्यता इस धर्म ने अस्पृश्य लोगों में नहीं बचने दी है। आर्थिक दृष्टिकोण से भी अस्पृश्य वर्ग पूरी तरह परावलंबी है। रोज की रोटी के लिए भी उसे उच्चवर्णीय हिंदुओं पर निर्भर रहना पड़ता है। स्वाभिमानपूर्वक और आजादी के साथ जीने का या अपना पेट पालने का कोई मार्ग अस्पृश्यों के लिए खुला नहीं है। इस गुलामी से मुक्त होने का मौका उसे कभी न मिले इसके लिए स्वावलंबन की और आत्मोन्नति की उसकी सभी राहें रोकने की खास कोशिशें जानबूझ कर की जा रही हैं। स्पृश्य हिंदुओं में आपस में कितने भी जातिभेद हों, अस्पृश्यों की छोटी से छोटी कोशिश को भी दबाने के लिए, उन पर कई तरह के जोर–जुल्म करने के लिए सभी हिंदु निर्ममता से एक हो जाते हैं यह हर गांव का प्रत्यक्ष अनुभव है कहा जाए तो अत्युक्ति नहीं होगी।

ऐसी स्थितियों में सभी सोचने–विचारने वाले और न्यायी लोगों को कोशिश करनी चाहिए कि इन सभी तरह से मजबूर और स्पृश्य हिंदुओं के जुल्मों से पीड़ित अस्पृश्य समाज को आत्मरक्षा के लिए तथा इस तीव्र जीवनकलह में टिके रहने के लिए राजनीतिक सत्ता का थोड़ा हिस्सा मिलना ही चाहिए।

मुझे उम्मीद थी कि अस्पृश्य समाज का कोई भी सच्चा हितचिंतक उस समाज को राजनीतिक सत्ता का ज्यादा से ज्यादा हिस्सा मिले, इसके लिए जी–जान जुटा कर कोशिश करेगा। लेकिन गांधीजी के विचारों की गंगा अजीब और उल्टी दिशा में बहती हुई दिखाई दे रही है। इसीलिए मैं उनके इन विचित्र विचारों को समझ ही नहीं पा रहा हूं। अस्पृश्य समाज के हाथों में राजनीतिक सत्ता के देने के लिए गांधीजी बिल्कुल कोशिश नहीं कर रहे हैं, उल्टे अंग्रेज सरकार की जाति से संबंधित नीतियों के कारण जो थोड़ा बहुत राजनीतिक हिस्सेदारी का लाभ अस्पृश्यों को मिलने वाला है वह भी अस्पृश्यों के हाथों से छीन लेने का तथा अस्पृश्य समाज को किसी तरह की राजनीतिक हिस्सेदारी प्राप्त न हो, राजनीतिक दृष्टि से उनका अस्तित्व नजरों से ओझल ही रहे इसके लिए गांधीजी की सारी कोशिशें चल रही

हैं। अल्पसंख्यकों का करारनामा (माइनॉरिटीज पैक्ट) बनने से पहले से ही अस्पृश्यों को थोड़ी–सी भी राजनीतिक सत्ता न मिले इसलिए मुसलमानों को साथ में लेकर गांधीजी ने कोशिशें कीं। अस्पृश्यों के राजनितिक अधिकारों की मांगों का विरोध करने के लिए आप मेरी मदद करें फिर मैं आपकी चौदहों मांगें मान लूंगा, जैसा षड्यंत्र और धोखाधड़ी गांधीजी ने मुसलमानों के साथ मिल कर की। हालांकि, मुस्लिम प्रतिनिधियों की अच्छाई के कारण गांधीजी की वह कोशिश कामयाब नहीं हो पाई। इस तरह के षड्यंत्र में उनका साथ देने से मुसलमानों ने इनकार किया। मुसलमान अगर गांधीजी के वश में चले जाते तो अस्पृश्यों की लाचारी दुगुनी होती। तब अस्पृश्य समाज गांधीजी और मुसलमान इन दो पाटों के बीच पिसता। लेकिन मुस्लिम समुदाय ने इस मामले में गांधीजी का साथ नहीं दिया, और अस्पृश्य समाज पर मंडराता यह दोधारी संकट टल गया।

जाति से संबंधित अंग्रेजों के निर्णय का गांधीजी क्यों विरोध कर रहे हैं यह मेरी समझ में नहीं आ रहा। गांधीजी कहते हैं कि इस निर्णय से अस्पृश्य समाज हिंदू समाज से अलग हो जाएगा! लेकिन डॉ. मुंजे ऐसा नहीं मानते! और डॉ. मुंजे कट्टर हिंदुत्ववादी और कठोर हिंदू हितसंरक्षक माने जाते हैं! विलायत से लौटने के बाद डॉ. मुंजे ने जो भाषण दिए उनमें उन्होंने साफ तौर पर कहा है कि अंग्रेज सरकार के जाति संबंधी निर्णय से अस्पृश्य समाज हिंदू समाज से बिल्कुल अलग नहीं हो रहा। उल्टे, डॉ. मुंजे यह हांकते फिर रहे हैं कि ब्रिटिश सरकार ने जो निर्णय दिया है, वह उनके जैसे सच्चे हिंदू हितैषियों की कोशिशों का फल है। अस्पृश्य समाज को हिंदू समाज से अलग करने की डॉ. अम्बेडकर की जो कोशिश थी वह ब्रिटिश सरकार के इस निर्णय से नाकामयाब हो गई है! इस निर्णय से अस्पृश्य समाज से अलग नहीं हो रहा। इस घटना का श्रेय डॉ. मुंजे के कथनानुसार खुद उनको नहीं जाता हो, लेकिन उनका कहना गलत नहीं है। डॉ. मुंजे की तरह मुझे भी लगता है कि ब्रिटिश सरकार के इस निर्णय से अस्पृश्य समाज हिंदू समाज से राजनीतिक स्तर पर अलग नहीं हो रहा। ऐसा अगर है तो इस निर्णय के कारण अस्पृश्य समाज हिंदू समाज से अलग हो रहा है यह गांधीजी का डर निराधार और मिथ्या है। जो डर डॉ. मुंजे जैसे कट्टर हिंदू सभा वाले को नहीं लगता वह गांधीजी जैसे राष्ट्रीय माने जाने वाले नेता को लगे और हिंदुओं के हितों की रक्षा के लिए इस मसले को लेकर वे अपने प्राणों की बाजी लगाने के लिए तैयार हो जाएं, यह बेहद आश्चर्यजनक और गूढ़ माना जाना चाहिए! डॉ. मुंजे जैसों को भी जिस निर्णय में कुछ अलग होने का भूत नहीं डराता उस निर्णय में ऐसा कुछ होगा यह शक भी किसी और के मन में नहीं आना चाहिए।

अंग्रेज सरकार की ओर से प्रधानमंत्री रैम्से मैकडोनल्ड ने जो निर्णय किया है तथा अस्पृश्यों के बारे में उसमें जो योजना दी है, वह हिंदुओं को संतुष्ट रखने के योग्य है ऐसा मुझे लगता है। इतना ही नहीं, अस्पृश्य समाज के लिए अलग चुनाव क्षेत्र की मांग करने वाले राजा, गवई, पी. बालु जैसे लोग हैं, वे भी इस निर्णय में खोट ढूंढते न फिरे। ऐसी स्थिति में रावबहादुर राजा ने एसेंब्ली के अपने भाषण में इस सरकारी निर्णय के बारे में जो हल्ला मचाया तथा जो शिकायतें कीं वह भी देखने–सुनने लायक तमाशा था! कल परसों तक जो अलग चुनाव क्षेत्र के उपासक थे, उच्च वर्णिय हिंदुओं के जातिभेदमूलक जुल्मों के कट्टर दुश्मन थे उन रायबहादुर के हृदय में संयुक्त चुनाव क्षेत्र के बारे में तथा उच्चवर्णिय हिंदुओं के बारे में नया–नया पैदा हुआ यह असीम प्रेम देख कर हर किसी का मनोरंजन होगा। रायबहादुर राजा के मन में उपजे इस आकस्मिक प्रेम की जड़ों में गोलमेज सम्मेलन में स्थान न मिलने की वजह से गंवाए नाम को फिर से कमाने की लालसा कितनी है, तथा उनके इस नए प्रेम में ईमानदार हृदय परिवर्तन का कितना हिस्सा है, यह जांचने के पचड़े में मैं अभी पड़ना नहीं चाहता।

सरकार ने जो निर्णय दिया है उसके दो मुद्दों के खिलाफ रायबहादुर राजा तमतमा रहे हैं। अस्पृश्यों को उनकी संख्या के अनुपात में कम जगहें मिली हैं, यह उनका पहला मुद्दा है, तथा, इस निर्णय के कारण अस्पृश्य समाज हिंदुओं से अलग हुआ, यह उनके दुख का दूसरा मुद्दा है। रायबहादुर जी की इस शिकायत से मैं भी सहमत हूं कि जनसंख्या के अनुपात में अस्पृश्यों को कम जगहें मिली हैं। लेकिन इसके लिए गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने गए हमारे दो प्रतिनिधि जिम्मेदार हैं। हमने अस्पृश्यों के हितों के साथ विश्वासघात किया, यह आरोप हम पर लगाने से पहले रायसाहब इस बात पर भी तनिक गौर कर लेते तो बेहतर होता कि केंद्रीय समिति में थे, तब उन्होंने क्या गुल खिलाए थे। उस समिति की रिपोर्ट में मद्रास को 150 में से केवल 10, मुंबई को 144 में से केवल 8, बंगाल को 200 में से सिर्फ 8, उत्तर प्रदेश के अस्पृश्यों को 182 में से केवल 8, पंजाब में 150 में से केवल 6, बिहार और उडीसा में 150 में से केवल 6, मध्यप्रांत और वर्हाड में 125 में से केवल 8 और असम में अस्पृश्य एवं अन्य पिछड़ी जंगली जातियों के लिए 75 में से केवल 9 जगहें दी गई थीं। यह बंटवारा अस्पृश्यों की जनसंख्या के अनुपात में बहुत ही अपर्याप्त है और रायबहादुर राजा इस समिति के एक सदस्य थे! सरकार ने जातियों के बारे में जो निर्णय किया है, उसमें अस्पृश्यों के लिए कम जगहें होने के लिए हमें जिम्मेदार ठहराने से पहले वे इस बात का संतोषजनक स्पष्टीकरण दे सकते हैं क्या? इस पर विचार करें कि वे जब केंद्रीय समिति के सदस्य थे तब हुई इस काट–छांट को उन्होंने कैसे चुपचाप बर्दाश्त किया? उस समय इसके खिलाफ कोशिशें क्यों नहीं कीं इसका जवाब क्या रायबहादुर राजा के पास है? अगर रायबहादुर को लगता था

कि अस्पृश्यों को उनकी जनसंख्या के आधार से जगहें मिलना अस्पृश्य समाज का जन्मसिद्ध अधिकार है, आत्मरक्षा के लिए उसे वह अधिकार पूर्ण रूप से प्राप्त होना बेहद आवश्यक और अपरिवर्तनीय घटना है, तो फिर ऐसा ही होना चाहिए इस बात पर वे आग्रही क्यों नहीं रहे? केंद्रीय समिति का सदस्य बनने का जो मौका उन्हें मिला था उसका उन्होंने इस बात को मनवाने के लिए लाभ क्यों नहीं उठाया?

रायबहादुर की इस शिकायत में कि, सरकार ने जो निर्णय दिया है, उसके कारण अस्पृश्य समाज को हिंदू समाज से अलग किया गया है, मुझे कोई दम नजर नहीं आता। (डॉ. मुंजे को भी ऐसा नहीं लगता।) पृथक चुनाव क्षेत्र के खिलाफ अगर रायबहादुर राजा जैसे लोगों की विवेकबुद्धि को आपत्ति हो तो ऐसा नहीं कि उन पर पृथक चुनाव क्षेत्र से चुनाव लड़ने या अपना मत देने की जबरदस्ती की जा रही हो। बल्कि इस निर्णय ने उन्हें संयुक्त या सार्वजनिक चुनाव क्षेत्र से उम्मीदवार बन कर चुनाव लड़ने का और मत देने का अधिकार दिया गया है। वे इस अधिकार का प्रयोग कर सकते हैं। हिंदुओं के दृष्टिकोण में आमूलचूल बदलाव आया है। तथा अस्पृश्यों के बारे में इन छह–सात महीनों में ही (उनके डॉ. मुंजे से हाथ मिलाने के बाद से) स्पृश्य हिंदुओं का विचार परिवर्तन हुआ है ऐसा रायबहादुर राजा डंके की चोट पर सबसे कहते फिर रहे हैं। उनके इस नए कथन पर जिन अस्पृश्य लोगों को विश्वास नहीं होता और जो अलग चुनाव क्षेत्र की मांग करते हैं, उन लोगों को यकीन दिलाने के लिए ही सही रायबहादुर राजा जैसे लोगों को चाहिए कि वे संयुक्त चुनाव क्षेत्र से लड़ कर चुनाव जीत कर दिखाएं और सिद्ध करें कि अस्पृश्यों को अलग चुनाव क्षेत्र की जरूरत नहीं है। अस्पृश्य समाज के बारे में प्रेम और सहानुभूति का दावा करने वाले हिंदू भी रायबहादुर राजा जैसे लोगों को चुन कर दिखा दें कि उनका कहना सही है। इस निर्णय से अपने मत की सत्यता साबित करने का मौका उन्हें भी उपलब्ध हो रहा है।

सरकार का यह निर्णय अन्य मामलों में भले अधूरा हो, लेकिन अलग चुनाव क्षेत्र की मांग करने वालों को और संयुक्त चुनाव क्षेत्र चाहने वालों को संतुष्ट करने की व्यवस्था एक साथ इस निर्णय से हो गई है। इस नजरिए से और सिर्फ अस्पृश्य समाज के बारे में ही कहना हो तो यह जरूर कहा जा सकता है कि यह निर्णय सुलह (Compromise) की तरह है और इसीलिए दोनों पक्षों की मान्यता इसे मिलना सही रहेगा।

गांधीजी के बारे में बोलना हो तो वे क्या चाहते हैं यही साफ नहीं है। कुछ लोग यह मानते हैं कि गांधीजी भले ही पृथक चुनाव क्षेत्र के खिलाफ हों लेकिन वे संयुक्त चुनाव क्षेत्र और आरक्षित जगहों के खिलाफ नहीं हैं। लेकिन यह बहुत बड़ी भूल है। आज भले उनका मत बदला हो, लेकिन जब लंदन में थे तब उन्होंने स्पष्टता से घोषणा की थी कि अस्पृश्यों को हिंदुओं से अलग राजनीतिक अस्तित्व देने की

कोई भी योजना उन्हें पसंद नहीं है। अस्पृश्यों को ही नहीं वरन् संयुक्त निर्वाचन क्षेत्र की आरक्षित जगहों की योजना के बारे में भी उन्होंने लंदन में यही कहा था कि इस तरह का आरक्षण उन्हें पसंद नहीं है और वे इसका पुरजोर विरोध करते हुए प्राणांतिक अनशन भी कर सकते हैं। वयस्क मताधिकार और चुनावों में अपना मत देने के अधिकार के अलावा अस्पृश्यों को अन्य कोई भी कानूनी रियायत देने के लिए गांधीजी तैयार नहीं थे। लंदन में उन्होंने यही नीति अपनाई हुई थी। आगे मेरे साथ बातचीत करते हुए मुझे समझाने के लिए एक योजना उन्होंने आखिर में प्रस्तुत की। जो योजना उन्होंने प्रस्तुत की थी वह किसी काम की नहीं थी, लेकिन उसे भी कानूनी जामा पहनाने के लिए या अनुमोदन देने के लिए वे तैयार नहीं थे।

गांधीजी की इस योजना के अनुसार अस्पृश्य वर्ग का उम्मीदवार चुनाव लड़ेगा। उसी जगह से उच्च वर्ग के अन्य उम्मीदवार भी चुनाव लड़ेंगे। इस तरह चुनाव होने के बाद अगर अस्पृश्य उम्मीदवार हार जाए तो वह नतीजों के खिलाफ मुकदमा दायर करे। उस अर्जी के अनुसार अगर न्यायाधीश निर्णय दे कि 'अस्पृश्य वर्ग का होने के कारण उम्मीदवार चुनाव हार गया' तो मैं इस तरह की व्यवस्था करूंगा कि चुना गया कोई उच्चवर्णीय उम्मीदवार उसके लिए अपनी जगह से इस्तीफा दे देगा। उस जगह के लिए फिर से होने वाले चुनावों में अस्पृश्य उम्मीदवार और अगर चाहे तो इस्तीफा देने वाला उच्चवर्णीय उम्मीदवार भी खड़ा रह सकता है। अगर वह फिर से हार जाता है तो फिर इसी तरह फिर कोशिश कर सकता है। इस तरह गांधीजी की यह योजना फिर से उम्मीदवार बनो, फिर से हारो वाला एक बचकाना खेल ही था! संयुक्त संघ और आरक्षित जगहें अगर अस्पृश्य स्वीकारेंगे तो गांधीजी की विवेकबुद्धि को संतुष्टि मिलेगी मानने वाले यह समझ लें कि उनकी यह मान्यता निराधार है। केवल इसीलिए गांधीजी की इस योजना को आज मैंने यहां व्यक्त किया है। अब अगर गांधीजी ने कोई नई योजना तैयार की हो तो पहले वे उसे प्रस्तुत करें। मेरे इस आग्रह की वजह भी यही है। गांधीजी का पहले क्या कहना था, पहले उनकी योजना क्या थी, मैं जानता हूं। उनका जवाब भी मैंने उन्हें दे रखा है। उन पुरानी बातों पर फिर से माथापच्ची करने का कोई मतलब नहीं है। इसलिए, मेरा आग्रह है कि अगर कोई नई बात हो तो गांधीजी उसे प्रस्तुत करें।

गांधीजी या कॉंग्रेस को जो योग्य और न्यायपूर्ण लगता है वही अस्पृश्य समाज के साथ घटेगा इस मौखिक आश्वासन को ही केवल स्वीकारना मेरे लिए संभव नहीं होगा यह मैं पहले ही बता देता हूं। मेरे अस्पृश्य बंधुओं के हितों की रक्षा के महत्वपूर्ण और दिल से जुड़े मसले के बारे में मैं केवल शाब्दिक आश्वासनों और कागजी करारनामों का भरोसा नहीं कर सकता। गांधीजी महात्मा होंगे लेकिन वे अमर नहीं हैं, न ही सर्वव्यापी हैं। अगर हम मान भी लें कि कॉंग्रेस उच्च वर्ग के वैभव को बरकरार रखने वाली, गरीबों को रौंदने वाली और अपनी हुकूमत में रखने

की कोशिश करने वाली अरिष्टकारी संस्था नहीं है, फिर भी, जरूरी नहीं कि हमेशा वही सबसे बड़ा पक्ष बनी रहेगी। यह भी जरूरी नहीं कि काँग्रेस का दबदबा हमेशा कायम रहे। अस्पृश्यता खत्म करना और अस्पृश्य जनता को हिंदू समाज में शामिल कर लेने की कोशिश करने वाली महान आत्माएं इस भूमि में इससे पूर्व भी पैदा हुई हैं हालांकि उनमें से किसी को इस काम को पार लगाने में सफलता नहीं मिली। कई महात्मा पैदा हुए और मर गए परंतु अस्पृश्य अस्पृश्य ही रहे।

हिंदू समाज सुधारकों के सुधारों की गति मुल्ला की दौड़ की तरह सीमित है और उनका भरोसा ऐन समय पर साथ छोड़ देने वालों जैसा है, यह मैं महाड़ और नासिक की घटनाओं से जान चुका हूं। सो, जो अस्पृश्यों के सच्चे हितचिंतक हैं, वे यह सलाह हर्गिज नहीं देंगे कि ऐन समय पर धोखा देने वाले हिंदू सुधारकों के हाथ में अस्पृश्यों का भविष्य सौंपा जाए। ऐसे लोग अस्पृश्यों की मदद नहीं कर सकते जो अपने जातभाइयों का मन न दुखाने या उन्हें गुस्सा न दिलाने के चक्कर में ऐन समय पर अपने तत्वों के साथ समझौता कर लें।

यही वास्तविक स्थिति होने की वजह से कानूनी सुरक्षा बंधनों के प्रति मुझे आग्रही रहना ही होगा। गांधीजी की अगर यह इच्छा है कि जातियों के बारे में निर्णय बदला जाए, तो उन्हें दूसरी योजना बनानी होगी और आज अस्पृश्यों को जो भी कुछ प्राप्त है, उससे अधिक हित अपनी नई योजना में है और उस योजना को अमली जामा पहनाने के लिए जरूरी सभी कानूनी व्यवस्था उसमें है यह साबित करके भी दिखाना होगा। मुझे आशा है कि, गांधीजी ने जो यह अंतिम चेतावनी का मार्ग स्वीकारा है उसे वे छोड़ देंगे। पृथक चुनाव क्षेत्र की मांग के पीछे हमारी मंशा हिंदू समाज का अहित करने की नहीं है। हमारा भविष्य हम अपने हाथ में रखना चाहते हैं। स्पृश्य हिंदुओं की खुशी पर या उनकी मर्जी की लहर पर हमारा भविष्य पहले की तरह पूरी तरह निर्भर न हो इसी एक उद्देश्य से प्रेरित होकर हमने यह मांग की है। गांधीजी अंग्रेजों से कहते हैं कि गलतियां या पाप भी करने का अधिकार हमें प्राप्त है। हमें भी वह अधिकार प्राप्त है और होना भी चाहिए, इतना ही हम गांधीजी से कहना चाहते हैं और हमारा अधिकार छीन लेने की कोशिश वे नहीं करेंगे, ऐसी उनसे उम्मीद रखता हूं।

अन्नत्याग कर अपने प्राणों का त्याग करने की दुर्धर प्रतिज्ञा उन्हें किसी दूसरे दुर्धर कार्य के लिए सम्हाल कर रखनी चाहिए थी। हिंदू और मुसलमान या स्पृश्य और अस्पृश्य वर्गों के बीच के दंगों या खूनखराबे को रोकने के लिए अगर उन्होंने यह प्रतिज्ञा की होती तो मैं उसकी सहजता और उसका महत्त्व समझ सकता था। उनकी इस योजना से न अस्पृश्य समाज का हित होगा और न ही उनके दुखों का भार कम होगा। गांधीजी को इन परिणामों का अहसास हो या न हो लेकिन उनके

कृत्यों की परिणति आखिर अत्याचारों में ही होगी। देश भर की अस्पृश्य जनता को उनके हिंदू अनुयायियों से या चाहनेवालों से परेशान किया जाएगा। लेकिन इन अत्याचारों की वजह से वे हिंदू समाज से जुड़े नहीं रहेंगे, दूर चले जाएंगे। गांधीजी अगर अस्पृश्यों से यह सवाल करें कि, आप हिंदू समाज चाहते हैं या राजनितिक समाज की हिस्सेदारी चाहते हैं, तो मुझे यकीन है कि वे यही कहेंगे कि हिंदू समाज से अधिक राजनीतिक सत्ता ही हमें महत्वपूर्ण लगती है। उनसे यह साफ तौर पर कहने के लिए और गांधीजी को आत्महत्या की प्रतिज्ञा से बचाने के लिए अस्पृश्य जनता एकदम तैयार होगी। इन सभी बातों का ऐसे परिणामों को ध्यान में रखते हुए गांधीजी अगर शांतिपूर्ण ढंग से सोचेंगे तो इन उपायों से होने वाला अपना जयकार, या अपनी प्रतिज्ञा की विजयशाली पूर्तता प्राप्त करने लायक है, ऐसा गांधीजी को भी शायद नहीं ही लगेगा।

इससे भी अधिक चिंता की बात यह है कि गांधीजी अपने इन कृत्यों से हिंदू जनता के अदमनीय और नाकारा विकारों को बेलगाम कर रहे हैं। उनके इस कृत्य के कारण स्पृश्य और अस्पृश्य के बीच की द्वेषबुद्धि खत्म नहीं होगी बल्कि बढ़ जाएगी। दोनों समाजों के बीच का अंतर पाटे जाने के बजाय बढ़ेगा। क्योंकि, गोलमेज सम्मेलन में गांधीजी की नीतियों का जब मैंने अस्पृश्यों की ओर से विरोध किया तो इस देश में मेरे खिलाफ बड़ा हल्ला मचाया गया। राष्ट्रीय कहलाने वाले सभी हिंदू पत्रकारों ने तथा देशभक्तों ने मुझे राष्ट्रद्रोही आदि कई गालियां देने की और मेरे बारे में जहां तक संभव हो सके उतनी गलतफहमियां फैलाने की मानो ठान ली थी। दुनिया के सामने यह दिखाने के लिए कि पूरा अस्पृश्य समाज मेरे खिलाफ है, स्पृश्य वर्ग के हिंदू सुधारकों ने भी कई झूठी संस्थाएं बनाईं और ऐसी सभाओं की जाली रिपोर्टें बनवाई जो कभी हुई ही नहीं। उन बड़ी–बड़ी जाली रिपोर्टों को राष्ट्रीय अखबारों में प्रकाशित करने की भी उनमें मानो होड़ मची थी। मेरी तरफ से आने वाले पत्र और अन्य डाक को दबाने का और उन्हें प्रकाशित न करने का मानो सभी राष्ट्रीय अखबारों ने जालसाज़ी ही की थी।

'सिल्वर बुलेट' यानी पैसों का लालच देकर अस्पृश्य वर्ग के कुछ लोगों को मेरे खिलाफ नारेबाजी करने के लिए खड़ा किया गया। कुछ जगहों पर स्पृश्य और अस्पृश्य समाज में झड़पें होकर थोड़ा बहुत खून भी गिरा। ये सभी अनिष्ट एवं अनर्थकारी बातें अधिक बड़े पैमाने पर न घटें, ऐसा अगर गांधीजी को लगता हो तो कृपा कर वे एक बार फिर से सोचें और भविष्य की अनर्थकारी घटनाओं की शृंखला को टालें। मुझे नहीं लगता गांधीजी ऐसा अनर्थ चाहते होंगे। लेकिन अगर वे अपनी प्राणघातक प्रतिज्ञा से पीछे नहीं हटे तो अपने किए से कोई भयंकर परिणाम न निकलें ऐसी उनकी इच्छा हो तो भी उसके कोई मायने नहीं रहेंगे। दिन बीतने के बाद रात होती है, यह जितना

स्वाभाविक है उतना ही गांधीजी की इस प्रतिज्ञा की परिणति अत्याचार और अनर्थ में होना स्वाभाविक है। आखिर मैं जनता का ध्यान एक बात की ओर दिलाना चाहता हूं और वह यह है कि इस बारे में मुझे किसी से भी बातचीत करने की जरूरत नहीं है कहने का पूरा अधिकार मुझे होते हुए भी सिर्फ गांधीजी के लिए इस सवाल से संबंधित उनकी किसी भी नई योजना के बारे में सोचने के लिए मैं तैयार हूं। और मुझे आशा है कि गांधीजी ऐसा कठिन और नाजुक समय मुझ पर कभी आने नहीं देंगे कि जब उनके प्राण और मेरे लोगों के हक इन दोनों में से किसी एक बात को मुझे चुनना पड़े। क्योंकि अगर ऐसा समय आए तो मैं किस बात को चुनूंगा यह बिन बताए ही समझा जा सकता है। चाहे कुछ भी हो स्पृश्य समाज के हाथों मैं अपने समाज का भविष्य सौंपने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं हूं.... [1]

"अस्पृश्यों को पृथक चुनाव क्षेत्र मिलने पर, उसे निरस्त करने के लिए मैं अपने प्राणों की बाजी लगा कर कोशिश करूंगा", अपनी इस प्रतिज्ञा पर 20 सितंबर, 1932 से अमल करना गांधीजी ने तय किया है इस कारण पूरे हिंदुस्तान के हिंदू नेताओं की अतिशीघ्र बैठक 19 सितंबर 1932 के दिन लेना तय हुआ। हिंदुस्तान के सर्वश्रेष्ठ नेता माने जाने वाले महात्मा गांधी के प्राणों की बाजी लगते देख बनारस से पंडित मालवीयजी मुंबई आए। राजेंद्रप्रसाद, सी. राघवाचार्य, पंडित कुंजरू, डॉ. मुंजे, टी. प्रकाशम, डॉ. चौथिराम, स्वामी सत्यानंद, मि. अणे आदि अन्यान्य प्रांतों के प्रतिनिधि उपस्थित थे। अस्पृश्य समाज से रा. ब., एम. सी. राजा, गवई, मि. शिवराज, मि. जगन्नाथम्, मि. धर्मलिंगम, मि. मंडल आदि अन्य प्रांतों से आए लोग थे। मुंबई प्रांत से सर चुनिलाल, डॉ अम्बेडकर, डॉ. सोलंकी, हिराचंद वालचंद, सर सेटलवाड, सर माडगावकर, सर पुरुषोत्तमदास, श्री देवधर, मि. नटराजन, रा. ब. वैद्य, डॉ. देशमुख, दलवी, सुभेदार, सेठ बिड़ला, मि. करंदीकर, सावरकर, शिवतरकर, पी. बालु, निकालजे आदि लोग उपस्थित थे। महिलाओं में से मिसेज कमला नेहरू, पेरनी कैप्टन, मोशोन कैप्टन, सौ. अवंतिकाबाई गोखले, मिसेस अन्नपूर्णाबाई देशमुख, रतनबेन मेहता, मिस नटराजन आदि लोग हाजिर थे।

"इंडियन मर्चेंटस हॉल" में सभा होनी थी। इस परिषद पर महात्मा गांधी का भवितव्य आधारित था। इसलिए परिषद का वातावरण काफी गंभीर था। परिषद को डॉ. अम्बेडकर की नीति पर भरोसा था। डॉ. अम्बेडकर भी परिषद में हाजिर रहेंगे, इस बात का पता चलते ही परिषद के आयोजकों को तथा परिषद में उपस्थित रहने वाले नेताओं को कुछ राहत महसूस हुई। इस परिषद का कोई भी कार्यक्रम पहले से तय नहीं किया गया था।

---

1. जनता : 24 सितंबर, 1932

हर पार्टी के नेताओं में खलबली मची हुई दिखाई दे रही थी। कौन क्या कह रहा है तथा किसके क्या बोलने से परिषद के उद्देश्य के अनुसार किस तरह की सुलह होना संभव है, इसी तरफ सबका ध्यान लगा हुआ था। परिषद के कार्यक्रम के लिए उपयोगी सिद्ध हो इसीलिए डॉ. अम्बेडकर ने अपना मत साफ और निर्भीक ढंग से घोषणा–पत्र के जरिए अखबारों को भेज दिया था। डॉक्टर का वक्तव्य पढ़ कर वहां इकट्ठा हुए नेताओं को आगे की कार्रवाई की रूपरेखा बनाने में और सोचने–विचारने में आसानी हुई।

परिषद की शुरुआत से पहले श्री हिराचंद वालचंद ने कुल कामकाज के बारे में बताते हुए पंडित मालवीय जी को अध्यक्षस्थान ग्रहण करने की विनति की। पंडितजी के चेहरे पर गंभीरता छाई हुई थी। परिषद का कार्य जितना महत्त्वपूर्ण था उतना ही गंभीर भी था। पंडितजी ने अपने भाषण की शुरुआत में सभी नेताओं को इस विकट स्थिति में सुलह की आसान राह निकालने की आवश्यकता बताई। महात्मा गांधी के प्राण बचाने का उद्देश्य सामने रखते हुए दोनों पक्ष जिसे स्वीकार लें ऐसी कोई योजना बनाने की विनति की।

पंडितजी की विनती के अनुसार पहले डॉ. अम्बेडकर बोलने के लिए खड़े हो गए। उन्होंने बड़ी निर्भीकता और ईमानदारी के साथ अपना मत परिषद के सामने रखा। अपना पक्ष रखते हुए उन्होंने कहा,

“परिषद का कार्यक्रम देख कर मुझे लगा कि इसका कोई फायदा नहीं है। महात्मा गांधी हमारी मांगों का विरोध करते हैं। उसके लिए उन्होंने अपने प्राणों की बाजी लगाई है। सबको यह लगना स्वाभाविक है कि महात्मा गांधी के मूल्यवान प्राणों की रक्षा हो। लेकिन अपने प्राणों की बाजी लगाने से पहले गांधीजी को चाहिए था कि वे कोई अन्य योजना लोगों के सामने रखते। आज के हालात के बारे में सोचते हुए मुझे तीव्रता से लगता है कि गांधीजी की नई योजना के बगैर सुलह के सभी तरीके बेकार हैं। और अगर साफ–साफ बताना हो तो इससे आगे तय करने लायक कुछ बचता ही नहीं। इस परिषद में भले गहराई से सोच–विचार हो लेकिन जब तक महात्मा गांधी की असल योजना का साफ–साफ पता नहीं चलता है तब तक कम से कम मुझे तो कोई मार्ग दिखाई नहीं देता है। और मैं आप सब लोगों को भी बता रहा हूं कि मैं इस परिषद के आयोजकों के या यहां के किसी भी नेता की किसी भी योजना के साथ बंधा हुआ नहीं हूं। मैं सिर्फ महात्मा गांधी का कहना क्या है इसी पर सोचूंगा। उनकी योजना के बारे में जब तक कुछ पता नहीं चलता तब तक मैं आगे क्या कह सकता हूं? पहले पता कीजिए कि वे क्या कहना चाहते हैं। साथ ही, स्पृश्य नेता उनके प्रतिनिधि के तौर पर उनके विचार ले आएंगे उसी पर मैं सोचूंगा। किसी भी अस्पृश्य नेता द्वारा लाई गई उनकी किसी योजना पर मैं नहीं

सोचूंगा, यह मैं पहले ही साफ–साफ कह दे रहा हूं। महात्मा गांधी के प्राण बचाने के लिए मैं अपने बंधुओं की न्यायपूर्ण मांगों के साथ खिलवाड़ नहीं करूंगा।"

डॉ. अम्बेडकर का भाषण बहुत ही जोरदार और असरदार हुआ। उनके बाद रा. ब. राजा का भाषण हुआ। उन्होंने भी यही कहा कि महात्मा गांधी की योजना क्या है यह जाने बगैर हम क्या करेंगे, यह साफ–साफ नहीं कहा जा सकता। मि. पी. बालू में स्वाभिमान की इतनी कमी होगी, यह हमने कभी सोचा नहीं था। स्पृश्य जनता के सामने विनम्रता प्रकट करने की सीमा को लांघते हुए वे बोले लेकिन उनका भाषण खोखला था। शायद उन्हें लगा हो कि उन्होंने ओवर बाउंडरी मारी है। मद्रास के शिवराज, मि. नटराजन, मि. दलवी, मि. मंडल, मि. करंदीकर, डॉ. मुंजे, सौ. गोखले, पं. कुंजरू आदि नेताओं के भाषण हुए। मुंबई के नेताओं का एक प्रतिनिधिमंडल महात्मा गांधी से मिलने के लिए तथा उनके विचार हिंदू नेताओं के सामने रखने के लिए पुणे गया।

उनके आने के बाद महात्मा गांधी से मिलने वाले संदेश के बाद आगे का कार्यक्रम तय होना था। इसी बात के साथ परिषद के पहले दिन का कामकाज अगले दिन तक के लिए स्थगित किया गया।

सोमवार को बैठक पूरी होने के बाद रात में पुणे से प्रतिनिधिमंडल लौटा। प्रतिनिधिमंडल और तेजबहादुर सप्रू, बॅ. जयकर, सी. राघवाचार्य, मि. बिर्ला आदि लोगों के साथ रात 12 बजे तक बिड़ला हॉल में बातचीत हुई। इस निजी बैठक में महात्मा गांधी की नई योजना के बारे में आपसी बातचीत हुई।[1]

मंगलवार 20 सितंबर, 1932 के दिन घड़ी में दोपहर बारह की घंटी बजने के बाद गांधीजी ने अनशन शुरू किया। उस वक्त उन्होंने वहीं अखबारों के प्रतिनिधियों से मुलाकात कर वे आमरण अनशन क्यों कर रहे हैं इसका खुलासा किया। वह 21 सितंबर, 1932 को "टाइम्स ऑफ इंडिया" में प्रकाशित हुआ। उसमें गांधीजी ने कहा था, मेरा आमरण अनशन मानवी धर्म की रक्षा (A fight for humanity) के लिए है। मेरा अनशन अस्पृश्यों को पृथक निर्वाचन क्षेत्र न मिले इसके लिए है। अस्पृश्यों को संवैधानिक आरक्षण मिलने के खिलाफ नहीं।" (My fast is only against separate electorates and not against statutory reservation of seats.)[2]

बातचीत के लिए सर तेजबहादुर सप्रू, बॅ. जयकर, पंडित मालवीय, मथुरादास वसनजी की स्पृश्य वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में एक समिति बनाई गई थी। उस

1. जनता : 24 सितंबर, 1932
2. डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र : चां. भ. खैरमोडे, खंड 5, पृ. 42

दिन बॅ. जयकर की ओर से डॉ. अम्बेडकर को सुबह दस बजे बिड़ला हाऊस में बुलाया गया था। डॉ. अम्बेडकर डॉ. सोलंकी के साथ गए भी थे। बिड़ला हाऊस में बॅ. जयकर, तेजबहादुर सप्रू और पंडित मदनमोहन मालवीय के साथ महात्मा गांधी की नई योजना पर चर्चा हुई। इस नई योजना के आधार से केवल सुलह–सफाई के तौर पर एक तात्कालिक योजना बनाना तय हुआ।

दोपहर ठीक बारह बजे, दूसरे दिन के काम की शुरुआत हुई। लेकिन आज विशेष चर्चा किए बगैर एक छोटी–सी कमेटी का गठन कर, समझौते से निर्णय तैयार करने की बात पहले से तय की गई थी। पहले पुणे होकर आए प्रतिनिधिमंडल के सर चुनिलाल मेथा ने महात्मा गांधी का समझौते से संबंधित नया निर्णय बैठक में सबके सामने रखा। आज बैठक में सर तेज बहादुर सप्रू, बॅरिस्टर जयकर आदि लोग उपस्थित थे। अध्यक्ष पंडित मालवीय जी ने सभा की शुरुआत करने से पहले सबको बताया कि यह जरूरी है कि सभा का काम संक्षेप में हो इसलिए बेवजह चर्चा को टाल कर आगे की कार्रवाई के लिए एक छोटी समिति का गठन करना होगा। उसके बाद चुनिलाल जी ने म. गांधी का कहना क्या है यह बताया–

1. म. गांधी अस्पृश्यों को पृथक चुनाव क्षेत्र देने के विरोध में हैं।

2. साथ ही, संयुक्त निर्वाचन क्षेत्र और आरक्षित जगहों की योजना के लिए भी वे राजी नहीं हैं। फिर भी मुंबई में हुई अखिल हिंदू परिषद में आरक्षित जगहों के बारे में अगर पहले से तय की गई कुछ बातों के साथ अगर निर्णय तैयार किया जाए तो उन्हें आपत्ति नहीं होगी, हालांकि यह भी नहीं कहा जा सकेगा कि उसे उनकी मान्यता होगी। अगर कोई समझौता हुआ तो शायद वे उसे अपनी सहमति देंगे। इस दौरान सर चुनीलाल ने आरक्षित जगहों के बारे में संतोषजनक तरीके से जानकारी नहीं दी, इसलिए सर सेटलवाड को बातों का स्पष्टीकरण देना पडा था।

महात्मा गांधी की योजना के बाद डॉ. अम्बेडकर बोलने के लिए उठे। उनका आज का भाषण बहुत ही उत्साहवर्धक और हृदयस्पर्शी हुआ। उन्होंने कहा,

"आज के कठिन हालात में हो रही इस बातचीत में मेरी हालत अन्य सभी की तुलना में बहुत ही विचित्र–सी है। शांति की इस सुलह में सिर्फ मुझे अपने लोगों के न्यायपूर्ण अधिकारों की सुरक्षा के लिए खलनायक की भूमिका निभानी पड़ रही है। अपने इस न्यायपूर्ण और लोकहित के काम को करते हुए, मुझे चाहे जितनी मुश्किलों का सामना ही क्यों न करना पड़े, इतना ही नहीं, अगर किसी ने पास ही के बिजली के खंभे पर मुझे तुरंत फांसी पर चढ़ाया, तब भी मैं उसकी परवाह नहीं करूंगा। आज हमारे सामने जो सवाल उपस्थित हैं वे केवल भावनाओं के सहारे हल नहीं किए जा सकते, गुलामी में पिस रहे हमारे अनगिनत बंधुओं के न्याय अधिकारों के

लिए कानूनी ढंग से हमें यह सवाल हल करना है। यहां केवल विवेकबुद्धि से काम नहीं चलेगा, महात्मा गांधी की योजना पर सोचने–विचारने के लिए कुछ अवधि तो अवश्य ही लगेगी। फिर भी महात्मा गांधी को परिषद की ओर से एक प्रस्ताव तैयार कर 10–12 दिनों तक अनशन करने से रोकना होगा। हालांकि पंडित मालवीयजी का कहना है कि यह बात लगभग असंभव है।"

इस प्रकार पूरी तरह अलग निर्वाचन क्षेत्र छोड़ने के लिए तैयार नहीं होने की बात कही। स्वतंत्र निर्वाचन क्षेत्र न हो तो सुलह असंभव है, यह तब तक बाकी लोग भी समझ गए थे। इसीलिए साइमन कमीशन के सदस्य मेजर एटले ने साइमन कमीशन की रिपोर्ट से जुड़ी मतपत्रिका में मुसलमान लोगों का पृथक निर्वाचन क्षेत्र टालने के लिए प्राथमिक चुनावों की जो योजना बनाई थी, उसी को मान्यता दी गई। उसके बाद अलग निर्वाचन क्षेत्र की मांग छोड़ दिए जाने के कारण अस्पृश्यों का जो नुकसान होने वाला था, उसकी भरपाई के लिए कम्युनल अवार्ड से अधिक रियायतें मिलें तभी सुलह होने की बात डॉ. अम्बेडक रने कमेटी के सदस्यों को बताई और कमेटी के सदस्यों ने उस पर विचार करने का भरोसा दिलाया।

तुरंत चर्चा के लिए मालवीयजी ने एक छोटी–सी कमेटी की नियुक्ति के बारे में सुझाव रखा। उस कमेटी के सदस्यों के नाम भी परिषद को बताए। इस कमेटी में सर तेजबहादुर सप्रू, बॅ. जयकर, पंडित मालवीय, मथुरादास वसनजी और डॉ. अम्बेडकर को शामिल किया गया था।

फिर तय हुआ कि डॉ. अम्बेडकर अपनी पूरी योजना लिख कर ले आएंगे और रात नौ बजे एक बार फिर कमेटी की बैठक बिड़ला हॉल में होगी। साथ ही, डॉ. अम्बेडकर के सुझाव पसंद आ जाए तो बुधवार की सुबह डॉ. अम्बेडकर और कमेटी के सदस्य पुणे जाकर महात्मा गांधी के सामने उसे प्रस्तुत करेंगे। इस दौरान कमेटी के सदस्यों ने दोपहर के कार्यक्रम में एक महत्वपूर्ण बदलाव किया। वह यह था कि डॉ. अम्बेडकर को अपने साथ पहले ही से न ले जाते हुए कमेटी के सदस्य महात्माजी के साथ बातचीत करेंगे और अगर महात्मा जी इच्छा प्रकट करेंगे तो डॉ. अम्बेडकर को बुला लेंगे।

कमेटी द्वारा सोच–विचार के बाद डॉ. अम्बेडकर ने एक नई योजना तैयार की। वे और डॉ. सोलंकी रात 10 बजे बिड़ला हाऊस गए और अपनी योजना उन्होंने कमेटी के आगे पेश की। कमेटी ने उसे मान्यता दी। योजना इस प्रकार थी –

डॉ. अम्बेडकर की नई योजना
भाग 1

महात्मा गांधी के पक्के निर्णय के बारे में पता चलने के बाद डॉ. अम्बेडकर ने सर तेजबहादुर सप्रू, बॅ. जयकर और पंडित मालवीयजी की अनुमति से नयी योजना तैयार की। इस योजना में मुख्यतः प्राथमिक चुनाव, बाद में संयुक्त निर्वाचन क्षेत्रों में आरक्षित जगहों की तरह चुनाव की योजना थी। (यह अलग निर्वाचन क्षेत्र को कुछ नरम नाम दिया गया।) इस योजना में अस्पृश्यों के लिए आगे बताए अनुसार जगहें आरक्षित रखी जाएंगी।

विधिमंडल की जगहें

प्रांत		नई जगहें	कुल जगहें	अवार्ड अनुसार
मद्रास	...	30	215	18
मुंबई	...	16	200	10
बंगाल	...	50	250	10
पंजाब	...	10	175	9
संयुक्त प्रांत	...	40	228	12
बिहार, उडिसा	...	20	175	7
मध्य प्रांत	...	20	112	10
आसाम	...	11	108	4

नई योजना के अनुसार अस्पृश्य समाज को कुल 197 जगहें मिलनी हैं। चुनावों को लेकर पहले दस सालों में अस्पृश्यों के लिए आरक्षित निर्वाचन क्षेत्र की ओर से अस्पृश्य उम्मीदवारों के प्राथमिक चुनाव होंगे। इन प्राथमिक चुनावों में जो दो उम्मीदवार पहले स्थान पर चुन कर आएंगे, वे ही आम चुनावों में उम्मीदवार बनेंगे। दस सालों के बाद प्राथमिक चुनावों का यह तरीका खत्म कर दिया जाएगा और उसकी जगह संयुक्त निर्वाचन क्षेत्र और आरक्षित जगहें आदि चुनाव की पद्धतियों के बारे में सोचा जाएगा।

इस योजना को 20 वर्षों तक जारी रखते हुए अस्पृश्यों के मतानुसार आगे किन शर्तों पर और नीतियों के आधार से प्रतिनिधित्व दिया जाए, इस बारे में निर्णय किया जाएगा। उम्र की कसौटी पर खरे उतरने वाले हर अस्पृश्य को अपना मत देने का अधिकार होगा।

प्रांतिक तथा केंद्रीय विधिमंडल के प्रतिनिधियों की संख्या जनसंख्या पर आधारित हो।

भाग 2

सभी प्रांतों के अस्पृश्य वर्ग को महापालिका, स्थानीय बोर्ड, पंचायती, स्कूल बोर्ड और अन्य स्थानीय संस्थाओं में जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व मिले।

स्थानीय, केंद्रीय तथा वरिष्ठ कचहरियों में जनसंख्या के अनुपात में और शिक्षा की तय योग्यता के अनुसार अस्पृश्य वर्ग के युवकों को नौकरियां मिलें।

बहिष्कृत वर्ग में शिक्षा का योग्य प्रसार हो, इसके लिए हर प्रांत से शिक्षा के लिए जो सरकारी ग्रांट दी जाती है, उसमें से अस्पृश्यों की लोकसंख्या की अनुपात में योग्य हिस्सा दिया जाए।

कनाडा (कॉस्टीट्यूशन ऑफ कैनडा) उपनिवेश में जिस तरह व्यवस्था की गई है, उसी के अनुसार शिक्षा, नौकरियां, सेहत आदि मसलों के बारे में अस्पृश्य वर्ग के साथ अगर न्याय न बरता जाए तो उन्हें गवर्नर या वायसराय के पास अर्जी देकर अपना न्यायपूर्ण अधिकार पाने का नया संवैधानिक अधिकार दिया जाए।

महात्मा गांधी से मुलाकात

इस प्रकार डॉ. अम्बेडकर और डॉ. सोलंकी अपनी उपर्युक्त योजना लेकर बिड़ला हाऊस गए। 'आपकी दी हुई यह योजना लेकर हम अभी तुरंत पुणे जा रहे हैं और महात्माजी को हम ये योजना दिखाएंगे। महात्माजी को अगर ठीक लगी और अगर उन्होंने आपसे मिलने की इच्छा जताई, तो हम आपको बुला लेंगे', कह कर वे सब रात की आखिरी ट्रेन पकड़ कर पुणे के लिए रवाना हो गए। महात्मा गांधी और मुंबई से आए प्रतिनिधियों की बुधवार के दिन सुबह सुबह मुलाकात हुई। तब महात्मा जी ने डॉ. अम्बेडकर से आमने–सामने मुलाकात करने की इच्छा व्यक्त की। और उसके अनुसार दोपहर 1.30 बजे बिड़ला हाऊस से दामोदर हॉल में टेलिफोन कर डॉ. अम्बेडकर को बताया गया कि, महात्मा गांधी ने आपको तुरंत पुणे बुलाया है। जवाब में डॉ. अम्बेडकर ने जवाब भेजा कि वे गुरुवार की सुबह पुणे पहुंच रहे हैं। इसके साथ ही 'अन्य किसी भी अस्पृश्य नेता से मैं बातचीत नहीं करूंगा, सिर्फ महात्मा गांधी से ही बातचीत करूंगा', यह भी उन्होंने स्पष्ट किया। इस तरह बुधवार की रात में बारह बजे की गाड़ी से डॉ. अम्बेडकर और डॉ. सोलंकी महात्मा गांधीजी से बातचीत करने के लिए पुणे गए।

डॉ. अम्बेडकर ने हिंदुस्तान के सभी प्रांतीय अस्पृश्य नेताओं को तार भेज कर तुरंत बुला लिया। मद्रास के सुप्रसिद्ध नेता रा. ब. श्रीनिवासन पहले दिन मुंबई आए और उसी समय मद्रास मेल पकड़ कर पुणे रवाना हुए। उनके साथ श्री शिवतरकर भी गए हैं।[1]

पुणे करार की बातचीत के दौरान बाबासाहेब ने जो रुख अपनाया था, उसके कारण देश भर में उनके बारे में वातावरण कलुषित हुआ। उनके नाम धमकी भरे खत लिखे जाने लगे। उनमें से एक खत गुजराती भाषा में था। उस खत को 1 अक्तूबर, 1932 को जनता अखबार के पृष्ठ क्रमांक 3 पर प्रकाशित किया गया था। खत इस तरह था –

डॉ. अम्बेडकर को कत्ल की धमकी वाला खत मिला

डॉ. अम्बेडकर,

जो तमें दिवस 4 मां महातमा गांधीनी मागणी मंजूर करशो नहीं तो तमारी जान लोवामां आवशे। माटे जो तमारू जीवन तमोने वहालुं होय तो महातमा गांधीजीनी मागणी मंजूर करीने ते ओने उपवास मांथर जलदी छोडावो. आ चेतवणी छेल्ली छे हवे जुदी तकरार छोडी देशो नहीं तो तमारी खून करवामां आवशे.

ली. हरिभाई के. भट
B.P.E.E. ना एक मेंबर अने वर्कर

पुणे के कुछ स्पृश्य वर्ग के युवकों ने बाबासाहेब की जान लेने का गुप्त षडयंत्र रचा था। उसके बारे में खबर 24–9–32 के जनता के अंक में (पृ. 8) दी गई थी जो इस प्रकार थी :–

डॉ. अम्बेडकर की जान को खतरा
पुणे के छात्रों की गुप्त सभा। हत्या की धमकी
पुणे दि. 23–9–32 समय : रात के आठ.
(जनता के खास प्रतिनिधि द्वारा भेजी गई खबर)

दो दिन हुए। बातचीत जारी है। डॉ. अम्बेडकर को दबाने के कई प्रयास किए जा रहे हैं। गवर्नर पर गोली चलाने वाले गोगटे पंथ के, पुणे के रहने वाले कुछ छात्र गुप्त षड्यंत्र रच रहे हैं, ऐसी खबर प्रकाशित हुई है। डॉ. अम्बेडकर को गायब कर देने से कई समस्याएं अपने आप हल हो जाएंगी और गांधीजी की जान भी बचेगी, इस तरह की बातें चल रही हैं। डॉ. अम्बेडकर को जब यह बात बताई तब वह पल भर हंसे। शायद कहना चाहते हों, ऐसी डरपोक मृत्यु से मैं नहीं डरता। लेकिन यहां के अस्पृश्य समाज को डॉ. अम्बेडकर साहेब की सुरक्षा के बारे में बहुत चिंता हो रही है और वे उनकी सुरक्षा के प्रति सचेत हैं। डॉ. बाबासाहेब का अगर बाल भी बांका हो तो भी भयंकर अनर्थ हो जाएगा। उनके खून की एक बूंद भी बहे तो हजारों अस्पृश्य युवक बलिदान के लिए खड़े मिलेंगे। गांधीजी की दुर्दैवी प्रतिज्ञा का अंत ऐसे भयंकर परिणामों के साथ न हो यही सबकी इच्छा है।

गुरुवार दिनांक 22 सितंबर, 1932 के दिन सुबह नौ बजे नेशनल होटल में सर तेजबहादुर सप्रू और बॅ. जयकर डॉ. अम्बेडकर से मिलने आए। उनमें 9 बजे से लेकर 12.30 बजे तक चर्चा हुई। चर्चा में सर्वप्रथम बताया गया कि डॉ. अम्बेडकर ने जो योजना पेश की है उसमें स्वतंत्र निर्वाचन क्षेत्र अगर नहीं भी हो तो भी उनकी बनाई प्राथमिक चुनाव की योजना महात्मा गांधी को पूरी तरह मान्य नहीं है। क्योंकि महात्मा गांधी के मत में उससे पृथक निर्वाचन क्षेत्र की बदबू आती है। इसके अलावा स्वतंत्र निर्वाचन क्षेत्र को लेकर अगर दोनों पक्षों में सुलह हो जाए, तो प्रधानमंत्री मि. रैम्से मैकडोनल्ड को तार द्वारा संदेश भेज कर स्वतंत्र निर्वाचन क्षेत्र की योजना को तुरंत खारिज करने के लिए कहा जाए। अस्पृश्यों की ओर से की जाने वाली मांगों के बारे में आगे कभी सोचा जाएगा, क्योंकि सोचने में वक्त तो लगेगा ही और तब तक अगर महात्माजी का अनशन शुरू रहेगा तो उनकी जान के लिए खतरा पैदा होगा। उस वक्त डॉ. अम्बेडकर ने साफ–साफ कहा कि आपकी सभी मांगों पर शीघ्र विचार होकर उसमें से हमें क्या मिलता है, इस बात का जब तक पता नहीं चलता है, तब तक अस्पृश्यों को मिलनेव ाला स्वतंत्र निर्वाचन क्षेत्र का अधिकार छोड़ने के लिए मैं कभी भी तैयार नहीं होऊंगा। प्रत्यक्ष हाथ में जो चीज है, उसे छोड़ कर किसी भागती चीज के पीछे पड़ने के लिए मैं तैयार नहीं हूं। साथ हीए उन्होंने यह भी साफ किया कि महात्मा गांधी जब तक कम से कम प्राथमिक चुनावों की बात न मानें तब तक हम बातचीत के लिए तैयार नहीं होंगे। अपनी सभी मांगों पर शीघ्र विचार किया जाए। इस तरह, पहली बातचीत में सुलह के कोई लक्षण दिखाई नहीं दे रहे थे। इसके बाद बॅ. सप्रू और बॅ. जयकर यह कहते हुए चले गए कि, आपका जो कहना है, वह हम कमेटी के सदस्यों तक पहुंचाएंगे तथा सबकी अनुमति से अगर तय हुआ कि आपकी और महात्मा जी की मुलाकात हो तो आपको बताएंगे। पहले तय हुआ कि चार बजे महात्मा गांधीजी से मुलाकात होगी, लेकिन येरवडा की जेल से संदेश आया कि कमेटी के सदस्यों के साथ बातचीत करने के कारण महात्मा जी थक गए हैं। आप थोड़ी देर से आएं ताकि उन्हें आराम के लिए कुछ समय मिले। इस संदेश का अनुसरण करते हुए लोग पांच बजे येरवडा जेल पहुंचे। उस वक्त महात्मा गांधी खुले में एक आम के पेड़ के नीचे बिछी खटिया पर लेटे थे। उनके आसपास उनके शिष्यों में से महादेव देसाई, सरोजिनी नायडू, वल्लभभाई पटेल, राजगोपालाचारी, बिड़ला, सर चुनिलाल मेथा आदि लोग बैठे थे। पहले सर तेजबहादुर सप्रू जी ने महात्मा गांधीजी को होटल की घटनाओं का ब्यौरा दिया। डॉ. अम्बेडकर ने करीब ड़े घंटे तक भाषण दिया। उसमें उन्होंने अपनी नई योजना, कम्युनल अवार्ड इन दोनों के गुणदोषों का विश्लेषण किया। इस चर्चा में एक बड़ी ही आश्चर्यजनक बात सामने आई, प्राथमिक चुनावों की बात का गांधीजी विरोध नहीं कर रहे थे, बल्कि वे उसके पक्षधर थे यह उन्होंने साफ–साफ शब्दों में कहा। इतना

ही नहीं उन्होंने स्वतंत्र निर्वाचन क्षेत्र के प्रस्ताव में जो कुछ अच्छा था वह सब लेने के लिए हमारा अभिनंदन भी किया। केवल कुछ एक जगहों पर लागू करने के बजाय आपको काउंसिल में मिलने वाली सभी जगहों पर इसे लागू करें, ऐसी सिफारिश भी उन्होंने की। उसके बाद पहले दिन की बातचीत पूरी हुई।

प्राथमिक चुनावों के लिए महात्मा गांधी की सहमति मिलने से दोपहर में फैला निराशा का वातावरण सिमटने के आसार पैदा हुए। सुलह की आशा निर्माण हुई।

शुक्रवार की सुबह नौ बजे पुणे के सेठ शिवलाल मोतीलाल के बंगले पर डॉ. अम्बेडकर की बची हुई मांगों पर विचार करना तय हुआ। बातचीत में जिन चार विषयों पर विचार–विमर्श होना था वे थे – 1) प्राथमिक चुनावों के लिए कितने लोगों का पैनेल हो। 2) केंद्रीय विधिमंडल में अस्पृश्यों के कितने प्रतिनिधि हों। 3) प्रांत विधिमंडल के अस्पृश्यों को कितनी जगहें दी जाएं। 4) आरक्षण की सुविधा कितने समय तक रहे और उसे हटाना हो तो उसके लिए कौन सी शर्तें हों।

शुक्रवार, 23 सितंबर, 1932

ऊपर बताए गए सवालों पर सोचने–विचारने के लिए पुणे के राजा बहादुर शिवलाल मोतीलाल के बंगले पर शुक्रवार की सुबह 9.30 बजे कमेटी की बैठक बुलाई गई। पहले प्राथमिक चुनाव लड़ने वाले कितने लोगों को आखरी चुनाव लड़ने का अधिकार दिया जाए, इस विषय पर चर्चा हुई। कमेटी के छह–सात हिंदू सदस्यों का आग्रह था कि प्राथमिक चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों में से छह–सात लोगों को आखरी चुनाव लड़ने का अधिकार मिलना चाहिए। डॉ. अम्बेडकर तीन से अधिक उम्मीदवारों को यह अधिकार देने के पक्ष में नहीं थे। लंबी बहस के बाद दोनों पक्ष चार जगहों पर राजी हुए और विवाद को खत्म किया गया। उसके बाद – केंद्रीय विधि मंडल में अस्पृश्यों के कितने प्रतिनिधि हों?– इस प्रश्न पर विचार किया गया। पहले जनसंख्या का अनुपात यानी कुल जनसंख्या का अनुपात या सिर्फ हिंदुओं की जनसंख्या का अनुपात इस विषय पर विचार किया गया। उसमें भी हिंदुओं का आग्रह था कि, अस्पृश्यों की जनसंख्या का हिंदुओं की जनसंख्या के साथ मिलान कर उसी अनुपात में उन्हें प्रतिनिधित्व दिया जाए। कुल जनसंख्या के अनुपात में हमें प्रतिनिधित्व मिले यह डॉ. अम्बेडकर का आग्रह था। राजा–मुंजे करार में जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व देने की बात मानी गई थी उसके अनुसार अब आपको अपने वचनों का पालन करना होगा; राजा–मुंजे करार में जनसंख्या के अनुपात से अधिक प्रतिनिधि मिलेंगे, इस झूठ के सहारे आपने हमारे कुछ लोगों को संयुक्त निर्वाचन क्षेत्र के लिए राजी करवा लिया है। यानी, आपने जो वचन दिया था उसके अनुसार अब आपको चलना होगा आदि मुद्दों पर डॉ. अम्बेडकर ने जोर दिया। उससे एक और

आश्चर्यजनक बात सामने आई, वह थी – डॉ. अम्बेडकर ने जब उपर्युक्त मुद्दा सामने रखा तब उन्हें बताया गया कि राजा–मुंजे करार में जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधि देने की जो बात कही है उसमें जनसंख्या का अनुपात यानी कुल जनसंख्या नहीं वरन् हिंदू जनसंख्या का अनुपात यही मतलब था। सभा में डॉ. मुंजे थे नहीं और मि. राजा को आने से मना कर दिया गया था। सो, इन दोनों के मतानुसार करार का क्या मतलब था यह जाना नहीं जा सका। डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि, मि. राजा ने बार–बार जो कोष्ठक प्रकाशित किए हैं उनके सहारे यह कहा जा सकता है कि उनके लिए इसका मतलब कुल जनसंख्या ही था। उनका जवाब देते हुए कमेटी में कहा गया कि हाल ही में इस विषय पर रा. ब. राजा के साथ चर्चा की गई थी और उन्होंने कहा था, डॉ. मुंजे के साथ जो करार किया गया था, उसमें मेरे मतानुसार जनसंख्या का अनुपात हिंदू जनसंख्या के अनुपात में ही है। रा. ब. राजा और उनकी पार्टी के लोग कितने पराधीन और परावलंबी हो गए थे इसका केवल इसी एक बात से अंदाजा लगाया जा सकता है। हिंदुओं के साथ हाथ मिलाने के लिए अगर अस्पृश्यों के राजनीतिक अधिकारों को दांव पर लगाना पड़े तो उसके लिए भी वे तैयार थे। रा. ब. राजा ने जनसंख्या के अनुपात के बारे में जो कुछ अब कहा था, वह उनकी चालाकी थी, इसमें कोई दो राय नहीं। डॉ. अम्बेडकर को उनकी चालाकी पर से पर्दा उठाने के लिए ज्यादा समय नहीं लगा। आखिर केंद्रीय विधिमंडल परिषद में अस्पृश्यों के लिए सामान्य जगहों में से 18 प्रतिशत जगहें आरक्षित रखने की बात तय हुई और इस तरह प्रश्न का हल किया गया। उसके बाद अस्पृश्यों के संयुक्त निर्वाचन क्षेत्र कितने समय तक रहेंगे और वे किन शर्तों पर खारिज किए जाएंगे इस मसले पर विचार–विमर्श शुरू किया गया। उम्मीद के विपरीत इस प्रश्न पर जंग छिड़ गई। हिंदू नेता चाहते थे कि दस साल के बाद यह रियायत अपने आप खत्म हो जाए। डॉ. अम्बेडकर का मत था कि इस रियायत को कम से कम 15 सालों तक लागू किया जाए और उसके बाद तभी हटाई जाए जब अस्पृश्य वर्ग के मतदाताओं से लिए गए मतों से साबित हो कि बहुमत के कथनानुसार अब उन्हें इस रियायत की जरूरत नहीं है। अगर बहुमत न हो तो रियायत जारी रखी जाए। दोपहर में दो बजे से लेकर रात के साढ़े नौ बजे तक गर्मागर्म बहस हुई। कोई पक्ष पीछे हटने के लिए तैयार नहीं था इसलिए सुलह खत्म होने के आसार नजर आने लगे। आखिर यह तय हुआ कि इस मसले के बारे में दोनों पक्ष अपने मत महात्मा गांधी के सामने रखेंगे और उनका इस मामले में क्या कहना है यह जान लेंगे। रात के 9.30 बजे सब लोग येरवडा के कारागार में महात्माजी से मुलाकात करने गए। पहले डॉ. अम्बेडकर ने अपना पक्ष सामने रखा। उनके बाद हिंदुओं की ओर से पंडित मदन मोहन मालवीय जी बोले। अचरज की बात यह थी कि दोनों पक्षों की बात सुनने के बाद महात्मा गांधीजी ने डॉ. अम्बेडकर के पक्ष में अपना मत दिया। इस निर्णय

के बाद विवाद का एक बड़ा सवाल हल हो गया। लोग करीब 11.30 बजे जेल से शिवलाल मोतीलाल जी के बंगले पर लौट आए। बाकी कामकाज दूसरे दिन करने का निर्णय करते हुए रात 12.30 बजे सभा विसर्जित हुई।

शनिवार 24 सितंबर, 1932

तय कार्यक्रम के अनुसार दूसरे दिन सुबह 8.30 बजे फिर सभा का कामकाज शुरू हुआ। सबको उम्मीद थी कि आज किसी बड़े मुद्दे पर चर्चा नहीं होनी है, इसलिए जल्द ही सुलह होगी और करारनामा बन जाएगा। लेकिन कामकाज की शुरुआत में ही बहस ने उग्र रूप धारण किया। इतनी उग्रता धारण की कि एक बार फिर बहस ने गंभीर रूप धारण किया। पहले पांच सालों के बाद अस्पृश्यों के जनमत संग्रह ;तममितमदकनउ) लिए जाएं और अगर उन्होंने इस रियायत को खत्म करने के विरोध में मत दिए, तो अगले पांच सालों तक फिर उसे जारी रखा जाए और अगले पांच या दस सालों में उसे स्वयंमेव खत्म होने दिया जाए, इस बात पर हिंदू अड़ गए थे। डॉ. अम्बेडकर का कहना था कि पहले दस सालों के बाद जनमत संग्रह परखा जाए। उन्होंने पांच सालों के बाद जनमत संग्रह लेने को मंजूरी देने से इनकार किया। साथ ही कुछ सालों के बाद अस्पृश्य वर्ग के जनमत संग्रह के बगैर यह रियायत खत्म हो जाने की बात का भी उन्होंने पुरजोर विरोध किया। जनमत संग्रह के बगैर यह व्यवस्था कभी भी हटाई न जाए, इस बात पर वह जमे रहे। ऐसे हालात में सबकी मति कुंठित हुई। सबको लगा कि ऐसे में सुलह होना संभव नहीं। एक बार फिर महात्मा जी से मिल कर उनकी राय जानने की इच्छा डॉ. अम्बेडकर ने प्रकट की। उसके अनुसार डॉ. अम्बेडकर, राजगोपालाचारी और मि. बिरला साढ़े ग्यारह बजे येरवा की जेल में महात्मा गांधी से मिलने गए। डॉ. अम्बेडकर ने अपना मत उनके सामने रखा। उसके बाद महात्मा गांधी ने कहा कि आपकी अस्पृश्यों को दी जाने वाली राजनीतिक रियायतें उनके जनमतसंग्रह के बगैर वापिस न ली जाएं, इस मांग का मैं समर्थन करता हूं। मेरा बस इतना ही कहना है कि पहला जनमत संग्रह पांच वर्षों के बाद लिया जाए। मेरी जान आपके हाथ में है। अन्य सभी बातों में मैंने आपसे सहमति जताई है। उन्होंने पूछा, इस एक मामले में क्या आप मेरी बात नहीं मानेंगे? उसके बाद डॉ. अम्बेडकर और अन्य सभी लोग शिवलाल मोतीलाल जी के बंगले पर लौटे। कमेटी के सदस्यों को उन्होंने वहां हुई बातों की जानकारी दी। आखिर डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि महात्मा जी की बातें सुन कर मैंने पूरी तरह सोच लिया है। सोचने के बाद मुझे लगता है कि दस सालों से पहले जनमत संग्रह के लिए मैं तैयार नहीं हूं। एक बार फिर सुलह में बाधा उत्पन्न हुई और बहस उग्र होती गई। घंटे–डेढ घंटे तक हुई बहस के बाद आखिर यह तय हुआ कि दी गई रियायतें

खत्म करने की कोई मियाद नहीं रखी जाए। दोनों पक्ष इस बात पर राजी हुए कि अन्य योजना तय होने तक दी गई रियायतें बरकरार रखी जाएं। इस योजना पर दोनों पक्षों की सहमति होने से यह विवाद खत्म हुआ। उसके बाद प्रांतिक विधिमंडल में अस्पृश्यों को कितनी जगहें दी जाएं, यही एक मुद्दा बाकी बचा था। डॉ. अम्बेडकर ने अपनी नयी योजना में 197 जगहें मांगी थीं। हिंदू लोगों का कहना था कि 123 जगहें दी जाएं। आखिर 148 जगहों पर दोनों पक्ष सहमत हुए। उसके बाद डॉ. अम्बेडकर ने अपनी योजना के दूसरे हिस्से में जो मांगें रखी थीं, उन पर विचार किया गया। हिंदू नेताओं की ओर से बताया गया कि, जिस भाषा में उन मांगों को शब्दबद्ध किया गया है उस भाषा में आज उनके लिए मंजूरी नहीं दी जा सकती, हालांकि उन मांगों के जो मूलभूत तत्व हैं वे हमें मंजूर हैं, तथा वह मंजूरी दर्शाने वाला एक मसौदा तैयार कर उसे करारनामे में शामिल करने के लिए हम तैयार हैं। इस पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने कहा कि फिलहाल इतने से ही हम संतुष्ट हैं, और यह मसला भी हल हो गया। यह सब होते–होते दोपहर के दो बज गए। उसके बाद लोग करारनामे का मसौदा लिखने के लिए बैठे। करीब चार बजे के आसपास मसौदा तैयार हुआ। उसके बाद करारनामे पर किस–किसके हस्ताक्षर होंगे इस बात पर विचार मंथन हुआ। मद्रास से आए सभी अस्पृश्य नेताओं का आग्रह था कि मसौदे पर रा. ब. राजा और उनकी पार्टी के लोग हस्ताक्षर न करें। उनका कहना था, राजा और उनकी पार्टी के लोगों ने अगर हस्ताक्षर किए तो हम तो करेंगे ही नहीं, बाबासाहेब को भी हस्ताक्षर करने नहीं देंगे। उसके अनुसार डॉ. अम्बेडकर और उनकी पार्टी के नेताओं के हस्ताक्षर हुए और अनुबंध तैयार हुआ। उसके बाद अन्य हिंदू नेताओं ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर से प्रार्थना की कि रा. ब. राजा आदि लोगों के भी हस्ताक्षर करवाने के लिए आप ही कुछ कोशिश कीजिए। क्या करें, क्या न करें सोचते–सोचते आखिर तय हुआ कि सबके हस्ताक्षर होंगे। वे एक अस्पृश्य व्यक्ति की हैसियत से उस पर हस्ताक्षर करेंगे; अस्पृश्य वर्ग की एक पार्टी के नेता के तौर पर, 'प्रमुख जगहों पर' वे हस्ताक्षर नहीं करें। इस निर्णय के अनुसार राजा, गवई आदि लोगों को फोन करके सर्वंटस् ऑफ इंडिया सोसायटी की इमारत से बुलाया गया। सबके हस्ताक्षर होने के बाद अंत में हस्ताक्षर करने की इजाजत उन्हें दी गई। अचरज की बात यह कि सबके बाद आने के बावजूद और ऊपर बिल्कुल जगह न होने के बावजूद जयकर और सप्रू के बीच में अपना हस्ताक्षर घुसेड़ने की गुस्ताखी उन्होंने की। हस्ताक्षरों के बाद अनुबंध तैयार हुआ। पं. मदमोहन मालवीय और डॉ. अम्बेडकर इन दोनों के हस्ताक्षर के बाद प्रधानमंत्री को अनुबंध होने की खबर तार के जरिए भिजवाई गई। साथ में अनुबंध की कुछ प्रमुख बातों के बारे में जानकारी देने वाला तार भी भेजा गया। डॉ. अम्बेडकर और रा. ब. श्रीनिवासन ने भी अपने हस्ताक्षर के साथ राज्य के मुख्य सचिव, वायसराय को तार भेज कर इत्तिला दी कि अनुबंध उन्हें

मंजूर है। उसके बाद डॉ. अम्बेडकर, सर तेजबहादुर सप्रू, जयकर और सर चुनिलाल मेथा ने मुंबई सरकार के गृह सचिव मि. क्ली को शाम सात बजे अनुबंध की एक प्रति दी और वह सरकारी कार्य–प्रणाली के अनुसार प्रधानमंत्री को भेज देने की विनती की। वहां से सब लोग महात्मा गांधी से मिलने येरवडा जेल गए। मुलाकात के दौरान महात्मा गांधीजी ने करार के बारे में संतोष व्यक्त किया तथा सुलह करने के लिए डॉ. अम्बेडकर तथा अन्य नेताओं को धन्यवाद दिया।

नए अनुबंध की धाराएं

1. अस्पृश्यों को साधारण निर्वाचन क्षेत्र में सभी प्रांतों की जनसंख्या को जोड़कर बनने वाली जनसंख्या के अनुपात में 148 आरक्षित जगहें आगे बताए अनुसार दें –

प्रांत	अस्पृश्यों के लिए जस्थान	विधिमंडल में हिंदुओं के लिए कुल स्थान
बंगाल	30	80
मुंबई सिंध के साथ	15	108
बिहार और उडिसा	18	114
मद्रास	30	153
पंजाब	8	43
मध्य प्रांत और वर्हाड	20	88
असम	7	57
संयुक्त प्रांत	20	144
	148	787

इस तरह इस सुलह के कारण अस्पृश्यों को हिंदुओं की 787 जगहों में से 148 जगहें दी जाएंगी।

2. इन सभी आरक्षित जगहों के लिए अस्पृश्यों के जिन प्रतिनिधियों को चुना जाएगा, उनका प्राथमिक चयन अस्पृश्य वर्ग के मतदाताओं द्वारा हर जगह के लिए चयनित चार उम्मीदवारों में से की जाए। उसके बाद इन चार के पैनेल से एक प्रतिनिधि का चयन स्पृश्यास्पृश्य सभी मतदाताओं द्वारा किया जाए। प्राथमिक चुनावों में हर अस्पृश्य मतदाता को अपना मत देने का अधिकार है।

3. केंद्रीय विधिमंडल में अस्पृश्यों के प्रतिनिधि आम निर्वाचन क्षेत्र में आरक्षित जगहों के लिए पैनेल से चयनित किए जाएं।
4. केंद्रीय विधिमंडल में ब्रिटिश हिंदुस्तान के अस्पृश्यों को हिंदुओं की जगहों में से 18 प्रतिशत जगहें दी जाएं।
5. अस्पृश्य उम्मीदवारों के पैनेल के इस तरीके का इस्तेमाल केवल 10 सालों तक किया जाए। हालांकि उससे पूर्व सभी जातियां मिल कर अगर उस तरीके को रद्द करना चाहें तो उस पर किसी को आपत्ति नहीं होनी चाहिए।
6. सभी जातियों द्वारा एकमत से खारिज किए जाने तक आरक्षित जगहों के तरीके पर अमल किया जा सकता है।
7. प्रांतिक और केंद्रीय विधिमंडल का अस्पृश्यों का मताधिकार लोथिअन कमेटी की सिफारिशों के अनुकूल हो।
8. स्थानीय संस्थानों में चयन अथवा सरकारी नौकरी में नियुक्तियों के मामलों में अस्पृश्यों पर कोई भी नाकारापन का आरोप उनकी अस्पृश्यता के आधार पर न की जाए तथा उन्हें सही अनुपात में जगहें दी जाएं।
9. अस्पृश्यों की शिक्षा के लिए प्रांत की सरकार के बजट में उचित प्रावधान रखा जाए।[1]

इस अनुबंध पर 24 सितंबर के दिन 23 नेताओं ने हस्ताक्षर किए और 25 सितंबर के दिन 18 नेताओं ने हस्ताक्षर किए।

पुणे करार पर जिन्होंने हस्ताक्षर किए उनके नाम–

1. मदन मोहन मालवीय
2. तेज बहादुर सप्रू
3. एम. आर. जयकर
4. बी. आर. आंबेडकर
5. श्रीनिवासन
6. एम. सी. राजा
7. सी. वी. मेहता
8. सी. राजगोपालाचारी
9. राजेंद्र प्रसाद
10. जी. डी. बिड़ला
11. रामेश्वर दास बिड़ला
12. बी. एस. कामत
13. जी. के. देवधर
14. ए. वी. ठक्कर
15. आर. आर. बखाले
16. पी. जी. सोलंकी
17. पी. बालू
18. गोविंद मालवीय
19. देवदास गांधी
20. बिस्वास
21. पी. एन. राजभोज
22. गवई जी. ए.
23. शंकरलाल बंकर

1. जनता :1 अक्तूबर, 1932

मुंबई में हुई हिंदू परिषद में निम्नलिखित हस्ताक्षर इनमें दिनांक 25 सितम्बर, 1932 को जोड़े गए –

1. लल्लूभाई श्यामलदास
2. हंसा मेहता
3. के. नटराजन
4. कामकोटि नटराजन
5. पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास
6. मथरादास वास्सनजी
7. वालचंद हीराचंद
8. एच. एन. कुंझरू
9. के. जी. लिमये
10. पी. कोदंडराव
11. एन. वी. गाडगील
12. मनु सुभेदार
13. अवंतिकाबाई गोखले
14. के. जे. चितलिया
15. राधाकांत मालवीय
16. ए. आर. भट्ट
17. कोलम
18. प्रधान

ब्रिटिश प्रधानमंत्री की मौसी ससेक्स परगने के आर. डिगले गांव में गुजर गई। उनकी शवयात्रा में शामिल होने के लिए मैकडोनल्ड साहब सितंबर 24 सितम्बर, 1932 तारीख को निकलने वाले थे। लेकिन हिंदुस्तान से आए तारों को देखकर उन्होंने अपना जाना रद्द कर दिया और पुणे अनुबंध पर मंत्रिमंडल के साथ दो दिनों तक विचार–विमर्श करने के पश्चात् मंत्रिमंडल की सहमति तार के जरिए वायसराय आदि को 26 तारीख को भेज दी। 26 सितंबर, 1932 के दिन हिंदुस्तान सरकार के गृह सचिव (होम मेंबर) मि. हेग ने केंद्रीय विधिमंडल में सरकार की अनुबंध के लिए मान्यता की घोषणा की।

सरकार द्वारा अनुबंध को मान्यता दिए जाने वाला खत इन्स्पेक्टर जनरल कर्नल को भेजा। उन्होंने वह गांधीजी और अन्य नेताओं को मंगलवार 27 सितम्बर, 1932 को तीसरे प्रहर के समय करीब सवा चार बजे दिखाया। सबको लगा कि अब गांधीजी अपने व्रत का समापन करें। गांधीजी ने कहा कि इस सरकारी मंजूरी को अस्पृश्यों के नेताओं द्वारा सहमति जताई जानी चाहिए। वे सब नेता उस वक्त मुंबई चले गए थे। उन्हें फिर बुला कर उनकी सभा लेनी होगी और इस काम में एक–दो दिन लगते। इस अनुबंध पर उन्होंने पहले ही हस्ताक्षर किए हैं और अपनी सहमति भी जताई है, इसलिए फिर इस प्रश्न पर सोचने की जरूरत न होने की बात पंडित हृदयनाथ कुंजरू ने गांधीजी से कही, जिसकी श्री राजगोपालाचारीजी ने पुष्टि की। उसके बाद गांधीजी अपना अनशन तोड़ने के लिए तैयार हुए। कर्नल डॉयल ने कहा, कस्तुरबा गांधी के हाथ से फलों का रस पीकर अनशन खत्म कीजिए। गांधीजी मान गए। गांधीजी के चारों तरफ पानी का छिड़काव किया

गया। रवींद्रनाथ ठाकुर ने अपनी गीतांजली से एक भक्ति गीत गाया। कुछ लोगों ने भगवद्गीता के श्लोक गाए। वहां इकट्ठा हुए करीब 200 लोगों ने गांधीजी का पसंदीदा और नरसी मेहता का लिखा, 'वैष्णव जन तो तेणे कहिए', भजन गाया। कस्तुरबा ने गांधीजी को संतरे के रस का गिलास दिया। उन्होंने रस ग्रहण कर अपना अनशन तोड़ा।[1]

1. डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र : चां. भ. खैरमोडे, खंड 5, पृ. 56, 57 69

57
पूना (पुणे) समझौता बंधनकारी मान कर स्पृश्य बंधु कार्य करे*

पुणे में महात्मा गांधी और बाबासाहेब अम्बेडकर में सुलह हुई और एक नया कारनामा तैयार किया गया। सभी हिंदू नेताओं की मंजूरी के बाद पिछले शनिवार को उस कारनामे पर स्पृश्य और अस्पृश्य नेताओं ने हस्ताक्षर किए। कारनामा मंजूर किए जाने के बाद मुंबई में सभी हिंदू नेता इकट्ठा हुए और रविवार 25 सितंबर, 1932 के दिन कोर्ट स्थित इंडियन मर्चेंटस् एसोसिएशन के हॉल में मुंबई नागरिक इमरजेंसी काउंसिल की ओर से पंडित मदनमोहन मालवीय की अध्यक्षता में दोपहर में बैठक बुला कर समझौते को मंजूरी दी गई।

पहले परिषद् के अध्यक्ष पंडित मदनमोहन मालवीय का भाषण हुआ। करारनामा तैयार करने में जिन लोगों ने पूरा सहयोग दिया उन सभी के प्रति उन्होंने आभार व्यक्त किया। हालांकि, अस्पृश्य वर्ग के नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के प्रति उन्होंने प्रमुखता से आभार प्रकट किया। उन्होंने कहा कि, "डॉ. अम्बेडकर के सहकार्य के बगैर इस प्रकार की सुलह होना बहुत मुश्किल था। करारनामे की धाराओं के बारे में इतना ही कहा जा सकता है कि स्पृश्य हिंदुओं पर उसे पूरा कर दिखाने की बड़ी जिम्मेदारी आन पड़ी है।

पच्चीस लाख का फंड

अस्पृश्यता निर्मूलन के लिए धन की बड़ी जरूरत है। देश भर में जागृति की सारी कोशिशें बिना पैसे के व्यर्थ होंगी। इस कार्य के लिए एक छोटी कमेटी का गठन कर उस कमेटी के जरिए कम से कम 25 लाख रुपयों का फंड इकठ्ठा करना होगा। अगले तीन–चार महीनों में प्रत्यक्ष कार्य कर अपने हिंदू धर्म का तेज बढ़ाना, अपने दलित बंधुओं के जरिए सभी समान अधिकार उपलब्ध करा कर देना और अपने मन को शुद्ध कर उच्च–नीचता के भाव को जड़ से उखाड़ फेंकना आदि काम तुरंत हाथ में लेना जरूरी है। अपने समाज से अस्पृश्यता को यदि जड़ से मिटा देना हो, तो इस बात को हमेशा याद रखें कि अस्पृश्यता को जड़ से मिटाने के लिए महात्मा गांधी ने अपने प्राणों की बाजी लगा दी थी।"

पंडितजी के दिल को छू लेने वाले भाषण के बाद पुणे में हुए समझौते को मंजूरी देने वाला मुख्य प्रस्ताव सेठ मथुरादास वसनजी खिमजी ने पेश किया।

---

*जनता : 1 अक्तूबर, 1932

प्रस्ताव पेश करते हुए उन्होंने कहा कि, "पुणे में हुए समझौते को मंजूरी देने में अब अंग्रेज सरकार को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। इसीलिए, और महात्मा गांधी के स्वास्थ्य की गंभीर दशा को ध्यान में रखते हुए तुरंत मंजूरी का तार (टेलीग्राम) भेज देना चाहिए।

इस प्रस्ताव को समर्थन देने के लिए सर तेजबहादुर सप्रू बोलने के लिए उठ कर खड़े हुए। उन्होंने कहा कि, "यह ध्यान देने योग्य है कि इस समझौते का सारा कार्य पंडित मालवीयजी की अध्यक्षता में हुआ है। पंडितजी ने अपनी कर्मठता को एक तरफ कर बदलते समय के अनुसार चलने का जो मनोधैर्य दिखाया, वह कई मायनों में अलौकिक है। हम सबको भी इस तरह की नीति अपनानी होगी, उसके अलावा कोई चारा नहीं है। इस सुलह का बहुत सा श्रेय डॉ. बबासाहब अम्बेडकर को भी देना होगा। अपने समाज के न्यायपूर्ण अधिकारों के लिए लड़ने का जो धैर्य उन्होंने दिखाया है और अपनी दृढ़प्रतिज्ञा का जो परिचय दिया है वह अभिनंदन के योग्य है। उनके धैर्य को देखते हुए लगता है कि वे अस्पृश्यों के ही नहीं वरन् भावी भारत के धैर्यशील नेता बनेंगे। अंग्रेज सरकार के कम्युनल अवार्ड से अधिक इस समझौते से अस्पृश्य वर्ग का अधिक हित हुआ है। इसीलिए आगे हम सबको मिल–जुल कर रहना होगा और जो कार्य हाथ में लिया है, उसे पार लगाने के, उसमें विजयी होने के लिए जी–जान से कोशिश करनी होगी।

डॉ. अम्बेडकर बोलने के लिए खड़े हुए, तब तालियों की गड़गड़ाहट से वातावरण गूंज उठा। उन्होंने कहा कि,

"कुछ दिनों पूर्व के हालात और आज के हालात देख कर मुझे सब–कुछ सपने जैसा लगता है। उस वक्त, एक ओर मुझे महात्मा गांधीजी के प्राणों पर आंच नहीं आने देनी थी, तो दूसरी तरफ जान की बाजी लगा कर अपने समाजबंधुओं के हितों की रक्षा करनी थी। इस संकट से पार पा सकूंगा इस बारे में मुझे आशंका नहीं थी, लेकिन स्थिति की गंभीरता को भांप कर सभी हिंदू नेताओं ने जो संतुलित सोच और सहयोग की नीति अपनाई, उसके कारण इस समस्या का संतोषजनक हल पाना आसान हुआ, इसकी मुझे बहुत खुशी है। सुलह की इस बातचीत का हल पाने का सारा श्रेय महात्मा गांधी को जाता है। मेरी सभी मांगों को स्वीकार कर आखिर गांधीजी ने मेरा ही अभिनंदन किया इसका मुझे बड़ा अचरज है। यह एक तरह से सुलह ही थी, जिसका दूसरे गोलमेज सम्मेलन के समय ही अगर महात्मा गांधीजी स्वीकार कर लेते तो इस तरह के कठिन और गंभीर हालात कभी भी पैदा नहीं होते। खैर। इस समझौते को मान्यता देने में मुझे बड़ी खुशी है। मेरे स्पृश्य बंधु इस समझौते को स्वीकार कर उस पर अमल करेंगे तो मुझे और मेरे

समाज को बहुत अधिक आनंद होगा। महात्मा गांधी के अलावा इस समझौते का श्रेय सर तेजबहादुर सप्रू, पंडित मालवीय और सी. राजगोपालाचारी को देना भी मुझे उचित लगता है।"

डॉ. अम्बेडकर के भाषण के बाद रा. ब. राजा और मि. के. नटराजन के भाषण हुए। आखिर में सी. राजगोपालाचारी ने आभार व्यक्त किया। आगे किए जाने वाले विधायक कार्यों की कमेटी के गठन के सारे अधिकार अध्यक्ष को हों इस सेठ मथुरादास वसनजी की सूचना को सभा की मंजूरी मिलने के बाद परिषद बर्खास्त हुई।

58
मंदिर जाने से आपका उद्धार नहीं होगा

पुणे में हुए समझौते के बाद मुंबई में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण सुनने के लिए मुंबई का अखिल अस्पृश्य समाज बहुत ही उत्सुक था। सब इस मौके का बड़ी उत्सुकता से इंतजार कर रहे थे। वरली के रा सावंत आदि कुछ युवाओं ने बुधवार दिनांक 28 सितंबर, 1932 को रात में एक सभा का आयोजन कर यह मौका उपलब्ध करा दिया। करीब 10 बजे बाबासाहेब, सभा के नियोजित अध्यक्ष श्री देवराव नाईक और अन्य लोगों के साथ वरली बी. डी. डी. चाल के पास के मैदान में पधारे और तुरंत कामकाज शुरु हुआ। अध्यक्ष का चयन होने बाद अध्यक्ष श्री देवराव नाईक का भाषण हुआ। उन्होंने कहा,

महात्मा गांधी की घोर प्रतिज्ञा के कारण पूरा हिंदुस्तान हिल गया था और उनकी प्रतिज्ञा का स्वरूप इतना भयंकर था कि अस्पृश्यों के नेता डॉ. अम्बेडकर अगर उनकी बात मानते तो गांधीजी की जान खतरे में पड़ सकती थी। लेकिन गांधीजी की बात मान लेने का मतलब था कि इतने परिश्रम से अस्पृश्यों ने आत्मसुरक्षा के लिए जो भी कुछ हासिल किया था, उसे गंवा देना। और न मानने का मतलब था महात्मा गांधी की जान लेने का इल्जाम झेलना। ऐसी विपरीत स्थितियों में अस्पृश्य समाज, खासकर खुद डॉ. बाबासाहेब फंसे हुए थे। लेकिन अस्पृश्यों के सौभाग्य से इन दोनों बातों को ठीक तरह से हल करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने अपनी भूमिका निभाई। महात्मा गांधीजी के प्राण या अस्पृश्यों के स्वसुरक्षा के अधिकार गंवाने के संकट को उन्होंने मात दी। उनकी जीत पददलित समाज के उज्ज्वल भविष्य का द्योतक ही थी। आज अस्पृश्य समाज को वे अधिकार मिले हैं, जो उन्हें पहले कभी नहीं मिले थे यह बात सही है, लेकिन आज हिंदू समाज में सदियों से चली आ रही अस्पृश्यता कानूनन नष्ट हुई तो इन अधिकारों का फल पा लिया, इस भ्रामक कल्पना में न रहें। अस्पृश्य समाज आज पूरे हिंदू समाज को इस बात का विश्वास दिला दे कि जब तक हिंदू समाज का हिस्सा बन चुकी अस्पृश्यता को वे पूरी तरह मिटा नहीं देंगे, तब तक चैन की सांस नहीं लेंगे। अपना भाषण पूरा करने से पहले अध्यक्ष ने एक प्रतिज्ञा की कि, आज से चार महिनों के भीतर अगर जनता पत्र के पांच हजार सदस्य नहीं बने तो वे संपादक का पद भार स्वीकार नहीं करेंगे।[1]

उनके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर बोलने के लिए उठ कर खड़े हुए। करीब 15 हजार के उस प्रचंड जनसमुदाय ने तालियों की गड़गड़ाहट कर उनका स्वागत किया। डॉ. बाबासाहेब ने अपने उस भाषण में कहा था –

1. जनता : 8 अक्तूबर, 1932

आठ दिनों पहले अस्पृश्य समाज पर जो संकट मंडरा रहा था, उसका खुलासा अध्यक्ष ने अपने भाषण में किया ही है। आज उस संकट से अस्पृश्य समाज बाहर निकल चुका है। इतना ही नहीं, उस आपदा से शक्तिहीन न होते हुए वह आज और अधिक बलवान हुआ है।

पहले गोलमेज सम्मेलन के समय अस्पृश्यों के लिए हमने कुछ खास मांगें रखी थीं। आप उन मांगों के बारे में जानते ही हैं। दूसरे सम्मेलन में जब उन मांगों की बात निकली, तब सभी हिंदू प्रतिनिधियों ने तथा खुद महात्मा गांधी ने भी उन मांगों का कड़ा विरोध किया। ऐसे में अस्पृश्यों के अधिकारों की रक्षा का कोई मार्ग सामने नहीं था। सभी तरफ से जिन्हें समाज ने दलित बनाया हो, जो आर्थिक रूप से पंगू थे, धार्मिक रूप से कमजोर थे, सामाजिक दृष्टि से जो कीड़े–मकौड़े की तरह क्षुद्र माने गए थे और कूड़े–कचरे की भांति राजनीति में इस समाज को कुछ रियायतें देने के लिए अगर हिंदू समाज तैयार नहीं है, तो भावी स्वराज में जब राजनीतिक सत्ता का बड़ा हिस्सा हिंदुओं के हाथ आएगा तब उस दुर्बल समाज का क्या होगा इस बात की चिंता मुझे घेर रही थी। उस समय मैंने सबको ताकीद दी कि अगर भावी समाज में अस्पृश्यों को जरूरी रियायतें नहीं मिलने वाली हैं तो ऐसे समाज के निर्माण के लिए वह अपनी सम्मति कदापि नहीं देगा। दूसरे सम्मेलन के समय मैंने अस्पृश्यों के लिए मांगें प्रस्तुत कीं। उन्हें प्रधानमंत्री तक पहुंचाया। इसके बावजूद प्रधानमंत्री ने जो न्याय किया उसमें मेरी मांग के अनुसार अलग चुनाव क्षेत्र केवल कुछ जगहों के लिए ही मंजूर हुआ था। अपनी मांग के अनुसार सारी जगहें भले हमें नहीं मिली थीं लेकिन जो कुछ मिल रहा था, उसी में संतोष किया जा सकता था। मुझे लग रहा था कि अब आगे के कामों के बारे में सोचना होगा। संकटों का सामना भले करना पड़ा लेकिन अस्पृश्यों के कल्याण का कुछ कार्य मेरे हाथों हुआ, ऐसा मुझे लगा था। मैंने राहत की सांस ली थी। जंगली जानवर के चंगुल से छूट कर जब कोई हिरन सुरक्षित जगह पहुंच कर राहत की सांस लेता है, कुछ उसी तरह की मेरी मानसिक स्थिति मेरी हुई थी। तभी महात्मा गांधी की प्रतिज्ञा के बारे में जानकारी मिली। अस्पृश्यों के सौभाग्य से इस बार महात्माजी ने विरोध नहीं किया था, बल्कि इस बार उनसे मुझे मदद मिली। इस बार महात्माजी ने काफी सहयोगपूर्ण नीति अपनाई थी। हिंदू नेताओं के साथ जो सुलह हुई उसमें अस्पृश्यों को काफी फायदा पहुंचा है। पंजाब प्रांत में अस्पृश्यों को आठ जगहें मिलीं, जबकि पहले उन्हें वहां एक भी जगह नहीं मिली थी। अन्य प्रांतों में भी और जगहें मिलीं। केंद्रीय विधिमंडल में अस्पृश्यों के लिए 18 प्रतिशत जगहें आरक्षित की गईं, यह दूसरा फायदा हुआ। इस बारे में प्रधानमंत्री ने जो न्याय किया था, उसमें कोई जिक्र नहीं था। उन्होंने जो निर्णय दिया था, उसमें अस्पृश्यों के लिए अत्यंत हानिकारक और जोखिम भरी

एक कमी रह गई थी। 20 वर्षों के बाद ये सारी रियायतें अपने आप खत्म हो जाने वाली थीं। 20 सालों में स्थितियों में बहुत ज्यादा फर्क तो आने वाला नहीं था। इन बीस सालों में हजारों सालों से जो अत्याचार हो रहे थे, वे खत्म तो नहीं होने वाले थे। आम हिंदू समाज का नजरिया जब तक नहीं बदलता तब तक अस्पृश्यों के लिए लागू की गईं ये रियायतें वापिस लेना यानी जड़ें जमाने की कोशिश कर रहे पौधे को जड़ से उखाड़ने जैसा था। नए सुलहनामे के अनुसार यह बदला गया है। अब यह तय किया गया है कि हिंदू समाज और अस्पृश्यों की परस्पर सहमति से ही ये रियायतें खत्म की जाएंगी। हिंदू समाज अगर अपनी प्रत्यक्ष कृतियों से अस्पृश्यों का विश्वास हासिल करेगा तो अस्पृश्य अपने आप ये रियायतें छोड़ देंगे। वरना ये रियायतें लागू रहेंगी। यह सब तो ठीक है, लेकिन यह जो मौका मिला है उसका सही इस्तेमाल आप नहीं करेंगे तो अंधों के सामने रत्न रखने जैसी स्थिति होगी। जो कुछ मिला है उसका सही उपयोग आपको करना होगा। सत्ता में अपनी भागीदारी का सही चित्र सामने आने के लिए आप स्वराज की अगली मुंबई विधि कौंसिल का चित्र आंखों के आगे ले आइए। किसी भी पार्टी के पास 200 में से 115 जगहें जब तक न हों, वह राज नहीं कर सकती। इस प्रांत में सबसे अधिक जगहें हिंदुओं के हिस्से आई हैं और वे लगभग 100 हैं। इन सौ को आपकी 15 जगहों के बगैर काम चलाना संभव नहीं होगा। मुसलमान या अन्य छोटे समूहों के बारे में तो बात करना भी बेकार है। मतलब यही कि आपके हाथ में अलौकिक शक्ति आई है। उसका इस्तेमाल आप अपनी आर्थिक उन्नति के लिए करें। एक और सूचना मैं देना चाहता हूं, जो महत्त्वपूर्ण है और उस पर ध्यान देना जरूरी है। आज हर जगह आपके लिए मंदिरों के दरवाजे खोले जाने के बारे में चर्चा है। इस काम को करने की इच्छा रखने वालों के अच्छे उद्देश्यों के बारे में मुझे कोई आशंका नहीं है। हालांकि आप यह न भूलें कि मंदिर में जाने से आपका उद्धार नहीं होने वाला है। मंदिर की मूर्ति के गिर्द डोलने वाली आध्यात्मिक भावना से अधिक पेट का गड्ढा कैसे भरा जाए, इस बारे में आपको ज्यादा सोचना चाहिए। खाने के लिए अनाज नहीं, तन ढंकने के लिए जरूरी कपड़े नहीं, शिक्षा पाने की व्यवस्था नहीं, धन के अभाव के कारण बीमारी का इलाज करना संभव नहीं, ऐसी दीन–हीन स्थिति में हमारा समाज फंसा हुआ है। इन स्थितियों में बदलाव लाने वाले, जीवन के जरूरी सुख पाने के उद्देश्य को ध्यान में रख कर आपको अपना अगला कार्यक्रम तय करना होगा। जो राजनीतिक सत्ता मिली है, उसका इस्तेमाल आपको इस दिशा में करना होगा। मंदिरों में जाने के मार्ग खुल गए, अस्पृश्यता हटी केवल इसलिए जो हक मिले हैं, उन्हें गंवाना ठीक नहीं होगा। 'आज हमारी जो स्थिति है वह हमारे भाग्य का फल है' जैसी मूर्ख और आत्मवंचक कल्पनाओं से अपने आपको मुक्त कीजिए। मुझे पक्का विश्वास है कि इस तरह की कल्पनाओं से छुटकारा पाकर हममें से हर व्यक्ति अगर राजनीति

पर ध्यान रख कर मिले हुए हर राजनीतिक मौके का सही–सही उपयोग करेगा तो अपने समाज के दुख जरूर दूर होंगे। एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि जिन नेताओं को आप चुन कर ले आएंगे, उन पर पूरा विश्वास करेंगे, तो वे आपके सच्चे मार्गदर्शक बनेंगे। जिनका हित आपके हित से अलग नहीं होगा और जो स्वार्थी नहीं हैं, ऐसे ही लोगों को आप अपना नेता चुनें। अन्य पार्टियों की अंजुलि से पानी पीने वाले या उनके काम करनेवाले लोग आपमें बस फूट ही डालेंगे। आपको गुमराह करेंगे। वे आपको दगा ही देंगे। ऐसे ढोंगी नेताओं से आप बचके रहिए। आगे हमें बहुत काम करने हैं। आज हमारे पास कोई स्थाई संस्थाएं नहीं हैं। सभी आंदोलनों का केंद्र स्थान बनने लायक जगह नहीं, और काम करने वाले लोगों की भी कमी है। इन दिक्कतों पर मात करने के लिए 2 लाख रुपयों का फंड जोड़ने का संकल्प मैंने किया है। हर वयस्क स्त्री पुरुष को इसमें इजाफा करना होगा। मुझे यकीन है कि ठान लेने पर आप केवल मुंबई में इतनी रकम जुटा सकेंगे। साथ ही, जनता पत्र की बिक्री आपको बढ़ाने की कोशिश करनी होगी। यह हमारा मुखपत्र है। इसी पत्र के द्वारा जनता में हम जान फूंकने वाले हैं। इसीलिए इस पत्र को स्वावलंबी बनाना आपका कर्त्तव्य है।"

इस तरह बाबासाहेब ने करीब घंटे भर तक भाषण दिया। वहां इकठ्ठा हुए लोग उनके भाषण का हर शब्द रत्नों की तरह संजो रहे थे। बाद में अध्यक्ष, बाबासाहेब तथा अन्य लोगों के प्रति आभार प्रकट किया गया। करीब बारह बजे सभा बर्खास्त हुई।

59

भोलीभाली कल्पनाओं के कारण मृत्युलोक का जीवन कष्टकारक हुआ है*

बेलासीस रोड इंप्रूवमेंट ट्रस्ट के पास के मैदान पर शनिवार दिनांक 8 अक्तूबर, 1932 को रात के 10:30 बजे पुरुष और महिलाओं की भीड़ इकट्ठा हुई थी। उस सभा का अध्यक्ष स्थान श्री बापूसाहेब सहस्त्रबुद्धे ने स्वीकारा था जो सोशल सर्विस लीग के एक प्रमुख कार्यकर्ता थे। अध्यक्ष पद का सम्मान दिए जाने के लिए आयोजकों के प्रति आभार प्रकट करते हुए उन्होंने कहा कि, विद्वत्ता, मनोधैर्य और वीरता के कारण पूरी दुनिया डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की कायल हुई है। उनके भाषण समारोह में अपने जैसे सामान्य समाजसेवी व्यक्ति को अध्यक्षपद मिलना यह एक तरह से संकट में पड़ना ही है। लेकिन पत्थर को भगवान बनाने की आदत हिंदुओं को है ही। आप इसके अपवाद केसे हो सकते! उस वक्त कहने योग्य कुछ और बातें कहने के पश्चात् उन्होंने सभा के कामकाज की शुरुआत की। इस सभा का प्रमुख काम था पुणे के सुलहनामे को अनुमोदन करना। श्री सी. ना. शिवतरकर से सुलहनामा पेश करने के लिए कहा गया। इस सुलहनामे पर हस्ताक्षर करने वालों में से श्री शिवतरकर भी एक हैं। डॉ. अम्बेडकर और हिंदू नेताओं में जब बातचीत चल रही थी, तब वे भी वहां उपस्थित थे। इसलिए सुलहनामे पर उनका भाषण बहुत अच्छा रहा। श्री चव्हाण तथा अन्य वक्ताओं से इस प्रस्ताव के लिए अनुमोदन पाने के बाद तालियों की गड़गड़ाहट में प्रस्ताव मंजूर किया गया।

दूसरा प्रस्ताव रा. ब. बोले के बिल की मंजूरी के लिए था। श्री वनमाली ने उसे प्रस्तुत किया। मुंबई की म्युनिसिपल कार्पोरेशन स्कूल कमेटी में अस्पृश्यों के खास प्रतिनिधि का होना किस तरह आवश्यक है, यह उन्होंने अच्छी तरह स्पष्ट किया। सही अनुमोदन मिलने के बाद इस प्रस्ताव को भी मंजूर किया गया। उसके बाद अध्यक्ष ने डॉ. अम्बेडकर से भाषण करने का अनुरोध किया। उनका भाषण सुनने के लिए श्रोता पहले से ही बहुत उत्सुक थे। उपरोक्त दो प्रस्ताव रखने और उन्हें मंजूर करने में काफी समय बीत गया था, इसलिए श्रोताओं की उत्सुकता अब बहुत ज्यादा बढ़ चुकी थी। उनके भाषण में नाटकीयता नहीं थी, लेकिन हर शब्द चित्ताकर्षक और विचारों को बढ़ावा देने वाला था। उनके भाषण में कोई कठिन शब्द इस्तेमाल नहीं किया गया था। विचारों को इतने सीधे–सादे शब्दों में पिरोया गया था कि अनपढ़ हो या बच्चा हो, हर कोई आसानी से समझ ले। इसके बावजूद हर

*जनता : शनिवार 15 अक्तूबर, 1932
तारीख 9 अक्तूबर, 1932 की भी हो सकती है

शब्द और मुद्दों को कुशल कानूनविद की तरह पेश किया गया। कत्ल के मामले में फांसी पर लटकाए जाने वाले आरोपी का केस कोई कुशाग्र बुद्धि का वकील जिस तरह ज्यूरी के सामने पेश करेगा उसी कुशलता से वे हर विषय लोगों को समझाते हैं। ज्ञानाभिलाषी छात्रों को बड़े जतन से विषय समझाने का उनका कौशल, जब वे अज्ञानी श्रोताओं को समझाते हैं, तब भी सहजता से प्रतिबिंबित होता है। शनिवार की रात उनका भाषण इसी तरह संस्मरणीय था। उन्होंने कहा,

मृत्यु के पश्चात् मोक्ष की प्राप्ति के लिए तड़पने वाली वृत्ति हो, या काल्पनिक स्वर्गीय नंदनवन की प्राप्ति पर आशा भरी नजर हो, दोनों आत्मघातक हैं। मृत्युलोक का कष्टकर जीवन उन भोली–भाली कल्पनाओं के कारण ही कष्टमय हुआ है। खुद के बल पर पोषक आहार कमाना, ज्ञानार्जन के साधन प्राप्त करना और अन्य तरह से जीवन सुखमय बनाना आदि महत्वपूर्ण मुद्दों की तरफ बहुजन समाज का ध्यान नहीं रहा, इसीलिए पूरे देश की प्रगति पर इसका बुरा असर हुआ है इसका रोजमर्रा की जिंदगी के अनुभवों से हमें पता चलता है। गले में पहनी तुलसीमाला के सहारे आप मारवाड़ी के कैंची के समान ऋण से मुक्त नहीं हो सकते, या राम नाम के जाप करते हैं, इसलिए मकान–मालिक आपको किराए में छूट नहीं देता और न ही दूकानदार अपना पैसा कम करता है। आप नियम से पंढरपूर की यात्रा करते हैं, इसके लिए आपका मालिक आपकी तनख्वाह बढ़ाता नहीं। समाज के बड़े हिस्से के इन मूढ़ कल्पनाओं में खो जाने के कारण कुछ स्वार्थी लोगों को उनके बुरे इरादों में सफलता मिलती है। वे आपके कामों में रुकावटें खड़ी करते हैं और अपना उल्लू सीधा कर लेते हैं। इसलिए कम से कम अबके बाद तो सतर्कता बरतें। आज आप लोगों को थोड़ी बहुत राजनीतिक सत्ता मिल रही है। अब अगर आप सत्ता के प्रति उदासीन रहे, अपनी आज की स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए कोई उपाय आपने नहीं किए तो आपका हाल बुरा होगा, इसमें कोई शक नहीं। अगर आपने अपनी सोच को "पुराने दिन ही अच्छे थे जब दाल–रोटी से गुजारा हो जाता था" तक सीमित रखा तो आपकी स्थिति में कभी सुधार नहीं आ सकता है। जीवन में तरक्की ले आने के लिए इस तरह की सोच से मुक्ति पाना आवश्यक है। इस तरह की मानसिकता और उदासीनता घातक साबित होगी। मुझे आशंका इसी बात की है कि आज हममें जो जागरुकता पैदा हो रही है, वह अगर क्षणिक साबित होकर यहीं खत्म हो गई तो क्या होगा? जिस गुलामी को नेस्तनाबूत करने के लिए हमने कोशिश की, फिर से आप कहीं उसी के चंगुल में तो नहीं फंस जाओगे? अब तक वैष्णवपंथ के संतों ने आपको समानता के पायदान पर ले आने की कोशिशें कीं लेकिन उनकी सीख पूरी की पूरी आध्यात्मिक, पारमार्थिक होने के कारण तथा वे खुद ऐहिक सुखों से अछूते रहे, इस वजह से वे अपने समाज में

अपना दरजा बना नहीं सके। उनकी सीख से आपकी गुलामी की हालत में रत्तीभर का फर्क नहीं आया है। हिंदुस्तान का बहुजनसमाज राजनीति से अलग रहने के कारण आज देश की दुर्दशा हुई है।

इसीलिए, हमें इस गलती को दोहराना नहीं है। हमें बड़ी सावधानी से अपने अगले कार्यक्रमों की रूपरेखा बनानी है। शिक्षा एवं अस्पृश्यों की उन्नति में बहुत घनिष्ठ संबंध है। मुंबई शहर में उनकी संख्या करीब दो लाख के आसपास है। मुंबई में प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था म्युनिसिपल कार्पोरेशन स्कूल कमेटी के हाथ है। साल भर में कमेटी का खर्च 30–32 लाख रुपयों तक होता है। इस खर्चे में अस्पृश्य लोगों के लिए क्या व्यवस्था की गई है? भिन्न–भिन्न स्कूलों में अध्यापकों की नियुक्तियां की जाती हैं, उनमें अस्पृश्य अध्यापकों की भी नियुक्तियां की जाती हैं अथवा नहीं, आदि अस्पृश्यों के हितों से संबंधित कई अहम सवाल हैं। इन सवालों को कैसे हल किया जाता है इस पर नजर रखने के लिए अस्पृश्यों का कम से कम एक प्रतिनिधि स्कूल की कमेटी में होना आवश्यक है। इस सीधी–सादी मांग का कोई क्यों विरोध करे, यह मेरी समझ से बाहर है। इधर विधि परिषद में ग्राम पंचायत बिल चर्चा के लिए रखा गया है। इस बिल के अनुसार पंचायत को छोटे–छोटे फौजदारी और दीवानी मुकदमों में न्यायदान का अधिकार दिया गया है। पंचायत के सदस्यों का चुनाव लोग करेंगे। इस तरह चुनाव जीत कर आने वाले लोगों के निष्पक्ष होने के बारे में शक है! हर गांव में अस्पृश्यों की संख्या उसी गांव के रहने वालों के अनुपात में बहुत कम होने और उनके पूरी तरह निर्भर होने के कारण इस ग्राम पंचायत के संविधान में जब तक अस्पृश्यों के लिए कोई स्वसुरक्षा की योजना नहीं होगी तब तक इस समाज के साथ क्या होगा, क्या नहीं होगा कहा नहीं जा सकता। वरली की सभा में जो घोषणा की गई थी उसके अनुसार संगठित रूप से काम करने के लिए एक केंद्रीय संस्था की स्थापना की जानी है। इस तरह की संस्था के अभाव में अस्पृश्य समाज के लोगों की शिकायतों पर ध्यान नहीं दिया जाता। कहीं अस्पृश्यों को मराठों ने पीटा, कहीं उनके बच्चों को परेशान किया, कहीं जमीन छीन ली गई, इस तरह की कई शिकायतें होती हैं। एक गांव में ऐसे ही किन्हीं कारणों से तहसीलदार ने गांव के कर्मचारी महार को शो कॉज नोटिस देकर जवाब मांगा क्योंकि कनिष्ठ अफसरों नें झूठी शिकायत की थी कि महार सरकारी काम नहीं करते, जबकि महारों ने सरकारी काम करने से कभी भी इनकार नहीं किया था। तहसीलदार के सामने उन्होंने इस आशय का जवाब भी दिया। लेकिन तहसीलदार ने उल्टा जवाब दर्ज किया और महारों के वतन जब्त करने की शिफारिश की। वरिष्ठ अधिकारियों का भी वही हाल होता है। कोई भी महारों की बात मानने के लिए तैयार ही नहीं हुआ। आखिर कुछ सालों

तक के लिए महारों की खेती की जमीनें छीन ली गई। इसमें महारों का हजारों रुपयों का नुकसान हुआ। ऐसी शिकायतें सुनने में आते ही कोई वकील वहां भेजा जाना चाहिए। वहां पूछताछ की जानी चाहिए लेकिन रुपयों की कमी के कारण यह करना कठिन होता है। इस काम के लिए फंड इकट्ठा कर व्यवस्था की जानी चाहिए। इसके अलावा कोई और रास्ता नहीं। हां, इन सरकारी अधिकारियों को साफ–साफ बताना चाहता हूं कि अगर ऐसा ही सब अन्याय चलता रहा तो उसके परिणाम अच्छे नहीं होंगे।"

इस प्रकार उनके भाषण के बाद सभा में आए मे. मणियार साहब से दो शब्द कहने की विनति की। मे. मणियार साहब ने पुणे के सुलहनामे के प्रति अपनी खुशी जाहिर की और डॉ. अम्बेडकर के काम की बहुत प्रशंसा की। आखिर अध्यक्ष के प्रति आभार प्रकट करने के बाद सभा समाप्त हुई।

60
पढ़े–लिखे लोग छुआछूत को खत्म करें*

महार समाज सेवा संघ (राजापूर से गोवा की सरहद तक) के सहयोग से 22 अक्तूबर, 1932 के दिन शाम 7 बजे सावंतवाडी के जेल के पास वाले महारों की बस्ती में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के स्वागत और अभिनंदन के लिए अस्पृश्यों की बड़ी सभा बुलाई गई थी। उस दिन धुआंधार बारिश हो रही थी। हर पांचवें मिनट में बारिश की झड़ी लग रही थी। संघ के लोगों ने बड़ी मेहनत से मंच बनाया था। करीब हजार–बारह सौ स्पृश्य और दो हजार के आसपास अस्पृश्य लोग सभा के लिए इकट्ठा हुए थे। अध्यक्ष पद की सूचना लेकर शिवराम नारायण वालावलकर मंच पर आए और गणपत जाधव से अनुमोदन पाने के बाद अध्यक्ष स्थान पर बाबासाहेब घोरपड़े को आमंत्रित किया। अध्यक्ष के स्थान ग्रहण करने के बाद डॉ. बाबासाहेब का परिचय दिया गया और डॉ. बाबासाहेब से दो शब्द कहने की विनति की गई। बाबासाहेब बोलने के लिए उठ कर खड़े हो गए। तालियों की गड़गड़ाहट हुई। आकाश में बादल छाए हुए ही थे। बाबासाहेब ने यूंही आकाश की तरफ देखा और वे बारिश को संबोधित कर बोले–

"मेघराजा, केवल दस मिनट कृपा करना।" उसके बाद बाबासाहेब ने छोटा–सा लेकिन बहुत ही मार्मिक और चटपटा भाषण दिया। अपने भाषण में डॉ. बाबासाहेब ने अस्पृश्य बंधुओं से कहा कि, "उन्नति के मार्ग पर चलने के लिए अपने ही पैरों पर भरोसा कीजिए और उन्हें उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ाइए। उन्होंने कहा कि मुठ्ठीभर प्रगतिशील लोग पिछड़े हुए बहुसंख्यकों पर, अस्पृश्यों पर जुल्म ढाते हैं। इस स्थिति को बदलने के लिए क्या किया जाए इस बारे में चार शब्द उन्होंने सुनाए। निस्वार्थ बनने के लिए और आत्मरक्षा के लिए ही सही प्रगतिशील पढ़े–लिखे लोगों को चाहिए कि वे छुआछूत को हटा दें और सबके साथ समान बर्ताव करें। उसके बाद उन्होंने जो कहा उसका अर्थ यही था कि ऐसा न करके हिंदू समाज अपने हाथों पत्थर उठा कर अपनी ही नाक को कुचल रहा है, अपनी ही बेइज्जती करवा रहा है। इस तरह वे ठीक दस मिनट बोले। उसके बाद वे बैठे। फिर अध्यक्ष से इजाजत लेकर वहां से निकले और अपनी मोटर में बैठ गए। फिर वहां धुआंधार बरसात शुरू हुई। अगले पांच मिनट तक बारिश होती ही रही।[2]

---

*जनता : 5 नवंबर, 1932

2. 'जनता', 1 मई, 1954 में प्रकाशित "प्रकृति पर (बारिश पर) नियंत्रण" शीर्षक का श्री बी.एस. जाधव का संस्मरण।

61
परंपरा से चले आ रहे कामों को छोड़, शिक्षा पाने की कोशिश करें*

शुक्रवार दिनांक 28 अक्तूबर, 1932 के दिन मुंबई के अपोलो बंदरगाह में सर कावसजी जहांगीर हॉल में अस्पृश्य वर्ग के नेता डॉ. पी. जी. सोलंकी की अध्यक्षता में हुई एक सभा में अखिल भारतीय अस्पृश्य वर्ग के नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को आमंत्रित किया गया था। इस सभा में उन्हें मुंबई के ऋषी समाज की ओर से मानपत्र दिया जाना था। सभा की जगह पर व्यवस्था ठीकठाक रखने के लिए समता सैनिक दल के स्वयंसेवक उपस्थित थे।

मानपत्र का स्वीकार करने के बाद डॉ. अम्बेडकर ने कहा,

"यह मानपत्र केवल मुझे ही अकेले को दिया जा रहा है, इस बात के लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूं। अछूत वर्ग का जो भी काम हो रहा है वह सब केवल मुझ अकेले से हो रहा है यह किसी का कहना हो तो वह झूठ है। इस काम के लिए जितना श्रेय आप मुझे दे रहे हैं उससे ज्यादा श्रेय डॉ. सोलंकी और मेरे साथ काम करने वाले लोगों को दिया जाना चाहिए। डॉ. सोलंकी मेरे साथ काम करते हैं। पिछले तीन सालों में मैंने कौंसिल में कुछ भी काम नहीं किया। लेकिन डॉ. सोलंकी साहब ने कौंसिल में अस्पृश्य वर्ग की बहुत मदद की है। पुणे में हिंदू नेताओं के साथ हमारी जो बातचीत हुई उस दौरान भी डॉ. सोलंकी ने मेरी बहुत बहुत मदद की। यह उनका बड़प्पन है कि जो मानपत्र उन्हें दिया जा रहा था, वह मुझे दिया जाना चाहिए, ऐसा उन्होंने इस सभा के आयोजकों से कहा। आखिर मैं आप लोगों से यही कहना चाहता हूं कि, पुणे में हिंदू नेताओं के साथ जो अनुबंध हुआ उसके अनुसार हमारा जो भी फायदा हुआ है, उसका उपयोग हमारे लोग कैसे करवा लेंगे यह मेरी समझ में नहीं आ रहा है। संसार में मानव को जो सुख–दुख भोगना पड़ता है, वह सब ईश्वर की इच्छा के अनुसार ही होता है। अपनी दारिद्रता अपने ही लिए बनी है ऐसा लोग मानते हैं। इसके लिए मैं सभी लोगों से कहना चाहता हूं कि इस तरह अपने आप को नीच मानने की आदत छोड़ दें। एक बात ध्यान में रखें कि राजनीतिक क्षेत्र में जो यह बड़ा बदलाव हुआ है, उसे उच्च वर्ण के हिंदू लोगों को स्वीकार्य नहीं हैं इनकी नजर में इसकी कोई कीमत नहीं है। वे लोग इस देश के राज्यकर्त्ता बने हैं। उसके लिए फिर हिंदू लोगों की गुलामी में हमें जकड़ने की स्थिति नहीं आएगी, क्योंकि इससे आगे जो भी कानून बनेंगे वे अस्पृश्यों की सहमति से ही बनेंगे। यह एक सामाजिक क्रांति है। मैं आपको बता दूं कि अस्पृश्य वर्ग को जो अधिकार मिले हैं, उन्हें लूटने

जनता : 5 नवंबर, 1932

की कोशिश उच्च वर्ग के हिंदू करेंगे। समता की बुनियाद पर महात्मा गांधीजी के साथ मिल कर जो सुलहनामा तैयार किया गया है, वह हिंदू लोगों को पसंद नहीं है, यह मैं जान चुका हूं। गांधीजी ने अनशन किया तो उन्हें बचाने के लिए ही हिंदुओं को इस सुलहनामे को मानना पड़ा था। इसके बावजूद मुझे डर है कि हमारे हाथ आई सत्ता को झटक लेने की कोशिश वे करेंगे। मैं उम्मीद करता हूं कि हाथ आई सत्ता को आप यूँही गंवा नहीं देंगे।

दूसरी एक और महत्त्वपूर्ण और अपनेपन की सूचना मैं आपको दे रहा हूं कि मैं सहभोजन और मंदिर प्रवेश के खिलाफ नहीं हूं। लेकिन आपको इस राह से राजनीतिक अधिकार नहीं मिलेंगे। आपको घर को चलाने की आवश्यकता है। हमें रोटी, बदन पर कपड़ा, रहने के लिए अच्छे घर की जरूरत है। जिस तरह उच्च वर्ण के हिंदू लोग अपने बच्चों को शिक्षा देते हैं, उसी तरह अपने बच्चों को शिक्षा देने की बेहद जरूरत है, और उनकी तरह हमें भी सभी तरह की सरकारी नौकरियों के क्षेत्र में प्रवेश की कोशिश करनी चाहिए। हम अगर यह करने में सफल रहे तभी हमारा कल्याण होगा।

आखिर में ऋषि मंडली को मैं एक ममताभरी सूचना देता हूं कि अपने अस्पृश्य वर्ग में जो जाति भेद हैं, उन्हें खत्म करने की हमें कोशिश करनी चाहिए। अस्पृश्यों में सामाजिक सुधार की कोशिशें करनी चाहिएं। बुनियाद मजबूत हो तो घर लंबे समय तक टिका रहता है। ऋषी समाज अस्पृश्य वर्ग की बुनियाद है। इसीलिए उनका कार्य अस्पृश्य वर्ग के लिए आदर्श रूप होना चाहिए। ऋषि समाज यदि घोषणा कर दे कि न हम किसी जाति, छोटी जात के हैं और न हम किसी ऊंची जात के हैं, तो अस्पृश्य वर्ग में बहुत जल्द सुधार होने लगेंगे। दूसरी बात यह कि, उच्च वर्ण के लोगों ने हमें यह सोचने की आदत डाल रखी है कि पीढ़ी–दर–पीढ़ी भंगी (मेहतर) का काम करना हमारा ही काम है। इसी वजह से हमारी मानसिकता, मनोवृत्ति ऐसी हुई है। लेकिन मैं आपको साफ–साफ बता देता हूं कि हमारी ऐसी मानसिकता बनने के लिए हमारी आर्थिक स्थिति ही जिम्मेदार है। भंगी का काम पीढ़ी–दर–पीढ़ी करने वालों को अब यह काम करना छोड़ देना चाहिए। अच्छी शिक्षा हासिल करनी चाहिए।

अपनी स्थिति में यदि कुछ फेरबदल परिवर्तन करने हों तो अस्पृश्यता को जड़ सहित नष्ट करना होगा। तभी हम कोई बदलाव ला सकते हैं। इसीलिए उच्च वर्ण के हिंदुओं की बातों पर ज्यादा ध्यान देने के बजाय, हमें अपने कल्याण के बारे में सोचना चाहिए। खैर, आपने आज मुझे जो मानपत्र दिया है उसके लिए आभार व्यक्त कर मैं अपना भाषण समाप्त करता हूं।"

62
आपसी भेदभाव को मिटाना ही ठीक है*

शुक्रवार दिनांक 4 नवंबर, 1932 की रात को 9 बजे बालपाखाडी में गुजराती मेघवाल और अन्य सभी अस्पृश्यों की बहुत बडी आम सभा बुलाई गई थी। उस सभा में मंच पर सब दूर गांधी–अम्बेडकर अनुबंध अजरामर रहे, डॉ. अम्बेडकर ही हम अस्पृश्यों के सच्चे नेता हैं, अस्पृश्यों का उद्धार करने के लिए भगवान डॉ. अम्बेडकर को लंबी आयु दे, जैसी घोषणाएं लगाई गई थीं। ठीक नौ बजे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर, डॉ. सोलंकी, शिवतरकर, गोविंद चव्हाण, सुभेदार सवादकर, फणसे, चित्रे बंधू और अन्य नेताओं के साथ आकर सभास्थल में विराजमान हुए। उनके आते ही डॉ. अम्बेडकर जिंदाबाद की ध्वनि गूंजने लगी। करीब पांच मिनटों तक लगातार उनके नाम का जयकार हुआ। उसके बाद श्री भाणजी राठोड़ ने डॉ. सोलंकी साहब को अध्यक्षस्थान स्वीकारने का प्रस्ताव रखा। उसे शिवराम चौहान का समर्थन मिलने के बाद तालियों की गूंज में डॉ. सोलंकी साहब ने अध्यक्षस्थान ग्रहण किया। उसके बाद लक्ष्मण डी. सोलंकी, डिप्रेस्ड क्लास वेल्फेयर कमिटी के प्रमुख ने मानपत्र पढ़ कर सुनाया। फिर चांदी की डाली में वह अध्यक्ष के हाथों डॉ. अम्बेडकर को अर्पण किया गया। मानपत्र के जवाब में डॉ. अम्बेडकर ने कहा,

"भाइयों और बहनों!

आपने मुझे जो मानपत्र दिया है उसका महत्व मुझे अन्य जगहों से मिले मानपत्रों से अधिक है। इसके लिए मैं आपका बहुत बहुत आभारी हूं। इस चाली में रहने वाले आप लोग म्युनिसीपालिटी में काम करते हैं। खादी भक्त कॉंग्रेस के अभिमानियों ने कई बार यहां आकर आपको उपदेश दिया है कि, कांग्रेस ही आपका भला करेगी, इसलिए कांग्रेस की मदद कीजिए वगैरा। लेकिन वही खादीभक्त म्युनिसिपल कार्पोरेशन में हैं। वहां उन्होंने आपके लिए क्या किया है, इस पर विचार कीजिए। जब जब यह प्रस्ताव सामने आया कि पांच रुपए भरने वाले को वोट देने का अधिकार होना चाहिए, तब–तब खुद को गरीबों के मसीहा कहलाने वाले लेकिन हमेशा अमीरों हितों की रक्षा के लिए प्राणों की बाजी लगाने वाले, इन खादीभक्त कॉंग्रेसवादियों ने उसका विरोध किया, उसे नामंजूर किया। आपकी खोलियों की, मकान की मरम्मत की या आपको मिलनेवाली कम तनख्वाह बढ़ाने की इन लोगों ने कभी कोशिश नहीं की। आपने अगर चार दिन काम बंद रखा तो पूरे शहर में गंदगी इक्ट्ठा होगी और बीमारियां फैलेंगी। लेकिन ऐसे परोपकार वाले काम की कीमत क्या मिलती

'जनता' : 12 नवम्बर, 1932

है आपको? ये अपने ही हिंदू लोग आपको अपनी गुलामी में रखना चाहते हैं। हमें अलग चुनाव क्षेत्र मिला इसलिए महात्मा गांधी ने आमरण अनशन शुरू किया। उसी के परिणामस्वरूप गांधीजी के लिए इन लोगों ने मंदिर खुले करने शुरू किए हैं। हालांकि यह आंदोलन अरवी के पत्तों पर रुके जल जैसा है, वह पत्तों पर रुके बगैर ढुलक जाएगा। इसलिए इन लोगों का भरोसा ना कीजिए। हमें समानता की बुनियाद पर सामाजिक दर्जा हासिल करना है। अपनी आर्थिक गुलामी खत्म करनी होगी। इसलिए अपने बलबूते खड़े होकर हमें संगठन खड़ा करना होगा। नैतिकता ताक पर रख कर पेट पालने वाले लोग आपको तरह–तरह के झांसे देंगे। उनसे सावधान रहें। अपने मन को जो सही लगे वही करें। आखिर में मैं आपसे यही कहना चाहूंगा कि जिस तरह हिंदुओं को जातिभेद खत्म करने के लिए हम कह रहे हैं, उसी तरह हमें आपसी भेद मिटाने की पुरजोर कोशिश करनी होगी। आपने मुझे यहां बुलाकर मानपत्र देकर मेरा जो सम्मान किया है, उसके लिए एक बार फिर मैं आपके प्रति आभार व्यक्त कर आपसे विदा लेता हूं।

63
एक होकर रहें तो भावी राजनीति अपनी गुलामी को खत्म करेगी*

शुक्रवार दिनांक 4 नवंबर, 1932 को रात श्री गजोबा दुधवले ने मराठी भाषा बोलने वाले अस्पृश्य लोगों की सभा बालपाखाडी में बुलाई थी। तीसरी गोलमेज सम्मेलन में हिस्सा लेने जा रहे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को प्रेमपूर्वक विदा करने के लिए इस सभा आयोजन किया गया था। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर गुजराती भाइयों की सभा में गए थे। उनके आने तक रामचंद्र अंडागले का गोलमेज सम्मेलन पर आधारित जलसा लोगों के मनोरंजन के लिए पेश किया जा रहा था। गुजराती भाइयों की सभा से ठीक 11 बजे डॉ. अम्बेडकर साहब, सोलंकी, शिवतरकर, चित्रे, फणसे, जकेरिया, मणियार, उपशाम, रेवजी डोलस, मडकेबुवा, गायकवाड़, आदि अस्पृश्य नेताओं के साथ आए। सभा स्थल पर पहुंचने के बाद कुछ देर तर उन्होंने जलसा देखा। जलसे के गीत सुन कर उन्हें खुशी हुई। उसके बाद अध्यक्ष डॉ. सोलंकी ने कहा, बंधु भगिनिगण, आप सब लोग डॉ. अम्बेडकर का भाषण सुनने के लिए एकदम आतुर हुए हैं, यह आपके चेहरे से साफ जाहीर हो रहा है। इसलिए मैं भाषण नहीं करूंगा, डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर से विनती करता हूं कि वे अपना संदेश दें। फिर तालियों की गड़गड़ाहट के बीच डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भाषण देने के लिए उठे। उन्होंने कहा,

"भाइयों और बहनों,

हमें जो राजनीतिक अधिकार अब मिले हुए हैं, वे हमारी संगठनशक्ति के बल पर मिले हैं। गोलमेज सम्मेलन में जब महात्मा गांधी और मेरे बीच गंभीर मतभेद उभरे तब महात्मा गांधी की जीहुजूरी करने वालों ने उनसे बातें बनाते हुए कहा था कि डॉ. अम्बेडकरयानी महार का कोई बच्चा है। उनके साथ उनके कार्यालय के दो–चार लोगों के अलावा और कोई नहीं है। लेकिन महात्मा गांधी गोलमेज सम्मेलन से जब मुंबई लौटे तब बेलार्ड पीयर बंदरगाह पर अस्पृश्य वर्ग के 20 हजार बंधुभगिनियों ने काले निशान दिखा कर उनका विरोध किया, तब जाकर उनकी आंखें खुलीं। तब वह कहने लगे कि विलायत में और यहां खुद मेरे अनुयायियों ने मुझे बरगलाया और धोखा दिया। डॉ. अम्बेडकर के पीछे लोगों के प्रचंड समुदाय के होने की बात का मुझे यकीन दिलाया जाता तो मैं उनकी मांगों का विरोध नहीं करता। मेरे दोस्तों ने और मेरे चेलों ने अस्पृश्यों में से ऐरो–गैरों को ही सिंदूर लगा कर नेता बनाया और मुझे धोखा दिया। अस्पृश्यों के सच्चे नेता से मेरी पहचान भी नहीं होने दी। खैर.

जनता : 19 नवंबर, 1932

इसीलिए जाते–जाते मैं आपको दो शब्द प्रेम के साथ कहता हूं, वे हमेशा ध्यान में रखें। पहली बात यह कि, अपनी एकता को कायम रखिए, आपस में फूट न पड़ने देना। जातिभेद, वर्गभेद, जिलाभेद को बढाएं नहीं। मेरे बाद डॉ. सोलंकी साहब और मेरे दफ्तर में मेरे साथ काम करने वाले मेरे अन्य सहकर्मियों की सहायता करें। अन्य लोगों की चकाचौंध भरी बातें सुन कर आपा मत खोना। मैं जानता हूं कि मेरे साथ काम करने वालों के खिलाफ जहर फैलाने का काम कुछ लोगों ने शुरू किया है, इसके बावजूद मेरा आपसे यही कहना है कि अपना मन कलुषित होने न दें। मेरे आने तक एकजुट होकर रहें। एकता से रहने पर अपनी गुलामी से मुक्तता दिलाने की दिशा में भावी राजनीति से हमें लाभ मिलेगा। साथ ही, एक पत्रक में व्यक्त की गई मेरी गुजारिश के अनुसार आप सब बोर्डिंग फंड में जितना दे सकते हैं उतना योगदान दें।"

इसके बाद माला और गुच्छ देने का कार्यक्रम हुआ और सभा समाप्त हुई।

64
भाग्य पर भरोसा करके ना बैठिए, जो करना हो वह अपनी भुजाओं के बल पर करिए*

शनिवार, दिनांक 18 फरवरी, 1933 के दिन कसारा में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में ठाणे जिला परिषद हुई थी। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर मुंबई से कार से 8 बजे कसारा पहुंचे थे। उनके साथ श्री शिवतरकर, दिवाकर पगारे और गणपतबुवा जाधव उर्फ मडकेबुवा आए थे। कसारा में बाबासाहेब का स्वागत करने के लिए कल्याण के समता सैनिक दल के वालंटियर और आसपास के गांवों से आए प्रतिनिधि मौजूद थे। नासिक से मेसर्स भाऊराव गायकवाड़, के. बी. जाधव, लिंबाजीराव भालेराव और रोकडे उपस्थित थे। डॉ. अम्बेडकर की मोटर में शोभायात्रा निकाली गई थी। शोभायात्रा मंडप में पहुंची तब परिषद के काम की शुरुआत हुई। शुरूआत में परिषद के स्वागताध्यक्ष शंकरनाथ बर्वे ने उपस्थितों का स्वागत किया और प्रस्ताव रखा कि डॉ. अम्बेडकर से अध्यक्ष स्थान ग्रहण करने की विनति की जाए। उसका रोकड़े द्वारा समर्थन किए जाने के बाद डॉ. अम्बेडकर ने तालियों की गूंज में अध्यक्ष स्थान ग्रहण किया।

डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा,

इससे पहले मैं कभी ठाणे जिले में आ नहीं पाया था। इस वजह से आपसे मेरा परिचय बढ़ा नहीं। उसे बढ़ाने की कोशिश के लिए तथा ठाणे जिले के सभी प्रतिनिधियों से मुलाकात का यह अवसर निर्माण करने के लिए महंत शंकरदास बुवा का मैं शुक्रगुजार हूं। आज मैं महत्वपूर्ण सवालों के बारे में बहुत कम और सूचनात्मक बोलने वाला हूं। आप ध्यान से सुनेंगे ऐसी उम्मीद रखता हूं। आज आपने जो कुछ भी कमाया है, उसके बारे में सोचेंगे तो एक अलग बात भी आपके ध्यान में आएगी। महात्मा गांधी और अन्य सनातनी लोगों के साथ अस्पृश्यता नष्ट करने को लेकर पिछले आठ दस दिनों से मेरी बातचीत चल रही है। महात्मा गांधीजी ने अस्पृश्यता निवारण करने के लिए मंदिर खोलने के और अस्पृश्यता को धो डालने के कार्यक्रम चलाए हैं। मंदिर प्रवेश के बारे में मैंने एक पत्रक प्रसिद्ध किया है। उसमें मैंने साफ–साफ लिखा है कि अस्पृश्यता नष्ट करने के लिए जरूरी नहीं कि मंदिर प्रवेश कराया जाए। हमें हिंदू धर्म में समानता चाहिए, चातुर्वर्ण्य नष्ट होने चाहिए, तभी हम मानेंगे कि हिंदू धर्म हमें स्वीकार कर रहा है। महात्मा गांधी और मुझमें यही फर्क है। सनातनी लोग चातुर्वर्ण्य हटाने के लिए तैयार नहीं हैं। मंदिर खोलने

*जनता : 25 फरवरी, 1933

के लिए तैयार नहीं हैं। उसके साथ एक और बात जुड़ी है, जिन लोगों के साये से भी वे लोग बचकर रहना चाहते हैं, उनके साथ अब उन्हें समानता से रहना और उनकी हुकूमत को मान कर चलना पड़ेगा। अपनी उन्नति की अभी–अभी शुरुआत हुई है। अभी–अभी हमारे हालात सुधरने लगे हैं। पहले अपने लोग पुलिस में नहीं हुआ करते थे, लेकिन आज अस्पृश्य लोग पुलिस में नौकरी कर रहे हैं। मैट्रिक करने वाले अस्पृश्यों के बच्चे पुलिस का प्रशिक्षण पा रहे हैं, उनके मातहत अन्य स्पृश्य लोग नौकरी करेंगे। इसके लिए हममें ज्यादा से ज्यादा अधिकारी वर्ग के तैयार होने की जरूरत है। पूरे समाज के दर्जे में सुधार आना चाहिए। तभी हम पर कहीं अन्याय नहीं किया जाएगा। आज हममें से कोई डिप्टी कलक्टर, तहसीलदार तो कोई पुलिस इन्स्पेक्टर हुआ दिखाई देता है, लेकिन ऐसे उदाहरण बहुत कम हैं। आगे इस संख्या में बढ़ोतरी आनी है। इस तरह से जब अपने लोग अधिकारी बनेंगे तब ऊपरी वर्ग के लोगों के हम पर हो रहे अत्याचार कम होंगे। लेकिन यह सब प्राप्त करने के लिए आप लोगों को हमेशा जागृत रहना चाहिए। एक कहावत है "हीरा पड़ा राह में कोई अंधा निकल जाए।" यानी कि अंधे को हीरे की क्या कीमत? इसलिए कहता हूं यह जो मौका मिला है उसे व्यर्थ न गंवाएं। इस देश की राजनीति में इससे पूर्व कभी न घटित हुई बातें अब घटने लगी हैं। अब तक यही चलता रहा था, "नीचे वाला बस पीसता रहे और ऊपर वाला रोटी खाता जाए।" ऊपरवालों के मजे हैं और नीचे वालों की जान आफत में है। अंग्रेजों का राज आया, लेकिन वे क्रांति नहीं लाए। हमारी स्थिति में बदलाव लाने की कोशिश उन्होंने नहीं की। वे पराए लोग थे। उन्हें अपने यहां राज चलाने के लिए उच्चवर्णियों की मदद लेनी पड़ती थी। इसीलिए उनकी अनुमति लेकर ही वे राज्य चलाते थे। इसीलिए हमारी प्रगति नहीं हो पाई। किंतु अब के बाद ऐसा नहीं होगा। नए संविधन के अनुसार हम भी सत्ता में आएंगे। ऊपर वाला और नीचे वाला ऐसा भेद नहीं रहेगा।

हम कानून बनाएंगे। विधिमंडल में हमें अलग प्रतिनिधित्व मिला है। हमारे प्रतिनिधि विधिमंडल में बैठेंगे और फिर उनकी सलाह के अनुसार पूरे देश का प्रशासन चलेगा। गांव में महार को कोतवाली में आने नहीं दिया जाता था। लेकिन वही महार जब लेजिस्लेटिव कौंसिल में जाएगा तब गांव के लोगों को अस्पृश्य लोगों के साथ समानता का बर्ताव करना ही पड़ेगा। लेकिन मुझे इस बात की पूरी तसल्ली नहीं है कि मिली हुई इस शक्ति का आप पूरा–पूरा उपयोग करेंगे। अपने हाथ कौन–सी शक्ति आ रही है, इस बारे में पूरी तरह जागरुक रहें और इस शक्ति के बारे में सोचें। आपसी भेद को बढ़ावा मिले ऐसा कुछ मत करिए, एकता को बढाएं। फूट को मिटा दें। दुर्भाग्य की बात यह है कि आपस में फूट का नशा बढ़ता जा रहा है। सब दूर झगडे हो रहे हैं। इससे सब किए पर पानी फिर रहा है। नासिक जिला और कोंकण

इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। ये दोनों हिस्से एक–दुसरे से जुड़े हैं। कोकण और नासिक में बड़े –बड़े सत्याग्रह हुए। वे ना होते तो हमें जो राजनीतिक सत्ता प्राप्त हुई है वह प्राप्त न होती। नासिक सत्याग्रह के वक्त मैं लंदन में था। उस सत्याग्रह के कारण ऐसी हलचल मची कि वहां लंदन टाइम्स में हर रोज उसके बारे में खबरें छपती थीं। अंग्रेज लोग भी उन खबरों के बारे में आश्चर्य प्रकट करते थे। एकता के बल पर नासिक के लोगों ने इतना बड़ा काम किया था। लेकिन बड़े दुःख के साथ मुझे कहना पड़ रहा है कि वही नासिक जिला अब अपने पैर पीछे खींच रहा है। वहां के लोगों ने मानों सार्वजनिक कार्य से संन्यास ले लिया है। और यह सब क्यों हो रहा है? तो केवल व्यक्तिद्वेष के कारण। इगतपुरी की घटना को इसके एक उदाहरण के तौर पर लिया जा सकता है। वहां एक बार अस्पृश्यों की सभा हो रही थी। वहां इस बात पर विवाद छिड़ा कि उस सभा का अध्यक्ष कौन बनेगा? आखिर एक खंभे को अध्यक्ष बना कर सभा का कामकाज आगे बढ़ाना पड़ा। अध्यक्ष कौन बनेगा? सचिव कौन बनेगा? कोषाध्यक्ष कौन बनेगा? इन्हीं बातों को लेकर एक–दूसरे से ईर्ष्या की जा रही है। एक–दूसरे से द्वेष किया जा रहा है। अगर यही हाल कायम रहा तो इतने परिश्रम के बाद पाया हुआ यह मौका व्यर्थ चला जाएगा। मान लीजिए कल नासिक को एक प्रतिनिधित्व मिले तो आप उसी को चुनें जो बिना किसी स्वार्थ के काम करेगा। कौन सयाना है और कौन नहीं है इस बारे में सोचिए। सम्मान पाने के भूखे लोगों की मूर्खता का शिकार ना बनें। दीपक भले किसी के हाथों जले, रोशनी ही देता है, इसलिए दीपक जलना जरूरी है। आपस की फूट को खत्म करिए। अपनी खामियों से पार पाने का ज्ञान प्राप्त कीजिए। सभाओं में प्रस्ताव पारित किए जाते हैं उन पर ध्यान दीजिए। अड़चनों से पार पाने के रास्ते तलाश लीजिए। नारू (रोग) हो जाए तो उसके बारे में बातें ना बनाइए। उसे ठीक करने के लिए इलाज कीजिए। हालात के बारे में जान लीजिए। हालात के बारे में कोई आपके घर आकर आपको जानकारी नहीं देगा। इसके लिए 'जनता' अखबार खरीदा कीजिए। एक और बात के बारे में मैं आपको आगाह करना चाहता हूं। पुणे अनुबंध हुआ लेकिन हिंदुओं को वह तहे दिल से नापसंद है। सच पूछो तो हम हिंदू धर्म की रक्षा कर सकते हैं। लेकिन हिंदू लोग ऐसे हैं, कि पुणे अनुबंध का फायदा आपकी झोली में वे पड़ने नहीं देना चाहते। कल हिंदू और मुसलमान कौंसिल में एक होकर आपको कंकड़ की तरह चुन कर अलग कर देंगे। सत्ता के बंटवारे को लेकर हममें संघर्ष होंगे और उस लड़ाई–झगड़े में हमें हमारा हिस्सा मिलना ही चाहिए। महाभारत में भी कौरव–पांडवों के बीच युद्ध हुआ था। लेकिन उसमें भीष्माचार्य को पांडवों की सही स्थिति का पता होने के बावजूद कौरवों का दाना–पानी लेते रहने के कारण उन्हें कौरवों का ही साथ देना पड़ा था। अर्थात्, 'अर्थस्य पुरुषो दासः' अर्थात् आदमी पैसे का गुलाम है, जैसी अपनी हालत होने न दें। लोगों के दांव–पेंच

पहचान कर उसके हिसाब से अपना बर्ताव रखें। जो कुछ बुरा होता है, वह ईश्वर करता है; ईश्वर ने ही हमें अस्पृश्यों को जन्म दिया है; यह भगवान की ही इच्छा है जैसे खयाल दिल से निकाल दीजिए। फिलहाल आप ईश्वर के बारे में सोचें ही नहीं। पिछले जनम में किए किसी पाप के कारण नहीं, हमारी हालत आज ऐसी है, क्योंकि लोगों ने अपने स्वार्थ पूरे कर लिए, और हमारा नुकसान किया। पिछले जन्म के पापों के कारण यह नहीं हुआ है। महार के पास अगर जमीन नहीं है, तो वह इसलिए कि अन्य लोगों ने वह हड़प ली है। अन्य लोगों ने लूट लीं इसीलिए अस्पृश्यों के पास आज नौकरियां नहीं हैं। यह जो कुछ अच्छा–बुरा हो रहा है उसे सुधारना अपने ही हाथ में है। रेलवे का उदाहरण लेते हैं। रेल का कामकाज वाइसराय की विधि परिषद से चलता है। रेलवे से कामगारों की छंटनी करनी हो तो सबसे पहले अस्पृश्य वर्ग के कामगारों को हटाया जाता है। अन्य वर्ग के कामगारों पर संकट की यह गाज तुरंत नहीं गिरती। क्योंकि अन्य वर्गों के कामगारों की जाति के, धर्म के प्रतिनिधि विधि परिषद में मौजूद होते हैं। वे अपने कामगारों के हित में वहां डटे रहते हैं। अपने वर्ग के प्रतिनिधि वहां नहीं हैं। हमारा एक प्रतिनिधि वहां है, लेकिन वह बेचारा अपने वर्ग के बारे में वहां कुछ बोलता ही नहीं। लेकिन अब हालात बदलेंगे। अबके बाद वायसराय की विधि परिषद में 18 प्रतिशत प्रतिनिधि हमारे वर्ग से चुने जाएंगे। इसीलिए, हमें सावधान रहना होगा और केवल उन्हीं लोगों को चुन कर भेजना होगा जो ठीक ढंग से काम करने वाले हैं। आपको एक आखिरी बात बताता हूं, भाग्य पर भरोसा मत रखिए। जो भी करना हो वह अपने बाजुओं के बल पर करो। इतनी देर तक आपने मेरा भाषण शांतिपूर्ण ढंग से सुना, सभा का यह कार्यक्रम आयोजित किया इसके लिए मैं आप सबके प्रति आभार व्यक्त करते हुए मैं अपना वक्तव्य पूरा करता हूं।

65
कोकणस्थ, देशस्थ का भेद मुझे मंजूर नहीं*

रविवार दिनांक 19 फरवरी, 1933 के दिन दांडारोड वांद्रे, मुंबई में श्री देवराव नाईक की अध्यक्षता में अस्पृश्यों की एक सार्वजनिक सभा हुई। इस सभा का उद्देश्य डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर.का स्वागत कर उनका सम्मान करना था। सभा में उनके कार्य को सबकी मान्यता जाहिर करने के लिए उन्हें चांदी का गुलदस्ता अर्पण किया गया। सभा में वांद्रे में रहने वाले स्त्री–पुरुष सम्मिलित थे। डॉ. अम्बेडकर ने इस सभा में जो भाषण दिया वह दिल को छूने वाला विचार प्रेरक था। सो, युवाओं के जरिए इधर जो लोग समाजकार्य में बाधा डाल रहे थे, उनका जिक्र होना स्वाभाविक था। उन्होंने अपने भाषण में कहा,

"कुछ लोग ठाणे के बोर्डिंग के बारे में और समता सैनिक दल के बारे में अफवाहें फैला कर समाज में फूट डालने का बुरा काम कर रहे हैं। ये लोग और कोई नहीं बल्कि हमारे ही समाजबांधव हैं। वे बुजुर्ग लोग हैं और इसीलिए हम–तुम अब तक उनका सम्मान करते आए हैं। लेकिन आज उन्होंने अपना अनुभव और अपनी अकल गिरवी रख छोड़ी है। राजमान्य संभाजी गायकवाड़, रा. गोविंद रामजी आड्रेकर और रा. शिवराम गोपाल जाधव ने इन विभाजनकारी लोगों का नेतृत्व स्वीकार किया है। इनकी बुद्धि बढ़ती उम्र के साथ बढ़ने की जगह घटती जा रही है। अचरज की बात यह भी है कि कुछ युवक उनकी बातों में आकर अपनी शक्ति, समय और वक्तृत्व का गलत इस्तेमाल कर रहे हैं। इन युवाओं से मुझे उम्मीद है कि वे अपनी ताकत का इस्तेमाल समाज में एकता स्थापित करने के लिए करेंगे। इन लोगों का आज का काम सिर्फ इतना है कि मेरी गैर–हाजिरी का फायदा लेकर सार्वजनिक काम को खत्म करना।

उनकी जो आपत्तियां अब तक मुझ तक पहुंची हैं, वे इस प्रकार हैं –

1. ठाणे के बोर्डिंग में कोकणस्थ छात्रों को प्रवेश नहीं मिलता।
2. इस बोर्डिंग के सुपरिंटेंडेंट के पद पर शिवराम गोपाल जाधव की नियुक्ति की जाए।
3. सुभेदार सवादकर को समता सैनिक दल के सर्वाधिकारी के पद पर क्यों चुना गया?
4. हमारे आंदोलन में अन्य जातियों का प्रवेश क्यों हो?

*जनता : 25 फरवरी, 1933

कोई भी समझदार आदमी यह बात समझ सकता है कि ये बहुत ही टुच्चे, बेकार के आरोप हैं। यह स्थिति सचमुच दुर्भाग्यपूर्ण है कि किसी सार्वजनिक सभा में उनका जिक्र करना पड़ रहा है। हालांकि कई बार छोटी–छोटी बातें भी महत्वपूर्ण हो जाती हैं। इनमें से पहला आरोप सफेद झूठ है। कोकणस्थ लोगों से मेरा कोई बैर नहीं है। मैं खुद कोंकण से हूं, लेकिन मैंने कभी कोकणस्थ–देशस्थ जैसा भेदभाव नहीं किया। हां, यह बात सही है कि शिक्षा के प्रसार के दृष्टिकोण से कोकणस्थ महार पिछड गए हैं। उन्हें इस बारे में जितना हो सके ध्यान देना चाहिए। दूसरे आरोप के बारे में इतना ही कह सकता हूं कि हर किसी को अपनी औकात पहचान लेनी चाहिए। जाधव अगर अपनी योग्यता साबित करते तो उन्हें उस पद से हटाने की नौबत ही नहीं आती। छात्रावास कोई आढ़तिए या दलाल द्वारा चलाई जा सकने वाली जगह तो है नहीं। सुपरिटेंडेंट द्वारा अपने आदर्श बर्ताव से बच्चों के आगे आदर्श उपस्थित करना चाहिए। छात्रों को सजा देना यही एकमात्र काम नहीं होता। लेकिन ये जिम्मेदारियां जब जाधव पूरी नहीं कर पाए, तो संस्था के हित को ध्यान में रखते हुए उन्हें हटाए बगैर कोई चारा ही नहीं रहा। और इस बोर्डिंग को सरकारी मदद भी मिलती है इसलिए संस्था अगर सही ढंग से नहीं चलाई गई तो सरकार को जवाब भी देना पड़ेगा। अबके बाद ठाणे और महाड के छात्रावास एक कमेटी चलाएगी और उस कमेटी के अध्यक्ष हैं, सुभेदार सवादकर। तीसरा आरोप दल के बारे में है। हां, दल में यदि एकता नहीं हो तो उसमें अनुशासन नहीं रहेगा। चौथा आरोप यह है कि हमारे आंदोलन में ब्राह्मण, कायस्थ, भंडारी आदि जाति के लोग क्यों हों? इसका सीधा, सरल, आसान जवाब मैं देता हूं, ताकि आप समझ जाएं। आप जब बीमार होते हैं, तब डॉक्टर के पास जाते हैं। तब अगर वह महार नहीं होगा तो क्या आप उसके पास नहीं जाएंगे? नहीं! फिर इस बारे में आपके मन में आशंका क्यों है?

आज कटु शब्दों का इस्तेमाल करना पड़ा इसका मुझे बड़ा दुःख है, लेकिन कटु कर्त्तव्य के तौर पर मुझे यह करना पड़ा। इस तरह की स्थितियां पैदा न होने देना आपके ही हाथ में है।"

यह कह कर डॉ. बाबासाहेब ने अपना भाषण पूरा किया। बाद में अध्यक्ष ने कार्यक्रम के समापन में कहा कि अब के बाद अगर आपको कोई अफवाहें फैलाता हुआ नजर आया तो आप उसका हाथ पकड़कर तुरंत उसे डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के पास ले जाएं। तब आपकी समझ में आएगा कि वह आपको किस तरह बरगला रहा है। आपकी गलतफहमी दूर हो जाएगी। सुभेदार सवादकर, श्री उपशाम, डी. वी. प्रधान, कमलाकांत चित्रे, शिवतरकर मास्तर आदि लोग सभा में उपस्थित थे। उन लोगों को फूलों की मालाएं अर्पण की गईं। फिर सभा समाप्त हुई।

66
लोगों की धर्म भीरुता का फायदा उठाने वालों से चौकस रहें*

शनिवार तारीख 4 मार्च, 1933 को रात 9.30 बजे मुंबई के सैंडहर्स्ट रोड (वाडीबंदर) के पास जी.आई.पी. रेलवे खुले मैदान चाल के पास वाली इण्डियन पेनुनसुला रेलवे पर एक शामियाना लगाया गया था। वहां श्री ग्रेट आर. डी. कवली, बी. ए., एल. एल. बी. की अध्यक्षता में अस्पृश्य वर्ग की सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया था। इस सभा में अखिल भारतीय अस्पृश्य वर्ग के नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को मानपत्र अर्पण किया गया। इस अवसर पर कई महिलाएं और पुरुष एकत्रित हुए थे। श्री शिवतरकर, श्री नाईक, सहस्त्रबुद्धे, दिवाकर पगारे, शा. उपशाम, कमलाकांत चित्रे, मेषराम आदि लोग भी सभा में उपस्थित थे।

पहले रा. पुंजाजी जाधव ने अध्यक्ष की सूचना का प्रस्ताव रखा जिसका अनुमोदन रा. करडक ने किया। अध्यक्ष के स्थान ग्रहण करने के बाद रा. दिवाकर पगारे ने मानपत्र पढ़ कर सुनाया। उस मराठी भाषा के मानपत्र पर डॉ. अम्बेडकर के लिए दीर्घायु की कामना करने वाले 85 लोगों के नाम थे। मानपत्र इस तरह था –

जातिभेदविध्वंसक, समाजक्रांतिकारक, हितमार्गदर्शक, मूकनायक

डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर

एम. ए., पी–एच डी., डी. एस. सी., बार ॲट लॉ

एम. एल. सी. जे. पी., मुंबई

परमप्रिय डॉ. बाबासाहेब! आपके चरणों में, मूल रूप से नासिक जिले के निवासी अस्पृश्य माने जाने वाले, मुंबई के सैंडहर्स्ट रोड (वाडीबंदर) के पास जी.आई.पी रेलवे चाल में रहने वाले आपके सभी आज्ञाकारी और विनम्र अनुयायियों का सप्रेम जोहार सादर है!

आपका हर क्षण बहुत अमूल्य है, इसके बावजूद हम गरीबों की उत्कट इच्छा के अनुसार आपने आज यहां आने की कृपा की, हमने बड़ी धन्यता महसूस की। हम आपके बड़े आभारी हैं।

आप बड़े गुणवान हैं, साथ ही बड़े धैर्यशाली हैं। आपकी असीम बुद्धिमत्ता की तथा आपकी वीरता को कसौटी पर कसने वाले तथा उसका परिचय देने वाले कई छोटी–बड़ी घटनाएं अब तक के आपके जीवन में आ चुकी हैं। आपकी यशोदायी

*जनता : 11 मार्च, 1933

छात्रदशा, महाड़ और नासिक सत्याग्रह के समय का आपका स्फूर्तिदायक नेतृत्व, समाज के हित के लिए गोलमेज सम्मेलन में आपका किया हुआ काम, पुणे समझौते के समय प्रकट हुआ आपका प्रबल आत्मविश्वास, आपकी असीम बुद्धिमत्ता और प्रचंड वीरवृत्ति का परिचाय देने वाले आपके जीवन के कुछेक प्रसंगों में से एक है। सफल छात्र, चतुर राजनीतिज्ञ और धैर्यशाली नेता के रूप में आपकी जो कीर्ति है वह इन प्रसंगों से अजरामर होकर आसमान तक फैली है। जैसे–जैसे समय बीतेगा वैसे–वैसे आपका कीर्तिदीपक अधिकाधिक प्रज्ज्वलित होता रहेगा, यह निश्चित है।

महाराज, आपने हमारा मार्ग प्रकाशित किया है। हमारे हृदय में नई चेतना की दिव्य ज्योति जगाई है। युगों–युगों के अज्ञान एवं अंधकार को भेद कर प्रकाश देने वाली और पहले कभी किसी से हमें न मिली नयी ज्ञानदृष्टि आपने हमें दी है। केवल दुनिया की नजर में ही नहीं वरन् खुद हमारी नजरों में भी हमारी कीमत आपने बढ़ाई है, हममें आपने स्वाभिमान जगाया है। आत्मसम्मान के महत्त्व को आपने हमें समझाया है।

आप हमारे अनन्य नेता हैं, हमारे सही मार्गदर्शक हैं, हमारे सन्मित्र हैं, हमारा सब कुछ आप हैं। हमारे भगवान, हमारा धर्म, हमारी राजनीति और हमारा समाजकारण आपके शब्दों में और आपकी नीति में समाया हुआ है।

सम्माननीय महाराज, हम गरीब हैं, लेकिन हमारा आपके प्रति प्रेम, आपके प्रति हमारी निष्ठा और हमारा आप पर विश्वास समर्थ और अटल हैं। उनके बल पर आप जिस मार्ग पर कहेंगे, उस मार्ग पर, फिर वह भले कितना ही कठिन क्यों न हो, चलने की हम हृदयपूर्वक और दृढ़ संकल्प होकर कोशिश करेंगे, इस तरह का आश्वासन आपको देने की इजाजत हम खुद ले रहे हैं। हमारी निष्ठा का, कृतज्ञता का और हम सबकी तरफ से आपको खुले आम दिए आज के आश्वासन के और आज के इस अविस्मरणीय दिन के एक छोटे से स्मारक के रूप में तथा एक छोटे से सबूत के रूप में, फूल नहीं फूल की पंखुड़ी के रूप में सही हम यह मानपत्र आपके चरणों में सादर अर्पण कर रहे हैं। कृपया इसको स्वीकार कर हमें कृतार्थ करें।[1]

उसके बाद अध्यक्ष के हाथों डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को मानपत्र अर्पण किया गया। साथ ही चांदी की एक कप–प्लेट और माला और गुलदस्ता देकर डॉ. बाबासाहेब का सम्मान किया गया। इसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भाषण देने के लिए उठ खड़े हुए। पहले उन्होंने अपना सम्मान किए जाने का धन्यवाद दिया। उन्होंने कहा,

1. डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को समर्पित मानपत्र : संपादक शंकरराव हातोले. पृष्ठ 12–13

इस सम्मान पत्र में मेरे गौरव में जो भी कुछ लिखा गया है, वह कहां तक सच है, यह कहना कठिन है। लेकिन, एक बात सच है कि मेरी प्रशंसा में अलंकारयुक्त भाषा का प्रयोग करते हुए आपने अपने जैसे ही एक इंसान को अच्छे गुणों से परिपूर्ण ईश्वर बना दिया है। इसे अगर सच मान लिया जाए, तो कहना पड़ेगा कि आपकी भावनाएं स्वहितनाशक हैं। मैं यही मानता हूं और इसीलिए एक चेतावनी के रूप में पहले दो शब्द कहना जरूरी मानता हूं। किसी को ईश्वर बना कर अपने उद्धार का भार उस पर डालने से आप अपने कर्त्तव्य से मुंह मोड़ लेते हैं। इस भावना से अगर आप चिपके रहे तो आप प्रवाह के साथ बहने वाले लकड़ी के तने बन जाएंगे। आपके अंदर की शक्ति बेकार हो जाएगी और फिर इस नए युग में आपको मिली राजनीतिक सत्ता बेकार जाएगी। आज तक आपने इस नादान भावना को अपने मन में घर बनाने दिया और इसीलिए उसने आपके वर्ग का सत्यानाश किया है। इससे आगे जाकर मैं यही कहूंगा कि इस तरह की नादान भावना ने आपका ही नहीं पूरे हिंदू समाज का नाश किया है। अपने इस हिंदुस्तान देश की हीनता का कोई कारण होगा तो वह यह दैवत्व ही है।

अन्य देशों के लोग समाज में अगर कोई बखेड़ा खड़ा हो जाए, या समाज पर कोई संकट आ जाए, तो एकता से तथा पूरे सामर्थ्य से अपना उद्धार मुक्ति करवा लेते हैं। लेकिन हमारे धर्म ने हमारी यह धारणा बना दी है कि इंसान कुछ नहीं कर सकता। समाज पर जब कोई बड़ा संकट आता है, या समाज की प्रगति अवरुद्ध हो जाती है तब भगवान अवतार लेकर आते हैं और संकट का निवारण करते हैं। इस कारण लोग मिल–जुल कर संकट का सामना करने के बजाय ईश्वर के अवतार का इंतजार करते रहते हैं।

हमारा हिंदू धर्म पुरातन है, ऐसी शेखी बघारते कहा जाता है कि ग्रीक, रोमन आदि पुरातन और प्रसिद्ध राष्ट्र नष्ट हुए लेकिन हमारा हिंदू समाज अभी भी जीवित है। हालांकि केवल जिंदा रहने का कोई महत्व नहीं। इंसान इज्जत के साथ जीता है या नहीं इसका महत्व है। इस नजरिए से देखें तो हिंदू समाज ने जिंदा रह कर क्या दिग्विजय किए हैं, इस बारे में सोचना होगा। अन्य लोगों का दासत्व स्वीकारने के अलावा हमने किया ही क्या है? इस तरह जीने का कोई मतलब नहीं है। किसी का गुलाम होकर 100 साल जीने से मर्दानगी के साथ दो दिन जीना कई गुना बेहतर है। दो लोगों की टक्कर में एक अगर पलायन करता भी है, तो वह भाग कर जिंदा रहता है, और दूसरा दुश्मन को हरा कर जिंदा रहता है। पलायन करने वाला या दासत्व को स्वीकार करने वाला अपने किए से क्या हासिल करता है? वह दूसरे का गुलाम बनता है, स्वत्व भूल जाता है, गुलामों की संख्या बढ़ाता रहता है और नामर्दों की फौज खड़ी करता है, नामर्दगी फैलाता है। क्या मरना इससे बेहतर नहीं

होता? हिंदू समाज दूसरों का दास बन कर ही क्यों जीवित रहा, इस बारे में सोचें तो एक बात ध्यान में आती है और मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि हर बार उसने अपनी आज़ादी/मुक्ति के लिए ईश्वर का इंतजार किया।

इस दुनिया में ईश्वर हो या ना हो, इस बात पर विचार करने की तुम्हें कोई जरूरत नहीं है। पर एक बात निश्चित है कि इस दुनिया में जो कुछ घटता है वह सब इंसान का ही किया धरा होता है। कुछ पढ़े–लिखे लोग अन्य लोगों को अज्ञान के अंधेरे में रखते हैं, उन्हें ईश्वर की झूठी कल्पनाओं के पीछे लगा कर, उनकी धर्म में विश्वास करने की आस्था, आदत का फायदा उठाते हैं और अपना उल्लू सीधा करते रहते हैं। क्योंकि, इस उपाय से आपकी संगठन की शक्ति खत्म होती है और आप बकरियों की तरह खोखली भावनाओं में उलझ कर रह जाते हो और आपको पूरी तरह लूटने के इरादे में उन्हें सफलता मिलती है। आज हमारी हालत दीन–हीन हुई है। इस स्थिति से बाहर निकल कर अपना फायदा करवाना हो तो ऐसी मिथ्या कल्पनाओं से अपने आप को मुक्त रखना आवश्यक है। आप सबको, महिलाओं और पुरुषों को इस बात पर यकीन रखना होगा कि आपका उद्धार करने के लिए कोई और आने वाला नहीं है। मैं भी आपका उत्थान नहीं कर सकता। अगर ठान लो तो आप स्वयं समर्थ बन कर अपना उन्नति/उत्थान कर सकते हैं। एक बात कहने में मुझे बड़ी खुशी हो रही है कि अपने वर्ग में सभी तरफ वातावरण में आंदोलन की हवा चल रही है। हालांकि इस तरह जागृति होने के बावजूद आपको मैं एक और महत्वपूर्ण बात बताना चाहता हूं कि अबके बाद आपका भविष्य अन्य किसी बात में नहीं, राजनीति में ही है। पंढरपूर, त्र्यंबकेश्वर, काशी, हरिद्वार आदि जगहों की यात्रा कर या शनिमहात्म्य, शिवलीलामृत, गुरुचरित्र आदि पोथियों का पाठ कर कर या एकादशी, सोमवार आदि व्रत कर, आपका उत्थान नहीं होगा। आपके माता–पिता पिछले हजारों सालों से यही सब करते आए हैं। इसके बावजूद क्या आपकी दयनीय स्थिति में बाल भर का भी फर्क भी आया है? वही, पहनने के लिए फटे कपडे, खाने के लिए अधपकी रोटी के टुकड़े, ढोरों से गंदा आपका रहन–सहन, मुर्गियों की तरह रोगों के कारण फटाफट दम तोड़ने की निर्बलता ने आज तक आपका पीछा नहीं छोड़ा है। सोचिए क्या यही आपकी अब तक की हालत नहीं रही है? एक दवा से अगर रोग काबू में नहीं आता तो क्या दूसरी दवा नहीं करनी चाहिए? क्या वैद्य को नहीं बदलना चाहिए? आज तक आपने जो मंदिरों में कई मीलों तक पैदल चलकर चक्कर लगाए, वे काम नहीं आए हैं और न ही आपके व्रत आपकी जिंदगी भर की खस्ताहाली भुखमरी को हटा पाए हैं।

इन हालात को बदलने का, अपने उद्धार का केवल एक उपाय अब आपके पास है और वह है राजनीति, कानून बनाने की शक्ति! आपको भरपेट खाना नहीं

मिलता, छोटे से घर में भीड़–भाड़ के बीच आपको जीना पड़ता है, पैसा कमाने के साधन आपको नहीं मिलते, बेकारी में दिन गुजारने पड़ते हैं, इसके क्या कारण हैं? आपका अपना भाग्य या आपका भगवान? असल में ये दोनों बातें इसके लिए जिम्मेदार नहीं हैं। आपको रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा देना देश के कानून बनाने वालों का काम है। और इस सत्ता के कामकाज में आगे आप भी शामिल होने वाले हैं। अपना जीवन सुखदायक बनाने के लिए योग्य कानून आपको तैयार करवा लेने चाहिएं। मान लीजिए रेलवे की चाल में आपके हर परिवार को केवल एक कमरा मिलता है, लेकिन नए कानून से आपको यहां दो–दो कमरे भी मिल सकते हैं।

अपने बच्चे को पढ़ाने के लिए आपके पास पैसा नहीं है लेकिन कानूनन आपके बच्चे के पढ़ने की व्यवस्था की जा सकती है, बशर्ते उस आशय का कानून बने। आपमें से कई लोग बेकार हैं। सभी लोगों को काम दिलाना या काम नहीं हो, तब उनका खर्चा चलाना सरकार का फर्ज है। इस तरह का कानून अगर बनेगा तो बेकारी में भूखे पेट मरने की नौबत आप लोगों पर नहीं आएगी।

अमीर लोग जब बीमार होते हैं, तो इलाज करके, दवा खाकर ठीक हो जाते हैं। गरीबों की दवा वगैरेह की व्यवस्था कानून द्वारा की जा सकती है। सार–संक्षेप यही है कि फिलहाल सभी सुखों का भंडार कानून ही है। इसीलिए हम सबको कानून बनाने की शक्ति पूरी तरह सीख लेनी चाहिए। इसीलिए जाप, तपस्या, पूजन, अर्चन करने से अपना ध्यान हटा कर, राजनीति का आंचल थामने से ही आपका उद्धार होने वाला है। आज यही बात मुझे आपको बतानी थी और मैंने वह साफतौर पर आपसे कही है।

कुछ दिनों पूर्व काँग्रेस के तथा वरिष्ठ वर्ग के लोग कहा करते थे कि हमारी मांगों के अनुसार स्वराज न मिले तो हम उसे चलाने में मदद नहीं देंगे। लेकिन आज वे अलग ही भाषा बोल रहे हैं।

असहयोग कर जेल में सजा भुगत रहे काँग्रेस के एक नेता ने कल ही सरकार से माफी मांग कर अपनी मुक्ति करवा ली। अब बाहर आकर वह कह रहे हैं कि, महात्मा गांधी का असहयोग आंदोलन गलत है। मैं अब कभी भी असहयोग नहीं करूंगा। इससे पूर्व महात्मा गांधी के खास शिष्य श्री राजगोपालाचारी ने घोषणा की है कि नए सुधार मिलेंगे, तो काँग्रेस जहां तक संभव हो उनका स्वीकार करेगी। मराठी भाषा के 'केसरी' अखबार के केलकर का कहना है कि चाहे अधूरे हों, तब भी हम नए सुधारों का स्वीकार करने के लिए तैयार हैं।

कहने का तात्पर्य यही है कि ये लोग अपनी पहले कही हुई भाषा या बात बदल रहे हैं। सोचने की बात यह है कि यह जो मतपरिवर्तन उनका हुआ है उसकी वजह

क्या है? इस सवाल का जवाब एकदम सीधा/सरल है। अब बहिष्कार करने वालों को लगने लगा है कि अगर उन्होंने अपना बहिष्कार जारी रखा तो सत्ता जब आएगी तब अन्य समाज के लोग उस पर काबू कर लेंगे। इसीलिए, अनचाहे सुधार भी स्वीकारने के लिए वे तैयार हो गए हैं। कहने का मतलब यही कि जो लोग बहिष्कार कर रहे थे, वे भी अपना हित साधने के लिए तैयार हैं।

इसके बाद हिंदुस्तान में जो लड़ाई जारी रहेगी वह अंग्रेजों और हिंदुस्तानियों के बीच न चल कर हिंदुस्तान के अगड़े और पिछड़े लोगों के बीच होने वाली है। आप शायद कहें कि पिछड़ा वर्ग बहुसंख्या में है इसलिए उन्हें अगड़ों से डरना नहीं चाहिए। लेकिन आपको एक बात ध्यान में रखनी होगी कि कोई समाज बहुसंख्यक है, केवल इसी से बात नहीं बनने वाली। उस समाज के लोगों का शिक्षित, जागरुक और स्वाभिमानी होना भी जरूरी होता है, तभी उस समाज की ताकत बढ़ेगी। वरना किसी मिल मालिक या किसी अमीर साहूकार द्वारा आपको घूस दी और उसके एवज में आप लोगों ने उन्हें अपने वोट बेच दिए तो आपके समाज की विशिष्टता नष्ट ही होगी। किराए पर लाए गए लोग, आपके समाज का कल्याण बिल्कुल नहीं कर सकते। हमेशा एक बात अपने मन में जाग्रत रखें कि हमारे समाज की भी कोई विशेषता रही है। साथ ही आपसी मतभेद भुला कर हमें अपनी संगठनात्मक शक्ति को बढ़ाना होगा। हालात का ज्ञान रखना होगा। इसके लिए समाज के हर व्यक्ति को चाहिए कि वह हर रोज 'जनता' अखबार खरीदे। 'जनता' समाचार–पत्र का ग्राहक बनें। इससे आपका परिस्थितियों के बारे में ज्ञान बढ़ेगा। खुद का फायदा किस चीज में है, यह जानने के लिए हालात का ज्ञान होना बेहद जरूरी है। आखिर में वालिंटियर समता सैनिक दल के बारे में मुझे कुछ सूचनाएं देनी हैं। ज्ञानवान और जानकार आदमी ही वालंटियर बन सकता है, यह हमारा विश्वास है। केवल खाकी रंग के कपड़े पहन कर कोई वालंटियर नहीं बनता। अपने समाज को ज्ञानवान बनाना वालंटियरों का प्रमुख कर्तव्य है। अनपढ़ लोगों को 'जनता' अखबार पढ़ कर सुनाना, उसका मतलब समझाना यह उनका काम है। मुझे आशा है कि वे अपना कर्त्तव्य निभाएंगे। आप सब लोगों के प्रति फिर से धन्यवाद व्यक्त कर मैं अपना भाषण पूरा करता हूं।"

67
छात्रावस्था में ही अपनी योग्यता बढ़ाएं*

रविवार दिनांक 2 अप्रैल, 1933 के दिन सुबह 10 बजे मुंबई से दलित नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर, बार एट–लॉ आए। ठाणे के अखिल भारतीय बहिष्कृत शिक्षण प्रसारक मंडल के मुंबई–ठाणे रोड पर स्थित नामदार आगा खान के विस्तीर्ण बंगले के परिसर में बने दलित विद्यार्थी छात्रावास की जांच हेतु उन्हें आमंत्रित किया गया था। उन्हें छात्रावास में ले आने के लिए बोर्डिंग के सुपरिटेंडेंट श्रीयुत चांदोरकर और ठाणे सामाजिक समता सेवा संघ के श्रीयुत मारुतीराव साबाजी गायकवाड़ उन्हें लिवाने के लिए आगे रेलवे स्टेशन पर गए थे।

डॉ. बाबासाहेब के महासचिव श्रीयुत शिवतरकर और डॉ. बाबासाहेब के मुंबई के सहकारी कार्यकर्ता बापूसाहब सहस्त्रबुद्धे, कमलाकांत चित्रे, जाधव, गायकवाड, मडके बुवा आदि नेता भी साथ आए हुए थे। डॉ. बाबासाहेब के आने से काफी समय पहले ठाणे शहर के अस्पृश्योद्धारक स्पृश्य सज्जन नागरिक वहां उपस्थित हुए थे। उनमें से एम. एस. रांगणेकर साहब, एल. रॉड्रिक्स साहब, आर. एल. रेडेसाहब, नाखवा, गटनेसाहब, केसकर साहब, कोतवाल साहब, माधवराव कालदाते, पद्मनाभशास्त्री पालवे आदि हितचिंतक वहां दिखाई दे रहे थे। उस दिन स्थानीय कारखाने, मिलें आदि खुली होने के बावजूद बाबासाहेब के आने की खबर सुन कर जगह–जगह से आए दलित समाज के सभी छोटे–बड़े महिला–पुरुषों का समुदाय वहां इकट्ठा हुआ था।

डॉ. बाबासाहेब मोटर से उतर कर इमारत की सीढ़ियों पर आते ही उनके नाम की जयकार होने लगी। सामाजिक समता सेवा संघ, छात्रावास में रहने वाले छात्रवृंद, और अखिल भारतीय दलित सेवक संघ (ठाणे शाखा) के अध्यक्ष और कार्यकर्ताओं की ओर से उनका स्वागत किए जाने के बाद, श्री एम. एस. रांगणेकर द्वारा डॉ. बाबासाहेब को उनके लिए बनाई गई जगह पर बिठाने के बाद श्रीयुत गणपत गोविंद रोकड़े ने वहां इकठ्ठा हुए जन समुदाय की ओर से उनसे विनति की कि वे इस मिश्र सम्मेलन के अध्यक्ष का स्थान ग्रहण करें और छात्रों को उपदेश के दो शब्द सुनाएं। श्रीयुत मारुतीराव साबाजी गायकवाड़ द्वारा उनके प्रस्ताव का अनुमोदन किए जाने के बाद अपने सामने मेज पर रखी सभा के कार्यक्रमों की सूची पर नजर दौड़ा कर वह जब भाषण देने के लिए उठ खडे हुए तब तालियों की बौछार हुई। उन्होंने कहा,

*जनता : 22 अप्रैल, 1933

"पहले यह छात्रावास आश्रम हमने पनवेल में स्थापित किया गया था। वहां स्पृश्य समाज के किसी ने भी छात्रावास के लिए जगह नहीं दी थी इसलिए एक ज्यू व्यक्ति के घर में हमें उसकी स्थापना करनी पड़ी थी। आगे उसने भी हमें ठगते हुए किराए में बढ़ोतरी करनी शुरू की तो वहां से हमें यह छात्रावास ठाणे ले आना पड़ा। यहां भी, नामदार आगा खान के खुद लिख कर देने के बाद यह जगह हमारे हाथ में आने से पहले हमें बहुत कष्ट झेलने पड़े। अब, जब यह जगह मिल गई है तब यह सवाल फिलहाल हल हुआ समझिए। अपने छात्र बंधुओं से मैं इतना ही कहना चाहता हूं कि नामदार (His Highness) आगा खान का यह बंगला, सरकारी ग्रैंट, सुपरिटेंडेंट चांदोरकर तथा उनकी मदद करने वाले अन्य सहकर्मियों की रातदिन की मेहनत आदि सुविधाएं आपको मिली हुई हैं। हमारे बचपन में हमें इनमें से कुछ भी नहीं मिलता था। इतनी सुविधाएं होने के बावजूद आपने उनका योग्य उपयोग नहीं किया, आप एखाद अंक से ही यदि फेल हो गए, तो ध्यान रहे कि यह हार केवल तुम्हारी नहीं होगी, अपितु इस संस्था पर भी आप नालायकी का ठप्पा लगाएंगे। सरकार की तरफ से उपलब्ध की गई मदद हटा ली जाएगी। नए अधिकार, बड़ी नौकरियां अगर हासिल करनी हैं तो पहले अपने को उनके लायक बनाना होता है। इस तरह अपने को लायक बनाने की प्रक्रिया के दौरान आप जब छात्रावस्था में होते हैं तब किसी और आंदोलन में आपका शरीक होना गलत होगा, यह आपके सामने मैं दूसरा मुद्दा रख रहा हूं और मेरा तीसरा मुद्दा है स्वावलंबन। यहां आपकी आर्थिक मदद के लिए शहर के अमीर लोगों को हम बुलाएंगे। लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि आप, आपके भाईबंद और आपके जातभाई जब तक इस बात का निश्चय कर जुट नहीं जाते कि, जो हो सो हो, हमें तो आगे निकल जाना ही है, रोजमर्रा के जीवन में जब तक इस निश्चय पर आप अमल नहीं करते तब तक आपको अपने उद्देश्यों में सफलता हासिल नहीं होगी। मैं उम्मीद करता हूं कि इन सब बातों पर आप लोग गौर करेंगे और सफलता के मार्ग पर आगे चल कर कामयाबी को हासिल करेंगे, इसी उम्मीद के साथ मैं अपनी बात पूरी करता हूं।"

68
नकली और स्वघोषित नेताओं से सावधान रहें*

दिनांक 8 अप्रैल, 1933 की रात मुंबई के क्लार्क रोड पर स्थित बी.आई.टी. चाल में वहां की चार चालों में रहने वाले बहिष्कृत समाज की ओर से एक सभा का आयोजन किया गया था। सभा के अध्यक्ष बने थे मे. सुभेदार वि. गं. सवादकर। इस सभा में दलितोद्धारक डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को मानपत्र देने का समारोह बड़े उत्साह के साथ संपन्न हुआ। इस समारोह में महिला और पुरुषों की भीड़ इतनी थी कि चाल का कंपाऊंड पूरी तरह भरा था और बाहर भी लोगों की भीड़ खड़ी थी। कार्यक्रम का आरंभ करने से पहले रा. धोत्रे ने अध्यक्ष के बारे में सूचना रखी जिसका रा. तांबेशास्त्री ने अनुमोदन किया और म. सवादकर ने अध्यक्ष स्थान सुशोभित किया। अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में उन्होंने अपने को अध्यक्ष बनाने के लिए लोगों को धन्यवाद दिया और कहा कि डॉ. बाबासाहेब ने अपने समाज को सामाजिक और राजनीतिक अधिकार दिला दिए हैं। इसलिए उन्हें मानपत्र देना योग्य है। लेकिन उन्हें मानपत्र देकर ही हम उनके ऋणों से मुक्त नहीं हो सकते। उन्होंने जो कार्य शुरू किया है, उसे सही तरीके से आगे ले जाना, उसे सुचारू रूप से चलाना हमारा कर्त्तव्य है। अन्य समाजों की तरह हमारे समाज में भी विघ्नसंतोषी लोग हैं। ऐसे लोगों से सावधान रहना जरूरी है। (तालियां) साथ ही तहसील और जिला संघ बना कर हमें अपने संगठन खड़े करने चाहिए, आदि।

अध्यक्षीय भाषण के बाद रा. आबाजी अनंतराव खरात ने सुनहरे फ्रेम में मढ़ा हुआ मानपत्र पढ़ कर सुनाया तथा डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को अध्यक्ष के हाथों अर्पण किया गया। मानपत्र के साथ उन्हें एक चांदी का पात्र भी भेंट स्वरूप दिया गया। मालाएं और गुलदस्ते अर्पण किए जाने के बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भाषण करने के लिए उठ खड़े हुए। उन्होंने कहा,

"सभाधिपति, प्रिय भगिनी और बंधुजनों,

आज यहां के लोगों ने मुझे मानपत्र देकर सम्मान करने के कार्यक्रम का आयोजन किया, इसके लिए मैं आप सभी का आभारी हूं। पिछले जनवरी माह में (1932) मेरे विलायत से लौटने के बाद मुझे मानपत्र देने की जैसे मानों होड़ लगी हुई है। ये होड़ बंद करनी होगी, कम से कम उस पर अंकुश लगाना होगा, ऐसा मुझे लग रहा था, लेकिन लोगों के उत्साह के सामने मैं अपने को बेबस पाता हूं। आज का मानपत्र भी मैं इसी मनःस्थिति में स्वीकार कर रहा हूं।

---

*'जनता' 15 अप्रैल, 1933

इस मानपत्र के बारे में एक बात मैं कहना चाहता हूं कि आज तक जो मानपत्र मुझे दिए गए उनमें और इस मानपत्र में फर्क है। इस मानपत्र के बारे में काफी ढिंढोरा पीटा गया। इससे पहले जो मानपत्र दिए गए थे, उनके बारे में अखबारों में हल्ला नहीं हुआ था। लेकिन इस मानपत्र को लेकर जो अंदरूनी मामले थे, वे 'लोकमान्य' और 'प्रभात' पत्र में प्रकाशित हुए थे। इसीलिए मुझे लगता है कि यह मानपत्र मुझे अलग स्थितियों में दिया जा रहा है। अभी इस ओर आते हुए हमें बताया गया कि रास्ते में सवादकर बायकाट की तख्ती लगी हुई है इसलिए हम दूसरे रास्ते से चलें। (सभा में शेम शेम की आवाज गूंज उठी।) मैंने कहा, चलिए वह तख्ती देखते हुए आगे चलते हैं। हमने वह तख्ती देख ली है। तख्ती लगाने वालों की हिम्मत नहीं हुई इसलिए उन्होंने मेरा बायकॉट नहीं किया! इन चार चालों में नेताओं का बड़ा जमावड़ा है, यह मैं जानता हूं। मुंबई में अगर किसी को नेता की खोज हो तो वे इस चौक में आएं। इन नेताओं ने कोई ना कोई वजह निकाल कर आंदोलन की राह में रोड़े अटकाएं हैं। किसी समय इन नेताओं का कहना था कि डॉ अम्बेडकर महारों को छोड़ कर चमारों के करीबी हो गए हैं। महारों के साथ वे विश्वासघात कर रहे हैं। लेकिन ऐसा कहने वाले ये लोग पूरी महार जाति को गालियां देने वाले देवरुखकर जैसे चमार के साथ मिल कर षड्यंत्र करते हैं और थोड़ी–सी सफलता पाकर फूले नहीं समाते हैं।

एक बार शिवतरकर मास्टरजी ने अपने घर सहभोजन करवाया। उस सहभोज में मैं खुद और कुछ अन्य महार नेता उपस्थित थे। सहभोजन की खबर के साथ आगे देवरुखकर ने एक हैंडबिल निकाला जिसमें लिखा था कि, "शिवतरकर ने महारों के साथ खाना खाया इसलिए उन्हें बहिष्कृत किया जाए। कारण क्या था?" शिवतरकर ने महारों के साथ भोजन किया। देवरुखकर ने पूरी महार जाति का अपमान किया था। इस तरह जिस व्यक्ति ने कई बार महारों को अपमानित किया, उनके साथ ये लोग कैसे जा मिलते हैं! इन नेताओं की एक और दलील यह है कि डॉ. अम्बेडकर कोकणस्थ हैं, वे देशस्थों से सलाह लेते हैं, कोकणस्थों से नहीं। देशस्थ और कोकणस्थ का विवाद इतना उछाला गया कि कुछ ही दिनों में मारपीट तक नौबत पहुंची। लेकिन फिर उन्हीं लोगों ने देशस्थों के साथ हाथ मिला कर 119 नेताओं की सभा का आयोजन किया। और एक बात समझ नहीं आती कि, उस सभा से सुबेदार सवादकर को कंकड़ की तरह अलग क्यों किया गया? वे तो हाड़–मांस से कोकणस्थ हैं ना? मैं कहना यही चाहता हूं कि इस विवाद की कोई जड़ नहीं और न ही इसके पीछे कोई सिद्धांत है। सैद्धांतिक विरोध चल सकता है। लेकिन सिद्धांतों के बिना विरोध किया जा रहा हो तो जाहिर है कि उसके पीछे उनका कोई स्वार्थ छिपा हो। यहां एक और सवाल यह उठता है कि सभी नेता आपस में एक क्यों नहीं हो जाते

या उनमें एकता क्यों नहीं कराई जाती? लेकिन झगड़ा जब व्यक्तिनिष्ठ हो तब कोई क्या कर सकता है? सिद्धांतों की तो बात ही निराली है। महात्मा गांधी द्वारा मंदिर मामले में मेरा पक्ष पूछा तब मैंने उनसे कहा था, मंदिर प्रवेश के साथ अगर जातिभेद मिट रहा हो, तो मैं यह चाहूंगा। अगर नहीं, तो हमें मंदिर में प्रवेश की जरूरत नहीं है। इस विवाद में सिद्धांत है।

इन नेताओं की झड़प में ऐसा कुछ भी नहीं है। यह सब देखकर मुझे इस बात की खुशी जरूर है कि उनकी लाख कोशिशों के बावजूद आपमें आपसी फूट नहीं आई है। आप उसमें उलझे नहीं हैं। अपनी आजादी के लिए इन्सान के पास या तो नौकरी हो या बाप–दादाओं की संपत्ति हो। अगर ऐसा नहीं है तो चोरी करके, भीख मांग कर या किसी और की जीहुजूरी करते हुए पेट भरना पड़ता है। हमारे कई लोग बेरोजगार हैं और समाज के अन्य वर्गों के पास बहुत पैसा है। अगले चुनावों के समय हालात ये होंगे कि अन्य वर्ग के लोग अपने लोगों को पैसा देकर हमारे मत खरीदने की कोशिश करेंगे। हममें से बेरोजगार और जो स्वाभिमानविहीन नेता उनकी मदद भी करेंगे। इसलिए कहता हूं कि ऐसी बातों से आपको सावधान रहना होगा। ऐसे नकली और स्वघोषित नेताओं से सावधान रहिए।

डॉ. अम्बेडकर के काम में रुकावटें डालने के लिए वरिष्ठ वर्ग के लोग तैयार ही बैठे रहते हैं। ऐसे लोग हममें से उन लोगों से ताल्लुक बढ़ाएंगे ही जो घूसखोरी के आदी हों। मैं हिंदुस्तान में नहीं होता तब ऐसे लोगों की बन आती है, यह मैंने देखा है।

मैं इस महीने की 22 तारीख को विलायत जा रहा हूं। इसलिए कह रहा हूं, सावधान रहें। मेरे पीछे ये लोग आपमें आपसी फूट डालने की कोशिश करेंगे। उम्मीद करता हूं कि किसी की बातों में न आकर आप अपनी एकता को बनाए रखेंगे। आज के इस कार्यक्रम के आयोजन के लिए सबके प्रति आभार प्रकट कर मैं आज का अपना भाषण समाप्त करता हूं।''

69
तुम्हें ही अपनी जिम्मेदारियों को पहचानना होगा*

नगर जिले की ओर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और डॉ. सोलंकी साहब को मानपत्र अर्पण करने और प्रो. राव का सम्मान करने का कार्यक्रम पहले से तय तारीख 12 और 13 अप्रैल, 1933 को मुंबई के दामोदर हॉल के पीछे वाले प्रांगण में खड़े किए गए टैन्ट में बिना किसी बाधा के संपन्न हुआ।

पहले दिन सोलंकी साहब की अध्यक्षता में हुई सभा में डॉ. बाबासाहेब को मानपत्र अर्पण किया गया।

पहले आर. एच. आडांगले ने अध्यक्ष का प्रस्ताव रखा जिसका अनुमोदन किया रा. सू. ता. रुपवते ने। फिर डॉ. सोलंकी साहब ने अध्यक्ष स्थान ग्रहण किया। अपने भाषण में सोलंकीसाहब ने कहा, डॉ. अम्बेडकर का सम्मान करना आपके और मेरे सम्मान करने जैसा ही है। उसके बाद रा. रोहम ने मानपत्र पढ़ कर सुनाया। और फिर उसे सुंदर, चांदी के चषक में डाल कर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को अर्पण किया गया। उसका स्वीकार करने के बाद डॉ. बाबासाहेब अपना भाषण देने के लिए उठ कर खड़े हुए। उन्होंने कहा,

"आज का यह कार्यक्रम नगर जिले के लोगों की ओर से आयोजित किया जा रहा है। उनके लिए मैंने कोई खास काम नहीं किया है, फिर भी उनके मेरे प्रति प्रेम के कारण ही यह समारोह हो रहा है, इसके लिए मैं उनका आभारी हूं। नगर जिला अन्य जिलों से थोड़ा पिछड़ा हुआ है। इन जिलों के सामाजिक हालात थोड़े कठिनाई भरे हैं, यह मैं जानता हूं। इन जिलों के महारों द्वारा ईसाई धर्म स्वीकार किए जाने से यहां दो पंथ हो गए हैं। इसके बावजूद इस जिले की ओर ध्यान देना मेरे लिए अब तक संभव नहीं हो पाया, इसके बारे में मुझे दुःख है। नया बताने जैसा कुछ हुआ नहीं। लेकिन इस कुर्सी पर बैठा हूं तभी से मेरे मन में खेद की कुछ भावनाएं गूंज रही हैं। यहां इकट्ठा हुए लोगों को लगता होगा कि काश हम भी नेता होते! डॉ. अम्बेडकर का नाम अच्छे–बुरे प्रसंगों के संदर्भ में अखबारों में पढ़ने को मिलता है, उसी तरह अपने बारे में भी कुछ छपता। मेरी बड़ी बलवती इच्छा है, मेरी जगह अगर कोई आए तो मैं अपने आपको भाग्यवान समझूं। मेरे गले में हार पहनाने वाले को खुशी हुई होगी। लेकिन मेरी हालत उसके बिल्कुल विपरीत हुई है। आपने मेरी

*'जनता' 22 अप्रैल, 1933

जो तारीफ की है उससे मेरी जिम्मेदारी बढ़ी है। आप मुझसे किसी कार्य की उम्मीद रखते हैं। कई बार मुझे लगता है कि समाज की जिम्मेवारी न लेते हुए अगर मैं अकेला रहता तो शायद मैं अधिक भाग्यशाली होता। मेरी इच्छा थी कि मेरी सारी जिंदगी छात्रावस्था में बीते। इसीलिए, जीभ पर लगाम देकर भी मैंने कई किताबें खरीदीं। प्रोफेसर की नौकरी कर किताबें पढ़ते हुए आराम से जिंदगी बिताने की मेरी पहली इच्छा थी। सौभाग्य से कहिए या फिर दुर्भाग्य से, मुझे अस्पृश्यों के आंदोलन में हिस्सा लेना पड़ा। अब इससे अलग होने से मुझे डर लगता है। अस्पृश्य समाज की जिम्मेदारी लेना आसान काम नहीं है। केवल प्रशंसा करते हुए या सभाएं लेकर इनकी समस्याएं हल नहीं होने वाली। ऐसा होता तो इससे पहले ही सब समस्याएं खत्म हो जातीं। मेरे पास हर रोज 25–30 खत आते हैं। वे खत अगर कोई पढ़े तो उसका दिल पसीज जाएगा। उनकी समस्याएं हल करने के लिए प्रतिदिन काम करने वाले लोग मुझे चाहिए। आपमें जो थोड़े–बहुत लोग हैं वे मेरे बुरे गुणों के कारण या कहिए कि आपके बुरे भाग्य के कारण कहिए, मेरे साथ काम करने के लिए तैयार नहीं हैं। केवल काम करने वाले लोगों के अभाव के साथ–साथ रुपयों की भी किल्लत है। मेरे पास जो भी आते हैं वे हाथ हिलाते हुए ही आते हैं, उनके पास पैसा नहीं होता। न पैसा, न आदमी और न बुद्धिमत्ता मेरे साथ है। इस तरह इस समाज का काम करना बड़ा कठिन है। डॉ. सोलंकी मुझे इस काम से मुक्त कराएं। अन्य समाज के लोग उम्र के चौथे पड़ाव में यानी 50 वर्ष पूरे करने के बाद सामाजिक कार्य करने लगते हैं। लेकिन मुझे उम्र के 25वें साल में ही सामाजिक कार्य शुरू करना पड़ा। अब अपने समाज को राजनीतिक सत्ता मिली है। इसके बाद समाज को मेरी विशेष आवश्यकता होगी ऐसा मुझे नहीं लगता। पढ़े–लिखे लोग तैयार हो रहे हैं। अभी भी अगर जीवन के कुछ वर्ष मुझे मिल जाएंगे तो मैं निजी हित साध सकता हूं। आप अपने पैरों पर खड़े हो जाइए। डॉ. सोलंकी या मेरे बारे में अगर किसी को बुरा लगता हो तो वे हमें बताएं। हम यह सब छोड़ देंगे। इसके लिए हम हमेशा तैयार हैं। सभी जिम्मेदारी अब से आगे मैं ले नहीं सकता। सार्वजनिक कार्य की सामग्री आपको तैयार करनी होगी। अब तक काँग्रेस ने अपने आंदोलन पर 2 करोड़ रुपयों से भी अधिक राशि खर्च की होगी। मुसलमानों ने लगभग उतनी ही या उससे अधिक राशि अपने आंदोलन के लिए खर्च की होगी। हमारे लोगों ने अपने आंदोलन के लिए कितना खर्च किया? हद हो गई तो दो–तीन हजार रुपए! ऐसे सौदे में मैं फंसा हूं। लेकिन अब इससे आगे आपको अपनी जिम्मेदारी पहचाननी होगी। कई दिनों से यह बात मेरे मन में थी, जो आज मैंने साफ–साफ शब्दों में आपके सामने व्यक्त की है। उसे आप लोगों ने सुना इसके लिए आपके प्रति आभार व्यक्त करते हुए मैं आपसे विदा लेता हूं।''

दूसरा दिन
"डॉ. सोलंकी के प्रति अपनी कृतज्ञता मानपत्र से नहीं किसी और तरीके से व्यक्त करें"

दिनांक 13 अप्रैल, 1933 को रात को डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में डॉ.सोलंकी साहब को मानपत्र देने का तथा प्रो. राव के सम्मान का कार्यक्रम संपन्न हुआ। पहले रा. ग. सु. दारोले ने अध्यक्ष का प्रस्ताव रखा जिसे रा. तिगोटे ने अनुमोदित किया। तालियों की गूंज में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर अध्यक्ष स्थान पर विराजमान हुए। अपने भाषण में उन्होंने कहा,

"आज की सभा का अध्यक्ष स्थान स्वीकार करने में मुझे बड़ी खुशी हो रही है। इस समय हमें मुख्य रूप से तीन काम करने हैं। पहला काम है डॉ. सोलंकी साहब को मानपत्र अर्पण करना। दूसरा है म्युनिसिपल स्कूल कमेटी के अध्यक्ष प्रो. राव को अस्पृश्य वर्ग के लिए उन्होंने जो अभिनंदनीय कार्य किया है उसके लिए उनका सम्मान करना है। और तीसरा काम है, नगर जिले में शिक्षाप्रार्थियों के लिए बोर्डिंग खोलने के बारे में सोच–विचार करना। डॉ. सोलंकी साहब ने अस्पृश्य समाज के लिए जो कार्य किया उसे आप–हम सब जानते हैं। उसे विस्तारपूर्वक बताने की जरूरत नहीं है। लोकापवाद की, लोकनिंदा की परवाह किए बगैर लोगों के हित में उन्होंने अपनी पूरी शक्ति खर्च की है। यह बात माननी पड़ेगी कि उन्होंने विधिमंडल में या मुंबई म्युनिसिपिटी में मुझसे सौ गुना बेहतर काम किया है। अपने अन्य कामों के कारण काउंसिल में मैं अधिक समय दे नहीं सकता। इस कार्य का सारा श्रेय उनकी लगन और काम करने को जाता है।

अमीर लोग हमेशा राजनीति और समाजकार्य करते रहते हैं। बैंक में जिनका बहुत सारा पैसा होता है, वे लोग सार्वजनिक कामों में लगे रहते हैं। हर महीने वे चेक काट कर अपना खर्चा चलाते हैं। जीवन का समय वे मनोरंजन के लिए, समाजकार्य करने में बिताते हैं। अपना चरितार्थ चलाते हुए समाज कार्य करना आसान बात नहीं। मेडिकल की परीक्षा पास करने के बावजूद डॉ. सोलंकी का अपना दवाखाना नहीं है। वे 24 घंटे सार्वजनिक कार्यों में लगे रहते हैं। समाज पर यह उनका उपकार ही है।

इंग्लैंड में मजदूरों की राजनीति करने वालों को अच्छा वेतन मिला करता था। 1910 में पार्लियामेंट के सदस्यों को तनख्वाह नहीं मिलती थी। मजदूरों की संस्थाओं से तब उन्हें 400 पौंड मिला करते थे। यहां ऐसी कोई व्यवस्था नहीं थी। ऐसे समय में भी डॉ. सोलंकी ने अपना समाजकार्य जारी रखा।

इसलिए, केवल मानपत्र देकर उनके कार्य का गौरव संभव नहीं। उनके कार्य के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए अन्य तरीका अपनाना होगा। बस, उनके प्रति हमारे मन में जो प्रेम है उसे व्यक्त करने के लिए हम यह मानपत्र उन्हें अर्पण कर रहे हैं।"

70
जातिभेद नष्ट किए बगैर उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ना असंभव है*

कोकण पंचमहाल (राजापुर से गोवा की सीमा तक) महार समाज सेवा संघ, मुंबई के सहयोग से रविवार दिनांक 16 अप्रैल, 1933 को रात सिमेंट चाल, बोगदा की वाडी, मझगाव में एक सहभोजन का कार्यक्रम बड़े उत्साह के साथ संपन्न हुआ। इस सहभोजन कार्यक्रम में अस्पृश्य वर्ग के नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर उपस्थित थे। साथ ही इस कार्यक्रम में मे. सुभेदार सवादकर, नामदेव बुवा येरलेकर, डोलस, दुधवडे, रामभाऊ सोनवणे, उपशाम, बनसोडे, रा. ग. भातनकर, सु. अ. ल. शिरावले, शि. गो. हाटे, गो. ग. वरघरकर, मे कवली बी. ए., एल. एल. बी. आदि लोग भी उपस्थित थे।

पहले रा. शि. ना. बालावलकर ने सहभोजन के उद्देश्य के बारे में बताते हुए कहा, कि कोकण के महार समाज में बेले महार, पान महार आदि जो भेद हैं, वे खत्म होने चाहिए। इस बारे में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर से उन्होंने बोलने की विनति की। श्री नामदेवबुवा येरलेकर ने कहा कि बहुत पहले कभी आपस के झगड़े की वजह से इस तरह के भेद हो गए हों शायद। हम सब एक ही भगवान की संतानें हैं। इसलिए इन भेदभावों को खत्म करना जरूरी है। उनके इस कथन को रा. ग. धु. जाधव, क. का.ड. पोइपकर, ल. सो. अस्वेकर ने समर्थन किया।

बाद में तालियों की भरपूर गड़गड़ाहट के बीच डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर बोलने के लिए उठ खड़े हुए। उन्होंने कहा,

"प्रिय भाइयों और बहनों,

आज मुझे कुछ बहुत महत्वपूर्ण काम करने थे। दो–चार दिनों के बाद मुझे विलायत जाना है इसलिए मुझे कुछ बेहद जरूरी काम करने हैं। लेकिन मेरी नजर में आज का समारोह काफी महत्त्वपूर्ण है, इसलिए मैं इस सहभोज में आया हूं। जातिभेद हटाए बगैर अपनी उन्नति का मार्ग नहीं खुलेगा। मुसलमान समाज की तरह ही महार समाज भी जातिभेद नहीं मानता। महार समाज की यह बहुत अच्छी बात है। किसी भी प्रांत के महार एक साथ खाना खा सकते हैं। मैं मुंबई के सभी इलाकों में घूमता हूं। मैंने भी यही देखा कि महार समाज में जातिभेद नहीं है। केवल कोकण

*जनता : 22 अप्रैल, 1933

के कुछ जगहों पर महारों में बेले और पान जैसे भेद हैं। वहां ये भेद क्योंकर बने, पता नहीं। इन भेदों को आगे क्यों जारी रखा जाए यह भी कोई बता नहीं सकता। ऐसा अगर हो तो फिर बेले और पान में भोजन या विवाह क्यों न हों? गौर कीजिए कि, दादा–परदादा के जमाने से चली आ रही यह रीत है, ऐसा कोई कह सकता है लेकिन अगर पुराने रीति–रिवाजों के अनुसार ही चलना हो तो हमें भी उन्हीं की तरह परेशानियां झेलते रहना पड़ेगा। उनके समय स्थितियां अलग थीं। उन्हें पूरी तरह अज्ञान में रखा गया था। वे गुलामी की हालत में जी रहे थे। उनके पास न तो राजनीतिक ताकत थी न धार्मिक। उनकी आर्थिक स्थिति भी अच्छी नहीं थी। उनकी गलतियों के कारण ही आज हमें दुःख भोगना पड़ रहा है। यह दुख दूर होकर अपने बाल–बच्चों को सुख मिले ऐसी अगर आपकी कामना हो तो बाप–दादाओं की गलतियों को हमें सुधारना होगा।

इस बारे में बुजुर्गों से ज्यादा जिम्मेदारी युवाओं पर है। मुझे पूरा यकीन है कि वे अपनी जिम्मेदारी को बखूबी निभाएंगे। आपस के इसी मतभेद के कारण आज तक रत्नागिरी में बोर्डिंग नहीं खोला जा सका है। सार्वजनिक आंदोलनों का भी यही अनुभव रहा है। मान लीजिए, किसी गांव में बेले महार और पान महार दोनों उपजातियों के लोग रहते हों और उनमें से एक ने मृत मांस खाना छोड़ दिया और दूसरा वह खाने के लिए तैयार हो जाए, तो दोनों पर गांव के लोगों का वर्चस्व बढ़ जाएगा। लेकिन अगर उनमें भेदभाव न हो तो इस तरह का बुरा असर नहीं होगा। अपनी प्रगति के लिए हमें जातिभेद का त्याग करना होगा।

अपने बीच भेदभाव की जो गंदगी है, उसे हटाने के बाद ही हम औरों को उसे हटाने की सीख दे सकेंगे।

मुझे खुशी है कि हमारे लोगों में इस दिशा में बड़ी जोरों से कोशिशें शुरू हो गई हैं। मुझे विश्वास है कि कुछ ही दिनों में हमारे बीच के ये भेदभाव नष्ट होंगे। आज के इस कार्यक्रम के लिए मैं सबका हार्दिक आभार व्यक्त करता हूं।

71
कूपमंडूक मानसिकता को त्याग कर सार्वजनिक कार्यों के लिए चंदा दें*

दिनांक 22 अप्रैल, 1933 को रात 9.30 बजे रावबहादुर एस. के. बोले, एम. एल. सी., जे. पी. मुंबई की अध्यक्षता में कुर्ला की जी. आई. पी. रेलवे पोर्टर चाल में कुर्ला के अस्पृश्य समाज की ओर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को मानपत्र और 80 रुपयों की थैली अर्पण की गई। पहले तय किया गया था कि डॉ. बाबासाहेब यहां पहुंचेंगे तब कुर्ला स्टेशन से डॉ. अम्बेडकर रोड, जुम्मा मस्जिद रोड, शिवाजी रोड इन रास्तों से जुलूस निकाला जाएगा और उसके लिए कुर्ला, मुम्बई के अस्पृश्य लोगों ने पूरी तैयारी की हुई थी। लेकिन समयाभाव के कारण यह कार्यक्रम ऐन समय पर स्थगित करना पड़ा। इससे लोगों को बहुत निराशा हुई। इसके बावजूद प्रमुख कार्यक्रम बड़े उत्साह के साथ संपन्न हुआ। रीतिनुसार अध्यक्ष रावबहादुर बोले स्थानापन्न हुए तो रा. कर्डक ने मानपत्र पढ़कर सुनाया। फिर अध्यक्ष के हाथों मानपत्र और 80 रुपयों की थैली डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को भेंट की गई। उन्हें माला और गुलदस्ता भी भेंट किया किया गया। उसके बाद वे बोलने के लिए खड़े हुए। उन्होंने कहा,

"यहां इकट्ठा लोगों के समुदाय की ओर देख कर मुझे पांच—सात वर्ष पूर्व घटित एक घटना की याद आती है। मैं दूसरी बार कुर्ला आया हूं।

पांच—सात वर्ष पूर्व यहां के लोगों ने मुझे अध्यक्ष पद का आमंत्रण दिया था। बारिश के दिन होने के बावजूद मैं समय से यहां पहुंचा था। लेकिन आश्चर्य की बात यह थी कि सभास्थल पर कोई भी नहीं था। मुझे इस बात का बहुत आश्चर्य हुआ। मुझे लगा कि हर जगह मेरे भाषण के लिए हजारों लोग इकट्ठा होते हैं, फिर यहां कोई क्यों नहीं आया? मैंने पूछताछ की तब पता चला कि उस सभा का हैंडबिल केवल नासिक के लोगों ने ही निकाला था। उस पर नगर, सातारा आदि जिलों के लोगों के नाम नहीं थे, इसलिए ऐसा हुआ।

इस समारोह का आमंत्रण देने के लिए जब यहां के लोग आए, तब मैंने उन्हें बताया कि अगर सभी लोगों की तरफ से कार्यक्रम हो रहा हो तो मैं आऊंगा। उन्होंने मेरी बात मानी और उस पर अमल भी किया। इसके लिए मैं उन्हें बधाई देता हूं। सबका मिल जुल कर रहना जरूरी है। एक का दुःख सबका दुःख होना चाहिए। केवल अपने बारे में सोचने की कूपमंडूक मानसिकता को त्याग दें। आप सबके एक

*जनता : 29 अप्रैल, 1933

होने की मुझे बड़ी खुशी है। मानपत्र भेंट करके मेरा आपने जो गौरव किया है उसके लिए मैं आपका आभारी हूं।

आपने थैली में जो राशि दी है, उसे मैं अपने घर के काम में नहीं लगाऊंगा। इससे पहले भी मुझे बहुत धन मिला है। उसमें से भी मैंने अपने लिए एक पैसा तक नहीं लिया है। सब पैसा मैंने सार्वजनिक कामों में लगाया है। आपने आज जो पैसा दिया है उसे भी मैं सार्वजनिक कामों के लिए ही दूंगा। यहां करीब पांच–छह हजार लोग इकट्ठा हैं। इतने बड़े जमावड़े से सार्वजनिक कार्य के लिए केवल 80 रुपये ही इकट्ठा किए जा सकते हैं, यह बड़ी शर्मिंदगी की बात है। अब इसके बारे में कुछ किया नहीं जा सकता है लेकिन आगे कभी इस बात की भरपाई होगी, ऐसी उम्मीद मैं रखता हूं। सार्वजनिक काम पैसों के बगैर नहीं हो सकते। काम करने वाले को वेतन देना जरूरी है। कुछ लोग सार्वजनिक काम मुफ्त में करते हैं। लेकिन सभी लोगों का मुफ्त काम करना संभव नहीं है। अपने 'जनता' अखबार में 5–6 लोग लिखने का काम करते हैं। और जगहों पर ऐसे कामों के लिए हर माह 100–200 रुपए देने पड़ते हैं। लेकिन पिछले पांच–सात सालों से ये लोग बिना पैसा लिए मुफ्त में अग्रलेख वगैरा लिखकर देते हैं। यही बात भारत भूषण प्रेस की भी है। इस छापेखाने में प्रबंधक आदि जो लोग हैं, उन्हें कम से कम वेतन दिया जाता है। ये लोग स्वार्थ त्याग करने वाले इन्सान हैं, इसलिए कार्य ठीक चल रहा है। किन्तु, हमेशा इसी तरह कार्य सुचारू रूप से चल पाना असंभव है और इसीलिए आप लोगों को पैसा देकर सहायता करनी चाहिए।"

72
अंग्रेज सरकार इस देश में कुछ नहीं करती है*

पूर्वघोषित के अनुसार बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर को पुणे जिला, नासिक जिला तथा अन्य जगहों के लोगों की तरफ से मानपत्र और थैलियां अर्पण करने का संयुक्त कार्यक्रम हाल ही में शाही अंदाज में संपन्न हुआ। 23 अप्रैल, 1933 को रात 9 बजे मुंबई के दामोदर हॉल के पीछे जो बड़ा–सा मैदान है उसमें बड़ा मंडप खड़ा किया गया था। उसमें मंच खड़ा किया था, कोच और कुर्सियां लगाई थीं। देखने वालों को यह सब किसी राजा के दरबार सा लग रहा था। इस समारोह के लिए बाहर से भी कई लोग आए हुए थे। कुल 8–10 हजार का जनसमुदाय था। मंच पर ऊंची जगह बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर, अध्यक्ष रावबहादुर बोले और डॉ. सोलंकी बैठे थे। उनके इर्दगिर्द कोच पर श्री सहस्त्रबुद्धे, देवराव नाईक, भाई प्रधान, डॉ. प्रधान, श्रीमती सरलाबाई प्रधान, प्रो. कंगले, श्रीमती गीताबाई कंगले, असवेकर कवली, खांडके, भाई चित्रे, कमलाकांत चित्रे, रणखांबे, भाऊ गायकवाड़, दाणी, काले, जाधव आदि लोग थे। माहीम चाल, नायगाव, रेतीचा धक्का, डिलाइल रोड, सैतान चौकी, फत्तरबंदर, करी रोड, वाडिया हॉस्पिटल, सैंडहर्स्ट रोड, कोली वाडा, क्लार्क रोड, आर्थर रोड, वडाला, शिव, माटुंगा आदि जगहों के 500 से अधिक समता सैनिक दल के लाठीबंद सैनिक इस समारोह का प्रबंधन देखने के लिए समारोह के इर्द–गिर्द दीवार बना कर तैयार खड़े थे। पहले रा. दिवाकर नेवजी पगारे ने अध्यक्ष की सूचना रखी जिसका समर्थन राजमान्य शंकरराव लिंबाजी ओझरकर ने किया। तब अध्यक्ष रावबहादुर एस.के. ने अध्यक्ष स्थान ग्रहण किया। उन्होंने अपने भाषण में कहा, यहां इकट्ठा हुए जनसमूह से इस बात का पता चलता है कि आप लोगों में कितनी जागृति हुई है। आपको गहरी नींद से जगाने का श्रेय डॉ. अम्बेडकर को जाता है।

यह हमारे समाज का भाग्य है कि डॉ. अम्बेडकर हमारे समाज में पैदा हुए। वे पूरी दुनिया के नेता बनने के काबिल हैं। उनकी लाइब्रेरी देखने पर इस बात का पता चलता है कि उन्होंने कितनी पढ़ाई की है और वे कितना पढ़ते हैं। गोलमेज सम्मेलन के समय राजनीति जानने के लिए उन्होंने राज्य के संविधान की किताबें अपने पैसे से खरीद कर पढ़ी हैं। कुछ लोग कहते हैं कि उनकी सोच जाति केंद्रित है, लेकिन यह बात गलत है। साइमन कमीशन को रिपोर्ट देते हुए यह बात स्पष्ट हो चुकी है। उस समय राष्ट्रीय विचारधारा वाले कई लोगों ने उनकी प्रशंसा भी की।

---

*जनता : 29 अप्रैल, 1933

डॉ. अम्बेडकर बहुत ही निर्भिमानी हैं। सरकार ने उन्हें जे. पी. नाम देने का प्रस्ताव रखा लेकिन वे लेने के लिए तैयार नहीं थे। डॉ. अम्बेडकर बहुत ही निस्पृह व्यक्ति हैं। गोलमेज सम्मेलन में उन्होंने जो भाषण दिए हैं उनसे इस बात का पता चलता है। मुंबई काउंसिल में उनके जैसा स्पष्ट वक्ता नेता नहीं मिलेगा। अपने समाज के हित के आगे वे किसी की परवाह नहीं करते। तीनों गोलमेज सम्मेलनों और अबकी संयुक्त संसदीय कमेटी में बिना कोशिशों के बुलाया गया, इसी से उनकी योग्यता का परिचय मिलता है। अब भी वे अपना काम योग्य तरीके से करेंगे इस बारे में किसी को शंका नहीं होनी चाहिए।"

बाद में रा. पी. एल. लोखंडे ने नासिक जिले की ओर से दिया जाने वाला मानपत्र पढ़ कर सुनाया। फिर इसे चांदी के चषक में रख कर वह बाबासाहेब अम्बेडकर को अर्पण किया गया। 501 रुपयों की थैली भी नासिक जिले की ओर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को अर्पण की गई। उसके बाद हरिभाऊ हनुमंत रोकड़े ने पुणे की ओर से मानपत्र का मसौदा पढ़ कर सुनाया। अध्यक्ष के हाथों मानपत्र की दो प्रतियां बाबासाहेब को दी गई जिनमें से एक सुनहरे फ्रेम में सुनहरे अक्षरों से लिखी हुई थीं और एक अन्य सादी प्रति थी।

पुणे जिले की ओर से थैली अर्पण करते हुए रा. शांताराम अनाजी उपशाम ने कहा कि, इससे पूर्व डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के काम में सहायता के लिए पुणे जिले की ओर से 350 रुपयों की एक टाइपराइटिंग मशीन अर्पण की गई थी। आज यह सिलसिला आगे बढ़ाते हुए यह 200 रुपयों की थैली अर्पण की जा रही है। यह कह कर उन्होंने अध्यक्ष के हाथों थैली डॉ. बाबासाहेब के सुपूर्द की। उसके बाद नायगाव चाल के निवासियों की ओर से डॉ अम्बेडकर को 91 रुपयों की थैली अर्पण करने के लिए रा. विट्ठल तानाजी साकरे खड़े हुए। उन्होंने कहा, समयाभाव के कारण हम इससे बड़े कार्यक्रम का आयोजन कर नहीं पाए। विनती है कि हमारी इस छोटी सी थैली का डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर स्वीकार करें। इतना कहते हुए उन्होंने 91 रुपयों की थैली अध्यक्ष के हाथों डॉ. अम्बेडकरको अर्पण की। उनके बाद ट्राम कंपनी की चाल, चौथा माला, परेल के पंचों की ओर से डॉ. अम्बेडकर को 50 रुपयों की थैली रा. चांगू बहेरु गाडे ने अर्पण की। भोर संस्थान के कुछ लोगों ने 17 रुपयों का चंदा दिया।

बाद में समता सैनिक दल की ओर से फूलों की माला अर्पण करने के लिए रा. सालवी खड़े रहे। माला अर्पण करते हुए उन्होंने कहा कि मैं उम्मीद करता हूं कि समता सैनिक दल के सैनिकों का सेना में प्रवेश कराने के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर कोशिश करेंगे। उसके बाद बांद्रा के डिलाइल रोड आदि जगहों के लोगों की ओर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को कई मालाएं अर्पण की गई।

उसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ। उन्होंने कहा,
"अध्यक्ष महोदय और मेरे प्रिय भाइयों और बहनों,

आज इस समारोह के लिए आप सब लोग यहां इकठ्ठा हुए हैं यह मेरी नजर में बड़े संतोष की बात है। क्योंकि, अगर पहले जैसे सोचा गया था, वैसे अगर हरेक जिले के लोगों द्वारा अलग–अलग से कार्यक्रम का आयोजन किया गया होता, तो हर जगह उपस्थित रहना मेरे लिए असंभव हो जाता। इसके अलावा, आज जितने लोग इकट्ठा हुए हैं उतने लोगों के इकट्ठे होने का मौका भी नहीं बनता। एक और बात अच्छी हुई है कि कल मुझे विदा करने के लिए सबका बंदरगाह पर आना भी अब टल गया है। आज यहीं मैं आपसे विदा लेता हूं और आप मुझसे विदा लीजिए। बंदरगाह पर आकर आप लोग जो जयकार और हल्ला–गुल्ला मचाते हैं उससे मैं खुद बौखला जाता हूं। मेरे साथ पानी वाले जहाज से जाने वाले प्रतिनिधियों को भी शायद संकोच महसूस होता हो। कई लोगों को विदा करने के लिए चार लोग भी नहीं आते। मैं इसके लिए अपवाद हूं। क्योंकि मुझे विदा करने के लिए बंदरगाह पर ऐसी भीड़ उमड़ती है कि कोई कीडा या चींटी भी घुस न पाए। असल में यह कोई अच्छी बात नही है। गरीब लोग अपना रोजगार छोड़ कर बंदरगाह पर केवल मुझे विदा करने के लिए आकर खड़े रहें, यह मुझे उचित नहीं लगता और पसंद भी नहीं है। इसलिए कल कोई भी बंदरगाह पर ना आएं। जो भी कुछ कहना–सुनना हो, वह यही एक–दूसरे से कहा सुना जा सकता है। जिन जिलों की तरफ से मानपत्र दिए गए हैं उन संस्थाचालकों के प्रति मैं अपना आभार प्रकट करता हूं।

पिछले माह नगर जिले के मानपत्र देने वाले समारोह में मेरे भाषण का इतना, ऐसा और इतनी जल्दी असर होगा मैंने सोचा नहीं था। लेकिन आपको सामाजिक कार्य का अहसास पूरी तरह होने के कारण सामाजिक कार्य को बढ़िया ढंग से चलाया जाए इसलिए एक होकर कम समय में ही आप लोगों ने आज जो थैलियां अर्पण की हैं उनके लिए मैं आप सबका आभारी हूं।

कल और आज मुझे जो कोष मिला है, उसका इस्तेमाल मैं सामाजिक कार्य के लिए ही करने वाला हूं। मैंने इसके लिए एक योजना बनाई है। समाज के लोगों को अच्छा धन मिलता रहे, ऐसी कोई व्यवस्था करने का विचार लंबे समय से मेरे मन में था। बच्चे स्कूल में जाकर अच्छी शिक्षा प्राप्त करें उसी तरह युवक और युवतियों को भी सुधारोन्मुखी, बढ़िया ज्ञान प्राप्त होते रहने की जरूरत है। इसके लिए कम से कम चार आने कीमत वाली, अच्छी जानकारी वाली किताबें प्रकाशित करने के लिए एक संस्था की स्थापना करने का मेरा विचार है। इसी योजना पर कल और आज मिली रकम मैं लगाने जा रहा हूं।

गोलमेज सम्मेलन के बारे में आज यहां कुछ कहना जरूरी है ऐसा मुझे नहीं लगता। अब वह परिषद पुरानी हो गई है। इस बासी सम्मेलन के बारे में कुछ कहूं ऐसा मुझे नहीं लगता। गोलमेज सम्मेलन के तीन चक्कर कट चुके हैं और अब मैं चौथे सम्मेलन में हिस्सा लेने जा रहा हूं। यह आखिरी बारी है। इसके बारे में विशेष कुछ कहने की मेरी इच्छा नहीं है। एक बात सच है कि, पिछले चार वर्षों में अस्पृश्यों के कार्य की बड़ी जिम्मेदारी मेरे माथे पर थी। वह नहीं होती तो शायद मेरी राजनीति कुछ अलग ढंग की होती। उस वक्त मैं दो पेंचों में फंसा था। अंग्रेजों से भिड़ता तो गांधीजी से कोई फायदा नहीं मिलता, और गांधीजी की सहायता करता तो अंग्रेजों से कोई लाभ नहीं मिलता। इसलिए मैंने व्यापक ढंग के सामाजिक कार्य को नजरंदाज कर रखा था। मेरी मनोदेवता अब मुझसे कह रही है कि अब भले किसी भी तरह का स्वराज आए, अस्पृश्यों का फायदा ही होने वाला है। इस बारे में जो भी कमियां हैं ,मैं उन्हें दूर करने की कोशिश करने वाला हूं। लेकिन अब अस्पृश्यों के कार्य पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत मुझे नहीं लगती।

अस्पृश्यों को केवल राजनीतिक सत्ता प्राप्त होना पर्याप्त नहीं है। राजनीतिक सत्ता हमें मिले और अंग्रेजों का ही राज रहे, तो हमें 15–20 या 25 का भी प्रतिनिधित्व मिला तो भी वह किसी काम का नहीं होगा। भोज की पंगत में साथ बैठने का हक पाने के बाद पत्तल में भरपूर खाना परोसा जाएगा, इसका भी खयाल रखा जाना चाहिए। सो इस तरह अंग्रेज सरकार से इस देश को अब मैं विशेष हक दिलाने के लिए लड़ने वाला हूं। जो लोग विदेश जाकर लौटते हैं, वे एक बात जानते हैं कि हमारे देश में दरिद्रता बहुत है। यहां बीमार, गरीब लोगों के लिए कोई सुविधाएं नहीं हैं। उस हिसाब से इंग्लैंड में बहुत सारी सुविधाएं दी जाती हैं। वहां, जिन्हें जरूरत हो लेकिन जो खरीद नहीं सकते उन सब लोगों के लिए सरकार की तरफ से डॉक्टर की व्यवस्था की जाती है। किसी के पास अगर कमाई का जरिया न हो तो सरकार उसे नौकरी मिलने तक बेकारी का भत्ता देती है।

साठ साल से बड़ी उम्र के लोगों की कोई व्यवस्था न हो तो सरकार उसे बुढ़ापे की पेंशन देती है। गरीब लोगों को ज्यादा मकान–किराया न देना पड़े इस बात का भी वहां सरकार खयाल रखती है। ऐसे मामलों में सरकार मकान मालिक को ग्रॉंट देकर लिखवा लेती है कि वह किराएदार से अधिक किराया नहीं लेगा।

वहां प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य है और वह मुफ्त दी जाती है। इतना ही नहीं माध्यमिक और कॉलेज की पढ़ाई भी वहां मुफ्त दी जाती है। लेकिन वही अंग्रेज सरकार इस देश में कुछ नहीं करती।

मुंबई में जल्द ही एक संकट आने की संभावना है। यहां के मिल मालिक कामगारों के वेतन कम कर रहे हैं, जिसके कारण हड़ताल होकर मिलें बंद होती जा रही हैं। लेकिन यहां की सरकार इस तरफ बिल्कुल ध्यान नहीं दे रही। इंग्लैंड, जर्मनी आदि देशों में अगर ऐसे हालात पैदा होते तो वहां की सरकार चुप नहीं बैठती।

शांति कायम रखने के अलावा अपना और कोई कर्त्तव्य अगर यह सरकार नहीं मानती तो उस वजह से यहां की प्रजा को सुख और शांति मिलना संभव नहीं। केवल राष्ट्र के लिए ही नहीं आप लोगों के लिए भी यहां के लोगों को व्यापक सत्ता मिलना निहायत जरूरी है। इसीलिए अंग्रेज सरकार के हाथों से सत्ता छीन लेने की कोशिश मैं करने वाला हूं। अभी जो मानपत्र मुझे दिए गए हैं उनमें से एक में कहा गया है कि, सुदामा की पोटली की तरह हमारी इस तुच्छ भेंट का स्वीकार करें।

इस बारे में मैं इतना ही कहना चाहता हूं कि सुदामा के पोहों से कुछ नहीं होने वाला। आप लोगों को स्वर्ग में अच्छी जगह मिले, इसलिए मेरी कोशिशें नहीं चल रही हैं। वह मेरा काम भी नहीं है। इस लोक में ही आपके क्लेश कम हों, आपको सुख मिले यह मेरी कोशिश है। उसके लिए छनछन बजते पैसों की जरूरत है, वह मैं आपसे लेना चाहता हूं और आपने वह मुझे देनो चाहिएं।

73

बुद्धि का उपयोग रोटी, शिक्षा और राज्य की सत्ता पाने के लिए हो (वसई के सोपारे गांव में दिया भाषण)*

"अध्यक्ष महाराज, और मेरे प्रिय भाइयों और बहनों,

श्री वनमाली के कहे अनुसार पहले ही यह परिषद होनी थी। लेकिन मुझे तीसरे गोलमेज सम्मेलन में बुलाया गया था इसलिए मैं सभा में उपस्थित नहीं हो पाता और लोगों को निराशा होती। खैर, आज का कार्यक्रम जिस चेवली चमार समाज के लोगों ने आयोजित किया उनका मैं इस क्षेत्र में रहने वाले लोगों से बातचीत का मौका उपलब्ध कराने के लिए शुक्रिया अदा करना चाहता हूं। पहले गोलमेज सम्मेलन के लिए मैं जब लंदन गया था तब मेरी बड़ी बुरी हालत हुई थी। उस समय हिंदू–मुसलमान सदस्यों में मनमुटाव होने के कारण अस्पृश्यों की समस्याएं सामने रखना बहुत मुश्किल हो गया था। आखिर तक हमारी राय एक न होने की वजह से पहला साल बेकार गया, ऐसा हम सब लोगों को लगा था। साथ ही उस समय काँग्रेस और उसके सर्वाधिकारी महात्मा गांधी परिषद से अलिप्त ही रहे। सभी हिंदी सदस्यों ने आशा व्यक्त की थी कि दूसरी गोलमेज सम्मेलन में कुछ ठोस काम हो पाएगा। लेकिन उनकी आशांओं पर फिर पानी फिर गया। उस समय गोलमेज सम्मेलन के सभी सदस्यों में ऐसी फूट पड़ी कि कोई भी सवाल हल नहीं किया जा सका। उसके जिम्मेदार केवल महात्मा गांधी ही थे। एक तरफ मुसलमान एक तरफ स्पृश्य हिंदू और बीच में अल्पसंख्यक अस्पृश्य आदि जातियों के प्रतिनिधि जैसे हालात होने के कारण मैं थोड़ा परेशान हो गया था। मुझे यकीन नहीं था कि महात्मा गांधी अस्पृश्यों के लिए कोई अलग योजना बना लेंगे। क्योंकि, दूसरी परिषद में जाने से पहले उनके और मेरे बीच हुई बातचीत मैं यही समझा पाया था। हालांकि, अस्पृश्यों के बारे में मैं जो योजना सामने रखूंगा उसका महात्माजी विरोध नहीं करेंगे इसका मुझे पूरा विश्वास था। हालांकि सब उलटा हुआ। 'औरों द्वारा पसंद की गई अस्पृश्यों की योजना का मैं विरोध नहीं करूंगा' यह हिंदुस्तान में रहते हुए जिस महात्माजी ने कबूला था, मुझे लगभग वचन दिया था, वही महात्माजी सिक्ख और मुसलमानों को कोरे कागज पर हस्ताक्षर करके देने के लिए तैयार हो गए। इतना ही नहीं, उन्होंने यह भी कहा कि सूई की नोक पर आएं उतने अधिकार देने के लिए भी मैं तैयार नहीं हूं। महात्माजी की इस प्रतिज्ञा के कारण अपने समाज के हित के लिए मुझे अल्पसंख्यकों के गुट से हाथ मिलाना पड़ा। महात्मा जी का कहना था कि स्पृश्य

'जनता' 29 अप्रैल, 1933। भाषण की तारीख दर्ज नहीं है।

और अस्पृश्य समाज के वे खुद प्रतिनिधि हैं और वे उनका हित–अहित अच्छी तरह जानते हैं। उनका कहना था कि डॉ अम्बेडकर के पीछे अस्पृश्य समाज बिल्कुल नहीं है और जो मत वह व्यक्त कर रहे हैं वे खुद उनके मत हैं। उनका अस्पृश्य वर्ग से कोई ताल्लुक नहीं है। उनके इस कथन को हिंदुस्तान में बड़ा समर्थन मिल रहा था। काँग्रेस और हिंदू महासभा के कार्यकर्त्ताओं की ओर से अस्पृश्यों में फूट डालने की कोशिशें की जा रही थीं। उन्हीं की वजह से चमारों की कुछ उपजातियां उस वक्त मेरे खिलाफ हो गई थीं। उस समय झूठी सभाओं, झूठे तार आदि की मानों बारिश ही हो रही थी। उसी समय अन्य चमार जातियों की ओर से हो रहा विरोध गलत है यह, श्री वनमाली और चांदोरकर जी के ध्यान में आया। मेरा विरोध करने में चमार समाज का हित नहीं है यह वे जानते थे। इस बात को जान कर उस समय कई तार मेरे पास आए थे, उनमें चेवली चमार समाज की ओर से श्री वनमाली, चांदोरकर का भी एक तार आया था और मैं यह कभी नहीं भूल सकता।

दूसरे गोलमेज सम्मेलन के बाद अल्पसंख्यकों का निर्णय जल्द ही सरकार ने जाहिर किया। उसमें अस्पृश्यों को पृथक मतदाता केंद्र देकर स्वराज्य में अस्पृश्यों की आजादी को मान्यता दी गई थी। सरकारी निर्णय प्रसिद्ध होने के बाद प्रतिज्ञा के अनुसार गांधी को प्राणांत प्रायोपवेशन शुरू करना पड़ा। उसी में पूणे करार का जन्म हुआ। उस करार के जरिए हमें जो राजनीतिक महत्त्व और हक मिले हैं उनका पालन करना अब आप लोगों के हाथ में है। अपनी जाति के नेता की बात मानना, उनके आदेशानुसार चलना हिंदू धर्मियों का गुण है। इसलिए, आप अपनी जाति के नेताओं का विश्वास करें। मुझे नहीं लगता कि हिंदू लोग या उनके युवा या नेता आपके लिए कुछ करेंगे। यह आशा करना बेकार है कि वे आपको मंदिरों में ले जाएंगे, अपने तालाबों का पानी पिलाएंगे। जो लोग सनातनियों की मर्जी रख कर अस्पृश्यों के उद्धार का काम कर रहे हैं उनकी नजर अभी हिंदुस्तान के भूगोल पर नहीं गई है। वे अगर थोड़ी नजर डालें तो उनको पता चलेगा कि उनकी नजर श्अटकेपारश (सीमापार) है या विंध्याद्री पर। मुझे हिंदू धर्म या समाज की परवाह नहीं है। मैं बस जिनसे मेरा नाता है उस अस्पृश्य समाज का हित देखना चाहता हूं। उसी हित को साधने की कोशिश में मैं लगा हुआ हूं। आपसे मेरा बस इतना ही कहना है कि धर्म को सामाजिक बातों से दूर रखिए। अपनी अकल को रोटी, शिक्षा और राजनीतिक सत्ता पाने की तरफ लगाइए। अभी यहीं पर सार्वजनिक कुओं, विद्यालयों आदि पर नामपट्ट लगाने का प्रस्ताव रखा था। याचना करने की जरूरत ही नहीं है। महापालिका और लोकल बोर्ड में अगर आपके सच्चे और काफी प्रतिनिधि हों तो वे खुद संघर्ष कर, लड़ाई कर ऐसा करने के लिए मजबूर करेंगे। इसीलिए, इस तरह के प्रतिनिधि तैयार करने और उन्हें चुनाव में जिताने की ओर ध्यान दें। महात्मा

गांधी मंदिरों के द्वार खुलवाने में लगे हुए हैं। हिंदू लोग मंदिरों के दरवाजे खोलें या उन पर सात–सात ताले लटकाएं मुझे उनकी परवाह नहीं। हिंदू युवक अगर जर्मन राजनीति का अध्ययन करेंगे तो पाएंगे कि नाझी पक्ष कम्युनिस्टों के खिलाफ लड़ रहा है। एक ही राष्ट्र के लोग न्याय पाने के लिए एक–दूसरे का खून बहा रहे हैं। 1863 के साल में अमेरिका में नीग्रो लोगों को गुलामी से मुक्त करने के लिए उत्तर और दक्षिण के गोरे आपस में लड़े, हिंदी युवकों की समझ में यह बात आती नहीं। अस्पृश्यता निवारण के लिए चार हिंदू युवक अगर चार सनातनियों के सिर फोड़ते, युवकों का थोड़ा बहुत खून गिरता तो ऐसा क्या अनर्थ होने वाला था? लेकिन यहां कोई असल में अस्पृश्यता का निवारण नहीं करना चाहता। खैर, हिंदू धर्म और समाज का जो होना हो वह हो, अस्पृश्यता का निवारण किया जाए या न किया जाए, आप अपना ध्यान उसमें ना लगाएं। महार–चमार के आपसी भेद को भुलाकर एकता और संगठन को बढ़ाइए। जो राजनीतिक अधिकार प्राप्त हुए हैं उन्हें जतन करने में अपना तन–मन–धन लगाएं, इतना कह कर मैं आपसे विदा लेता हूं।"

74
हिंदू समाज अपनी शक्ति का उपयोग ईमानदारी से समाज सुधार के लिए करे*

ऐसा, हिंदू महासभा वाले चीखते–चिल्लाते कहते रहते हैं कि डॉ. अम्बेडकर अस्पृश्यों के वास्तविक प्रतिनिधि नहीं हैं। लेकिन अम्बेडकर के सहयोग के बगैर वे कुछ नहीं कर पाते। इसीलिए इस महीने के पहले सप्ताह में विलायत में 'वाइट पेपर' के बारे में विचार–विमर्श कर उसकी व्यर्थता ब्रिटिश जनता के सामने उजागर करने के लिए, प्रचारक मंडल की नियुक्ति करने के लिए हिंदू नेताओं की सभा बुलाई गई थी। इस सभा में डॉ. गौर, डॉ. अम्बेडकर, डॉ. मुंजे, सच्चिदानंद सिंह और पं. नानकचंद आदि लोगों के भाषण हुए। सबके भाषण सुनने के बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भाषण देने के लिए उठ खड़े हुए।

डॉ. अम्बेडकर भाषण देने के लिए जेसे ही खड़े हुए तो सभी नेताओं को उनके बोलने के बारे में उत्सुकता हुई। डॉ. मुंजे तो डॉक्टर साहब को अपने पक्ष में शामिल करवाने की जी–तोड़ कोशिश कर रहे थे। डॉक्टर साहब ने जो भाषण दिया उसका सारसंक्षेप इस तरह था –

"हिंदुस्तान में आज जो अस्पृश्य वर्ग अस्तित्व में हैं, उसकी सर्वांगीण उन्नति के लिए पृथक चुनाव क्षेत्र की मांग की जा रही है, तो उसके लिए पूरी तरह से हिंदू समाज ही जिम्मेदार है। आज यदि हम संयुक्त हिंदू समाज की स्थिति का सूक्ष्म अवलोकन करें तो ध्यान में आएगा कि अस्पृश्य समाज को संयुक्त चुनाव क्षेत्र से अपनी आजादी पाना कभी भी संभव नहीं होगा। खुली आंखों से यह स्थिति देखने के बाद जिसका स्वाभिमान जागृत हुआ, जो स्वावलंबन के महत्त्व को जानता है, उसे केवल मजबूरी के कारण ही अलग चुनाव क्षेत्र की मांग करनी पड़ी। हिंदू नेताओं ने अस्पृश्य समाज का केवल अपने स्वार्थ के चलते ही इस्तेमाल किया। मुसलमानों के राजनीतिक अधिकारों की बात सामने आते ही स्पृश्य हिंदुओं के डर ने फिर सिर उठाया और एक बार फिर अस्पृश्यों के प्रति उनका प्यार उमड़ पड़ा। उनका यह प्यार केवल दिखावे का था। सो, मैं अपने हिंदू नेताओं से सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूं कि, हिंदू समाज अपनी कृति से अस्पृश्य समाज का विश्वास संपादन करे। मुसलमानों के साथ भिड़ने में अपना समय और शक्ति का अपव्यय न करें। अपने समाज के सामाजिक विकास पर ही अपनी सारी शक्ति

---

*'जनता' 15 जुलाई, 1933 भाषण का स्थान और तारीख नहीं दी गई है।

व्यय करें। इस तरह अगर हिंदू समाज अपने कार्यक्रम का भविष्य में आयोजन करेगा तो अस्पृश्य समाज को भी हिंदू समाज के साथ मिल कर कार्य करने में उत्साह, उम्मीद पैदा होगी।

डॉ. अम्बेडकर के भाषण के बाद डॉ. मुंजे का भाषण हुआ। उन्होंने डॉक्टरसाहब के भाषण से मौका उठाते हुए उनसे हिंदू महासभा का अध्यक्ष पद स्वीकारने की विनति की। लेकिन डॉ. मुंजे को एक बात हमेशा ध्यान में रखनी होगी कि ऐसे प्रलोभनों का डॉ. अम्बेडकर कभी शिकार नहीं बनने वाले। महात्मा गांधीजी के साथ करार करते हुए भी उन्होंने कभी खुद के मानापमान को या अपनी कीर्ति को महत्त्व नहीं दिया। अपने समाज के सर्वांगीण हित के लिए जो बातें सहायक होंगी केवल वही वे आज तक करते आए हैं। हिंदू महासभा वालों को यह बात हमेशा ध्यान में रखनी चाहिए।

75
कितने दिनों तक गुलामी का अपमान सहें?*

शनिवार दिनांक 29 सितंबर, 1934 की रात मुंबई के परेल इलाके के पोयबावड़ी के कामगार मैदान पर पुणे समझौते की स्मृति को कायम रखने के लिए एक प्रचंड सार्वजनिक सभा आयोजित की गई थी। अस्पृश्यों में गिने गए समाज के दस हजार से भी ज्यादा लोग इस सभा के लिए उपस्थित थे। उस समय अध्यक्ष के नाते डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का लोगों को सोचने पर मजबूर करने वाला और समाज में नई चेतना का निर्माण करने वाला भाषण हुआ। उन्होंने अपने भाषण में कहा,

"पिछले लगभग दो हजार सालों से कभी अस्पृश्य समाज को देश के समाज का अभिन्न हिस्सा नहीं माना गया। कोई राजनीतिक या सामाजिक कार्य उपस्थित हो तो उस कार्य के बारे में सोचने का मौका अस्पृश्य समाज को कभी नहीं मिला। महाराष्ट्र की राजनीतिक घटनाओं को देखा जाए तो ध्यान में आएगा कि ब्राह्मण, कायस्थ, मराठा आदि जातियों को ही इन बातों के बारे में सोचने का ठेका दिया गया था।

इस काम में महार का योगदान सिर्फ सूचना देने भर तक ही सीमित था। यानी कि जासूसी से अधिक उनकी कोई भूमिका नहीं थी। अन्य जातियों को आमंत्रण पहुंचाने के बाद बहुत हुआ तो वे दरवाजे के बाहर बैठ कर अंतर्गृह में चल रही घटनाओं का अंदाजा ले सकते थे। अंदर किन बातों पर सोच–विचार चल रहा है इसके बारे में उन्हें जानकारी भी नहीं हुआ करती थी।

अस्पृश्य समाज की भी अन्य मानवप्राणियों की तरह ही जरूरतें हैं, उनके पास भी मन है, अन्य मानवों की तरह ही दुःख–सुख उन्हें भी महसूस होता है यह खयाल कभी स्पृश्य समाज को आया ही नहीं। इस कारण अस्पृश्य समाज को देश के सामाजिक हो या राजनीतिक क्रियाकलापों में हिस्सा लेने का मौका ही नहीं मिला। धरती के किसी भी देश में दिखाई न देने वाली इस विपरीत पद्धति ने हिंदुस्तान में कई शतकों से जड़ें जमा रखी थीं। इस दौरान समाजशास्त्रियों ने, शासकों ने और तत्त्वज्ञों ने इस समाज को विनाश की तरफ ले जाने वाली विचारधारा पर अंकुश लगाते हुए उसे नया मोड़ देने की कभी भी कोशिश नहीं की। इसका अस्पृश्य समाज पर बुरा असर हुआ और उनका जीवन कष्टकर, स्वाभिमानशून्य और हतबल तो हुआ ही लेकिन उसका बुरा असर पूरे देश को, खासकर हिंदू समाज को भुगतना पड़ा

---

*'जनता' 20 अक्तूबर, 1934

है। लेकिन अब जमाना बदल चुका है। 1930 के साल में अस्पृश्य नेता को गोलमेज सम्मेलन में हिस्सा लेने के लिए हिंदुस्तान के राज्यकर्ताओं ने आमंत्रित किया। मेरे मतानुसार, तभी से इस युग के बदलाव का समय शुरू हुआ। पूर्वकालीन हिंदू समाज के जमाने में जो नहीं घटा था, मुगलकाल में जो नहीं घटा था, मराठों के हिंदवी स्वराज में नहीं घटा था, वह बीसवीं शती में घटा है।

हिंदुस्तान की आगामी राज्य व्यवस्था के बारे में विभिन्न समाजों के साथ सोच–विचार करते हुए राज्यकर्ताओं को लगा कि अस्पृश्य समाज को दूर रखना यानी उस बारे में सभी विचारों को दूर रखने जैसा था। साथ ही, उन्हें लगा विचार–विमर्श से लिए जाने वाले निर्णयों में अगर अस्पृश्य समाज के मतों को, उनकी आकांक्षाओं को भी शामिल नहीं किया गया, तो वे निर्णय अधूरे रह जाएंगे। इतना ही नहीं, अंग्रेज राज्यकर्ताओं को इस बात का अहसास हो चुका था कि इस तरह खड़ी की जाने वाली शासन व्यवस्था को कभी असल लोकतंत्र का स्वरूप प्राप्त नहीं हो सकता। और इसीलिए उन्होंने अस्पृश्यों के प्रतिनिधि को गोलमेज सम्मेलन में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया। इस आमंत्रण से अस्पृश्यों के प्रतिनिधि को अब तक के इतिहास में अस्पृश्यों को अप्राप्त समानता, तथा उच्च माने जाने वाले अन्य वर्गों के समान सम्मान प्राप्त हुआ। देश के हितसंबंधों के साथ अस्पृश्य वर्ग के हितसंबंधों के जुड़े होने का तथा उनके हकों की रक्षा किए बगैर देश की प्रगति होना असंभव है, इस बात का अहसास पूरे हिंदू समाज को हुआ। अस्पृश्यों के प्रतिनिधि को अन्यों के साथ देश का भविष्य गढ़ने का मौका मिला। इसी बदले हुए समय की नीव मजबूत करने के इरादे से आपके प्रतिनिधियों ने भविष्यतकाल के अपने उज्जवल इतिहास का प्रारंभ किया। इस तरह की शुरुआत करना उनके लिए आसान नहीं था। अपने समाज के अधिकारों को स्थापित करने के लिए उन्हें बाकी लोगों के साथ संघर्ष करना पड़ा।

दूसरे गोलमेज सम्मेलन से पूर्व जातियों की आपसी लड़ाइयों से सब तंग आ चुके थे, हताश हो गए थे। हम सब महात्मा गांधी के आगमन का इंतजार कर रहे थे। गांधीजी को पक्षातीत माना जाता था इसलिए सबको उम्मीद थी कि वे इस झगड़े का निपटारा करेंगे। खुद मुझे भी उम्मीद थी कि अस्पृश्यों के न्यायिक अधिकारों का स्वीकार कर उन्हें राजनीति में योग्य अवसर दिए जाएंगे। फर्क बस इतना होगा कि किसी को एक पत्तल मिलेगी, तो किसी को दो, मगर मेरे समाज के हिस्से में कम से कम एक दोना, कटोरी तो अवश्य आएगी, ऐसी मुझे उम्मीद थी, लेकिन मेरी उम्मीद झूठी साबित हुई।

महात्मा गांधी ने जब मुझे सीधे–सपाट शब्दों में बताया, 'मुसलमानों को जो चाहिए वह मैं उन्हें दूंगा, ईसाइयों को जो चाहिए मैं उन्हें दूंगा, यूरोपियन, एंग्लो इंडियनों

के हक भी मैं मान लूंगा, सिक्खों की मांगें मानी जाएंगी, लेकिन अस्पृश्यों का तिनके बराबर का हक भी मैं नहीं मानूंगा', तब मैं भौंचक रह गया। महात्मा गांधी के जैसे बर्ताव का उदाहरण मुझे पूरे इतिहास में दिखाई नहीं देता। लेकिन महाभारत के एक प्रमुख प्रसंग की याद आए बगैर नहीं रहती। कौरव–पांडवों का झगड़ा न बढ़े, जहां तक हो सके आपसी सौहार्द के साथ मामला निपट जाए, खूनखराबा न हो इसके लिए श्रीकृष्ण ने दुर्योधन से बातचीत की थी, यह हम सब जानते हैं। उस समय दुर्योधन ने साफ–साफ कहा था कि पांच पांडवों को आधा राज्य तो दूर की बात है, मैं पांच गांव तक नहीं दूंगा। उसी तरह का जवाब मुझे भी दिया गया। उसके बाद क्या हुआ आप सब जानते हैं।

अस्पृश्य समाज के न्यायपूर्ण हकों की मांग को अंग्रेज सरकार मान गई थी और उन मांगों के आधार से जातिगत निर्णय लेने की प्रक्रिया में उन्होंने अस्पृश्यों को शामिल किया था। इस निर्णय के सार्वजनिक होने के बाद अपने पापों को धो देने किए या कहिए कि मन की ग्लानि को मिटाने के लिए कहिए या फिर अपने हाथों हुए अन्याय के परिमार्जन के लिए कहिए महात्मा गांधी ने प्राणांतिक उपोषण किया और सब जानते हैं कि उस उपोषण का अंत पुणे करार में हुआ। उसी अनुबंध की स्मृति को ताजा करने के लिए हम सब आज यहां इकट्ठा हुए हैं।

इस समझौते के भविष्य के बारे में आज कुछ लोगों ने जो डर व्यक्त किया है, वह निराधार है। उन्हें शक है कि जातिसंबंधी निर्णयों पर कई तरफा आघात होने के कारण सरकार अगर उसे रद्द करेगी तो हो सकता है पुणे अनुबंध को लागू करने में बाधाएं आएं। मैं फिर से जोर देकर कहता हूं कि इस तरह का डर या आशंका बिल्कुल निराधार है। पुणे करार में डरने जैसी कोई बात नहीं है। राष्ट्रीय सभा ने घोषित किया है कि 'वाइट पेपर' को इनकार कर अगर उसे, जला दिया जाता है तो जाति संबंधी लिए गए निर्णय अपने आप नष्ट होंगे। हमें इस विवाद में जाने की जरूरत नहीं है। आपको इस बात से डर लग रहा है कि जातीय निर्णय अगर रद्द होते हैं तो पुणे करार भी नष्ट होगा? तार्किक नजरिए से या कानून के नजरिए से इस तरह के डर का शिकार होने की कोई जरूरत नहीं है। क्यों, यह मैं आपको बताता हूं। अंग्रेज सरकार के कम्युनल अवार्ड के पांचवें अनुच्छेद में स्पष्ट रूप से दर्ज किया गया है कि 'जातियों के बीच जो विवाद थे उनका आपसी सामंजस्य से निपटारा न होने के कारण सरकार को यह निर्णय देना पड़ रहा है।' यानी कि, अगर यह विवाद आपस में सुलझ जाता तो सरकार को कम्युनल अवार्ड की जरूरत नहीं पड़ती। और, अगर भविष्य में कभी हिंदुस्तान में जातियों के बीच आपसी सामंजस्य के बाद सुलह हो जाए तो सरकार उनके द्वारा लिए गए निर्णय को जरूर स्वीकार

लेगी। पुणे करार इसी तरह का समझौता है और इस समझौते को सरकार ने मान्यता दी है। कम्युनल अवार्ड में केवल प्रांतीय काउंसिलों की जगहों के बंटवारे के बारे में बताया गया है। उसमें वरिष्ठ विधि काउंसिल की जगहों का जिक्र नहीं है। पुणे समझौते में इन दोनों ही काउंसिलों की जगहों का बंटवारा हुआ है और जब सरकार ने पुणे समझौते को मान्यता प्रदान की उसी समय सरकार ने कम्युनल अवार्ड (जाति पर आधारित फैसला) की प्रांतीय काउंसिलों की सीटों के विभाजन की जगह पुणे करार के प्रांतीय सीटों के बंटवारे को सही माना तथा वरिष्ठ विधि काउंसिल के बारे में पुणे समझौते में शामिल की गई बातों को स्वीकार किया। और उसी सिद्धांत के अनुसार बाद में 'वाइट पेपर' में पुणे समझौते में दी गई वरिष्ठ काउंसिल की सीटों के बंटवारे की संख्या तय की गई। यानी पुणे समझौते में हिंदू और अस्पृश्यों में हुए सामंजस्य के सिद्धांत को सरकार ने कम्युनल अवार्ड की पांचवी धारा के तहत मान्यता दी और उस पर अपनी मुहर लगाई। इस समझौते में सरकार या हिंदू कोई परिवर्तन करना चाहें तो वह ऐसा नहीं कर सकते। यह परिवर्तन हिंदू और अस्पृश्यों के बीच आपसी चर्चा से ही किया जा सकता है। अन्य किसी भी तरीके से परिवर्तन नहीं हो सकता, और इसलिए आपको निःशंक रहने में कोई हर्ज नहीं है।

अब हिंदुओं की तरफ से शायद बताया जाए कि जब दो पार्टियों के बीच अनुबंध किया जाता है, तब उनमें से कोई भी पार्टी संकट में नहीं होनी चाहिए। महात्मा गांधीजी ने अपने प्राणों की बाजी लगा दी और इसीलिए उनके प्राण बचाने की जिम्मेदारी मुझ पर आन पड़ी। उस दौरान पूरा हिंदू समाज मुझ पर भड़क उठा था। चारों तरफ से मुझे घेरा जा रहा था कि मैं किसी तरह झुक जाऊं और समझौता करवा दूं। देश के कई युवा मुझे जान से मारने के लिए तैयार हुए थे। बंगाल के अत्याचारी युवकों से मुझे धमकी भरे खत मिल रहे थे। मुझे जताया जा रहा था कि किसी भी तरह से अगर महात्मा गांधी के प्राणों पर संकट आएगा, तो मुझे जिम्मेदार ठहराया जाएगा और इतना ही नहीं, इसके लिए पूरे अस्पृश्य समाज को भी जिम्मेदार ठहराकर हिंदुओं की तरफ से बदला लिया जाएगा। मेरी आंखों के सामने इस तरह की भीषण तस्वीर साफ थी। ऐसे हालात में प्रतिपक्ष के साथ लेन–देन करते हुए मुझे समझौते पर हस्ताक्षर करने पड़े। ऐसे हालात में अपने प्राण संकट में होने के कारण समझौते पर हस्ताक्षर करने पड़े यह कहने का हक अगर कानूनन किसी को है, तो वह केवल मुझे है इसमें कोई शक नहीं।

पुणे अनुबंध की सभी बातें भले ही मेरे मतानुसार नहीं तय हुई हों लेकिन इस तरह का हक बजा लाने के लिए मैं तैयार नहीं हूं। पुणे समझौते के बारे में मैं ईमानदार रहना चाहता हूं। इस तरह पूरा अस्पृश्य समाज पुणे करार का पालन करने के लिए तैयार है लेकिन हिंदुओं के बारे में मैं यह यकीन के साथ नहीं कह पाऊंगा। हिंदू

समाज के कई जिम्मेदार नेता और संस्थाओं के हाल के आंदोलन देखने और उनके वक्तव्य सुनने के बाद मेरे मन में आशंका पैदा हुई है कि हिंदू समाज पुणे समझौते पर ईमानदारी से अमल भी करेगा। इसीलिए मैं कहता हूं कि हमें जागरुक रहते हुए अपने अधिकारों की रक्षा करनी चाहिए।

आज के कुछ वक्ताओं ने पुणे समझौते को गांधी–अम्बेडकर समझौता कहा। लेकिन यह बात गलत है। इस समझौते पर महात्मा गांधी के हस्ताक्षर नहीं हैं। महात्मा गांधी हिंदुओं के नेता नहीं माने जाते। सही मायनों में हिंदुओं के नेता हैं पं. मदन मोहन मालवीय जी। अखिल भारतीय हिंदू समाज के नेता के रूप में उस समय उन्हीं के नेतृत्व में बातचीत चल रही थी। इसी नाते करार पर पहले हस्ताक्षर उन्हीं के हैं। अपने सर्वमान्य नेता के शब्दों के प्रति अगर हिंदू समाज के मन में सम्मान नहीं है, तो कहना पड़ेगा कि उस समाज के जैसा कृतघ्न और बेशर्म समाज कोई दूसरा नहीं होगा, हालांकि मुझे उम्मीद है कि हिंदू नेता अपने कहे का मान रखेंगे।

मुझे लग रहा है कि आज आप सब लोग यहां इकट्ठा हुए हों तो वह यह दिखाने के लिए कि अस्पृश्य समाज अपने कहे शब्दों का सम्मान करता है, लिहाज रखता है। लेकिन साथ ही मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि पिछले साल से पुणे करार दिन मनाने की जो प्रथा आप लोगों ने शुरू की है, उसे केवल एक प्रथा के रूप में न मनाएं। साल भर में किसी दिन एक जगह इकट्ठा होकर अन्य उत्सव मनाते हैं, उसी तरह यह उत्सव भी मनाना, 2–5 वक्ताओं के भाषणों का आयोजन कर खुश हो जाना काफी नहीं है। यह दिन इतने सादे और हीन तरीके से मनाया जाने लायक नहीं है। पुणे करार अस्पृश्यों के जीवन का एक अविस्मरणीय प्रसंग है। इस करार के द्वारा हमारे समाज ने दबंग माने जाने वाले हिंदू समाज को हमारा अस्तित्व मानने पर मजबूर किया। इसीलिए इस दिन को हम अपने राजनितिक दिन के तौर पर मनाएं। पुणे करार के अनुसार अपने समाज को मिले अधिकार सही ढंग से प्रयोग में लाए जा रहे हैं या नहीं यह देखने के लिए आज के दिन हमें इकट्ठा होना चाहिए।

मुंबई प्रांत के लिए आपको 15 उम्मीदवारों की जरूरत है। इन उम्मीदवारों का चुनाव करते समय आपको खास ध्यान रखना होगा। आपको सोचना होगा क्या यह उम्मीदवार हमारे समाज का सच्चा प्रतिनिधि है? अगर इन 15 प्रतिनिधियों में से 5 पूंजीपतियों के वश हुए और अन्य 5 हिंदू समाज के हाथों की कठपुतली बन गए तो बाकी बचे 5 उम्मीदवार क्या काम कर पाएंगे? इसीलिए इन 15 प्रतिनिधियों के बारे में आपको काफी दक्ष (सतर्क, चौकस, सावधान) रहना होगा। तभी जो अधिकार हमें मिले हैं, उनका सही उपयोग किया जा सकेगा। अस्पृश्य समाज की कुछ प्रगति होगी।

आने वाले समय में हर किसी को कर्तृत्ववान बनने की कोशिश करनी होगी। पिता के नाम को भुनाने की लालसा को त्याग कर खुद कुछ कर दिखाने की महत्त्वाकांक्षा मन में रखनी चाहिए। इस बारे में एक सादा दृष्टांत दे रहा हूं। एक सुभेदार के बेटे की कहानी मुझे याद आ रही है। उसकी ज़िद थी कि लोग उसके पिता की तरह उसे भी सुभेदार बुलाएं। इसके लिए उसने अपने कमरे के दरवाजे पर लिखे नामपट्ट में भी सुभेदार की उपाधि लिख रखी थी। जो सुभेदार कहकर बुलाता उसी के यहां वह जाता। जाहिर है कि लोग जानते थे कि उसके पिता ने सेना में मेहनत की थी, जिसके सम्मानस्वरूप उन्हें यह उपाधि दी गई थी। बेटे ने वह नहीं कमाई थी, इसलिए लोग उसे यह उपाधि बहाल करने के लिए तैयार नहीं थे। उस शख्स ने किसी भी तरह अपनी योग्यता बढ़ाने की कोशिश नहीं की। अपनी मूर्खता का केवल प्रदर्शन कर वह लोगों की हंसी–ठट्ठा का कारण बना। इसीलिए, भूतकालीन बड़प्पन के बारे में झूठा, वृथा गर्व करना बेकार है। बड़प्पन लाने के लिए इंसान को खुद ही कोशिश करनी चाहिए। बाप का बड़प्पन बेटे के काम नहीं आएगा। और योग्यता पाने का बेहतर उपाय है शिक्षा हासिल करना।

अगर उच्च शिक्षा का अभाव हो तो उच्च पद की नौकरियां आपको कैसे मिलेंगी? हाल ही में सरकार ने एक नोटीस निकाल कर बताया है कि मुसलमान समाज के लिए अलग–अलग विभागों में जगहें आरक्षित रखी गई हैं। उन जगहों के लिए लायक उम्मीदवार चुनना मुसलमान समाज में संभव है। अस्पृश्य समाज के लिए भी इस तरह का प्रबंध करने के लिए सरकार यदि तैयार भी है तो उन जगहों के लिए योग्य उम्मीदवार हमारे समाज में कहां से मिलेंगे? सरकार से अगर हमें यह जवाब मिले कि, आपके समाज के लिए नौकरियां आरक्षित की जानी चाहिए यह बात सही है लेकिन आप लोगों की जनसंख्या भले अधिक हो, उसमें पढ़े–लिखे लोगों की कमी होने की वजह से इस तरह की व्यवस्था करना संभव नहीं है, तो हम क्या कर सकते हैं? इसीलिए मेरा कहना यही है कि अगर उंचे पद की नौकरियां पाकर समाज में अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाना चाहते हैं, तो अपने बच्चों को योग्य शिक्षा दिलाना हर व्यक्ति का कर्त्तव्य है।

पाठशाला की शिक्षा के साथ–साथ देश में क्या कुछ हो रहा है, इसकी जानकारी रखना भी जरूरी है। यह हमारे समाज का संक्रमण काल है, बदलाव का समय है। अस्पृश्य समाज आज पुराने जमाने से नये जमाने में प्रवेश कर रहा है। ऐसे महत्त्वपूर्ण समय में हमें बड़ी सावधानी बरतनी होगी। अलग–अलग क्षेत्रों में क्या हो रहा है, अपनी उन्नति के मार्ग में या हमारे बनाए हुए प्रगति के खाके की पूर्तता में कौन अड़ंगा डाल रहा है, अपने समाज में प्रतिपक्ष के क्या मंसूबे हैं, नासिक में क्या हो

रहा है, नागपुर की तरफ क्या घटित हो रहा है, या फिर कोंकण में क्या चल रहा है, इस बारे में यथार्थ ज्ञान पाकर हम सबमें एक संवेदना उत्पन्न होनी चाहिए। उसके अनुसार हमें उपाय योजना भी करनी होगी। अपने समाज के एक जोरदार, आजाद खयालों वाला तथा स्वावलंबी अखबार के बगैर यह सब करना संभव नहीं है। इस कार्य की ओर ध्यान देकर आपमें से हर किसी को अपना अखबार जीवित रखना अपना कत्तव्य है, ऐसा लगना जरूरी है। और शिक्षा से संबंधित इस कार्य में हमें एक बात का खास खयाल रखना होगा कि उसमें परावलंबित्व जरा भी न हो।

अपृश्य समाज के लड़के–लड़कियों को छात्रवृत्ति देने को लेकर आजकल हर कहीं हल्ला मचा हुआ है। नारेबाजी की जा रही है। फिर उन्होंने कहा, मुझे बड़ा डर लग रहा है कि स्पृश्य वर्ग से मिल रही आर्थिक मदद के कारण गुलामी वृत्ति पनपेगी। छात्रवृत्ति स्वीकारने वाले कमजोर दिल के बच्चे छात्रवृत्ति देने वाले वर्ग का दास ही बनेंगे। मनुष्य, प्राणि पैसों का दास बनता है। महाभारत की कहानी का उदाहरण लीजिए। भीष्माचार्य जैसे सत्यनिष्ठ व्यक्ति जानते थे कि कौरवों का पक्ष न्याय का पक्ष नहीं है। पांडवों की मांगें न्यायपूर्ण ही हैं, फिर भी पांडवों के वनवासकाल में कौरवों की चाकरी करके उनका अन्न खाने की वजह से भीष्म कौरवों का पक्ष छोड़ नहीं सके। उन्हें पांडवों का नाश करने के लिए सिद्ध होना पड़ा।

लॉर्ड लोथिअन की अध्यक्षता में फ्रेंचाइजी कमिटी पर काम करने के दौरान हम पंजाब गए थे। अस्पृश्य समाज की ओर से गवाही देने के लिए कुछ पढ़े–लिखे लोग पंजाब में हैं क्या यह पूछते हुए हमारी खोज जारी थी तब कॉलेज में पढ़ाई कर रहे कुछ बच्चे हमें मिले। आर्य समाज द्वारा चलाए जा रहे छात्रावास में रहकर वे अपनी पढ़ाई पूरी कर रहे थे और उसी समाज द्वारा दी जा रही छात्रवृत्ति से उनका खर्चा चलता था। उन बच्चों ने मुझे बताया कि आर्य समाज की ओर से उन्हें साफ–साफ बताया गया था कि समाज जैसे बताए, वैसी गवाही अगर वे नहीं देंगे, तो छात्रावास से उन्हें भगा दिया जाएगा, और शिक्षा के लिए दी जाने वाली मदद एकदम बंद कर दी जाएगी। इस धमकी के कारण जाहिर है कि वे हतबुद्धि हुए। उनका वास्तविक मत उस दिन कमेटी के दफ्तर में मैं दर्ज नहीं कर पाया। इससे आप जान जाएंगे कि जिनसे हमें अपने खोए हुए अधिकार वापिस लेने हैं, उनसे मदद की उम्मीद करना धोखादायी है।

आखिर में मैं आपसे एक महत्त्वपूर्ण बात कहता हूं। महात्मा गांधी से अस्पृश्यता निवारण के बारे में जब मेरी बातचीत हुई उस समय उन्होंने मुझसे कहा कि कई शतकों से हिंदू समाज में अस्पृश्यता जड़ें जमा कर बैठ चुकी है इसलिए वह जल्दी से नष्ट नहीं हो सकती। इसलिए आप हिंदू समाज को थोड़ा समय दें। कई शतकों

पुरानी रीति अचानक नष्ट नहीं हो सकती। उनकी यह बात बिल्कुल सच है। उसे नष्ट करने के लिए लगातार कोशिशें करते रहना चाहिए यह भी सच है। लेकिन पहले यह जान लेना जरूरी है कि वह रीति नष्ट करना यानी करना क्या है? महात्मा गांधी जी ने मंदिर प्रवेश का आंदोलन शुरू किया तब उन्होंने कहा कि अस्पृश्यों को मंदिर में प्रवेश कराने का उद्देश्य रखते हुए हिंदू धर्म की अत्यंत पवित्र जगह में अगर उनको प्रवेश दिया गया तो अस्पृश्यता अपने आप नष्ट हो जाएगी। मंदिर से कुएं, तालाब, विद्यालय आदि के द्वार फिर उनके लिए अपने आप खुल जाएंगे। उनकी इस सोच का मतलब यही था कि अस्पृश्यता की जड़ पर ही वार करके अपने समाज पर उसकी जो जकड़ है उसे ढीला करना। उनकी नजर में मंदिर प्रवेश ही इस समस्या को हल करने की पहली और आखरी सीढ़ी थी। मैं इस सोच को नहीं मानता। अस्पृश्यता चातुर्वर्ण्य समाज व्यवस्था की बुनियाद पर खड़ी इमारत है। हिंदू समाज में फैला जातिभेद उसका प्रतिबिंब है। हिंदू समज को ग्रस (निगल) लेने वाली इस कल्पना को खत्म कर समाज के हर व्यक्ति को जब तक समान शिक्षा का अधिकार नहीं दिया जाता या फिर जातिभेद की मूल कल्पना को ही जब तक विरोध नहीं किया जाता, तब तक हिंदू समाज का सर्वतोपरि विकास असंभव है। अस्पृश्यता की जड़ें हिंदू समाज की सतह पर ही केवल नहीं फैली हैं, वह जातिभेद की इस कल्पना में गहरे भीतर तक गई हैं और वहां जड़ें जमा चुकी है। अस्पृश्यता को जड़ समेत अगर नष्ट करना हो तो जातिभेद की इस जड़ को उखाड़ फेंकना होगा। मेरी बुद्धि इतनी मंद नहीं कि मैं यह जान न सकूं कि यह बेहद कठिन कार्य है और इसमें काफी समय लग सकता है। मेरा बस यही कहना है कि इसी को अपना जीवनोद्देश्य बना कर या इसे प्रमुख तत्त्व मान कर जो भी जरूरी लगें वे उपाय कीजिए। आपको क्या उपाय करने चाहिए, इस कार्य के ब्यौरे के बारे में मेरा कोई खास आग्रह नहीं है। अलग–अलग जगहों में, अलग समय पर, विभिन्न समाजों में वह भिन्न–भिन्न हो सकता है, लेकिन खेद की बात यह है कि हिंदू समाज को यह तत्त्व ही मान्य नहीं है। क्या किया जा सकता है?

हिंदू धर्म में बेहद बुरी स्थिति में जो समाज है, उस अस्पृश्य समाज को यह जानने और तय करने का न्याय युक्त स्वनिर्णय का अधिकार होना ही चाहिए कि अपने पर कौन से अत्याचार हो रहे हैं और उनसे मुक्त होने के लिए क्या करना चाहिए। लेकिन हिंदू समाज इस बात को मानने के लिए ही तैयार नहीं है। अस्पृश्य समाज को आज तक गुलामी में रख कर भविष्य में वे किन हालात में रहेंगे, यह तय करने का अधिकार हिंदू समाज अपने हाथ में रखना चाहता है। राजनीतिक क्षेत्र में डोमिनियन स्टेटस यानी उपनिवेशी स्वराज का ध्येय सामने रखते हुए हिंदुस्तानी किश्तों में राजनीतिक अधिकार ले रहे हैं। उसी प्रकार अगर अस्पृश्य समाज अपना

ध्येय तय करते हुए उसे किश्तों में लेने के लिए हम तैयार हैं यह कह रहा है। लेकिन इन हालात में बुनियादी फर्क है। अंग्रेज सरकार ने हिंदुस्तान को डोमिनियन स्टेटस देते हुए अपनी बराबरी का दर्जा देकर उसी तरह से उसके साथ बर्ताव करने का अपना इरादा कबूला है। लेकिन हिंदू समाज मन का ऐसा बड़प्पन तक दिखाने के लिए तैयार नहीं है। इतना ही नहीं अस्पृश्य समाज को वे अपना कहने के लिए तैयार तक नहीं हैं।

महात्मा गांधी के आमरण अनशन के बाद वरिष्ठ विधि कौंसिल में एक हिंदू मंदिर प्रवेश का बिल लेकर आए थे। महात्मा गांधी के अनशन के बाद हर जगह लोगों में यह बात फैल रही थी कि हिंदुओं के मन में अस्पृश्यों के बारे में प्रेम उमड़ पड़ा है। मंदिर प्रवेश का बिल बिना किसी तरह के विरोध के पास होगा, इस तरह की बढ़ाई भी हांकी जा रही थीं। लेकिन अस्पृश्य समाज उस बिल के भविष्य को लेकर बेफिक्र था, क्योंकि उस बिल में उनकी उन्नति का मार्ग प्रशस्त करने वाला कुछ भी नहीं था। यह बिल हिंदुओं के मंदिर के बारे में था, इसलिए उसके बारे में सोच–विचार की उन्हें जरूरत नहीं थी। इसीलिए न तो जब यह बिल विधिमंडल के सामने था, तब और न उसके निरस्त होने बाद कभी उन्होंने उस बारे में फिकर की। बिल अगर पास होता तो अस्पृश्य समाज खुशी से न तो पागल हो जाता और न ही बिल को वापिस लिया गया, इसलिए उन्हें कोई खेद नहीं हुआ। उनका रुख बस यही था, कि आप अपने मंदिर के बारे में जानिए, हमें क्या! मंदिरों जैसे धार्मिक स्थल निर्माण कर अस्पृश्यों के लिए उन्हें खोल कर उनका प्रेम हासिल करना अथवा उन्हें बंद कर उनमें अस्पृश्यों के प्रवेश पर पाबंदी लगाना हिंदुओं का काम है, हमारा नहीं। लेकिन इतना सयाना हुआ तो वह हिंदू धर्म नहीं होगा! आखिर हुआ वही जो होना था। बिल के पक्ष में कम वोट मिलने की वजह से नहीं वरन् पूरे हिंदू समाज की ओर से हुए करारे विरोध के कारण बिल बनाने वाले इतनी हिम्मत भी नहीं जुटा पाए कि चर्चा के लिए ही सही बिल पेश करते। उस बिल को बगल में दबाकर रंगा अय्यर को वहां से नौ दो ग्यारह होना पड़ा। हमने हिंदू धर्म को अपना ह्रदय खोलने का मौका दिया, और तटस्थ रह कर जो हुआ उसे देखते रहे।

लेकिन अब इस बिल की मौत के बाद हमें सबक लेना होगा। हिंदू समाज के मन में क्या है, यह अब हमारे सामने पूरी तरह खुल चुका है। अस्पृश्य समाज को वह अपना कहने के लिए तैयार नहीं है, यह भी हम जान चुके हैं। इस तरह हिंदुओं की तरफ से दुत्कारे जाने के बाद हम कब तक उनकी पूंछ पकड़कर चलते रहेंगे? आज कोई अस्पृश्यों को हिंदू समाज का अभिन्न अंग मानने के लिए तैयार नहीं है। जूतों का जितना जरूरी हो उतना इस्तेमाल करने के बाद आखिर उन्हें घर के बाहर ही उतारकर रख दिया जाता है, जरूरत न हो तो उसे फेंक दिया जाता है।

आज हिंदू लोग आपको पैर के जूते से ज्यादा नहीं समझते। आपके साथ गुलामों की तरह ही पेश आने का उनका पक्का निश्चय है। अगर ऐसा है तो यह अत्याचार आप कितने समय तक बर्दाश्त करेंगे? क्या आज की स्थिति आपके स्वाभिमान के अनुकूल है? स्वाभिमानहीन गुलाम अपनी या अपने समाज की कभी उन्नति कर पाया है? इस सवाल पर आप अच्छी तरह से सोच लीजिए। अपने को हिंदू कहलाने के एवज में क्या आप जिंदगीभर गुलाम ही रहना पसंद करेंगे? इस सवाल पर सोचने के बाद मेरा मन अपने को हिंदू कहलाने की इजाजत नहीं देता है।

पिछले दो सालों से मैं इस सवाल पर गहराई से सोच रहा हूं और मुझे पूरा यकीन होता जा रहा है कि अगर मुझे अपना स्वाभिमान जिंदा रखना हो, समता के वातावरण में सांस लेनी हो तो मैं खुद को हिंदू नहीं कहला सकता। अगर मैं हिंदू नहीं तो खुद को मैं क्या कहला सकता हूं? ईसाई कहलाऊंगा, मुसलमान कहलाऊंगा या बौद्ध कहलाऊंगा, यह मैं आज आपको नहीं बता सकता। आज तक यदि मैं हिंदू रहा तो आपके साथ और केवल आपके लिए। आपकी अशिक्षा के कारण आपका साथ छोड़ जाता, तो मानों मैं आपको अंधा कर जाता। इसका अहसास था, इसलिए मैं आज तक आपके साथ रहा। लेकिन जल्द ही हम इस बात के बारे में सच–झूठ का फैसला करेंगे और जो भी करना हो, वह सब मिल कर एक साथ करेंगे। अगर ऊंची चट्टान से खाई में कूदना हो तो सब साथ में कूदेंगे। आज आप इस बात को जानिए और अपने मन में पक्का करके रख लें कि हमारे साथ हिंदुओं का किस तरह का बर्ताव है।

आखिर आज आपने यहां मुझे अपना मन खोल कर बोलने का मौका दिया इसके लिए मैं आप सबके प्रति आभार व्यक्त करते हुए आपसे विदा लेता हूं।"

76
गरीब छात्रों की शिक्षा के लिए पैसों का उपयोग करना बेहतर होगा*

मुंबई के परेल में स्थित दामोदर हॉल में डॉ. पी. जी. सोलंकी साहब की अध्यक्षता में शनिवार,[1] दिनांक 30 सितंबर, 1934 के दिन 'मोटर ड्राइवर अस्पृश्य सेवक संघ' का प्रथम सालाना समारोह मनाया गया। इस अवसर पर डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर, रा. ब. बोले आदि लोग उपस्थित थे। स्वागत पद्य का गान और अध्यक्ष का चयन होने के बाद संघ के अध्यक्ष श्री मारुतीराव घमरे ने रिपोर्ट पढ़ कर संस्था के बारे में संक्षिप्त जानकारी दी। उनके बाद रा. ब. बोले का भाषण हुआ। उसके बाद अध्यक्ष ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को बोलने की विनति की और डॉ. बाबासाहेब बोलने के लिए खड़े हुए।

[2]अपने भाषण में उन्होंने संघ के काम के बारे में संतोष व्यक्त किया। संघ की आवश्यकता के बारे में विस्तार से बातचीत करते हुए ड्राइवरों को उपदेश दिया। उन्होंने कहा कि, अपने पैसों का कहीं भी इस्तेमाल करने के बजाय परिवार के पोषण पर, समाज के विकास पर और खास कर गरीब छात्रों की पढ़ाई पर करना बेहतर होगा। साथ ही सब ध्यान रखें कि अनीति या बुरी लतों का फैलाव ना हो। संगठन के बगैर समाजहित जैसा कठिन काम पूरा करना संभव नहीं होता। बाप–दादाओं के नाम पर खुद को बेचने का कोई मतलब नहीं है। इसीलिए अपने बंधु–बांधवों से मैं उम्मीद करता हूं कि उद्योग–व्यवसाय में मिले पैसों का उपयोग वे अच्छे कामों में करें। डॉ. बाबासाहेब के भाषण के बाद अन्य वक्ताओं के भाषण हुए। इस अवसर पर अध्यक्ष सोलंकी साहब ने बहुत अच्छा भाषण दिया।

इसके बाद डॉ. बाबासाहेब के हाथों कला में अपूर्व कौशल प्रदर्शन के लिए गंगाराम रघुनाथ को चांदी का तमगा देकर और समाज कार्य के लिए श्री साबाजी मिरके को फूल माला पहनाकर सम्मान किया गया। इस समारोह में श्री बापूसाहब सहस्त्रबुद्धे, शिवतरकर, उपशाम भातनकर आदि लोगों के भी भाषण हुए। आखिर में आभार व्यक्त करने और चुनिंदा लोगों के साथ अल्पोपहार के बाद यह समारोह संपन्न हुआ।

---

*'जनता' 20 अक्तूबर, 1934

1. तारीख 29 सितंबर भी हो सकती है–संपादक

2. 29 सितम्बर, 1934 को शनिवार का दिन था, इसलिए यह सभा रविवार दिनांक 30 सितम्बर, 1934 को हुई हो।

77
अस्पृश्य हिंदू के रूप में पैदा हुआ, लेकिन मैं हिंदू के रूप में नहीं मरूंगा

शनिवार 12 अक्तूबर, 1935 को डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर नासिक गए थे। सुबह 11 बजे स्टेशन से शहर तक उन्हें बड़े जुलूस में ले जाया गया। विदगांव, नासिक रोड आदि जगहों पर उन्हें भोज दिया गया। नासिक रोड में उनके नाम से एक सार्वजनिक ग्रंथालय शुरू किया गया था। वहां एक टिन की शेड बनी थी। उसका उद्घाटन बाबासाहेब के हाथों किया गया। उस समय भाषण देते हुए उन्होंने जनता को उपदेश दिया –

"स्वावलंबी बनो। अपने पैरों पर खड़े होकर अपनी प्रगति का कार्य करो। मुझे यदि कुछ हो जाता है तो मेरे पीछे आंदोलन चलाने के लिए लोग तैयार रहें।" रात नौ बजे रविवार पेठ की, हिरालाल गली में सहभोज हुआ। उसमें देशपांडे ही अकेले काँग्रस वाले थे। रविवार 13 अक्तूबर, 1935 के दिन डॉ. बाबासाहेब नासिक से विंचूर गए। राह में जितने गांव थे वहां लोगों ने उन्हें फूलमालाएं पहनाईं, गुलदस्ते दिए। विंचूर में स्पृश्य वर्ग की तरफ से भी उन्हें चाय–पार्टी दी गई। सुबह वे येवले म्युनिसिपालिटी से मानपत्र स्वीकारने के लिए गए। मानपत्र का जवाब देते हुए उन्होंने कहा, हमारे आंदोलन से स्पृश्य वर्ग के दृष्टिकोण में बदलाव होगा और वे हमारे साथ अपनेपन से पेश आएंगे, ऐसा तो लगता नहीं! इसलिए हम हिंदुओं से अलग रह कर अपनी प्रगति के लिए स्वालंबन से संघर्ष करते रहेंगे।

13 अक्तूबर, 1935 के दिन नासिक जिले के येवले में मुंबई इलाका दलित वर्गीय परिषद हुई। परिषद के स्वागताध्यक्ष श्री अमृतराव रणखांबे थे। परिषद की शुरुआत रात 10 बजे हुई। इस परिषद में करीब दस हजार लोग इकट्ठा हुए थे। स्वागताध्यक्ष के भाषण के बाद परिषद के अध्यक्ष डॉ. बाबासहेब अम्बेडकर ने अपने भाषण में घोषणा की कि अस्पृश्य धर्मांतर करें।[1]

येवले में 13 अक्तूबर, 1935 को हुए 'मुंबई इलाका दलित वर्गीय परिषद' में परिषद के अध्यक्ष डॉ. बाबासहेब अम्बेडकर ने अपने भाषण में दलितों को सवर्ण हिंदुओं के अत्याचारों से मुक्ति पाने के आखिरी उपाय के तौर पर धर्म परिवर्तन की जो सलाह दी उसे सुन कर हर हिंदू के अंतःकरण में खलबली मची होगी। इस अवसर पर केवल अध्यक्षीय भाषण में ही इस मार्ग के अवलंब के बारे में कहा नहीं

---

1. डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र : चां. भ. खैरमोडे, खंड 6, पृष्ठ 84, 85

गया है, वरन् परिषद ने भी अध्यक्ष की सलाह को अपनाते हुए हिंदू धर्म के अस्पृश्य माने गए वर्ग द्वारा हिंदू धर्म का त्याग कर जिस धर्म में समानता के अधिकार मिलेंगे, उसी धर्म को अपनाने का प्रस्ताव मंजूर किया गया। हिंदू धर्म के जिन अन्यायों के कारण डॉ. अम्बेडकर जैसे व्यक्ति को भी धर्म परिवर्तन करने का निर्णय लेना पड़ा, उन अन्यायों और इन अन्यायों के लिए जो कारण हैं, उन सनातनियों की इंसानियत से कोई वास्ता न रखने वाली खूंख्वार मानसिकता के बारे में भी विचार किया जाना आवश्यक है। डॉ अम्बेडकर की इस सोच की जिम्मेदारी इन सनातनियों पर है, इस बात को हमें भूलना नहीं चाहिए। अस्पृश्यों पर हिंदू धर्म में कितना अन्याय हो रहा है, इस अन्याय से अपने को मुक्ति दिलाने के लिए उन्होंने जो कोशिशें कीं वे सब सवर्ण हिंदुओं के कारण किस तरह नाकामयाब रहीं, आदि बातें उन्होंने अपने निर्णय को घोषित करने से पहले विस्तार से बताई। सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, राजनीतिक आदि हर मामलों में दलितों पर दबाव है। हिंदू धर्म के इस दबाव के कारण मनुष्य होने के नाते मिलने वाले अधिकारों को हासिल करना भी असंभव हुआ है, अब तक किया गया अव्वल दर्जे का स्वार्थत्याग भी व्यर्थ साबित हुआ है। पिछले पांच सालों में नासिक के काले राम के मंदिर में दलितों को प्रवेश दिलाने के बहाने हिंदू समाज में उन्हें समान अधिकार और दर्जा दिलाने के लिए उन्होंने जो कोशिशें कीं, सत्याग्रह का उपाय किया, लेकिन इन सब उपायों का उच्चवर्णियों पर कोई असर नहीं हुआ। इन सभी बातों का जिक्र करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा,

"सादे मूलभूत अधिकार हमें मिलें, इसलिए स्पृश्य माने गए हिंदू लोगों को मनाने की बेकार कोशिशों में हमने जो धन इकट्ठा किया था, वह भी खर्च हो गया। उन्होंने हमारी बहुत बेइज्जती की लेकिन वह भी हमने सही। लेकिन यह स्वार्थत्याग बेकार ही सिद्ध हुआ। आज तक हमने चुपचाप और शांति से जो परेशानियां झेलीं, उनका थोड़ा सा भी असर हिंदू लोगों के हृदय पर नहीं हुआ। हम यदि किसी दूसरे धर्म के अनुयायी होते और तब भी उदर निर्वाह के हमारे वही काम होते जो आज हैं तो हिंदू लोगों की क्या यह हिम्मत होती कि वे तब भी हमारे साथ वैसा ही व्यवहार करते जैसे आज कर रहे हैं?

हिंदू धर्म में जन्म लेने के कारण, हमारे जीवन पर जो धब्बा लगा है वही हमारे विकास और उन्नति का अड़ंगा बना हुआ है। हमारे अपमान की, सवर्ण हिंदू हम पर जो अत्याचार करते हैं, उसकी यही एक वजह है। अगर यही बात है, तो केवल उस धर्म का ठप्पा लगा कर बैठे रहने से क्या फायदा? इंसान की तरह रहने की भी अगर हमें इजाजत नहीं है, उस हिंदू धर्म के कलश का एक हिस्सा बन कर हम अपनी जिंदगी क्यों बिताएं? ऐसे हालात में इस तरह के धर्म में रहने के बजाय, जिसमें हमें किसी तरह की मान हानि नहीं सहनी पड़े, ऐसे धर्म का हम क्यों न

अवलंब करें? अपना दर्जा नीचा मानकर बर्ताव न करना पडे, ऐसे धर्म का स्वीकार करना क्या ठीक नहीं रहेगा?

हिंदू धर्म के त्याग के बाद अस्पृश्य कौन–सा धर्म अपनाएंगे, यह पूरी तरह उनकी अपनी मर्जी पर निर्भर करेगा। उन्हें सिर्फ इस बात का ध्यान रखना होगा कि वे उसी धर्म को स्वीकार करें, जिसमें उन्हें समानता का अधिकार प्राप्त हो।

दुर्भाग्य से मैं भी अस्पृश्य हिंदू का दाग लेकर ही पैदा हुआ। हालांकि यह बात मेरे बस में नहीं थी। लेकिन यह हीन दर्जा झटक कर स्थिति को सुधारना मेरे बस में है और मैं वह करूंगा ही इस बारे में किसी को किसी तरह की आशंका नहीं होनी चाहिए। आज साफ तौर पर मैं आपसे कह रहा हूं कि मैं अपने आप को हिंदू कहलाते हुए नहीं मरूंगा।

हिंदू धर्म में अपना समान दर्जा स्थापित करने के लिए सत्याग्रह का मार्ग अपनाकर कुछ मिलने वाला नहीं है। उस राह की अब जरूरत भी नहीं है। हमें अपना मार्ग अब हिंदू धर्म से अलग और आजाद माना जाना चाहिए। जाहिर है कि नागरिकता और राजनीतिक अधिकारों के लिए हमें अपनी लड़ाई जारी रखनी ही होगी। और इसके लिए आपसी मतभेद, आंतरिक कलह भुला कर एक होकर संगठित ढंग से अपना उद्देश्य हासिल करने की कोशिश करना यही हमारा आज का कर्त्तव्य होना चाहिए।

नए संविधान में दलित वर्ग अपने हक जोरदार ढंग से पेश करें इसके लिए सच्चे, अपनी धुन के पक्के प्रतिनिधियों का चुनाव करना बहुत जरूरी है। हिंदू धर्म की श्रृंखलाओं से जकड़े न रहते हुए आजादी से अपने कर्तव्य तय करने की अपनी इच्छा है, यह दलित वर्ग दुनिया को स्पष्टता से बता दें, यही मेरी उनसे विनति है।[1]

इस भाषण को समर्थन देने का प्रस्ताव डॉ. बाबासाहेब ने रखा और उसे सबने उसे समर्थन दिया। प्रस्ताव खुद बाबासाहेब लिख कर ले आए थे।[2]

येवला परिषद में प्रस्तुत किया गया प्रस्ताव –

अस्पृश्य और स्पृश्य माने गए वर्गों में समता और संगठन बनाने के उद्देश्य से उतनी सामर्थ्य न होते हुए भी इंसान और धन की अपरिमित हानि को सहकर भी मुंबई इलाके के अस्पृश्य वर्गों ने महाड़ के चवदार तालाब के पास और नासिक के

1. 'विविध वृत्त' : 20 अक्तूबर, 1935
2. डॉ. भी. रा. अम्बेडकर चरित्र : चां. भ. खैरमोडे, खंड 6, पृ. 85

कालाराम मंदिर के सामने सत्याग्रह किया। कालाराम मंदिर का सत्याग्रह पिछले पांच सालों से लगातार चलाया गया है। लेकिन स्पृश्य हिंदुओं का जरा भी मत परिवर्तन नहीं हुआ है। इतना ही नहीं, स्पृश्यों और अस्पृश्यों में होने जा रहे संगठन को और उससे उत्पन्न होने वाली हिंदू ताकत की भी उन्हें बिल्कुल भी परवाह नहीं है, यह उन्होंने अपने बर्ताव से साबित कर दिया है। इसीलिए अस्पृश्यों की इस परिषद में यह प्रस्ताव मंजूर किया जा रहा है कि, हिंदुओं को मनाने की उनकी कोशिशों का कोई असर नहीं हो रहा है इसलिए अब इसके बाद वे अस्पृश्य वर्ग अपनी शक्ति को इस काम पर बर्बाद न करें। सत्याग्रह की मुहिम अब बंद कर दी जाए। स्पृश्य वर्ग से अपने समाज को अलग कर लें। तथा परिषद के मत में, अस्पृश्य अब हिंदुस्तान के अन्य समाज में अपने समाज को सम्मानजनक और समान स्थान दिलाने के लिए पूरी निष्ठा से कोशिश करें।[1]

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर जी का नपा–तुला, मुद्दों पर केंद्रित भाषण और उसके अनुसार रखे गए प्रस्ताव के कारण युवा वर्ग खुश हुआ। धर्म में आस्था रखने वाले बूढ़े और महिलाओं को इस घोषणा ने चकित किया। इसके बावजूद डॉ. बाबासाहेब ने जिस वेदना और ममता भरे कठोर शब्दों के साथ भाषण दिया था, वह सुन कर उन्होंने भी इस प्रस्ताव को अपनी मंजूरी दी। हिंदू लोग अस्पृश्यों को निचले पायदान का हिंदू मानकर उनके साथ गलत व्यवहार करते हैं और दूसरे धर्म में उन्होंने प्रवेश किया तो इस परेशानी से उन्हें मुक्ति मिलेगी। अपने बलबूते वे अपनी रोजी रोटी कमाएंगे। शिक्षित होकर अपनी प्रगति हासिल करेंगे। एक घंटे तक इस विषय पर डॉ. बाबासाहेब ने भाषण दिया। सब लोग मंत्रमुग्ध होकर उनका भाषण सुन रहे थे। तालियों के गड़गड़ाहट के बीच प्रस्ताव मंजूर किया गया।

डॉ. बाबासाहेब और उनके सहकारी येवला से लौट आए। और नासिक में जब वे रुके हुए थे, तब मंगलवार, दिनांक 15 अक्तूबर, 1935 और 16 अक्तूबर, 1935 को भंगी (मेघवाल) लोगों ने उन्हें चाय–पार्टी और भोजनपार्टी दी। डॉ. बाबसाहब और उनके सहयोगियों ने अपने साथ भोजन करते हैं, यह देख कर उन्हें बहुत आनंद और उत्साह हुआ।

---

1. 'जनता', 15 फरवरी, 1936

78

जो धर्म इंसान के साथ इंसानों जैसा व्यवहार नहीं करता उसे धर्म कैसे कहा जाए?

रविवार दिनांक 8 दिसंबर, 1935 की तारीख निर्भीडकर के जीवन का बड़ा ही विशेष और संस्मरणीय दिन था। उस रात को मुंबई के फोरस रोड के पास वाली जयरामभाई स्ट्रीट के पुरानी ढोर चाल में एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण बैठक होने वाली थी। घोषणा की गई थी कि उस सभा में धर्म परिवर्तन की घोषणा के नायक डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का मुंबई में पहली बार धर्मांतरण के विषय पर महत्वपूर्ण भाषण होने वाला है। इस कारण उस सभा को कुछ अपूर्व रूप प्राप्त हुआ था, यह बिना बताए भी सुधी पाठक जान गए होंगे। उस सभा में उपस्थित रह कर अपने विचार दस हजार के श्रोतृसमुदाय के सामने प्रस्तुत करने का मौका हमें मिला यह हम अपना परम भाग्य मानते हैं। इस निर्भिडकर के भाग्य में जितने भाग्य के क्षण आए होंगे, उनमें यह सबसे ऊंचा मौका था। यह सभा महत्त्वपूर्ण थी, ही साथ में सुधारक स्पृश्य समाज की ओर से अस्पृश्यों के धर्मांतरण की घोषणा करने का हमें जो मौका मिल रहा था, वह भी महत्त्वपूर्ण और अहोभाग्य का था।

बीते रविवार को रात में 'सोमवंशीय गुरुदत्त प्रासादिक भजन समाज' की ओर से होने वाले बत्तीसवें सालाना दत्त जयंति उत्सव का आयोजन किया गया था। पिछले 32 सालों से यह उत्सव बड़े धूमधाम के साथ मनाया जाता रहा है। इस उत्सव में हजारों अस्पृश्य बंधु–भगिनि उपस्थित रहते थे, बड़ी भीड़ लगती थी। इस उत्सव की शुरुआत स्व. माधवनाथ मोरे जी ने की थी। उनके हालिया प्रबंधन मंडल में श्री बालाजी सुडकाजी मोरे, शंकरराव आडेजाधव, माधवराव पारधे, गंगारामपंत मुकादम और रेवजीबुवा डोलस आदि प्रमुख नेता थे। प्रबंधन मंडल ने इस वर्ष भी बड़े धूमधाम से उत्सव का आयोजन किया था, जो बहुत ही आनंद की बात थी। उनकी इस उज्ज्वल धर्मबुद्धि के लिए हम उन्हें और उनके साथियों को स्पृश्य हिंदू समाज की ओर से बहुत–बहुत साधुवाद देते हैं।

इस वर्ष दत्तजयंति उत्सव कुल चार दिनों तक धूमधाम से मनाया गया। पहले दिन यानी शनिवार, दिनांक 7 को श्रीयुत किसन देवीदास बोवा (13वीं गली, कामाठीपुरा), रामजी रावजी बोरकर (ताडवाडी), रामजी धोंडूजी भालेराव (औचित्यवाडा), रामचंद्र सदूजी रणदिवे (बटाट्याची चाल) आदि प्रसिद्ध भजनकारों के प्रबंधन में संगीत भजन प्रस्तुत किए गए।

1."निर्भीड" : 15 दिसम्बर, 1935

दूसरे दिन हम जिस सभा का वर्णन करने के लिए यह लेख लिख रहे हैं, वह भव्य सार्वजनिक सभा हुई। तीसरे दिन पालखी के जुलूस और भोजन के समारोहों की घोषणा की गई थी। इस उत्सव के लिए हजारों रुपये खर्च किए जाते हैं, और अस्पृश्य समाज कार्यक्रम का आनंद लेता है। इस तरह के उत्सव की एक बहुत ही महत्वपूर्ण सभा के लिए हाजिर रहते हुए भाषण करने का मौका हमें मिला यह हमारे सौभाग्य की ही बात थी। इस साल का यह समारोह अगर आखिरी समारोह साबित हुआ तो हमें जो मौका मिला है वह बहुत ही भाग्यशाली है, इसमें कोई दो राय नहीं।

इस सभा में उपस्थित रहने के लिए पिछले रविवार रात नौ बजे के आसपास हम सभास्थल पर पहुंचे। देवि के एक छोटे से मंदिर के सामने सभा का स्थान सजाया गया था। मंदिर के सामने वाली चौड़ी सड़क सभा के लिए नियोजित की गई थी। मंदिर के ऊपर कपड़े का एक बोर्ड टंगा हुआ था जिस पर बड़े अक्षरों में लिखा था 'बत्तीसवां दत्त जयंति उत्सव' मैनेजर – रेवजीबोवा डोलस। मंदिर के सामने पड़ने वाला रास्ता पताकाओं से, कागज के फूलों से बनी छत से, तरह–तरह के झंडों से सजाया गया था। सड़क पर श्रोताओं के बैठने की व्यवस्था की गई थी। वहां बायीं तरफ महिलाएं बैठी हुई थीं। मंदिर के सामने एक बड़ा और सजा हुआ मंच था। उस पर गलीचे और जमखाने फैलाए गए थे। मंच के बीच में एक चौकोर मेज रखी गई थी और उसके पीछे मखमल से सजी दो कुर्सियां रखी थीं। मंच पर अन्य मेहमानों के लिए हरे मखमल के कोच लगाए गए थे। मंच के आसपास और भी कोच, कुर्सियां और बेंच थे। हम जब पहुंचे तब सभा–स्थल पर पांच हजार से अधिक श्रोता इकट्ठा हुए थे। उनमें अस्पृश्यों का अनुपात ज्यादा था इसके बावजूद पांच–पचास मुसलमान, पांच–दस ईसाई, एक बूढ़ा पारसी जैसे दूसरे धर्म के लोग भी बीच–बीच में दिखाई दे रहे थे। एक सज्जन हमें बड़े प्रेम से मंच के कोच पर बैठा गए। हमारे पड़ोस में श्री अडांगले, और श्री वडवलकर बैठे थे सो बातचीत में बहुत मजा आया। ये अस्पृश्य बंधु आजकल हमारे परममित्र हो बैठे हैं। डॉ. अम्बेडकर और उनके साथियों को ले आने के लिए श्री रेवजी बोवा गए थे। इसीलिए बीच के खाली समय में कुछ मनोरंजन के कार्यक्रम पेश किए गए। हम जब गए तब एक लड़का बड़ी मीठी आवाज में गा रहा था। उसके बाद श्री फालके ने एक पोवाड़ा गाकर सुनाया। उसके बाद जलसे का भी छोटा सा कार्यक्रम हुआ। इस तरह अलग–अलग तरह के कार्यक्रम चल रहे थे फिर भी सभी श्रोताओं का ध्यान डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की तरफ लगा हुआ था। श्रोताओं की संख्या बढ़ते–बढ़ते दस बजे के आसपास दस हजार तक पहुंच गई। आखिर सवा दस के आसपास सभास्थल के पास दो भव्य मोटरें पों–पों करते हुए आकर खड़ी हुईं। इन मोटरों से अपने दोस्तों के साथ डॉ. अम्बेडकर

आए। अम्बेडकर के आने की खबर मिलते ही तालियों की गड़गड़ाहट से आसमान गूंज उठा। श्रोताओं ने बाबासाहेब का जितनी गर्मजोशी से स्वागत किया उसे देख कर किसी किरिट कुंडलधारी सार्वभौम राजा को भी उनसे जलन होती। लगातार उनके नाम की जय बोली जा रही थी, तभी डॉ. अम्बेडकर मंच पर रखी मखमली दरबारी कुर्सी पर जाकर बैठे। उनके पड़ोस वाली कुर्सी पर सभा के अध्यक्ष श्री देवराव नाईक बैठे। प्रि. दोंदे, श्री सुरबा टिपणीस, बापूसाहब सहस्त्रबुद्धे, आदि लोग उनके आसपास वाले कोच पर जाकर बैठ गए। अस्पृश्यों के एक और सन्माननीय नेता डॉ. सोलंकी को लिवाने के लिए मोटर गई थी, उनके आने तक जलसा जारी रखा गया। थोड़े समय के बाद डॉ. सोलंकी आए। व्यवस्थापक मंडल ने उनका भी भली–भांति स्वागत किया। लोगों ने भी तालियों की गड़गड़ाहट से अपनी सहमति दर्ज की। डॉ. सोलंकी डॉ. अम्बेडकर के पड़ोस वाली कुर्सी में स्थानापन्न हुए और उसके बाद श्री रेवजी बोवा ने कार्यक्रम की शुरुआत की। अध्यक्ष की सूचना को समर्थन दिए जाने के बाद श्री देवराव नाईक ने छोटा सा भाषण दिया। उसके बाद श्री सुरबा टिपणीस का भाषण हुआ।

इसके बाद अध्यक्ष की ओर से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को भाषण देने के लिए आमंत्रित किया गया। डॉ. अम्बेडकर हाथ में एक छोटी छड़ी लेकर टेबल के सामने आकर खड़े हुए। तालियों की गड़गड़ाहट से पूरा वातावरण गूंज उठा। बाबासाहेब का सिर खुला था, सिर पर उन्होंने कुछ पहना नहीं था। उनकी पोषाक भी बहुत ही सादी थी। लॉन्ग क्लाथ का पाजामा और सोलापुरी चेक्स का कोट उन्होंने पहन रखा था। अत्यंत गंभीर स्वर में डॉ. अम्बेडकर ने कहा,

"सभापति महोदय और भाइयों और बहनों,

शुरुआत में ही मुझे एक–दो बातों का खुलासा करना होगा। पिछले साल के उत्सव में मैं नहीं आया था। इस साल भी दत्त जयंती जैसे उत्सवों में भाषण करना ठीक नहीं। लेकिन रेवजी बुवा ने जब आश्वासन दिया है कि यह आखिरी उत्सव होगा, तो मैं आया हूं। इस जगह धर्म परिवर्तन जैसे विषय पर बोलना भी ठीक नहीं। लेकिन मुझे अब कुछ बोलना तो पड़ेगा। धर्मांतरण के बारे में मेरे मत पक्के हैं। मैं धर्मांतरण करूंगा ही, लेकिन अभी थोड़ा रुका हुआ हूं, ताकि आपका मन जान सकूं। आप सब, सात करोड़ लोग अगर धर्म परिवर्तन करेंगे तो ही मैं भी करूंगा। एक भी व्यक्ति पीछे ना रहे। थोड़ा थोड़ा करके किसी दूसरे धर्म में जाओगे तो आपका नुकसान होगा। सात करोड़ लोगों को एक साथ धर्म परिवर्तन करना होगा। दस हजार मुसलमान बने, चार हजार ईसाई बने तो इस तरह की फूट से कल्याण नहीं होगा। आपमें से केवल कुछेक लोग ही मेरे साथ अन्य धर्म में आए, तो मैं आपका

कल्याण नहीं कर सकता। आप अगर सब लोग आओ तो मैं आपका कुछ हित कर सकता हूं। सबका निश्चय होने में थोड़ा समय तो लगेगा ही! मैं उतनी देर रुकने के लिए तैयार हूं। लेकिन यह समय मैं अस्पृश्यों को दे रहा हूं, स्पृश्यों को नहीं! सब आ आकर मुझसे पूछते हैं, आपसे कोई नहीं पूछता होगा। मुझे बताना पड़ता है। लेकिन उसका मतलब यह नहीं कि धर्म परिवर्तन का मेरा निश्चय बदलने वाला है। मेरा निश्चय पक्का है। लेकिन मुझे आपका क्या विचार है, इसका पता चलना चाहिए। हिंदू धर्म कोई धर्म नहीं है। यह तो रोग है, महारोग है! हम जहां बैठे थे, उस ओर मुड़कर उन्होंने कहा, इस रोग से हम नहीं, हिंदू लोग ग्रस्त हैं। हम अस्पृश्यों ने क्या पाप किया है? कुछ भी तो नहीं। जो भी पाप किए हैं वे स्पृश्यों ने किए हैं। उनके फल हमें भुगतने पड़ रहे हैं। इसीलिए हमें दूर जाना होगा। हिंदु अगर इस रोग से अपने को मुक्त करना चाहते हों, तो वे भी हमारे साथ आएं। हमसे कहा जाता है कि अस्पृश्यता नष्ट करने की कोशिश कीजिए, लेकिन यह संभव नहीं है। हिंदू धर्म, धर्म ही नहीं रहा है। अगर कोई यह मानता है कि हिंदू धर्म है तो वह आकर मुझे यह प्रमाणित कर दिखाए। हिंदू धर्म जहर है। जहर अमृत में बदलना असंभव है। जिस धर्म के लोग अस्पृश्य वर्ग के लोगों के साथ समानता का व्यवहार नहीं करते, इंसानियत के साथ पेश नहीं आते, उसे धर्म कैसे कहा जाए? जहर को अमृत बनाने का तरीका अगर कोई जानता हो तो वह मुझे बताए। वैसे, जहर को अमृत में बदलना संभव ही नहीं। कोई व्यंजन अगर नमकीन हो जाए, खट्टा हो जाए तो उसे ठीक किया जा सकता है। मैं खुद खाना पकाना सीख गया हूं। बहनों की तरह मैं भी बढ़िया खाना पका लेता हूं। शायद आपको पता न हो, कभी अगर और कोई काम न मिले तो कम से कम बावर्ची का काम कर सकूंगा, यह सोच कर मैंने खाना बनाना सीख लिया है। कोई व्यंजन अगर ज्यादा नमकीन हो जाए तो उसमें से नमक की मात्रा कैसे कम की जा सकती है, यह मैं उन्हें बता सकता हूं। नमकीन चीज जब पक रही हो तब उसमें कागज का एक टुकड़ा डाल कर रखें, तो उस व्यंजन का नमक कम हो जाता है। (तालियां) कहने का उद्देश्य यही है कि बाकी सब कुछ बदला जा सकता है, लेकिन जहर का अमृत नहीं किया जा सकता। अभी परसों मुझे गुजराती में लिखा एक खत मिला है। उसमें जो लिखा गया है, वह जानेंगे तो हिंदू धर्म जहर है इस बारे में आपको भी यकीन हो जाएगा। गुजरात के एक गांव में जैन छात्रों का एक बोर्डिंग है। वहां करीब बीस बच्चे रहते हैं। उनकी देखभाल के लिए एक बूढ़े जैन सुपरिंटेंडेंट की नियुक्ति की गई है। उस बोर्डिंग के परिसर में एक अस्पृश्य दंपति काम करते थे। उनका तीन–चार साल का एक बच्चा था। उसे पीठ पर लाद कर वे बोर्डिंग की तरफ काम के लिए जाते वक्त ले जाया करते थे। एक दिन उस बच्चे को बोर्डिंग के परिसर में खेलने के लिए छोड़ कर मां–बाप कहीं बाहर काम के लिए गए। यहां बच्चा खेलते–खेलते

बोर्डिंग के दरवाजे के पास वाले पानी के छोटे से हौज के पास पहुंचा। यह हौज दो–ढाई फीट चौड़ा और चार–पांच फीट गहरा था। दुर्भाग्य से वह बच्चा हौज पर चढ़ा और संतुलन खो जाने के कारण हौज में गिर गया। यह बात बोर्डिंग में रहने वाले 20 बच्चों ने तथा उनके बूढ़े अध्यापक ने देखी। लेकिन उन्होंने बच्चे को हौज से बाहर निकाला नहीं। बच्चों ने यह खबर उस बच्चे के माता–पिता तक पहुंचाई। बड़ी देर के बाद मां–बाप आए और उन्होंने उस बच्चे को बाहर निकाला। फिर वे उसे अस्पताल लेकर गए। डॉक्टर ने बच्चे की जांच के बाद बताया कि बच्चा दो घंटे पहले ही मर चुका है। अब सवाल यह है कि उन बीस जैन बच्चों ने और उनके उस बूढ़े अध्यापक ने बच्चे को पानी से बाहर क्यों नहीं निकाला? इसका जवाब यही है कि वह बच्चा अस्पृश्य जाति में पैदा हुआ था। ऐसा है यह हिंदू धर्म। उससे इंसानियत की उम्मीद करना बेकार है। अस्पृश्यों को हिंदू समाज से कभी भी न्याय नहीं मिलेगा। हिंदू धर्म कोढ़ है। उससे अगर अस्पृश्य अपने आप को बचाना चाहते हैं, तो उनके सामने धर्म परिवर्तन का ही रास्ता है। नासिक के नादूर गांव की घटना के बारे में आप सब लोगों ने पढ़ा ही होगा। महार जाति की दो महिलाओं के पास घास के दो छोटे गट्ठर मिले। धर्मांतरण की घोषणा से चिढ़े हुए मराठों ने उन महिलाओं पर मराठों के खेतों से घास काट कर लाने का आरोप जड़ा। उन महिलाओं ने कई तरीकों से विनति करते हुए बताया कि ऐसा नहीं है, लेकिन लोगों ने उनकी एक ना सुनी। उन्हें पीड़ाएं दी गईं। लेकिन इतने से भी उन मराठों का मन नहीं भरा। उन्होंने महारों के खेतों में अपने ढोरों को छोड़ दिया। महारों की खड़ी फसल को तहस–नहस कर दिया। अस्पृश्यों के साथ स्पृश्य समाज ऐसा ही बर्ताव करता आया है। इसीलिए मैं कहता हूं कि हिंदू धर्म नर्क है। मुझे आपके धर्मांतरण के बारे में निर्णय लिए जाने की प्रतीक्षा है। मुझे आपका नेता होने की जरूरत नहीं है, और किसी तरह की कोई उम्मीद नहीं। अपनी उन्नति साधना मेरे अपने हाथों में है। मेरे साथ अगर धर्म परिवर्तन करना हो तो सभी मिल कर आइए। यहां एकाध दो महीनों में मुंबई इलाके के महार लोगों की परिषद होने वाली है। और आखिर हिंदुस्तान के सभी अस्पृश्यों की परिषद होगी। इसमें समय जरूर लगेगा। जितने समय की जरूरत हो सकती है, उतना समय मैं आपको दे रहा हूं। उतने समय में योग्य निर्णय लीजिए। धर्म परिवर्तन करना यानी करना क्या है? यह आज बताने का कोई मतलब नहीं है। जिस मकान में आप रह रहे हैं उसे खाली करना है इसका अगर आप निर्णय ले लें तो आगे किस मकान में जाना है यह तय किया जा सकता है। आप हिंदू धर्म में रहते हैं, क्योंकि आप निर्बुद्ध, मूर्ख हैं। आपको किसी बात की शरम नहीं है। आप नहीं जानते कि इन्सानियत कैसी होती है, इसीलिए आप अब तक इस धर्म में हैं। इतना कह कर मैं अपना भाषण पूरा करता हूं।"

इतना कहकर अचानक डॉ. अम्बेडकर ने अपना भाषण पूरा किया। गंभीर होकर वे अपनी जगह पर जाकर बैठ गए। भाषण पूरा करने के समय उनका चेहरा बहुत ही गंभीर और गुस्से से तमतमाया हुआ लग रहा था। वे इतना भावविह्वल हो गए थे कि उनके मुंह से आगे कोई शब्द ही निकल नहीं पा रहा था। उन्होंने अचानक भाषण खत्म तो किया, लेकिन श्रोताओं के मन पर उसका बेहद गहरा असर हुआ। उनका बात करने का तरीका एकदम सीधा–सादा और मुंहतोड़ था। तीखे शब्दों से वे श्रोताओं के दिल को चीरते चले गए। विशिष्ट, मध्यम स्वर में उन्होंने अपना पूरा भाषण किया। आवाज में कोई उतार–चढ़ाव नहीं, अलंकारिक भाषा का नखरा नहीं। उन्होंने बहुत ही छोटे और अलग–अलग वाक्यों का प्रयोग किया। भाषण के बाद बिना ज्यादा कुछ बोले सभा बर्खास्त हुई। अध्यक्ष ने समारोह का समापन वाला भाषण न करते हुए, एक तरह से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के बारे में अपना आदर व्यक्त किया। इतना ही नहीं, इसके पीछे उनकी कूटनीति भी थी। अध्यक्ष ने भाषण नहीं किया, इसलिए श्रोताओं के मन पर डॉ .बाबासाहेब अम्बेडकर के शब्द ज्यादा देर तक असर करते रहे। आखिर में केवल फूलमालाएं और गुलदस्ते समर्पण करने का कार्यक्रम हुआ। डॉ. अम्बेडकर, डॉ. सोलंकी, श्री देवराव नाईक आदि सभी नेताओं को करीब पचास फूलमालाएं एवं गुलदस्ते भेंट किए गए। समारोह पूरा होने के बाद लोगों ने डॉ. अम्बेडकर के नाम की जयकार की। उसके बाद सभा का कामकाज समाप्त हुआ। डॉ. अम्बेडकर आदि नेता लोगों की भीड़ में रास्ता बनाते हुए अपनी मोटर की तरफ बढ़ चले।

79
धर्म परिवर्तन से सभी अल्पसंख्यकों का कल्याण होगा*

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने येवला के अस्पृश्यवर्गीय परिषद में धर्म परिवर्तन की घोषणा की, उसके बाद हिंदुस्तान में बडी हलचल मची। उनकी घोषणा के कारण स्पृश्य हिंदू समाज हिल गया और अस्पृश्य लोगों की ओर से दिन–ब–दिन अधिक संख्या में उनके निर्णय का स्वागत हो रहा है। बढता समर्थन प्राप्त हो रहा है। उनकी घोषणा को महाराष्ट्र से समर्थन देने के लिए 11 और 12 जनवरी, 1936 को पुणे में अहिल्याश्रम के भव्य मैदान के मंडप में अखिल महाराष्ट्रीय अस्पृश्य युवक परिषद ली गई थी। इस सम्मेलन के अध्यक्ष स्थान पर मद्रास के प्रसिद्ध नेता रा. सा. प्रो. शिवराज, बी. ए., बी. एल. थे। सम्मेलन से पूर्व अध्यक्ष का पुणे के कैंप इलाके की सड़कों पर भव्य जुलूस निकाला गया था। शाम 5.30 बजे सम्मेलन की शुरुआत हुई। इस परिषद के लिए दस हजार महिलाएं और पुरुष हाजिर थे। सभा में उपस्थित जनता में कुछेक स्पृश्य हिंदू, मुसलमान और सिक्ख समाज के लोग भी थे। सर गोविंदराव माडगावकर, रा. सा. त्रिभुवन सेठ किराड, श्री भाऊराव पाटील, श्री शांताराम पोतनीस, मि. अशरफ अली, मीर मुन्शी, भालदार, श्री आर. बी. भागवत, डॉ. वि. म. बनाम अण्णासाहेब नवले, सरदार दरबारसिंह, सुभेदार घाटगे, सुभेदार धुत्रे, महाड़ के श्री सुरेंद्रनाथ टिपणीस, श्री अ. वि. चित्रे, श्री सीताराम लांडगे अमृतसर के सरदार गुरुमुखसिंह, स. तुलसी सिंह, स. दिवाण सिंह, स. नारायण सिंह, स. इन्द्र सिंह, स. तेज सिंह, स. सुमेर सिंह, वे. अग्रवाल, एस. एस. जगताप, मि. जे. टी. आल्हार, मि. ससाने, श्री तात्याबा शिंदे आदि लोग उपस्थित थे और इनके अलावा बाहर से आए कई प्रतिनिधि भी मौजूद थे।

अस्पृश्यों के प्रमुख नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकरसभास्थल पर थोड़ा विलंब से पहुंचे। इससे शुरू–शुरू में लोग निराश हुए थे। इसीलिए मंडप के मुख्य हिस्से में अध्यक्ष की कुर्सी के पास एक कुर्सी पर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का फोटो रखा था जिस पर फूलों की माला चढ़ाई हुई थी।

महाराष्ट्र अस्पृश्य युवक सम्मेलन में डॉ. सोलंकी के भाषण के बाद अस्पृश्य वर्ग के लोकप्रिय नेता बाबासाहेब अम्बेडकर बोलने के लिए उठ कर खड़े हुए। उस समय करीब पांच मिनटों तक लगातार तालियों की गड़गड़ाहट गूंज रही थी। शंख–तुरही जैसे वाद्य भी बज रहे थे। डॉ. अम्बेडकर को देखने के लिए लोगों में इतनी ठेलमपेल मची थी कि स्वयंसेवकों के लिए भीड़ को काबू में रखना मुश्किल हो रहा था।

*'जनता' 8 और 15 फरवरी, 1936

आखिर पांच मिनटों तक डॉक्टर साहब को देखने के बाद सबको शांति मिली और वहां थोड़ी व्यवस्था कायम की जा सकी। उस शांत वातावरण में फिर डॉ. बाबासाहेब ने अपनी गंभीर आवाज में अपना भाषण शुरू किया। उन्होंने कहा,

"सभापति महोदय और मेरे भाइयों और बहनों,

आज यहां अध्यक्ष द्वारा शर्त रखी गई है कि हर वक्ता को अपना भाषण शुरू करने से पहले अपनी जाति बतानी होगी। (अपने हाथ में बंधी घड़ी का बेल्ट दिखाते हुए) मेरे हाथ के इस काले धागे से आपको मेरी जाति का पता चल ही गया होगा। (लोगों की हंसी की आवाज) आज की सभा में मेरे अलग से भाषण की कोई जरूरत है, ऐसा मुझे नहीं लगता। इस परिषद के आयोजन का निर्णय जब लिया गया तब मैंने सुझाव दिया था कि यहां के युवक इस सभा का अध्यक्ष स्थान स्वीकारें। चूंकि मुझे अब युवाओं में नहीं गिना जा सकता इसलिए मैंने अध्यक्ष स्थान स्वीकार नहीं किया था। लेकिन आज एक कारण पर तो मुझे बोलना ही पड़ेगा और वह कारण है, आज की सभा के अध्यक्ष प्रो. शिवराज के प्रति आभार व्यक्त करना। प्रो. शिवराज जी के पीछे कॉलेज के कई काम पूरे करने की जिम्मेदारी होने के बावजूद वे अपनी दिक्कतों को नजरंदाज कर यहां पधारे और अपनी परिषद को उन्होंने समृद्ध किया इसके लिए उनको धन्यवाद देना मेरा कर्तव्य है। जातिभेद की तरह ही इस देश में जबरदस्त प्रांत भेद भी है। अपनी उन्नति के लिए इस देश के सभी प्रांतों के अस्पृश्यों में संगठन होना जरूरी है। लेकिन प्रांतों के बीच जो भाषा भेद हैं, वे अस्पृश्यों की एकता के लिए घातक हैं। उस नजरिए से देखें तो मुंबई इलाके के और महाराष्ट्र के अस्पृश्य समाज ने मद्रदेश के अस्पृश्य नेता को अध्यक्ष पद दिया, यह बड़े आनंद की बात है। संगठन के नजरिए से भी यह बड़ी अच्छी बात है। (तालियां)। मैं उम्मीद करता हूं कि इसके बाद भी हममें से युवा और अधेड़ सभी इस तरह का संगठन बढ़ा कर, इस देश के अस्पृश्य समाज में प्रेम और सहकारिता की भावना को बल प्रदान करेंगे।

फिलहाल अस्पृश्यों का यानि अपना जो आंदोलन चल रहा है उसे संपेरे का तमाशा या 'वन मॅन शो' (one man show) ही कहा जाता है। किसी भी समाज में एक व्यक्ति द्वारा शुरू किया गया आंदोलन सफलता की चोटी तक ही नहीं पहुंच पाता। इसलिए यदि अपना आंदोलन आप सफल बनाना चाहते हैं, तो किसी एक व्यक्ति के हाथ में खेल के सूत्र रहें तो उम्मीद के अनुसार सफलता नहीं मिल सकती। इसमें कई सहयोगियों की जरूरत है। खेल खेलते समय अगर एक संपेरा मर गया, तो उसकी जगह उसका ढोल लेकर उसे पीटते हुए खड़े रहने के लिए दूसरे संपेरे को तैयार रहना जरूरी है। अब तक इस बारे में मैं पूरी तरह आश्वस्त नहीं था, लेकिन

आज की यह सभा देख कर मेरा मन आश्वस्त हो चुका है। (तालियां)। मेरे बाद मेरा कार्य आगे ले जाने के लिए कई कार्यकर्ता पुणे के अस्पृश्य युवकों में से ही आगे आएंगे। इसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद दे रहा हूं। (तालियां)

इस अवसर पर मैं और कुछ कहना नहीं चाहता। फिर भी, जिस विषय के बारे में यहां चर्चा हुई, उसके बारे में अगर मैंने कुछ नहीं कहा तो मैं जानता हूं कि आप सब बहुत निराश होंगे। इसलिए मैंने जिस विषय की घोषणा की थी, उस धर्म परिवर्तन के विषय के बारे में भी मैं थोड़ा कुछ बोलता हूं।

धर्म परिवर्तन की बात कहने के बाद से कई लोग मेरे पास आकर इस विषय पर ऊहापोह करते हैं। उनमें प्रमुख रूप से दो तरह के लोग हैं। एक समूह के लोगों का कहना है कि अस्पृश्य लोगों के हित के बारे में जो भी शर्तें ठीक होंगी, मैं उन्हें स्पृश्यों के सामने रखूं और अगर हिंदू उन शर्तों को स्वीकार नहीं करते हैं, तो फिर धर्म परिवर्तन किया जाए।

दूसरी तरह के लोगों का कहना है कि अस्पृश्यों के धर्मांतरण से कुछ फायदा नहीं होगा। इसलिए वे धर्म परिवर्तन ना करें।

धर्मांतरण से फायदा होगा या नहीं?, अगर फायदा होगा तो उसका क्या अनुपात होगा? आदि बातों के बारे में चर्चा के लिए यह सही जगह नहीं है। और अब हमारे पास इतना समय भी नहीं है। इसलिए ईसामसीह ने यहूदियों को अपने धर्म के बारे में जो बताया था वही मैं यहां कह रहा हूं – "Be unto me, little children and I will save you from sin" 'बी अनटू मी, लिटिल चिल्ड्रेन एंड आइ विल सेव यू फ्रॉम सिन.' (छोटे बच्चे अपने मां–बाप पर जिस तरह विश्वास करते हैं, उस तरह आप मुझ पर विश्वास करें और जो मैं कहता हूं उस धर्म का पालन करें, और मैं आपकी पाप से रक्षा करूंगा)। ईसामसीह की तरह ही आज मैं आपसे इतना भर कहना चाहता हूं कि अगर आप मुझ पर भरोसा रखेंगे तो आपका फायदा ही होगा। (भरपूर तालियां) इतना ही कह कर मैं यहां से चला जाऊं ऐसा भी नहीं है। इस बारे में जो भी शक होंगे उन सबका मैं समाधान दूंगा। लेकिन आज उतना समय न होने के कारण ईसामसीह ने उस समय यहूदी लोगों को जो जवाब दिया था, वही मैं आपको देकर अपना भाषण पूरा कर रहा हूं।

जो लोग मुझसे यह कहते हैं कि आप हिंदू धर्म में रहते हुए स्वाभिमान से जीवन जीने के लिए जरूरी अपनी शर्तें स्पृश्य हिंदुओं के सामने रखें और उन शर्तों का स्पृश्य हिंदुओं द्वारा पालन किया जाता है या नहीं यह देखें। उन लोगों से मैं बस इतना ही कहना चाहता हूं कि मैं जो शर्तें रखूंगा, वे स्पृश्य हिंदू कभी पूरी कर पाएंगे, इस बारे में मुझे यकीन हो चला है। मैं रुपयों की या रोटी की शर्त नहीं रखना

चाहता। मेरी शर्त इन दोनों से भी भारी है। वह शर्त क्या है यह अगर जानना हो तो, उसे पूरा करने का माद्दा अपने पास है, इस बात पर जिन्हें यकीन हो, वे मुझसे आकर मिलें। लेकिन मुझे पूरा यकीन है कि उस शर्त का पालन करना हिंदुओं से कभी होगा नहीं। (तालियां)

दुनिया के हर समाज का भविष्य उस समाज के पढ़े लिखे लोगों पर निर्भर करता है। आज तक आपने कोई आंदोलन नहीं किया, क्योंकि आपमें कोई पढ़े–लिखा व्यक्ति ही नहीं था। शिक्षा से आदमी को दृष्टि मिलती है। और इस तरह से कहा जा सकता है कि हिंदू समाज में केवल ब्राह्मण ही हैं जिनके पास इस तरह का नजरिया है। वे ही शिक्षित हैं। इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता। ब्राह्मणों के अलावा मराठा या अन्य हिंदू समाज के पास अपना दृष्टिकोण नहीं है। इस बारे में ब्राह्मणों पर बड़ी जिम्मेदारी है। लेकिन उनकी मानसिकता के बारे में अभी आपको अच्छी तरह से पता नहीं चला है। कोई भी सवाल लीजिए और पूरे समाज के कल्याण की दृष्टि से उसे हल करने का उपाय सामने रखिए। अगर उस उपाय से उनके वर्चस्व को ठेस नहीं पहुंचने वाली हो तो वे झट से उसे स्वीकार करेंगे। लेकिन, अगर आपके सुझाए उपाय के कारण उनके ब्राह्मणत्व को थोड़ा–सा भी नुकसान होने वाला हो तो भले उस उपाय अमल करने से पूरे राष्ट्र का भला होने वाला हो, वे नहीं मानेंगे। ऐसा समाज अपनी शर्तें पूरी करने की जिम्मेदारी लेगा, इस आशा का कोई मतलब नहीं।

बिना कुछ दिए कभी कुछ मिलता नहीं। इस हिसाब से स्पृश्य या ब्राह्मण समाज से कुछ पाने से पूर्व उन्हें कुछ देना भी पड़ेगा। लेकिन क्या आपने सोचा है कि हमें उन्हें क्या देना पड़ेगा? यह बात आपकी समझ में आए इसलिए निवापसुत्त में भगवान बुद्ध ने जो कहानी बताई है वह मैं आपको बताता हूं। श्रावस्ती में अनाथपिंडक के आश्रम में रहते हुए भिक्षुओं को उद्देश्य कर बुद्ध ने कहा कि, भिक्खुओं! राजा अपने आरक्षित जंगल में हिरण, जंगली भैंसा, खरगोश आदि पालता है, उनका हर तरह से खयाल रखता है, पालन–पोषण करता है, ममता देता है, लेकिन यह सब वह किसलिए करता है? उन प्राणियों को मार डालने के लिए। शिकार का अपना शौक पूरा करने के लिए, राजा उन दीन–दुखी जीवों का पालन–पोषण करता है। उसी तरह आज अगर स्पृश्य हिंदू या ब्राह्मण आपको ज्यादा रियायतें देकर अपने धर्म में ही रखना चाहते हैं, यह आपके कल्याण के लिए नहीं बल्कि आप हमेशा के लिए उनके गुलाम बन कर रहें, इसके लिए है। (शेम शेम की ध्वनि)

महात्मा गांधी ने 9 लाख रुपयों का फंड इकट्ठा किया। वह आपके हित के लिए नहीं वरन् इसलिए है कि आप कॉंग्रेस छोड़ कर न जाएं। कॉंग्रेस का वजन हमेशा

आपके ऊपर रहे इसलिए। उनके फेंके हुए दया के टुकड़े चबाकर हम हमेशा के लिए उनके दरवाजे पर उसके गुलाम बन कर पड़े रहें इसके लिए है। उन सभी लोगों से मेरा यही कहना है कि अब स्पृश्य हिंदू मेरे सामने अगर भगवान को भी लाकर खड़ा कर दें तो तब भी मैं हिंदू धर्म छोड़ कर जाने वाला हूं। (तालियों की गड़गड़ाहट, जयकार की ध्वनियां, रणभेरियों और अन्य वाद्यों की आवाज) अब इसके बाद स्पृश्य हिंदू अस्पृश्यों के लिए यदि कुछ करते हैं तब भी मैं जाऊंगा और नहीं करते हैं तब भी मैं जाऊंगा। (तालियां)

धर्म परिवर्तन किसी इक्के–दुक्के व्यक्ति के द्वारा नहीं, बल्कि पूरे अस्पृश्य समाज के द्वारा इकट्ठा किया जाना है। धर्मांतरण करने से हमारे लिए स्वर्ग के द्वार खुलेंगे, या हम पर अमृत की धारा बरसेगी, ऐसा मेरा बिल्कुल भी कहना नहीं है। हमारे सिक्ख, ईसाई या मुसलमान होने पर भी अपना भविष्य बनाने के लिए हमें लड़ना तो पड़ेगा ही। हम सब यह बात जानते हैं। जाहिर है कि मुसलमान होने से हम सब नवाब नहीं बनेंगे, सिक्ख बनने पर सरदार नहीं होंगे और ईसाई बनने पर पोप नहीं होंगे। (हंसी की आवाज) कहीं भी क्यों न जाएं हमें लड़ाई तो करनी ही पड़ेगी। इसलिए, लड़ाई लड़ने के लिए हमें अपनी संघशक्ति को बढ़ाना होगा। निजी फायदे के लिए हमें चोरी–चोरी धर्म परिवर्तन नहीं करना है। जहां जाएंगे वहां सिर पर कफन बांध कर लड़कर अपने लिए जगह बनानी होगी। इसी निश्चय के साथ हमें धर्मांतरण करना है। कल हम लोग जब मुसलमान या ईसाई बनेंगे तब वे लोग हमें महार ईसाई कह कर अलग चर्च में जाने के लिए कहेंगे, तो हम चर्च में आग लगा देंगे। मैं कोई सीधासादा इंसान नहीं हूं। जहां भी जाऊंगा कांटे की तरह चुभता रहूंगा! (हंसी और भरपूर तालियां) इसीलिए मैं आपसे बार–बार कहता हूं कि धर्मांतरण करने का निश्चय पक्का हो तो अकेले जाकर कहीं फंस ना जाना। आज ही कोई ईसाई या मुसलमान न बनिए। अपनी इस घोषणा से कई लोगों की आश बंधी है, यह मैं अच्छी तरह जानता हूं। मैं अपने महार भाइयों से बस इतना ही कहना चाहता हूं कि भाइयों, अस्पृश्यों के बीच का जातिभेद कम से कम इसके बाद तो मत ही कीजिए (तालियां)। महारों से ब्राह्मण समाज का आधिपत्य सहा नहीं जाता, उसी तरह अस्पृश्यों के बीच मांग, भंगी आदि जो अल्पसंख्यक हैं, उन्हें भी महारों की वर्चस्विता नहीं चाहिए। उनकी यह मांग बिल्कुल जायज है। खुद मुझे महार जाति के बारे में कोई खास लगाव या अभिमान नहीं लगता। मैं केवल इस जाति में पैदा हुआ और मेरी शिक्षा और ज्ञान का अपने समाज के लोगों को फायदा देने के उद्देश्य से मैंने अपने कार्य की प्रथम शुरुआत इस जाति में की।

महाराष्ट्र में अस्पृश्यों में महारों की संख्या अधिक है। इसलिए वे यह बात जानें कि अल्पसंख्यकों की हमेशा जिस तरह बुरी हालत होती है, उसी तरह अस्पृश्यों के

बीच मांग और भंगी बांधवों की हो रही है। इस बात पर गौर करते हुए अस्पृश्यों के बीच का ऊंच–नीच का भाव एकदम नष्ट करें। मांग और भंगी समाज को मैं आश्वासन देता हूं कि जब महार आपके साथ बराबरी का बर्ताव नहीं करेंगे तब मैं आपके साथ हूं। आपकी ओर से मैं आपकी लड़ाई महारों के साथ लडूंगा। (तालियां)

धर्म परिवर्तन के पीछे जो कई कारण हैं उनमें प्रमुख है हिंदू धर्म में व्याप्त जातिभेद। स्पृश्य हिंदू हमेशा हमें नीचे दिखाते हुए कहते हैं कि पहले अस्पृश्यों के बीच जो भेदभाव हैं, उन्हें नष्ट कीजिए और उसके बाद हमें जातिभेद नष्ट करने की सलाह दीजिए। मैं उनसे सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूं कि जब तक हम आपके धर्म में हैं, तब तक आपसी जातिभेद हम नष्ट नहीं कर सकते। हिंदू धर्म और जाति भेद की फौलादी चौखट में रहते हुए यह सुधार हम कर नहीं पाएंगे, इसीलिए मुझे लगता है कि धर्म परिवर्तन के बाद जातिव्यवस्था में व्याप्त भेदभाव नष्ट करना हमारे लिए आसान होगा, ऐसा मुझे लगता है। अब अगर मैं किसी महार से कहूंगा कि वह मांग की बेटी के साथ अपने बेटे का रिश्ता करे, तो वह तुरंत मुझसे कहेगा कि स्पृश्यों में कहां ऐसा होता है! लेकिन जब हम सभी एक साथ इन बंधनों से बाहर निकलेंगे तो वह ऐसा नहीं कह पाएगा।

धर्म परिवर्तन से महारों से अधिक अल्पसंख्यक मांग, भंगी समाज का ही अधिक कल्याण होगा। वे महारों के स्तर पर आ जाएंगे। इसीलिए मांग या भंगी जाति के ये लोग इस प्रस्ताव का समर्थन करें। जातिभेद नष्ट करना स्वराज पाने की कोशिश से भी पवित्र काम है। पूरे हिंदुस्तान का जातिभेद जब खत्म होना हो तब हो, लेकिन अस्पृश्य समाज का जातिभेद यदि मैं नष्ट कर सकूं तो मैं अपने आपको भाग्यवान पुरुष समझूंगा। (भरपूर तालियां)

आपने आज तक मेरे बारे में जो विश्वास व्यक्त किया उसके बारे में इंसान होने कारण मुझे बड़ी खुशी है। लेकिन साथ ही मेरे सिर पर जिम्मेदारी का बोझ बढ़ रहा है, इसका भी मुझे अहसास है। आप सात करोड़ लोगों की जिम्मेदारी मुझ पर है। मुझसे अगर छोटी–सी भी गलती हो जाए तो इतने बड़े समाज के नुकसान के लिए मैं जिम्मेदार रहूंगा, इसका मुझे रात–दिन खयाल रहता है। मेरी धर्म परिवर्तन की घोषणा को कुछ लोग पागलपन या भूत भी कहते हैं। लेकिन इसमें मेरा अपना कोई स्वार्थ नहीं है, उल्टे मेरा नुकसान ही है। आज मैं इस हालत में हूं कि अगर चाहूं तो कोई भी लौकिक या साधन संबंधी बात यदि मैं हासिल करना चाहूं तो बड़ी आसानी से पा सकता हूं। यह मेरा अभिमान नहीं बोल रहा, यह मेरे आत्मविश्वास की गूंज है। (तालियां।) एक व्यक्ति के तौर पर देखा जाए तो इस धर्म परिवर्तन के कारण मेरा नुकसान ही होने वाला है। महारों में पढ़े–लिखे बैरिस्टर के तौर पर

मेरा जो मान–सम्मान है, वह मेरे ईसाई या मुसलमान हो जाने पर नहीं बचेगा। क्योंकि उस समाज में इस तरह पढ़े–लिखे कई लोग हैं। उन्हीं में से मैं भी एक बन जाऊंगा। इसलिए इस तरह चलने में मेरा कोई निजी फायदा नहीं है। उल्टे इसमें मेरा नुकसान ही है। लेकिन जिन्होंने पूरे भरोसे के साथ मुझे यह जिम्मेदारी सौंपी है। उन्हें नरक में ही सड़ता रख कर मुझे बड़प्पन हासिल नहीं करना है। उनकी मुक्ति के लिए मैं अपना सब कुछ त्यागने के लिए तैयार हूं। (तालियां) अपने आंदोलन का कोई आधार है, इसमें कोई दो राय नहीं। वरना एक–दूसरे की विरोधी दो पार्टियों से, "एक करोड़ रुपया देंगे" का प्रस्ताव नहीं आता। अपने आंदोलन की बुनियाद में निश्चित तौर पर अधिष्ठान है।

आज समय बड़ा कठिन है। अंग्रेजी में जिसे 'नाऊ ऑर नेवर' (Now or never) कहते हैं वैसी स्थिति आन पड़ी है। इसीलिए कहता हूं, सावधान रहें, जागरुक रहें। काम तभी संपन्न होते हैं, जब हम समय और स्थिति का उचित सामंजस्य कर पाएं। इसीलिए, अपना निर्णय इस क्षण ले लीजिए।

मैं कोई इतना पागल नहीं कि यह समझूं कि आज के आज, चुटकी बजाते ही धर्म परिवर्तन होकर पूरा का पूरा अस्पृश्य समाज किसी दूसरे धर्म में समा जाएगा। जो लोग मुझे रुकने के लिए, धीरज बनाए रखने के लिए कहते हैं, मैं उन लोगों से कहना चाहता हूं कि दस–बीस सालों के बाद जो भी होना है, उसकी हमें आज से ही शुरुआत करनी होगी। समयानुसार अपने आप सब कुछ होगा, यह मानकर बैठे रहने की कोई आवश्यकता नहीं है। अपने आप कुछ भी नहीं होता। दस बीस सालों के बाद अगर कोई पेड़ आपको देखना हो तो उसके बीज आपको आज ही बोने होंगे। बीज नहीं बोया तो वृक्ष नहीं। और पेड़ नहीं तो फल नहीं। इसीलिए कहता हूं जो हमें 'ठैरो' कहेंगे, मान लीजिए कि वे हमारे दोस्त नहीं दुश्मन हैं। अपने संकल्प के अनुसार संगठन के कामों में जुट जाइए।" (तालियों की गड़गड़ाहट)

80
सभी को दृढ़निश्चय और संगठित होकर आगे बढ़ना है*

मंगलवार तारीख 11 फरवरी, 1936 के दिन अहमदनगर में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ। डॉ. बाबासाहेब के स्वागत में सभा बुलाई गई थी। इस सभा में 5000 से अधिक लोग उपस्थित थे। शहर के कुछ प्रमुख लोग भी उपस्थित थे। शुरुआत में कुछ स्थानीय अस्पृश्य नेताओं के भाषण हुए। उन्होंने डॉ. बाबासाहेब के नेतृत्व में अपना पूरा विश्वास व्यक्त कर उनकी धर्म परिवर्तन की घोषणा पर अपनी सहमति प्रकट की।

बाबासाहेब ने अपने भाषण में कहा,

"आज मैं धर्म परिवर्तन के बारे में बात करने के लिए यहां नहीं आया था। क्योंकि, इस सभा में एक 'अस्पृश्य युवक संगठन' का उद्‌घाटन करना ही मेरे यहां आने का उद्देश्य था। लेकिन आज आप लोग यहां इतनी बड़ी संख्या में बड़ी उत्कंठा से इकट्ठा हुए हैं, मैं आप सबको निराश नहीं कर सकता। मैं पहले ही आपको बताता हूं कि धर्म बदलना हंसी–ठिठोली नहीं है। वह कोई तमाशा नहीं है। ढोलक बजाकर केवल गा–बजाकर करने जैसा वह कोई कार्यक्रम नहीं है। धर्मांतरण बहुत ही गंभीर विषय है। आप शायद नहीं जानते, लेकिन चार महीनों पहले जब मैंने सार्वजनिक रूप से धर्म परिवर्तन के बारे में कहा, मुझे इस बारे में लगातार सभी दृष्टिकोणों से सोचना पड़ रहा है। और यह बताने में मुझे गर्व महसूस होता है कि मैंने जो निश्चय व्यक्त किया है, उसके बारे में पछतावा करने की मुझे बिल्कुल जरूरत महसूस नहीं होती है। आपको भी इस सवाल पर पूरी गंभीरता से सोचना चाहिए। हर रोज पांच मिनट तक आप इस बारे में सोचें। अब स्वाभाविक रूप से एक प्रश्न उभर कर आता है कि अगर दृढ़ निश्चय हो ही गया है, तो फिर उस पर अमल करने में देर क्यों? इस बारे में आपको एक छोटा–सा दृष्टांत देना चाहूंगा। उस पर से आप जानेंगे कि इस प्रश्न को कितनी धीमी गति से हल किया जाना जरूरी है? सेनापति को जब डेरा उठा कर आगे बढ़ने का हुकम देना होता है उस समय हट्टे–कट्टे और जवान सैनिकों के बारे में ही सोच कर काम नहीं चलता है। उस वक्त जख्मी, अपाहिज या बीमार सैनिकों की भी उसे देखभाल करनी होती है। उन सबको साथ में ले चलना उसके लिए जरूरी होता है। निर्णय पक्का कर आगे बढ़ने का समय आएगा तब हममें से अज्ञानी, अशिक्षित या डरपोक लोग पीछे रहेंगे तो काम नहीं चलेगा। इसीलिए, सबको एक ही समय पर दृढ़ निश्चय के साथ आगे बढ़ना है।

---

*'जनता' 22 फरवरी, 1936

अब आज के प्रमुख कार्य के बारे में बोलना हो तो, यहां युवाओं ने जो सेवा धर्म का उद्देश्य सामने रख कर इस संस्था की स्थापना की है तो मैं इसके लिए आपका अभिनंदन करना चाहूंगा। आपने जो कार्य शुरू किया है वह अनुकरणीय है। आपमें कई ऐसे लोग हैं, जो आपकी मदद के बगैर आगे नहीं बढ़ सकते। इस काम में आप एक बात कभी ना भूलें कि ष्चरित्र और शिक्षा के बिना इंसान इस दुनिया में कुछ भी हासिल नहीं कर सकता।ष दूसरी बात ध्यान में रखें कि आज आप स्वतंत्रता और स्वावलंबित्च पाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। इस युद्ध में अगर आप सफल होना चाहते हैं तो आप किसी और से मदद की अपेक्षा छोड़ कर पूरी तरह आपको स्वावलंबी होना चाहिए। अगर आप ऐसा नहीं करते तो ध्यान रखें कि आप फिर अज्ञान की खाई में जा गिरेंगे। जिन स्पृश्य हिंदुओं ने आज तक आप लोगों को दासता में जकड़ कर रखा वे आपको लालच देकर आपकी मदद के लिए तुरंत आकर खड़े हो सकते हैं! लेकिन अगर आप इस मोहजाल में फंसेंगे, तो उनके पैर के घुंगरु बन कर रह जाएंगे। आप फिर से गुलाम बन जाएंगे। महाभारत की कथाएं आपने सुनी ही होंगी। उसमें से एक कथा इस प्रसंग के लिए बहुत ही योग्य है। मैंने वह कथा सैंकड़ों बार पढ़ी है। आपने भी हो सकता है पढ़ी हो। हो सकता है अबके बाद कभी वह आपको पढ़ने मिलेगी। आप जानते हैं कि कौरव—पांडवों के युद्ध में भीष्म और द्रोण कौरवों की तरफ से लड़े। न्याय और सत्य पांडवों की तरफ है इसका उन्हें पूरा ज्ञान था फिर भी वे कौरवों का पक्ष छोड़ नहीं पाए क्योंकि उन्होंने उनका नमक खाया था। इसीलिए मैं कहता हूं कि किसी के सामने लज्जित होना पड़े ऐसा कुछ मत करो।

आखिर में एक बात और कहना चाहूंगा। अलग—अलग कई संस्थाएं शुरू न करें। अगर आप मेरा अनुभव पूछे तो वह यही बताता है कि अलग—अलग संस्थाएं एक दूसरे के बीच फूट डालने के लिए ही कारण बनती हैं। और आखिर सब की सब नष्ट हो जाती हैं। पूरे जिले की केवल एक संस्था रहे और उसी संस्था के जरिए अपने लिए सही मार्ग का चुनाव कर अपना सुधार सिद्ध करें।

81
आप गुलामों की तरह जीना चाहते हैं या आजाद इंसानों की तरह जीना चाहते हैं?*

कुलाबा जिला उत्तर विभाग और ठाणे जिला दक्षिण विभाग के अस्पृश्यों की संयुक्त परिषद की तैयारी के लिए श्री गणपत महादेव जाधव उर्फ मडके बुवा पिछले 15–20 दिनों से जिस इलाके में परिषद होनी थी, वहां प्रचार के लिए गांव–गांव में घूम रहे थे। परिषद के स्वागताध्यक्ष श्री रामकृष्ण गंगाराम भातनकर (कुलाबा जिला लोकल बोर्ड के सदस्य) ने तैयारी बड़ी बारीकी के साथ और बड़े उत्साह से की। इसका फल भी उन्हें मिला। पनवेल में परिषद का अधिवेशन 29 फरवरी और 01 मार्च, 1936 इन दो दिनों में बहुत अच्छी तरह संपन्न हुआ।

संपूर्ण हिंदुस्तान के अस्पृश्य वर्ग के एकमात्र नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने परिषद का अध्यक्ष पद स्वीकारा था, इसलिए अधिवेशन बहुत ही महत्त्वपूर्ण हो गया था। डॉ. बाबासाहेब शनिवार, दिनांक 28 फरवरी 1936 के दिन मुंबई से अपने सहयोगियों के साथ स्पेशल मोटर से करीब 4.30 बजे निकले। उनके साथ मे. सुभेदार विश्राम गंगाराम सवादकर, वयोवृद्ध श्री संभाजी तुकाराम गायकवाड़, सी. ना. शिवतरकर, वनमाली मास्टर, प्रि. मो. वा. दोंदे, बी. ए. कमलाकांत चित्रे, आर. डी. कवली, बी. ए., एल. एल. बी. वकील, रेवजी बुवा डोलस, दिवाकर पगारे, धुंडिराम गायकवाड़, मडकेबुवा जाधव आदि लोग थे।

पनवेल के करीब के तलोजे के लोगों ने खास मंडप खड़ा कर डॉ. बाबासाहेब का स्वागत करने का इंतजाम किया हुआ था। स्वागताध्यक्ष श्री रामकृष्णराव भातनकर ने उनका स्वागत किया। स्थानीय लोगों ने बाबासाहेब को फूलमालाएं अर्पण कीं, गुलदस्ते दिए। फिर मोटर आगे चली। पनवेल गांव में पहुंचते ही मुसलमान व्यायामशाला और अंजुमन इस्लाम संस्था की ओर से फूलमाला अर्पण की गई। उसके बाद सिद्दिकबुड्ढा सेठ नाम के मुसलमान आदमी ने बाबासाहेब को फूलमाला अर्पण की। उनके बाद चांभार समाज के श्री महादेव लक्ष्मण और महादेव मारुती आदि लोगों ने उनका सम्मान किया। इस तरह प्रेम से दिए पुष्पहारों का स्वीकार करते–करते शाम सात बजे के आसपास डॉ. बाबासाहेब पनवेल के करीब के सुभेदार वाडा में दाखिल हुए। यहां उनकी सुविधा के लिए एक खास मंडप खड़ा किया गया था। इस मंडप में डॉ. बाबासाहेब का आगमन होते ही महिलाओं ने वात्सल्यभाव से उनका स्वागत

*'जनता' 7 मार्च, 1936

यह शुक्रवार, का दिन होना चाहिए : संपादक

किया। सौभाग्यवती लक्ष्मीबाई अर्जुन शिरावले ने महिलाओं की ओर से उनके माथे पर कुंकुम का तिलक लगाया। उन पर शुभसूचक अक्षताएं चिपकाईं। यह मंगल विधि देख कर दर्शकों के मन में आनंद की लहरें उठने लगीं। युवकों का उत्साह द्विगुणित हुआ। उनके मुंह से बाबासाहेब के लिए विजय की कामना करने वाली ध्वनि निकलने लगी। फिर मेहमानों ने चाय पी और उसके बाद अलग–अलग जगहों से आए प्रतिनिधि, कार्यकर्ता आदि लोगों से मिलने का सिलसिला शुरू हो गया। हर जगह से आए लोग अपनी दिक्कतों का वर्णन सुना रहे थे। उनमें मुख्यतः भोर संस्थान के सुधागड तहसील के लोग थे।

एक गांव की महारों की बस्ती पर स्पृश्य हिंदुओं द्वारा की गई अत्याचारी कार्रवाइयों के कारण उनका बहुत बुरा हाल था। इसलिए वहां के बारे में जानकारी इकट्ठा करने और वहां के लोगों का मार्गदर्शन करने के लिए डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर ने श्री बी. टी .तांबे को वहां भेजा था। श्री तांबे बहुत ही उत्साही, सैनिक अनुशासन के और कड़े तेवर वाले कार्यकर्ता हैं। उनके आने से लोगों के मन का डर नष्ट हुआ और वे संकट का सामना करने के लिए तैयार हो गए। इस गांव के कुछ लोगों को साथ में लेकर डॉ. बाबासाहेब की सलाह लेने के लिए वे पनवेल में आए हुए थे।

शनिवार के दिन विषय तय करने वालों की बैठक हुई और दूसरे दिन के अधिवेशन के लिए नौ प्रस्ताव चुने गए। शुक्रवार से ही गांव–गांव से आने वाले लोगों का तांता लग गया। शनिवार की रात तक आने वालों की संख्या करीब 2000 तक पहुंच गई। पनवेल तथा आसपास के इलाके में अस्पृश्यों की संख्या बहुत ही कम है। गांव में एकाध–दो घर अस्पृश्यों के थे। इस दृष्टि से देखा जाए तो 2000 लोगों का इकट्ठा होना, काफी बड़ी संख्या थी। जनसमुदाय के मनोरंजन के लिए पोवाडे (विशेष संगीत प्रकार) और जलसों का आयोजन किया गया था। श्री घेगडे का नासिक के सत्याग्रह पर आधारित पोवाडे को श्री द्वारकाकांत शेजवल ने पेश किया। जलसा पेश करने वाले दो फड यानी मंडलियां विशेष तौर पर मुंबई से बुलाई गई थीं। लोकशिक्षा की नीति को अपनाकर दलितोद्धारक सुस्वर जलसा और नासिक जिला युवक संघ जलसा इन जलसा करने वाली मंडलियों ने अपनी समाज सेवा को परिश्रमपूर्वक जारी रखा था।

दूसरे दिन सुबह 9.30 बजे वहां इकट्ठा लोगों ने जुलूस निकाला। शुरुआत में श्री वसंतराव भातनकर ने लोगों को अनुशासन का महत्त्व बताया और जुलूस में शांति बनाए रखने की विनती की। बाद में एक कतार में तीन–तीन लोगों के साथ जुलूस निकलना तय हुआ। मुंबई के श्री अर्जुनराव सालवी ने सभी लोगों को अनुशासनपूर्वक खड़ा किया। फिर जुलूस निकला। जुलूस की शुरूआत में पनवेल हनुमान व्यायाम

शाला के स्काऊट का बैंड और बीच बीच में स्थानीय बाजे बज रहे थे।

कायस्थ गली, ब्राह्मण गली, बाजार आदि गांव के प्रमुख रास्तों पर से गुजर कर करीब 11.30 बजे के आसपास जुलूस सभास्थल पर पहुंचा। रास्ते में लोग जुलूस में शामिल होते गए और जुलूस और बड़ा होता गया। रास्ते में 'अम्बेडकर जिंदाबाद', 'हिंदू समाज को धिक्कार है', 'भट्टशाही नष्ट हो', 'अम्बेडकर कौन हैं? दलितों का राजा है', 'डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की जय' आदि नारे लगाए जा रहे थे। जुलूस में आगे श्री संभाजी गायकवाड़, श्री कमलाकांत चित्रे, दादासाहेब पगारे, वनमाली मास्टर, भिखाजी धोंडेराव, वसंत भातनकर, गोविंद बिवकर, भीमराव करडक, रूपाजी पगारे आदि लोग थे। श्री सालवी और उनके अन्य युवा दोस्त घूम–घूम कर जुलूस को नियंत्रित कर रहे थे। पनवेल जैसे छोटे से शहर में यह जुलूस एक अद्भुत बात थी। कुछ समय पूर्व तक नालियों के किनारे–किनारे दुबक–दुबक कर कदम बढ़ाता महार समाज आज छाती ठोंक कर अपने परमप्रिय नेता का और अपनी जाति का जयघोष करता हुआ राजरस्ते पर जुलूस निकाल कर जा रहा है यह देख कर लोगों के हृदय में डर–सा पैदा हुआ। महारों के साये से भी दूर भागने वाले लोग गाड़ी, घोड़े और लोगों का हुजूम देख कर रुक जाते थे। नाली के पास खड़े होकर महारों के जुलूस के लिए रास्ता बना रहे थे। यह दृश्य देख कर लगता था कि मानों कालगति ने अपना रुख बदल लिया हो। हजारों सालों से पीड़ित हतभागी दलित वर्ग के भाग्य का आज अरुणोदय हुआ हो जैसे।

गांव के नजदीक के आम्रवन में गाडेश्वरी नदी के तीर पर सभामंडप खड़ा किया गया था। जुलूस के बाद सभी लोगों को अनुशासन से बैठाया गया। सभा की शुरुआत से पहले सभामंडप खचाखच भर गया था। सभा में गांव ही के 40–50 स्पृश्य हिंदू लोग भी उपस्थित थे। कुछ ही देर में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर अपनी मित्रमंडली के साथ वहां हाजिर हुए। श्री अनंतराव चित्रे महाड़ से और श्री गोविंदराव वरघरकर खास इस परिषद के लिए उपस्थित हुए थे। बाबासाहेब आए तब सबने उन्हें खड़े होकर अभिवादन किया। उनके नाम का जयघोष करते हुए उनका स्वागत हुआ। उसके बाद लड़कियों ने सुमधुर स्वर में स्वागत गीत गाया और स्वागताध्यक्ष ने अपने भाषण की शुरूआत की।

उनके भाषण के बाद उस कार्यक्रम के अध्यक्ष के रूप में चुने गए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को फूलमाला अर्पण की गई। डॉ. बाबासाहेब बोलने के लिए उठ कर खड़े हो गए तब तालियों की गड़गड़ाहट से सभास्थल गूंज उठा। परिषद का अध्यक्ष स्थान दिए जाने के लिए उन्होंने आभार व्यक्त किया और अपना भाषण शुरू किया। उन्होंने कहा,

"यह हिस्सा मुंबई से काफी नजदीक होने के बावजूद आज से पहले मैं कभी यहां आ नहीं पाया, इसका मुझे खेद है। कई कारणों से मैं आपसे मुलाकात नहीं कर पाया। लोगों में जागृति के लिए हजारों जगहों से मेरे लिए बुलावा आता है, लेकिन हर जगह मेरा पहुंच पाना संभव नहीं होता। मैं शतमुखी रावण नहीं या बदन में राख मल कर जीने वाला संन्यासी नहीं। आप लोगों की तरह ही मुझे भी अपना पेट पालने के लिए काम करना पडता है। मैं भी आप लोगों की तरह हालात से लड़ने वाला आदमी हूं।

आज का कार्यक्रम महत्त्वपूर्ण होने के बावजूद लंबा भाषण कर मैं आपको टंगा, बैठाकर नहीं रखूंगा। केवल कुछेक मुद्दों के बारे में मैं बोलने वाला हूं। आपका क्या कर्तव्य है और आपको राह बताने वाले की हैसियत से मेरा क्या कर्तव्य है यही मैं आज आप लोगों से कहने वाला हूं।

सज्जनों! पिछले हजारों वर्षों से आप इस देश में रह रहे हो। उसी तरह आपके पड़ोसी भी यहां रह रहे हैं। आप अपनी स्थिति पर गौर करते हुए अपने पास–पड़ोस की स्थिति पर एक नजर डालिए। दोनों स्थितियों की आपस में तुलना कीजिए। पहली बात अगर आपके ध्यान में आएगी, तो वह यही कि आप बाकी समाजों से गरीब हैं। दरिद्री हैं। अन्य समाजों के लिए रोटी कमाने के सभी दरवाजे खुले होने के कारण वे कई तरह के काम कर अपना जुगाड़ कर सकते हैं। उनकी स्थिति आप लोगों से उत्तम है। सभा में जाना है इसलिए आप लोगों ने अपने रोज के फटे–पुराने कपड़े छोड़ कर थोड़े अच्छे कपड़े पहने हैं शायद। सभा में आप अच्छी तरह से आए इस बात का मुझे संतोष है लेकिन आपकी असली स्थिति क्या है, यह आप ही में से एक होने के कारण मुझे अच्छी जानकारी है। हफ्ते में तीन दिन पेट भर खाना आपको बड़ी मुश्किल से मिलता है। बदन पर एक फटा हुआ कुर्ता और एक लंगोट। वह लंगोट भी जल्दी बदला नहीं जा सकता। इतनी बुरी हालत है आपकी। उसके खिलाफ बताइए सफेदपोश समाज की स्थिति क्या है? आपकी तुलना में सैंकड़ों गुना सुखी हैं। उनके घर पर खपरैलें होती हैं, लेकिन अपने घर पर डालने के लिए आपको बांस या नारियल पत्ते भी जरुरत के मुताबिक मिलते नहीं हैं। उनके घर में पीतल के बर्तन होते हैं और आपके घर में मिट्टी के! यह आपकी दीन–हीन स्थिति है! इसका पहला और प्रमुख कारण है कि उनके लिए उपजीविका कमाने के जो रास्ते खुले हैं, वे आपके लिए नहीं हैं। आज आपको डिप्टी कलक्टर, तहसीलदार या पुलिस अफसर की बड़ी नौकरियां नहीं मिलतीं, ऐसा क्यों? क्योंकि आपके बीच पढ़े–लिखे नौजवान नहीं हैं, इसलिए। यह बात अगर मान भी लें, तो इनसे छोटे पद वाली भी कई नौकरियां होती हैं। वे भी आपको नहीं मिलती हैं। वहां भी आप के लिए दरवाजे बंद हैं। पुलिस की नौकरी ही लीजिए, क्यों नहीं मिलती आपको पुलिस की नौकरी? इस पद की जिम्मेदारी निभाने

के लिए अधिक शिक्षा की जरूरत नहीं होती। दूसरी–तीसरी कक्षा तक पढ़े स्पृश्य समाज के किसी भी आदमी को यह नौकरी मिल सकती है। लेकिन आपको वह जगह मिलती नहीं। ऐसा नहीं कि आपमें ईमानदारी या सच्चाई की कमी है, क्योंकि आज की तारीख में महारों से लाखों रुपयों का वसूल वसूला जाता है। इस वसूल के लाने–ले जाने का काम महार ही करते आए हैं। वसूल के इस लाने–ले जाने में महारों से कोई घपला हुआ है, महारों ने दगलबाजी की हो ऐसा आज तक किसी के सुनने में नहीं आया है। तहसीलदार जैसे उच्च पद की नौकरियां करने वाले स्पृश्य समाज के लोगों से कई दगाबाजियां हुई हैं। उसके उदाहरण दिए जा सकते हैं। यह नौकरियों के बारे में हुआ। अन्य छोटे–मोटे व्यवसाय लीजिए। अगर आप दूध, दही, मक्खन बेचने का धंदा करने की सोचेंगे तो कोई आपसे ये चीजें खरीदेगा नहीं, क्योंकि आपके छुए दूध, दही, मक्खन से लोगों का धर्म डूब जाएगा। सब्जी बेचने के बारे में सोचिए, वही बात दोहराई जाएगी। आप कहीं सिर उठा ही नहीं सकेंगे। आपकी हालत आज ऐसी है। मैं आप लोगों से पूछता हूं कि क्या आपने कभी अपनी इस हालत के बारे में सोचा भी है? बाकी लोग अपने बच्चों की अच्छी तरह देखभाल करते हैं, उनकी पढ़ाई का प्रबंध करते हैं। इससे वे अपनी हालत सुधार सकते हैं। आप क्यों ऐसा कर नहीं सकते? हर तरफ से आपकी राहें रोकी गई हैं। आज आपको इन सवालों पर सोचना होगा। आपके रास्ते में जो रुकावटें हैं उनसे छुटकारा कैसे पाया जाए, यह आपको सोचना चाहिए। मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूं, क्या आप अपनी स्थिति में सुधार लाना चाहते हैं या नहीं? आज तक आपको जिस कीचड़ में लोट लगाना पड़ा है, क्या आप हमेशा उसी कीचड़ में लोट लगाते रहेंगे? जहां पैर के जूते जितनी भी आपकी हैसियत नहीं, क्या यहीं आप अपने आपको गलाते हुए रहना चाहते हैं? सीधे ही पूछना हो तो, क्या आप गुलामों की तरह जीना चाहते हैं, या आजाद इंसानों की तरह जीना चाहते हैं? इस बारे में आज आपको सोचना होगा। आपकी राह रोक कर जो समस्याएं खड़ी हैं, उन्हें दूर कैसे किया जा सकता है इस बारे में आपको सोचना है।

आज आपके सामने मुख्य रूप से तीन बाधाएं हैं – पहली है आपकी दरिद्रता, दूसरी आपका मनोदौर्बल्य, आपका कमजोर मन। आप सब दरिद्रता से परेशान हैं। और इसीलिए परावलंबी बने हैं। दूसरों पर आश्रित बने हैं। आप आजादी से, अपने बलबूते कुछ कर नहीं पाते। इंसानियत को लेकर आपने सवाल किए तब भी आपका स्पृश्य समाज से घनघोर विरोध होता है। आपका जीवन उसी पर निर्भर होने के कारण वे हर तरह से आपकी राह में अडंगे डालते हैं। वे रोटी का टुकड़ा देंगे, तब आपकी भूख मिटेगी। इसीलिए, इस परावलंबी जीवन को नष्ट करने के पीछे आपको लग जाना चाहिए।

दूसरी बात है आपकी असहाय स्थिति। आपको किसी का सहारा नहीं। आपका हितचिंतक मित्र बन कर आपके पीछे खड़े रहने के लिए कोई तैयार नहीं। आप और गांव वालों के बीच अगर झगड़ा पैदा हुआ तो आपकी तरफ से लड़ने के लिए कोई नहीं आएगा। इस देश में हिंदुओ के अलावा सिक्ख, ईसाई और मुसलमान धर्म भी हैं। लेकिन मुसलमान या ईसाई लोग आपकी मदद के लिए आगे नहीं आते। वे क्यों नहीं आते इस बारे में आप सोचिए। जिस धर्म में हम पैदा हुए, जिस धर्म के सिद्धांतों का हम पालन करते हैं, जिस धर्म को हम अपना मानते हैं वही धर्म आज आपको पीड़ा पहुंचा रहा है। इसी तरह असहाय रह कर उससे मिल रही पीड़ा, आप कितने समय तक और सहोगे? आपसे मैं पूछता हूं कि किसी की मदद लिए बगैर क्या आप हिंदुओं के खिलाफ चल रहे अपने युद्ध में जीत सकते हैं? जिनके सहारे आप जीते हैं, वे क्या कभी आपको इंसानियत के अधिकार देंगे? मैं आपको एक बात पूरे यकीन के साथ कह सकता हूं कि हिंदुओं से कभी भी आपका भला नहीं होगा। अपने बच्चे को धक्का देकर कुएं में ढकेलने वाला बाप उसका मित्र होगा या उसका हाथ पकड़ खींच कर उसे बाहर निकालने वाला आदमी उसका मित्र होगा? इस तरह हाथ आगे बढ़ा कर मदद करने वाला मित्र आपको ढूंढ निकालना है।

आज हिंदू लोग मुसलमानों से बचकर क्यों रहते हैं? हिंदू लोग उनके धर्म से नफरत करते हैं, उन्हें बुरा–भला कहते हैं। लेकिन गांव के दो की संख्या में मुसलमानों के घर के होने पर भी उनके बच्चों तक को छेड़ने की हिंदुओं की हिम्मत नहीं है। इसका कारण क्या है? मुसलमान के बच्चे को भी अगर किसी ने छेड़ा तब पूरे हिंदुस्तान का पूरा मुसलमान समाज उस बच्चे की मदद के लिए दौड़ता हुआ आएगा और हिंदुओं पर हमला बोलेगा। हिंदू आपको परेशान करते हैं क्योंकि उन्हें पता है कि आपकी मदद के लिए कोई दौड़ा चला नहीं आएगा।

कई लोग आपको बताते हैं कि आप अपने पैरों पर खड़े हो जाइए, लेकिन जिसके दोनों पैर काटे गए हों वह कैसे खड़ा रहे? आपको किसी का हाथ पकड़ कर ही खड़े रहना होगा। तभी आपकी ताकत बढ़ेगी। आपकी आज की असहाय स्थिति में जो आपकी मदद करेगा, वही आपका सच्चा मित्र होगा। मित्र भी और संरक्षक भी। इसीलिए मैं कहता हूं कि आपको अपना धर्म बदलना चाहिए। इंसान को धर्म प्रिय नहीं, उसे इंसानियत प्रिय होती है।

कातकरी की तरह बेहद पिछड़ी जाति के साथ भी हिंदू धर्म में इंसानियत के साथ पेश आया जाता है। वे स्पृश्यों के घरों में जा सकते हैं, लेकिन आप उनके दरवाजे में भी खड़े नहीं रह सकते। आपके हाथ का छुआ दूध भी कोई नहीं लेगा। नौकरी कर या कोई अन्य काम–धंधा कर अपनी उन्नति करवा लेने के जो भी मार्ग

हैं, वे सब आपके लिए बंद हैं। ईसाई या मुसलमान धर्म के लोग जो नौकरियां करते हैं, वे अगर आप करना चाहेंगे, तो उसके लिए हिंदू आपका विरोध करेंगे। इसीलिए मैं आपसे फिर से कहता हूं कि इस हिंदू धर्म में रहते हुए आप अपनी उन्नति हासिल नहीं कर सकते। आप हिंदू हैं, इसीलिए आपकी यह हालत है। आप अगर मुसलमान होते या ईसाई होते या सिख होते तो ये सब रास्ते आपके लिए खुले होते। आप कुछ हद तक अपने लिए आर्थिक विकास बटोर सकते थे, लेकिन आप जब तक हिंदू हो, तब तक यह शैतानी जकड़ और उनका शिकंजा, कभी आपसे दूर नहीं होगा। इसी वजह से आप जिंदा नरक में पिस रहे हैं। इसीलिए, आप अपने हालात के बारे में अच्छी तरह से सोचिए। इस आत्मघातक धर्म को आप कब तक सीने से लगाए बैठे रहेंगे? इसीलिए, इन स्थितियों के बारे में आप अच्छी तरह से सोच लीजिए। मृत्यु के बाद आपको स्वर्ग सुख चाहिए या जिंदा रहते हुए आप स्वर्ग सुख भोगना चाहते हैं? मैं तो इसी जन्म में अपने लिए मोक्ष यानी इंसानियत चाहता हूं। दूसरे जन्म या काल्पनिक स्वर्ग से मुझे कुछ लेना–देना नहीं है।

तीसरी बात यह है कि हिंदू धर्म की मूर्खताभरी सीख से आपके मन मरे हुए हैं। जिस तरह सांप देखते ही आदमी डर जाता है, उसकी नसें अकड़ जाती हैं कुछ उसी तरह की आपकी आज की हालत है। आपको लगता है कि हम एकदम निचली जाति के हैं, हलकी जाति के हैं। हिंदू धर्म आपको अतिशूद्र मानता है। और आप अपने आपको अतिशूद्र मानते हैं। इसीलिए राह चलते भी हिंदुओं के पास से आप नहीं गुजरते, वे सामने पड़ते हैं, तो आप परे हो जाते हैं। इसका मतलब यही है कि आपका मन मरा हुआ है। आपका स्वाभिमान सोया हुआ है। आपको नहीं लगता कि आप इंसान हैं। इसीलिए अपने पर जुल्म करने वाले हिंदुओं के साथ संघर्ष करने की आप सोचते भी नहीं। एक बात की मैं आपको चेतावनी देता हूं, कि जब तक आप हिंदू धर्म की चौखट में हैं, जब तक आपके हाथों और पैरों में ये बेड़ियां जकड़ी हुई हैं, जब तक आपके मन पर इस धर्म की सीख की जकड़ है, तब तक आप इसी तरह बिना काम के, बिन पेंदे के रहेंगे।

आप सब लोग खेतीहर हैं। किसान हैं। आपको पता है कि पौधा कब पनपता है। आपको पता है कि एक पेड़ की छाया में दूसरा पेड़ जिंदा नहीं रह सकता। और अगर जी भी गया तो बौना हो जाता है। आम के पेड बौने हों तो दो पेड़ों के बीच कम से कम 15–20 फूट की दूरी रखनी पड़ती है। तभी उन पेड़ों में मौर आता है और अच्छे, मीठे फल उगते हैं। इसके पीछे क्या कारण है? बड़े पेड़ के नीचे छोटे पेड़ को जरूरी प्रकाश नहीं मिलता। उस पर सूरज की रोशनी नहीं आती। उसे अन्य पोषक द्रव्य भी जितनी मात्रा में मिलने चाहिए, उतनी मात्रा में नहीं मिलते। आपकी हालत उस छोटे पौधे जैसी हुई है। हिंदुओं की छाया में रहने की वजह से

आपका विकास नहीं हो पाया। बौने पेड़ की तरह तुम्हारी हालत हुई है। सज्जनों! इतने दिनों तक आप सोए हुए थे। अन्य लोगों ने इस दौरान दुनिया में क्या लूट मचा रखी है, इसके बारे में अब हमें सोचना होगा।

मेरी बताई तीन दिक्कतों को दूर करने के बारे में अगर आप जी जान लगा कर जुट जाएंगे तो आपका विकास जरूर होगा। अब हम आपकी समस्याओं के बारे में सोचेंगे। आपकी पहली समस्या है आपकी दरिद्रता। इसे दूर करना आपके हाथ में नहीं है। लेकिन हमें मिल कर उसे दूर करने की कोशिश करनी होगी। इस बारे में आपसे अधिक जिम्मेदारी मुझ पर है। मैं और मेरे सहयोगियों पर यह जिम्मेदारी है। अपनी आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए हमें अपने राजनीतिक अधिकार पाने की कोशिश करनी होगी। आज विधिमंडल में आपको 15 जगहें मिली हैं। उन जगहों पर जाने वाले प्रतिनिधियों पर आपकी हर प्रकार से मदद करने की जिम्मेदारी होगी। अपने हालात की सही जानकारी देकर अपने प्रतिनिधियों से उनका कर्तव्य करवा लेना आपकी जिम्मेदारी है।

दूसरी और तीसरी समस्या हैं आपकी 'असहायता' और आपके 'मन का कमजोर होना'। इन्हें दूर करना पूरी तरह आपके हाथ में है। उसे कैसे दूर किया जा सकता है, यह मैं अपने कर्त्तव्य के तौर पर आपको बताऊंगा। उस पर अमल करना या नहीं करना, यह पूरी तरह आपके हाथ में है। मेरे मतानुसार ये दोनों समस्या आपके हिंदू धर्म छोड़ने से दूर होने वाली हैं। मैंने आपको बताया है कि असहायता दूर करने के लिए आप दूसरे धर्म के समाज को अपना मित्र बना लें। उसी तरह आपके मन की दुर्बलता को नष्ट करने के लिए आपके सामने दूसरे धर्म की मदद लेने के अलावा कोई चारा नहीं है। थोड़े शब्दों में बताना हो तो इन दोनों समस्याओं पर जीत हासिल करनी हो तो एक ही उपाय से की जा सकती है – धर्मांतरण। धर्म परिवर्तन करने के लिए अब आपको तैयार हो जाना पड़ेगा। धर्म परिवर्तन कब करना है, कौन से धर्म में जाना है यह मैं सही समय आने पर बता दूंगा। अगर मेरा कहना आपको सही लगता है, तो मेरे पीछे आइए। अगर सही नहीं लगता तो इसी धर्म में पिसते रहिए। मैं भी आपकी ही जाति में पैदा हुआ हूं। इसीलिए अपना कर्त्तव्य मान कर, मैं यह आपको बता रहा हूं। अपने भले–बुरे की जिम्मेदारी अगर आप मुझे सौंप रहे हैं, तो मेरे बताए अनुसार व्यवहार के लिए आपको तैयार रहना होगा। मैं जिधर जाऊंगा उस तरफ आपको मेरे पीछे–पीछे आना होगा।

आखिर में मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि हालात बहुत ही मुश्किल हैं, आपातकाल है। हमें इस बात का निर्णय करना होगा कि ऐसे हालात में हमें क्या

करना चाहिए। 5–10 सालों की मोहलत आप सबको दी गई है। उसके पीछे बस यही कारण है कि यह बहुत बड़ा सवाल है, इसलिए आसानी से हल होना संभव नहीं। आपमें से आधे लोग ही धर्म परिवर्तन के लिए तैयार हुए तो हमारा फायदा नहीं होगा। सभी लोगों द्वारा धर्म परिवर्तन करना जरूरी है। और इसी बात को ध्यान में रखकर, विचार करने के लिए पांच–दस सालों का समय दिया गया है। इस कालावधि में हिंदू धर्म का बोझ आपके सिर पर है, उसे हटाइए, उसे दूर करें। एक बात ध्यान में रखें, कि जिस समय मुझे लगेगा कि आप धर्म परिवर्तन के लिए तैयार नहीं हो, उस वक्त से आपके और मेरे रास्ते समझो अलग–अलग हैं। किन्तु यह निश्चित है कि मैं इस बेकार और अनुपयोगी धर्म को अलविदा कहूंगा, इसे छोड़ दूंगा, यह मेरा ठोस, पक्का निर्णय है।

82
आंदोलन का फायदा सभी अस्पृश्यों को हुआ*

शनिवार दिनांक 29 फरवरी, 1936 को रात साढ़े नौ बजे श्री राघोबा वनमाली की अध्यक्षता में पनवेल तालुका के चमार जाति की एक सभा हुई। उस सभा में निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किए गए –

प्रस्ताव 1 : बादशाह पंचम जॉर्ज की मृत्यु के बारे में दुःख व्यक्त करना और नए बादशाह आठवें एडवर्ड का अभिनंदन करना।

प्रस्ताव 2 : डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के नेतृत्व पर पूर्ण विश्वास प्रकट करना।

प्रस्ताव 3 : नासिक जिले के येवले गांव में हुई सभा में रखे गए धर्म परिवर्तन के प्रस्ताव को समर्थन देना।

इस सभा में श्री शिवतरकर, गवरूजी उरणकर, महादेव कल्याणकर, मारुती मोहोकर, महादेव महाडिक आदि वक्ताओं के भाषण हुए। आखिर में अध्यक्ष राघोबा वनमाली जी ने डॉ. अम्बेडकर और उनके धर्मांतरण की नीति के बारे में प्रभावी भाषण किया और सभा बर्खास्त हुई।

पान–सुपारी समारोह

रविवार दिनांक 1 मार्च, 1936 के दिन अस्पृश्य परिषद का काम पूरा होने के बाद पनवेल के चमार लोगों ने डॉ. अम्बेडकर को पान सुपारी का आमंत्रण दिया। उनके पास समय की कमी होने के बावजूद उन्होंने वह आमंत्रण सहर्ष स्वीकार किया। इस अवसर पर श्री. वनमाली जी ने ग्रामीणों के आग्रह पर एक छोटा–सा भाषण दिया। उसमें उन्होंने कहा,

"डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने यहां के चमार लोगों के आमंत्रण को स्वीकार कर अपने दर्शनों का लाभ उन्हें दिया, इसके लिए वे आपके बहुत बहुत आभारी हैं । यहां के चमार और महारों के बीच कोई मतभेद नहीं है। यहां के चमारों ने उनके आगमन पर फूलों की माला पहना कर उनका स्वागत किया। साथ ही वहां जब जुलूस निकला, उस समय उनके फोटो को हार पहना कर उन पर का अपना स्नेह व्यक्त किया। परिषद के खुले सम्मेलन में महिला और पुरुषों ने खुले दिल से हिस्सा लिया और धर्म परिवर्तन के प्रस्ताव को भी अपना समर्थन दिया। साथ ही कल रात

*'जनता' 7 मार्च, 1936

यहां एक अलग सभा लेकर उन पर अपना विश्वास प्रकट कर धर्मांतरण के बारे में प्रस्ताव पास किया गया। आपसे हमारी यही विनती है कि जिस तरह आप अपने समाज की उन्नति के लिए परिश्रम करते हैं, उसी तरह हमारी तरफ भी आप विशेष ध्यान दें। हममें से कुछ लोगों का आपको विरोध है, लेकिन हमारा उन पर विश्वास नहीं है। आप ही हमारे सच्चे नेता हैं।" इस तरह डॉ. वनमाली के भाषण के बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ। उसमें उन्होंने कहा,

"यहां बुला कर आपने मुझे जो गौरव प्रदान किया है उसके लिए पहले मैं आपके प्रति आभार व्यक्त करता हूं। मुझे कुछ कहना नहीं था, लेकिन डॉ. वनमाली के भाषण से मुझे लगा कि आपको मेरे बारे में थोड़ी आशंका है। मैं आपको यह बताना चाहता हूं कि मेरा आंदोलन किसी एक वर्ग की या जाति की उन्नति के लिए नहीं है, वरन सभी अस्पृश्यों की उन्नति के लिए है। दुर्भाग्य ही कहिए या सौभाग्य की बात यह है कि यह आंदोलन केवल महार समाज के लोगों ने चलाया है। अन्य जातियों ने अगर उसमें हिस्सा लिया तो, मैं महार जाति से कहूंगा कि आप शांत रहिए। अब तक जो आंदोलन हुआ उसका फायदा केवल महार जाति को न होकर चमार और मांगों को भी हुआ है। हमने मुंबई म्युनिसिपालिटी से कहा कि स्कूल विभाग में सुपरवाइजर की नियुक्ति करनी चाहिए। म्युनिसिपालिटी ने जिन सुपरवाइजरों की नियुक्ति की उनमें चमार जाति के भी लोग थे और फिलहाल (शिवतरकर की तरफ उंगली दिखा कर) वे मेरे पड़ोस में बैठे हैं। पुलिस प्रशिक्षण केंद्र में अस्पृश्यों की भर्ती के लिए सरकार से कहा तब सरकार ने जो भर्ती की उसमें महार नहीं बल्कि चमार और मांग लोग ही हैं। इन उदाहरणों से मैं यह समझ नहीं पा रहा हूं कि मेरा यह आंदोलन केवल महारों के लिए कैसे हो सकता है? अब जो आंदोलन चल रहा है, उसके बारे में बताता हूं। अस्पृश्यों की सभी जातियों को धर्म परिवर्तन करना चाहिए, ऐसा मुझे लगता है। लेकिन अगर बाकी जातियां मेरी बात को टाल कर चुपचाप बैठी रहती हैं तो मैं क्या कर सकता हूं? एक बात मैं आपको बता दूं, जो जातियां इस तरह पीछे रह जाएंगी उनकी हालत बहुत बुरी होगी। क्योंकि फिर अस्पृश्यता निवारण की लड़ाई आप लोगों को लड़नी पड़ेगी और वह काम बहुत कठिन होगा। क्योंकि महारों की जनसंख्या 80 प्रतिशत है। इतनी संख्या में लोग जब निकल जाएंगे तब बाकी बचे हुए लोग क्या कर सकेंगे? आज भी अपनी बात पर अमल करवाने के लिए इतने आंदोलन करने पड़ रहे हैं, तब भी हमारी बात किसी के कानों तक नहीं पहुंच रही है तो फिर आप लोग क्या करेंगे? इसलिए बहुजन समाज के साथ धर्म परिवर्तन करने में ही आपकी भलाई है। महार जाति से आप पर अगर कोई अन्याय हो रहा हो तो आप मुझे बताइए, मैं उस बारे में जो सही होगा वह करूंगा।"

83

वोट बेचना अपराध तो है ही साथ ही वह आत्मघात भी है*

ठाणे जिले के पालघर के पास के वेढ़ी नाम के गांव में 29 मार्च, 1936 को ठाणे जिला अस्पृश्य परिषद का पहला सम्मेलन अखिल अस्पृश्य समाज के नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में होना तय हुआ था। इस सम्मेलन में हिस्सा लेने के लिए मुंबई से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर, कमलाकांत चित्रे, संभाजीराव गायकवाड, श्री वाघ, श्री मडकेबुवा जाधव, श्री गायकवाड़, श्री. अनंतराव चित्रे, श्री शांताराम पोतनीस, श्री. चांगदेव मोहिते, श्री. बापुसाहेब सहस्त्रबुद्धे, श्री. रामचंद्र मोरे, श्री. केणी, जे. पी. वनमाली मास्टर आदि के साथ सुबह मुम्बई से वेढ़ी गांव की ओर निकले। वसई स्टेशन पर चमार समाज ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का स्वागत करते हुए उन्हें पुष्पहार अर्पण कर उनकी जयकार की। दोपहर 11 बजे वेढ़ी के नजदीक वाले सपाला स्टेशन पर सब उतरे। सफाले स्टेशन पर सम्मेलन के लिए मुंबई से आए सभी लोगों का ठाणे जिले के अस्पृश्य समाज की ओर से बड़े आदर के साथ स्वागत किया गया और डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के नाम की जयकार की गई।

सफाले स्टेशन से वेढ़ी गांव करीब 3 से 4 मील की दूरी पर है। मुंबई से परिषद में हिस्सा लेने आए लोगों को स्टेशन से वहां ले जाने के लिए मोटर, लॉरी और तांगों की व्यवस्था 1–2 दिन पहले से ठाणे जिले के अस्पृश्य समाज द्वारा की गई थी। किराए का बयाणा भी वाहनचालकों को पहले से दे रखा था। लेकिन 28 मार्च, 1936 की रात में यानी सम्मेलन से एक दिन पहले स्पृश्य लोगों के भड़कावे में आकर सफाले के वाहन मालिकों की हुई बैठक में उन्होंने निर्णय लिया कि डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर तथा उनके साथ आने वाले अन्य लोगों को वे अपने वाहनों में बैठा कर नहीं ले जाएंगे। सफाला स्टेशन से बाहर निकल कर लोग वाहन पर सवार तो हुए लेकिन वाहन चालक ने बहाना बनाया कि उसके वाहन में खराबी है। स्टेशन से बाहर कोई और वाहन था ही नहीं। तब सब लोगों ने तांगे की सवारी करने की सोची। वे जब तांगे में चढ़ने लगे तो तांगे वालों ने उन्हें ले जाने से मना करते हुए साफ–साफ बताया कि आज तक कभी अपने तांगे में उन्होंने किसी अस्पृश्य को नहीं बिठाया और आज भी आप में से किसी को न बिठाने के लिए हमने हड़ताल कर रखी है। तांगे वालों की बात सुन कर सभी लोगों ने सोचा कि वे पैदल ही वेढ़ी गांव पहुंचेंगे। तभी हड़ताल में शामिल एक मुसलमान तांगे वाला हड़ताल से अलग हुआ और उसने खुद किराया लेने के लिए तैयार होने की बात बताई। एक

---

*'जनता' : 4 अप्रैल, 1936

तांगे वाले के आगे आने से उसकी देखा–देखी भंडारी जाति के 3 और तांगे वाले भी आगे आए। उन्होंने भी बताया कि वे हड़ताल से हट कर सवारियां ढोने और किराया लेने के लिए तैयार हैं। इस तरह कुल चार तांगों में डॉ. बाबासाहेब और कुछ और लोग वेढ़ी की तरफ रवाना हुए। अस्पृश्य होने के नाते आज तांगे वाले अपने साथ इस तरह पेश आए, यह देख कर उन्हें हिंदू समाज में अपनी हालत के बारे में सोच कर बहुत बुरा लगा।

आखिर 12 बजे सभी लोग वेढ़ी के सम्मेलन स्थल तक पहुंचे। वहां सम्मेलन के लिए बड़ा मंडप खड़ा किया गया था। मंडप के ऊपर ताल वृक्ष के पत्तों की छत बनाई थी। सभी ओर से मंडप को सजाया गया था। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के सम्मेलन स्थल पर पहुंचते ही उनके नाम की जयध्वनि की गई। सम्मेलन के लिए ठाणे जिले के वसई के श्री. विष्णुपंत दांडेकर वकील, बोर्डी के श्री. मुकुंदराव आनंदराव सावे, वेढ़ी के नथोबा त्रिंबकराव म्हात्रे, विरार के एच. जी. वर्तक, श्री. खंडूभाई शहा, देवमास्तर और वेढ़ी गांव के अन्य स्पृश्य लोग उपस्थित थे। उपस्थित अस्पृश्य समुदाय की संख्या करीब 3–4 हजार तक थी।

परिषद की शुरुआत में ईशस्तवन हुआ। उसके बाद परिषद के स्वागताध्यक्ष श्री शिवराम गोपाल जाधव ने अपने भाषण में सबका स्वागत किया। उनके बाद परिषद के नियोजित अध्यक्ष डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ। उन्होंने कहा,

"स्वागताध्यक्ष, और मेरे प्रिय भाइयों और बहनों,

आज की इस सभा को एक अपूर्वता प्राप्त हुई है, यह कहना गलत नहीं होगा। मेरे सार्वजनिक कार्यों में हिस्सा लेने की शुरुआत से लेकर अब तक इस विभाग में कभी कोई कार्यक्रम नहीं हो पाया था। 16 साल पहले यहां के टेंभुर्णी गांव में परिषद हुई थी। उसके बाद आज परिषद हो रही है। इस जिले के लोग इतनी बड़ी संख्या में आज यहां एकत्रित हो रहे हैं यह बहुत अच्छी बात है।

सम्मेलन आयोजित करने के लिए इस जिले के नेता श्री. शिवराम गोपाल जाधव ने बहुत परिश्रम किए। इसलिए मैं पहले उनका अभिनंदन करता हूं और उनके प्रति आभार व्यक्त करता हूं।

सज्जनों, बहुत लंबा भाषण कर मैं आपका समय जाया नहीं करूंगा। लेकिन दो बातों के बारे में मैं आपको बताना चाहता हूं। पहला मुद्दा है धर्मांतरण का। कुछ लोग कहते हैं कि धर्म परिवर्तन करने से क्या होगा? इसका जवाब कई तरह से दिया जा सकता है। लेकिन मैं एकदम सीधे शब्दों में उसका जवाब देता हूं। धर्मांतरण के सवाल का स्वरूप बहुत ही गहन और दार्शनिक है। इसके बारे में सब लोगों की

समझ में आए इस तरह से बातचीत की जाना जरूरी है।

आज आप की स्थिति अपाहिजों जैसी है। आप अनपढ़ और दरिद्र हैं। आपमें किसी तरह की ताकत नहीं है। मैं जो कह रहा हूं उसके लिए किसी सबूत की जरूरत नहीं है। जिस गांव में आप रहते हैं वहां आपकी बस्ती और अन्य लोगों की बस्ती में आप तुलना करेंगे, तो जान जाएंगे कि आपकी हालत कितनी बदतर है। प्रकृति से मिलने वाली सामग्री पर ही जानवर और पंछी खुश रहते हैं। इस दुनिया में प्रकृति निर्मित चीजों पर ही उनका जीवन निर्भर करता है। लेकिन आदमी चाहता है कि प्रकृति ने जो और जितना दिया है, उससे थोड़ा अधिक उसे मिले। अपनी उन्नति की इच्छा सभी मानवी समाज की होती है। आप अपनी दरिद्र स्थिति को बदलकर आगे जाना चाहते हैं। क्या आप अपने पैरों पर खड़े हो सकते हैं? इस बारे में सोचिए। मैंने आपकी स्थिति के बारे में जितना सोचा है, उससे मुझे यकीन हुआ है कि आपको किसी की मदद लेनी चाहिए। आज आप लोगों के बीच शिक्षित लोगों की कमी है। आपको शिक्षा, खासकर उच्च शिक्षा लेनी चाहिए। एक जमाना था, जब चार किताबें पढ़ा स्पृश्य व्यक्ति भी तहसीलदार बनता था। लेकिन आज स्थितियां बदल चुकी हैं। आज उच्च शिक्षा के बगैर किसी को भी सरकारी नौकरी मिलना संभव नहीं है। आप लोगों के तो खाने के लाले पड़े हुए हैं, आप अपने बच्चों को क्या बी. ए., एम. ए. कराएंगे? आपमें ऐसा कोई भी आदमी नहीं है, जो अपने बलबूते अपने बच्चों को पढ़ा सके। ऐसी स्थिति में अगर कोई समाज आपसे किसी तरह की कोई उम्मीद रखे बगैर और आपके स्वाभिमान को किसी तरह चोट पहुंचाए बगैर आपकी सहायता करने के लिए तैयार हो तो आपको उसकी मदद लेकर स्पृश्य हिंदुओं के साथ की स्पर्द्धा में अग्रसर होते रहना चाहिए।

आज अपने कई लोग मेहनत कर अपना पेट पालते हैं। उन्होंने अगर कड़ी मेहनत की, रोजगार किया तो ही किसी तरह उन्हें पेट भरने के लिए भोजन और बदन ढंकने के लिए कपड़े मिल सकते हैं। आज आपको जो रोजगार मिलता है, वह स्पृश्य हिंदुओं की मिन्नतें करने के बाद ही मिलता है। आपका कोई अपना धंधा नहीं है। न आप अपने खेतों में खेती करते हैं। आपका अपना कोई व्यापार नहीं है, व्यापार करने जैसे कोई साधन भी नहीं हैं, अलग से साधन पैदा करने की आपकी माली हालत नहीं और यदि होती भी तब भी आपको मौका नहीं मिलता। सरकार ने कानून बना कर पानी के सभी सार्वजनिक स्त्रोतों पर पानी भरने का अधिकार आपको दिया है। लेकिन आपका अनुभव आपको बताता है कि स्पृश्य लोग इन जगहों पर आपको पानी भरने नहीं देते। आपने यदि इन जगहों पर पानी भरा तो स्पृश्य लोग आपको बहिष्कृत करते हैं। उस समय आप पर बहुत बुरी बीतती है। उस शोषण, यंत्रणा, यातना, तकलीफों और संकटों से गुजरते समय उसी गांव के

रहने वाले मुसलमान आपकी सहायता के लिए, आपको उस स्थिति में मदद का हाथ देने के लिए नहीं आते। उस दौरान धीरज के साथ आपको आपदा, संकट झेलने ही पड़ते हैं। उन संकटों की स्थिति में अपनी हालत असहाय होती है। ऐसी हालत में रहते हुए हम कुछ कर नहीं सकते। इसीलिए आज ऐसी स्थिति में हमें औरों से सहायता लेनी चाहिए।

आज हिंदू समाज की हर जाति स्वार्थी बन कर अपनी जाति के लोगों की ही मदद कर रही है। लेकिन कोई भी हिंदू जाति अस्पृश्य समाज की मदद नहीं कर रही। क्योंकि स्पृश्य हिंदू जातियों के और हमारे कोई संबंध नहीं हैं। इसलिए जो लोग हमारी मदद करेंगे और हमारी असहाय स्थिति में हमारी रक्षा करेंगे, उनके साथ हमें अपना नाता जोड़ लेना चाहिए। आज हम हिंदु धर्म के सभी रीति–रिवाजों का पालन करते हैं, भगवानों को मानते हैं, इसके बावजूद हिंदू धर्म के लोग हमारी उपेक्षा करते हैं। हिंदू धर्म के लोग हमारे लिए कुछ भी नहीं कर सकते हैं। गांधी ने हाल ही में हरिजन में एक लेख लिखा है। अस्पृश्य वर्ग के कुछ छात्रों ने उनके पास विद्या प्राप्त करने में उनकी मदद पाने के लिए अर्जियां भेजी थीं, विद्यावेतन (स्कॉलरशिप) की मांग की थी। उन अर्जियों का जवाब देते हुए गांधी ने लिखा है कि, अगर रियायतें पाने के लिए ही आपको हिंदू धर्म में रहना हो तो आप यदि हिंदू धर्म छोड़ कर चले जाएंगे, तब भी चलेगा। महात्माजी जैसे व्यक्ति की अगर यह भावना हो तो अन्य सामान्य लोगों की भावना कैसी होगी?

इससे और अन्य कई बातों से सीख यही मिलती है कि हिंदू धर्म के लोगों से आस रखना गलत सिद्ध होगा। अगर अपनी उन्नति और विकास चाहते हो तो सहृदय, सामर्थ्यवान, शीलसंपन्न, निस्वार्थी समाज के साथ जुड़िए। और इस रह जुड़ने का अर्थ ही है धर्म परिवर्तन करना।

मुसलमान, ईसाई और सिक्ख हम पर करोड़ों रुपये खर्च करने के लिए तैयार हैं। लेकिन हिंदूधर्मियों की प्रवृत्ति ठीक उनके विरुद्ध है। गांधी ने स्वराज पाने के लिए जब हिंदू समाज से मदद की याचना की तब उन्हें करोड़–सवा करोड़ रुपया दिया गया। लेकिन जब उन्होंने अस्पृश्यों के लिए हिंदू समाज से मदद की याचना की तब उन्हें पूरे भारत में बड़ी मिन्नतें कर–कर के केवल आठ लाख रुपये मिले। उनमें से चार लाख रुपए दो सालों में खर्च किए गए और सुना है कि, बचे हुए चार लाख भी इस साल–छह महीनों में किसी तरह खर्च दिए जाएंगे। इससे साफ जाहिर होता है कि हिंदू समाज स्वराज के लिए कितना और अस्पृश्योद्धार के लिए कितना स्वार्थ त्याग करने के लिए तैयार है।

मुसलमानों की एक संस्था ने एक करोड़ रुपया एकट्ठा करने और हमारे लिए खर्च करने की सोची है तो सिक्ख समाज ने लाखों रुपये जोड़ कर आपकी उन्नति के लिए खर्च करने के बारे में निश्चय किया है। इसके विरुद्ध हिंदू धर्मियों की तस्वीर है। वे आंखें मूंद कर बैठे हुए हैं। आंखों पर चमड़ी ओढ़ कर बैठे हिंदू समाज से आपकी कोई मदद तो नहीं ही की जाती उल्टे इस समाज की ओर से आपकी प्रगति की राह में अड़ंगे खड़े किए जा रहे हैं। इसलिए आपका उनसे उद्धार नहीं होगा, इस बात को आप ध्यान में रखिए। प्रगति के इस युग में हमें अपना मार्ग हिंदू धर्म से अलग होकर ही बनाना होगा। हमारे स्वाभिमान और विकास को धक्का पहुंचाए बगैर जो अपनी प्रगति और विकास के लिए समानता के भाव से मदद करेंगे उस धर्म से सहकार्य हमें करना चाहिए।

पुरखों का धर्म सीने से लगाए बैठने में कोई मतलब नहीं है। झूठे अभिमान का हमें त्याग करना चाहिए। हिंदू धर्म में चातुर्वर्ण्य की घातक प्रथा है और उसके नष्ट होने के कोई आसार भी दिखाई नहीं देते। इस चातुर्वर्ण्य के और वर्णाश्रम धर्म के कारण हमारा बहुत नुकसान हुआ है। वर्णाश्रम धर्म के अनुसार ब्राह्मणों के अलावा अन्य कोई भी विद्या प्राप्त नहीं कर सकता, क्षत्रियों के अलावा कोई भी शस्त्र धारण नहीं कर सकता। ऐसी वर्णव्यवस्था ने हमारे पूर्वजों को अज्ञानी और निर्बल बनाया था। वर्णाश्रम धर्म ने हमें ज्ञान, सत्ता, शस्त्र और संपत्ति का उपयोग ही नहीं करने दिया। इसी वर्णाश्रम धर्म ने हमारे पूर्वजों की प्रतिकार शक्ति नष्ट कर दी। विकास, प्रगति के मार्ग पर उनके कदम पड़ने ही नहीं दिए। लेकिन आज हमारी स्थिति वैसी नहीं है। आजकल हर किसी के लिए प्रगति के द्वार खुले हैं। शस्त्रधारण करना चाहें तो उसके लिए मार्ग खुले हैं, विकास का मार्ग खुला है। ऐसी स्थितियों में अगर अपने पूर्वजों के धर्म से लिपटकर बैठे रहेंगे, तो आप कभी भी उन्नति नहीं कर पाएंगे। मैं आपको चेतावनी देकर कहता हूं कि आप ज्ञान और शक्ति संपादन करें, रीति–रिवाजों के झूठे बंधन तोड़ें और बढ़–चढ़ कर अपनी उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हों। इस पर शांतिपूर्वक, गहराई से सोचें। प्रगति के पथ पर कदम बढ़ा कर उज्ज्वलता का रास्ता अख्तियार करें।

अब, राजनीति के बारे में जो सवाल हैं उस पर आते हैं। साल भर में मुंबई इलाका और भारत में नया संविधान लागू होने वाला है। उस संविधान को लेकर आपके क्या कर्त्तव्य हैं यह आपको बताने की मेरी इच्छा है। आज तक आप अपनी समस्या को दूर करने के लिए सरकारी अफसरों के पास अर्जी भेजा करते थे। आपको लगता था कि इन अर्जियों के कारण आपकी तकलीफें दूर होंगी। कलक्टर राजा होता है, ऐसा आपको लगता है। वैसे कलक्टर राजा तो होता है एक मायने में क्योंकि, आजकल नौकरशाहों का ही राज चलता है। लेकिन अगले साल से यह

तस्वीर बदलने वाली है। एक साल के बाद राजनीति में नौकरशाही का कोई अलग स्थान या सत्ता नहीं होगी। नए संविधान के अनुसार सभी अधिकार विधिमंडल के पास रहेंगे और विधिमंडल के आगे कलक्टर और तहसीलदार को भी झुकना होगा। यानी, विधिमंडल आगे चलकर काफी महत्त्वपूर्ण बनने जा रहा है। उस विधिमंडल में हमें महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ है। राजनीति का भवितव्य विधिमंडल पर निर्भर होगा। इसीलिए अच्छे लोगों का विधिमंडल में शामिल होना जरूरी है। सेठ, साहूकार पैसे वाले विधिमंडल में अपने लिए जगह बनाना चाहते हैं। लेकिन इन लोगों से गरीबों का कल्याण होना संभव नहीं है। इसके लिए आपको गरीबों के साथ मिल–जुल कर काम करने वालों को, गरीबों की इच्छा–आकांक्षाओं का अहसास होने वालों को, निस्वार्थी, निर्भीक, लायक तथा मतदाताओं से ईमानदारी से पेश आने वाले लोगों को चुनना होगा। अपने असली हितचिंतकों को अगर हम विधिमंडल में चुन कर भेजें तो ही अपने कदम आगे बढ़ सकते हैं और अपने हितों का संवर्धन हो सकता है।

प्रत्याशियों को चुन कर विधिमंडल भेजने के लिए हमें मताधिकार मिला है। यह अधिकार बहुत ही बड़ा और महत्त्वपूर्ण अधिकार है। इसलिए ध्यान रखना होगा कि अपनी मतदान की शक्ति गलत जगह ज़ाया न हो। सच्चे, ईमानदार और जिन्हें हमारे हित की चिंता हो ऐसे उम्मीदवारों के बारे में मैं आपको सही समय पर जानकारी दूंगा और आप उन्हीं को अपना मत देना।

फिलहाल हमारे देश में अमीर लोग वोट खरीदते हैं, लेकिन वोट कोई बेचने की वस्तु नहीं हैं। वह हमारी सुरक्षा का साधन है। वोट बेचना गुनाह तो है ही, साथ ही वह आत्मघात भी है। वोट बेच कर विधिमंडल में नालायक लोगों की भर्ती करने से देश का अपरिमित नुकसान होता है और राष्ट्र की अवनति होती है। जो खुद नालायक होंगे और अयोग्य होंगे लेकिन धन के बल पर विधिमंडल में शामिल होने की चाह रखते होंगे वे आपको धन का लालच देंगे। दरिद्रता के कारण अपना वोट बेचने के बारे में आपके मन में मोह उत्पन्न होगा। ऐसे किसी भी मोह के आप बिल्कुल शिकार न हों। मोह के शिकार होंगे, तो आप अपने पैरों पर पत्थर मार लेंगे। आज मैं आप सब लोगों को यह चेतावनी दे रहा हूं। जिन लोगों को समाज से समर्थन प्राप्त नहीं होता, वे ही वोट खरीदना चाहते हैं। वोट खरीद कर वे अपनी योग्यता सिद्ध करना चाहते हैं। ऐसे नाकाबिल लोगों से समाज या राष्ट्र के हित का कोई काम नहीं हो सकता। अमीर आदमी अगर विधिमंडल में सदस्य बन कर पहुंच गया तो वह सिर्फ धनी लोगों के हितों की ही रक्षा करेगा। हमारे जैसे गरीबों के हितों की रक्षा में वह अड़ंगा बनेगा। इसीलिए मैं आपसे कहता हूं कि अपना वोट ना बेचें। मुझे पूरा यकीन है कि आप अपना वोट नहीं बेचेंगे। अमीरों के दिए किसी भी लोभ का आप शिकार न बनिए। उनकी दिखाई भूलभुलैया में अपनी राह भूल कर भटक नहीं जाइए।

आपको मिले मतदान के अधिकार का सही ढंग से उपयोग करने से सही व्यक्ति को हम विधिमंडल भेज सकते हैं और उससे अधिक महत्वपूर्ण बात यह कि इससे हमारी अपनी उन्नति हो सकती है। हम किसे विधिमंडल भेजें, यह समय आने पर मैं आपको बता दूंगा।

इस सम्मेलन को सफल बनाने के लिए आपने इतने दूर–दूर से आने का कष्ट किया और मुझ पर अपना स्नेह व्यक्त किया, इसके लिए मैं आपका और इस परिषद के स्वागताध्यक्ष श्री. शिवराम गोपाल जाधव को धन्यवाद देकर मैं अपना भाषण पूरा करता हूं।"

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के भाषण के बाद निम्नलिखित प्रस्ताव रखे गए, पहले दो प्रस्ताव अध्यक्ष ने रखे।

प्रस्ताव 1 : बादशाह पंचम जॉर्ज की मृत्यु के बारे में परिषद् दुःख व्यक्त करती है।

प्रस्ताव 2 : नए बादशाह आठवें एडवर्ड के दीर्घायुरारोग्य की कामना यह परिषद् करती है।

प्रस्ताव 3 : नासिक जिले के येवले गांव में हुई सभा में रखे गए धर्मांतरण की घोषणा एवं प्रस्ताव को यह परिषद् अपना समर्थन व्यक्त करती है। प्रस्ताव रखा लक्ष्मण जानबा गायकवाड़ ने और उस प्रस्ताव को समर्थन दिया गंगाराम माधव जाधव, श्री चांगदेव मोहिते, श्री वनमाली, श्री मडकेबुवा जाधव ने।

प्रस्ताव 4 : इस जिले के सार्वजनिक तालाब, कुएं आदि पानी के स्त्रोतों का समान रूप से उपयोग करने के बारे में ठाणे जिला लोकल बोर्ड ने अपने कब्जे वाले कुओं पर 'सब पानी का इस्तेमाल करें', इस आशय वाले बोर्ड लगा दिए हैं। इसके बावजूद इनमें से ज्यादातर पानी के स्त्रोतों पर स्पृश्य लोग अस्पृश्यों के पानी भरने का विरोध कर रहे हैं। इस बारे में सरकार ध्यान दे और इन जगहों पर पानी भरते हुए अस्पृश्यों को स्पृश्यों की तरफ से होने वाले विरोध को दूर करने के उपाय करें। प्रस्ताव रखा चांगदेव मोहिते ने और उसे समर्थन दिया जनार्दन पद्माजी लोखंडे ने।

प्रस्ताव 5 : अस्पृश्य एवं जंगली मानी जाने वाली जातियों के लोगों से उनकी जाति के कारण जेल में मल–मूत्र साफ करने का काम लिया जाता है। इस तथा इसके जैसी अन्य अन्यायकारक परंपराओं का अनुसरण करने वाली सरकार के बारे में इस सम्मेलन में संताप व्यक्त किया जा रहा है। तथा विनति की जा रही है कि यह अन्याय तुरंत खत्म किया जाए। प्रस्ताव रखा श्री मोरे ने तथा समर्थन दिया प्रस्ताव को आढ़ाव और जाधव ने।

प्रस्ताव 6 : अखिल अस्पृश्य समाज का मुखपत्र है 'जनता', हर गांव का अस्पृश्य समाज इस अखबार का ग्राहक बने। साथ ही परिषद की ओर से सबसे विनति की जा रही है कि अगर कभी जरूरत पड़े तो 'जनता' को आर्थिक मदद दें और अपने अखबार की उन्नति के लिए तथा उसके विकास के लिए अस्पृश्य समाज हमेशा कोशिश करे। प्रस्ताव रखा धोंडिराम गायकवाड़ ने और अनुमोदन दिया सदाशिवराव सालवी ने।

प्रस्ताव 7 : आसपास के इलाके में यदि अस्पृश्य समाज द्वारा किसी पुराने रीति–रिवाजों का अनुसरण किया जा रहा हो तो अबके बाद वे उनका त्याग करें। शादी–ब्याह जैसे कार्यक्रमों के दौरान शिक्षा जैसे समाज के हित को बढ़ावा देने वाले काम में मदद दें। प्रस्ताव रखा श्री लक्ष्मण मानोजी गायकवाड़ और उसका समर्थन किया गोपाल महादेव जाधव ने।

प्रस्ताव 8 : अगले महिने में मुंबई में अखिल महार समाज का सम्मेलन आयोजित किया गया है। परिषद की ओर से सम्मेलन में उपस्थित हो उसे सफल बनाने की प्रार्थना की जा रही है। इस होने वाले सम्मेलन में आसपास के सभी महार बंधू हिस्सा लें प्रस्ताव रखा दिवाकर पगारे ने और उसे समर्थन दिया संभाजी बाबा गायकवाड़ ने।

प्रस्ताव 9 : इस सम्मेलन को सफल बनाने के लिए जिन–जिन लोगों ने मेहनत की उन सभी के प्रति परिषद की ओर से आभार व्यक्त किया जाता है। प्रस्ताव रखा गायकवाड़ ने और समर्थन दिया जाधव ने।

इन सभी प्रस्तावों पर जोरदार और विचारोत्तेजक भाषण हुए। सभी प्रस्ताव तालियों की गड़गड़ाहट में आम सहमति से पारित हुए। उसके बाद डॉ. अम्बेडकर ने एक बार फिर दो शब्द कहें। उसके बाद आभार प्रदर्शन के कार्यक्रम के बाद बड़े जोश भरे वातावरण में यह सम्मेलन संपन्न हुआ। वहां से लौटते समय वसई स्टेशन पर नासिक के महिपतराव विठूजी निले, दामूजी नामदेव निले, वाघूजी करडक मिस्त्री, पुलाजी उमाजी पाटारे, नानासाहब गणोजी बोराडे, श्रावण भैरवराव आदि लोगों ने डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और परिषद से लौटे लोगों का गौरवपूर्ण सम्मान कर उन्हें फलाहार दिया।

84
हम सात करोड़ अस्पृश्य एक साथ धर्मांतरण करेंगे*

वर्धा में 1 मई, 1936 के दिन सुबह डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर आए। तब वहां के अस्पृश्य समाज ने बड़े उत्साह के साथ उनका स्वागत किया। सेठ जमनालाल बजाज और गांधी ने सेठ वालचंद हीराचंद के साथ उनसे मुलाकात की। वे नालवाड़ी भी गए। 'निर्भय युवक संघ' ने उनका वर्धा में अच्छा–खासा बन्दोबस्त रखा। गांधी से मुलाकात के लिए वे शेगाव[1] गए थे। दोपहर 11.30 बजे अस्पृश्य समाज के कार्यकर्त्ता पुरुषोत्तम खापर्डे, शंकरराव सोनवणे, गोमाजी टेंभरे आदि से भेंट कर उन्होंने धर्म परिवर्तन के बारे में चर्चा की।

इस अवसर पर हुई चर्चा में अम्बेडकर ने साफ तौर पर बताया कि,

"मैंने अब तक किसी से मुसलमान या ईसाई धर्म स्वीकार करने के लिए नहीं कहा है। अगर कोई अपनी मर्जी से मुसलमान या ईसाई धर्म को स्वीकार, समर्थन करते हैं तो वे खुद फंस जाएंगे और उनकी गलती के लिए मैं जिम्मेदार नहीं रहूंगा। मैंने धर्मांतरण की घोषणा की है, लेकिन अब तक किसी धर्म को स्वीकारने के लिए किसी से कहा नहीं है। जब तक मैं किसी से नहीं कहता तब तक धर्मांतरण के प्रचार का काम ही चलता रहे। लेकिन किसी विशिष्ट धर्म की तरफदारी न करें। जब मैं कहूंगा तभी हम सब सात करोड़ अस्पृश्य लोग मिल कर एक साथ धर्म परिवर्तन करेंगे।"

उसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने अन्य अस्पृश्य नेताओं से व्यक्तिगत तौर पर चर्चा की।

---

*विदर्भ दलित आंदोलन का इतिहास : हि. ल. कोसारे पृ : 296

1. वर्धा जिले के सेवाग्राम का जिक्र शायद इस तरह किया गया हो – संपादक

85
राजनीतिक सत्ता का उपयोग न्यायपूर्ण और उदार बुद्धि से करना होगा*

इस महीने के पहले हफ्ते में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर नागपुर–वन्हाई के आसपास दौरे पर गए थे। रविवार 3 मई, 1936 के दिन दोपहर में नागपूर स्टेशन पर हजारों अस्पृश्य उनके स्वागत के लिए इकट्ठा हुए थे। मि. एस. समिउल्लाखान और रावसाहब आर. डब्ल्यू. फुले नागपूर म्युनिसिपालिटी की ओर से स्वागत के लिए स्टेशन आए हुए थे। बीड़ी कामगार यूनियन के लोग भी आए हुए थे। शाम को टाऊन हॉल में उन्हें नागपूर म्युनिसिपालिटी की ओर से मानपत्र प्रदान किया गया। मानपत्र का आशय इस प्रकार था –

"सार्वजनिक कार्यों के अलग–अलग क्षेत्रों में आपने काम किया है। अस्पृश्यों के कल्याण के लिए राजनीतिक और सामाजिक कार्य में अत्यंत उत्साह, धीरज के साथ आपने लगातार परिश्रम किए हैं। नासिक और महाड में सत्याग्रह कर हिंदू समाज को उनकी चिरकालीन निद्रा से जागृत किया है। अस्पृश्य वर्ग में स्वाभिमान की ज्योत जगा कर समाज में उनके न्यायपूर्ण अधिकारों का अहसास उन्हें दिलाया। अस्पृश्य वर्ग के हकों के लिए और समाज में सही दर्जा पाने के लिए आंदोलन करने का सारा श्रेय आप ही को जाता है। ऑल इंडिया डिप्रेस्ड क्लासेस फेडरेशन आपके परिश्रम की साक्ष्य देता है।

राजनीतिक मामलों में भी आपने ऊंचा दर्जा हासिल किया है। साइमन कमीशन को सहकार्य देने के लिए मुंबई लेजिस्लेटिव काउंसिल द्वारा नियुक्त की गई कमेटी के सदस्य के नाते आपने जो भिन्न मत–पत्रिका लिखी है, उससे आपकी कुशाग्र बुद्धि के दर्शन होते हैं। इतना ही नहीं, अपने देश के हितसंबंधों की रक्षा करने को लेकर आपकी चिंता भी इसमें व्यक्त होती है। गोलमेज सम्मेलन में अस्पृश्य वर्ग की ओर से आपने जोरदार समर्थन दर्ज किया और 'पुणे समझौता' के बारे में आपका कार्य जगजाहीर है, उसका जिक्र करने की भी जरूरत नहीं पड़ती।

मानपत्र का जवाब देते हुए डॉ. बाबासाहेब ने कहा,

"म्युनिसिपालिटी से मानपत्र लेने का मेरे जीवन का यह दूसरा मौका है। कई म्युनिसिपालिटियों ने मुझे मानपत्र देने की इच्छा व्यक्त की, लेकिन मानपत्र न स्वीकारने की नीति का मैं अनुसरण करता हूं। हो सकता है कि किसी के मन में यह सवाल उठे

*जनता : 23 मई, 1936

कि मैं इतना कृतघ्न क्यों हूं? लेकिन इसमें कृतघ्नता कोई नहीं है। राष्ट्रीय अखबार और संस्थाओं की नजर में मैं कोई बड़ा आदमी नहीं हूं। मुझे हमेशा लगता रहा है कि लोग मेरा गौरव करें अथवा न करें मेरा काम पवित्र है। इस तरह के जो मानपत्र दिए जाते हैं, उनमें सुधार के बारे में महानता दिखाने के लिए जो झूठ लिखे जाते हैं, उसमें 'कन्वेन्शनल लाइज ऑफ सिविलाइजेशन 'का बड़ा हिस्सा होता है। मानपत्र न लेने के अपने निर्णय के लिए मैंने पहला अपवाद वसई म्युनिसिपालिटी के बारे में किया। कुछ मित्रों की खातिर मुझे वह स्वीकारना पड़ा। नागपूर म्युनिसिपालिटी इसका दूसरा अपवाद है और मुझे इस बात का दुख भी नहीं है। म्युनिसिपालिटी के सदस्यों ने इस मानपत्र का खर्चा खुद वहन करने की बात मान ली है। इसी से मैं मानता हूं कि इस मानपत्र के साथ भावनाएं भी जुड़ी हैं।

आज के कार्यक्रम का राजनीतिक मंच के तौर पर इस्तेमाल करने के लिए आप मुझे माफ करें। मेरे बारे में लोगों में तरह–तरह की गलतफहमियां फैलाई जा रही हैं। मुझ पर लोग अपने टीकास्त्र जितना तराशते हैं उतना किसी और पर शायद ही तराशते होंगे। मेरी आलोचना करने वालों का रुख ऐसा है कि उन्हें लगता है अल्पसंख्यकों के नाम से जो करार मशहूर है, उसका असल गुनहगार मैं हूं। गोलमेज सम्मेलन में मैंने जो नीति सामने रखी थी उसके बारे में मुझे कोई खेद नहीं है। गोलमेज सम्मेलन में मैंने जो काम किया है, उसे पढ़ने की अगर आपने तकलीफ की तो आप समझ जाएंगे कि विभिन्न समस्याएं हल करने के बारे में मैंने जो सूचनाएं रखी थीं वे कई राष्ट्रीय स्तर के नेताओं की रखी सूचनाओं से बेहतर दर्जे की थीं। मैं जो कह रहा हूं उसका साक्ष्य खुद गांधी देंगे।

अल्पसंख्यकों ने गोलमेज सम्मेलन में जो नीति पेश की थी वह न्यायपूर्ण थी। इतना ही नहीं, मेरे मत में वह उदारता भरा भी था। आयरलैंड अल्स्टर वालों ने होमरूल के आंदोलन में जो जवाब दिया था उसकी तरफ मैं आपका ध्यान दिलाना चाहूंगा। अल्स्टर में प्रोटेस्टंट अल्पसंख्यक थे और दक्षिण आयर्लंड में रोमन कैथलिक बहुसंख्या में थे। दक्षिण आयर्लंड के प्रतिनिधि श्री रेडमंड ने अल्स्टर वालों से कहा, ष्आप जो चाहें वे सहूलियतें दूंगा, लेकिन इंग्लैंड से जाकर नहीं मिलना, होमरूल को समर्थन दें।ष तब कार्सन ने उनसे कहा, ष्आग लगे आपके होमरूल को, हम कैथलिकों के राज्य में नहीं रहेंगे।ष गोलमेज सम्मेलन में भारत के अल्पसंख्यकों ने कहीं भी क्या यह कहा है कि, सुरक्षा मिले या न मिले, हम हिंदुओं के राज्य में नहीं रहेंगे? बिल्कुल नहीं कहा है। डोमिनियन स्टेटस या होमरूल की राह में हमने कोई अड़ंगे खड़े नहीं किए। हमने सिर्फ इतना ही कहा कि हमें सुरक्षा प्रदान करें। हममें और अन्य देशों के अल्पसंख्यकों में यही महत्त्वपूर्ण फर्क है।

अब अगर सुरक्षा के बारे में बोलना हो तो, रोम साम्राज्य में भी पेट्रिशियन्स और प्लेबियन्स इस तरह के दो हिस्से थे और उनके चुनाव पृथक चुनाव क्षेत्र से ही होते थे। पृथक चुनाव क्षेत्र बनाने में कोई पाप नहीं। उसमें कोई कारस्तानी (षड्यंत्र) नहीं है। बहुसंख्य हिंदुओं से मेरा यही कहना है कि अब आप बहुसंख्य हैं इसलिए जो सत्ता आपके हाथ में आएगी, उसका न्यायपूर्ण ढंग से और उदारता से उपयोग करें। भारत की राजनीतिक उन्नति अगर थम गई तो उसकी जिम्मेदारी आपके ऊपर होगी। हमें मिले अधिकार अल्पसंख्यकों के फायदे के लिए, आप जिस अनुपात में प्रयोग में लाएंगे, उसी अनुपात में यह बात तय होगी कि आपने अपनी जिम्मेदारी सही ढंग से निभाई है अथवा नहीं। आपने जो मानपत्र दिया है उसके लिए एक बार और मैं आपको धन्यवाद देकर अपनी बात पूरी करता हूं।श

उसके बाद उपाध्यक्ष रावसाहेब फुले ने डॉ. अम्बेडकर और मेहमानों के प्रति आभार व्यक्त करते हुए कहा, कि अल्पसंख्यकों की मांगों के बारे में हिंदुओं को कोई शिकायत नहीं है, उनका कहना तो सिर्फ यही है कि स्पृश्यों के साथ जो नीति वे अपनाएंगे वह राष्ट्रीयत्व की पोषक हो और जातियों के बीच पल रही द्वेष की भावना को खत्म करने वाली हो। हिंदी राष्ट्र को जातियों में विभाजित करनेवाली नीति न अपनाएं। डॉ. अम्बेडकर की गोलमेज सम्मेलन में अपनाई नीति राष्ट्रीयता के लिए पोषक थी, यह हम मानते हैं। सभी अल्पसंख्यक अगर राष्ट्रीयता के लिए पोषक नीति अपनाएंगे तो हिंदू समाज को चाहे जितना स्वार्थत्याग करना पड़े, किसी को उसके बारे में शिकायत नहीं होगी।

इसके बाद कार्यक्रम समाप्त हुआ।

86
सैंकडों साल प्रतीक्षा करने के बाद भी, जो कार्य नहीं हो पाता, वह इन दस सालों में हुआ है*

3 मई, 1936 के दिन नागपूर म्युनिसिपालिटी के मानपत्र समारोह के बाद शाम के समय नागपूर के अस्पृश्य बंधुओं की कस्तुरचंद पार्क में सार्वजनिक सभा हुई। उस सभा में हजारों भाई–बहन उपस्थित थे। पूरे नागपूर शहर में डॉ. अम्बेडकर के जयकार की गूंज रही थी। डॉ. बाबासाहेब पर टीकास्त्र चलाने वाले आलोचक और नेता नागपूर से गायब हो गए थे। उनका कहीं अता–पता नहीं था। डॉक्टर साहब के प्रेम के, उन पर के भरोसे के कारण अपना सब कुछ भूल कर कार्य करने के लिए तत्पर हुआ हजारों का अस्पृश्य जन समुदाय डॉक्टर साहब का भाषण सुनने के लिए उत्सुक हुआ था। डॉक्टर साहब जब भाषण करने के लिए मंच पर पधारे तब तालियों की गड़गड़ाहट और उनके नाम की जयकार से करीब पांच मिनट तक वातावरण गूंजता रहा।

डॉ. बाबासाहेब ने अपने भाषण में पिछले दस सालों में आंदोलन के कारण अस्पृश्य समाज में आए बदलावों का सिंहावलोकन किया। उन्होंने में कहा,

"सैंकड़ों सालों तक प्रतीक्षा करने के बाद भी जो काम नहीं हो पाता, वह दस वर्षों की इस अल्पावधि में हुआ है। यह सब काम केवल अपने स्वाभिमान के और अपनी आत्मनिर्भरता के आंदोलन के कारण ही हुआ है। काँग्रेस की तरह हमारे पास पैसा नहीं है। सार्वजनिक रूप से काम करने के लिए हमारे पास काँग्रेस की तरह अन्यों का समर्थन भी नहीं। इतनी सारी दिक्कतों को पार करते हुए हमने पिछले दस सालों में अपने आंदोलन को बहुत व्यापक बना दिया है। यह सब हो पाया है, आपके प्रेम के कारण, काम करने की आपकी आतुरता के कारण। पिछले दस सालों में यह आपके दृढ़ संकल्प से चमत्कार हुआ है, जिसके कारण पूरे समाज को, काँग्रेस को भी, अस्पृश्यों की धाक माननी पड़ी है। इसका कारण है आपके द्वारा दिखाई गई एकता। कुछ लोगों का अपवाद अगर छोड़ भी दें तो हमने जो एकता दिखाई है उसके कारण बाकी समाज की नजर में हमारा राजनीतिक महत्व बढ़ा है। धर्म परिवर्तन की हमने जबसे घोषणा की है तब से मुसलमान, सिक्ख और ईसाइयों के मुंह में पानी आया हुआ है और वे हमारी दाढ़ी तक छूने के लिए, मिन्नतें करने को तैयार हुए हैं। आज तक हमने जो एकता दिखाई है, उसे हमें कायम रखना होगा,

*'जनता' 23 मई, 1936

जिससे कि हिंदू धर्म से अलग होने के अपने ध्येय को हम पा सकेंगे।

हाल ही में जोधपूर और गुजरात में स्पृश्य हिंदुओं ने अस्पृश्यों पर भयंकर अत्याचार किए हैं। अत्याचार की यह गुलामी अगर नष्ट करनी हो तो धर्मांतरण के बगैर हमारे सामने कोई और चारा नहीं है। हिंदुओं को यदि अंग्रेज डोमिनियन स्टेटस दे रहे हैं फिर भी अगर वे अंग्रेजों के राज्य में नहीं रहना चाहते तो हम क्यों हिंदुओं के राज्य में रहें? एक पेड़ के नीचे दूसरा पेड़ पनपता नहीं। उसे सूरज की रोशनी जब तक नहीं मिलती वह बढ़ेगा नहीं। हिंदू धर्म के इस जीर्ण वृक्ष के नीचे हमारा विकास संभव नहीं है। इसीलिए हम धर्म परिवर्तन करेंगे ही।"

इस सभा में भी मुसलमान लोगों की अधिक उपस्थिति थी। कुछ मुसलमान सभास्थल के पड़ोस में नमाज पढ़ रहे थे। इसी तरह, सुनने में आया है, अस्पृश्य नेताओं को डॉ. अम्बेडकर के कार्यक्रम के लिए जिन मोटरों की जरूरत थी वे अन्य धर्म के लोगों ने, ईसाई पादरियों और मुसलमान नेताओं ने बड़े आनंद के साथ उपलब्ध कराई । इस सभा में एक भी प्रमुख हिंदू नेता या धर्मांतरण विरोधक अस्पृश्य कार्यकर्ता उपस्थित नहीं था।

87

जिस धर्म में समता, प्रेम और अपनापन नहीं, वह धर्म, धर्म ही नहीं है*

सोमवार, 4 मई, 1936 का दिन अमरावती के अस्पृश्य बंधुओं को सुवर्ण दिन के समान लगा। उस दिन अस्पृश्य समाज के सर्वश्रेष्ठ नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के स्वागत में रेस्ट हाऊस से लेकर नेकोलेट पार्क तक का पूरा रास्ता रंगीन लता पताकाओं से सजा था। गर्मी–प्यास की परवाह किए बगैर हजारों अस्पृश्य बंधु–भगिनी स्टेशन पर डॉक्टर साहब के स्वागत के लिए उपस्थित थे। स्टेशन से लेकर रेस्ट हाऊस तक बैंड के सुमधुर संगीत और लोगों द्वारा उनके नाम की जयध्वनि के साथ उनका जुलूस निकाला गया। शाम छह–सात बजे के करीब नागपुर कैंप म्युनिसिपालिटी के सचिव श्री मेश्राम की अध्यक्षता में सार्वजनिक सभा हुई। पहले स्वागत में कुछ पद्य गाए गए। उसके बाद स्वागताध्यक्ष श्री एस. जी. नाईक एम. एल. सी. के हाथों अमरावती जिले की अलग–अलग संस्थाओं की ओर से करीब–करीब 75 फूलमालाएं और गुलदस्ते डॉ. बाबासाहेब को अर्पण किए गए। स्वागताध्यक्ष की विनती के बाद डॉ. बाबासाहेब भाषण के लिए खड़े हुए तो तालियों की गड़गड़ाहट हुई। यात्रा के दौरान डॉ. बाबासाहेब की सेहत बिगड़ गई थी, और उनका गला खराब था। इसके बावजूद वे बोले। उन्होंने अपने भाषण में कहा,

"सात–आठ सालों के बाद मैं अमरावती आ रहा हूं। पिछली बार अंबादेवी के सत्याग्रह में मैं आया था। उस समय मेरे अस्पृश्य बंधुओं की सत्याग्रह करने की बिल्कुल तैयारी नहीं थी। सत्याग्रह कर जेल में जाने के लिए केवल छह लोग तैयार हुए थे। आज वह स्थिति पलट गई है, यह देख कर मुझे बड़ी खुशी हो रही है। यहां आने से पहले गांधी ने मिलने के लिए मुझे वर्धा बुलाया था। मैं जब वहां गया था तो जमनालाल बजाज मुझे अपनी मालिकियत वाला लक्ष्मीनारायण का मंदिर दिखाने ले गए, जो उन्होंने अस्पृश्यों के लिए खोला था। मैंने मंदिर में प्रवेश किया और जब बाहर आया तो मेरी अस्पृश्यता पहले जैसी बरकरार थी। क्योंकि, उस मंदिर में पूजा करने के लिए फूल और पानी की जरूरत होती है, और वे हमारे लिए उपलब्ध नहीं थे। उस मंदिर में पूजा के लिए जरूरी फूल और पानी अगर हमारे लिए उपलब्ध नहीं हैं, तो फिर हम मंदिर में जाकर पूजा करेंगे कैसे? हमारी अस्पृश्यता नष्ट कैसे होगी? पहले मंदिर को लेकर सत्याग्रह करने में हमें जितना आनंद मिलता था, अब उतना ही तिरस्कार हमें इस विषय को लेकर महसूस होता है। गांधी ने जब स्वराज

---

*'जनता' 16 मई, 1936

का सवाल उठाया तभी हमने उन्हें चेताया था कि अस्पृश्यता के सवाल की तरफ दुर्लक्ष, अनदेखी ना करें। लेकिन अस्पृश्यता का सवाल स्वराज्य का एक अंग है, कह कर वह चुप रहे। एक बात हमारी समझ में नहीं आती कि, हमने धर्म परिवर्तन की घोषणा की तो हिंदुओं को उस पर आपत्ति क्यों हो? हिंदू धर्म अगर हमें हिंदू कहने के लिए तैयार नहीं है, तो हम खुद को हिंदू क्यों कहलाएं? जिस धर्म में समता, प्रेम और अपनत्व की भावना नहीं हैं, उस धर्म को मैं धर्म कहने के लिए तैयार नहीं हूं। दो हजार साल पहले हमारे पूर्वज अज्ञानी थे। किसी भी तरह की विद्या प्राप्त करने की या शस्त्र हाथ में धरने की उन्हें अनुमति नहीं थी। इसीलिए कोई नया काम करने का साहस उनमें नहीं था। अज्ञान के कारण उनका मन मार कर उन्हें कमजोर बना दिया गया था। उन्होंने चार वर्णों के चौखटे में हिंदू धर्म को बिठा रखा है। इसी वर्णव्यवस्था के कारण अगर हम ब्राह्मणों से अव्वल हुए तब भी हमें गुलामी के काम ही करने होते थे। इसी गुलामी की वजह से हमारे पूर्वज अपना स्वाभिमान पूरी तरह भूल गए। लेकिन आज स्थितियां बदल गई हैं। इस स्थिति में हिंदू धर्म के अनुदार चौखटे में हमसे रहा नहीं जा सकता। इसीलिए हमें यह धर्मांतरण की घोषणा करनी पड़ रही है।”

इसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को फूलों की मालाएं अर्पण कर उनके प्रति आभार व्यक्त किया गया। सभा जयघोष के बीच संपन्न हुई।

88

अपने मिट्टी के मोल जीवन को सोने जैसे दिन प्राप्त हों, इसलिए धर्मांतरण की आवश्यकता है*

रविवार 17 मई, 1936 के दिन कल्याण में डॉ बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में अस्पृश्य माने गए समाज का बहुत बड़ा सम्मेलन हुआ। यह सम्मेलन धर्म परिवर्तन की घोषणा को सार्वजनिक समर्थन देने के लिए ठाणे जिले के पूर्व और दक्षिण हिस्से के अस्पृश्यों द्वारा आयोजित किया गया था। परिषद के अध्यक्ष डॉ. अम्बेडकर मुंबई से आने वाले थे। इस बारे में पंफलेटों/हैंडबिल के जरिए पहले ही लोगों को सूचना दी गई थी। इसीलिए, डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को देखने की उत्सुकता से सौ–सवासौ गांवों से आया करीब तीन–चार हजार का अस्पृश्य जनसमुदाय स्टेशन के बाहर उनकी गाड़ी के आने का इंतजार करते हुए खड़ा था। दोपहर 3 बजे डॉ. बाबासाहेब के कल्याण स्टेशन पर उतरते ही वहां के प्रमुख कार्यकर्त्ताओं ने फूलों की माला पहना कर उनका स्वागत किया।

स्टेशन से बाहर निकलते ही – 'डॉ. अम्बेडकरकी जय', 'अम्बेडकर जिंदाबाद', 'थोड़े दिन में भीमराज' आदि घोषणाओं से वातावरण गूंज उठा। दर्शनोत्सुक समाज का अंतःकरण डॉ. बाबासाहेब के दर्शन से आनंद से भर आया उन्हें देख कर लोगों में नवचेतना का संचार हुआ। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का शहर के प्रमुख हिस्सों से बड़ा जुलूस निकाला गया। जुलूस के दोनों तरफ स्वयंसेवकों के जथे बड़े अनुशासन से डॉ. बाबासाहेब का जयघोष करते चले थे। जुलूस के आगे बैंड, बाजे बज रहे थे। जुलूस के बीच बीच में विभिन्न अखाड़ों से आए लोग अलग–अलग खेल दिखा रहे थे। जनता के उस प्रेम को, स्वाभिमान को देख कर देखने वाला निश्चय ही धन्यता महसूस करता।

सम्मेलन में अपने भाषण के दौरान डॉ. अम्बेडकर ने धर्म परिवर्तन के बारे में थोड़ा खुलासा किया। उन्होंने अपने भाषण में कहा,

"मैं धर्मांतरण के बारे में क्या कहता हूं, यह सुनने के लिए आज आप खासकर यहां आए हैं। इसलिए इस बारे में मुझे विस्तार से बोलना पड़ेगा। कुछ लोग सवाल पूछते हैं कि हम धर्म परिवर्तन क्यों करें? इस पर मैं एक प्रश्न उन लोगों से पूछना चाहता हूं कि, धर्मांतरण क्यों न करें? धर्म परिवर्तन क्यों करें इस सवाल का जवाब मैं अपनी जिंदगी में घटी घटनाओं के सहारे आपको बता सकता हूं। मेरी ही तरह आपके

---

*'जनता', 23 मई, 1936

जीवन में भी ऐसी घटनाएं घटी होंगी। जिन कारणों से धर्म परिवर्तन करने का निर्णय मैंने लिया, उन्हें आप पर सिद्ध कर दिखाने के लिए मुझे अपने जीवन में घटी कुछ घटनाओं के बारे में बताना होगा। ये ऐसी घटनाएं हैं, जिन्होंने मेरे मन पर हमेशा के लिए छाप छोड़ी है। आज मैं उनमें से दो–तीन बातें आपको बताने वाला हूं।

मेरा जन्म इंदौर के महू में हुआ। उस समय मेरे पिताजी सेना में थे। वे सुभेदार के पद पर तैनात थे। सेना के साथ ही हम लोग रहते थे, इसलिए बाहर की दुनिया से हमारा कोई संपर्क नहीं था। इसीलिए अस्पृश्यता के बारे में मुझे कोई जानकारी नहीं थी। पिताजी ने जब अवकाश प्राप्त किया तब हम सब सातारा में आकर रहे। मैं पांच साल का था तभी मेरी मां गुजर गई। सातारा जिले में गोरेगाव में अकाल पड़ा था इसलिए सरकार ने अकाल के कुछ काम निकाले थे। उस समय एक तालाब बनाया गया। इस तालाब का काम करने वाले मजदूरों को तनख्वाह बांटने के काम पर मेरे पिताजी की नियुक्ति की गई। हम चार बच्चे सातारा में रहते थे और अपने काम के कारण पिताजी गोरे गांव गए। करीब–करीब चार–पांच साल हमने केवल चावल खाकर बिताए। सातारा आने के बाद हमें अस्पृश्यता के बारे में अहसास होने लगा। सबसे पहली बात मुझे याद है कि हमारे बाल काटने के लिए नाई नहीं मिल रहा था। हम बड़ी मुश्किल में फंसे। फिर मेरी बड़ी बहन ने हम सबको बरामदे में बैठा कर बाल काटना शुरू किया। वह अभी भी जीवित हैं। सातारा में इतने नाई होते हुए भी वे हमारी हजामत क्यों नहीं करते, यह मुझे पहली बार पता चला। दूसरा वाकया था – गोरेगांव में थे तब हमारे पिताजी हमें खत लिखा करते थे। उन्होंने एक बार हमें 'गोरेगांव आओ' इस आशय का खत भेजा था। हम रेल में बैठ कर गोरेगाव जाएंगे, इस बात से मैं बहुत खुश था। तब तक मैंने रेल देखी नहीं थी। पिताजी के भेजे पैसों से हमने अच्छे कपड़े बनवाए। फिर मैं, मेरा भाई तथा बहन के बच्चे, हम सब पिताजी से मिलने निकले। निकलने से पहले पिताजी के नाम खत भेजा था लेकिन नौकर की लापरवाही के कारण वह उन्हें मिला नहीं था। इसलिए हम गोरेगांव कब पहुंच रहे हैं, यह उन्हें पता नहीं चला। हम लोग खुश थे कि हमें लेने के लिए पिताजी नौकर भेजेंगे। लेकिन हमें निराश होना पड़ा। रेल से उतरकर हमने नौकर की राह देखी। मेरे कपड़े ब्राह्मणों की तरह थे। गाड़ी आकर निकल गई। आधे–पौने घंटे तक हम स्टेशन पर खड़े इंतजार करते रहे। स्टेशन पर हमारे अलावा कोई नहीं था। हम सब बच्चे ही थे इसलिए स्टेशन मास्टर हमारे पास आकर हमसे पूछने लगा कि आप कौन हैं? आपको कहां जाना है? वगैरा। 'हम महार हैं', कहते ही स्टेशन मास्टर को जैसे करंट लग गया हो। बिदक कर वह पांच–छह कदम पीछे हटा। इसके बावजूद हमारे कपड़ों के कारण हम अच्छे खाते–पीते घर के महार हैं, यह उसने पहचाना। हमारे लिए गाड़ी बुला देने का निर्णय उन्होंने लिया। लेकिन

शाम के छह–सात बजे तक कोई गाड़ी वाला हमें इसलिए ले जाने के लिए तैयार नहीं हुआ, क्योंकि हम महार थे। आखिर एक गाड़ी वाला तैयार हुआ लेकिन उसने एक शर्त रखी कि वह खुद गाड़ी नहीं चलाएगा। सेना में रह चुका था, इसलिए गाड़ी हांक कर ले चलना मुझे कठिन नहीं लगा। हम मान गए, तब गाड़ी वाला अपनी गाड़ी लेकर आया। फिर हम गोरेगांव की राह पर चल पड़े। गांव से बाहर काफी दूरी पर एक नाला था। 'आप लोग यहीं रोटी खा लीजिए, आगे आप लोगों को पीने का पानी नहीं मिलेगा', गाड़ी वाले ने कहा। हम नीचे उतरे, हमने रोटियां खाई। नाले का पानी इतना गंदा था, उसमें बडी मात्रा में गोबर मिला हुआ था। इतने में गाडी वान कहीं से रोटी खाकर आया। फिर हमारी गाड़ी चलने लगी। काफी रात बीतने के बाद गाड़ी वाला धीमे से गाड़ी में आकर बैठा। रास्ते पर कोई रोशनी नहीं थी, कोई आदमी नहीं। हमें रोना आ गया। इस तरह रात के बारह बजने तक हमने सब्र किया। मन में तरह–तरह के खयाल आ–जा रहे थे। लगा कि हम कभी भी गोरेगांव नहीं पहुंचेंगे। इतने में एक टोल नाके पर हमारी गाड़ी पहुंची। हम सब उसमें से फटाफट कूदे। रोटी खाने के लिए टोल नाके के आदमी से पूछताछ की। मैं पर्शियन भाषा अच्छी तरह से जानता था, इसलिए उस आदमी से बोलने में कोई कठिनाई नहीं आई। लेकिन उसने मुझे बड़े ही घमंडपूर्ण तरीके से जवाब दिए और पानी के बारे में पूछने पर सामने वाले पहाड़ की तरफ हाथ दिखाया। आखिर जैसे तैसे हमने टोल नाके पर रात बिताई। सुबह फिर से गाड़ी से निकले और दोपहर में अधमरी सी हालत में गोरेगांव आकर पहुंचे।

मेरे जीवन की जो तीसरी घटना मैं आपको बताने वाला हूं वह बड़ौदा सरकार के यहां मेंने जो नौकरी की थी, उससे संबंधित है। बड़ौदा सरकार से स्कॉलरशिप मिलने के बाद मैंने विदेश जाकर उच्च शिक्षा ली। वहां से लौटने के बाद मुझे स्कॉलरशिप की शर्त के मुताबिक बड़ौदा संस्थान में नौकरी करनी थी। लेकिन बड़ौदा में रहने के लिए मुझे एक भी घर नहीं मिला। हिंदू अथवा मुसलमान कोई भी मुझे रहने की जगह देने के लिए तैयार नहीं था। आखिर पार्सी बन कर एक पार्सी सराय में रुकने की सोची। विलायत से लौटा तब मैं गोरा और रौबदार दिखाई देने लगा था। आखिर मैं एदलजी सोराबजी के नाम से एक पार्सी सराय में रहने लगा। रोज के दो रुपयों के हिसाब से सराय का रखवालदार मुझे वहां रहने के लिए जगह देने को तैयार हुआ। इससे पहले ही बड़ौदा संस्थान के मालिक एक पढ़ा–लिखा महार का बच्चा ले आए हैं, यह बात लोगों में फैल चुकी थी। मैं पार्सी बन कर सराय में ठहरा था, इस बात से लोगों को मुझ पर शक हुआ और आखिर मैं ही वह हूं इस बात का उन्हें पता चला। दूसरे दिन मैं खाना खाकर दफ्तर जाने के लिए तैयार हुआ था, तभी पंद्रह–बीस पार्सी लोग हाथ में लाठियां लेकर मुझे मार डालने के इरादे से आ

गए। उन्होंने पहले मुझसे पूछा, 'कौन हो तुम?' मैंने सिर्फ, 'मैं हिंदू हूं', यह जवाब दिया। लेकिन इस जवाब से उनकी तसल्ली नहीं हुई। उन्होंने तू-तू मैं-मैं करते हुए मुझसे तुरंत उस जगह को खाली करने के लिए कहा। अपने धीरज का तब मुझे बड़ा सहारा मिला। मैंने बिना डरे उनसे आठ घंटे की मोहलत मांगी। पूरा दिन मैं अपने लिए रहने की जगह खोजता रहा, लेकिन मुझे कहीं भी रहने लायक जगह नहीं मिली। कई दोस्तों के यहां गया। सबने कोई ना कोई कारण बता कर मुझे चलता कर दिया। मैं आखिर इस कदर ऊब गया कि आगे क्या किया जाए, यही मेरी समझ में नहीं आया। एक जगह मैं नीचे बैठ गया। मेरा मन बड़ा दुखी था। आंखों से आंसुओं की धारा बहने लगी। (उस समय को याद कर अब भाषण देते हुए डॉ. बाबासाहेब की आंखों से आंसू बहने लगे। अस्पृश्यता की अग्नि से उनका अंतःकरण झुलस–सा गया था।) आखिर कोई इलाज न पाकर बड़ौदा की नौकरी छोड़ कर रातों–रात मुझे मुंबई आना पड़ा। मेरे साथ जो कुछ गुजरा कुछ वैसा ही आप लोगों के साथ भी कई बार हुआ होगा। इसीलिए कहता हूं कि जिस समाज में इंसानियत नहीं, हमारे लिए कोई जगह नहीं उस समाज में बिना–वजह मानहानि झेलते हुए रहने का कोई मतलब नहीं। ऐसे निर्दयी धर्म में जो रहेगा वह गुलाम है। जो इंसानियत चाहता है, वह इस शैतानी धर्म में नहीं रहेगा।

मेरे बाप–दादा हिंदू धर्म में रहे, लेकिन वे पढ़–लिख नहीं पाए। उन्हें हाथ में हथियार लेने की इजाजत धर्म ने नहीं दी थी। संपत्ति कमाना, धर्म के नियमों के अनुसार उनके लिए असंभव था। इस कारण हमारे बाप–दादाओं के लिए ये तीनों चीजें कमाना असंभव हुआ। उच्च शिक्षा लेते समय मुझे संस्कृत भाषा सीखनी थी। लेकिन धर्म के बंधनों के कारण उस समय वह मेरे लिए संभव नहीं हो पाया। लेकिन अब समय बदल चुका है। अब विद्या पाना, संपत्ति कमाना और हथियार धारण करना हमारे लिए मुमकिन है। ऐसी स्थितियों में जिस धर्म ने आपके बाप–दादाओं को गुलामी में तड़पाया, किसी भी बेहतर स्थति का फायदा न उठाने देकर आपको अज्ञान और दरिद्रता में रहने के लिए विवश किया, उस हिंदू धर्म की परवाह आप क्यों करते हैं? अपने बाप–दादाओं की तरह ही आपको भी अगर उसी निर्बल, स्वाभिमानशून्य स्थिति में ही जीवन बिताना हो तो आपसे कोई कुछ कहेगा नहीं। आपकी कोई परवाह भी नहीं करेगा। आज धर्म परिवर्तन का जो महत्व है, वह इसी वजह से है। हिंदू धर्म में रहने से आपको हमेशा गुलाम का ही दर्जा मिलेगा। मैं भले अस्पृश्य रहूं, लेकिन एक हिंदू आदमी जो कुछ कर सकता है वह सब मैं कर सकता हूं। मेरे हित या अहित का सवाल मेरे हिंदू धर्म में रहने या न रहने से हल नहीं होगा। आज की हालत में मैं हाईकोर्ट का जज बन सकता हूं। विधिमंडल में मैं मंत्री भी बन सकता हूं। लेकिन केवल आप लोगों की खातिर, इंसानियत की खातिर आज मुझे धर्मांतरण

करना जरूरी लग रहा है। अपने मिट्टी के मोल जीवन को सोने के दिन दिखाने के लिए मुझे धर्म परिवर्तन करना जरूरी लग रहा है। आपकी हालत में सुधार लाने के लिए मुझे अपने सहयोगी दोस्तों से जरूर सहायता मिलेगी इसका मुझे यकीन है। आपको काबिल बनाने के लिए मुझे धर्म परिवर्तन करना है। अपने हित के बारे में चिंता करने की मुझे कोई जरूरत नहीं है, उस बारे में मैं बिल्कुल बेफिकर हूं। आज मैं जो कुछ भी कर रहा हूं वह आप लोगों के हित के लिए कर रहा हूं। मुझे आप ईश्वर मानते हैं। लेकिन मैं ईश्वर नहीं हूं। मैं आप ही की तरह एक इंसान हूं। मुझसे आप जो भी मदद पाना चाहते हैं, वह देने के लिए मैं तैयार हूं। मैंने तय किया है कि आपकी आज की जो हालत है, उससे मैं आपको मुक्ति दिला दूं। मैं अपने लिए कुछ नहीं कर रहा। आपको काबिल बनाने की कोशिशें मैं बस करता रहूंगा। आप अपने हालात के बारे में जान लीजिए। मैं जो राह दिखा रहा हूं उसे अपनाइए। इससे आपका हित साध्य होगा और आपकी काबिलियत सामने आएगी।

89
'मुक्ति कोन पथे?'

13 अक्तूबर, 1935 को येवले में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने ऐतिहासिक घोषणा की कि, "मैं अस्पृश्य हिंदू का दाग लेकर पैदा हुआ, लेकिन यह बात मेरे बस में नहीं थी। किंतु, हिंदू कहलाते हुए मैं मरूंगा नहीं, यह बात मेरे बस में है।" उनकी इस घोषणा से हिंदू तथा अन्य धर्म के लोग हकबकाते हुए जाग गए। उनकी कही बात पर अनुकूल तथा प्रतिकूल प्रतिक्रियाएं आने लगी थीं। इस बारे में सभी आयामों से सोच–विचार कर डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने आगे की कार्रवाई की रूपरेखा तय करने के लिए अखिल मुंबई इलाका महार परिषद की ओर से मुंबई में दिनांक 30, 31 मई और 1 जून, 1936 को परिषद का आयोजन किया था। इसी अवसर पर मुंबई इलाका संत समाज की परिषद, मुंबई इलाका मातंग परिषद और राजकीय परिषद का आयोजन भी किया गया था। इस अवसर पर प्रकाशित किए गए पत्रक, कार्यक्रम की जानकारी और डॉ. बाबासाहेब के भाषण यहां दे रहे हैं। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के आमूलाग्र समाज परिवर्तन की क्रांति में इन सभी परिषदों का असाधारण और ऐतिहासिक महत्त्व है।

'मुक्ति कोन पथे?' – इस प्रमुख भाषण के बाद मुंबई इलाका अस्पृश्य संत समाज की परिषद, राजकीय परिषद और मुंबई इलाका मातंग परिषद में हुए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के भाषण आगे इसी अनुक्रम से अलग से दिए जा रहे हैं –संपादक)

अखिल मुंबई इलाका महार परिषद आयोजित करने के पीछे की भूमिका व्यक्त करने वाला पत्रक इस प्रकार था –

अखिल अस्पृश्यों के इकलौते नेता, दीनबंधु डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने दिनांक 13 अक्तूबर, 1935 के दिन नासिक जिले के येवले में हुई परिषद में कहा कि, हिंदू धर्म की समाज रचना विषमता की नींव पर खड़ी है, इसलिए हिंदू के रूप में हम इंसानियत के अधिकार पाने के लिए भले कितनी भी कोशिशें क्यों न करें हमें सफलता मिलना मुमकिन नहीं है। आपने महाड, नासिक और अन्य जगहों पर सत्याग्रह करके समानता के अधिकार पाने के लिए कड़ी और जोरदार कोशिश की, लेकिन इस कोशिश में हमारा पैसा और मेहनत ही बर्बाद हुई। सफलता तो मिली ही नहीं, उल्टे हमारे बंधु–बांधवों को गांव–गांव में तरह–तरह के अत्याचार/कष्ट भी सहन करने पड़े, और अभी तक करने पड़ रहे हैं। इसीलिए, अगर आप इंसान के रूप में जीवन बिताना चाहते हैं तो हमें इस हिंदू धर्म से अलग होना चाहिए। यानि, हमें धर्म परिवर्तन करना चाहिए। इसी में हम सभी अस्पृश्यों का कल्याण समाया हुआ है।

अस्पृश्यों के धर्म परिवर्तन का सवाल बहुत ही महत्वपूर्ण है। इस समस्या से संबंधित अस्पृश्यों की नीति तय करना अस्पृश्यों का कर्त्तव्य ही नहीं, अपितु यह उनकी जिम्मेदारी है। डॉ. बाबासाहेब के मतानुसार, अस्पृश्यों की अलग–अलग जातियों की अलग–अलग परिषदें आयोजित कर उसमें इस सवाल पर विचार किया जा सकता है, और अस्पृश्य जनता का इस बारे में, क्या सोच है, क्या विचार है, यह जाना जा सकता है।

इस सूचना के अनुसार मुंबई इलाके के सभी महार भाई–बहनों को विनती पूर्वक सूचित किया जाता है कि मुंबई इलाके के सभी महारों की प्रातिनिधिक स्वरूप की एक परिषद मुंबई शहर में अगले मई महीने में आयोजित करना तय हुआ है। परिषद में अपने परमपूज्य नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने धर्म परिवर्तन के बारे में जो घोषणा की है, उस संदर्भ में हमारे समाज की नीति क्या होनी चाहिए, इस संदर्भ में निर्णय लिया जाएगा। इसीलिए इस परिषद में हिस्सा लेने के लिए, हर जिले से, तहसील से, और हर गांव से अपने प्रतिनिधियों को भेज कर परिषद को सफल बनाएंगे, ऐसी मैं उम्मीद करता हूं।

अपना यह काम बहुत बड़ा और महत्त्वपूर्ण होने की वजह से इस काम में पैसों की और लोगों की भी बहुत जरूरत है। इसीलिए, मुंबई शहर के रहने वालों के लिए और इलाके के अखिल महार बंधू–भगिनियों से आग्रह के साथ विनती की जाती है, कि वे आपसी, निजी मतभेद भुला कर, एक साथ इस समारोह में भाग लेकर परिषद को सफल बनाएं।

विशेष सूचना – परिषद के लिए चंदा अथवा दान देना हो तो अथवा कुछ सूचना या अन्य पत्राचार करना हो तो यहां दिए जा रहे पते पर ही करें –

संयुक्त सचिव – अखिल मुंबई इलाका महार परिषद, दामोदर हॉल, परेल, मुंबई नं. 12 याद रहे : छपी हुई रसीद लिए बगैर चंदा न दें।

आपके विनम्र,

अध्यक्ष : रेवजी दगडूजी डोलस, उपाध्यक्ष : संभाजी तुकाराम गायकवाड,

संयुक्त सचिव : दिवाकर नेवजी पगारे, मारुती विठ्ठल घमरे, चांगदेव नारायण मोहिते।

कोषाध्यक्ष : सुभेदार विश्राम गंगाधर सवादकर[1]

1. 'जनता', 29 फरवरी, 1936

उपरोक्त भूमिका को स्वीकार कर महार परिषद, संत समाज परिषद और मातंग परिषद आयोजित की गई थीं। आयोजकों ने अपने कार्यक्रमों के अलग–अलग पत्रक निकाले थे। वे इस प्रकार थे –

अखिल मुंबई इलाका महार परिषद, मुंबई

अध्यक्ष : – मे. बी. एस. वेंकटराव उर्फ हैद्राबादी आंबेडकर

शनिवार, रविवार और सोमवार दिनांक 30–31 मई, 1 जून, 1936.

जगह : – कामगार मैदान, परेल, मुंबई नं. 12

जैसा कि इससे पूर्व घोषित किया गया था, अखिल मुंबई इलाका महार परिषद का पूरा कार्यक्रम अगले अंक में दिया जाएगा। इस परिषद में धर्म परिवर्तन के बारे में मुंबई इलाके के महार समाज की नीति तय की जाने वाली है। उसके अनुसार ही महार समाज के हित में सभी मामलों पर सोच–विचार कर अगले कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार की जाएगी।

आगे चल कर इस परिषद के विषय में इतिहास में स्वर्णाक्षरों से लिखा जाएगा। इसीलिए, हर महार बंधू–भगिनी इस परिषद में उपस्थित रह कर अपनी सक्रिय सहानुभूति व्यक्त करें। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर चाहते हैं कि यह परिषद प्रातिनिधिक स्वरूप की होनी चाहिए। इसलिए अलग–अलग जगह के महार समाज को चाहिए कि वे अपने प्रतिनिधि तुरंत निश्चित कर उनके नाम–पते भेजें। बाहर से आने वाले लोग अपना चंदा, परिषद के बारे में सूचना, प्रस्ताव आदि नीचे दिए जा रहे पते पर भेजें अथवा प्रत्यक्ष संपर्क करें।

खास सूचना : बाहर से आने वाले लोगों के रहने और खाने का प्रबंध स्वागतमंडल की ओर से किया गया है। परिषद के तीनों दिनों का मिला कर भोजन और रहने का चंदा एक रुपया रखा गया है। जो लोग इस सुविधा का लाभ लेना चाहते हैं, वे आगे दिए जा रहे पते पर संपर्क करें। और दिनांक 28–5–1936 तक अपने नाम दर्ज करवाएं।

परिषद के लिए चंदा इस प्रकार रखा गया है –

1. स्वागत मंडल के सदस्य : रु. 5; (2) सहयोगी सदस्य : रु. 3; (3) बाहर गांव से आने वाले सदस्यों के लिए स्वागत मंडल के सदस्य : रु. 3; (4) साधारण सहकारी सदस्य : रु. 2; (5) सर्वसाधारण सदस्य रु. 1; (6) महिलाएं : केवल आठ आने।

मुंबई इलाका महार परिषद के मंडप के अन्य कार्यक्रम

शनिवार दिनांक 30 मई, 1936 : शाम 4 से 5.30 'अध्यक्ष का जुलूस' 'राजगृह' दादर से लेकर सभा मंडप तक। 5.30 से 6 बजे तक : स्वयंसेवकों की तरफ से डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और अध्यक्ष को सलामी। 6 से 9 बजे तक (1) स्वागत पद्य; (2) स्वागताध्यक्ष का भाषण; (3) अध्यक्ष का भाषण। रात 9.30 से 10.30 भोजनावकाश। 10.30 –11.30 विषय तय करने वाली कमेटी की बैठक। 11.45 से मनोरंजन के विभिन्न कार्यक्रम।

रविवार दिनांक 31 मई, 1936 – सुबह 8–11 (1) स्वागत पदों का प्रस्तुतिकरण; (2) डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण। 11 से 2 भोजन और आराम। दोपहर 2–4 विषय तय करनेवाली कमिटी की बैठक। शाम 5 से 8.30 – प्रस्ताव आदि। रात 9 बजे से मनोरंजन के कार्यक्रम। अध्यक्ष के प्रति आभार प्रकट करना और परिषद का विसर्जन।

सोमवार दिनांक 1–6–36 के दिन डॉ. बाबासाहेब की अध्यक्षता में सुबह 8 से 11.30 तक संत समाज की परिषद। शाम 5 से 8.30 राजकीय परिषद। रात 9 बजे श्री रेवजी दगडूजी डोलस को मुंबई शहरवासी अस्पृश्य समाज की ओर से मानपत्र और महार परिषद की बेहतर तरीके से मदद करने वालों को पुरस्कार और धन्यवाद ज्ञापन, अध्यक्ष का भाषण और परिषद का समापन।

आपके विनम्र

स्वागताध्यक्ष : रेवजी दगडूजी डोलस
उपाध्यक्ष : संभाजी तुकाराम गायकवाड़
संयुक्त सचिव : दिवाकर नेवजी पगारे, मारुती विठ्ठल धमरे, चांगदेव ना मोहिते
कोषाध्यक्ष : सुबेदार विश्राम गंगाराम सवादकर
पैसा और पत्र आदि भेजने का पता –
संयुक्त सचिव श्री दिवाकर नेवजी पगारे
अखिल मुंबई इलाका महार परिषद, दामोदर हॉल,
परेल, मुंबई नं. 12 [1]

1. 'जनता', 16 मई, 1936

मुंबई इलाका संत समाज की परिषद

अध्यक्ष – डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर
सोमवार, दिनांक 1 जून, 1936 के दिन
स्थान – महार परिषद का मंडप

धर्म परिवर्तन के सवाल के बारे में संत समाज की ओर से विचार–विमर्श किया जाएगा।

परिषद के बारे में विस्तार से जानकारी देने वाले पत्रक रवाना किए जा रहे हैं। सभी संत, साधु, नाथ, बैरागी आदि लोग इस परिषद में हिस्सा लें। पत्राचार आगे दिए जा रहे पते पर करें –

पता – उपाध्यक्ष – तारकनाथ विठ्ठलनाथ
फोरास रोड, सिमिंट चाल नं. 6, मुंबई नं. 8
स्वागताध्यक्ष – महंत शंकरदास नारायणदास बर्वे
ज. सचिव – काशिनाथ तुलसीनाथ महंत

मुंबई इलाका मातंग परिषद

अध्यक्ष – मे. लक्ष्मणराव बाबाजी भिंगारदेवे बी. ए. (ऑनर्स)
मंगलवार, दिनांक 2 जून, 1936
स्थान : महार परिषद का मंडप, नायगाव, मुंबई

इस परिषद में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के धर्म परिवर्तन के सवाल पर निर्णय लेने के उद्देश्य से विचार–विमर्श किया जाएगा।

परिषद के बारे में विस्तृत जानकारी सार्वजनिक पत्रक निकाल कर हमारे मातंग बंधुओं को दी जाएगी। अन्य पूछताछ के लिए आगे दिए जा रहे पते पर पत्राचार करें–

स्वागताध्यक्ष – विष्णू केशव वेतालजे
पता – महासचिव डी. सी. वायदंडे
मुंबई इलाका मातंग परिषद, नायगाव, बी. डी. चाल नं. 4, बी, प्लॉट, पहली मंजिल, खोली नं. 26 दादर–मुंबई[1]

---

1. 'जनता', 30 मई, 1936

"अखिल मुंबई इलाका महार परिषद, मुंबई"
अपूर्व एवं सफल अधिवेशन
सामुदायिक धर्म परिवर्तन को समर्थन

मुंबई इलाका महार परिषद का अधिवेशन दिनांक 30 मई, 1936 के दिन हैदराबाद संस्थान के प्रसिद्ध नेता श्री. बी. एस. वेंकटराव की अध्यक्षता में बड़ी धूमधाम से शुरू हुआ। इस परिषद के लिए दादर–नायगाव नुक्कड़ पर स्थित विस्तीर्ण मैदान पर 50 हजार से अधिक लोग आराम से बैठ सकें, इतना विशाल मंडप खड़ा किया गया था। इस विस्तीर्ण मंडप में महाड़ दरवाजा, नासिक दरवाजा और रमाबाई अम्बेडकर दरवाजा नाम से तीन बड़े दरवाजे बनाए गए थे। मंडप का नामकरण रमाबाई नगर किया गया था। मंडप में कुछ सूक्तियों वाली तख्तियां टंगी थीं जिन पर आगे दी जा रही सूक्तियों जैसी घोषणाएं लिखी हुई थीं –

- इंसानियत पाना चाहते हैं तो धर्म परिवर्तन करें। संगठन बनाना चाहते हों तो धर्म परिवर्तन करें।
- सामर्थ्य प्राप्त करना चाहते हैं तो धर्म परिवर्तन करें।
- समता प्राप्त करना चाहते हैं तो धर्म परिवर्तन करें।
- स्वतंत्रता प्राप्त करना चाहते हैं तो धर्म परिवर्तन करें।
- गृहस्थी को सुखकारी बनाना चाहते हैं तो धर्म परिवर्तन करें।
- जो धर्म आपके अंदर के इंसान का सम्मान नहीं करता, उस धर्म में आप क्यों रहते हैं?
- जो धर्म आपको मंदिर में प्रवेश नहीं देता, उस धर्म में आप क्यों रहते हैं?
- जो धर्म आपको पानी मिलने नहीं देता, उस धर्म में आप क्यों रहते हैं?
- जो धर्म आपको शिक्षा लेने नहीं देता, उस धर्म में आप क्यों रहते हैं?
- जो धर्म पग–पग पर आपकी मानहानि करता है, उस धर्म में आप क्यों रहते हैं?
- जो धर्म आपकी नौकरी के आड़े आता है, उस धर्म में आप क्यों रहते हैं?
- जिस धर्म में इंसान के साथ इंसानियत से पेश आना मना है वह धर्म नहीं बरजोरी (जुल्म, जबरदस्ती) की सजावट है।
- जिस धर्म में इंसान की इंसानियत पहचानना अधर्म माना जाता है, वह धर्म नहीं वह तो रोग है।
- जिस धर्म में अमंगल पशु का स्पर्श हो तो चलता है, लेकिन इंसान का स्पर्श नहीं चलता वह धर्म नहीं पागलपन है।
- जो धर्म बताता है कि समाज का एक वर्ग विद्या न प्राप्त करे, धनसंचय न करें,
- शस्त्रधारण न करें, वह धर्म नहीं इंसान के जीवन का विडंबन है।

- जो धर्म अनपढ़ लोगों को अनपढ़ ही रहने की, निर्धनों को निर्धन रहने की सीख देता है वह धर्म नहीं सजा है।
- सबमें एक ही ईश्वर होता है, कहने वाले लेकिन इंसान को पशु के समान मानने वाले लोग पाखंडी हैं, उनके साथ न रहें।
- चींटियों को चीनी देने वाले और इंसानों को बिना पानी के मारने वाले लोग पाखंडी हैं, उनके साथ न रहें।

आज तक तेरी सत्ता में था!!
तुमने खूब की प्रताड़ना!!

पांच सौ लोग बड़े आराम से बैठ सकें इतना वह मंच विशाल था। मंडप पर समता के झंडे फहर रहे थे। सभी श्रोता भाषण अच्छी तरह सुन सकें इसलिए माइक्रोफोन लगाए गए थे।

सुभेदार विश्राम सवादकर जी अपने समता सैनिक दल के 500 सैनिकों के साथ मंडप में सारी व्यवस्था चाक–चौबंद रखने के लिए तैयार खड़े थे। समता सैनिक दल का एक बैंड भी था। श्री बाबूराव पवार ने परिषद के लिए खास पुणे से पेंशनर मिलिट्री वालों का एक और बैंड मंगवाया था।

सम्मेलन का समय शाम 7 बजे का था। लेकिन शाम के चार बजे से ही प्रतिनिधि और प्रेक्षकों के 30 से 35 हजार के जमावड़े से मंडप पूरी तरह भर गया था। इस परिषद के लिए हर जिले से महार नेता अपने–अपने जिले के लोगों के साथ आए हुए थे। सातारा जिले से मे. बलवंत सखाराम सावंत, पिराजी संभाजी खरात, आर. एन. नलावडे, गणेश हरी खरात, नासिक जिले से श्री भाऊराव गायकवाड़, अमृतराव रणखांबे, श्री. दाणी, टी. एस. काले, पुंजाजी जाधव, कोलाबा जिले से बाबूराव भातणकर, गणपतबुवा जाधव, कुडवलकर, गोविंदराव वरधरकर, पुणे से मधाले, सुभेदार घाटगे, भोसले, बाबूराव पवार, नानासाहेब वाघमारे, नाथा महाराज (भंगी), शांताराम उपशाम, कर्नाटक से बलवंतराव वराले, ए. के. मालगे, मारुतीराव जोतीराव रावण, सोलापुर से एन. टी. बंदसोडे, जिवाप्पा ऐदाले, उद्धव धोंडो शिवशरण, बापूजी सर्वगौड, केरू रामचंद्र जाधव, माघाडे, हैदराबाद संस्थान के ग. नी. गायकवाड़, कांबले, पवार, अहमदनगर के पी. जी. रोहम, सूर्यवंशी, शंकरराव सालवी, ठाणे जिले के शिवराम गोपाल जाधव, बी. वी. दोंदे, भाऊ हरी पंडित, दामोदर हरी वसईकर, बी. डी. खंडे, खानदेश पूर्व के नेता दौलतरावजी जधव, त्रिंबक सेनू भालेराव, कालू विठू तायडे, लक्ष्मण पा. मेढे, नथुरावजी लोखंडे, जगन्नाथ खंडोजी बडगे, कालोजी तायडे, मोतीराम रावजी लोखंडे, भिकन गणूजी भैरुगे, शिवा रघुनाथ भास्कर, धर्माजी आबाजी बारभुवन, पश्चिम खानदेश से पुंडलिक तुकाराम बोराले, वी. टी. जाधव, महादेव

गणेश ऐदाले, सदाशिव लक्ष्मण गायकवाड़, तुलजाराम भिकाजी तलभंडारे, लक्ष्मणराव गायकवाड़, लक्ष्मणराव गजभिव, किसनराव वाघमारे, पाटोले, मुंबई के शिवतरकर मास्टर, सालवी, बोरवराकर, वनमाली, सोलंकी, वालिंजकर, शंकरराव वडवलकर, जनाबाई मोरे, सनुबाई सयाजी डावरे, भागिरथीबाई तांबे, अनुसयाबाई व्हावल, राजुबाई लक्ष्मणराव गायकवाड़, मिसेज सवादकर, बी. एस. सावंत, पी. एल. लोखंडे, पोलादपूर सुबे के. बी. टी. तांबे, रत्नागिरी के मुसाडकरबुवा, मोहिते मास्टर, राराम भोले, अर्जुनराव सालवी, जी. ओ. सी. जंजीरा संस्थान के महादेव खैरे, भोर संस्थान के गायकवाड़, भालेराव, सांगली संस्थान से कांबले, मोरे, जत संस्थान के ऐदाले, अक्कलकोट के जाधव, जवार संस्थान के पवार, गायकवाड़, जमखिंडी के वाघचौरे, खैरमोडे, औंध संस्थान के घाटगे, इंदौर से नगीना नाईक, महू से श्री लोखंडे, करडक, निले, प्रसिद्ध कीर्तनकार दिगंबर नागनाथ कांबले, राघू सया डुबल, वसंतराव भातणकर, आर एच अंडागले, जी. एस. दारोले, दादा पगारे मास्टर, रोकडे, संभाजी तुकाराम गायकवाड़, चांगदेव नारायण मोहिते, बाबाजी शिंदे, रामचंद्र वाघचौरे, सोनू सजनाजी संदीरकर आदि। मुंबई इलाके के सभी जिलों से तथा संस्थानों से नेता लोग अपने–अपने जिले के लोगों के साथ परिषद के लिए हाजिर हुए थे। इसके अलावा परिषद के लिए देवदत्त नारायण तिलक, देवराव नाईक, डी. वी. प्रधान, डॉ. मिसेज चंपूताई प्रधान, दत्तोपंत देशपांडे, बाबूजी कवली, असयीकर वकील, वेदक वकील, बी. कद्रेकर, एम. के. कर्णिक, एडवोकेट पाध्ये, पी. जी. काणेकर, बापूसाहब सहस्त्रबुद्धे, अनंत हरी गद्रे, बॅ. समर्थ, भास्करराव जाधव, कमलाकांत चित्रे, अनंतराव चित्रे, गोपीनाथ प्रधान, शांताराम पोतनीस, सुरेंद्रनाथ टिपणीस आदि लोग तथा सिक्ख समाज के सरदार ईश्वरसिंह, दरबारसिंह, केहरसिंह, अमरसिंह आदि सिक्ख नेता अपने सिक्ख बंधुओं के साथ हाजिर थे।

परिषद में उपस्थित होने के लिए शाम 6.30 बजे अध्यक्ष व्यंकट राव और डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर समता सैनिक दल के गार्ड ऑफ ऑनर से सलामी लेते हुए मंडप के अंदर दाखिल हुए। उनके सम्मेलन स्थल पर पहुंचते समय उनके नाम का जयघोष हो रहा था, जो उनके कुर्सी पर विराजमान होने तक चलता रहा। शुरुआत में स्वागत पद्य गायन हुआ। इसके पश्चात् स्वागताध्यक्ष रेवजीबुवा उर्फ दादासाहब डोलस का भाषण हुआ।

स्वागताध्यक्ष दादासाहेब डोलस के भाषण के बाद पुणे के नेता श्री. राजाराम भोले ने अध्यक्ष से अध्यक्ष स्थान स्वीकारने की विनती की। उसे नासिक के नेता श्री. भाऊराव गायकवाड़ ने तथा श्री चांगदेव मोहिते और सुभेदार घाटगे ने समर्थन दिया। और उसके बाद अध्यक्ष स्थानापन्न हुए। उसके बाद संभाजीराव गायकवाड़ ने उन्हें पुष्पहार अर्पण किया। उसके बाद परिषद के सचिव दिवाकर पगारे ने विभिन्न

स्थानों से आए संदेश पढ़कर सुनाए। उसमें रावजी ठेंगे, रावसाहेब पापण्णा और सरदार केरसिंह से आए संदेश प्रमुख थे। सभी संदेशों में धर्मांतरण की घोषणा का समर्थन किया गया था और प्रोत्साहन दिया गया था।

नियोजित अध्यक्ष श्री. वेंकटराव भाषण करने के लिए उठ खड़े हुए तो तालियों की मानो गड़गड़ाहट हुई। बुलंद आवाजों में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकरऔर वेंकटराव के नामों की जयकार हुई। जयकार की ध्वनि रुकी तो अध्यक्ष वेंकटराव ने हिंदी में भाषण किया।

सम्मेलन में पारित किए गए प्रस्ताव

प्रस्ताव 1 – (अ) मुंबई इलाके की महार जाति की परिषद पूरी तरह सोच–विचार के बाद यह घोषित करती है कि महार जाति को समाज में समता और आजादी पाने के लिए धर्म परिवर्तन करना ही एकमात्र उपाय सही लगता है। इसीलिए परिषद अपने एकमात्र नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर को निश्चयपूर्वक सार्वजनिक रूप से आश्वासन देती है कि महार समाज पूरे समुदाय के साथ धर्म परिवर्तन के लिए तैयार है।

(ब) महार परिषद की सूचना है कि, धर्म परिवर्तन की पूर्वतैयारी के अंतर्गत महार लोग हिंदू देवताओं की पूजा न करें, हिंदुओं के त्यौहार–व्रत–उपोषण आदि का पालन न करें, हिंदुओं के किसी भी उत्सव में हिस्सा न लें और तीर्थयात्रा पर न जाएं।

यह प्रस्ताव नासिक के प्रसिद्ध नेता श्री भाऊराव कृष्णराव गायकवाड ने रखा। उनके इस प्रस्ताव का समर्थन किया धारवाड़ के श्री. एस. एस. वराले ने। उन्होंने इस संदर्भ में अपने विचार प्रकट किए। इस प्रस्ताव का समर्थन करते हुए अहमदनगर के श्री. पी. जे. रोहम, जनाबाई मोरे, कु. राजुबाई गायकवाड़, सौ सोनुबाई डावरे, कु. भागिरथीबाई तांबे, कुलाबा के प्रमुख नेता श्री. विश्राम गंगाराम सवादकर के भाषण हुए।

पहले हफ्ते में हुए सम्मेलन

30 मई से 2 जून, 1936 तक मुंबई के दादर–नायगाव इलाके में हुई अस्पृश्य बंधुओं की परिषद ने बड़ी हलचल मचा दी। मुंबई इलाका महार परिषद के लिए दादर में प्रचंड मंडप खड़ा किया गया था। इस मंडप को स्व. रमाबाई उर्फ माँसाहब भीमराव अम्बेडकरनगर का नाम दिया गया था। इसके अलावा जिन प्रमुख शहरों के अस्पृश्यों ने अपने स्वाभिमान के, अपनी आत्मनिर्भरता के और समानता के अधिकारों के लिए पिछले कई सालों से आर–पार की टक्करें दी थी, उस 'महाड़' और 'नासिक'

के सत्याग्रह की याद में मंडप के दो दरवाजों का नामकरण नासिक दरवाजा और महाड़ दरवाजा किया गया था।

ऐसे नयनमनोहारी और भव्य मंडप में मुंबई इलाका शहर परिषद का अधिवेशन बडे उत्साह के साथ और सफलता से संपन्न हुआ। इस परिषद के अध्यक्ष स्थान पर थे मि. बी. एस. वेंकटराव उर्फ हैदराबाद के अम्बेडकर! इस कारण परिषद काफी प्रसिद्ध रही।

यह परिषद मुंबई इलाके के लिए थी, इसके बावजूद मध्य प्रांत, वर्हाड, इंदौर, मह्, हैदराबाद आदि अन्य प्रांतों से प्रमुख नेता इस परिषद के लिए हाजिर थे। मुंबई में अस्पृष्य समाज के महार बांधवों की यह प्रचंड परिषद देख कर स्पृश्य लोगों के दृष्टिकोण में जरूर परिवर्तन आने थे। महार समाज के हर व्यक्ति ने इस परिषद में अपनत्व से हिस्सा लेकर डॉ. अम्बेडकर पर अपना प्रेम व्यक्त किया था। परिषद के लिए आए हजारों महार बंधुओं का अनुशासन तारीफे काबिल था। इस परिषद का पूरा प्रबंधन सुचारू रूप से चलाने के लिए समता सैनिक दल ने जो भूमिका निभाई थी वह विशेष उल्लेखनीय थी।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने इस परिषद को सफल बनाने के लिए दिन–रात मेहनत की थी। निमंत्रित प्रतिनिधियों को, मेहमानों को किसी तरह की कोई दिक्कत पेश न आए, इसके लिए खास प्रबंधकों ने हर बात का खयाल रखा था। इस सम्मेलन के आयोजन में अस्पृष्य वर्ग के नेता डॉ. पी. जी. सोलंकी ने भी डॉ. अम्बेडकर की खूब मदद की। इस परिषद में भाग लेने वाले प्रमुख लोगों में थे – मे. भास्करराव जाधव, सेठ शंकरराव परशा, पी. आर. लेले, पी. जी. अभ्यंकर, डॉ. सोलंकी, अमृतराव रणखांबे, भाऊराव गायकवाड़, ॲडवोकेट पाध्ये, बॅ. समर्थ, सौ वत्सलाबाई शेगावकर, सौ. वेदक, सौ. डॉ. चंपूताई प्रधान, देवराव नाईक, अनंतराव चित्रे, बापूसाहेब सहस्त्रबुद्ध े, सुरेंद्रनाथ टिपणीस, नागपुर से मेश्राम, एम. के. कर्णिक, एल. एन. हरदास, सेठ मनियार आदि।

सोमवार दिनांक 1 जून, 1936 के दिन सुबह डॉ. अम्बेडकर साहब की अध्यक्षता में मुंबई संत समाज की परिषद हुई। उस समय स्वागताध्यक्ष श्री. शंकर नारायणदास बर्वे का प्रभावी भाषण हुआ। अध्यक्ष के नाते डॉ. अम्बेडकर ने जो भाषण दिया, उसके कारण संत समाज के हृदय में हलचल मच गई। जैसे कि पहले ही तय किया गया था, सैंकड़ों संतों ने अपनी दाढ़ी–मूंछ, जटाएं, मालाएं अग्निकुंड में अर्पण कीं। रात डॉ. अम्बेडकर की अध्यक्षता में राजनीतिक परिषद हुई। उस वक्त उन्होंने नए सुधार कैसे लाएं और नए कायदे कौंसिल के चुनाव कैसे लड़ाए जाएं इसके बारे में बेहद प्रभावी भाषण दिया।

सम्मेलन में गायन का कार्यक्रम

परिषद के कार्यक्रमों में ईशस्तवन, स्वागत और आभार के गीत लड़कियों ने बड़े मधुर स्वर में पेश किए और लोगों का मनोरंजन किया। उनके नाम हैं –

–कु. कमलाबाई अमृतराव रणखांबे,
–पार्वतीबाई बलिराम पंडित
–शांताबाई बलिराम नेवालकर
–गोदावरी महादेव रोकडे।
–मनोरमा बलिराम भातनकर
–कुसुम लक्ष्मण जाधव
–चागुंणाबाई भागोजी कांबले
–प्रेमाबाई चरणदास गायकवाड़

मे नामदेव महादेव सुर्वे (पेटी वादन, हार्मोनियम), शंकर अर्जुन सोनावणे (तबला), हिराजी रामचंद्र औंधकर (दिलरुबा), महादेव पाचरडकर (सितार) आदि लोगों ने विभिन्न वाद्यों के बजाने में अपनी महारत दिखा दी जो काबिले तारीफ थी।[1]

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण

अखिल मुंबई इलाका महार परिषद में 31 मई, 1936 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने भाषण किया। परिषद को संबोधित करते हुए वे बोले,

"सज्जनों, भाइयों एवं बहनों,

आप जान ही गए हैं कि यह परिषद खास कर धर्म परिवर्तन संबंधी मेरी घोषणा पर विचार करने के लिए बुलाई गई है। धर्म परिवर्तन का विषय मेरे दिल के बहुत करीब है। इतना ही नहीं, आप सभी लोगों का भविष्य उसके साथ जुड़ा होने के कारण यह विषय मुझे बेहद महत्वपूर्ण लगता है। इसका महत्व आप लोग भी जान गए हैं, ऐसा कहने पर किसी को आपत्ति नहीं होगी। अगर यह सच न होता तो आप आज इतनी बड़ी संख्या में यहां इकट्ठे न होते। इसीलिए आप सब लोगों को यहां इकठ्ठा देख कर मुझे बेहद खुशी हो रही है।

सम्मेलन की आवश्यकता

आप सबने सुना ही होगा कि, धर्म परिवर्तन की घोषणा के बाद कई जगहों पर छोटी–बड़ी सभाओं का आयोजन कर अपने लोगों ने इस विषय पर अपना मत व्यक्त

जनता : 20 जून, 1938

किया है। लेकिन सब एक जगह इकट्ठा होकर सोच–विचार कर धर्म परिवर्तन के सवाल पर निर्णयात्मक चर्चा करने का अब तक हमें कोई मौका उपलब्ध नहीं हुआ था। ऐसा अवसर उपलब्ध होने की आपसे अधिक मुझे जरूरत थी। एक बात आप सब मानेंगे कि धर्म परिवर्तन की मुहिम सफल हो इसके लिए पहले से तैयारी करना बहुत ही आवश्यक होता है। धर्म परिवर्तन करना कोई बच्चों का खेल नहीं। धर्म परिवर्तन मौज–मजे की बात भी नहीं है। यह इंसान के जीवन की सफलता से संबंधित है। जहाज से एक बंदरगाह से दूसरे बंदरगाह तक की यात्रा करने के लिए जितनी तैयारी की जरूरत होती है, उतनी ही तैयारी धर्म परिवर्तन के लिए करनी पड़ेगी। उसके बगैर इस किनारे से उस किनारे तक पार लग पाना संभव नहीं है। लेकिन नाव में कितने यात्री आ रहे हैं, इसका अंदाजा लगने तक नाविक सामान इकट्ठा करने की तैयारी में नहीं लगता। मेरी हालत भी कुछ–कुछ इसी तरह की है। कितने लोग धर्म परिवर्तन के लिए तैयार हैं इसका अंदाजा जब तक नहीं आता तब तक मेरे लिए धर्म परिवर्तन की पूर्व तैयारी करने का काम शुरू करना असंभव है। अपने लोगों की कहीं परिषद का आयोजन किए बगैर लोगों के मतों का अंदाजा लगा पाना संभव नहीं था। लोगों के मत आजमाने का अवसर मुझे मिलना चाहिए, ऐसा मैंने जब मुंबई के कार्यकर्त्ताओं से कहा तब खर्चे या मेहनत का बहाना आगे किए बिना परिषद का आयोजन करने की जिम्मेदारी खुशी–खुशी अपने ऊपर ले ली। वह जिम्मेदारी पार लगे, इसके लिए उन्हें क्या–क्या कष्ट उठाने पड़े, इस बारे में आपके परमपूज्य नेता और स्वागत समिति के अध्यक्ष राजमान्य राजश्री रेवजी दगडूजी डोलस ने अपने भाषण में सविस्तार सुनाया है। इतने कष्ट उठा कर उन्होंने मेरे लिए इस सभा का आयोजन किया, इसके लिए मैं परिषद की स्वागत समिति का अत्यंत आभारी हूं।

केवल महारों का ही सम्मेलन क्यों?

हो सकता है कुछ लोग यह पूछते हुए इस परिषद पर आपत्ति जताएं कि, धर्म परिवर्तन की मेरी घोषणा अगर सभी अस्पृश्यों के लिए है, तो फिर सभी अस्पृश्यों की सभा के बदले केवल महारों की ही सभा क्यों बुलाई गई? जिन सवालों के बारे में इस परिषद में हमें चर्चा करनी है, उन प्रश्नों पर चर्चा शुरू करने से पहले इस सवाल का जवाब देना मुझे आवश्यक लगता है। महारों की सभा ही क्यों बुलाई, सभी अस्पृश्यों की सभा क्यों नहीं बुलाई, इसकी कई वजहें हैं। पहला कारण यह है कि इस परिषद में किसी भी तरह की मांगें नहीं रखनी हैं। सरकार से किसी तरह के राजनीतिक अधिकार नहीं मांगने हैं और न ही हिंदुओं से कुछ सामाजिक अधिकार मांगने हैं। अपनी जिंदगी का क्या करना है, अपने जीवन की कैसी रूपरेखा बनानी है केवल यही एक सवाल इस परिषद के सामने है। यह प्रश्न ऐसा है जिसे हर जाति अपने स्तर पर हल कर सकती है और हर जाति इसे अपने स्तर पर अलग से सोच–विचार कर हल

करे, यही ठीक है। जिन कारणों से सभी अस्पृश्य जातियों को एक साथ परिषद लेने की आवश्यकता मुझे महसूस नहीं हुई, उनमें से यह एक प्रमुख वजह है। केवल महारों की ही परिषद बुलाने की एक और वजह भी है। धर्म परिवर्तन की घोषणा के लिए अब आठ–दस माह का समय बीत चुका है। इस दौरान लोकजागृति का ज्यादातर काम हो चुका है। अब जनमत आजमाने का समय आ गया है, ऐसा मुझे लगता है। जनमत परखने का एक सादा और आसान साधन परिषद लेना है, ऐसा मुझे लगता है। धर्म परिवर्तन को प्रत्यक्ष में लाने के लिए जो कोशिशें करना जरूरी हैं, उन पर अमल करने से पहले इस बारे में लोगों का क्या मत है, यह परखना मुझे जरूरी लगता है। मेरा ऐसा भी विचार है कि अस्पृश्यों की सर्वसाधारण सभा बुला कर ली गई राय से विभिन्न जातियों की अलग सभाएं लेकर परखी गई राय, अधिक विश्वास करने लायक होगी। क्योंकि सभी अस्पृश्यों की सभा कह कर बुलाए जाने के बावजूद भी वह सभी अस्पृश्यों की प्रातिनिधिक सभा शायद ही हो पाती। जनमत के बारे में विश्वासपूर्ण तरीके से पता लगाया जा सके इसीलिए महारों की अलग से सभा बुलाई गई। इस सभा में अन्य जातियों को बुलाया नहीं गया, इसलिए उनका नुकसान होने वाला नहीं है। अगर वे धर्म परिवर्तन नहीं करना चाहते तो उन्हें इस सभा में आमंत्रित न किए जाने के बारे में दुखी नहीं होना चाहिए। वे अगर धर्म परिवर्तन करना चाहते हैं, तो इस सभा में बुलाया नहीं गया, इसलिए उनके निर्णय में किसी तरह का कोई अड़ंगा नहीं खड़ा होगा। महार लोगों की जिस तरह की सभा ली जा रही है उसी तरह की सभा हर जाति ले और उसके जरिए अपनी जाति के लोगों का मत आजमाने की कोशिश करें, लोगों को अपना मत व्यक्त करने का अवसर दें। मैं उन सभी जातियों को सूचित करता हूं कि इस काम में उन्हें जिस किसी तरह की मदद की जरूरत होगी, वह देने के लिए मैं तैयार हूं। अब तक जो कुछ भी मैंने कहा, वह केवल विषय की प्रस्तावना हुई। अब मैं आज की सभा के प्रमुख विषय पर आ जाता हूं।

धर्म परिवर्तन का विषय जितना महत्वपूर्ण है उतना ही वह गहन भी है। साधारण व्यक्ति की बुद्धि के लिए उसे समझ पाना थोड़ा कठिन है। उसी तरह साधारण व्यक्ति को इस विषय के बारे में समझाना भी आसान काम नहीं है। तथापि, मैं यह बात जानता हूं कि आप सब लोगों को जब तक यकीन नहीं होगा, तब तक इस बात को व्यवहार में लाना मुश्किल है। इसीलिए, जितने आसान तरीके से इस विषय को आप तक पहुंचाया जा सकता है, उतने ही आसान तरीके से मैं वह करने जा रहा हूं।

धर्म परिवर्तन के ऐहिक कारण

धर्म परिवर्तन के बारे में दो तरह से विचार किया जाना जरूरी है। सामाजिक तथा धार्मिक दृष्टिकोण से विचार करना आवश्यक है। इस पर ऐहिक दृष्टिकोण से

सोचा जाना चाहिए और सैद्धांतिक दृष्टिकोण से भी सोचा जाना चाहिए। लेकिन किसी भी दृष्टिकोण से धर्म परिवर्तन के बारे में सोचना हो तो भी पहले यह जान लेना जरूरी हो जाता है कि अस्पृश्यता क्या चीज है? और उसका असली रूप क्या है? इस बारे में पूरी तरह समझे बगैर मेरी धर्म परिवर्तन की घोषणा को आप समझ नहीं पाएंगे। अस्पृश्यता का मतलब क्या है और उसका असली स्वरूप क्या है इसके बारे में आप समझें इसके लिए सबसे पहले आप पर हो रहे अत्याचार के बारे में आपको याद दिलाना जरूरी है। सरकारी स्कूलों में बच्चों को दाखिला दिलाने का हक बताए जाने पर, कुएं पर पानी भरने का हक मांगने पर, बारात में दूल्हे को घोड़े पर बिठा कर ले जाने के अधिकार का प्रयोग करने पर स्पृश्य हिंदुओं के द्वारा पीटे जाने के उदाहरण आपके साथ घटित होते रहते हैं। ये सब बातें आपके सामने घटती हैं इसलिए आप इनके बारे में जानते हैं। लेकिन मारपीट की ऐसी कई वजहें हैं, जिनका जिक्र सुन कर भारत के बाहर के लोगों को आश्चर्य लग सकता है। महंगे कपड़े पहनने के कारण लोगों के साथ मारपीट की जाती है, गहने पहनने के कारण मारपीट की जाती है, पानी लाने के लिए तांबे–पीतल के बर्तन इस्तेमाल करने के कारण मारपीट की जाती है, मरे हुए जानवर खींच कर न ले जाने के कारण, मरे हुए जानवरों का मांस न खाने के कारण मारपीट किए जाने के उदाहरण दिए जा सकते हैं। पैरों में जूते–जुराबें पहनकर गांव में घूमें इसलिए, सामने आए हिंदू व्यक्ति को जोहार न बजाए लाने के कारण, शौच के लिए जाते समय लोटे में पानी लेकर जाने के कारण पीड़ा पहुंचाई जाने के उदाहरण भी बताए जा सकते हैं। पंचों की पंगत में रोटी परोसने के कारण मारपीट किए जाने की घटना हाल ही में घटी है। इन सब तरह के जुल्मों की और अपने को अमानुष तरीके से सताए जाने के कई उदाहरण आपने सुने होंगे, आपमें से कइयों ने उन्हें प्रत्यक्ष अनुभव भी किया होगा। मारपीट करना जहां संभव नहीं होता, वहां बहिष्कृत करने के शस्त्र का आप पर उपयोग किए जाने की बात भी आप जानते होंगे। मोलमजदूरी मिलने नहीं देना, जंगल से जानवरों को गुजरने नहीं देना, लोगों को गांव में आने नहीं देना, आदि सभी तरह की पाबंदियां लगा कर स्पृश्य हिंदूओं से आप लोगों को परेशान कर दिए जाने की बात आपमें से कइयों को याद होगी। लेकिन, ऐसा क्यों होता है?, इसके पीछे क्या वजह है? इस बारे में मेरे मतानुसार आपमें से बहुत कम लोग जानते होंगे। उसे जानना मेरे मत में बहुत आवश्यक है।

यह वर्गकलह की बात है

ऊपर कलह/विवाद के जो उदाहरण दिए हैं उनका व्यक्ति के गुणावगुणों से कोई संबंध नहीं है। वह दो खलनायकों के बीच का कलह भी नहीं है। अस्पृश्यता वर्गकलह का प्रश्न है। स्पृश्य और अस्पृश्य इन दो समाजों के बीच का वह विवाद

है। यह किसी व्यक्ति पर किए गए आरोपों से उद्‌भुत कलह नहीं है। किसी एक व्यक्ति के प्रति हो रहे अन्याय की भी यह कलह नहीं है। एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग के साथ की हुई ज्यादती से संबंधित यह कलह है। यह वर्गकलह सामाजिक दर्जे के बारे में है। एक वर्ग को दूसरे वर्ग के साथ कैसे बर्ताव करना चाहिए इस बारे में यह विवाद है। ऊपर जो उदाहरण दिए हैं, उनसे इस कलह के बारे में जो बात साफ तौर पर सामने आती है, वह यह है कि ऊंचे वर्ग के साथ पेश आते समय आप हमेशा बराबरी से पेश आने का आग्रह करते हैं। इसीलिए यह कलह पैदा होती है। अगर ऐसा नहीं होता तो रोटी खाने से, ऊंची पोषाक पहनने से, जनेऊ धारण करने से, पीतल–तांबे के बर्तनों में पानी लाने से, घोड़े पर बारात लेकर जाने से, यह झगड़े नहीं होते। जो अस्पृश्य चपाती खाता है, ऊंचे वस्त्र परिधान करता है, तांबे के बर्तन इस्तेमाल करता है, घोड़े पर बैठ कर बारात लेकर जाता है वह ऊंचे वर्ग के किसी का नुकसान नहीं करता। इन सब बातों के लिए अपने ही पैसे खर्च करता है। ऐसा अगर है तो ऊंचे वर्ग को उसके बारे में बुरा क्यों लगता है? इस गुस्से का कारण एक ही है, वे मानते हैं कि इस तरह का समान बर्ताव उनकी मानहानि, अपमान का कारण है। आप निम्न हैं, अपवित्र हैं, आप अगर निम्न स्तर का जीवन बिताएंगे, तभी वे आपको सुख से रहने देंगे। अपनी औकात से बढ़ कर बर्ताव करने पर ही तो कलह की शुरुआत होती है, यह बात निर्विवाद सत्य है। इस उदाहरण से एक और बात साबित होती है कि अस्पृश्यता रोजमर्रा की बात है, नैमित्तिक या कभी–कभार की बात नहीं। साफ तौर पर कहना हो तो स्पृश्य और अस्पृश्य के बीच कलह रोजमर्रा की है, और वह हमेशा, त्रिकालाबाधित रहने वाली है। क्योंकि जिस धर्म के कारण आपको निचला दर्जा दिया गया है, वह धर्म ऊंचे वर्ग के कथनानुसार सनातन है। समय के अनुसार उसमें किसी भी तरह का बदलाव होना असंभव है। आज आप जिस तरह निम्न वर्ग के हैं, उसी तरह आपको हमेशा निम्न वर्ग के बन कर रहना होगा। इसका मतलब यही है कि स्पृश्य और अस्पृश्य के बीच का यह कलह/विवाद हमेशा ऐसा ही रहने वाला है। इस कलह के साथ आप कैसे निपटेंगे, यह असली समस्या है। इस प्रश्न के बारे में सोचने के अलावा आपके सामने कोई चारा नहीं है, ऐसा मुझे लगता है। आप में से जिन लोगों को, हिंदू लोग जैसे आपके साथ बर्ताव करेंगे उसी के अनुसार रहना है, उनकी सेवा करते हुए जीना है, उन्हें इस बारे में सोचने की जरूरत नहीं है। लेकिन जिन्हें स्वाभिमान के साथ जीवन यापन करना आवश्यक लगता है, जिन्हें समता के साथ जीना आवश्यक लगता है, उनके सामने इन सवालों के बारे में सोचने के अलावा कोई चारा नहीं है। उन्हें इस बात पर सोचना पड़ेगा कि इस कलह से हम अपना बचाव कैसे कर सकते हैं? इस सवाल को हल करना मुझे बहुत कठिन नहीं लगता। यहां एकत्रित हुए आप सभी लोगों को एक बात माननी होगी और वह यह कि जिसके हाथ में ताकत/सामर्थ्य

होता है, जय/जीत उसी की होती है। जिसके पास ताकत/सामर्थ्य नहीं उसे सफलता पाने की आशा नहीं रखनी चाहिए। यह बात सबके अनुभव से साबित हुई है। उसके समर्थन में सबूत देने की जरूरत नहीं है।

पहले सामर्थ्य प्राप्त करें

इससे आगे वाले जिस सवाल पर आपको ध्यान देना होगा वह है – इस कलह से पीछा छुड़ाने के लिए जरूरी ताकत/सामर्थ्य क्या आपके पास है? इंसान के पास तीन तरह की सामर्थ्य होती है – मनुष्यबल, द्रव्यबल और मानसिक बल। इन तीनों में से कौन सा बल आपके पास है, ऐसा आपको लगता है? मनुष्यबल के हिसाब से आप अल्पसंख्यकों में आते हैं, यह बात सब जानते हैं। मुंबई इलाके में अस्पृष्य वर्ग की जनसंख्या कुल जनसंख्या के आठवें हिस्से (साढ़े बारह फीसदी) जितनी ही है। जो हैं वे भी संगठित नहीं हैं। जातिभेद के कारण उनमें संगठनात्मक शक्ति का पूरी तरह अभाव है। संगठन नहीं और इकट्ठा, एक साथ भी नहीं हैं। वे गांव–गांव में बिखरे हुए हैं। इस वजह से जो अल्पसंख्या में मनुष्यबल है उसका भी संकटग्रस्त अस्पृश्यों की बस्ती के लिए कोई उपयोग नहीं है। द्रव्यबल के नजरिए से देखें तब भी आपकी वही हालत है। आपके पास थोड़ा–बहुत मनुष्यबल है ऐसा तो कहा जा सकता है लेकिन आपके पास द्रव्यबल बिल्कुल नहीं, यह बात साफ है। आपके पास कोई व्यापार नहीं, उद्यम नहीं, नौकरी नहीं और खेती भी नहीं है। उच्च वर्ग के लोग जो भी मेहनताना, पारिश्रमिक देंगे, उसी पर आपका गुजारा चलता है। आपके पास अनाज नहीं, वस्त्र नहीं, आपके पास द्रव्यबल होगा तो क्या होगा? अन्याय हो तो कोर्ट से न्याय मांगने की औकात आपकी नहीं है। कोर्ट का खर्चा उठा न पाने के कारण आपमें से कई लोग हिंदुओं से होने वाले अत्याचार, अपमान, और जोर–जुल्म चुपचाप सह रहे हैं। इससे भी अधिक आपके पास मानसिक बल की कमी है। सैंकड़ों साल उच्च जातियों की सेवा में बिताने के कारण सैंकड़ों सालों से उनके द्वारा किए गए अपमान सहने की, उनके द्वारा की गई जिल्लत चुपचाप पी लेने के कारण पलट कर जवाब देने की आदत, विरोध करने की हिम्मत खत्म हो चुकी है। आपका आत्मविश्वास, उत्साह, महत्वाकांक्षा हार चुकी है। आपमें से सभी लोग हताश, दीन और निस्तेज हो चुके हैं। निराशा का, पराजय का वातावरण सब दूर फैला हुआ है। कोई यह सोच ही नहीं पा रहा है कि यदि दृढ़ निश्चय करें तो हम भी कुछ कर सकते हैं।

आप पर ही अत्याचार क्यों होते हैं?

मैंने जो यथास्थिति का वर्णन किया है वह यदि सच है, तो उससे निकलने वाला सिद्धांत आप सबको मानना होगा। वह सिद्धांत है– अगर आप अपने बल के भरोसे

रहेंगे तो इस जुल्म का विरोध आप नहीं कर पाएंगे। आपमें सामर्थ्य नहीं है, इसीलिए आप पर जुल्म होते हैं इस बारे में मुझे कोई शक नहीं। इस इलाके में आप ही केवल अल्पसंख्यक हैं, ऐसी बात नहीं है। मुसलमान भी आप ही की तरह अल्पसंख्यक हैं। गांव में जिस तरह महार–मांगों के दो–चार घर होते हैं उसी तरह मुसलमानों के भी दो–चार घर ही होते हैं। किंतु उन मुसलमानों को कोई परेशान नहीं करता। लेकिन आपके साथ हमेशा जुल्म होते रहते हैं, इसकी वजह क्या है? मुसलमानों के भी दो ही घर होते हैं, लेकिन कोई उन पर अत्याचार नहीं करता। आपके दस घर होते हैं, फिर भी पूरा गांव आपके पीछे पड़ा रहता है, ऐसा क्यों? इसके बारे में आपको अच्छी तरह से सोचना होगा। मेरे विचार में इसका एक ही जवाब दिया जा सकता है कि उन दो मुसलमान घरों के पीछे पूरे भारत के मुसलमानों का सामर्थ्य और ताकत खड़ी होती है। हिंदू लोग इस बारे में जानते हैं, इसी कारण उन दो मुसलमानों से पंगा लेने की साधारणतः किसी की हिम्मत नहीं होती। उन दो घरों के पीछे अगर कोई पड़े, तो पंजाब से लेकर मद्रास तक मुसलमान समाज अपनी पूरी ताकत के साथ उनके पीछे खड़ा हो जाता है। उन दो परिवारों को इसका पूरा अहसास होता है, इसीलिए पूरी निर्भयता के साथ वे अपना जीवन–यापन करते रहते हैं। आपके बारे में हिंदू लोगों को यकीन होता है कि आपकी कोई भी मदद नहीं करेगा। आपके लिए कोई दौड़ा–दौड़ा नहीं आएगा। आपको रुपयों की मदद कोई नहीं देगा और कोई अधिकारी भी आपके पीछे खड़ा नहीं रहेगा। मामलतदार और पुलिस भी उन्हीं में से होते हैं, जो स्पृश्य अस्पृश्य के विवाद में आखिर अपनी जाति के साथ हो जाते हैं। वे कर्त्तव्य का नहीं, जाति का साथ देते हैं। हिंदुओं को यह बात पता होती है। आपकी इसी असहाय स्थिति के चलते हिंदू लोग आपके साथ जुल्म करते हैं, अन्याय करते हैं। इस विवेचन से दो बातें प्रमाणित होती हैं – पहली, सामर्थ्य के बगैर आप इस अन्याय का प्रतिकार नहीं कर पाएंगे। दूसरी बात यह कि विरोध के लिए जरूरी ताकत आज आपके पास नहीं है। इन दो बातों के साबित होते ही एक और बात अपने आप साबित हो जाती है, वह यह कि आपको जिस सामर्थ्य की जरूरत है, वह आपको बाहर कहीं से प्राप्त करना होगा। आप यह ताकत, सामर्थ्य कहां से पाएंगे, यही असल में बेहद महत्त्वपूर्ण सवाल है। आपको खुले दिमाग से इस पर विचार करना चाहिए।

हमें बाहर से सामर्थ्य प्राप्त करना होगा

इस देश में जातियों और धर्म से उपजे भेदभाव का लोगों के मन पर और उनकी नीतिमत्ता पर अजीब परिणाम हो चुका है, ऐसा मुझे लगता है। दुख, दरिद्रता, क्लेष के बारे में यहां किसी को बुरा नहीं लगता। और अगर कभी लगा भी तो उसे खत्म करने की कोई कोशिश नहीं करता। अपने धर्मबंधुओं पर अथवा अपने जातिबांधवों

पर दुख, जुल्म अथवा दरिद्रता का पहाड़ यदि टूटता है तो उसके निवारण के लिए लोग मदद करते हैं। कोई भी यह ना भूलें कि नीति/नैतिकता की यह बात भले जितनी भी विकृत हो तब भी अभी तक जारी है। जिन गांवों में अस्पृश्य लोगों पर हिंदूओं द्वारा जुल्म किए जाते हैं, उस गांव में दूसरे धर्म के लोग होते ही नहीं हैं, ऐसी बात नहीं है। अस्पृश्यों के साथ हो रहे अत्याचार गलत हैं, ऐसा उन्हे भी लगता है। लेकिन जो हो रहा है, वह अन्याय है, यह जान कर भी वे मदद के लिए आगे नहीं आते। आप हमारी मदद क्यों नहीं करते? ऐसा अगर आप उनसे पूछें तो आपके टंटे में हम क्यों पड़ें? आप अगर हमारे धर्म के होते तो हम आपकी मदद जरूर करते, ऐसा जवाब वे आपको देते हैं। इससे एक बात आपके ध्यान में आएगी कि किसी और धर्म से जब तक आप अपना संबंध स्थापित नहीं करेंगे, किसी और धर्म में जब तक आप शामिल नहीं होंगे तब तक आपको बाहरी सामर्थ्य प्राप्त नहीं होगा। इसका साफ–साफ मतलब यही होता है कि आपको धर्म परिवर्तन कर किसी अन्य धर्म में शामिल होना पड़ेगा। उसके बगैर आपको उस समाज का सामर्थ्य प्राप्त नहीं होगा। जब तक आपके पास ताकत/सामर्थ्य नहीं, तब तक आपको आपकी भावी पीढ़ी को भी आज की आपकी जैसी हालत है, उसी हालत में दिन बिताने पड़ेंगे।

धर्म परिवर्तन के आध्यात्मिक कारण

ऐहिक कल्याण के लिए धर्म परिवर्तन की क्या आवश्यकता है, यह हमने अब तक देखा। अब आध्यात्मिक कारणों के लिए धर्म परिवर्तन की आवश्यकता कैसे है, इस बारे में मैं आपके सामने अपने विचार प्रस्तुत करने जा रहा हूं। पहले यह जान लेना जरूरी है कि धर्म क्या है? किसलिए है? धर्म के बारे में आपको कई लोगों की दी हुई कई परिभाषाएं मिलेंगी। लेकिन उन सबमें जो सबकी समझ में आए ऐसी अर्थपूर्ण एक ही परिभाषा है कि– जिससे सारी प्रजा का उद्धार हो वही धर्म है। यही धर्म की सच्ची परिभाषा है। मैंने यह परिभाषा नहीं दी है। सनातनी हिंदुओं के अग्रगण्य नेता लो. बाल गंगाधर तिलक की यह परिभाषा दी हुई है। सो, मैंने धर्म की इस परिभाषा के साथ छेड़छाड़ की, ऐसा आरोप कोई मुझ पर लगा नहीं सकता। मैंने यह परिभाषा नहीं की है लेकिन विवाद के लिए मैं इसे मान रहा हूं, ऐसा भी नहीं है। मैं इस परिभाषा को मानता हूं। समाज के भले के लिए जो बंधन डाले जाते हैं, वही धर्म है। धर्म के बारे में मैं भी यही सोचता हूं। वास्तविक दृष्टि से हो, या तार्किक दृष्टि से यह व्याख्या अगर सही लगती है, तो समाज के उद्धार के लिए समाज के बंधन किस तरह के होने चाहिएं, इस सवाल के जवाब में इस परिभाषा से कोई जवाब नहीं मिलता। न कोई बात स्पष्ट हो पाती है। समाज के उद्धार के लिए समाज के बंधन किस तरह के होने चाहिएं, यह सवाल बाकी बचता

है और यह सवाल धर्म की परिभाषा से बहुत अधिक महत्वपूर्ण है। क्योंकि, धर्म क्या है और अधर्म क्या है, यह किसी परिभाषा पर आधारित नहीं होता। यह उन बंधनों के उद्देश्य पर और उनके स्वरूप पर निर्भर करता है। जिन बंधनों के कारण समाज के सभी लोगों का उद्धार हो सके, वे किस तरह के होने चाहिए? यानी, सच्चे धर्म का स्वरूप किस तरह का हो, इस मुद्दे पर सोचते हुए एक सवाल उभरता है कि समाज और व्यक्ति का सैद्धांतिक संबंध किस तरह का होना चाहिए? इस सवाल पर समाजशास्त्र के विद्वानों ने तीन तरह के मत व्यक्त किए हैं। कुछ विद्वानों के मतानुसार – व्यक्ति को सुख की प्राप्ति हो यही समाज के बंधनों का अंतिम उद्देश्य होता है। कुछ लोगों के मतानुसार सामाजिक बंधनों का प्रमुख उद्देश्य ऐसा हो जिनसे व्यक्ति के गुणों का और शक्ति का विकास हो और उसे पूर्णावस्था में पहुंचने में वे मददगार साबित हों। कुछ और लोगों का यह मानना है कि सामाजिक बंधनों का उद्देश्य व्यक्ति की सुख प्राप्ति या उसकी उन्नति न होकर आदर्श समाज तैयार करना ही होना चाहिए। हिंदू धर्म की कल्पना इन तीनों से बिल्कुल अलग है। हिंदू धर्म में व्यक्ति का कोई स्थान नहीं है। हिंदू धर्म की रचना वर्ग की कल्पना पर आधारित है। एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के साथ कैसे पेश आए, इसकी सीख हिंदू धर्म नहीं देता। एक वर्ग दूसरे वर्ग के साथ कैसे बर्ताव करे इसके बारे में हिंदू धर्म बताता है। जिस धर्म में व्यक्ति की अहमियत नहीं, उस धर्म को मेरी मान्यता नहीं। व्यक्ति के जीवन के लिए समाज की भले आवश्यकता हो, लेकिन सामाजिक बंधन धर्म का अंतिम उद्देश्य नहीं हो सकता। व्यक्ति का विकास ही धर्म का सच्चा उद्देश्य है, ऐसा मैं मानता हूं। व्यक्ति समाज में भले रहता हो, मनुष्य भले समाज का एक हिस्सा हो, लेकिन उसका और समाज का संबंध शरीर और विभिन्न अंग, गाड़ी और पहिए के संबंध जैसा होता है, ऐसा मैं नहीं मानता हूं।

समाज और व्यक्ति

पानी की बूंद जब समंदर में डाली जाती है, तब जिस तरह वह सागर के पानी के साथ एकाकार हो जाती है, उस तरह समाज में रहने से आदमी का लोप नहीं हो सकता। हर व्यक्ति का जीवन अलग होता है, उसका जन्म समाज की सेवा के लिए न होकर आत्मोन्नति के लिए है। इसी एक वजह से उन्नत राष्ट्रों में एक आदमी दूसरे आदमी को अपना गुलाम बना कर नहीं रख सकता। जिस धर्म में व्यक्ति को प्रधानता नहीं है, उस धर्म को मैं नहीं मानता। और हिंदू धर्म में व्यक्ति को प्रधानता नहीं है, इसलिए जाहिर है कि मैं इस धर्म को नहीं मानता। साथ ही जो धर्म यह बताता है कि एक वर्ग विद्या सीखेगा, दूसरा वर्ग केवल शस्त्र धारण करेगा, तीसरा वर्ग व्यापार करेगा और चौथा वर्ग इन तीनों वर्गों की केवल सेवा करेगा, उस धर्म को मैं नहीं मानता। विद्या हरेक को मिलनी चाहिए। शस्त्र की हरेक को जरूरत होती

है। पैसा सबको चाहिए। जो धर्म ये बातें भूलता है, जो धर्म एक को सज्ञान बनाने के लिए बाकियों को अज्ञान में रखता है वह धर्म नहीं है, वह लोगों को बौद्धिक गुलामी में रखने का षड्यंत्र है। जो धर्म एक के हाथ में शस्त्र देकर बाकियों को निःशस्त्र करता है, वह धर्म नहीं वह तो एक के द्वारा दूसरे को गुलामी में रखने का उपाय भर है। जो धर्म कुछ लोगों के लिए धन कमाने की राह खोल देता है और बाकियों को अपनी जरूरतों के लिए भी औरों पर निर्भर रहने की अनुज्ञा देता है, वह धर्म नहीं स्वार्थपरायणता है। हिंदू धर्म का चातुर्वर्ण्य इस तरह का है। उसके बारे में मेरी अपनी जो राय है, उसे मैंने आपके सामने साफ–साफ शब्दों में रखा है। यह हिंदू धर्म क्या आपका हित करेगा? आप खुद सोच कर देखिए। व्यक्ति की आत्मोन्नति के लिए योग्य वातावरण पैदा करना, अगर धर्म की मूलभूत संकल्पना है, ऐसा मान लिया जाए तो हिंदू धर्म में आपकी आत्मोन्नति कभी नहीं हो सकती। व्यक्ति के विकास के लिए तीन बातें जरूरी होती हैं। सहानुभूति, समता और आजादी। इनमें से एकाध भी हिंदू धर्म में आपके लिए उपलब्ध है, ऐसा क्या आप कह सकते हैं?

हिंदू धर्म में आपके प्रति क्या सहानुभूति है?

सहानुभूति के बारे में सब केवल शून्य ही है, ऐसा ही कहना पड़ेगा। आप कहीं भी जाइए, आपकी तरफ कोई भी अपनत्व से नहीं देखेगा। आप इस बारे में अनुभव कर ही चुके हैं। अपनत्व की भावना बिल्कुल नहीं और हिंदू आपको परायों से भी गैर मानते हैं। एक ही गांव में रहने वाले स्पृश्य और अस्पृश्य के बीच का नाता पड़ोस में रहने वाले भाइयों के आपसी रिश्ते जैसा कभी भी नहीं होता। दो परस्परविरोधी सेना के गुटों की छावनियों जैसा माहौल होता है। हिंदुओं को मुसलमान जितने करीबी लगते हैं, उनके साथ उनका जितना स्नेहभाव होता है, उसका शतांश भी आपके प्रति नहीं होता। लोकल बोर्ड में कायदे कौंसिल में, व्यापार में हिंदू–मुसलमान एक–दूसरे का सहारा बन कर रहते हैं। लेकिन क्या आप एकाध उदाहरण भी ऐसा दे पाएंगे कि जब हिंदुओं ने आपके साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार किया हो? उल्टे यह बात सच है कि वे हमेशा आपके खिलाफ होते हैं। आपमें से जिनको न्याय की गुहार लगाते हुए कोर्ट जाना पड़ा हो, या पुलिस की सहायता लेनी पड़ी हो, वे बता सकते हैं कि हिंदुओं के मन में आपके खिलाफ जो भावना है, वह कितना घातक रूप धारण कर चुकी है। कोर्ट में न्याय मिलेगा, पुलिस मदद करेगी क्या ऐसा आपमें से किसी एक को भी विश्वास है? अगर नहीं, तो आपको विश्वास न महसूस होने के पीछे वजह क्या है? मेरे मत में ऐसे अविश्वास की एक ही वजह है। और वह यही कि हिंदू लोगों के बीच आपके बारे में किसी तरह की कोई सहानुभूति न होने के कारण वे अपने अधिकारों का अच्छा इस्तेमाल करेंगे, ऐसा आपको नहीं लगता। अगर यह सच है, तो फिर शत्रुता भरे इस वातावरण में रहने से आपको क्या हासिल होना है?

क्या हिंदू धर्म में आपके लिए समता है?

यह प्रश्न तो पूछा भी नहीं जाना चाहिए। अस्पृश्यता प्रत्यक्ष असमानता है। असमानता की इतनी उग्र ज्वाला और कहीं देखने को नहीं मिलेगी। अस्पृश्यता से अधिक उग्र असमानता दुनिया के इतिहास में कहीं देखने को नहीं मिलेगी। कमतरी–बेहतरी के कारण आपस में रोटी–बेटी व्यवहार न होना इसी असमानता का निदर्शक है। लेकिन एक व्यक्ति द्वारा दूसरी व्यक्ति को न छूने जैसी, उसे पतित मानने जैसी परंपरा हिंदू धर्म के अलावा तथा हिंदू समाज के अलावा अन्यत्र कहीं भी देखने को नहीं मिलेगी। जिसके स्पर्श से इंसान भ्रष्ट हो जाता है, जिसके स्पर्श से पानी भ्रष्ट होता है, जिसके स्पर्श से भगवान तक अपवित्र हो जाते हैं, वह मानवप्राणि ही है, यह कोई कैसे माने? अस्पृश्य व्यक्ति की ओर देखने की दृष्टि और कोढ़/रक्तपित्ति से पीड़ित व्यक्ति की तरफ देखने की दृष्टि में आखिर फर्क क्या है? कोढ़ से पीड़ित व्यक्ति के बारे में लोगों के मन में भले घिन हो, लेकिन सहानुभूति भी होती है। लेकिन आपके बारे में सहानुभूति तो नहीं ही होती घिन जरूर होती है। रक्तपित्ती/कोढ़ से ग्रसित इंसान से भी आपकी स्थिति हीन है। आज भी गांव में कोई स्पृश्य व्यक्ति जब व्रत खोलता है, तब अगर महार का शब्द उसके कानों से टकराए तो वह अन्न ग्रहण नहीं करता। आपके शरीर के साथ, आपके शब्दों की आवाज के साथ इतना कलंकभाव जुड़ा हुआ है। कुछ लोग कहते हैं कि अस्पृश्यता हिंदू धर्म का कलंक है। लेकिन सच पूछिए तो उसके कोई मायने नहीं हैं। हिंदू धर्म कलंकित है, ऐसा एक भी हिंदू नहीं मानता। आप कलंकित हैं, दूषित हैं, अपवित्र हैं, ऐसा बहुसंख्यक हिंदू समाज मानता है। आप इस हालत में कैसे पहुंचे? मुझे लगता है कि हिंदू धर्म में रहने के कारण आपकी यह हालत हुई है। आपमें से जो मुसलमान हुए उन्हें हिंदू लोग अस्पृश्य नहीं मानते, असमान नहीं मानते। आप में से जो लोग ईसाई बने, उन्हें हिंदू लोग अस्पृष्य या असमान नहीं मानते। त्रावणकोर में हाल ही में जो घटना घटी, वह सोचने लायक है। वहां की थिया जाति के अस्पृश्यों को रास्ते पर चलने की मनाही है। हाल ही में उनमें से कुछ लोगों ने सिक्ख धर्म स्वीकारा यह आप शायद जानते ही होंगे। अस्पृश्य थे तब उन लोगों के लिए, जिन रास्तों पर से चलने, गुजरने की मनाही थी, सिक्ख धर्म स्वीकारते ही उन पर से वह पाबंदी हटा दी गई। इन सभी घटनाओं से एक बात साफ है कि आपकी अस्पृश्यता और असमानता की यदि कोई वजह है तो वह है, आपका और हिंदू धर्म का आपसी संबंध। असमानता के इस अन्याय में कुछ स्पृश्य लोग, अस्पृश्यों से उन्हें सांत्वना देते हुए कहते हैं कि आप शिक्षा लो, तब हम आपको छुएंगे! आप साफ–सुथरे रहें, तो हम आपको छुएंगे! समानता से पेश आएंगे। सच पूछिए तो अनपढ़, दरिद्री महार का जो हाल है, वही शिक्षित, पैसे वाले और साफ–सुथरा रहने वाले महार की भी वही बदतर स्थिति होती है। आप–हम सबका

अनुभव हमें यही बताता है। लेकिन यदि वह अनुभव हम कुछ पलों के लिए अलग भी रख दें, तो यह सवाल बाकी रहता है कि अगर हाथ में पैसा नहीं हुआ, बदन पर महंगी पोषाक नहीं हुई, शिक्षा नहीं ली तो समानता पूर्ण व्यवहार मान्यता न मिले तो आम महार क्या करे? जिसे शिक्षा प्राप्त नहीं हो सकती वह क्या करे? जिसे पैसा नहीं मिल सकता वह क्या करे? जिसे पैसा नहीं मिलता और जो ठीक–ठाक कपड़े नहीं पहन पाता, वह क्या करे? उसे समानता कैसे मिलेगी? ईसाई धर्म में, मुसलमान धर्म में, समानता की जो शिक्षा दी गई है, उसका ताल्लुक विद्या, धन, पोषाक, वीरता आदि बाहरी चीजों से बिल्कुल नहीं है। इंसान का इंसान होना ही महत्त्वपूर्ण है, ऐसा इन दोनों धर्मों में माना जाता है। और इंसान होना ही, सबके लिए आदरणीय होना जरूरी है। ये दोनों धर्म सिखाते हैं, कोई किसी का अपमान ना करे, कोई किसी को अपने से नीचा, असमान न माने। हिंदू धर्म में, इस सीख का पूरी तरह से अभाव है। जिस धर्म में मनुष्य के मनुष्यत्व की कोई कीमत नहीं, वह धर्म किस काम का? और ऐसे धर्म को सीने से लगाकर रखने में फायदा क्या है? इसके जवाब में कुछ हिंदू लोग उपनिषद का साक्ष्य देते हैं और शेखी बघारते हैं कि ईश्वर सब जगह व्याप्त है। विज्ञान और धर्म दोनों बातें बिल्कुल अलग–अलग हैं। कोई बात वैज्ञानिक सिद्धांत है, या धर्म की दी हुई सीख है, इसके बारे में सोचना चाहिए। लोग मानते हैं कि सबमें एक ही ईश्वर का वास है यह वैज्ञानिक सिद्धांत है। धर्म के सिद्धांतों का, बर्ताव से संबंध होता है, विज्ञान से नहीं। सबमें एक ईश्वर का वास धर्म की दी गई सीख नहीं है। यह वैज्ञानिक तथ्य हैं। हालांकि, हिंदू लोग इस बात को मान कर नहीं चलते, यही मैं आपको बताना चाहता हूं। यह एक तरह से सबूत ही हैं। उल्टे, मैं तो यह कहूं कि, अगर हिंदू कहते हैं कि सबके अंदर एक ही ईश्वर का वास होता है, यह हिंदू धर्म का सिद्धांत है, बुनियाद है और इसीलिए हमारा धर्म श्रेष्ठ है तो, मैं उनसे बस इतना ही कहना चाहता हूं कि, उनके जितने नीच लोग दुनिया में और कोई नहीं होंगे! मुंह से 'सर्वांभूति ईश्वर'का जाप करने वाले और अपने कृत्यों से प्राणि मात्रों का अपमान करने वाले लोगों के बारे में कहा जा सकता है कि वे 'मुख में राम बगल में छुरी' या 'वाणी महानुभाव की लेकिन करनी कसाई की' वाले लोगों में ही शामिल करने लायक हैं। सबमें एक ही परमात्मा का वास है मानने वाले और अपनी कृति से इंसान को पशु तुल्य ठहराने वाले लोग दांभिक हैं। उनका साथ न दें! चींटियों को चीनी खिलाने वाले और इन्सानों को पानी पर पाबंदी लगाकर उन्हें तड़प–तड़प कर मरने पर मजबूर करने वाले लोग इन्सानियत के दुश्मन हैं। उनके संग के कारण आप पर क्या असर हुआ है, इसका आपको पता ही नहीं है। आपकी इज्जत गई, मानसम्मान गया! सच कहें तो हिंदू समाज में ही आपका कोई मानसम्मान नहीं है, यह कहना वास्तविकता को नापना हो तो कम है। आपको केवल हिंदू लोग ही अस्पृश्य नहीं मानते वरन, मुसलमान और ईसाई लोग भी आपको नीचा समझते हैं। सच कहें

तो मुसलमान धर्म में और ईसाई धर्म में भी श्रेष्ठ–कनिष्ठ, ऊंच–नीच जैसा भेदभाव जगाने वाली सीख नहीं दी जाती। इसके बावजूद वे लोग आपको निचले दर्जे का मानते हैं। इसकी वजह क्या है? इसकी वजह एक ही है। हिंदू लोग आपको निचले दर्जे का समझते हैं इसलिए मुसलमान और ईसाई लोग भी आपको निचले दर्जे का समझते हैं। अस्पृश्यों को अगर हम अपने समान समझने लगे, तो हिंदू लोग हमें अस्पृश्यों के जितना ही नीचे समझेंगे, इस डर से मुसलमान और ईसाई लोग आपके साथ हिंदुओं की तरह ही अस्पृश्यता का व्यवहार करते हैं। हम हिंदू समाज में हीन करार दिए गए हैं। इतना ही नहीं वरन् हिंदुओं के द्वारा दिए जाने वाले असमान बर्ताव के कारण हम पूरे भारत देश में सबसे कनिष्ठ माने गए हैं। अपमान की इस स्थिति को टालने के लिए, इस कलंक को धो डालने के लिए, नरदेह को सार्थक करने के लिए अगर कोई उपाय है, तो वह एकमात्र उपाय है कि हिंदू धर्म का और हिंदू समाज का त्याग करें।

हिंदू धर्म में क्या आप स्वतंत्र हैं?

कुछ लोग कहेंगे कि हर नागरिक को कानूनन जितनी व्यवसाय की स्वतंत्रता है, उतनी ही व्यवसाय की स्वतंत्रता आपको भी है, हर व्यक्ति को जितनी व्यक्तिगत स्वतंत्रता है उतनी आपको भी है। लेकिन उनके इस कथन में कहां तक सच्चाई है, यह आप लोगों को गहराई से सोचना होगा। जिसे समाज विरासत में मिले व्यवसाय से अलग कोई व्यवसाय करने नहीं देता, उसे यह बताने का क्या मतलब है कि तुम्हें व्यवसाय की स्वतंत्रता है? जिसके लिए संपत्ति कमाने का कोई रास्ता खुला नहीं है, उसे यह बताने से क्या हासिल कि तुम्हारी संपत्ति को कोई छुएगा भी नहीं, अपनी संपत्ति को भोगने के लिए तुम आजाद हो? पैदाइशी अपवित्रता के कारण जिसे कोई नौकरी नहीं मिल पाती, जिसके मातहत काम करना लोगों को अपना अपमान लगता है, ऐसे व्यक्ति से यह कहना कि तुम्हे कोई भी नौकरी करने का अधिकार है, असल में उसका मजाक उड़ाना ही है। कानून ने उसे कई अधिकार दिए होंगे, लेकिन अगर समाज उसे उन अधिकारों का उपभोग करने दे, तभी उन्हें अधिकार कहा जा सकता है। अस्पृश्य अच्छे कपडे पहन कर घूम सकते हैं, यह अधिकार कानून ने उन्हें दिया है, लेकिन हिंदू समाज उन्हें वैसे कपड़े पहनने नहीं देता, तो फिर उस अधिकार का क्या मतलब है? तांबा और पीतल के बर्तनों में पानी रखने का, भरने का, लाने का अधिकार अस्पृश्यों को कानून ने दिया है, लेकिन हिंदू समाज अस्पृश्यों को धातू के बर्तन इस्तेमाल नहीं करने देता, तो फिर उस अधिकार से उन्हें क्या हासिल? कानून उन्हें अधिकार देता है कि वे अपने घरों पर खपरैलें बिछाएं, लेकिन हिंदू समाज उसे खपरैलें डालने नहीं देता, तो उसे प्राप्त अधिकार का क्या मतलब है? ऐसे कई सारे

उदाहरण दिए जा सकते हैं। सारांश कि, वे उसी अधिकार को अपना मान सकते हैं, जिस पर अमल करने की समाज उन्हें इजाजत देता है। कानून से अधिकार प्राप्त होने के बावजूद अगर समांज अड़ंगा खड़ा करे, तो उस अधिकार के कोई मायने नहीं रह जाते। अस्पृष्य लोगों को कानूनी आजादी से अधिक सामाजिक आजादी की ज्यादा जरूरत है। जब तक सामाजिक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं होती, तब तक कानून आपको भले कितनी ही आजादी दे, उसका कोई मतलब नहीं। कुछ लोग कहेंगे कि तुम्हें शारीरिक स्वतंत्रता प्राप्त है, तुम्हें जहां कानूनन मनाही ना हो, वहां जाया जा सकता है, कानूनन मनाही ना हो, वह बात आप खुले आम कह सकते हो। किन्तु इस तरह की आजादी का क्या मतलब। मानव के पास शरीर है, उसी तरह मन भी है। व्यक्ति को जितनी शारीरिक स्वतंत्रता की आवश्यकता है उतनी ही मानसिक आजादी की भी आवश्यकता होती है। केवल शारीरिक आजादी के कोई मायने नहीं। मानसिक आजादी ज्यादा महत्वपूर्ण है। शारीरिक आजादी किसलिए दी जाती है? इसलिए कि आप मनमाफिक व्यवहार कर सकें। कैदी के पैर की जंजीरें खोल कर उसे आजाद करने का मतलब क्या है? मतलब यही है कि वह दुनिया भर में घूम कर अपनी काबिलियत का फायदा उठाए। लेकिन जिस व्यक्ति का मन आजाद नहीं है उसके लिए इस तरह की बाहरी आजादी का क्या फायदा? मानसिक स्वतंत्रता ही सच्ची आजादी है। जिसका मन आजाद नहीं वह खुला (मुक्त) होकर भी गुलाम है। जिसका मन आजाद नहीं, वह कैदी भले न हो, लेकिन वह जेल में है। जिसका मन आजाद नहीं, वह जिंदा रह कर भी मरा हुआ है। मन की आजादी, व्यक्ति के जिंदा होने की निशानी है। लेकिन आपकी मानसिक स्वतंत्रता खत्म नहीं हुई है। आप मानसिक रूप से स्वतंत्र हैं, इसका क्या सबूत है? किसके पास मानसिक आजादी है, ऐसा कहा जा सकता है? जो अपनी बुद्धि जाग्रत रख कर अपने क्या हक हैं, अपने अधिकार क्या हैं, और अपने कर्त्तव्य क्या हैं, यह जान लेता है, उसे ही मैं आजाद इन्सान कह सकता हूं। जो हालात का गुलाम नहीं बना, जो हालात पर काबू पाने के लिए हमेशा तैयार रहता है, वही आदमी आजाद होता है, ऐसा मैं समझता हूं। जो स्थितियों का दास नहीं हुआ, स्थितियों पर जो काबू पाने के लिए हमेशा तैयार रहता है, वही आदमी आजाद है, ऐसा मैं कहता हूं। जो रूढ़ियों के आधीन नहीं हुआ, जो गतानुगतिक नहीं बना, उसके विचारों की ज्योति बुझी नहीं, वही स्वतंत्र है, यह मेरा कहना है। जो दूसरों के वश में नहीं होता, जो दूसरों की सुनाकर अपने निर्णय नहीं लेता, जो कार्य कारण भाव समझने के बाद ही किसी बात पर विश्वास करता है, जो अपने अधिकारों के प्रति जागरुक होता है, जो प्रतिकूल मत से डरता नहीं, किसी और के हाथ की कठपुतली नहीं बनने जितनी बुद्धि, स्वाभिमान जिसके पास है, वही आदमी आजाद है, ऐसा मेरा मानना है। जो अपनी जिंदगी का उद्देश्य और अपने जीवन को किस तरह व्यतीत करना है, यह किसी और की आज्ञानुसार तय

नहीं करता, जो अपनी बुद्धि के अनुसार अपने जीवन का उद्देश्य क्या हो तथा अपनी जिंदगी किस तरह व्यतीत करनी है, ये बातें खुद तय करता है यानी, जो पूरी तरह स्वाधीन है, वही व्यक्ति स्वतंत्र है, ऐसा मैं मानता हूं।

इस दृष्टि से देखा जाए तो क्या आप स्वतंत्र हैं? अपना जीवन और उस जीवन के उद्देश्य क्या आपके स्वाधीन हैं? मेरे मत में आप आजाद तो बिल्कुल नहीं हैं, आप दास हैं। सेवक हैं इतना ही नहीं आपके दास्यत्व की कोई सीमा नहीं है। हिंदू धर्म में किसी को भी सोचने की आजादी नहीं मिलती। जो–जो लोग हिंदू धर्म में रहेंगे उनके लिए अपनी विचारों की आजादी को तिलांजलि देना, अपनी स्वतंत्रता त्याग देना अनिवार्य है। उसका बर्ताव वेदों की तरह होना चाहिए। वेदों में अगर वैसी आज्ञा न हो, तो स्मृतियों की आज्ञा का पालन करना होगा। स्मृतियों में वैसी आज्ञा न हो, तो महाजनों के कदमों की लीक पर चलना होगा। हिंदू धर्म में बुद्धि का, विचारों का महत्व तो है ही नहीं, गुंजाइश भी नहीं है। हिंदू है तो उसे किसी न किसी की गुलामी तो करनी ही होगी। वेदों की गुलामी करें, स्मृतियों की गुलामी करें या फिर महाजनों का अनुसरण करें – अपनी सोचने–समझने की शक्ति का उसे बिल्कुल इस्तेमाल नहीं करना चाहिए। जब तक आप हिंदू धर्म में हैं, तब तक आपको सोचने की आजादी नहीं मिल सकती। कोई यह भी कह सकता है कि हिंदू धर्म ने केवल आप की ही सोचने की आजादी हर ली है, छीन ली है, ऐसा नहीं है, हिंदू धर्म को मान कर चलने वाली सभी जाति की मानसिक आजादी हर ली है। हिंदू धर्म के कारण सभी लोग बौद्धि क गुलामी में फंसे हुए हैं, यह बात सही है, लेकिन इसके कारण वे सब समदुखी हैं, ऐसी बात नहीं है। क्योंकि इस बौद्धिक गुलामी के बुरे परिणाम सब को भोगने नहीं पड़ते। स्पृश्य वर्ग के ऐहिक सुखों पर इस बौद्धिक गुलामी का कोई भी असर नहीं होता। वे अगर वेदों के गुलाम हुए, स्मृतियों के दास बने, महाजनों के मतानुसार चले, तब भी हिंदू समाज के व्यवहार में उन्हें वेदों ने, स्मृतियों ने, महाजनों ने उच्च्य स्थान दिया हुआ है। अन्यों पर हुकूमत चलाने के लिए उन्हें अधिकार दिए हुए हैं। पूरा हिंदू धर्म, वरिष्ठ वर्ग के हिंदुओं ने, वरिष्ठ वर्ग के हिंदुओं के संवर्धन के लिए रचा हुआ है। यह बात बिल्कुल निर्विवाद सत्य है। जिसे वे धर्म कहते हैं, उस धर्म में आपको उन्होंने गुलाम की भूमिका दी हुई है। इतना ही नहीं, ऐसी व्यवस्था उन्होंने कर रखी है कि इस गुलामी से कभी आप मुक्त न हो पाएं। इसीलिए, हिंदू धर्म की इस बौद्धि क गुलामी से छुटकारा पाने की जितनी आप लोगों को जरूरत है, उतनी उन लोगों को नहीं है। इस तरह हिंदू धर्म आपको दो तरह से मारक सिद्ध हुआ है। इस धर्म ने आपकी मानसिक आजादी छीन कर, आपको गुलाम बनाया हुआ है और इसी धर्म ने व्यवहार में आपको गुलामी की बदतर हालत में लाकर पटक दिया है। आप अगर आजादी चाहते हैं तो बेशक आपको धर्म परिवर्तन ही करना होगा।

अस्पृश्यों का संगठन और धर्म परिवर्तन

आज जो अस्पृश्यता निवारण का आंदोलन चलाया जा रहा है, उस पर टिप्पणी की जाती है कि अस्पृश्यों में जो विभिन्न जातियां हैं, उनमें भी आपसी व्यवहार में जातिभेद किया जाता है। महार–मांग एक–दूसरे का छुआ, एक–दूसरे के हाथ का पका भोजन खाते नहीं हैं। इन दोनों जातियों के लोग भंगी जाति के लोगों को छूते नहीं। उनके साथ अस्पृश्यता का पालन करते हैं। आपस में जाति भेद और अस्पृश्यता का पालन करने वाले लोगों को उच्च जातियों को यह कहने का अधिकार कैसे पहुंचता है कि वे जातिभेद को छोड़ दे? अस्पृश्यता को न मानें? पहले आप अपना आपसी जातिभेद का, अस्पृश्यता का निवारण करो और फिर हमारे पास न्याय मांगने के लिए आना। इस तरह की ढोंगी, शातिर सलाह उन्हें दी जाती है। इसकी जड़ में जो बात है, वह सच ही है, यह हमें मानना पड़ेगा। हालांकि इस सलाह की आड़ में किया जा रहा आरोप गलत है। अस्पृश्य वर्ग के लोग कुछ जातिभेद और अस्पृश्यता का पालन करते हैं, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता। इन बातों को मानना ही पड़ेगा, लेकिन इस अपराध के लिए वे खुद जिम्मेदार हैं, यह कहना बिल्कुल झूठ होगा। जातिभेद और अस्पृश्यता का जन्म अस्पृश्य लोगों के द्वारा नहीं हुआ। जातिभेद और अस्पृश्यता का जन्म उच्च जाति के हिंदुओं के कारण हुआ है। जातिभेद और अस्पृश्यता की नींव उन्होंने रखी है। जातिभेद और अस्पृश्यता का पालन करने का पाठ उच्च जाति के हिंदुओं ने पढ़ाया है। यह बात अगर सच है, तो जातिभेद और अस्पृश्यता की रूढ़ि की जिम्मेदारी स्पृश्य वर्ग की है, अस्पृश्य वर्ग की नहीं। अस्पृष्य लोग जातिभेद और अस्पृश्यता का पालन करते हुए उच्च वर्ग के सिखाए पाठ को बस दोहरा रहे हैं। अगर यह पाठ झूठ के बल पर खड़ा है, तो इस पाप की जिम्मेदारी उन पर जाती है, जिन्होंने यह पाठ सिखाया। जिन्होंने यह पाठ दोहराया, वे इस पाप के जिम्मेदार नहीं हो सकते। यह जवाब अगर सही भी है, तब भी मैं इससे संतुष्ट नहीं हो सकता। जिन कारणों से अस्पृश्यता और जातिभेद हमारे बीच आया, उस कारण के लिए भले हम जिम्मेदार न हों, फिर भी हमारे बीच जो जातिभेद और अस्पृष्यता पल रही है उसका निषेध न करना, उसे उसी रूप में चलने देना, हमारे लिए हितावह नहीं है। अस्पृश्यता और जातिभेद की शुरुआत के लिए भले हम जिम्मेदार न हों, लेकिन उसे नष्ट करने की जिम्मेदारी हमारे ऊपर है। यह जिम्मेदारी हम सब लोगों ने पहचानी है और इस बात पर मुझे गर्व है। मुझे अभिमान है कि महार जाति में ऐसा कोई नेता नहीं, जो यह कहता हो कि जातिभेद का पालन करो। अगर तुलना करनी हो तो वह नेताओं में ही करनी होगी। महारों में से पढ़े–लिखे वर्ग और ब्राह्मणों में से पढ़े–लिखे वर्ग के बारे में तुलना करें, तो अस्पृश्य वर्ग का शिक्षित वर्ग जातिभेद खत्म करने के लिए

ज्यादा अनुकूल है, इस बात से कोई इनकार नहीं कर सकता। इतना ही नहीं यह बात कृति से भी सिद्ध की जा सकती है। महारों का शिक्षित वर्ग इस सुधार के लिए अनुकूल है, इतना ही नहीं महारों की अनपढ़ जनता भी इसके लिए अनुकूल है, यह साबित किया जा सकता है। आज महारों में ऐसा एक भी व्यक्ति नहीं मिलेगा, जो महार और मांगों के बीच के रोटी–बेटी व्यवहार के खिलाफ हो। आपसी जातिभेद को नष्ट करने की अहमियत आप जानते हैं, इसका मुझे संतोष है। मैं आपको इसके लिए बधाई देता हूं। लेकिन क्या कभी आपने इस बात के बारे में सोचा है कि अस्पृश्यों के बीच व्याप्त जातिभेद को कैसे नष्ट किया जा सकता है? सहभोजन करने से या कभी–कभार सहविवाह करने से जातिभेद नष्ट नहीं होता। जातिभेद एक मानसिक स्थिति है, एक मानसिक व्यथा है। इस मानसिक व्यथा का जन्म हिंदू धर्म की सीख के कारण होता है। हम जातिभेद का पालन इसलिए करते हैं, क्योंकि हम जिस धर्म का पालन जिस धर्म में जी रहे हैं, करते हैं, वह धर्म हमें ऐसा करने के लिए कहता है। अगर कोई चीज कड़वी हो तो उसे मीठी बनाया जा सकता है, नमकीन, कसैली हो तो उसका स्वाद बदला जा सकता है लेकिन विष का अमृत नहीं बनाया जा सकता। हिंदू धर्म में रहते हुए, जातिभेद को नष्ट करेंगे, कहना लगभग विष को अमृत बनाने की बात कहने जैसा ही है।

अर्थात, जिस धर्म में इंसान को इंसान से घिन करने की सीख दी जाती है उस धर्म में हम जब तक हैं तब तक हमारे मन में व्याप्त जातिभेद की भावनाएं कभी भी नष्ट नहीं होंगी। अस्पृश्यों में व्याप्त जातिभेद और अस्पृश्यता नष्ट करनी हो तो उन्हें धर्म परिवर्तन ही करना पड़ेगा।

नामांतरण और धर्म परिवर्तन

अब तक मैंने आपके सामने धर्म परिवर्तन की कारण मीमांसा रखी है। मुझे उम्मीद है कि वह आपको सोचने के लिए उद्यत करेगी। जिनको यह कारण मीमांसा गहरी और कठिन लगी हो, उनके लिए इस विषय को जानना आसान हो, इसके लिए मैं कुछ सीधे साधे विषय आपके सामने रखने जा रहा हूं। इस धर्म परिवर्तन की बात में नया क्या है? सच पूछो तो हिंदू और आपका सामाजिक संबंध क्या है? मुसलमान लोग जितना हिंदुओं से अलग हैं, उतने ही आप हिंदुओं से अलग हैं। ईसाई समाज जितना हिंदू समाज से अलग है, उतने ही आप भी हिंदू समाज से भिन्न हैं। ईसाई और मुसलममान लोगों से जिस तरह हिंदुओं का रोटी–बेटी व्यवहार नहीं होता, उस तरह आपका भी नहीं होता। आपका और हिंदुओं का समाज आज भी अलग–अलग हैं, दो समाज हैं। धर्म परिवर्तन करने के कारण एक समाज के दो टुकड़े हुए, ऐसा कोई नहीं कह सकता, और ऐसा किसी को लगेगा भी नहीं। आज आप लोग जिस

तरह एक दूसरे से अलग हैं, उसी तरह धर्म परिवर्तन के बाद भी अलग ही रहेंगे। धर्म परिवर्तन के कारण नया कुछ भी नहीं होने वाला है। यह यदि सच है, तो फिर मेरी समझ में एक बात नहीं आती, कि धर्म परिवर्तन के बारे में लोगों को कठिन क्या लगता है? दूसरी बात यह कि, धर्म परिवर्तन की बात भले आपको सही ना लगी हो, नामांतरण का महत्व आप सब लोग जान गए हैं, उससे आप सहमत हैं, इस बारे में कोई दो राय नहीं है। आपमें से किसी को भी जब यह पूछा जाता है कि तुम्हारी जाति क्या है? तब वह बताता है चोखामेला, हरिजन वगैरा। लेकिन वह महार नहीं बताता। नामांतरण की जरूरत ना हो तो कोई नामांतरण नहीं करेगा। इस तरह नामांतरण करने की वजह साफ है। अपरिचित व्यक्ति को यह पता नहीं चलेगा कि स्पृश्य कौन है और अस्पृश्य कौन है, और जब तक जाति का पता नहीं चलता, तब तक स्पृश्य हिंदुओं के मन में किसी भी प्रकार की दूषित भावना उत्पन्न नहीं होगी। यात्रा के दौरान स्पृश्य और अस्पृश्य बंधुभाव से व्यवहार करते हैं। एक—दूसरे से पान—बीड़ी या फलों का लेनदेन होता है, लेकिन उसी व्यक्ति को अगर जाति का पता चले, और पता चले कि वह जाति अस्पृश्यों में गिनी जाती है, तो उसके मन में तिरस्कार उत्पन्न होता है। उसे गुस्सा आता है, अपने को धोखा दिया गया इस बात से उसे गुस्सा आता है। फिर यात्रा के दौरान बनी दोस्ती का हश्र गालीगलौज और मारपीट में होता है। यकीनन कइयों को इस बात का अनुभव होगा। ऐसा क्यों होता है, यह आप सब जानते हैं। आपको जो जातिवाचक नाम मिले हैं उनसे अब इतनी दुर्गंध आती है कि उसके उच्चारण मात्र से स्पृश्य लोगों को मितली होती है। और इसीलिए आप लोग अपने को महार न कहलाते हुए, चोखामेला कह कर लोगों को धोखा देने की कोशिश करते हैं! लेकिन लोग धोखा नहीं खाते। इस बात का भी आपको अनुभव है। क्योंकि चोखामेला कहिए या हरिजन कहिए लोगों को सच्चाई का पता चल ही जाता है! आपको नामांतरण की जरुरत है, यह आपने अपनी कृति से साबित किया है। मैं आपसे बस इतना ही पूछना चाहता हूं कि अगर नामांतरण की आपको इतनी जरूरत लगती है, तो फिर धर्म परिवर्तन में आपको क्या ऐतराज हो सकता है? धर्म परिवर्तन एक तरह से नामांतरण ही है। धर्म परिवर्तन के साथ होने वाला नामांतरण आपके लिए ज्यादा फायदेमंद रहेगा। मुसलमान या ईसाई या बौद्ध कहलाना, सिक्ख कहलाना ज्यादा फायदेमंद रहेगा। मुसलमान, या ईसाई या बौद्ध कहलाना, सिक्ख कहलाना धर्मांतरण तो है ही, नामांतरण भी है। वह सच्चा नामांतरण है। इस नामांतरण में दुर्गंध नहीं है। यह नामांतरण आमूलाग्र है। इसके बारे में कोई अता—पता नहीं लगा सकता। लेकिन चोखामेला, हरिजन जैसे नामांतरण का कोई मतलब नहीं। पुराने नाम की गंद नए नाम से जुड़ जाएगी। जब तक आप हिंदू धर्म में हैं, तब तक आपको नामांतर करना ही पड़ेगा। क्योंकि आप अपने को केवल हिंदू नहीं कहला सकते। हिंदू कोई मनुष्य प्राणी है, यह कोई पहचानता नहीं। महार कह

कर नहीं चलेगा। क्योंकि उस नाम के उच्चारण के कारण कोई पास नहीं आएगा। मैं आपसे पूछता हूं कि, ऐसी बीच में मध्यमा स्थिति में लटके रहने के बजाय, आज एक नाम, कल दूसरा नाम लेकर नामांतरण करते रहने से बेहतर धर्म परिवर्तन के साथ हमेशा के लिए आप नामांतरण क्यों नहीं करते?

विरोधकों की भूमिका

धर्म परिवर्तन का आंदोलन शुरू होने के समय से ही कई लोगों ने इस आंदोलन के खिलाफ कई आरोप लगाए हैं। इन आरोपों में कितने सच हैं, इस बारे में सोचना जरूरी है। कुछ हिंदू लोग धार्मिकता की आड़ लेकर आपसे कह रहे हैं कि– धर्म कोई उपभोग की वस्तु नहीं है! हम जिस तरह एक दिन एक कोट पहनते हैं, दूसरे दिन दूसरा कोट पहनते हैं, उस तरह धर्म बदलना संभव नहीं है! हिंदू धर्म को झटक कर अगर आप पराए धर्म में चले जाते हैं, तो सोचिए, आपके जो पुरखे इतने समय तक हिंदू रहे वे क्या मूर्ख थे? – कुछ सयाने लोगों ने यह सवाल पैदा किया है। मेरी नजर में इस आरोप में कोई दम नहीं है। केवल पुरखों का धर्म है, इसीलिए किसी धर्म से चिपके रहना किसी मूर्ख को ही शोभा देगा। कोई भी सयाना आदमी इस तरह की भूमिका स्वीकार नहीं कर सकता। कहना पड़ेगा कि, केवल अपने पुरखों का है, इसीलिए धर्म परिवर्तन ना करें कहने वालों ने, शायद इतिहास नहीं पढ़ा है। पहले जो आर्यों का धर्म था, जिसे वैदिक धर्म कहा जाता है वह मुख्यतः गोमांस भक्षण करना, शराब पीना, स्वैर वर्तन, इन तीन बातों में समाया हुआ था। हजारों सालों तक भारत के लोगों ने इस धर्म का पालन किया। आज भी कुछ ब्राह्मणों में उस धर्म की ओर जाने की ललक जगती है। केवल पुरखों के धर्म का ही पालन करना हो तो, भारत के लोगों ने वैदिक धर्म छोड़ कर बौद्ध धर्म क्यों स्वीकार किया? वैदिक धर्म छोड़ कर उन्होंने जैन धर्म को स्वीकार क्यों किया? हमारे पूर्वज इस धर्म में रहे यह बात सच है, लेकिन वे अपनी खुशी से रहे, संतोष के साथ रहे, यह मैं नहीं कह सकता। इस देश में लंबे समय तक चातुर्वर्ण्य की व्यवस्था लागू थी। इस चातुर्वर्ण्य के ब्राह्मण शिक्षा लेते, क्षत्रीय लोग लडाइयां लडते, वैश्य रुपया कमाते और शूद्र सबकी सेवा करते और इस तरह के नियमों में बंधी जिंदगी चलती रही। इस तरह की जिंदगी में शूद्रों के पास विद्या नहीं थी, धन नहीं था, शस्त्रास्त्र भी नहीं थे। ऐसी विपन्न और निःशस्त्र स्थिति में आपके पुरखों को जीना पड़ा। उन्होंने यह धर्म संतोष के साथ स्वीकार किया, ऐसा कोई भी सयाना आदमी नहीं कह सकता। आपके पूर्वजों को ऐसे धर्म के खिलाफ विद्रोह करना क्या संभव हो पाता? इस बारे में सोचा जाना चाहिए। विद्रोह करना संभव होते हुए भी अगर वे विद्रोह किए बिना इस धर्म में बने रहते तो कहा जा सकता है कि उन्होंने यह धर्म खुद संतोष के साथ स्वीकारा था। लेकिन वस्तविकता देखें तो पता चलता है कि वे निरुपाय थे।

इसीलिए उन्हें इस धर्म में रहना पड़ा, यह निर्विवाद सत्य है। इस दृष्टि से देखा जाए तो, हिंदू धर्म हमारे पूर्वजों का धर्म न होकर उन पर जबरदस्ती लादी गई गुलामी थी, ऐसा कहा जा सकता है। उस गुलामी से अपने आपको मुक्त कराने के साधन उनके पास नहीं थे। इसीलिए उस गुलामी के खिलाफ वे जंग नहीं पुकार सके। उन्हें गुलामी में ही रहना पड़ा। और इसके लिए उन्हें कोई दोष नहीं दे सकता। किसी के भी मन में उनके बारे में दया भाव ही उत्पन्न होगा। लेकिन आजकल की पीढ़ी पर इस तरह की जबरदस्ती कोई नहीं कर सकता। उन्हें हर तरह की आजादी है। इस आजादी का उपयोग करते हुए अगर वे अपने आपको आजाद नहीं करा सकते, तो बड़े दुःख के साथ कहना पड़ेगा कि उनके जैसा नीच, उनके जैसे अधम, उनके जैसा परोपजीवि और कोई नहीं है।

इंसान और पशु के बीच का फर्क

पुरखों का धर्म है, केवल इसीलिए उससे चिपके रहना मूर्खता होगी। कोई भी सयाना आदमी इस तरह नहीं सोचेगा। जिस स्थिति में पैदा हुआ, उसी स्थिति में जीवन बिताने की बात, पशुओं के लिए ठीक होगी, इंसानों के लिए नहीं। इंसान और पशु में यही फर्क है कि वे अपनी उन्नति नहीं कर सकते। इंसान अपनी उन्नति कर सकता है। बदलाव के बगैर उन्नति असंभव है। धर्म परिवर्तन एक तरह का बदलाव है। और अगर धर्म परिवर्तन के बगैर उन्नति कर पाना असंभव हो तो धर्म परिवर्तन करना जरूरी है। केवल अपने बाप–दादों का है, इसलिए धर्म को अपनी उन्नति के आड़े नहीं आने देना चाहिए।

धर्म परिवर्तन के खिलाफ एक और मुद्दा उठाया जाता है। कुछ लोग यह कहते हैं कि – धर्म परिवर्तन भगोड़ापन है।" आज हिंदुओं में कई लोग अपने धर्म में सुधार करने के लिए सिद्ध हैं। उनकी सहायता से जातिभेद और अस्पृश्यता नष्ट की जा सकती है। ऐसे हालात में धर्म परिवर्तन करना पूरी तरह गलत है। हिंदू समाज सुधारकों के बारे में बाकी लोगों का जो भी मत रहा हो, मेरे मन में उनके बारे में बेहद नफरत है। मैं उन्हें अच्छी तरह जानता हूं और इन अधकचरे लोगों से मैं बिल्कुल ऊब चुका हूं। जो लोग अपनी जाति में रहना चाहते हैं, अपनी जाति में मरना चाहते हैं, अपनी जाति में शादी करना चाहते हैं, वे कहते हैं कि 'हम जातिभेद को खत्म करने वाले हैं' और उनके इस झूठे कथन पर अस्पृश्य लोग विश्वास नहीं करते, इसलिए वे गुस्सा होते हैं, यह बड़े आश्चर्य की बात है। इन लोगों की भोंडी बातों सुनता हूं, तो अमेरिका में निग्रो लोगों को मुक्त करने के लिए जिन गोरे अमेरिकन लोगों ने कोशिश की थी, उनकी मुझे याद आती है! किसी जमाने में अमेरिका के निग्रो लोगों की हालत भारत के अस्पृश्य लोगों की तरह ही थी। फर्क सिर्फ

इतना ही था कि उनकी गुलामी कानून ने प्रस्थापित की थी और आपकी गुलामी धर्म ने प्रस्थापित की है। इस गुलामी से उन्हें छुटकारा दिलाने के लिए अमेरिका के कुछ सुधारक कोशिश कर रहे थे। लेकिन क्या हम, हिंदू समाज सुधारकों की और अमेरिका के निग्रो लोगों को गुलामी से छुटकारा दिलाने वाले सुधारकों की आपस में तुलना कर सकते हैं? काले हब्शी लोगों को गुलामी से छुटकारा दिलाने के लिए अपने ही रक्तमांस के गोरों के साथ अमेरिकन सुधारवादियों को तगड़ी लड़ाई लड़नी पड़ी। उन्हें गुलामी में रखना चाहिए, कहने वाले कई गोरों की उन्होंने जानें लीं, इस कोशिश में अपने कई लोगों की जानें गंवाईं। उन प्रसंगों के वर्णन जब इतिहास में पढ़ते हैं, और हमारे समाज सुधारकों के चित्र आंखों के सामने लातें हैं तब कहना पड़ता है, "कहां राजा भोज और कहां गंगू तेली!" अपने आपको सुधारक कहलाने वाले भारत के अस्पृश्यों के मददगारों से पूछने का मन होता है कि अमेरिका के गोरों ने निग्रों के छुटकारे के लिए जो आपस में ही गृह युद्ध किया था, वैसा मुकाबला करने के लिए क्या आप सिद्ध हैं? अगर आप तैयार नहीं हैं, तो सुधार की खोखली बातें करने में क्या धरा है? हिंदुओं में अस्पृश्यों के लिए लड़ने वाले सबसे बड़े व्यक्ति हैं गांधी! उनकी सोच और पहुंच कहां तक है? अंग्रेज सरकार के खिलाफ निःशस्त्र प्रतिकार की लड़ाई लड़ने वाले गांधी अस्पृश्य लोगों पर जुल्म करने वाले हिंदुओं का मन दुखाने के लिए तक तैयार नहीं हैं! उनके खिलाफ सत्याग्रह करने के लिए तक तैयार नहीं हैं! इतना ही नहीं उनके खिलाफ कानूनी इलाज करने के लिए भी तैयार नहीं हैं! इन सुधारकों की उपादेयता क्या है, मैं समझ नहीं पा रहा हूं।

असल में गलती स्पृश्य लोगों की है

कुछ लोग अस्पृश्यों की सभाओं में आकर स्पृश्यों को बड़े ही जोश के साथ गालियां देंगे। कुछ लोग अस्पृश्यों की सभा में आकर बडी अकड़ के साथ, अस्पृश्यों से कहेंगे कि भाइयों, आप साफ–सुथरे रहें, शिक्षित हों जाइए, अपने पैरों पर खड़े रहें, आदि–आदि। सच कहें तो अगर कोई आरोपी है तो यहां स्पृश्य वर्ग ही आरोपी है। गलती स्पृश्य वर्ग से ही हो रही है। लेकिन कोई स्पृश्य वर्ग की सभा लेकर उन्हें दो–चार बातें समझाएंगे? बिल्कुल नहीं। हिंदू धर्म में रहते हुए ही आप अपनी लड़ाई जारी रखें, हम–आप मिल कर उसे जारी रखेंगे कहने वाले सुधारकों को मुझे दो बातों की याद दिलाना जरूरी लगता है। बीते महायुद्ध में, एक अमेरिकन और एक अंग्रेजी आदमी के बीच हुआ वार्तालाप मैंने पढ़ा था, वह काफी बोधप्रद होने के नाते यहां उसका जिक्र करना मुझे उचित लगता है। उनकी बातचीत का विषय था, लड़ाई कब तक जारी रखी जाए। उस अमेरिकी आदमी के प्रश्न का जवाब देते हुए

अंग्रेज आदमी ने अकड़कर कहा था, "आखिरी फ्रेंच आदमी मारा जाने तक हम यह लड़ाई लड़ेंगे!" हिंदू समाज सुधारक जब कहते हैं, कि अस्पृश्यता की लड़ाई हम आखिर तक लड़ेंगे, 'तब आखरी अस्पृश्य मारे जाने तक लड़ेंगे। कम से कम उसका यही मतलब मेरी समझ में आया है। किसी और का सिर हथेली पर लेकर युद्ध क्षेत्र में उतरने वालों पर हमें कितना भरोसा करना होगा इस बारे में फैसला करना आपके लिए भी मुश्किल नहीं है। हमारी लड़ाई में अगर हमीं मरने वाले हैं तो फिर बेकार की जगह लड़ाई छेड़ने का मतलब ही क्या है! हमारा उद्देश्य हिंदू समाज में सुधार लाना नहीं है। असल में, वह हमारा काम भी नहीं है। अपनी आजादी प्राप्त करना हमारा उद्देश्य है। इसके अलावा हमें और कुछ करना नहीं है। धर्म परिवर्तन से अगर हमें आजादी मिलती हो तो हिंदू समाज की लड़ाई में हम अपनी गर्दन क्यों फंसाएं? उस लड़ाई में अपनी ताकत/सामर्थ्य की, शक्ति और धन की आहुति क्यों दें? कोई यह गलतफहमी कत्तई न पालें कि हिंदू समाज में सुधार लाना यही अस्पृश्यता निवारण आंदोलन का मुख्य उद्देश्य है। अस्पृश्यता निवारण आंदोलन का प्रमुख उद्देश्य अस्पृश्यों को सामाजिक आजादी उपलब्ध करा देना ही है। और यह भी सच है कि यह आजादी धर्म परिवर्तन के बगैर उन्हें मिलने वाली नहीं है। अस्पृश्यों को समाज में समता का स्थान पाना है। मैं यह बात मानता हूं। सचमुच समता की प्राप्ति यह उनके आंदोलन का एक उद्देश्य है। लेकिन उस समता को पाने के लिए उन्हें हिंदू धर्म में ही रहना चाहिए, वरना उन्हें समता मिलेगी नहीं, ऐसा कोई कह नहीं सकता। समता प्राप्त करने के दो रास्ते मुझे दिखाई देते हैं, हिंदू धर्म में रह कर समता प्राप्त करना या फिर धर्म परिवर्तन कर समता प्राप्त करना। हिंदू धर्म में रह कर समता प्राप्त करनी हो तो केवल छुआछूत से पिंड छुड़ा कर काम नहीं बन सकता। रोटी–बेटी व्यवहार हुआ तो ही समानता प्राप्त हो सकती है। इसका मतलब यही है कि चातुर्वर्ण्य व्यवस्था खत्म हो जानी चाहिए। और ब्राह्मण धर्म का खात्मा हो जाना चाहिए। क्या यह बात संभव है? अगर संभव नहीं हो तो हिंदू धर्म में रहते हुए समता की उम्मीद करना क्या सही होगा? इस कोशिश में क्या आप सफलता पाएंगे? उस तुलना में धर्म परिवर्तन का रास्ता बहुत आसान है। हिंदू समाज, मुसलमान समाज के साथ समानता से पेश आता है। हिंदू समाज, ईसाई समाज के साथ समानता से पेश आता है। यानी कि, धर्म परिवर्तन से बड़ी सहजता से सामाजिक समता प्राप्त हो सकती है। अगर यह सच है तो फिर आप धर्म परिवर्तन जैसे आसान तरीके क्यों नहीं अपनाते हैं? मेरे मत में धर्म परिवर्तन का उपाय अस्पृश्यों की तरह हिंदुओं के लिए भी सुखावह होने वाला है। हिंदू धर्म में रहेंगे, तब तक आपको उनके साथ छुआछूत के लिए, पानी के लिए, रोटी के लिए, बेटी के लिए संघर्ष करते, झगड़ते रहना पड़ेगा। जब तक यह संघर्ष जारी रहेगा, तब तक आपमें और उनमें यह बखेड़ा जारी रहेगा। आप एक–दूसरे के दुश्मन बने रहेंगे। धर्म परिवर्तन किया तो कलह की जड़ ही मिट

जाएगी। आपको उनके मंदिरों पर हक बताने का अधिकार नहीं रहेगा और जरूरत भी नहीं रहेगी। सहभोजन कीजिए, सहविवाह कीजिए आदि सामाजिक अधिकार के लिए संघर्ष की वजह ही खत्म हो जाएगी। ये झगड़े मिटेंगे, तो आपस में भाईचारा बढ़ेगा, आपस में प्रेम पैदा होगा। आज मुसलमान और ईसाई समाज के साथ हिंदुओं के कैसे संबंध हैं, देखिए। आपकी तरह हिंदू लोग मुसलमान या ईसाई लोगों को भी अपने मंदिरों में आने नहीं देते। आपकी ही तरह उनके साथ भी रोटी–बेटी व्यवहार नहीं करते। इसके बावजूद उनमें और हिंदुओं के बीच जो भाईचारा है, वह आप के और हिंदुओं के बीच नहीं है। इस फर्क का कारण यही है, कि हिंदू धर्म में रहने के कारण हिंदू समाज के साथ सामाजिक और धार्मिक अधिकारों के लिए आपको संघर्ष करना पड़ता है। लेकिन हिंदू धर्म से बाहर जाने के कारण उन्हें हिंदुओं के साथ धार्मिक और सामाजिक अधिकारों के लिए झगड़ना नहीं पड़ता। दूसरी बात यह है कि हिंदू समाज में उन्हें किसी भी तरह के सामाजिक अधिकार न होते हुए भी, यानी कि उनके साथ किसी भी तरह रोटी या बेटी व्यवहार नहीं होते हुए भी हिंदू समाज उनके साथ असमान व्यवहार नहीं करता। धर्म परिवर्तन से अगर समानता प्राप्त होती है, धर्म परिवर्तन से अगर हिंदू और अस्पृश्य के बीच भाईचारा पैदा हो सकता है, तो फिर समता प्राप्त करने का यह सीधा–सादा और आसान उपाय अस्पृश्य लोगों से क्यों न स्वीकारा जाए? इस तरह से देखा जाए तो धर्म परिवर्तन का यह मार्ग सही मायनों में आजादी दिलाने वाला है। इस पर चल कर हम सही मायनों में समता पा सकते हैं। धर्म परिवर्तन का मार्ग भगोड़ेपन का मार्ग नहीं है। वह डरपोक तरीका भी नहीं है। वह एक अक्लमंदी का रास्ता है। धर्म परिवर्तन के खिलाफ एक और मुद्दा उठाया जाता है। कुछ हिंदू लोगों का कहना है कि जातिभेद से परेशान होकर धर्म परिवर्तन करने में कुछ नहीं धरा है। हिंदू लोग बताते हैं, आप कहीं भी जाइए, जातिभेद हैं, मुसलमानों में जातिभेद हैं, ईसाइयों में जातिभेद हैं। दुर्भाग्य से इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि हिंदू धर्म के अलावा भारत के अन्य धर्मों में भी जातिभेद ने जडें जमाई हैं। लेकिन इस पाप के धनी हिंदू लोग ही हैं। उन्हीं के जरिए यह रोग फैला है और बाकी लोग भी इसके शिकार हुए हैं। उनकी दृष्टि से इसका कोई इलाज नहीं है। ईसाई और मुसलमानों में जो जातिभेद है, वह हिंदुओं जैसा ही है, यह कहना गलत होगा। हिंदुओं के जातिभेद और मुसलमान और ईसाइयों के बीच के जातिभेद में बहुत फर्क है। पहले इस बात को ध्यान में लेना जरूरी है कि मुसलमान और ईसाइयों में अगर जातिभेद है भी तो वह उस समाज का प्रमुख अंग नहीं है। 'तुम कौन हो?' इस सवाल के लिए जब कोई 'मैं मुसलमान हूं,' या 'मैं ईसाई हूं', यह जवाब देता है तो पूछने वाले की जिज्ञासा शांत होती है। लेकिन अगर उसने, 'मैं हिंदू हूं,' यह जवाब दिया तो किसी को संतोष नहीं हो सकता। तुरंत पूछा जाता है, 'तुम्हारी जात क्या है?' और इस सवाल का जवाब पाए

बगैर उसकी स्थिति का सही अंदाजा नहीं लगाया जा सकता। इससे पता चलता है कि हिंदू धर्म में जाति को कितना महत्व दिया गया है, और मुसलमान और ईसाई धर्म को कितना गौण स्थान प्राप्त है। ऊपर दिए गए उदाहरण से यह मुद्दा अपने आप साबित हो जाता है। इसके अलावा हिंदुओं के जातिभेद तथा मुसलमान और ईसाइयों के बीच के जातिभेद में और भी एक महत्वपूर्ण फर्क है। हिंदुओं के जातिभेद की जड़ में उनका धर्म है। मुसलमान और ईसाइयों के जातिभेद की जड़ में उनके धर्म का अधिष्ठान नहीं है। हिंदू अगर कहें कि हम जातिभेद नष्ट करेंगे तो उनका धर्म उनके आड़े आएगा, लेकिन मुसलमान और ईसाई अगर कहें कि हम जातिभेद को नष्ट करेंगे तो उनके इस इरादे के बीच उनका धर्म आड़े नहीं आएगा। इतना ही नहीं ऐसे काम में हो सकता है उन्हें अपने धर्म से बड़ी मदद मिल सकती है। समर्थन प्राप्त हो सकता है। जातिभेद सर्वत्र है, यह अगर मान भी लिया जाए, तो उसका निष्कर्ष यह कत्तई नहीं निकलता कि हमें हिंदू धर्म में ही रहना है। जातिभेद अगर अनिष्ट है, तो हमें यह मानना होगा कि जिस समाज में जाने से जातिभेद की तीव्रता कम भोगनी पड़ेगी अथवा जिस धर्म में जाने से जातिभेद को जल्द से जल्द, आसानी से और सहजता से मिटाया जा सकेगा, उस समाज में जाना चाहिए, यही सही और तर्क पर खरा उतरने वाला सिद्धांत है।

'केवल धर्म परिवर्तन से क्या होगा? आप अपनी धार्मिक और शैक्षणिक स्थिति में सुधार लाने की कोशिश कीजिए', कुछ हिंदू लोग ऐसा भी बताते हैं। इस सवाल के कारण हममें से कुछ लोग दुविधा में पड़ सकते हैं। इसीलिए इस बारे में सोचना जरूरी है, ऐसा मुझे लगता है। पहले यह सोचना होगा कि, आपकी आर्थिक और शैक्षणिक हालत में सुधार लाने की कोशिश कौन करेगा? आप? या फिर आपको जो इस तरह का उपदेश देते हैं वे लोग? जो हिंदू लोग आपको इस तरह का उपदेश देते हैं, वे बोलने के अलावा और कुछ करेंगे, ऐसा नहीं लगता, करने की उनकी कोई तैयारी भी देखने में नहीं आई है। उल्टे, अपनी जाति के प्रति जागरुक रह कर, अपनी जाति की आर्थिक हालत सुधारने में हिंदू लोग लगे हुए हैं। ब्राह्मण लोग ब्राह्मण औरतों के लिए प्रसूतिगृह, ब्राह्मण बच्चों के लिए स्कॉलरशिप, ब्राह्मण बेकारों को नौकरी दिलाना आदि कामों में लगे हुए हैं। सारस्वत भी यही कर रहे हैं। कायस्थ, मराठे यही करने में लगे हुए हैं। 'हर कोई अपने लिए और जिसका कोई नहीं उसका खुदा', ऐसी हालत यहां है। आपको अपनी उन्नति खुद हासिल करनी होगी। कोई और आपकी मदद नहीं करेगा। अगर सही स्थिति ऐसी है, तो इन लोगों की ओर ध्यान देकर क्या हासिल होगा? केवल दिग्भ्रमित कर समय गंवाने के अलावा इसका और कोई मतलब नहीं हो सकता। अगर आपको खुद अपनी हालत में सुधार करना हो, तो फिर हिंदू लोगों के कथनों पर ध्यान देने की कोई जरूरत

नहीं है। असल में उपदेश देने का उन्हें कोई अधिकार भी नहीं है। तथापि, इतना ही कह कर इस सवाल को मैं यूं ही छोड़ नहीं देना चाहता। इसका खंडन करना मुझे आवश्यक लगता है।

जो हिंदू लोग यह पूछते हैं कि 'केवल धर्मांतरण से क्या होगा?' उनकी विचारशून्यता पर मुझे बड़ा अचरज होता है। भारत के सिक्ख, मुसलमान और ईसाई लोग पहले सब हिंदू ही थे, और उनमें से ज्यादातर शूद्र और अस्पृश्य थे। जिन हिदू लोगों ने हिंदू धर्म छोड़ कर सिक्ख धर्म अपनाया, ईसाई धर्म अपनाया उनकी कोई उन्नति नहीं हुई, क्या ऐसा इन लोगों का कहना है? अगर उनका कहना सच नहीं हुआ, धर्म परिवर्तन से उसकी उन्नति हुई है यह अगर मानना पड़े तो धर्म परिवर्तन से अस्पृश्यों की उन्नति नहीं होगी, कहने में कितनी सच्चाई हो सकती है, इसके बारे में वे खुद सोचें। धर्म परिवर्तन से कुछ नहीं होगा, कहने वालों का मतलब शायद यही होता है कि धर्म बेकार की चीज है। यह मेरी समझ में नहीं आता कि लोग यह कहते हैं कि, धर्म बेकार की चीज है, उससे न कोई लाभ होता है न कोई नुकसान होता है, वे इस बात का आग्रह क्यों कर रहे हैं कि अस्पृश्य लोग हिंदू धर्म में ही रहें। धर्म ही बेमतलब की चीज है, मानने वाले इस बारे में क्यों माथापच्ची करें कि कोई किसी धर्म में रहे या उस धर्म को छोड़ कर चला जाए? केवल धर्म परिवर्तन से क्या होगा ऐसा जो हिंदू लोग पूछते हैं उनसे मैं पूछना चाहता हूं कि केवल स्वराज्य से क्या होगा? भारत के लोगों की भी अस्पृश्य लोगों की तरह ही आर्थिक और शैक्षणिक प्रगति होना जरूरी अगर है, तो फिर केवल स्वराज से क्या फायदा? और यदि केवल स्वराज से देश का फायदा होता हो तो धर्म परिवर्तन से भी अस्पृश्यों का फायदा होना ही चाहिए। गहरे सोच–विचार के बाद सबको यह मानना ही पड़ेगा कि स्वराज की जितनी आवश्यकता देश को है, उतनी ही धर्म परिवर्तन की अस्पृश्यों को आवश्यकता है। देश को जितना स्वराज का महत्त्व है, उतना ही अस्पृश्यों के लिए धर्म परिवर्तन का महत्व है। धर्मांतरण और स्वराज इन दोनों का अंतिम उद्देश्य एक ही है। उनके अंतिम उद्देश्य में किसी तरह का कोई भेदभाव नहीं। वह अंतिम उद्देश्य है, स्वतंत्रता की प्राप्ति। आजादी अगर मनुष्य मात्र के जीवन के लिए आवश्यक है, तो जिस धर्म परिवर्तन से अस्पृश्यों को आजाद जिंदगी जीने को मिलेगी वह धर्म परिवर्तन निरर्थक है, ऐसा कोई कह नहीं सकता।

पहले उन्नति या पहले धर्म परिवर्तन?

यहां इस बात पर विचार करना भी मुझे जरूरी लगता है कि पहले आर्थिक उन्नति के बारे में सोचा जाना चाहिए कि पहले धर्म परिवर्तन के बारे में सोचा जाना चाहिए? आर्थिक उन्नति के बारे में पहले सोचा जाना चाहिए, कहने वालों से मैं असहमत हूं।

पहले धर्म परिवर्तन और बाद में आर्थिक उन्नति या फिर पहले आर्थिक उन्नति और बाद में धर्म परिवर्तन का विवाद पहले राजनीतिक उन्नति या पहले सामाजिक उन्नति के विवाद जैसा बिल्कुल नीरस है। सामाजिक उन्नति के लिए कई साधनों की जरूरत होती है। और वे सभी अपने–अपने तरीके से उन्नति के आवश्यक अंग ही होते हैं। उनमें से फलां का प्रयोग पहले करना है, और फलां का बाद में करना है, इस तरह हमेशा अनुक्रम नहीं लगाया जा सकता। लेकिन अगर इसी तरह का अनुक्रम रखना हो तो, 'पहले धर्म परिवर्तन या पहले आर्थिक उन्नति?' इस सवाल का जवाब देना हो तो मैं धर्म परिवर्तन को ही अग्रक्रम देना चाहूंगा। जब तक आप पर अस्पृश्यता का कलंक लगा हुआ है तब तक आपकी आर्थिक उन्नति कैसे हो पाएगी, यह मेरी समझ में नहीं आ रहा। आपमें से किसी ने अगर कोई दुकान खोली तो जब इस बात का पता चलेगा कि दुकानदार अस्पृश्य है तो कोई आपकी दुकान से माल नहीं खरीदेगा। नौकरी पाने के लिए अगर आपमें से किसी ने अर्जी दी और पता चला कि उम्मीदवार अस्पृश्य है, तो आपको नौकरी नहीं मिलेगी। अगर किसी की खेती की जमीन बेचनी हो और आपको पता चले, आप खरीदना चाहें और बेचने वाले को पता चले कि आप अस्पृश्य हैं, तो वह आपको अपनी जमीन बेचेगा नहीं। आप कोई भी मार्ग भले चुन लीजिए, लेकिन अस्पृश्य होने के नाते उनमें से किसी मार्ग पर चल कर आपकी आर्थिक उन्नति नहीं होगी। अस्पृश्यता हमेशा आपकी उन्नति की राह का अड़ंगा बनी रहेगी। उसे हटाए बगैर आपकी राह आसान नहीं होने वाली। धर्म परिवर्तन के बगैर उसे हटाना संभव नहीं। आपमें कुछ युवक आजकल शिक्षा के क्षेत्र में भाग्य आजमाना चाहते हैं। उसके लिए जहां कहीं से भी हो सके, वे रुपयों का बंदोबस्त करना चाहते हैं। इन पैसों के लालच के कारण जहां हैं, वहीं रह कर उन्नति करने के बारे में आप सोच रहे हैं। लेकिन ऐसे युवकों से मैं पूछना चाहता हूं कि, अगर शिक्षा लेने के बाद उसके अनुकूल नौकरी पाने की अगर कोई तजवीज नहीं है तो फिर केवल शिक्षा पाकर क्या होगा? आप शिक्षा लेकर क्या करेंगे? हममें से जो पढ़े–लिखे लोग हैं उनमें से कई लोग तो बेकार हैं, उनके पास कोई काम नहीं है। ऐसी शिक्षा का आप करेंगे क्या? मेरे मत में, इस बेकारी की बड़ी वजह अस्पृश्यता ही है। अस्पृश्यता के कारण ही आपके गुणों की कदर नहीं होती। अस्पृश्यता के कारण आपकी योग्यता बेकार चली जाती है। अस्पृश्यता के कारण आपको सेना से निकाल दिया जाता है। अस्पृश्यता के कारण आपको पुलिस में नहीं लिया जाता। अस्पृश्यता के कारण ही आप चपरासी की जगह नहीं पा सकते। अस्पृश्यता के कारण ही आप ऊंचे पदों तक पहुंच नहीं सकते। अस्पृश्यता एक शाप है। उससे आप पीड़ित हैं। उसके कारण आपकी योग्यता भस्म हो चुकी है। ऐसी हालत में आप गुणसंपादन कैसे करेंगे? और यदि किया भी तो उससे फायदा क्या होगा? आपको अगर लगता है कि, अपने गुणों का सही सम्मान हो, अपनी शिक्षा का

कुछ इस्तेमाल हो, आर्थिक उन्नति के द्वार आपके लिए खुल जाएं तो पहले आपको अपनी अस्पृश्यता से छुटकारा पाना होगा।

धर्म परिवर्तन के बारे में कुछ आशंकाएं

यहां तक हमने धर्म परिवर्तन के लिए विरोधकों ने कारण दिए हैं, उन पर विचार किया है। अब उन आशंकाओं के निराकरण की मैं कोशिश करता हूं जो धर्म परिवर्तन के बारे में सहानुभूति रखने वालों ने उपस्थित की हैं। पहले यह कि, मैंने सुना है कि, हमारे कई महार बंधुओं को चिंता है कि अगर उन्होंने धर्म परिवर्तन किया तो उनके वतन (महारकी – लगान माफी) का क्या होगा? उच्च वर्ग के धर्म परिवर्तन विरोधियों ने गांव–गांव के महारों के मन में यह डर डाल दिया है कि यदि आपने धर्म परिवर्तन किया तो फिर आपकी महारकी जाएगी। महारकी जाएगी तो खुद मुझे किसी तरह का खेद नहीं होगा यह बात आप सब लोग जानते हैं। महारों को अधोगति तक ले जाने वाली यदि कोई बात हो तो वह है, महारकी। अपना यह मत पिछले दस सालों से मैं लोगों के सामने रखता रहा हूं। जिस दिन महारकी की बेड़ियों से आपको छुटकारा मिलेगा, उस दिन मैं समझूंगा कि आपके उद्धार का मार्ग खुल गया। इसके बावजूद, जिन्हें महारकी चाहिए, उनको मैं आश्वासन देना चाहूंगा कि धर्म परिवर्तन करने से उनकी महारकी को कोई नुकसान नहीं पहुंचेगा। इस बारे में 1850 के कानून का जिक्र करना होगा। इस कानून की धारा के अनुसार किसी भी आदमी के केवल धर्म परिवर्तन करने से वारिस या मालमत्ता के अधिकारों में कोई बाधा नहीं आनी चाहिए। केवल कानूनी प्रावधान से जिन्हें संतोष नहीं होता, वे नगर जिले के हालात पर ध्यान दें। नगर जिले के कई महार ईसाई हो गए हैं। कई घरों में तो हालत यह है कि कुछ लोग ईसाई हो गए हैं और कुछ लोग महार ही रह गए हैं। इसके बावजूद, जो ईसाई हुए हैं, उनका वतन पर से अधिकार खत्म नहीं हुआ है। नगर के महारों से आपको इसका उदाहरण मिल जाएगा। इसीलिए, यह डर कोई न पाले कि धर्म परिवर्तन से महारकी के लिए जोखम पैदा होगा।

दूसरी आशंका राजनीतिक अधिकारों के बारे में है। कई लोगों ने यह आशंका व्यक्त की है कि, धर्म परिवर्तन करने से हमारे अधिकारों का क्या होगा? कोई यह नहीं कह सकता कि, अस्पृश्य वर्ग को मिले राजनीतिक अधिकारों का महत्त्व मैं नहीं पहचानता। ये राजनीतिक अधिकार पाने के लिए मैंने जितनी मेहनत और कोशिशें की हैं, उतनी किसी और ने नहीं की हैं। हालांकि, राजनीतिक अधिकारों पर ज्यादा जोर देना ठीक नहीं, ऐसा मुझे लगता है। जो राजकीय अधिकार दिए गए हैं वे यावच्चंद्रदिवाकरौ की शर्त पर – यानी जब तक सूरज–चंद्र हैं, तब तक नहीं दिए गए हैं। वे कभी ना कभी खत्म होने ही वाले हैं। अंग्रेज सरकार ने न्याय किया था

उसमें खुद के दिए राजनीतिक अधिकारों की काल–सीमा बीस साल तय की थी। पुणे करार में इस तरह की काल–सीमा तय नहीं की गई है, लेकिन उसका मतलब उसमें असीम समय दिया गया है, ऐसा कोई नहीं कह सकता। जो लोग राजनीतिक अधिकारों को महत्त्व देते हैं, वे सोचें कि उन अधिकारों के नष्ट होने पर स्थितियां क्या होंगी? जब ये राजनीतिक अधिकार खत्म हो जाएंगे, तब हमें अपनी सामाजिक सामर्थ्य का ही सहारा रहेगा। और ऐसी ताकत/सामर्थ्य अपने पास नहीं है, यह मैं पहले ही कह चुका हूं। और ऐसा सामर्थ्य हमें धर्म परिवर्तन किए बिना नहीं मिल सकता, यह भी मैं ऊपर बता चुका हूं। पास की सोच कर अब चलेगा नहीं। तुरंत मिलने वाले लाभ के कारण शाश्वत हित किस बात में है इस बात पर न सोचना अतीव दुखदायी हो सकता है। ऐसी स्थितियों में शाश्वत लाभ किन बातों में है इसके बारे में सबको सोचना चाहिए। मेरे मत में, शाश्वत हित के नजरिए से देखें तो धर्म परिवर्तन का मार्ग ही सही मार्ग है। उसके लिए अगर राजनीतिक अधिकारों को अगर छोड़ना भी पड़े तो उससे ज्यादा डरना नहीं चाहिए। धर्म परिवर्तन से राजनीतिक अधिकारों को किसी भी तरह से कोई नुकसान नहीं पहुंचता। धर्म परिवर्तन करने से अपने राजनीतिक अधिकारों को क्यों नुकसान पहुंचे, यह बात मेरी समझ में नहीं आती। आपके जो राजनीतिक अधिकार हैं, वे आप जहां भी जाएं, आपके साथ ही रहेंगे। इस बारे में मुझे किसी भी तरह की कोई आशंका महसूस नहीं होती। आप अगर मुसलमान बनेंगे, तो मुसलमान के तौर पर आपको राजनीतिक अधिकार मिलेंगे। आप ईसाई बनेंगे तो ईसाइयों की तरह आपको राजनीतिक हक मिलेंगे। सिक्ख बनेंगे तो सिक्खों को मिलने वाले राजनीतिक अधिकार आपको मिलेंगे। राजनीतिक अधिकार जनसंख्या पर आधारित हैं। जिस समाज की जनसंख्या बढ़ेगी, उस समाज के राजनीतिक अधिकारों में भी बढ़ोतरी होगी। अगर हम हिंदू समाज छोड़ कर जाएंगे तो हमारी पंद्रह जगहें हिंदू समाज को मिलेंगी ऐसा भ्रम कोई न पालें। हम अगर मुसलमान बनेंगे, तो आज जो मुसलमानों की जगहें हैं, उनमें पंद्रह की बढ़ोतरी होगी। हम अगर ईसाई बनेंगे तो हमारी जगहें ईसाई समाज को मिलने वाली जगहों के साथ जुड़ जाएंगी और उनकी संख्या बढ़ेगी। कुल मिलाकर बात यही है कि, हम जहां जाएंगे वहां हमारे राजनीतिक अधिकार भी जाएंगे। इसलिए, इस बारे में डरने जैसी कोई बात है ही नहीं। उल्टे अगर हमने धर्म परिवर्तन नहीं किया, और हिंदू धर्म में ही रहे तो क्या हमारे अधिकार हमें मिलेंगे? इस बारे में सोचिए। मान लीजिए, हिंदू लोग यदि अस्पृश्यता को नहीं मानते हैं, और अगर माना जाए तो वह एक गुनाह होगा, इस आशय का एक कानून पास कराते हैं, और इस तरह का कानून बनाने के बाद यदि आपसे पूछते हैं कि 'हमने आपकी अस्पृश्यता कानूनन मिटा दी है, अब आप अस्पृष्य नहीं रहे। आप गरीब और दरिद्री हैं। दरिद्र जातियों को हमने राजनीतिक अधिकार दिए नहीं हैं, फिर आपको क्यों दें?' तो इस सवाल

का आप क्या जवाब देंगे, इस बारे में भी आपको सोचना होगा। मुसलमान लोग, ईसाई लोग बड़ी आसानी से इसका जवाब दे सकते हैं। वे कहेंगे, हमारा समाज दरिद्री है, अज्ञानी है, पिछड़ा है, इसलिए हमें अलग राजनीतिक अधिकार नहीं दिए गए हैं। हमें ये अधिकार मिले हैं, क्योंकि हमारा धर्म अलग है, हमारा समाज अलग है, और जब तक हमारा धर्म अलग है तब तक हमें अपना राजनीतिक अधिकार मिलना चाहिए। आप जब तक हिंदू धर्म में हैं, तब तक इस तरह का रुख अपना नहीं सकते हैं। जिस दिन आप धर्म परिवर्तन करके हिंदू धर्म से अलग हो जाएंगे, तब आप इस तरह का रुख अपना सकते हैं, तब तक नहीं। जब तक आप इस तरह अलग खड़े होकर अपने अधिकारों की मांग नहीं कर सकते, तब तक आपके अधिकार सुरक्षित रहेंगे, इसका भी कोई भरोसा नहीं है। अपने राजनीतिक अधिकारों को शाश्वत मान कर चलना, अज्ञानता का लक्षण है। इस दृष्टि से देखा जाए तो धर्म परिवर्तन राजनीतिक अधिकारों के विरोधी न होकर उनके संवर्द्धन का ही वह एक हिस्सा है, ऐसा माना जा सकता है।

आप हिंदू धर्म में रहेंगे, तो आपके राजनीतिक अधिकार जाएंगे। राजनीतिक अधिकारों को बचाना हो तो धर्म परिवर्तन कीजिए। धर्म परिवर्तन से वे कायम रहेंगे।

उपसंहार

मैंने अपना मन बना लिया है। यह पक्का है कि मैं धर्म परिवर्तन करने वाला हूं। मेरा धर्म परिवर्तन किसी भी प्रकार के ऐहिक लाभ के लिए नहीं है। अस्पृश्य रहते हुए प्राप्त नहीं की जा सके, ऐसी कोई बात नहीं है। मेरे धर्म परिवर्तन की जड़ में आध्यात्मिक भावना के अलावा कोई अन्य भावना नहीं। हिंदू धर्म मेरी बुद्धि की कसौटी पर खरा नहीं उतरता। हिंदू धर्म मेरे स्वाभिमान को रास नहीं आता। लेकिन आप लोगों को आध्यात्मिक लाभ के साथ ऐहिक लाभ के लिए भी धर्म परिवर्तन करना जरूरी है। कुछ लोग ऐहिक लाभों के लिए धर्म परिवर्तन करने की कल्पना पर हंसते हैं, और उसका उपहास करते हैं। ऐसे लोगों को मूर्ख कहने में मुझे किसी तरह का संकोच महसूस नहीं होता। मरने के बाद आत्मा का क्या होगा यह बताने वाला धर्म हो सकता है, अमीरों के काम की चीज हो। खाली समय में ऐसे धर्म के बारे में सोच कर वे अपना मनोरंजन कर सकते हैं। जिंदा रहते हुए जिन्होंने सुख भोगा, उन्हें इस बात की फिकर होना स्वाभाविक है कि मरने के बाद भी उन्हें सुख मिलता रहे और जिसमें इस बारे में बताया जाता है, वही धर्म उन्हें श्रेष्ठ लगे। यह बिल्कुल स्वाभाविक है। लेकिन किसी धर्म में रह कर जो बिल्कुल राख बनते आए हैं, जो अन्न और वस्त्र तक से वंचित हैं, जिनके प्रति लोगों की इंसानियत गायब हो गई

है वे लोग धर्म के बारे में ऐहिक तरीके से ना सोचें तो क्या आंखें मूंद कर आकाश की ओर देखते रहें? इन अमीरों के वेदांतों का गरीबों को क्या उपयोग?

धर्म इंसानों के लिए होता है

मैं तो आपको साफ–साफ तौर पर यह बताना चाहता हूं कि इंसान धर्म के लिए नहीं बल्कि धर्म इंसान के लिए होता है। इंसानियत पानी हो तो धर्म परिवर्तन करें। संगठन बनाना हो तो धर्मांतरण करें। समता पानी हो तो धर्म परिवर्तन करें। आजादी पानी हो तो धर्म परिवर्तन करें। गृहस्थी में सुख लाना है तो धर्म परिवर्तन करें। जो धर्म आपकी इंसानियत की कीमत नहीं करता उस धर्म में आप क्यों रहते हैं? जो धर्म आपको शिक्षा लेने की इजाजत नहीं देता, उस धर्म में आप क्यों रहते हैं? जो धर्म आपको पानी मिलने नहीं देता, उस धर्म में आप क्यों रहते हैं? जो धर्म आपकी नौकरी के आड़े आता है, उस धर्म में आप क्यों रहते हैं? जो धर्म कदम–कदम पर आपकी मानहानि करता है उस धर्म में आप क्यों रहते हैं? जिस धर्म में इंसान के साथ इंसानियत से व्यवहार करने की मनाही हो वह धर्म नहीं सीना–जोरी की सजावट है। जिस धर्म में इंसान की इंसानियत को पहचानना अधर्म माना जाता है, वह धर्म नहीं रोग है! जिस धर्म में अमंगल पशु का स्पर्श हो तो चलता है लेकिन इंसान का स्पर्श निषिद्ध है, वह धर्म नहीं पागलपन है। जो धर्म यह बताता है कि समाज का एक वर्ग विद्या सीखने से वंचित रहे, धनसंचय न करे, शस्त्र धारण ना करें वह धर्म नहीं मानव के जीवन की विडंबना है। जो धर्म अनपढ़ों को अनपढ़ रहने की, निर्धनों को निर्धन रहने की सीख देता है, वह धर्म नहीं वह तो सजा है।

धर्म परिवर्तन से संबंधित जो जो सवाल उभरते हैं, उन पर मैंने यथामति ऊहापोह करने की कोशिश की है। इस सवाल के बारे में मेरा विवेचन हो सकता है, थोड़ा लंबा हुआ हो, अधिक विवेचन करने वाला हुआ हो, लेकिन इस सवाल पर सूक्ष्मता से सोचने का फैसला मैंने किया था। धर्म परिवर्तन के बारे में विरोधकों ने जो मुद्दे उपस्थित किए हैं उनका जवाब देना जरूरी था। मेरा मत है कि, धर्म परिवर्तन की घोषणा की सार्थकता पर यकीन होने तक धर्म परिवर्तन ना करें। किसी के मन में किसी तरह की आशंका न रहे, किसी के मन में किसी तरह का शक ना रहे, इसलिए इतनी बारीकी से इस प्रश्न पर मुझे सोचना पड़ा है। मेरे विचार आपको कहां तक सही लगेंगे, मैं कह नहीं सकता। लेकिन आप पूरी तरह से उन्हें समझेंगे, ऐसी मैं आशा करता हूं। जो लोगों को पसंद हो वही बोल कर लोकप्रियता हासिल करना व्यावहारिक बुद्धि वाले आदमी को शोभा देता है। लेकिन यह बात नेता को शोभा नहीं देती, ऐसी मेरी राय है। लोगों का भला किस चीज से होगा यह निर्भीकता से, निडरता से, लोग क्या कहेंगे इसकी परवाह किए बिना कह देता है,

उसी को मैं नेता मानता हूं। आपका हित किस में है, यह बताना मेरा कर्त्तव्य है। आपको भले वह पसंद न आए लेकिन फिर भी मुझे वह समझाना तो पड़ेगा ही। मैंने अपना कर्तव्य निभाया है। अब मेरे प्रश्न पर निर्णय करना आपका काम है। धर्म परिवर्तन के सवाल को मैंने जानबूझ कर दो हिस्सों में बांटा है। एक हिस्सा है, 'हिंदू धर्म का त्याग करना है, या हिंदू धर्म में ही रहना है?' प्रश्न का दूसरा हिस्सा है, 'अगर हिंदू धर्म का त्याग किया जाए तो किस धर्म को स्वीकार करें, या नए धर्म की स्थापना करें?' आज हमें सिर्फ पहले सवाल पर निर्णय करना है। इस सवाल पर निर्णय किए बगैर, दूसरे सवाल के बारे में सोचने या उस दिशा में तैयारी करने का कोई मतलब नहीं है। इसलिए पहले सवाल पर जो कुछ तय करना है आज कीजिए। उस पर निर्णय करने के लिए मैं आपको दूसरा मौका नहीं दे पाऊंगा। आज की सभा में आप जो भी तय करेंगे, उसी हिसाब से मैं अगला कार्यक्रम तय करूंगा। आपने अगर धर्म परिवर्तन के खिलाफ निर्णय लिया, तब तो सवाल ही खत्म हुआ। तब मुझे खुद को क्या करना है, इसका मैं खुद निर्णय करूंगा। धर्म परिवर्तन करने का अगर आपने फैसला किया, तो सब मिल कर संगठित तरीके से धर्म परिवर्तन करने का आश्वासन आपको मुझे देना होगा। धर्म परिवर्तन का निश्चय होने के बाद, हर कोई अगर अपनी मर्जी से जिस–तिस धर्म में जाने वाला हो, तो मैं आपके धर्म परिवर्तन के कार्य में नहीं पडूंगा। मेरी इच्छा है कि आप मेरे साथ ही आएं। जिस धर्म में हम लोग जाएंगे, उस धर्म में अपनी उन्नति के लिए, जो–जो कष्ट उठाने पडेंगे, जितनी मेहनत करनी होगी, वह करने के लिए मैं तैयार हूं। लेकिन, मैं कह रहा हूं केवल इसीलिए आप धर्म परिवर्तन ना करें। अपनी बुद्धि को जो ठीक लगेगा वही करें। मेरे साथ न आने का आपने निर्णय किया, तब भी मुझे दुख नहीं होगा। उल्टे, अपनी जिम्मेदारी टलने से मुझे थोड़ी राहत लगेगी। यह परीक्षा की घड़ी है, यह बात आप ध्यान में रखेंगे ही। आपकी आने वाली पीढ़ी का भविष्य, आप जैसे तय करेंगे, वैसा बनने वाला है। आजादी पाने का निर्णय अगर आज आपने किया, तो आपकी आने वाली पीढ़ी आजाद होगी। आज अगर आप पराधीन रहने का निर्णय करते हैं, तो आपकी भावी पीढ़ी भी पराधीन रहेगी। इसीलिए आपकी जिम्मेदारी निभाना बहुत कठिन है।

स्वयंप्रकाशित बनें

इस अवसर पर आपको क्या बताऊं, इस बारे में विचार करते हुए भगवान बुद्ध ने अपने भिक्खु संघ को परिनिर्वाण से पहले जो उपदेश किया था, जिसका जिक्र 'महापरिनिर्वाण सुत्त' में किया गया है, उसकी मुझे याद आती है। एक बार हाल ही में बीमारी से उठे भगवान बुद्ध विहार की छाया में फैलाए गए आसन पर बैठे थे, तब

उनका एक शिष्य आयुष्मान आनंद भगवान बुद्ध के पास आकर उनका अभिवादन कर एक तरफ बैठ गया। उसने कहा, मैंने भगवान बुद्ध को सुख में देखा है और बीमार थे तब भी देखा है। बुद्ध की बीमारी के कारण मेरा शरीर शीशे जैसा भारी हो गया और मुझे दिग्भ्रम हुआ है और धर्म की बाबत में भी कुछ सूझ नहीं रहा है। लेकिन उसी में थोड़ी राहत इस बात की है कि भिक्षु संघ के बारे में कुछ बताए बिना बुद्ध का परिनिर्वाण नहीं होगा। इस पर भगवान बुद्ध ने जवाब दिया, 'आनंद! भिक्षु संघ को मुझसे क्या चाहिए? आनंद, मैंने बिना कुछ लुका–छिपी के धर्मोपदेश किया है। इसमें तथागत ने कुछ आचार्य सूप्ति नहीं रखी है। तो फिर आनंद, तथागत भिक्खुओं के बारे में क्या बताएंगे? सो, आनंद, आप सूरज की तरह स्वयंप्रकाशित बनें! पृथ्वी की तरह परप्रकाशित न रहें! खुद पर ही भरोसा रखें! अन्य किसी के अंकित न बनें! सत्य का साथ ना छोड़ें! सत्य का ही आश्रय लें! अन्य किसी की शरण ना जाएं!" भगवान बुद्ध का यह उपदेश आप इस अवसर पर ध्यान में रखें, तो मुझे यकीन है कि आपका निर्णय गलत नहीं होगा।"[1]

1. 'जनता' : 27 जून, 1936

90
आज साधुता का केवल ढांचा बचा है

मुंबई इलाका अस्पृश्य संत समाज परिषद का अधिवेशन दिनांक 1 जून, 1936 को मुंबई इलाका महार परिषद के लिए लगाए गए मंडप में डॉ. अम्बेडकर की अध्यक्षता में हुआ था। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की धर्म परिवर्तन की घोषणा के कारण अस्पृश्य समाज में ही नहीं, बल्कि पूरे हिंदू समाज में बड़ी हलचल मची थी। सालोंसाल स्पृश्य हिंदुओं के अत्याचार सहते आए अस्पृश्य समाज के लोगों को डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर द्वारा की गई धर्म परिवर्तन की घोषणा आजादी की देववाणी के समान लगी हो तो उसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं। धर्म परिवर्तन की इस घोषणा के बाद पूरे भारत में अस्पृश्यों की सभाएं, सम्मेलन हुए और उन्होंने डॉ. अम्बेडकर की घोषणा को अपना समर्थन जाहिर करने वाले प्रस्ताव पास कर धर्म परिवर्तन के लिए अपने तैयार रहने की बात उन्हें बताई। धर्म परिवर्तन के लिए विरोध दर्ज करने वाले और दूसरों की अंजुली से पानी पीकर अपना स्वार्थ साधने वाले कुछेक हरिजनों का अपवाद छोड़ दें तो अस्पृश्य समाज को धर्मांतरण के महत्त्व का पता चल चुका है और उन्होंने अपनी सक्रिय तैयारी के लिए मुंबई में जैसी अखिल मुंबई इलाके के महार बंधुओं द्वारा परिषद आयोजित कर डॉ. बाबासाहेब के धर्म परिवर्तन के प्रस्ताव को सामुदायिक ढंग से समर्थन व्यक्त किया था, उसी तरह मातंग बंधुओं ने और मुंबई इलाके के संत–महंत, साधु, बैरागी आदि लोगों ने भी अपनी परिषद उपरोल्लिखित तारीख को ही ली थी।

इस परिषद की तैयारी के लिए साधु–संत लोगों ने एक स्वागत मंडल और कार्यकारी मंडल की स्थापना की थी और एक विनंतिपत्र प्रकाशित किया था, जो इस प्रकार था – "इस परिषद में संत समाज के सभी लोग धर्म परिवर्तन के प्रस्ताव को अपना समर्थन देकर इस प्रस्ताव पर अमल करने के लिए अपने परमपूज्य और सम्माननीय नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर जिस दिन धर्मांतरण करने के लिए कहेंगे, उसी दिन छोटे–बड़े सभी संत लोगों को उनके साथ धर्म परिवर्तन करने के लिए तैयार रहना होगा। इस तरह बात पक्की करने के बाद ही संत समाज अपनी आगे की नीति तय करने वाला है। संत समाज के हित के बारे में पूरी तरह सोच कर आगे की नीति तय की जाएगी। इस परिषद को सफल बनाने के लिए स्वागताध्यक्ष महंत शंकरराव नारायण दास बर्वे, कर्पुरनाथ गोकुलनाथ, तारकानाथ विट्ठलनाथ, वैद्व शंकरनाथ लक्ष्मण ानाथ, हरिदास योगानंद, दशरथनाथ विट्ठलनाथ, किसनदास शंकरदास महंत, रामनाथ कडकनाथ, योगिनाथ रघुनाथ, जगन्नाथ भडकनाथ, काशिनाथ तुलसीनाथ महंत, सोमनाथ दशरथनाथ, भक्तिदास आदि लोगों ने जी–तोड़ कोशिश की। किसी भी समाज पर

संत–महंतों का ही अधिक प्रभाव होता है। ऐसी स्थितियों में हिंदू धर्म के अनुसार आज तक अस्पृश्य वर्ग में ही जिनका अधिक उठना–बैठना होता था, उन संत–महंतों का ही धर्म परिवर्तन के लिए तैयार हो जाना विशेष अभिनंदनीय है। खैर...

परिषद से पहले कुछ स्वागत पद गाए गए। अध्यक्ष स्थान के लिए डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का चुनाव हुआ, तब लोगों ने खूब तालियां बजा कर इस बात का स्वागत किया। सम्मेलन का वातावरण तालियों की आवाज से गूंज उठा। पहले स्वागताध्यक्ष महंत शंकरदास नारायणदास बर्वे ने सबका प्रेम के साथ स्वागत किया। उन्होंने अध्यक्ष डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का परिचय देते हुए उन्हें ब्रह्मवेत्ता और दर्शनशास्त्री कहा। उसके बाद के अपने स्वागत भाषण में धर्म परिवर्तन और संतों का कर्तव्य विषय पर विचार व्यक्त किए गए।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की अध्यक्षता में हुई संतों की परिषद में जो प्रस्ताव सर्वानुमति से पारित किए गए वे इस प्रकार हैंः–

पहला प्रस्ताव :– 'अखिल मुंबई इलाका संत परिषद', मुंबई की ओर से सम्पूर्ण सोच–विचार के बाद जाहिर किया जाता है कि, अखिल भारतीय अस्पृश्यों के सर्वमान्य नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर की धर्म परिवर्तन की घोषणा को और मुंबई इलाका महार परिषद द्वारा पारित किए गए धर्मांतरण के प्रस्ताव को समर्थन दे रहे हैं।

प्रस्ताव की सूचना दी – 1. भक्तिदास विट्ठलदास 2. गंगाराम रघुनाथ

प्रस्ताव रखा – सालुंकेबुवा. समर्थन दिया– हरिश्चंद्र ज्ञानदेव गायकवाड़, कमालदास सेवादास.

दूसरा प्रस्ताव :– संत परिषद घोषित करती है कि धार्मिक, शैक्षिक, राजनीतिक आदि मामलों में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर के जो विचार और संदेश होंगे, वही संत समाज के धर्म, आचार–प्रचार रहेगा और संत समाज इसके अलावा अपनी कोई और नीति नहीं रखेगी।

प्रस्ताव रखा :– हरिदास तोरणे मास्टर, अनुमोदन – शिवराम गोपाल जाधव, विट्ठलनाथ तुलसीनाथ महंत।

तीसरा प्रस्ताव :– डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने धर्म परिवर्तन की घोषणा की है। उसके अनुसार पूरे अस्पृश्य समाज के धर्म परिवर्तन की घोषणा की है। तदनुसार अस्पृश्यों ने हिंदू धर्म के अलावा अन्य किसी भी धर्म को स्वीकारना तय किया है। हमें इस नए धर्म की सीख अस्पृश्य समाज को देना जरूरी है, इसलिए यह संत

परिषद इस नए धर्म की पहचान कराने और उपदेश देने के लिए अपने प्रचारक देने के लिए तैयार है।

प्रस्ताव रखा – पतीतपावन बुवा। अनुमोदन दिया – दिगंबरनाथ नागनाथ कांबले।[1]

उपर्युक्त प्रस्ताव पर प्रमुख लोगों के भाषणों के बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर से भाषण की विनती की गई। तब, उन्होंने अपने भाषण में कहा,

"संत मंडली और भाइयों–बहनों,

मैं खुद साधु नहीं हूं, लेकिन मेरा खानदान साधु का है। मेरे खानदान में लगभग तीन पीढ़ियों तक बड़े श्रेष्ठ लोग साधु हुए। मेरे जीवन का लंबा समय संत समागम में बीता है। मुझे लगता है कि साधु हमारे लिए कई काम कर सकते हैं। उन सबके बारे में सोचने, विचार–विमर्श के लिए ही आज की यह संत सभा बुलाई गई है।

हमारे संतों ने एक बढ़िया काम किया है। हिंदू धर्म में शूद्रों को विद्या पाने का अधिकार नहीं था। इतना ही नहीं, अगर आप मनुस्मृति पढ़ें, तो आपको पता चलेगा कि उसमें कहा है कि अगर कोई शूद्र वेदाध्ययन करेगा तो उसकी जीभ काट डालें, उसके कान में गरम सीसा डालें आदि। संत समाज ने अस्पृश्य वर्ग को ज्ञान देने का महान कार्य किया है। उनका काम और उसे पूरा करने के लिए उन्हें जिस तरह के अत्याचारों को सहना पड़ा उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। शूद्रों को ज्ञानप्राप्ति न हो, इसलिए हिंदुओं द्वारा किए गए कठोर बंदोबस्त के बावजूद और दबाव के बावजूद, इन संत लोगों ने ज्ञान प्राप्त करने की कोशिश की। उनकी ज्ञान की लालसा बहुत बड़ी थी। इसी साधु समाज द्वारा कुछ ऐसे धार्मिक ग्रंथ लिखे हैं कि वैसे ग्रंथ आज मिलना कठिन हैं। आज कई अस्पृश्य संतों के पास ऐसे कई हस्तलिखित पुरातन ग्रंथ हैं, जैसे हिंदू धर्माभिमानियों के पास भी नहीं होंगे। संत समाज ने अस्पृश्यों को जो ज्ञान दिया है, उसके लिए हमें उनका ऋणी रहना चाहिए।

आज संत समाज की स्थिति क्या है? जिन लोगों ने संतत्व स्वीकारा, उससे उन्हें खुद को क्या फायदा हुआ? उन्होंने आज तक क्या कमाया? अपनी ईश्वर भक्ति और ज्ञानप्राप्ति से क्या उनकी अस्पृश्यता खत्म, नष्ट हुई? उन पर लगा अस्पृश्यता का ठप्पा कभी भी धुला नहीं। महार संत, महार ही रहा। महार संत भले कितना ही विद्वान क्यों न हो, वह ब्राह्मण का गुरु नहीं बन सकता, इस तरह के वचन हिंदू धर्म के दिग्गजों ने लिख रखे हैं!

---

1. जनता : 4 जुलाई, 1936

आज हमें सोचना होगा कि संत समाज की क्या जरूरत है? संत समाज की स्थापना पहले भगवान बुद्ध ने की। उनके जमाने में इस समाज को भिक्खु समाज कहा जाता था। भगवान बुद्ध ने भिक्खु समाज की स्थापना क्यों की? क्योंकि समाज के सभी लोग अपने प्रपंच में उलझने के कारण उनका बौद्धिक विकास नहीं हो पाता। ऐसा समाज सत्य और कुछ समय बाद समाज से भी महरूम होता है। इसीलिए समाज स्वार्थरहित और आदर्श होना चाहिए। इसी विचार से भगवान बुद्ध ने भिक्खु समाज की स्थापना की। भिक्खुओं पर उन्होंने कई निर्बंध लगाए ताकि उनका मन दोबारा प्रपंच की तरफ न मुड़े। भिक्खुओं का प्रमुख काम था, स्वधर्म का प्रचार और प्रसार करना। आज का संत समाज बुद्ध के समय के भिक्खु समाज का ही कठिनतम रूप है। आज इस समाज की भिक्षुत्व की संकल्पना खत्म हो चुकी है और भिक्षा मांगना केवल पेट भरने का धंधा बन कर रह गया है।

संतों पर समाज की जिम्मेदारी होना जरूरी है। लेकिन आज के साधू लोग करते क्या हैं? बदन में राख लगा कर समाज से दूर रहते हैं। जटाएं, बढ़ी हुई दाढ़ी, मालाएं, रंगीन कपड़ों के टुकड़ों से ही साधु नहीं बनते, ये केवल बाहरी लक्षण हुए। आज समाज में हर कहीं अधोगति के लक्षण दिखाई दे रहे हैं। समाज में हर जगह जुल्म और जबर्दस्ती के लक्षण दिखाई दे रहे हैं। समाज में हो रहे अत्याचार, जोर–जुल्म का प्रतिकार करना साधुओं का कर्त्तव्य है। वही लोक कल्याण है। वही असल लोक सेवा है।

धर्म परिवर्तन के काम में इन्हीं संतों की बड़ी मदद होगी। हम जो नया धर्म स्थापन करने जा रहे हैं, उस धर्म का महत्त्व गांव–गांव जाकर प्रसार करने के लिए उनकी बहुत मदद मिलेगी। ये लोग धर्म का उपदेश करने के काम बहुत अच्छी तरह से करेंगे। इन विद्वानों के हाथों नए धर्म की शिक्षा देने के काम को बहुत अच्छी तरह अंजाम दिया जाएगा।

आज साधुता का केवल ढांचा भर रह गया है। इन साधुओं को चाहिए कि इस नए कार्यक्रम को अपने में संचारित करके नया जीवन प्राप्त करें। आज केवल गले की मालाओं को नहीं वरन् स्वार्थत्याग को बहुत महत्त्व प्राप्त है। इसीलिए संतों को महान धर्म स्थापन करने का नया कार्य शुरू करना चाहिए। इतना ही कह कर मैं अपना भाषण पूरा करता हूं।"[1]

इस समारोह में संतों की तरह अन्य लोग भी उपस्थित थे। उनमें मुंबई इलाका महार परिषद के अध्यक्ष मि. बी. एस. वेंकटराव, भाई अनंतराव चित्रे, मे. शिवतरकर,

1. अस्मितादर्श : संपादक – गंगाधर पानतावणे, दिवाली अंक, 1978

सुभेदार सवादकर, डी. वी. प्रधान, एम. के. कर्णिक, दिवाकर पगारे, रेवजीबुवा डोलस, संभाजी तुकाराम गायकवाड़, अण्णासाहेब पोतनीस, चांगदेव मोहिते, शांताराम अनाजी उपशाम, ऑ. कवली, देवराव नाईक, अमृतराव रणखांबे, भाऊराव गायकवाड़ आदि प्रमुख लोग उपस्थित थे। उसी तरह संत महंत मंडली से पतितपावन दास बुवा, गणपतबुवा उर्फ मडकेबुवा, शिवराम गोपाल जाधव, सेवकनाथ शृंगीनाथ, जगन्नाथ तारक नाथ, गणेशनाथ सिद्धनाथ, बुद्धिनाथ विठ्ठलनाथ, भाविकनाथ भडकनाथ, चंचलनाथ भडकनाथ, भडकनाथ आलखनाथ, सेवकनाथ, केशवनाथ, माधवदास देवकादास, मेनीनाथ तारकनाथ, किसनदास गोविंददास, गोपीनाथ गंगानाथ, अंकुशबुवा राघोजी फणसे, किसनदास शंकरदास, संभुनाथ गोविश्वनाथ, मंत्रीनाथ गरीबनाथ, चतुरनाथ चितगंगानाथ, आदिनाथ मेनीनात, दशरथनाथ विठ्ठलनाथ, रामनाथ कडकनाथ, बालकनाथ सेवकनाथ, श्रीपतीदास मुक्तिदास, यमाजीदास पांडवदास, अंबरदास लक्ष्मणदास, रमाजीनाथ आत्मारामनाथ, कमालदास सेवादास और गरीबनाथ तारकनाथ आदि लोग उपस्थित थे।

इस प्रस्ताव पर संत परिषद में जो भाषण हुए वे बहुत ही प्रभावी और विचारोत्तेजक थे। इससे अन्य समाजबंधुओं की तरह ही अस्पृश्य संत मंडली का भी डॉ. बाबासाहेब के कार्य को कितना समर्थन है, इसका पता चलता है। हिंदू धर्म के रीति–रिवाजों के अनुसार इन संत मंडली के आज तक जो आचार–विचार व्यवहार में रूढ़ हो चुके थे, उन्हें इस परिषद में खत्म कर दिया गया। इसके अलावा हिंदू धर्म के जिन ग्रंथों ने आज तक अस्पृश्य लोगों को गलत राहें बताईं, जिन्हें विषमता और गुलामी के वातावरण में अत्याचार सहने पर मजबूर किया, स्वाभिमान से महरूम किया उन धर्मग्रंथों का इस परिषद में खुलेआम दहन किया गया।

इस परिषद में इससे भी बडी महत्वपूर्ण एक बात हुई। आज तक पिछले हजारों साल से ये साधु–संत हिंदू धर्म की सीख के अनुसार बर्ताव करते आए थे, उन्होंने दाढ़ी–मूंछे बढ़ाई थी, वे जटाधारी भी बन गए थे। उनके गले में मालाओं की लड़ियां लटकती रहती थीं। कई संप्रदायों के संत हाथों में, कानों में, गले में गंडे, धागे मालाएं आदि पहना करते थे। लेकिन बाबासाहेब ने हिंदू धर्म की विषमता तथा अस्पृश्यों के साथ हुए अन्यायपूर्ण बर्ताव के बारे में बता कर जब धर्म परिवर्तन की घोषणा की तब इस अन्याय के प्रति साधु–संतों में भी जागरुकता आई। उन्होंने डॉ. बाबासाहेब की सलाह के अनुसार बर्ताव का निर्णय लिया। इस परिषद में हजारों सालों से मन पर हुए संस्कारों के कारण स्वीकारे गए अलंकारों का त्याग किया। परिषद के भव्य मंडप में तैयार किए गए अग्निकुंड में सैंकडों साधु–संतों ने अपनी दाढ़ी–मूंछें. जटाएं और अलंकार तथा संत–महंत होने की बाकी सभी निशानियां अग्नि को समर्पित कर दीं। इस तरह से उन्होंने अपने धर्मांतरण के निश्चय का डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर

के सामने प्रत्यक्ष कृति के जरिए प्रदर्शन किया। इन साधु–संतों के निश्चयी मन का तथा उनके द्वारा दिखाया गया मनोधैर्य, स्पृश्यवर्गीय साधुओं के लिए ही नहीं वरन् सभी लोगों के लिए उदाहरणस्वरूप रहा।

संत समाज के इस अधिवेशन का अन्य अस्पृष्य समाज पर बहुत ही परिणाम हुआ। दाढी, मूंछे, जटाएं अग्नि को समर्पित कर मुक्त हुए संतों को अस्पृश्य समाज में धर्म परिवर्तन से संबंधित प्रचार कार्य करने के लिए, या फिर समाज कि हितों के काम दिए जाएंगे। इस तरह समाज की सेवा करने के लिए कई साधू–संत तैयार हुए हैं। देवी–देवताओं के भजन–पूजन में व्यर्थ समय गंवाने के बजाय, उनका निःस्वार्थ भाव से जनसेवा करना ही ईश्वरसेवा के समान होगा। कुल मिला कर संत परिषद का यह कार्य सफल भी हुआ। लेकिन हजारों सालों से जिन रूढ़ियों से भरे धर्म के नाम से ये संत जी रहे थे, उसकी दांभिकता का भी उन्हें अहसास हुआ। इसीलिए डॉ. बाबासाहेब की धर्मांतरण की घोषणा के साथ वे उस धर्म का त्याग करने के लिए भी तैयार हुए और उन्होंने उस तरह से प्रत्यक्षकृति की। यह सब अस्पृश्य संत समाज के लिए गर्व की बात है। दाढ़ी, जटाएं आदि अग्नि को समर्पित करने का कार्यक्रम पूरा होने के बाद संत परिषद का अधिवेशन डॉ. बाबासाहेब की जयकार में संपन्न हुआ।[1]

1. जनता : 4 जुलाई, 1936

91
अपनी पार्टी के लायक उम्मीदवार को ही चुन कर विधिमंडल में भेजें*

दिनांक 1 जून 1936 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का राजनीतिक परिषद के सामने भाषण हुआ। उन्होंने अपने भाषण में कहा,

"कल ही धर्म परिवर्तन के बारे में भाषण देते हुए मैंने सामाजिक सुधार पहले या राजनीतिक सुधार पहले इस विषय पर काफी ऊहापोह किया है। इंसान की और समाज की प्रगति के लिए कई साधनों का इस्तेमाल करना पड़ता है। कौन–सी बात पहले और कौन–सी बात उसके बाद करनी है, यह विवाद ऐसे मामलों में बेकार होता है। मैं कह सकता हूं कि अस्पृश्यों को धर्म परिवर्तन की जितनी आवश्यकता है, उतनी ही राजनीति की भी है। जिस तरह से धर्मांतरण के बारे में आपकी क्या राय है, यह हमने कल आजमाकर देखा उसी तरह राजनीति के बारे में आपकी राय आजमाना बहुत जरूरी है। हम लोग कहीं बैठ कर राजनीतिक विषयों के बारे में चर्चा करें, ऐसा मुझे कई दिनों से लग रहा था। लेकिन इस प्रकार का मौका अब तक उपलब्ध नहीं हो पाया था। आज वह प्राप्त हुआ, इसका मुझे बड़ा संतोष है। राजनीति का विषय कोई आसान विषय नहीं। आप सबको यह विषय समझ में आए, इसके लिए मैं अपने विचार आसान शब्दों में व्यक्त करने की कोशिश करने वाला हूं।

आपमें से जो भी 'जनता' या कोई अन्य अखबार पढ़ते होंगे उन्हें पता होगा कि अगले साल में अप्रैल महीने की पहली तारीख को भारत देश में नए सुधार लागू होने वाले हैं। इन सुधारों के संदर्भ में हमारी नीति क्या होनी चाहिए और उन सुधारों से फायदा उठाने के लिए, हमें किस तरह का संगठन बनाना होगा, इस विषय पर सोचने–विचारने की जरूरत है।

इन राजनीतिक सुधारों के बारे में भारत के लोगों का जो मत हो सो हो। इस संविधान से भारत देश की हालत ठीक होगी या नहीं होगी, इस बारे में हमें सोचने की जरूरत नहीं है। जिन राजकीय सुधारों को लेकर विचार होने वाला है और जिन पर अमल किए जाने की बात चल रही है, वे अधूरी हैं और इसलिए अस्वीकार की जानी चाहिएं। कांग्रेस तथा अन्य पक्ष इस तरह की घोषणाएं कर रहे हैं। जो लोग इन सुधारों का विरोध करने के बारे में कहते हैं उनसे मुझे कुछ लेना–देना नहीं है। राज्य की प्रचलित व्यवस्था से भी यह व्यवस्था बुरी है, ऐसा कुछ लोगों का कहना

---

*'जनता' : 4 जुलाई, 1936

है। इस बारे में मैं इतना ही कहना चाहता हूं कि इन नए राजनीतिक सुधारों के कारण देश का बहुत भला नहीं भी हो रहा हो, मगर उन्हें लागू करने से देश की बिल्कुल उन्नति नहीं होगी, यह भी मैं नहीं कह सकता। ये राजनीतिक सुधार अधूरे हैं, कहने वालों के मुद्दों से मैं सहमत हूं। लेकिन उस राजनीतिक हालात से जोड़ कर देखें तो इनके बारे में जो कुछ लोगों की राय है कि इन सुधारों के कारण हम पिछड़ गए हैं, तो यह बात मैं नहीं मान सकता। जो लोग ऐसा कहते हैं उन्होंने राजनीति के बारे में अध्ययन नहीं किया हो, ऐसी बात नहीं है, लेकिन मैंने भी उन्हीं की तरह थोड़ी बहुत राजनीति पढ़ी है।

कुछ लोग कहते हैं कि इस नए संविधान के कारण देश पीछे हट गया है, मैं उनकी बात से भी असहमत हूं। इतना ही नहीं मुझे तो प्रामाणिकता से ऐसा लगता है कि भले उन सुधारों में कुछ कमियां हों लेकिन उनके कारण फिलहाल जो हाल हैं, उनमें निश्चित तौर पर सुधार आने वाला है।

इन राजनीतिक सुधारों को स्वीकारना नहीं चाहिए, उन पर अमल नहीं करना चाहिए, ऐसा जो लोग कहते हैं, उनसे पूछना पड़ेगा कि अगर आप सुधार नहीं चाहते हैं, और आप पूरी आजादी चाहते हैं तो उस आजादी को पाने के लिए आपके पास क्या साधन हैं? पूरी आजादी पानी हो तो सेना और सामग्री इकट्ठी कर आयरिश लोगों की तरह अंग्रेज सरकार के खिलाफ विद्रोह करना होगा। लेकिन क्या भारत के लोग यह कर सकते हैं? ब्रिटिश साम्राज्य कितना बड़ा है, उनकी सेना—सामग्री कितनी अधिक है, यह जब मैं गोलमेज सम्मेलन गया था, तब मैंने देखा है।

जो लोग सुधार नहीं बल्कि केवल आजादी चाहते हैं, उन्हें अंग्रेजों के विस्तृत साम्राज्य के साथ लड़ाई करनी हो तो इस सामग्री के साथ टक्कर ले सके ऐसी सामग्री चाहिए, जो पाना कितना कठिन है। इस कारण से कहिए या कि विश्वास है इसलिए कहिए, इस लड़ाई के लिए लोगों ने बिना अत्याचार का मार्ग अपनाया है। वह मार्ग है असहयोग आंदोलन का। यह मार्ग कितना असरदार है इसका अनुभव हाल ही में सबको हो चुका है। हवा से जैसे पेड़ हिलता है, उसी तरह अंग्रेज सरकार हिल गई। लेकिन वह पलट कर गिर नहीं गई। कॉंग्रेस द्वारा ढूंढा गया यह इकलौता इलाज पूरा नहीं पड़ा। अब दोबारा उसी राह को अपनाने में क्या हासिल यह मेरी समझ में नहीं आ रहा। मेरे मत में असहयोग का यह मार्ग बहुत ही विघातक है। उससे अगर सफलता नहीं मिली तो बहुत नुकसान होने की संभावना है।

इस अवसर पर मुझे इंग्लैंड के इतिहास में घटी एक कहानी याद आ रही है। फ्रांस में राज्यक्रांति शुरू थी, तब इंग्लैंड में राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए लोगों ने जोरदार आंदोलन छेड़ा था। ये राजनीतिक अधिकार पाने के लिए जो लोग

इंग्लैंड की संसद के साथ लड़ रहे थे, उनमें उग्र मानी गई राजनीतिक पार्टी का नेता था, चार्ल्स जेम्स फोक्स। इस पार्टी ने सभी नागरिकों को मतदाता अधिकार दिलाने के लिए जोरदार कोशिश की। उस समय संसद में धनिकों का वर्चस्व था। धनिकों की उस संसद के साथ चार्ल्स जेम्स फोक्स और उसके अनुयायी कड़ाई से झगड़े, लेकिन उसमें उन्हें असफलता ही मिली। एक आखिरी कोशिश के तौर पर उसने तथा उसके पार्टी ने पार्लियामेंट के साथ असहयोग किया। भारत में जिस तरह महात्मा गांधी का असहयोग आंदोलन चल रहा था उसी तरह इंग्लैंड में भी उस दौरान असहयोग आंदोलन बड़े जोरों से चल रहा था। उग्र पक्ष की नेता थीं लेडी पार्टलैंड। इस महिला ने जब सुना कि जेम्स चार्ल्स फॉक्स ने संसद से बहिर्गमन किया तब उसने उसे अपने घर चाय पीने के लिए बुलाया। फोक्स और उसके सहयोगी जब उस महिला के घर चाय पीने पहुंचे तब वे आपस में हो रही बातचीत में अपने असहयोग आंदोलन की शेखी बघारने लगे। उस वक्त उस महिला ने उन लोगों से जो सवाल किया वह काफी महत्वपूर्ण होने के नाते मैं आपको बता रहा हूं। उस महिला ने कहा, 'मि. चार्ल्स, आपकी असहकारिता से अगर आपका दुश्मन चित हो रहा हो, तो आपकी राह सही है। लेकिन अगर ऐसा नहीं हुआ तो इस असहयोग का कोई मतलब नहीं। प्रतिपक्ष के साथ लड़ाई करने के बजाय अगर आप हार के कारण रोते बैठे और डरपोक की तरह मैदान छोड़ कर भाग गए तो आपका दुश्मन आप पर जीत हासिल किए बगैर नहीं रहने वाला और इसीलिए, युद्ध का मैदान छोड़ जाना पागलपन ही है।' मुझे लगता है यही समीक्षा काँग्रेस पर भी लागू होती है।

हमें दो राजनीतिक सुधार मिले हैं। वे भले अधूरे हों उन्हें नकारने की बजाए बगैर उन पर अमल करते हुए हम और भी बहुत कुछ प्राप्त कर सकते हैं। मिले हुए सुधारों के जरिए हम और बहुत कुछ पा सकते हैं। कोई भी बात कानून बने बगैर नहीं पाई जा सकती। इसलिए उसके बारे में कानून बनना ही चाहिए। कम से कम अस्पृश्य लोगों का भविष्य कानून पर ही निर्भर रहने वाला है। इसीलिए आपको ये राजनीतिक सुधार स्वीकारना अनिवार्य है।

हमारे सामाजिक सुधार कानून बना कर नहीं होंगे। लेकिन हमारी आर्थिक, शैक्षिक और औद्योगिक उन्नति कानून के जरिए पायी जा सकती है। आपको उन्हीं पर निर्भर करना चाहिए। अपनी उन्नति के कानून कैसे बनेंगे यह उस बात पर निर्भर करेगा कि आप विधिमंडल में किस तरह के सदस्यों को चुन कर भेजते हैं। हम जिस तरह के प्रतिनिधि चुन कर भेजेंगे, वे हमारे समाज के हित का खयाल रखने वाले हैं अथवा नहीं, इस बात का हमें ध्यान रखना होगा। अपने समाज के हित में विधिमंडल में कानून बनाएंगे, ऐसे ही लोगों को आप चुन कर भेजें। अब तक हमें अंग्रेज सरकार से दाद मांगनी पड़ती थी। लेकिन इस नए कानून के मुताबिक अब

अंग्रेज सरकार के हाथ में कुछ नहीं बचा।

आप जिन प्रतिनिधियों को चुन कर विधिमंडल भेजेंगे, आपको उन्हीं पर निर्भर रहना होगा। आपको जिन बातों की कमी खलती है, उसे दूर करने के लिए आपको उन्हें मजबूर करना होगा। केवल प्रतिनिधियों को विधिमंडल भेजना काफी नहीं होगा। चुन कर जाने के बाद वे क्या करते हैं इस पर भी आपको ध्यान रखना होगा। मैं बार–बार आपसे कहना चाहूंगा कि आप जिस आदमी को विधिमंडल में भेजेंगे वह काबिल होना चाहिए। आप लोग भोले हैं। एक कहेगा – यह मेरे गांव का यशा महार है। दूसरा कहेगा – यह मेरे गांव का रामा महार है। तीसरा कहेगा – मेरा शंकर महार चुनकर आना चाहिए। आपके मन में इस तरह का अभिमान क्यों हो? विधिमंडल में आपका हित कौन करेगा, यही मुख्यतः आपको देखना होगा, बिनावजह गांव का, तहसील का, जिले का अभिमान लेकर ना बैठें।

उम्मीदवार को चुनते समय अगर आपने ध्यान नहीं रखा तो आपके पूरे काम का ही नाश होना तय है। एक और बात जो मुझे आपको बतानी है, वह यह कि अकेला आदमी विधिमंडल में कुछ नहीं कर सकता। मैं 1926 साल से मुंबई विधिमंडल में हूं, मेरे पास थोड़ा बहुत ज्ञान भी है। लेकिन समाज के हित में मैं कोई कार्य कर नहीं पाया। इसकी वजह है – मैं और डॉ. सोलंकी हम केवल दो ही लोग विधिमंडल में हैं, और एक दो लोगों की विधिमंडल में कुछ चलती नहीं। आप जिन प्रतिनिधियों को चुन कर भेजते हैं, वे एकता से, मिल–जुल कर, संगठित तरीके से कार्य करते हैं या नहीं, यह देखना आपका काम है। पार्टी के अनुसार जो नहीं चलते, उन लोगों को चुन कर आपका हित नहीं होगा। उसका केवल बुद्धिमान होना भी काफी नहीं है। उसकी सोच क्या है, उसका कोई पक्ष भी है, इस बारे में आपको जागरुक रहना होगा।

सौभाग्य से हमें पंद्रह सीटें मिली हैं। लेकिन जो पंद्रह जगहें हमें मिली हैं, वे पंद्रह प्रतिनिधि अगर मिल–जुल कर नहीं रहे, तो यही मानना होगा कि उन सीटों का एक तरह से बुरा इस्तेमाल हुआ। इसीलिए, हमने जिन प्रतिनिधियों को चुन कर दिया है, वे विधिमंडल में एकजुट रहेंगे, इसकी हमें कोई योजना बनानी होगी। और वह योजना इस प्रकार होनी चाहिए कि जिसके कारण ये पंद्रह उम्मीदवार पांच सालों तक विधिमंडल में न सिर्फ एकजुट होकर काम करेंगे, बल्कि समाज के हित का काम करेंगे। समाज के हित से उनका ध्यान बंटेगा नहीं। जिन–जिन जिलों में अपने लिए सीटें रखी गई हैं, उन–उन जिलों में दस–दस लोगों की एक कमेटी बनाई जाए। अलग–अलग जिलों में इस तरह कमेटियों की स्थापना हुई तो इन सभी लोगों में से जो भी लायक लोग होंगे उन सबके एक केंद्रीय मंडल की स्थापना करनी होगी

और इस केंद्रीय मंडल की ओर से सभी जिलों के प्रतिनिधियों को चुना जाए। जो उम्मीदवार चुनाव लड़ना चाहेगा, उसे अपनी उम्मीदवारी की अर्जी स्थानीय कमेटी में देनी होगी। और वह अर्जी वे अपनी सिफारिश के साथ केंद्रीय मंडल (सेंट्रल बोर्ड) भेजेंगे जहां उस अर्जी पर विचार किया जाएगा और किसी उम्मीदवार को चुना जाएगा। आपके सहयोग और संगठन के बगैर यह योजना सफल नहीं हो पाएगी। आपने अगर निश्चय किया कि हमारे बोर्ड ने जो उम्मीदवार चुन कर दिया है, हम उसी को अपना वोट देंगे तो हमें जो पंद्रह जगहें मिली हैं, उससे अधिक उम्मीदवार हम चुनेंगे। केंद्रीय मंडल जिस उम्मीदवार को चुनेगा, उस उम्मीदवार को अपनी पार्टी की सभी शर्तों का पालन करना होगा। मैंने यह शर्तें तय की हैं। आगे चल कर उनको सार्वजनिक किया जाएगा।

इस तरह राजनीति में हम बेहद महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। देखने में केवल पंद्रह सीटें होने के बावजूद अगर हम एकी से पेश आएंगे, तो मुझे यकीन है कि चुनाव के वक्त हम पंद्रह की जगह पैंतालीस सदस्य बड़ी आसानी से जिता सकते हैं। आपको इस तरह का मौका मिल रहा है।

आपको जो राजनीतिक सत्ता प्राप्त हुई है उसके बारे में भले आप ज्यादा नहीं जानते हों, लेकिन उच्च वर्ग के लोग उसकी अहमियत जानते हैं। इसीलिए वे आपको परेशान करने का मौका तलाशते रहेंगे। उसमें से भी, कौन अपना हितैषी है और कौन हितशत्रू है, इस बारे में आपको सोचना होगा, और उसी आधार पर अपना मत देना होगा। उच्च वर्ग के जो लोग हमारे हित के लिए कोशिश कर रहे हैं, हम इस तरह से उन्हें चुनाव में उनकी मदद कर सकते हैं। इस तरह से अपना गुट बड़ा हो सकता है। अस्पृश्यों में कई जातियां समाविष्ट हैं। अस्पृश्यों में महार जाति घर के बड़े भाई की तरह है। इसीलिए सभी जातियों के साथ वे भाईचारे से, अपनत्व से, समता का बर्ताव करें। उनके साथ सहकारिता का बड़प्पन हमें दिखाना होगा। आप सभी सीटों पर खुद कब्जा करके ना बैठें। अपने स्वार्थ के लिए ही सही आपको इन पंद्रह जगहों के लिए अन्यों को भागीदार बनाना होगा। क्या आप इस अनुशासन का पालन करने के लिए तैयार हैं? आप अगर तैयार हैं, तो ही मैं राजनीति में आऊंगा। आप अगर अनुशासन का पालन नहीं करेंगे तो मेरी राजनीति में कोई रुचि नहीं है, यह मैं आपको साफ–साफ बता रहा हूं।

92
धर्म परिवर्तन से अस्पृश्यों को समानता का अधिकार प्राप्त होगा*

अखिल मुंबई इलाका मातंग परिषद का अधिवेशन दादर नायगाव में मुंबई इलाका महार परिषद के भव्य मंडप में मंगलवार दिनांक 2 जून, 1936 की रात 9 बजे हुआ था। डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर द्वारा येवले में धर्मांतरण की जो घोषणा की गई थी उसे समर्थन देने के लिए मातंग बंधुओं की यह परिषद मुंबई इलाके की ओर से आयोजित की गई थी। इस परिषद में सात–आठ हजार की संख्या में मातंग पुरुष और महिलाओं का समुदाय और मुंबई इलाके के हर जिले के प्रतिनिधि उपस्थित थे। परिषद की शुरुआत में नासिक के श्री. डी. जी. रोकडे, श्री. माने, श्री. फालके का स्वागत पद्य गान हुआ। उनके बाद स्वागताध्यक्ष रामचंद्र नाथोबा कालोखे ने स्वागत का भाषण दिया। उनके बाद श्री दौलतराव चिलोबा वायदंडे ने अध्यक्ष स्थान स्वीकारने की सूचना रखी। इस सूचना को श्री. मारुतराव तूपसौंदर, बाबूराव रामजी कांबले, श्री. के. एस. सकाटे ने समर्थन दिया। उसके बाद अध्यक्ष को और डॉ. बाबासाहेब को पुष्पमालाएं अर्पण की गई। उस समय चारों ओर जयकार की ध्वनि गूंज रही थी। फूलमालाएं पहनाने के कार्यक्रम के बाद अध्यक्ष श्री. बोतालने का भाषण हुआ।

अलग–अलग जगहों से विभिन्न नेताओं के परिषद के लिए सुयश की कामना व्यक्त करने वाले संदेश आए थे। उन संदेशों में श्री शंकरराव शिवरामजी साठे (नगर), गणपत जयवंत पवार, अनंतराव दौलत लोखंडे (कोल्हापुर) आदि लोग थे। इस परिषद में मे. रामचंद्र केरू जाधव (सोलापुर), दौलतराव गायकवाड़ (सोलापूर), पांडुरंग नाना वडेकर (कर्हाड), रामचंद्र पुनाजी सकट (दौंड), किसन भाऊराव वाघमारे (नगर), सीमाराम बाबाजी लांडगे (पुणे), दादोबा शेंडगे (पुणे), रामचंद्र कालोखे (जुन्नर), शांताबाई श्रावण सकाटे (खडकी), भागवत पवार (जुन्नर), शंकर शिवराम शिंदे (जुन्नर), आर. एस. फालके (पुणे), आबा गेणू खंडाले (जेजुरी), मोहना मल्हारी साठे (नगर) आदि प्रमुख नेता लोग उपस्थित थे।

मुंबई इलाका मातंग परिषद में जो प्रस्ताव पारित हुए वे इस प्रकार थे –

प्रस्ताव 1 : (अ) इस अखिल मुंबई इलाका मातंग परिषद में पूरे सोच–विचार के बाद यह तय किया जाता है कि, समता और आजादी पाने के लिए मातंग समाज के सामने धर्म परिवर्तन के बगैर अन्य कोई चारा नहीं।

---

*जनता : 13 जून, 1936

(ब) परिषद इस बात की घोषणा करती है कि, अखिल अस्पृश्य समाज के इकलौते नेता डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर पर मातंग समाज को पूरा भरोसा है और उनके साथ मातंग समाज सामूहिक रूप से धर्म परिवर्तन करने के लिए तैयार है।

प्रस्ताव रखा – केरू रामचंद्र जाधव (सोलापुर),

समर्थन दिया – सीमा राम बाबाजी लांडगे (पुणे), आर. एस. फालके (मुंबई), कु. शांताबाई श्रावण सकाटे (मुंबई), रामचंद्र पुनाजी सकट (दौंड), बालकृष्ण बडेकर (सातारा), किसन भाऊराव वाघमारे (अहमदनगर)।

प्रस्ताव 2 – मुंबई इलाके के शहरों में जो पुलिस विभाग हैं, उनकी तरफ से थालियां पीटते हुए जो ढिंढोरा पीटा जाता है, उस काम के लिए मातंग जाति का आदमी काम पर रखें। साथ ही परिषद सरकार से विनति करती है कि गांव–गांव में जाकर ढिंढोरा पीटने के काम का कोई वेतन नहीं दिया जाता, इसलिए ढिंढोरा पीटने वाले को भरपूर वेतन दिया जाए।

प्रस्ताव रखा – के. एस. सकाटे, अनुमोदन दिया – के. एम. कालोखे

प्रस्ताव 3 – मुंबई इलाके में बुवाई के काम आने वाली फॉरेस्ट की जमीनें हम मातंग समाज को तय समय के लिए बिना लगान के फसल उगाने के लिए दें और मियाद के बाद जितना उत्पादन होगा उसका एक चौथाई लगान लें।

प्रस्ताव रखा – के. एम. कालोके

अनुमोदन दिया – शंकरबुवा सकाटे, बाबुराव रामा कांबले, डी. सी. वायदंडे, के. जी. कुचेकर, मारूती ज्ञानू तुपसौंदर।

प्रस्ताव 4 – यह परिषद सरकार से प्रार्थना करती है कि मातंग समाज में जिन–जिन के पास प्रमाणपत्र होंगे, उनके प्रमाणपत्र तथा हाजिरी को बंद कर इस जाति को अपराधियों की जाति सूची से हटा दिया जाए।

प्रस्ताव रखा – सीमाराम बाबाजी लांडगे (पुणे)

अनुमोदन दिया – के. एम. कालोखे, एस. के. देशमुख, बाबूराव दौलतराव गयकवाड़

प्रस्ताव 5 – परिषद सरकार से प्रार्थना करती है कि मुंबई इलाके के सरकारी विभागों में मातंग जाति के लोगों को चपरासी से लेकर उच्चाधिकारी तक के पदों पर तैनात किया जाए।

प्रस्ताव रखा – एस. के. देशमुख।

अनुमोदन दिया – केरू रामचंद्र जाधव

प्रस्ताव 6 – इस परिषद द्वारा मातंग समाज के रूढ़िप्रिय भाई–बहनों को चेतावनी दी जाती है कि ग्रहण अमावस्या के समय भिक्षा मांगने तथा ऐसी अन्य कई पुरानी अनिष्ट रूढ़ियों को तुरंत बंद कर दें। समाज के नाम पर बट्टा लगाने वाली इन रूढ़ियों का त्याग नहीं करने वाले भाई–बहनों के बुरे बर्ताव के बारे में मातंग समाज को सोचना पड़ेगा।

प्रस्ताव रखा – अध्यक्ष ने।

प्रस्ताव 7 – परिषद सरकार से विनती करती है कि नगर जिले के लोकल बोर्ड में मातंग समाज का नॉमिनेटेड मेंबर हो।

प्रस्ताव रखा – अध्यक्ष ने।

प्रस्ताव 8 – मातंग समाज में शिक्षा के प्रसार के लिए छात्रावासों की बहुत जरूरत है। इसीलिए, इस काम के लिए एक केंद्रीय मंडल की स्थापना कर छात्रावास खोलने के काम में समाज उनकी मदद करे। साथ ही मातंग छात्र हितचिंतक मंडल, मुंबई को भी आर्थिक सहायता दें।

प्रस्ताव रखा – डी. सी. वायदंडे

अनुमोदन दिया – के. जी. कुचेकर, पांडुरंग नाना बडेकर।

इसके बाद डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर का भाषण हुआ। उन्होंने अपने भाषण में कहा,

"भाइयों,

आप लोगों ने धर्म परिवर्तन का जो प्रस्ताव अभी–अभी पारित किया उसके लिए मैं आपका अभिनंदन करता हूं। आपने यह प्रस्ताव पारित किया इसके लिए मुझे खुशी होना स्वाभाविक है। धर्म परिवर्तन की घोषणा किसी एक जाति के लिए न होकर पूरे अस्पृश्य समाज के लिए है। अस्पृष्यों की जितनी जातियां धर्मांतरण के अनुकूल होंगी उतना अच्छा ही है। इसके बावजूद मैं धर्म परिवर्तन के बारे में आपके सामने कुछ बोलना नहीं चाहता। धर्मांतरण के बारे में अच्छे–बुरे के बारे में सोचते हुए जो कुछ कहना था, वह सब महार सभा में मैंने कहा है। वही बात फिर से दोहराने की मुझे कोई जरूरत नहीं लगती। दूसरी बात यह है कि धर्म परिवर्तन का प्रस्ताव आप

लोगों ने अभी–अभी पारित किया है। सो, जो प्रस्ताव पारित हो चुका है, उसके बारे में बोलना निरर्थक है। सच कहें तो धर्मांतरण के बारे में आपकी सभा में बोलने की मेरी बिल्कुल इच्छा नहीं थी। मातंग सभा में आकर भाषण करने की सूचना जब आपकी स्वागत समिति से आई, तब मैंने साफ तौर पर कहा था कि, भाषण देने में कोई हर्ज तो नहीं है लेकिन मैं धर्म परिवर्तन के बारे में कुछ नहीं बोलूंगा। अगर इस सभा में मैं धर्म परिवर्तन के बारे में बोलता और अगर उसके बाद धर्मांतरण का प्रस्ताव रखा जाता और पारित होता तो क्षुद्र बुद्धि के लोगों को बातें फैलाने का मौका मिलता कि मेरे लिहाज के कारण, या मेरे दबाव में आकर मातंग लोगों ने धर्म परिवर्तन का प्रस्ताव पारित किया है। ऐसा होता तो आपके किए धर्म परिवर्तन के प्रस्ताव को उतना महत्व नहीं दिया जाता, जितना कि दिया जाना जरूरी है। आपकी परिषद का महत्व बिना वजह कम आंका जाता। धर्म परिवर्तन कभी भी जबरस्ती से या अनिवार्य ढंग से लागू नहीं किया जा सकता। इस बारे में किसी पर जबरदस्ती करना संभव नहीं और लिहाज का वास्ता दिलाना ठीक नहीं। जिसे ठीक लगेगा वही धर्म परिवर्तन करेगा। सो, धर्म परिवर्तन पर मैंने यहां नहीं बोलने का जो निर्णय लिया है, उसके बारे में आपमें से किसी को बुरा नहीं लगेगा और कोई इसे अन्यथा नहीं लेगा ऐसा मैं समझता हूं।

'महार–मांग समाज में एका कैसे होगा?' केवल इसी एक विषय पर मैं आज इस सभा में बोलना चाहता हूं। गांव–गांव में मैंने देखा है कि महार–मांग समाज के बीच आपसी दुश्मनी है। उनके बीच कोई मित्रता नहीं। इस बात पर पर्दा डालते रहने का कोई फायदा नहीं है। इन दो समाजों में दुश्मनी है। आप और हमारा यह कर्तव्य बनता है कि हम सोचें कि इन दो समाजों के बीच की दुश्मनी नष्ट कैसे होगी? लंबे समय से यह मनमुटाव चला आ रहा है। मैंने जब से इसके बारे में सुना है, तभी से, मेरे संपर्क में जो मांग लोग हैं, उनसे पिछले पांच–छह सालों से मैं कहता आया हूं कि कोई सभा वगैरह का आयोजन कीजिए और मुझे बुलाइए ताकि मांग और महार लोग अगर मुझसे कुछ कहना चाहते हों तो कह सकें। लेकिन इस तरह की सभा का वे आज तक आयोजन नहीं कर पाए थे। इसलिए मैं आ नहीं पाया था। मैं जिस मौके के इंतजार में था वह मौका आज मुझे मिला इसकी मुझे खुशी है। जिन्होंने इस सभा का आयोजन कर मुझे यह मौका दिया मैं उनका आभारी हूं। मांग समाज में सुधार का जो आंदोलन चला है, उसका अगर बारीकी से निरीक्षण करें तो पता चलेगा कि उस आंदोलन का पूरा निशाना महार समाज के ऊपर ही है। महारों के साथ व्यवहार ना रखें, महारों का अनाज मत खाएं, उन्हें झाडू ना बेचें, उनके स्पर्श को अपवित्र मानें आदि बातें मांग नेता मांग लोगों से कहते हैं ऐसा मैंने सुना है। उनकी इस सीख का मुझे कोई खेद नहीं है। आपके स्वाभिमान को लगता होगा कि

महार मेरे हाथ का खाता नहीं है तो मांग भी उनके हाथ का क्यों खाएं? इसीलिए आप उनके हाथ का ना खाएं। लेकिन यहां मैं जो सवाल पूछना चाहता हूं वह यह है कि, महार ही आपके हाथ का खाना नहीं खाते, ऐसी तो कोई बात नहीं है। ब्राह्मण लोग भी आपके हाथ का छुआ नहीं खाते, और किसी जाति के लोग भी आपके हाथ का छुआ नहीं खाते। यह बात अगर सच है तो फिर आपके नेता ब्राह्मणों के हाथ का ना खाने का उपदेश क्यों नहीं देते? जिन–जिन जातियों के लोग मांगों के हाथ का नहीं खाते उन–उन जातियों के लोगों के हाथ का छुआ आप भी ना खाएं, ऐसा उपदेश यदि वे करें तो उन पर कोई दोष नहीं लगेगा। उल्टे मैं उनका उपदेश पूरी तरह मानूंगा, क्योंकि स्वाभिमान सबका होता है। होना ही चाहिए। लेकिन ब्राह्मण ों के हाथ का ना खाएं, मराठों के हाथ का ना खाएं इस तरह का उपदेश किसी मांग नेता ने किया हो, मेरे सुनने में तो नहीं आया है। उल्टे, महारों के हाथ का न खाएं, बस इतना ही उन्हें बताया जाता है। मांग नेता इस बात से इनकार नहीं कर सकते कि यह सीख द्वेषमूलक है। मैं खुद उच्च–नीच आदि किसी तरह का भेदभाव नहीं मानता और महार जाति ने भी उच्च–नीच भेदभाव मानना छोड़ दिया है। चमार लोग खुद को ऊंचा मानते हैं और कहते हैं कि हम महारों–मांगों के हाथ का नहीं खाते। आप भी उनकी तरह कहने लगे हैं कि महारों के हाथ का छुआ हम नहीं खाएंगे। सच कहें तो कोई जाति किसी अन्य जाति से उच्च है, इस बात का कोई आधार या सबूत नहीं है। किसी जाति के श्रेष्ठत्व का कोई ताम्रपट्ट उपलब्ध नहीं है। कौन किसके हाथ का छुआ खाता है, या नहीं खाता है, इसी एक बात के आधार पर हिंदू समाज में जातियों का श्रेष्ठत्व आधारित होता है। फलां जाति किसी दूसरी से श्रेष्ठ सिर्फ इसलिए मानी जाती है, क्योंकि वह फलां जाति के लोगों के हाथ का छुआ नहीं खाती, इसलिए। लोगों के लिए इतना ही कारण काफी होता है। इसीलिए कई जातियां खुद को अन्य जातियों से श्रेष्ठ बताने के लिए अन्य जातियों के साथ अन्न–जल व्यवहार त्याग देते हैं। आपने भी लगता है कि इसी मार्ग का अवलंब किया हुआ है। महारों के हाथ का छुआ न खाने के पीछे खुद को महारों से श्रेष्ठ कहलाने के अलावा कोई और उद्देश्य होगा, मुझे नहीं लगता। लेकिन ऐसी सीख देने वाले मांग नेताओं ने लगता है कि एक बात की तरफ ध्यान नहीं दिया है। महारों से श्रेष्ठ कहलाने में मांगों का क्या हित साधा जा सकता है, मेरी समझ में नहीं आ रहा। महारों से बड़ा कहलवाने से ब्राह्मण लोग, मराठा लोग अगर उन्हें अपने साथ शामिल कर लेते हों तो बात अलग है। महारों से बड़ा कहलाने से ब्राह्मण लोग अगर मांगों को अपनी बेटियां देने या उनकी बेटियों को बहू के रूप में अपनाने के लिए तैयार हों तो ही मांगों का महारों के हाथ का छुआ न खाने में कुछ तथ्य है, ऐसा मुझे लगता है। सो, इस बात का जरूर खयाल रखें कि क्या ब्राह्मण लोग या अन्य स्पृश्य जातीय लोग आपको अपनाने के लिए तैयार हैं अथवा नहीं, इस

बात के बारे में आपको पूरी तरह छानबीन करनी चाहिए। वे अगर तैयार नहीं हों तो बेकार महारों के साथ छोटे–बड़े का बखेड़ा खड़ा कर झूठा दंभ बढ़ा कर मांग लोग अपना ही नुकसान करवा लेंगे, ऐसा मुझे डर लगता है। दूसरी बात यह कि, मांग और चमार लोग अगर यह कहने लगें तो महार भी कह सकेंगे कि हम चमार और मांगों के हाथ का छुआ नहीं खाते। कुछ महार लोग ऐसे हैं जो कहते हैं कि मांग और चमारों में दुरभिमान की जो हेकड़ी है, उसे तोड़ना चाहिए। वे अगर हमारे साथ खाते–पीते नहीं, तो हमें भी उनके साथ कोई व्यवहार नहीं रखना चाहिए। मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि महार लोग अगर अपनी जाति के बारे में अभिमानी हो गए और उन्होंने अगर तय किया कि वे मांग और चमारों से किसी तरह का कोई ताल्लुक नहीं रखेंगे, तो वे मांगों और चमारों को काफी नुकसान पहुंचा सकते हैं। अस्पृश्यों में महार बहुसंख्यक जाति है। उनके बगैर अस्पृश्यों का कोई भी आंदोलन या अस्पृश्यों की राजनीति संभव नहीं हो सकती। महारों के बगैर ही हम कुछ करेंगे, ऐसा अगर मांग और चमारों का कहना हो तो बहुत जल्द उन्हें इस बात का पता चल जाएगा कि यह बस उनकी गलतफहमी है। हालांकि किसी ने बछड़ा मारा, इसलिए हम गाय मारेंगे यह कहना जिस तरह न्यायपूर्ण नहीं हो सकता, उसी तरह मांग और चमार दुरभिमान के कारण महारों के साथ अगर संबंध नहीं रखेंगे, तो महारों को भी उनके साथ संबंध नहीं रखना चाहिए, यह कहना खुद मुझे पसंद नहीं है और मैंने यही सोच महार समाज को दी है। महार लोग जाति के प्रति अभिमान नहीं पालना चाहते न वे अपने को मांगों से या चमारों से श्रेष्ठ कहलवाना चाहते हैं। वे अपना तथा अन्य सभी अस्पृश्यों का संगठन बनाना चाहते हैं। इसीलिए महार लोग झूठे अभिमान के शिकार न होकर सभी अस्पृश्यों को साथ लेकर आंदोलन छेड़ना चाहते हैं। कोई यह आरोप नहीं लगा सकता कि महार लोग जातिभेद को नहीं मानते, यह केवल उनका मौखिक कथन है वास्तविकता नहीं। वे इस पर अमल भी कर रहे हैं, यह बात मैं सबूत के साथ साबित कर सकता हूं। पुणे में एक अछूतों का छात्रावास है, यह आप लोग जानते होंगे। सरकार की तरफ से यह छात्रावास चलाया जाता है। उस छात्रावास में महार, मांग चमार आदि जातियों के बच्चे रहते हैं। पहले वहां सभी के लिए खाना बनाने के लिए एक ही खानसामा रखा गया था और सब बच्चे एक ही पंगत में बैठ कर खाना खाया करते थे। कुछ समय बाद चमार जाति के नेताओं ने चमार बच्चों के कान फूंके कि आपको महार–मांगों के साथ बैठ कर खाना नहीं खाना चाहिए। उनका छुआ खाना नहीं खाना चाहिए। परिणामस्वरूप इस छात्रावास में महार–मांग–चमार जाति के छात्रों में घमासान मचा। महार बच्चे भी हठ करने लगे कि हम भी किसी के हाथ का नहीं खाएंगे और हमारे लिए भी एक अलग रसोइए का प्रबंध किया जाए।

बात इतनी बढ़ गई कि खुद मुझे मुंबई से पुणे जाना पड़ा। वहां जाकर मैंने महार बच्चों को समझाया। कहा, 'अगर चमार मूर्ख हुए तो जरूरी नहीं कि महार भी मूर्ख हो जाएं। मैंने उन्हें सलाह दी कि चमार अगर महारों के साथ नहीं खाएंगे, तो कोई बात नहीं, आप मांगों के साथ मिल कर खाइए। मैं अगर जाति अभिमान से पीड़ित होता तो महारों के बच्चों को मैं भी सलाह देता कि अगर मांग और चमार आपके साथ खाना नहीं खाना चाहते तो आप भी उनके साथ खाना मत खाइए लेकिन मैंने ऐसा नहीं किया। मैंने उन्हें गलत सलाह नहीं दी। मैंने खुद सोलापूर में एक बोर्डिंग खोला है। महार जाति के अलावा अन्य किसी जाति की उसमें मदद नहीं है। फिर भी उसमें सभी अस्पृश्य जाति के बच्चों को लिया जाता था। मांग, चमार, महार, ढोर और बच्चे भी थे। लंबे समय तक सभी बच्चे एक ही पंगत में बैठ कर एक ही रसोइए के हाथ का बना खाना खाया करते थे। लेकिन कुछ समय के बाद चमार और ढोर बच्चों ने विवाद खड़ा किया और चमार रसोइए की मांग करने लगे। तब मैंने कहा कि सबसे कनिष्ठ जाति है भंगी की। हम उन्हीं में से किसी को रसोइया नियुक्त करते हैं, फिर किसी को किसी तरह की शिकायत ही नहीं होगी। इसके लिए महारों के बच्चे तैयार हुए लेकिन और बच्चे तैयार नहीं हो रहे थे। और वह बोर्डिंग बंद कर दिया गया। लेकिन हमने अपने सिद्धांतों के साथ समझौता नहीं किया। जिन ब्राह्मणों या मराठा लोगों के कारण आप इस तरह का बर्ताव करते हैं, क्या वे इस तरह पेश आ सकते हैं? वे अगर इस प्रकार का आश्वासन आपको दे रहे हों तो आप बेशक उनके साथ चले जाइए। हमें उससे कोई मतलब नहीं है। मैं आपसे सिर्फ यही कहना चाहता हूं कि महार जाति ब्राह्मण या मराठा जाति से कई गुना सुधरी हुई जाति है। वे जातिभेद नहीं मानते। सभी समदुखी लोगों की मदद करने के लिए वे तैयार हैं। आप अगर उनके साथ सहयोग करना चाहें तो उन्होंने सभी राहें खोल कर रखी हैं। आप हमसे आकर मिलें। महारों की ताकत/सामर्थ्य का तथा उनके संगठन का फायदा आपको मिलेगा। अस्पृश्यों को जो राजनीतिक अधिकार मिले हैं, उन्हें पाने के लिए किसने कोशिश की? उन्हें पाने के लिए आप मांग लोगों ने या चमारों ने क्या कोशिशें की हैं? निडर होकर आज मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि इन राजनीतिक हकों को पाने के लिए अगर किसी ने स्वार्थत्याग किया हो तो वह है महार जाति। लेकिन इसका फायदा आप सब लोगों को मिला हुआ है। नासिक पुलिस ट्रेनिंग स्कूल में आज अस्पृश्यों को अगर प्रवेश मिला है तो वह किसकी कोशिशों के कारण मिला है? इस ट्रेनिंग स्कूल की शुरुआत से लेकर अब तक उसमें किसी अस्पृश्य जाति का प्रवेश संभव नहीं हुआ था। इतना ही नहीं, सरकार ने वहां एक प्रतिबंध लगा रखा था कि हलके दर्जे की जातियों के लोगों को उस ट्रेनिंग सेंटर में प्रवेश न दिया जाए। उस निर्बंध को हटाने के लिए किसी भी मांग या चमार नेता ने कोई कोशिश नहीं की। मैंने उनके लिए कोशिश की है और

उनके लिए वहां के दरवाजे खुलवा दिए हैं। लेकिन इन सहूलियतों का फायदा किसे पहुंचा? इस सुविधा का फायदा महारों को नहीं मिला, बस चमारों को और मांगों को मिला है। आज पुलिस महकमें में जो दो इन्स्पेक्टर नौकरी करने लगे हैं, उनमें से एक चमार है और एक मांग है। महारों के उम्मीदवार इन दोनों से कई गुना मेधावी और लायक थे। लेकिन उनमें से एक को भी लिया नहीं गया। उल्टे महारों के जो उम्मीदवार कमेटी के सामने परीक्षा के लिए गए, उन उम्मीदवारों को उनकी योग्यता के बारे में सवाल पूछना छोड़ कर यही पूछा गया कि आपने कितने कुओं को भ्रष्ट किया? क्या आप अस्पृश्यों के आंदोलन में हिस्सा लेते हैं? आदि सवाल पूछ कर उन्हें चलता कर दिया गया। तथापि, महारों ने किसी भी तरह की शिकायत नहीं की कि हमने संघर्ष किया और फल किसी और को मिला।

जातिभेद के कारण मुंबई के पुलिस विभाग में अस्पृश्यों की भर्ती करने के लिए सरकार तैयार नहीं थी। आज उसी पुलिस विभाग में अस्पृश्य समाज के कई पुलिस नौकरी कर रहे हैं। इस बात के लिए किसने सरकार को मजबूर किया? चमार या मांग लोगों ने क्या कभी इसके लिए कोशिश की थी? जिन्होंने भी कोशिश की, आज उसका फायदा चमार और मांग लोगों को मिल रहा है या नहीं? महार लोग आंदोलन करें और अन्य लोग उसका फायदा उठाएं इसका यह दूसरा उदाहरण है। आज जिला लोकल बोर्ड में, महापालिका में, तहसील लोकल बोर्ड में अस्पृश्यों के कई प्रतिनिधि दिखाई देते हैं। उनमें कई मांग और चमार भी होंगे। ये जगहें पाने के लिए मांग और चमार जातियों ने क्या कोशिशें कीं? ये जगहें पाने का पूरा श्रेय महारों को जाता है। हालांकि, इसका फायदा मांग लोगों ने और चमारों ने भी लिया है। जब–जब लोकल बोर्ड या महापालिका के चुनावों के लिए सिफारिश मांगने मेरे पास लोग आए हैं तब–तब मैंने उनसे कहा है मांगों का अगर बारह आने का आदमी आए तो मैं सोलह आने वाले योग्य महार आदमी को पीछे हटने के लिए कहूंगा। इससे अधिक व्यापक दृष्टिकोण कोई जाति रख पाएगी, ऐसा मुझे नहीं लगता। नए संविधान में मताधिकार की योग्यता के लिए वतनदारी भी एक है। महार लोग वतनदार हैं, इसलिए उन्हें इसका फायदा मिला है, और अन्य जातियों को वह नहीं मिल पाया है। इस बात को बढ़ा–चढ़ा कर कुछ लोग इस प्रकार बता रहे हैं कि मैंने पक्षपात बुद्धि से प्रेरित होकर महारों को फायदा दिलाने की मंशा से जानबूझ कर मताधिकार की योग्यता वाले कोष्ठक में वतनदारी को भी शामिल किया। असल में यह आरोप गलत है। इसमें सच्चाई नहीं है। महार–मांगों के बीच शत्रुता बढ़ाने के उद्देश्य से ही यह आरोप लगाया गया है। मताधिकार के लिए वतनदारी को भी योग्यता में शामिल करने की सूचना मेरी नहीं है। यह प्रांतीय सरकार द्वारा की गई सूचना है। उसके सही–गलत होने की जिम्मेदारी मेरी नहीं है। दूसरी बात यह है

कि, ऐसा नहीं कि केवल मुंबई इलाके के अस्पृश्य वतनदारों को मताधिकार दिया गया हो, यह अधिकार पूरे भारत के अस्पृश्य वतनदारों को दिया गया है। मद्रास, यूपी आदि कई प्रांतों से जिन अस्पृश्य जातियों के पास वतनदारी है, उन जातियों को यह लाभ मिला है। सिर्फ मुंबई में इसे लागू किया गया है, कहना सफेद झूठ है। इससे आगे बढ़ कर मैं यह सवाल पूछता हूं कि क्या मुंबई इलाके में यह अधिकार केवल महारों को मिला है? ध्यान रखें, यह अधिकार महारों को नहीं मिला है, यह अधिकार मिला है वतनदारों को। कन्नड इलाके में महार वतनदार नहीं हैं, मांगों के पास वहां वतनदारी है। अर्थात, उस इलाके में वतनदारी का फायदा किसे मिलने वाला है? मांगों को या कि महारों को? इस तरीके से आप अगर सोचेंगे तो आपको साफ–साफ पता चलेगा कि जिन लोगों ने यह हल्ला मचा रखा है, वे या तो अज्ञानी हैं या पाजी हैं। ऐसे लोगों की हरकतों से आपको सावधान रहना होगा। यह इशारा आपको देने की आवश्यकता मुझे महसूस हो रही है।

महार समाज का राजनीतिक कद, वर्चस्व, वैभव में बढ़ोतरी हो और अन्य लोगों का कम किया जाए, इस तरह की मेरी यदि सोच होती तो कल जो मैंने महार जाति के सम्मेलन में जिस तरह का भाषण दिया है, वह किया नहीं होता। कल की महार समाज की सभा में मैंने स्पष्टता से कहा है कि आगामी नए विधिमंडल में जो पन्द्रह सीटें अस्पृश्यों को प्राप्त हुई हैं, उन सीटों में से कुछ जगह मांग जाति को दी जानी चाहिएं।

ब्राह्मणेतर पिछड़ी जातियों में भी अस्पृश्य जातियों की भांति छोटे–छोटे गुट हैं। ब्राह्मणेतर पिछड़ी जातियों को भी अस्पृश्य जाति के समान कुल सात आरक्षित सीटें प्राप्त हुई हैं। किन्तु इन सात सीटों में से एक भी सीट अति पिछड़े समाज के प्रतिनिधि को दिए जाने की बात और आश्वासन एक भी मराठा जाति के नेता नहीं दे रहे हैं। किन्तु मैं तुम्हें आश्वस्त करता हूं कि आपकी जाति के योग्य उम्मीदवार को सीट देने का आश्वासन कृति में उतारने का भरपूर प्रयास मेरी ओर से किया जाएगा। मराठा समाज में उदारता अपेक्षा होने पर भी वे उसे पूरा नहीं कर पा रहे हैं, किन्तु महार समाज उदारता का सबूत दिखा देगा। यह बात सीधी है या सरल है, ऐसा कोई कह नहीं पाएगा।

यह कार्य बेहद मुश्किल और कठिन है। कोई भी जाति क्यों ना हो, उसे स्वार्थ तो है ही और यह स्वार्थ, लालसा परे रखकर उसे जो मिला है, या मिलने वाला है, उस में से दूसरों को अपने लाभ में से हिस्सा दे देना व्यावहारिक दृष्टिकोण से कोई मामूली या छोटी बात नहीं है। अपने लाभ में कुछ हिस्सा देने की महार समाज की पूरी तैयारी है। केवल इतना ही पर्याप्त नहीं तो महार–मांग, इस तरह का जातिभेद

खत्म कर एक जात करने की महार समाज की तैयारी है। यह बात महार लोगों के धर्म परिवर्तन करने के संकल्प से सिद्ध हो चुकी है और इसीलिए आप सभी उन लोगों के साथ धर्म परिवर्तन का दृढ़ निश्चय करें, यह बात वे आप लोगों से आग्रह पूर्वक अनुरोध करने से सिद्ध हो जाती है।

धर्म परिवर्तन करने के जो कुछ अनेक हेतु होंगे, उसमें अस्पृश्य समाज के आपस के जातिभेद नष्ट करना भी एक प्रमुख हेतु इसमें निहित है। सभी अस्पृश्य समाज द्वारा धर्म परिवर्तन किए बगैर अस्पृश्य जाति में स्थित जातिभेद खत्म हो पाना असंभव है। जातिभेद नष्ट किए बगैर जाति–द्वेष की भावना नष्ट होना मुश्किल है। धर्म परिवर्तन महार समाज का विशेष कल्याण करने हेतु किया जा रहा है, यह बात इसमें नहीं है। सभी अस्पृश्य जातियों को एक धागे में पिरोकर उन लोगों का आपसी भेदभाव खत्म कर उन्हें ताकतवर और संगठित बनाना, यही धर्म परिवर्तन का मुख्य हेतु है। धर्म परिवर्तन एक तरह से अमृत है। उस अमृत से हम शुद्ध होंगे, ऐसा हमारा दृढ़ विश्वास है। किन्तु, केवल हम ही निर्मल बनें, यही सीमित उद्देश्य हमारा ना होकर मांग, चमार आदि सभी जातियां धर्म परिवर्तन का अमृत पीकर वे शुद्ध, निर्मल बनें, ऐसी हमारी अभिलाषा है। यह धर्म परिवर्तन का अमृत सभी के लिए है।

संत तुकाराम महाराज ने अपने दोहे, अभंगों में कहा है कि,

"सेवन कर रस देता हूं सभी को,
ले लो, मत बिखरो
मत भागो, जंगल–मैदान।"

संत तुकाराम के संदेश का मर्म समझिए।

धर्म परिवर्तन करने से तुम्हें महार जाति से रोटी–बेटी व्यवहार का, समानता का अधिकार प्राप्त होगा, और समानता का हक देने के लिए महार समाज तैयार है। इतना अधिक बड़प्पन और उदारता अन्य दूसरा कौन–सा समाज दिखा पाएगा? विधिमंडल की जगहों से भी बढ़कर यह भेंट क्या अनमोल नहीं है? इस उदारता से बढ़कर और क्या चीज हो सकती है? और आपको इस चीज की कीमत, कद्र ना हो तो, आप अपनी राह चलने के लिए आजाद हो। जिस राह से आपको गुजरना हो, उस रास्ते से आप बेशक चलें। हम अपनी मुक्ति, अपना उद्धार स्वयं कर लेंगे, और इस ध्येय को हासिल करने के लिए, हमें यदि अपना सिर कलम करना पड़ा, तब भी हम पीछे नहीं हटेंगे। मांग–चमारों की ताकत की हमें कोई जरूरत नहीं, यही समझ लीजिए। किन्तु हम इस तरह का रूखा व्यवहार नहीं करना चाहते। महार समाज को जाति दंभ, अभिमान या पोषण नहीं करना है अथवा जाति को बढ़ावा देने का विचार

नहीं है। हमें जाति–भेद को नष्ट करना है और सभी अस्पृश्य जातियों का एक ही समाज करना है। सिर्फ मांग जाति का बने रहने से कोई फायदा है, ऐसा मुझे नहीं लगता। यदि आप जाति का झूठा अभिमान करते रहेंगे तो तुम्हारा सम्पूर्ण नाश हो जाएगा, यह इशारा इस अवसर पर आपको स्पष्टता से देना जरूरी है।"

बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर जी के उपरोक्त संबोधन के पश्चात धन्यवाद ज्ञापन हुआ।

मुम्बई प्रांत मातंग परिषद को सफल बनाने में और कार्य का प्रचार–प्रसार करने हेतु में कृष्णा गुंडाजी कुचेकर, रामचन्द्र गुंडाजी कुचेकर, यशवंत लक्ष्मण वायदंडे, शंकर बुवा सकटे, बाबू रामा कांबले, ज्ञानू दाजी इवले, मारूति ज्ञानू तुपसौंदरे, धोंडीबा तालू कांबले, केशव धोंडी देवकुले, गंगाराम सखाराम यादव, लाला पिरा यादव, भागाराम जाधव, लहू लक्ष्मण अल्हाट, हन्या केशव बोतालजे, तुकाराम यशवंत चव्हाण, रत्नाकर खंडूजी आवले, शंकर नाथा आवले, निवृति डी. शिंगोणकर, दाजी संतू काम्बले, चिंगाजी वायदंडे, के.डी. वायदंडे, आबा गेणू खंडाले, लहू अंकूष मोहिते, के.एम. काफोखे, शंकर शिंदे, बालू सखाराम यादव, एस.के. देशमुख, मार्तंड तपाया माने, राऊ मलू माने आदि सदगृहस्थों ने जी–जान से मेहनत कर मातंग परिषद के कार्यों को सफल बनाने के लिए नायगाव बी.डी. चाल नम्बर 4 और 13 के छात्र–छात्राओं ने स्वागत पर गीत गायन करने के लिए मास्टर लक्ष्मण कुचेकर जी को उनकी मेहनत के लिए, और इसी तरह मे. काम्बले बैण्ड मास्टर जी ने कुलाबा के छात्रों की रिहर्सल करा कर उन्हें अल्पावधि में गायन में प्रवीण करने के कारण कुलाबा बैंड, कुलाबा स्काऊट, सैतान चौकी स्काऊट, वडाला स्काऊट, नायगाव स्काऊट, डिलाईट रोड स्काऊट ने सम्मेलन में आकर स्वयं अपनी प्रस्तुति के द्वारा सभा की शोभा बढ़ाने के लिए तथा सम्मेलन की व्यवस्था बनाने के लिए और इसी तरह मुम्बई के निवासियों द्वारा इस आयोजन के लिए अपनी शक्ति के अनुसार आर्थिक सहायता करने के कारण इन सभी का आभार व्यक्त किया गया। पुणे, नगर, दौंड, सोलापुर, कर्हाड, नाशिक आदि शहरों से प्रतिनिधियों ने सम्मेलन में उपस्थित हो सभा को सफल बनाने हेतु उन सभी का अभिनन्दन किया गया।

93
बहनों, समाज पर बट्टा लगाने वाले धंधे से मुक्त हो जाओ*

दिनांक 30 मई से 1 जून, 1936 को मुंबई इलाका महार परिषद में पारित हुए धर्म परिवर्तन प्रस्ताव का पहला आघात कामाठीपुरा में रहने वाले मुरल्या, जोगतिण ी, देवदासी आदि समाज से त्याग दिए गए वर्ग पर हुआ। ज्यादातर इस वर्ग की सभी महिलाएं सदाचार के साथ उदरनिर्वाह न कर पाने के कारण इस अनीतिकारक व्यवसाय में आई हैं। महार परिषद के बाद ये महिलाएं अपने बारे में सोचने लगीं। उन्होंने स्वयं स्फूर्ति से एक निजी बैठक बुलाई। बैठक में यह तय किया गया कि अपने व्यवसाय की महिलाओं और पुरुषों की एक सभा बुलाई जाए। उस सभा में डॉ. बाबासाहेब को आमंत्रित कर उनके मुख से अपनी मुक्ति के बारे में उपदेश की चार बातें सुनी जाएं। उस हिसाब से भगवानों को समर्पित सभी वर्गों की (जिनमें वाघे, पोतराज, भूते और महिलाएं आदि शामिल थे) एक सभा 16 जून, 1936 की रात को पोयबावडी के नजदीक के दामोदर हॉल में आयोजित की गई थी। इस सभा में महिलाएं और पुरुष मिल कर लोगों का बड़ा समुदाय इकट्ठा हुआ था। लोगों की भीड़ के कारण दामोदर हॉल खचाखच भरा था। शुरुआत में कुछ देवदासी, मुरल्या, पोतराज और वाघ्याओं के भाषण हुए। इस व्यवसाय से पीछे हटने की उन्होंने अपने भाई–बहनों से विनती की। कुछ वक्ताओं ने खुले आम बताया कि वे इस व्यवसाय से पहले ही निकल चुके हैं और ईमानदारी से पसीना बहाकर मेहनत की कमाई से अपना पेट पालते हैं, इसीलिए हमारा जीवन स्वाभिमानपूर्ण हुआ है।

बाद में डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर तालियों की गड़गड़ाहट के बीच बोलने के लिए उठ कर खड़े हुए। उस रात उनके चेहरे पर परेशानी के चिह्न उभरे थे। उन्होंने बोलने की शुरूआत की तो सभागृह में एकदम शांति और गंभीरता छाई। डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा,

"आज की सभा मुझे हाल ही में हुई महार परिषद की सभा से सौ गुना अधिक महत्त्वपूर्ण लगती है। समाज का जो हिस्सा अत्यंत हीन अथवा बेकार माना जाता है, उसके आप सदस्य हैं। यही आपका समाज है। धर्म के नाम पर अनैतिक ढंग से अपना पेट पालने वाली महिलाएं हैं आप। जिनका स्वाभिमान नष्ट हुआ है, देह की बिक्री कर शरीर को पालना ही जिनके जीवन का अंग बन चुका है, उस वर्ग द्वारा दुनिया में क्या चल रहा है समझने की जिज्ञासा दिखाना, अपना चरित्र सुधारने की मंशा व्यक्त करना सचमुच बहुत ही गर्व करने लायक है। इसीलिए महार परिषद में

*4 जुलाई, 1936

25000 लोग इकट्ठा हुए इसका मुझे उतना महत्त्व नहीं लगता, जितना आज की इस सभा में आप 400–500 लोग इकट्ठा हुए हैं उसका लगता है। आज की इस सभा के लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूं।

इस भूमिका के बाद मैं मुख्य विषय की तरफ मुड़ता हूं। आज मुंबई शहर में महार समाज को अगर शर्म से गर्दन कहीं झुकानी पड़ती है तो वह आपके कामाठीपुरा आते समय। अपनी बहनें वहां किस तरह के नरक से गुजर रही हैं, अन्य समाज से खुद को किस तरह भ्रष्ट करवा रही हैं इसकी तस्वीर आंखों के सामने खड़े होते ही हर महार को विषाद घेर लेता है। आज आपने महार समाज के साथ धर्म परिवर्तन करने की इच्छा जाहिर की है, आपके इस निश्चय के कारण मुझे यह सोच कर खुशी नहीं हो रही कि मेरे अनुयायियों की संख्या में बढ़ोतरी हुई है या मेरी धर्म परिवर्तन की घोषणा को मिल रहे समर्थन से मुझे संतोष नहीं हो रहा है। हमारे धर्म परिवर्तन का अर्थ अच्छी तरह समझ लीजिए। हम धर्म परिवर्तन कर रहे हैं इस दुर्गंध भरे वातावरण से बाहर निकलने के लिए। सबको समता का, बंधुत्व का, स्वाभिमान का आदर्श जीवन प्राप्त हो और हरेक का जीवन उज्ज्वल हो, इस दृष्टि के साथ हम धर्म परिवर्तन के लिए तैयार हो गए हैं। आप अगर हमारे साथ आना चाहते हैं, अपने जाति बंधुओं के साथ धर्मांतरण करना चाहते हैं तो पहले आपको अपना यह दुर्गंध से भरा जीवनक्रम छोड़ देना होगा। अपने मलिन तरीकों का आपको त्याग करना होगा। यह यदि आप करने के लिए तैयार हों, तभी आप हमारे साथ आएं। वरना आप हमारे साथ ना आएं। मर्जी हो तो आप जहां हैं, वहीं रहें। मुसलमान या ईसाई बनें। हमें उसमें कोई आपत्ति नहीं होगी। लेकिन अगर हमारे साथ आप आना चाहें तो आपको काया, वाचा, मन की शुद्धता कर इस त्रिशुद्धि से शुचिर्भूत होकर ही आपको हमारे साथ आना होगा। वरना मैं आपको साफ–साफ बताता हूं कि आप हमारे साथ नहीं आ सकेंगे।

अगर आप अपना पुराना जीवनक्रम उसी तरह चलाते हुए महार जाति को बट्टा लगाने का काम जारी रखने वाली हों, अपना काम उसी तरह करने वाली हों तो मैं आपको चेतावनी देता हूं कि हजारों युवा स्वयंसेवकों को तैयार कर मैं कामाठीपुरा से आपको हमेशा के लिए हटवा दूंगा।

महिला समाज का अलंकार हैं यह आपको जानना होगा। हर समाज महिलाओं के चरित्र का बहुत अधिक सम्मान करता है। हर किसी की यह उम्मीद होती है कि अपनी गृहस्वामिनी बनने वाली महिला उत्तम कुल की हो। वैसी ही भार्या पाने की हर एक की कोशिश रहती है। क्योंकि वह जानता है कि अपना, अपने बच्चों का, अपने परिवार का और कुल का नाम महिला के चरित्र पर निर्भर करता है।

महिलाओं को इतना बड़प्पन मिला हुआ है। लेकिन कामाठीपुरा का जीवनक्रम देखें तो वह स्त्री जीवन को कलंक लगाने वाला है। इसीलिए, आप महिलाओं को समाज में क्या स्थान प्राप्त है, यह जान कर अपने बुरे जीवनक्रम का त्याग करना चाहिए, अपना खुद का तथा अपनी जाति का दर्जा और नाम ऊंचा करना चाहिए। आप शायद सवाल पूछेंगे कि यह धंधा ही हमारे उदरनिर्वाह का साधन है। इतना ही नहीं, इसी धंधे के कारण आज हमें किसी चीज की कमी नहीं है। हमारी जिंदगी बड़े सुख के साथ बसर हो रही है। हमारे पास नौकर–चाकर हैं। इस तरह की आराम की जिंदगी छोड़ कर हम क्या करें? मैं आपसे जब यह शर्मनाक जीवन त्यागने के लिए कह रहा हूं, तभी एक और बात साफ कर दूं कि आपको उदरनिर्वाह के साधन उपलब्ध कराना मेरा काम नहीं है, न मैं इसकी जिम्मेदारी ले रहा हूं। आज हजारों महिलाएं गरीब पति के साथ शादी करके उनके साथ दरिद्रता में दिन बिता रही हैं। पेट पालने के लिए उन्हें परिश्रम करना पड़ता है, तरह–तरह के कष्ट उठाने पड़ते हैं। हजारों महिलाएं मिलों में काम करती हैं, कारखानों में काम करती हैं, और गृहस्थी के अन्य दुख झेलते हुए अपने बच्चों के साथ गरीबी में, भूखे पेट रह कर खुशी–खुशी दिन बिताती हैं। आपके धंधे में सुख मिलता है, इसलिए वे इस धंधे में नहीं आतीं। क्यों नहीं आतीं वे आपके धंधे में? क्यों वे इतने कष्ट सहती हैं? इस पर आप सोचें। महाभारत की कथाएं आपने सुनी हैं। जिस समय पांडव जुए में हार गए तब वल्कल और मृगचर्म धारण कर वनवास जाने के लिए निकले। उनके साथ वैसे ही वस्त्र धारण कर द्रौपदी भी गई थी। रास्ते में कौरवों में से दुर्योधन ने उससे कहा, 'द्रौपदी, इन मूर्ख पतियों का साथ देकर तुम अपना जीवन क्यों दुख में डाल रही हो? अपनी सुकुमार देह को कष्ट क्यों दे रही हो? तुम मेरे साथ रहो। मैं तुम्हें पूरे ऐशोआराम के साथ रखूंगा। तुम्हें कोई भी दुख नहीं होगा। उस समय साध्वी और मानिनी द्रौपदी ने दुर्योधन को जो जवाब दिया था वह आपको याद रखना होगा। उसने कहा था, 'ऐश्वर्य पाकर अगर मैं नीति के साथ जीवन न बिता सकूं तो मुझे ऐश्वर्य नहीं चाहिए। राजमहल से मुझे कष्टकर वनवास अधिक प्रिय है।' आपको भी ऐसे ही विचार अपने मन में रखने होंगे। कष्ट करने से आप डरें क्यों? अपनी हजारों बहनों की तरह अपने–अपने गांव जाकर या फिर यहां नौकरी कर आप कष्ट कर अपनी उपजीविका कमाना आपको इतना कष्टमय क्यों लगता है? आपको अपनी जाति के बारे में गर्व क्यों नहीं महसूस होता? खुद को भ्रष्ट करने वाला और अपनी जाति को कलंकित करने वाला जीवन आप क्यों नहीं छोड़ देतीं? आपके इस लांछनापूर्ण धंधे की वजह से पूरे महार समाज को कितनी शर्म में डुबो दिया है, इसके बारे में तुम्हें अहसास नहीं है। हमें हर घड़ी आपके कारण अपमान से गर्दन झुकानी पड़ती है। कुछ साल पहले मैं कामाठीपुरा में एक सभा में गया था। उस वक्त मेरे मित्र डॉ. सोलंकी भी साथ थे। शिक्षा के बारे में भाषण करते समय मैंने कहा था कि

सरकार शिक्षा के बारे में मुसलमानों को जो सुविधाएं देती है, वे अस्पृश्य समाज को नहीं देती, यह बात बिल्कुल सच है। उस वक्त वहां कुछ मुसलमान लोग उपस्थित थे। उनमें से एक ने बताया कि, महारों को मुसलमानों के बारे में ईर्ष्या क्यों महसूस हो? हम दो–दो, चार–चार 'महारणियों' को रखते हैं। उनकी इस चुभती टिप्पणी का मैंने कोई जवाब नहीं दिया, लेकिन उनके इस वाक्य से मुझे कितनी पीड़ा पहुंची होगी, कितना बुरा लगा होगा इसके बारे में आप ही सोचिए। मुझे आपके जीने के इस तरीके के बारे में, कामाठीपुरा में आपके रहने के बारे में सोच कर बेहद गुस्सा आता है, मैं बिल्कुल तिलमिला जाता हूं गुस्से से।

इसीलिए मैं एक बार फिर आपको ठोंक–बजा कर बता रहा हूं कि अगर आप महार कहलाना चाहते हैं, तो आपको यह गलीज धंधा छोड़ना ही होगा। आपको इस धंधे में ही रहने देकर मैं अपने साथ आने नहीं दे सकता। इतना कह कर भी अगर आप नहीं सुनेंगे तो मैं आपको यहां से भगा देने से पीछे नहीं हटूंगा। इसीलिए आप तुरंत जाग जाएं और इस हीन चरित्रक्रम का त्याग करें।

मुझे बताया गया है कि आज की सभा आपने खुद होकर बुलाई है। अपने में सुधार लाने के लिए आप प्रेरित हो गई हैं। इसलिए, मेरी आशा जल्द ही सफल होगी, इस अभिलाषा के साथ मैं अपना भाषण पूरा करता हूं।"

डॉ. बाबासाहेब का भाषण जब चल रहा था तब उन महिलाओं के हृदय गद्गद् हो आए थे। क्योंकि भाषण एकदम स्फूर्तिदायक हुआ था। सभा के अन्य कामकाज निपटने के बाद सभा बर्खास्त हुई।

94
इस बार हमें बडा समंदर पार कर जाना है*

दिनांक 7 सितंबर, 1936 के दिन डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर किसी काम से सुबह की एक्स्प्रेस गाड़ी से पुणे गए हुए थे। दोपहर 12 बजे जब यह एक्स्प्रेस गाड़ी पुणे पहुंची, उस समय स्टेशन पर उनका अस्पृश्य नेताओं की ओर से स्वागत किया गया। उनके स्वागत के लिए मे. सुभेदार, आर. एस. घाटगे, राजाराम भोले, डी. जी. जाधव, आर. के. कदम, सुभेदार, दुबे, सावंत, मातंग समाज के श्री. लांडगे आदि लोग उपस्थित थे। मातंग समाज की ओर से फूलों की माला और गुलदस्ते अर्पण करने, फोटो खिंचवाने आदि के काम पूरे होने के बाद बाबासाहेब अपने निजी कामों के लिए कहीं गए। बाद में करीब डेढ़ बजे के आसपास उन्हें डी. सी. मिशन में लाया गया। उस समय उनके साथ डॉ. सोलंकी भी थे। डी. सी. मिशन में आगामी असेंबली चुनावों के बारे में सोच–विचार के लिए पुणे के सौ–डेढ़ सौ नेता और अन्य लोग इकट्ठा हुए थे। सबके साथ इस बारे में चर्चा के बाद अस्पृश्यों के लिए आरक्षित जगहों के लिए स्वतंत्र लेबर पार्टी की ओर से भेजे गए उम्मीदवारों के नामों के बारे में डॉ. अम्बेडकर साहब ने अपना पहला चुनावी भाषण किया। उन्होंने अपने इस भाषण में कहा,

"प्रिय बंधुओं,

मैंने जिन उम्मीदवारों के नाम चुने हैं उनके बारे में जो थोड़ी बहुत आलोचना हो रही है, उसके बारे में मुझे न दुख है न आश्चर्य। क्योंकि, इन सभी मतों में कोई बेहद प्रतिकूल मत मुझे दिखाई नहीं दे रहा है। इससे मैं कह सकता हूं कि उम्मीदवारों का मैंने जो चयन किया है वह समाज को पसंद है ऐसा कहा जा सकता है। जिन उम्मीदवारों का मैंने चुनाव किया है उनमें कोई मेरे रिश्तेदार नहीं हैं, न मेरा कोई चाचा है, न बेटा है, न दामाद है और न मेरे कोई समधी हैं। सभी तरह से सोच कर मैंने तीन कसौटियां लगाई और इन कसौटियों पर खरा उतरने वालों का ही चुनाव किया गया है। पहली कसौटी है अंग्रेजी भाषा का उत्तम ज्ञान। क्योंकि वहां सभी काम अंग्रेजी में ही चलेगा। अपने जिले की, तहसील की जो शिकायतें होंगी, वे असेंबली में अंग्रेजी में पूछनी होंगी। इसीलिए उम्मीदवार को अंग्रेजी भाषा आना जरूरी है। दूसरी बात, उम्मीदवार जवान होना चाहिए। बूढ़े लोगों को वहां पालखी में बिठा कर ले नहीं जाना है। असेंबली का काम जब चल रहा हो, तब अगर किसी उम्मीदवार के नाम किसी गांव से बेहद जरूरी काम का तार आए तो, और अगर

*जनता : 12 सितम्बर, 1936

जरूरत पड़े तो चल कर वहां पहुंचने की काबीलियत उसमें होनी चाहिए। रात–बेरात अपने–अपने तहसील के लोगों के लिए घूमना पड़े तो घूमने की काबिलियत होनी चाहिए। यह काम किसी बूढ़े, संधीवात से ग्रस्त कौंसिलर से कदापि नहीं हो सकता। तीसरी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अपने पक्ष का उम्मीदवार अपनी पार्टी के अनुशासन में रहने वाला होना चाहिए। पार्टी के नियमों के अनुसार व्यवहार करने की और अपना काम करने की काबिलियत उसमें होनी चाहिए। पार्टी के लिए निःस्वार्थ बुद्धि से काम करने वाला होना चाहिए। स्वार्थी आदमी को मैं ढेले भर का मोल देने के लिए तैयार नहीं हूं।

आपके जिले से जिन्हें चुना गया है, उन राजाराम भोले का उदाहरण लीजिए। उनसे अधिक पढ़ा–लिखा और लायक आदमी पुणे में नहीं है। भाई–भतीजावाद की ओर, जिले के गलत अभिमान की ओर अथवा वतनदारी की ओर ध्यान नहीं देना है। केवल नाम के साथ किसी की काबिलियत या महत्व लगा नहीं रहता है वह उनके द्वारा किए जाने वाले काम से पता चलता है। श्री. भोले अगर निर्विरोध चुन कर आएं, तो हमें कुल तीन जगहें मिलेंगी। उनका अगर विरोध नहीं हुआ तो वे आसानी से जीत सकते हैं। और उन्हें दिए न गए मतों से अपनी पार्टी का दूसरा उम्मीदवार जीत जाएगा। और दूसरे हिस्से में भी अपने पक्ष का उम्मीदवार अपने दूसरे हिस्से के मतों से आम चुनावों में जीत कर आएगा। इस तरह हम अगर अनुशासित ढंग से पेश आएं तो पुणे में ही हम तीन जगहें पा सकते हैं। इसीलिए आप तहसील, गांव, जिले का अभिमान छोड़ कर पार्टी के हित को ध्यान में रखते हुए योग्य उम्मीदवार को ही जिता कर भेजिए। कौंसिल कोई महार की नहीं है जो कि बाप मरा तो वह उसके बेटे को मिलेगी!

फिलहाल मेरी सेहत ठीक नहीं है। रक्तचाप बढ़ने के कारण मैं थोड़ी दूरी तक भी चल नहीं पाता। इसलिए हर जगह जाकर आशंकाओं का समाधान करना अब मेरे लिए संभव नहीं है। मेरी कसौटी पर खरे उतरे उम्मीदवारों के खिलाफ अगर कोई कुछ करना चाहे तो उन्हें वह अच्छी तरह सोच–समझ कर और अपनी जिम्मेदारी समझ कर करना होगा। मैं उनकी कृति में छिपा स्वार्थ खोल कर दिखा दूंगा। दिनोंदिन मेरे ऊपर कई तरह की जिम्मेदारियां आ रही हैं। अपने समाज के हित के कार्य के कारण मेरे कई हितशत्रू पैदा हुए हैं। आज की लड़ाई में अगर मेरे ऊपर कौन से प्राणांतिक प्रसंग पैदा होंगे, मैं खुद नहीं कह सकता। ऐसे कठिन हालात में भी मैं आपके बारे में पूरी जिम्मेदारी लेने के लिए तैयार हूं। मुझ पर भरोसा हो तो मैंने जिन योग्य उम्मीदवारों को चुना है, उन्हें ही अपने वोट देकर जिताएं और अपने समाज का हित साधें। सभी जगहों पर अगर बूढ़ों को हक हो तो फिर बूढ़ों की ही

भर्ती होगी। मेरे अपने लिए भी कहीं कोई गुंजाइश नहीं रहेगी। मुझसे सुभेदार घाटगे ने 50 साल अधिक काम किया है। श्री. शिवराम जानबा कांबले ने 60 साल अधिक काम किया है। उनकी उम्र की तुलना में शायद मैं भी काम नहीं कर पाऊं। इसलिए मुझे ऐसे विवादों में पड़ने की जरूरत नहीं है। जब तक आपका मुझ पर विश्वास है, तभी तक मैं आपका नेता पद संभालूंगा। इस समय हमें बड़ा समंदर पार कर जाना है। इसलिए मैं जो कहूंगा वही मल्लाह होगा। और बेहतरीन नाव मुझे मिलनी चाहिए। तभी मैं उस नाव पर चढूंगा। टूटी हुई नाव और बेकार के खेवय्ये मिले, तो मैं नाव में चढूंगा ही नहीं। मैं नहीं चाहता आपका नेता बनना। इसलिए आप ध्यान में रखें कि हर एक के पास कोई न कोई काबीलियत होनी चाहिए। 'नाम से नहीं, काम से है', यह बात ध्यान में रखें।"

95
अंधे और स्वार्थी नजरिए से पूरे समाज का नुकसान होगा*

गुरुवार दिनांक 8 अक्तूबर, 1936 के दिन परमपूज्य डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर सुबह की गाड़ी से 6.30 बजे जलगाव स्टेशन पर आए। उस समय पूर्व खानदेश की कुछ प्रमुख हस्तियों ने उपस्थित रह कर उनका स्वागत किया। स्वागत के समय अस्पृश्य नेता मे. सोनू नारायण मेढे, शामराव कामाजी जाधव, रायला झगा निकम, लक्ष्मण पाहुणा मेढे, धनाजी रामचंद्र बिर्हाडे, मोतीराम रामजी बिर्हाडे, देविदास सोनावणे, नामदेव सोनावणे, ओंकार सोनावणे, दिवाण सीताराम चव्हाण, माछाडे, मि. प्रधान वकील, वानखेडे, बारसे, बहिरुपे, के. एल. तायडे, बडगे, नामदेव भागाजी भालेराव, शिवा रघुनाथ, भास्कर गरबड, वाघ आदि खानदेश के प्रमुख लोग उपस्थित थे। डॉ. बाबासाहेब गाड़ी से उतरते ही जयकार से उनका स्वागत किया गया। रा. मेढे ने उन्हें हार अर्पण किया। फिर आए हुए लोगों के साथ बातचीत करते हुए मे कलक्टर साहब (खानदेश पूर्व) की गाड़ी में बैठ कर डॉ. बाबासाहेब मिस्टर बालासाहेब वकील के घर गए। डॉ. बाबासाहेब 11 बजे कोर्ट के काम से कोर्ट पहुंचे। डॉ. बाबासाहेब के वहां पहुंचते ना पहुंचते लोगों के जथे कोर्ट की ओर आने लगे। 15–20 मिनट में कोर्ट का पूरा परिसर भीड़ से उमड़ पड़ा और यूं लगने लगा कि वहां कोई यात्रा का आयोजन किया गया हो। कोर्ट के काम में दिक्कतें आने लगीं। आखिर जजसाहब को कोर्ट के दरवाजे बंद करने पड़े। इसके बावजूद लोग कोर्ट के सामने वाले बड़े मैदान में बाबासाहेब के आने का इंतजार करने लगे। कोर्ट का कामकाज ठीक 5.20 बजे खत्म हुआ। वे बाहर आए। और जैसे कि पंफलेट में जाहिर किया गया था, जलगाव के म्युनिसिपल टाऊन हाल में डॉ. बाबासाहेब की मोटर आकर रुकी। उस समय चार हजार से अधिक लोग वहां इकठ्ठा हुए थे। जयकार की ध्वनि से बाबासाहेब का स्वागत किया गया और सभा की शुरुआत हुई। इस अवसर पर नासिक के प्रमुख नेता श्री. भाऊराव गायकवाड, अहमदनगर के युवा नेता श्री. प्रभाकर जनार्दन रोहम और बलराम दादा टेलर आदि लोग हाजिर थे। पहले श्री. भाऊराव गायकवाड़ का आगामी असेंबली चुनावों के बारे में जोरदार और दिल को छू जाने वाला भाषण हुआ।

उसके बाद बाबासाहेब बोलने के लिए उठ कर खड़े हुए। उस समय तालियों की गूंज से वातावरण भर गया। सब दूर उनके जयकार की ध्वनि गूंज उठी। उसके बाद जब बाबासाहेब ने सबको शांत रहने का इशारा किया तो पल भर में पूरा वातावरण

---

*'जनता' : 17 अक्तूबर, 1936

शांत हुआ। इस तरह हमारे सेनानायक का हुकूम प्रत्यक्ष कैसे बजा लाया जाएगा, यह लोगों ने बता दिया। शांति छा गई तो डॉ. बाबासाहेब ने कहा,

"आज की सभा श्री. दौलतराव गुलाजी जाधव की उम्मीदवारी को समर्थन देने के लिए बुलाई गई है। आपके पूर्व खानदेश जिले की आरक्षित सीट के लिए वे खड़े हैं। उन जगहों के लिए और भी उम्मीदवार खड़े हैं, ऐसा मैंने सुना है। उनमें से मेढे, बिर्हाडे के नाम मैंने सुने हुए हैं। इन दोनों को मैं अच्छी तरह पहचानता हूं। पिछले पंद्रह–बीस सालों से उनसे मेरी पहचान है। उनमें से श्री. मेढे से मेरी थोड़ी ज्यादा पहचान है। मैं यह जानता हूं कि श्री. मेढे ने यहां कुछ काम किया हुआ है। इसके बावजूद मैंने श्री जाधव को ही क्यों चुना, इस बारे में आपमें से कुछ लोगों को आश्चर्य लगा होगा। इसके पीछे एक ही कारण है, वह यह कि विधिमंडल में मेधावी, चतुर और समाज दक्ष लोगों की जरूरत है। इस काम के लिए आपको योग्य व्यक्ति की ही जरूरत है। किसी काम पर उस काम के लिए अयोग्य व्यक्ति को नियुक्त किया गया, तो उससे वह जिम्मेदारी निभेगी नहीं। आप अगर घर बनाना चाहते हैं, तो सही आदमी को सही काम सौंपते हैं। बढ़ई से आप अगर लुहार का काम लेना चाहें, तो उससे वह काम होगा नहीं। राजगीर से या मिस्त्री से आप इमारत बनवाने का काम ही करवा सकते हैं। और अगर हमने ऐसा नहीं किया, किसी का काम किसी और को ही सौंपा तो इमारत के बजाय आपको बेढंगा कुछ बना हुआ मिलेगा। और अगर सही व्यक्ति को सही काम सौंपा जाए तो सुंदर इमारत आपको खड़ी मिलेगी। यही बात है व्यवहार की। आप लोग अगर थोड़ा सोचें तो यह बात आप पर स्पष्ट होगी। मे. मेढे–बिर्हाडे महापालिका, लोकल बोर्ड और स्कूल के कामों के लिए ही योग्य हैं। लेकिन जो काम आप देख नहीं सकते उस काम को करने की इच्छा वे न करें। अगर वे सचमुच समाज का हित करना चाहते हैं, तो थोड़ी देर के लिए वे अपने मन में सोचें। और खुद तय करें कि इस काम के लिए असल में कौन लायक है? अगर वे ईमानदारी से सोचेंगे तो श्री. जाधव ही इस काम के लिए योग्य हैं, यह उनका मन भी उनसे कहेगा। यह काम उनसे होगा नहीं। मैं यह नहीं कहता कि वे नालायक हैं। मेरा सिर्फ यही कहना है कि हर काम के लिए हर व्यक्ति योग्य नहीं होता। जिसका काम उसी को साजे वाली बात है। और इस काम के लिए जाधव अधिक लायक व्यक्ति हैं। कौंसिल का सारा काम अंग्रेजी में चलता है। और इसीलिए उम्मीदवार को अच्छी अंग्रेजी आना जरूरी है। उस भाषा में कोई भी सवाल पूछने की क्षमता होनी चाहिए। ये सभी बातें केवल अंग्रेजी अच्छी तरह से जानने वाले के लिए ही कर पाना संभव है। अंग्रेजी न जानने वालों का यहां कोई काम नहीं। हमें जो चुनिंदा

कुर्सियां मिली हैं उन पर केवल शोभा बढ़ाने वाले लोग हमें भेजने नहीं हैं। हमें काम करना है। आज उनके जितना शिक्षित व्यक्ति पूरे जिले में और कोई नहीं है। उसने बी. ए. किया है। वह मेरा कोई रिश्तेदार नहीं है। और न ही वह मुझे अपना भत्ता देगा। आप ही के भले के लिए मैंने उन्हें चुना है। मैंने पक्षपात नहीं किया है, अच्छी तरह, सभी पहलुओं पर सोच कर ही और पूर्व खानदेश का नक्शा आंखों के सामने रखकर ही मैंने जाधव को चुना है। और मैं फिर से बताता हूं कि जाधव लायक उम्मीदवार है।

आप कहेंगे कि अनपढ़ मराठे और कुणबी भी कौंसिल में जाते हैं। वे कहां अंग्रेजी जानते हैं? अगर उनका आदमी चलता है, तो फिर हमारा क्यों नहीं? लेकिन इस मामले में मेरा आपसे यह कहना है कि, मराठे, कुणबी और आपमें जमीन–आसमान का फर्क है। उनके लिए सब कुछ अनुकूल है, उनके लिए किसी बात की कोई कमी नहीं। लेकिन आप कंगाल हैं। आपको सब कुछ मेहनत करके हासिल करना पड़ता है। और वह सब सुलभता से पाना हो, तो केवल कानूनन पाया जा सकता है। और सिर्फ इसी वजह से आपके अनपढ़ उम्मीदवार नहीं चलेंगे। जानकार लोग होना जरूरी है। क्योंकि आप की ग्रहदशा को सुधारना है। और इसीलिए जाधव जैसे लायक उम्मीदवार को आप चुन कर दें यह जरूरी है। यह आपका कर्त्तव्य है। अगर आपने ऐसा नहीं किया तो आप अपना नुकसान करवा लेंगे। इस बारे में मैं आज ही आपको चेतावनी दे रहा हूं। किसी ने अगर मूर्खता की भी तो आप तो ना करें। किसी एक ने चोरी की तो बाकी सब बेकार में रस्सी बांध कर फांसी ना चढ़ें। पिछले दो हजार सालों से आपके पूर्वज इस देश में रहते आए हैं। लेकिन बताइए उनमें से कौन ब्राह्मणों के पैर से पैर सटाकर बैठा है? वह भाग्योदय आज आपको प्राप्त हो रहा है। ऐसे समय अगर आप अंधे और स्वार्थी बने रहे तो पूरे समाज का ही नहीं तो खुद अपने बीबी–बच्चों का भी नुकसान करेंगे। इसीलिए, इन सभी लोगों की ओर से मैं मे. मेढे–बिर्हाडे से बिनती करता हूं कि आप समाज की उन्नति के आड़े न आएं। बिनावजह हुल्लड़ न मचाएं। लेकिन इतना कहने के बावजूद अगर वे नहीं सुनते हैं तो फिर आप क्या करेंगे? आप क्या मेरा विरोध करेंगे? (दूर–दूर तक आवाज गूंजती है – नहीं! नहीं!! नहीं!!!) समाज को धोखा देंगे? (फिर वही आवाज गूंजती है) फिर आप करेंगे क्या? आपके क्षेत्र में 5000 मतदाता हैं। हर किसी को मतदान का हक मिला हुआ है। और आप उसका सही इस्तेमाल ही करें। इसीलिए हर किसी को सोचना होगा। पूरे समाज का काम ठीक–ठाक हो ऐसा अगर आपको लगता है तो अपना कर्त्तव्य निभाएं और सब जी–जान से मेहनत कर श्री. जाधव को चुनाव में जिता दीजिए। टूटी हुई नाव और बेकार खेवैय्ये देकर अगर आप नाव को पार पहुंचाना चाहते हैं, तो मैं उस

नाव की कभी भी जिम्मेदारी नहीं लूंगा। इतना ही नहीं, मैं ऐसी नाव में कदम तक नहीं रखूंगा। इसीलिए, मैं जिन्हें चुनूं वही खेवैये मुझे देने होंगे। तभी मैं उस जहाज को सही ढंग से पार ले जा सकता हूं। आखिर मैं आपसे विनति करता हूं कि आप श्री जाधव को ही जिता दें।"

इसके बाद श्री. वारभुवन ने कहा, डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर ने जो अमूल्य मार्गदर्शन किया वह सब लोग ध्यान में रखें। फिर उन्होंने श्री. जाधव को चुनाव जिताने के लिए एक जलसा गांव–गांव जाकर प्रस्तुत करने का निर्णय घोषित किया।

96

जिस पेड़ की छांव में सुखपूर्वक बसना है, उसकी डालें तोड़ने की क्रूरता ना करें*

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर नवंबर, 1936 में विलायत गए। उससे पहले उन्होंने दिनांक 7 नवंबर 1936 के जनता में घोषित किया था उसके अनुसार रविवार दिनांक 8 नवंबर, 1936 के दिन सुबह 9 बजे दामोदर हॉल, परेल, मुंबई में समता सैनिक दल की एक सार्वजनिक सभा बुलाई थी। इस सभा के अध्यक्ष डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर थे।

डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर भाषण करने के लिए खड़े रहे तब तालियों की गड़गड़ाहट हुई। उन्होंने अपने भाषण में कहा,

"कल किसी जरूरी काम के लिए मैं विलायत जा रहा हूं। मेरी गैरहाजिरी में आपको बहुत बड़ी जिम्मेदारी निभानी है। आप जानते ही हैं कि नए संविधान के अनुसार हमारे अस्पृश्य समाज को विधिमंडल में 15 आरक्षित सीटें मिली हुई हैं। उस विधिमंडल के चुनाव आगामी फरवरी माह में होने हैं। आपको मिली ये पंद्रह सीटें इस इलाके के अलग–अलग जिलों में बंटी हुई हैं। इन जगहों के लिए मैंने अपनी 'स्वतंत्र मजदूर पार्टी' की ओर से भिन्न–भिन्न जगहों पर उम्मीदवार खड़े किए हैं। पहले साफ कर दूं कि यह चुनाव लड़ने के लिए मैंने तथा मेरे सहयोगी मित्रों ने मिल कर स्वतंत्र मजदूर पार्टी की स्थापना की है। कॉंग्रेस जैसी बलाढ्य एवं सुसंगठित संस्था इस देश में होते हुए नई संस्था खोलने की जरूरत क्यों पैदा हुई इसका जवाब बहुत ही सरल है। कॉंग्रेस का प्रमुख ध्येय है आजादी। मुझे तथा मेरे सहयोगियों को यह उद्देश्य मान्य है। लेकिन वह पाना आसान बात नहीं है। गांधीजी का सत्याग्रह का शस्त्र आजादी पाने के लिए नहीं चलेगा, वह भौंथरा साबित होगा। सविनय अवज्ञा आंदोलन के जरिए भी सरकार से आजादी पाना असंभव बात है, ऐसा सबको लगता है। इसके बावजूद बेकार आजादी पाने की बात करने में क्या धरा है? जब तक सच्ची स्वतंत्रता पाने की हिम्मत हममें नहीं है, तब तक कानूनी राह से अपने उद्देश्य की ओर अग्रसर होना ही ठीक होता है ऐसा हमें ईमानदारी से लगता है। उसमें भारत एक राष्ट्र नहीं, इस देश में 4000 विभिन्न जातियां हैं। इन अलग–अलग जातियों के विद्रोह के कारण जातिभेद, प्रांतभेद, टंटे–बखेड़े और धर्मभेद के गंभीर प्रसंग आदि के कारण एकता रहना असंभव है। हिंदू, मुसलमान और ईसाइयों के मकसद अलग–अलग हैं। मान लीजिए, आज के हालात में अंग्रेज सरकार का छत्र

*'जनता' : 5 दिसम्बर, 1936

नष्ट हुआ तो जिन्हें एक राष्ट्रीयत्व की कल्पना मंजूर नहीं है, वे जाति और धर्म के अभिमानी लोग आपस में लड़ाई कर राजनीतिक सत्ता अपने हाथ में लेने की कोशिश करेंगे।

दूसरी बात यह है कि हमारी पार्टी में और कॉग्रेस पार्टी में कुछ फर्क हैं। काँग्रेस को नए सुधार अधूरे लगते हैं। और इसके लिए विधिमंडल में जाकर इन सुधारों के निषेधार्थ मंडल को तोड़ना उन्हें अच्छा लगता है। लेकिन, ये सुधार अधूरे लगने के बावजूद विधिमंडल में जाकर इन सुधारों के बल पर काम कर अधिकारों के बल पर अधिक हक पाने की निरंतर कोशिश करते रहना हमें पसंद है। विधिमंडल को तोड़ कर बच्चों जैसे खेल करने के दिन अब रहे नहीं। सच्ची आजादी पाने की ताकत हमारे हाथ में नहीं होते हुए भी, हममें उतनी हिम्मत न होते हुए भी, आजादी के हवामहल खड़े करना आखिर नुकसानदेह साबित हो सकता है। ऐसे में यह बात भी ध्यान में रखनी होगी कि काँग्रेस एक ऐसा जमावड़ा है, जिसमें बेकार, मजदूर, पूंजीपति, साहूकार, किसान, खेतमजदूर, जमींदार, छोटे–बड़े व्यापारी. मध्यवर्ग आदि परस्पर विरोधी हित संबंधों वाले लोग हैं। संक्षेप में बताना हो तो यह कद्दू और छुरे दोनों का साथ जिसमें हो, ऐसी पार्टी है। खून चूसने वाले और जिनका खून चूसा जा रहा हो, उनकी आपस में दोस्ती कैसे संभव है? आज काँग्रेस अमीरों के चंगुल में है। गरीब, मजदूर और खेतीहर वर्ग का वह क्या हित करेगी? काँग्रेस खेतीहर, मजदूर लोगों की संस्था नहीं है। वह पूंजीपतियों का साथ देने वाली संस्था है। उसके हाथों श्रमजीवि बहुजन समाज की हितसाधना बड़ा कठिन है। हमारी स्वतंत्र मजदूर पार्टी इससे अलग है, इसके ठीक विपरीत है। वह समता के सिद्धांत की बुनियाद पर खड़ा है। इसमें वर्गभेद का कोई स्थान नहीं है। श्रमजीवि, खेतीहर वर्ग की हितरक्षा हम जितने अपनेपन से कर सकते हैं, उतना करना कांग्रेस के लिए असंभव है। पददलित, गरीब आदि श्रमजीवि वर्ग के हितों की रक्षा और संवर्द्धन करना, यही हमारे पक्ष का प्रमुख कार्य है। सिद्धांतों के साथ समझौता किए बगैर विधिमंडल के किसी भी पक्ष के साथ हम सहयोग करेंगे। इसी तरह मैंने अस्पृश्य समाज को छोड़ कर अन्य जाति के लोगों के साथ सहयोग क्यों किया, इस तरह का सवाल मुझसे पूछा जाता है उसके बारे में बता दूं, कि नए संविधान के अनुसार जिसकी स्थापना की जा रही है उस लेजिस्लेटिव एसेंब्ली में कुल 175 सदस्य चुन कर जाने वाले हैं। इन कुल 175 सदस्यों में हमारे अस्पृश्य समाज के 15 सदस्य होंगे। इन पंद्रह लोगों की मदद से कोई कुछ नहीं कर सकता। इसलिए अपनी मदद के लिए अधिक लोगों की जरूरत है। और जिन लोगों से मदद लेनी हो उनकी सोच हमारी सोच से मिलनी चाहिए, वे हमारे मित्र हों, यह भी जरूरी है। इसलिए, जिन–जिन स्पृश्य लोगों ने आज तक अपनेपन से हमारी मदद की जिन्होंने अपने समाज कार्य के लिए

स्वार्थ का त्याग किया, ऐसे लोगों को चुनाव में जिता कर उन्हें अपने पक्ष में शामिल कर लेना जरूरी है। इसलिए अब बिना वजह तर्क–कुतर्क के चक्कर में पड़ कर समय ना गंवाएं। हमारे पक्ष की तरफ से जिन कार्यक्रमों का आयोजन किया गया है, उसे पार लगाने के लिए आपस के झगड़े–टंटे, मारपीट आदि अनिष्ट बातों को फिलहाल परे कर दीजिए। अनुशासन और सिद्धांत के साथ अगर आप चलेंगे तो आज मेरे हाथों अपने समाज के लिए जो भी थोड़ा बहुत मैं कर पाया हूं, वह बड़े पैमाने पर करने की प्रबल शक्ति मुझे प्राप्त होगी। अपने सिद्धांतों और अनुशासन के लिए लड़ते–लड़ते मैं विधिमंडल के चुनावों में अगर हार भी गया, तब भी कोई बात नहीं। लेकिन मुंबई जी वार्ड तथा उपनगर विभाग की ओर से खड़े हो रहे अपने उम्मीदवार मि. कालोखे को आप चुनकर लाएं। उसी में आपका कल्याण है। उसी में आपकी इज्जत है। इस वक्त महार–मांग के जातिभेद को भूल जाइए। अब के बाद हम सब एक हैं, यही उज्ज्वल भावना मन में निरंतर जागृत रखें।

अब मैं एक और महत्वपूर्ण बात की ओर आपका ध्यान दिलाता हूं। वह मुद्दा है – मैंने महार जाति के ही सभी उम्मीदवारों को क्यों चुना? और, अन्य समाज के लोगों को क्यों उम्मीदवारी नहीं दी? सच पूछो तो इस मामले में हम ज्यादा गहराई में न जाएं, यही बेहतर है। इसके बावजूद आज जिन्होंने राष्ट्रीय हरिजन पक्ष की स्थापना कर इस आरोप को उजागर किया है उनका जवाब देना जरूरी है। राष्ट्रीय हरिजन पक्ष के लोगों को मैं एक ही नाम से पुकारना चाहता हूं – ये 'ले भागो' नीयत के लोग हैं। मैंने इसलिए उन्हें अपने पक्ष से नहीं निकाला कि वे चमार हैं। भले वे चाहे कुछ कहते फिरें मुझे उसकी परवाह नहीं। उन्हें न चुनने की वजह उनका 'ले भागो' पना ही है। जहां भी कुछ हासिल हो वहां पहुंच जाओ! सिद्धांतों का, अनुशासन का कभी उन्हें अहसास नहीं था। जो मिले बटोर कर अपनी झोली में डाल लो, यही उनका धर्म है! हमने महाड सत्याग्रह किया, आत्मनिर्भरता के कई आंदोलन चलाए, नासिक सत्याग्रह किया, चाहे आप बाकी सब छोड़ कर पुणे करार का ही उदाहरण लें। सिद्धांतों के लिए जान पर बन आने तक हम कॉंग्रेस और उसके पंचप्राण बन चुके गांधी के साथ भिड़ गए। उस समय ये राष्ट्रीय हरिजन पार्टी के लोग हमारे दुश्मन के खेमे में बैठे हुए थे! जब कुछ पाने की बारी आए तो ऐसे 'ले भागो' लोगों को हम तो क्यों याद रखें?! चमगादड़ के रूप में जो अपना जीवन जीना चाहते हैं उनके आरोपों की और उनकी हल्ला मचाने की आदत की परवाह मैं नहीं करता। इतना ही नहीं, पुणे करार से पहले जब गांधी ने अपने प्राण दांव पर लगा दिए, तब ये लोग गांधी की जान बचाने के पीछे विधिमंडल की अपनी सीटें तक छोड़ने के लिए तैयार बैठे थे! तो अब मेरी कोशिशों से जो ये जगहें मिली हैं, वे क्यों मांग रहे हैं? इस राष्ट्रीय हरिजन पार्टी के प्रमुख नेता कहलाने वाले श्री. नारायणराव काजरोलकर अगर वैसा ही समय आए तो डॉ. सावरकर की

गोद में जा बैठेंगे! श्री. पी. बालू, वल्लभभाई की गोद में दिखाई देंगे!! ऐसे ही हालात रहे तो आखिर इस पार्टी का क्या हाल होगा कहा नहीं जा सकता। इस वास्तविक स्थिति पर क्या कभी किसी ने कुछ कहा है? हमारी पार्टी के साथ आज तक जिसने सहयोग किया और हमारे कार्य के लिए जो हमेशा कोशिश करते रहे, वे श्री शिवतरकर मास्टर चमार समाज के प्रमुख हैं। दुर्भाग्य से उन्हें महापालिका कमेटी ने विधिमंडल चुनाव मे खड़े रहने की इजाजत नहीं दी। इसीलिए उन्हें हमारी पार्टी की तरफ से उम्मीदवारी नहीं दी जा सकी। खैर...

सच पूछिए तो मुझे इस विधिमंडल में जाने से अधिक विधिमंडल के बाहर रह कर ही काम करना ज्यादा अच्छा लगता है। मेरे सामने आज धर्म परिवर्तन का सवाल है, नए कॉलेज की चिंता है, और कई अन्य सार्वजनिक काम हैं। इसके बावजूद आप सब लोगों की खातिर मैं इस नई पार्टी के साथ विधिमंडल में प्रवेश करने का संकल्प ले चुका हूं। मेरे इस संकल्प की राह में कांटे बोए बगैर कॉंग्रेस नहीं रहेगी, यह मैं जानता हूं। पैसों के बल पर मेरा विरोध करने के लिए कॉंग्रेस कई तरह की कोशिशें करेगी। अभी से वे ऐसी कोशिशों में लगे हुए हैं। इसलिए हम सभी को अनुशासनपूर्वक संगठित रहना होगा। आप सबके मत इस बार मुझे मिलने चाहिए। चुनाव जीतने के लिए मैं अपने सिद्धांतों से समझौता नहीं करूंगा, यह आप लोगों को ध्यान में रखना होगा। हमारी मदद के लिए कोई नहीं आएगा और ऐसे समय आप किसी षड्यंत्र का शिकार न हों। जिन्हें उम्मीदवार नहीं बनाया गया, ऐसे कुछ असंतुष्ट लोग चालबाजी में लगे हुए हैं। स्वाभिमान की खातिर ही सही उनकी षड्यंत्र का शिकार ना होइए। मुझे यकीन है कि, जिस पेड़ की छांव में सुखपूर्वक बसेंगे, जिसकी छांव में हमें पूरा संतोष मिलने वाला है, उसकी छांव नष्ट करने की, छांव देने वाली उसकी शाखाएं कुल्हाड़ी से तोड़ देने की क्रूरता आप नहीं करेंगे। जो लोगों के भड़कावे में आकर, अपने स्वार्थ से, अविचार और दुष्टता के काम करने के लिए प्रेरित हुए हैं, उन्हें उनके उद्देश्यों में कितनी सफलता मिलेगी यह कहा नहीं जा सकता। एक बात पक्के तौर पर कही जा सकती है कि वे अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मार रहे हैं। इन सभी तरह की कार्रवाइयों से अलग रहते हुए मैं अपने सहयोगियों के साथ जो कार्यक्रम आपके सामने रखने जा रहा हूं, उसका आप तथा समता सैनिक दल के हर सैनिक को अनुशासन के साथ पालन करना होगा।

हमें कई बलाढ्य शत्रुओं का सामना करना है। उसके लिए इस मुंबई शहर में कम से कम 2000 समता सैनिकों को तैयार करना होगा। हमारे पास अगर काफी मानव संसाधन हो, तो अनुशासन और संगठन के बल पर हमारे लिए अत्यंत कठिन परिस्थितियों से भी राह निकालना कभी मुश्किल नहीं होगा। मेरे चुनाव के बारे में

काँग्रेस तथा अन्य कई हितशत्रू कई तरह की षड्यंत्र रच कर, उनकी राह में अटा मेरा कांटा निकाल फेंकने की कोशिश में लगे हुए हैं। मुझे यकीन है कि चुनाव के हर वार्ड के मतदाता मुझे मत दिए बगैर नहीं रह सकते। यह काम समता सैनिक दल को प्रत्यक्ष रूप से हाथ में लेकर ही करना होगा। मुझे पक्का यकीन है कि मेरी गैरहाजिरी में यह बृहत्तर जिम्मेदारी समता सैनिक दल का हर अनुशासित सैनिक ईमानदारी से निभाएगा। इस काम के लिए मैंने एक कमेटी की नियुक्ति की है। उसकी मदद से आप अपना कर्त्तव्य निभा सकते हैं।"

——समाप्त——